राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

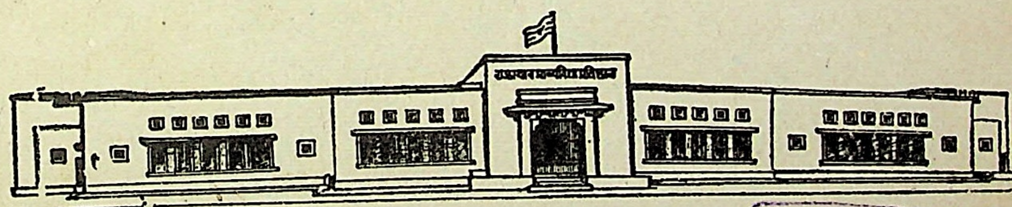
प्रधान सम्पादक – पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य

[सम्मान्य सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर]

ग्रन्थाङ्क ७९

कविशेखर भट्ट चन्द्रशेखर विरचित

वृत्तमौक्तिक



संशोधित मूल्य रु. 125=00
राज्याज्ञा सं. 4 (6) क्र.सं
दिनांक 3-12-97 के
प्रभारी अधिकारी
रा० प्रा० वि० प्र० भरतपुर

प्र का श क

राजस्थान राज्य संस्थापित

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर (राजस्थान)

RAJASTHAN ORIENTAL RESEARCH INSTITUTE, JODHPUR

CC-0. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

प्रधान सम्पादक—पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य

[सम्मान्य सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर]

ग्रन्थाङ्क ७९

कविशेखर भट्ट चन्द्रशेखर विरचित

वृत्तमौक्तिक

[दुष्करोद्धार एवं दुर्गमबोध टीकाद्वय संवलित]

प्रकाशक

राजस्थान राज्य संस्थापित

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

RAJASTHAN ORIENTAL RESEARCH INSTITUTE, JODHPUR.

जोधपुर (राजस्थान)

१९६५ ई०

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

राजस्थान राज्य द्वारा प्रकाशित

सामान्यतः अखिलभारतीय तथा विशेषतः राजस्थानदेशीय पुरातनकालीन
संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, राजस्थानी, हिन्दी आदि भाषानिबद्ध
विविधवाङ्मयप्रकाशिनी विशिष्ट ग्रन्थावली

प्रधान सम्पादक

पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य

सम्मान्य संचालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर;
ऑनरेरि मेम्बर ऑफ जर्मन ओरिएन्टल सोसाइटी, जर्मनी;
निवृत्त सम्मान्य नियामक (ऑनरेरि डायरेक्टर),
भारतीय विद्याभवन, बम्बई; प्रधान सम्पादक,
सिंघी जैन ग्रन्थमाला, इत्यादि

ग्रन्थाङ्क ७९

कविशेखर भट्ट चन्द्रशेखर विरचित

वृत्तमौक्तिक

[दुष्करोद्धार एवं दुर्गमबोध व्याख्याद्वय संवलित]

प्रकाशक

राजस्थान राज्याज्ञानुसार

सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर (राजस्थान)

१९६५ ई०

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

कविशेखर भट्ट चन्द्रशेखर विरचित

वृत्तमौक्तिक

[भट्ट लक्ष्मीनाथ एवं महोपाध्याय मेघविजय प्रणीत टीकाएं तथा आठ परिशिष्ट एवं समीक्षात्मक विस्तृत भूमिका सहित]

सम्पादक

महोपाध्याय विनयसागर

साहित्य महोपाध्याय, साहित्याचार्य, दर्शनशास्त्री,

साहित्यरत्न, काव्यभूषण, शास्त्रविशारद

प्रकाशनकर्ता

राजस्थान राज्याज्ञानुसार

सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर (राजस्थान)

विक्रमाब्द २०२२ | भारतराष्ट्रीय शकाब्द १८८७ | खिस्ताब्द १९६५

प्रथमावृत्ति १००० | मूल्य–१८.२५

मुद्रक– हरिप्रसाद पारीक, साधना प्रेस, जोधपुर

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

Vrittamauktika

of

Chandrashekhar Bhatta

with commentaries by Bhatt Lakshminath and Meghavijaya Gani

Edited with

Appendices and elaborate preface

by

M. Vinayasagar,

Sahitya-mahopadhyaya, Sahityacharya,

Darshan-shastri, Sahitya-ratna, Shastra-visharad etc.

Published under the orders of the Government of Rajasthan

By

THE RAJASTHAN ORIENTAL RESEARCH INSTITUTE

JODHPUR (Rajasthan)

V.S. 2022] [1965 A.D.

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

सञ्चालकीय वक्तव्य

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला के ७९वें ग्रन्थांक के स्वरूप वृत्त-मौक्तिक नाम का यह एक मुक्तांकित ग्रन्थरत्न गुम्फित होकर ग्रन्थ-माला के प्रिय पाठकवर्ग के करकमलों में उपस्थित हो रहा है।

जैसा कि इसके नाम से हो सूचित हो रहा है कि यह ग्रन्थ वृत्त अर्थात् पद्यविषयक शास्त्रीय वर्णन का निरूपण करने वाला एक छन्दःशास्त्र है। भारतीय वाङ्मय में इस शास्त्र के अनेक ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं। प्राचीनकाल से लेकर आधुनिक काल तक, इस विषय का विवेचन करने वाले सैकडों ही छोटे-बड़े ग्रन्थ भारत की भिन्न-भिन्न भाषाओं में ग्रथित हुए हैं। प्राचीनकाल में प्रायः सब ग्रन्थ संस्कृत और प्राकृत भाषा में रचे गये हैं। बाद में, जब देश्य-भाषाओं का विकास हुआ तो उनमें भी तत्तद् भाषाओं के ज्ञाताओं ने इस शास्त्र के निरूपण के वैसे अनेक ग्रन्थ बनाये।

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला का प्रधान उद्देश्य वैसे प्राचीन शास्त्रीय एवं साहित्यिक ग्रन्थों को प्रकाश में लाने का रहा है जो अप्रसिद्ध तथा अज्ञात स्वरूप रहे हैं। इस उद्देश्य की पूर्त्तिरूप में, हमने इससे पूर्व छन्दःशास्त्र से सम्बन्ध रखने वाले पाँच ग्रन्थ इस ग्रन्थमाला में प्रकाशित किये हैं। प्रस्तुत ग्रन्थ का छठा स्थान है।

इनमें पहला ग्रन्थ महाकवि स्वयंभू रचित है जो 'स्वयंभू छंद' के नाम से अंकित है। स्वयंभू कवि ९-१०वीं शताब्दी में हुआ है। वह अपभ्रंश भाषा का महाकवि था। उसका बनाया हुआ अपभ्रंश भाषा का एक महाकाव्य 'पउमचरिउ' है, जिसको हमने अपनी 'सिंघी जैन ग्रन्थमाला' में प्रकाशित किया है। स्वयंभू कवि ने अपने छन्दःशास्त्र में, संस्कृत और प्राकृतभाषा के उन बहुप्रचलित और सुप्रतिष्ठित छन्दों का तो यथायोग्य वर्णन किया हो है परन्तु तदुपरान्त विशेष रूप से अपभ्रंश-

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

भाषा-साहित्य के नवीन विकसित छन्दों का भी बहुत विस्तार से वर्णन किया हैं। अपभ्रंश-भाषा-साहित्य को दृष्टि से यह ग्रन्थ विशिष्ट रत्न-रूप है।

दूसरा ग्रन्थ है 'वृत्तजातिसमुच्चय'। इसका कर्त्ता विरहांक नाम से अंकित कोई 'कइसिठ्ठ' है। यह शब्द प्राकृत है, जिसका सही संस्कृत पर्याय क्या होगा, पता नहीं लगता। 'कइसिठ्ठ' का संस्कृत रूप कवि-श्रेष्ठ, कविशिष्ट और कृतशिष्ट अथवा कृतिश्रेष्ठ भी हो सकता है। वृत्तजातिसमुच्चय भो प्राचीन रचना सिद्ध होती है। इसकी रचना ९वीं-१०वीं शताब्दी की या उससे भी कुछ प्राचीन अनुमानित की जा सकती है। यह रचना शिष्ट प्राकृत-भाषा में ग्रथित है। इसमें संस्कृत को अपेक्षा प्राकृत के छन्दों का विस्तृत निरूपण है और साथ में अपभ्रंश भाषा के भी अनेक छन्दों का वर्णन है। ग्रन्थकार ने अपभ्रंश शैलो के छन्दों का विवेचन करते हुए उसकी उपशाखाएँ-स्वरूप 'आभीरी' और 'मारवी' अथवा 'मारुवाणी' का भी नाम-निर्देश किया है जो प्राचोन राजस्थानी-भाषा-साहित्य के विकास के इतिहास की दृष्टि से प्राचीनतम उल्लेख है। राजस्थानी के पिछले कवियों ने जिसे 'मरुभाखा' अथवा 'मुरधरभाखा' कहा है, उसे हो कवि विरहांक ने 'मारुवाणो' नाम से उल्लेख किया है। इस मारुवाणी का एक प्रिय और प्रसिद्ध छन्द है जिसका नाम 'धोषा' अथवा 'घोषा' बताया है। इस उल्लख से यह ज्ञात होता है कि ९वीं-१०वीं शब्तादी में राजस्थान की प्रसिद्ध बोली 'मारुई' या 'मारवी' का अस्तित्व और उसके कवि-सम्प्रदाय तथा उनकी काव्यकृतियों का व्यवस्थित विकास हो रहा था। प्राकृत और अपभ्रंश भाषा में पद्य-रचना के विविध प्रयोगों का इस ग्रन्थ में बहुत महत्त्वपूर्ण निरूपण है।

तीसरा ग्रन्थ है 'कविदर्पण'। यह भी प्राकृत के पद्य-स्वरूपों का निरूपण करने वाला एक विशिष्ट ग्रन्थ है। इसकी रचना विक्रम की १४वीं शताब्दी के आरम्भ में हुई प्रतीत होती है। विक्रम की १२वीं शताब्दी के आरम्भ से राजस्थान और गुजरात में प्राकृत और अप-

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

भ्रंश भाषा के साहित्य में जिस प्रकार के अनेकानेक मात्रागणीय छन्दों का विकास और प्रसार हुआ है उनका सोदाहरण लक्षण-वर्णन इस रचना में दिया गया है। 'संदेशरासक' जैसी रासावर्ग की सर्वोत्तम रचना में जिन विविध प्रकार के छन्दों का कवि ने प्रयोग किया है उन सब का निरूपण इस ग्रन्थ में मिलता है। प्राकृतपिंगल नाम के सुप्रसिद्ध ग्रन्थ में जिस प्रकार के छन्दों का वर्णन दिया गया है उनमें के प्रायः सभी छन्द इस ग्रन्थ में, उसी शैली का पूर्वकालीन पथप्रदर्शन करने वाले, मिलते हैं। जिस प्रकार प्राकृतपिंगल में दिये गये उदाहरणभूत पद्यों में, कर्ण, जयचंद, हमीर आदि राजाओं के स्तुति-परक पद्य मिलते हैं उसी तरह इस ग्रन्थ में भीमदेव, सिद्धराज जयसिंह, कुमारपाल आदि अणहिलपुर के राजाओं के स्तुतिपरक पद्य दिये गये हैं।

उक्त तीनों ग्रन्थों का सम्पादन हमारे प्रियवर विद्वान् मित्र प्रो० एच० डी० वेलणकरजी ने किया है जो भारतीय छन्दशास्त्र के अद्वितीय मर्मज्ञ विद्वान् हैं। इन ग्रन्थों की विस्तृत प्रस्तावनाओं में (जो अंग्रेजी में लिखी गई है) सम्पादकजी ने प्राकृत एवं अपभ्रंश के पद्य-विकास का बहुत पाण्डित्यपूर्ण विवेचन किया है। इन ग्रन्थों के अध्ययन से अपभ्रंश और प्राचीन राजस्थानी-गुजराती, हिन्दीभाषा के विविध छंदों का किस क्रम से विकास हुआ है वह अच्छी तरह ज्ञात हो जाता है।

विगत वर्ष में हमने इसी ग्रन्थमाला के ६९ वें मणि के रूप में 'वृत्तमुक्तावली' नामक ग्रन्थ प्रकाशित किया—जिसके रचयिता जयपुर के राज्यपण्डित श्रीकृष्ण भट्ट थे; महाराजा सवाई जयसिंह ने उनको बड़ा सम्मान दिया था। वृत्तमुक्तावली में वैदिक छन्दों का भी निरूपण किया गया है, जो उपर्युक्त ग्रन्थों में आलेखित नहीं हैं। वृत्तमुक्तावली में वैदिक छन्द तथा प्राचीन संस्कृत एवं प्राकृत-साहित्य में सुप्रचलित वृत्तों के अतिरिक्त उन अनेक देश्यभाषा-निबद्ध वृत्तों का भी निरूपण किया गया है जो उक्त प्राचीन ग्रन्थकारों के बाद हाने वाले अन्यान्य कवियों द्वारा प्रयुक्त हुए हैं। श्रीकृष्ण भट्ट संस्कृत-भाषा के प्रौढ

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पण्डित थे। संस्कृत काव्य-रचना में उनकी गति प्रखर और अबाध थी इसलिये उन्होंने उक्त प्रकार के सब छन्दों के उदाहरण स्वरचित पद्यों द्वारा ही प्रदर्शित किये हैं। प्राकृत, अपभ्रंश और प्राचीन देशी भाषा के प्रधानवृत्तों के उदाहरण-स्वरूप पद्य भी उन्होंने संस्कृत में ही लिखे। हिन्दी-राजस्थानी-गुजराती भाषा में बहुप्रचलित और सर्वविश्रुत दोहा, चौपाई, सवैया, कवित्त और छप्पय जैसे छन्द भी उन्होंने संस्कृत में ही अवतारित किये।

इन ग्रंथों से विलक्षण एक ऐसा छन्द-विषयक अन्य बडा ग्रन्थ भी हमने ग्रन्थमाला में गुम्फित किया है जो 'रघुवरजसप्रकास' है। इसका कर्त्ता चारण कवि किसनाजी आढा है, वह उदयपुर के महाराणा भीमसिंह जी का दरबारी कवि था। वि० सं० १८८०-८१ में उसने इस ग्रन्थ की राजस्थानी भाषा में रचना की। जिसको कवि 'मुरधर भाखा' के नाम से उल्लिखित करता है। यह छन्दोवर्णन-विषयक एक बहुत ही विस्तृत और वैविध्य-पूर्ण ग्रन्थ है। कर्त्ता ने इस ग्रन्थ में छन्दःशास्त्र-विषयक प्रायः सभी बातें अंकित कर दी हैं। वर्णवृत्त और मात्रावृत्तों के लक्षण दोहा छन्द में बताये हैं। उदाहरणभूत सब पद्य अर्थात् वृत्त कवि ने अपनी 'मुरधरभाखा' अर्थात् मरुभाषा में स्वयं ग्रथित किये हैं। इस प्रकार संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश भाषा के सुप्रसिद्ध सभी छंदों के उदाहरण उसने 'मरुभाखा' में ही लिखकर अपनी देशभाषा के भाव-सामर्थ्य और शब्दभंडार के महत्त्व को बहुत उत्तम रीति से प्रकट किया है। इसके अतिरिक्त उसने इस ग्रंथ में राजस्थानी भाषाशैली में प्रचलित उन सैंकड़ों गीतों के लक्षण और उदाहरण गुम्फित किये हैं जो अन्य भाषा-ग्रन्थित छंदग्रन्थों में प्राप्त नहीं होते।

प्रस्तुत 'वृत्तमौक्तिक' ग्रन्थ इस ग्रन्थमाला का छंदःशास्त्र विषयक छठा ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ भी वृत्तमुक्तावली के समान संस्कृत में गुम्फित है। वृत्तमुक्तावली के रचना काल से कोई एक शताब्दी पूर्व इसकी रचना हुई होगी। इसमें भी वृत्तमुक्तावली की तरह सभी वृत्तों या पद्यों के उदाहरण ग्रन्थकार के स्वरचित हैं। वृत्तमुक्तावली की तरह इसमें

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

वैदिक छंदों का निरूपण नहीं है पर संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश साहित्य में प्रयुक्त प्रायः सभी छंदों का विस्तृत वर्णन है। जितने छंदों अर्थात् वृत्तों का निरूपण इस ग्रन्थ में किया गया है उतनों का वर्णन इसके पूर्व निर्मित किसी भी संस्कृत छंदोग्रन्थ में नहीं मिलता है। इस दृष्टि से यह ग्रन्थ छंदःशास्त्र की एक परिपूर्ण रचना है।

संस्कृत-साहित्य में पद्य-रचना के अतिरिक्त अनेक विशिष्ट गद्य-रचनायें भी हैं जो काव्य-शास्त्र में वर्णित रस और अलंकारों से परिपूर्ण हैं, परन्तु गद्यात्मक होने से पद्यों की तरह उनका गेय स्वरूप नहीं बनता। तथापि इन गद्य-रचनाओं में कहीं कहीं ऐसे वाक्यविन्यास और वर्णन-कण्डिकाएँ, कविजन ग्रथित करते रहते हैं जिनमें पद्यों का अनुकरण-सा भासित होता है और उन्हें पढ़ने वाले सुपाठी मर्मज्ञ जन ऐसे ढंग से पढते हैं जिसके श्रवण से गेय-काव्य का सा आनन्द आता है। ऐसे गद्यपाठ के वाक्यविन्यासों को छन्दःशास्त्र के ज्ञाताओं ने पद्यानुगन्धी अथवा पद्याभासी गद्य के नाम से उल्लेखित किया है और उसके भी कुछ लक्षण निर्धारित किये हैं। प्रस्तुत ग्रन्थ में वृत्तमौक्तिककार ने ऐसे विशिष्ट गद्यांशों का विस्तृत निरूपण किया है और इस प्रकार के शब्दालंकृत गद्य की कुछ विद्वानों की विशिष्ट स्वतंत्र रचनायें भी मिलती हैं जो विरुदावली और खण्डावली आदि के नाम से प्रसिद्ध हैं। ऐसी अनेक विरुदावलियों तथा कुछ खण्डावलियों का निरूपण इस वृत्तमौक्तिक में मिलता है जो इसके पूर्व रचे गये किसी प्रसिद्ध छन्दोंग्रन्थ में नहीं मिलता। इस प्रकार की छन्दःशास्त्र-विषयक अनेक विशेषताओं के कारण यह वृत्तमौक्तिक यथानाम ही मौक्तिक स्वरूप एक रत्न-ग्रन्थ है।

इस ग्रन्थ की विशिष्ट मूल-प्रति राजस्थान के बीकानेर में स्थित सुप्रसिद्ध अनूप संस्कृत पुस्तकालय में सुरक्षित है। मूल-प्रति ग्रन्थकार के समय में ही लिखी गई है—अर्थात् ग्रन्थ की समाप्ति के बाद १४ वर्ष के भीतर। यह प्रति आगरा में रहने वाले लालमणि मिश्र ने वि.सं. १६६० में लिख कर पूर्ण की।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

ग्रन्थ की रचना कहाँ हुई इसका उल्लेख कहीं नहीं किया गया। परन्तु ग्रन्थकार तलंगदेशीय भट्ट वंश के ब्राह्मण थे और उनकी वंश-परम्परा सुप्रसिद्ध वैष्णव सम्प्रदाय के धर्माचार्य श्री वल्लभाचार्य के वंश से अभेद स्वरूप रही है। प्रस्तुत रचना में कर्त्ता ने सर्वत्र श्रीकृष्ण-भक्ति का और मथुरा वृन्दावन के गोप-गोपीजनों के रस-विहार का जो वर्णन किया है उससे यह कल्पना होती है कि ग्रन्थकार मथुरा-वृन्दावन के रहने वाले हों!

इस ग्रन्थ का सम्पादन श्री विनयसागरजी महोपाध्याय ने बहुत परिश्रम-पूर्वक बड़ी उत्तमता के साथ किया है। ग्रन्थ से सम्बद्ध सभी विचारणीय विषयों का इन्होंने अपनी विद्वत्तापूर्ण विस्तृत प्रस्तावना और परिशिष्टों में बहुत विशद रूप से विवेचन किया है जिसके पढ़ने से विद्वानों को यथेष्ट जानकारी प्राप्त होगी।

ग्रन्थमाला के स्वर्णसूत्र में इस मौक्तिक-स्वरूप रत्न की पूर्ति करने निमित्त हम श्री विनयसागरजी के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं और आशा रखते हैं कि ये अपनी विद्वत्ता के परिचायक इस प्रकार के और भी ग्रन्थ-सम्पादन के कार्य द्वारा ग्रन्थमाला की सेवा और शोभावृद्धि करते रहेंगे।

मुनि जिनविजय
सम्मान्य सञ्चालक

जन्माष्टमी, सं. २०२२;
राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान,
जोधपुर
दि० २०-८-६५

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

समर्पण

यः सूरीश्वर - वंश-सागर - मणिर्वादीभपञ्चाननः ,
तं श्रीजैनविधौ गणे दिनमणिं ध्यायामि हृद्ध्वान्तहम् ।
हिन्द्यामागमसंप्रसारमणिना प्रोद्धारि येन श्रुतं ,
भव्यानामुपदेशदानमणये तस्मै नमः सर्वदा ॥

यस्मात्प्रादुरभून्मणेः शुभविधा श्रीगौतमाद्वागिव ,
वागीशानिव वादिनो जितवती वादेषु संवादिनः ।
सौमत्यम्बुनिधेर्मणेः समुदयात् सज्ज्ञानमालोकते ,
ग्रन्थं मौक्तिकनामकं गुरुमणौ भक्त्या मया ह्यर्प्यते ॥

चारुचरणचञ्चरीक

विनय

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमपञ्जिका

भूमिका

१. प्रथमखंड

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

द्वितीय खंड

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. ORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

टीकाद्वय - क्रम - पञ्जिका

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

परिशिष्ट - क्रमपञ्जिका

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

भूमिका

छन्दःशास्त्र का उद्‌भव और विकास

किसी पदार्थ के आयतन को उसका छन्द कहा जाता है । छन्द के बिना किसी भी वस्तु की अवस्थिति इस संसार में संभव नहीं है। मानव-जीवन को भी छन्द कहा जाता है। सात छन्दों या मर्यादाओं से जीवन मर्यादित है। छन्द या मर्यादा के कारण ही मनुष्य स्व और पर की सीमाओं में बंधा हुआ है। स्वच्छन्दत्व उसे प्रिय होता है परच्छन्दत्व नहीं। मनुष्य स्वकीय छन्दों या सीमाओं को विस्तृत करता हुआ, स्वतन्त्रता के मार्ग का अनुशीलन करता हुआ अपने जीवन का उद्देश्य प्राप्त कर लेता है।

छन्द पद का निर्वचन—

छन्द और छन्दस् पदों की निरुक्ति क्षीरस्वामी ने 'छद' धातु से बतलाई है। अन्य व्युत्पत्तियों के अनुसार छन्द शब्द 'छदिर् ऊर्जने, छदि संवरणे, चदि आह्लादने दीप्तौ च, छद संवरणे, छद अपवारणे' धातुओं से निष्पन्न है।[1] वस्तुतः इन धातुओं से निष्पन्न शब्द विभिन्न अर्थों में पृथक्-पृथक् रूप से प्रयुक्त होते रहे होंगे। कालांतर में ये शब्द छन्द और छन्दस् शब्द-रूपों में खो गये। यास्क ने 'छन्दांसि छादनात्'[2] कह कर आच्छादन के अर्थ में प्रयुक्त छन्द शब्द का अस्तित्व माना है। सायण ने ऋग्वेद-भाष्यभूमिका में 'आच्छादकत्वाच्छन्दः' कथन द्वारा यास्क का समर्थन किया है। छान्दोग्योपनिषद् की एक गाथा के अनुसार देव मृत्यु से डर कर त्रयी-विद्या में प्रविष्ट हुए। वे छंदों से आच्छादित हो गये। आच्छादन करने से ही छंदों का छंदत्व है।[3] ऐतरेय आरण्यक के अनुसार स्तोता को आच्छादित करके छंद पापकर्मों से रक्षित करते हैं।[4] इन स्थानों पर आच्छादन अर्थ वाला छंद शब्द प्रयुक्त हुआ है। असीम चैतन्य-सत्ता को सीमाओं या मर्यादाओं में बांध कर ससीम बना देने वाली प्रकृति भी आच्छादन करने के कारण ही छन्द कही जाती है। वैदिक-दर्शन के अनुसार छन्द 'वाक्-विराज्' का भी नाम है जो सांख्य की प्रकृति या वेदांत की माया के

१—वैदिक छन्दोमीमांसा, —पं० युधिष्ठिर मीमांसक, पृ० ११-१३

२—निरुक्त ७।१२

३—छान्दोग्योपनिषद् १।४।२; तुलनीय गार्ग्य का उपनिदान सूत्र ८।२

४—ऐतरेय आरण्यक २।२

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

समकक्ष है। सारा विश्व इसी से विकसित होता हैं। आच्छादनभाव को स्पष्ट करने के लिए 'छदिच्छन्दः' नाम का विशेष रूप से इसमें उल्लेख किया गया है।[1] यह एक छन्द ही विविध रूपों में एक से अनेक हो जाता है। इन विभिन्न छन्दों में आत्मा आच्छादित हो कर व्याप्त हो जाती है। आत्मा 'छन्दोमा' के रूप में विविध छन्दों को प्रकाशित करती है।[2] छन्द से छन्दित छन्दोमा स्वयं छन्द है और ज्योतिस्वरूप होने से उसका सम्बन्ध दीप्ति से तथा आनन्दस्वरूप होने से आह्लाद से भी जुड़ जाता है। चदि धातु से निष्पन्न छन्द (मूल रूप चन्द) का प्रयोग ऐसे प्रसंगों में होता रहा ज्ञात होता है। प्राण (प्राणा वै छन्दांसि)[3], सूर्य (छन्दांसि वै व्रजो गोस्थानः)[4] और सूर्य रश्मियों (ऋग्वेद १।९२।६) को छन्द कहने का कारण भी दीप्तियुक्त होना ही ज्ञात होता है। लोक में भी गायत्री आदि पद्य, वेद, आर्षग्रन्थ, संहिता, इच्छा, अनियन्त्रित आचार आदि[5] अर्थों में प्रयुक्त छन्द शब्द देखा जाता है। ये सब एक छन्द शब्द के विविध अर्थ नहीं हैं, वरन् इन-इन अर्थों में प्रयुक्त अलग-अलग शब्द हैं। किसी समय इनका सूक्ष्म भेद सुविज्ञात था। स्वर आदि द्वारा यह भेद स्पष्ट कर दिया जाता था। कालान्तर में अन्य शब्दों की तरह[6] ये सारे शब्द एक छन्द शब्द में श्लिष्ट हो गये और उनके स्वर-चिह्नों ने भी उदात्तादि प्रबल स्वरों में अपना अस्तित्व खो दिया।

साहित्य में छन्द—

ऊपर छन्द के विविध अर्थों में एक गायत्री आदि छन्द का भी उल्लेख किया गया है। वाङ्मय में छन्द का विशिष्ट महत्त्व है। कात्यायन के अनुसार सारा वाङ्मय छन्दोरूप है - छन्दोमूलमिदं सर्वं वाङ्मयम्।[7] छन्द के बिना वाक् उच्चरित नहीं होती।[8] कोई शब्द छन्द रहित नहीं होता।[9] इसीलिए गद्य और पद्य दोनों को छन्दोयुक्त माना जाता है।[10]

१—वैदिक दर्शन —डॉ० फतहसिंह, पृष्ठ १८२-१८३
२—वैदिक दर्शन पृ० १८४ तथा उसमें उद्धृत ताण्ड्य महाब्राह्मण १४।११।१४
३—कौषीतकि ब्राह्मण ७।६, ११।८, १७।२
४—तैत्तिरीय ब्राह्मण ३।२।९।३
५—वैदिक छन्दोमीमांसा, पृ० ७-८
६—शब्दों के विकास की ऐसी प्रवृत्ति के लिए देखें—'ऋग्वेद में गोतत्त्व'—बद्रीप्रसाद पंचोली
७—ऋग्यजुष परिशिष्ट ५; तुलनीय छन्दोऽनुशासन-जयकीर्ति, १।२
८—नाच्छन्दसि वागुच्चरति इति —निरुक्त ७।२, दुर्गवृत्ति
९—छन्दोहीनो न शब्दोऽस्ति —नाट्यशास्त्र १४।१५
१०—वैदिक छन्दोमीमांसा, पृ० ८

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

छन्द की परिभाषा करते हुए कात्यायन ने ऋक्सर्वानुक्रमणी में अक्षर के परिमाण को छन्द कहा है—यदक्षरपरिमाणं तच्छन्दः। अन्यत्र अक्षर-संख्या का नियामक छंद कहा गया है।[1] छन्द का महत्व केवल अक्षर-ज्ञान कराना मात्र नहीं हैं। ऊपर के निर्वचनों पर विचार करने पर भावों को आच्छादित करके अपने में सीमित करने वाली शब्द-संघटना को साहित्य में छन्द कह सकते हैं। अर्थ को प्रकाशित करके अर्थचेता को आह्लादयुक्त कर देने में छन्द का छंदत्व प्रकट होता है।

वैदिक छंद मंत्रों के अर्थ प्रकट करने की विशेष शैली प्रक्रिया के द्योतक हैं। वेदों के व्याख्याकारों ने इस बात पर जोर दिया है कि ऋषि, देवता और छंद के ज्ञान के बिना मंत्रों के अर्थ उद्भासित नहीं होते। देवता मंत्रों के विषय हैं, ऋषि वे सूत्र हैं जिनसे अर्थ सरलतया प्रकट हो जाते हैं और छंद अर्थप्राप्ति की प्रक्रिया का नाम है।[2] छंदों की अर्थ प्रकट करने की विशिष्ट प्रक्रिया के कारण ही वैदिक-शैली को 'छांदस्' कहा गया है। पारसी धर्म-ग्रंथ 'जेन्द अवस्ता' का जेन्द नाम भी छंद का अपभ्रष्ट रूप ज्ञात होता है।

ब्राह्मण-ग्रन्थों में छांदस्-प्रक्रिया का बड़ा ही सूक्ष्म व रहस्यात्मक वर्णन देखने को मिलता है। वहाँ छंदों के नामों द्वारा सम्पूर्ण सृष्टि-प्रक्रिया को समझाने का प्रयत्न किया गया है। सब से अधिक रहस्यात्मक वर्णन गायत्री छंद का है जो सूर्यलोक से प्राप्त होने वाले सावित्री प्राण का प्रतीक बन गया है। छंदों का रहस्यात्मक वर्णन स्वतंत्र रूप से अनुसंधान का विषय है। यहाँ छंद के व्यावहारिक रूप पर ही विचार किया जा रहा है।

व्यावहारिक दृष्टिकोण से छंद अक्षरों के मर्यादित प्रक्रम का नाम है। जहाँ छंद होता है वहीं मर्यादा आ जाती है।[3] मर्यादित जीवन में ही साहित्यिक छंद जैसी स्वस्थ-प्रवाहशीलता और लयात्मकता के दर्शन होते हैं। मर्यादित इच्छा की अभिव्यक्ति प्राचीन गणराज्यों की जीवन्त छंद परम्परा Voting System[4] कही जाती है।

भावों का एकत्र संवहन, प्रकाशन तथा आह्लादन छंद के मुख्य लक्षण हैं। इस दृष्टि से रुचिकर और श्रुतिप्रिय लययुक्त वाणी ही छंद कही जाती है—

१—छन्दोऽक्षरसंख्यावच्छेदकमुच्यते —अथर्ववेदीय बृहत्सर्वानुक्रमणी
२—ऋग्वेद के मंत्रद्रष्टा ऋषि —बद्रीप्रसाद पंचोली, वेदवाणी; बनारस। १५।१
३—वेदविद्या —डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल, पृ० १०२
४—प्राचीन भारत में गणतांत्रिक व्यवस्था —बद्रीप्रसाद पंचोली, शोधपत्रिका, उदयपुर, १५।१

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

'छंदयति पृणाति रोचते इति छंदः ।' जिस वाणी को सुनते ही मन आह्लादित हो जाता है वह वाणी ही छंद है—'छंदयति आह्लादयति छंद्यते अनेन इति छंदः ।'[1]

स्पष्ट है कि छंद के रूप में अक्षर-मर्यादा का निर्वाह करने का सम्बन्ध शब्द-संघटना से है और प्रकाशन एवं आह्लादन का सम्बन्ध अर्थ के साथ है । इसी तरह छंद के प्रथम दो लक्षणों का संबंध वक्ता से होता है और तृतीय का श्रोता से । इस दृष्टि से छंद, श्रोता और वक्ता के बीच में प्रभावशाली सेतु का काम करता है । शतपथब्राह्मण में 'रसो वै छंदांसि'[2] कह कर छंद की रागात्मिका अनुभूति और अभिव्यक्ति की ओर स्पष्ट संकेत किया गया है ।

छन्दःशास्त्र—

छंदःशास्त्र में छंदों का विवेचन किया जाता है । भारतवर्ष में वैदिक तथा लौकिक संस्कृत भाषा के छंदों पर विचार अत्यन्त प्राचीन काल से ही प्रारम्भ हो गया था । वैदिक छन्दोमीमांसा में छंदःशास्त्र का आदि मूल वेद माना गया है ।[3] छंदःशास्त्र के प्राचीन संस्कृत-वाङ्मय में प्रयुक्त अनेक नामों का उल्लेख भी इसमें है । यथा—

(१) छंदोविचिति, (२) छंदोमान, (३) छंदोभाषा, (४) छंदोविजिनि, (५) छंदोनाम, (६) छंदोविजिति, : छंदोविजित, (७) छंदोव्याख्यान, (८) छंदसां विचयः, (९) छंदसां लक्षणम्, (१०) छंदःशास्त्र, (११) छंदोऽनुशासन, (१२) छंदोविवृत्ति, (१३) वृत्त, (१४) पिंगल ।[4]

छंदोविचिति पद का अर्थ है—वह ग्रन्थ जिसमें छंदों का चयन किया गया हो । यह पद पाणिनि के गणपाठ, कौटिल्य के अर्थशास्त्र, सरस्वतीकण्ठाभरण, गणरत्नमहोदधि आदि में प्रयुक्त हुआ है । पिंगलप्रोक्त छंदोविचिति, पतंजलि-प्रोक्त छंदोविचिति, जनाश्रयप्रोक्त छंदोविचिति, दण्डिप्रोक्त छंदोविचिति तथा एक अन्य पालिभाषा के छंदोविचिति का नामोल्लेख श्रीमीमांसकजी ने किया है ।[5]

छंदोमान नाम भी ग्रंथवाची है । पाणिनि के गणपाठ, सरस्वतीकण्ठाभरण आदि में यह नाम प्रयुक्त हुआ है, परन्तु अभी तक इस नाम का कोई ग्रंथ नहीं

१–संस्कृत साहित्य का इतिहास —वाचस्पति गेरोला, पृ० ११०

२–शतपथ ब्राह्मण, ७।३।१।३७

३–वैदिक छंदोमीमांसा, पं० युधिष्ठिर मीमांसक, पृ० ४३

४– ,, ,, ३५

५– ,, ,, ३६

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

मिला है। जिस ग्रंथ में छंदों का भाषण या व्याख्यान मिलता हो उसे छंदोभाषा कहा गया है। गणपाठों में यह नाम आया है।[1] ऐसी भी मान्यता है कि छंदोभाषा नाम प्रातिशाख्यों के लिए प्रयुक्त हुआ है।[2] विष्णुमित्र ने ऋक्प्रातिशाख्य की वृत्ति में छंदोभाषा शब्द का अर्थ वैदिक भाषा किया है। कुछ अन्य लोगों ने छंद का अर्थ छंद:शास्त्र तथा भाषा का अर्थ व्याकरण या निरुक्त किया है।[3] परन्तु पं० युधिष्ठिर मीमांसक ने इन मतों को निराकृत करके छंदोभाषा-नामक छंद:शास्त्र के ग्रंथों का अस्तित्व माना है उन्होंने भी इस नाम को चरण-व्यूह आदि में प्रातिशाख्य के लिए प्रयुक्त माना है।[4]

जिस ग्रंथ द्वारा छंदों पर विजय प्राप्त हो सके उसे छंदोविजिति कहा जाता है। चांद्र गणपाठ, जैनेन्द्र गणपाठ, सरस्वतीकण्ठाभरण आदि में यह नाम प्रयुक्त हुआ है। छंदोनाम के लिए मीमांसकजी ने संभावना प्रकट की है कि यह छंदोमान का अपभ्रंश हो सकता है। छंदोव्याख्यान, छंदसां विचय, छंदसां लक्षण, छंदोऽनुशासन, छंद:शास्त्र आदि भी छंदोविषयक ग्रंथों के नाम हैं। वृत्त पद के आधार पर वृत्तरत्नाकर आदि ग्रंथों के नामकरण किए गये हैं। हमारे विवेच्य ग्रंथ वृत्तमौक्तिक का नाम भी इसी परम्परा में उल्लेखनीय है।

छन्द:शास्त्र के लिए पिंगल-नाम छंद:शास्त्र के प्रमुख आचार्य पिंगल के कारण ही प्रयुक्त हुआ ज्ञात होता है।[5] पिंगल-नाम के अनेक प्राकृतभाषा के ग्रंथ प्रसिद्ध हैं।

छन्द:शास्त्र की प्राचीनता—

वैदिक छंदों के नाम सर्वप्रथम वैदिक-संहिताओं में ही प्रयुक्त हुए हैं। वैदिक षडंगों में छंद:शास्त्र का नाम भी आता है। वेदमंत्रों के साथ उनके छंदों का नामोल्लेख भी हुआ है। उनका विशुद्ध और लयबद्ध उच्चारण छंद:शास्त्र के ज्ञान से ही सम्भव है। इसलिए वेदार्थ के विषय में विवेचन करने वाले सभी ग्रंथों में छंदों का भी प्रसंगवश उल्लेख मिल जाता है।

पाणिनि ने गणपाठ में छंद:शास्त्र-सम्बन्धी ग्रंथों का उल्लेख किया है। उनके समय में तो लौकिक संस्कृत-भाषा में महाकाव्यों की रचनाएं लिखी जाने लगीं

१–वैदिक छन्दोमीमांसा पृ० ३७
२–संस्कृत-साहित्य का इतिहास —गैरोला, पृ० १९१
३–अन्य मतों के लिए देखो —वैदिक छंदोमीमांसा, पृ० ३७-३९
४–वैदिक छंदोमीमांसा, पृ० ३९-४०
५– " ४२

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

थीं । इसलिए वैदिक छंदों के अतिरिक्त लौकिक छंदों पर भी विवेचना होने लगी होगी और इस विषय के अनेक ग्रंथ विद्यमान होंगे । विद्वानों की मान्यता है कि छंदःशास्त्र के प्रमुख आचार्य पिंगल पाणिनि के समकालीन थे । छंदःशास्त्र के विकास में पिंगल का वही स्थान है जो व्याकरण-परम्परा में पाणिनि का है । तण्डी, यास्क, क्रौष्टुकि, सैतव, काश्यप, रात, माण्डव्य आदि आचार्य पिंगल से भी प्राचीन हैं ।[1] इससे छंदःशास्त्र की अतिप्राचीनता के विषय में किसी प्रकार कोई संदेह नहीं रह जाता है ।

छन्दःशास्त्र के प्राचीन आचार्य—

वेदांगों के प्रवक्ता शिव और बृहस्पति माने जाते हैं । महाभारत के एक उल्लेख के अनुसार वेदांगों का प्रवचन बृहस्पति ने[2] तथा एक दूसरे उल्लेख के अनुसार शिव ने[3] किया । परवर्ती ग्रंथकारों ने छंदःशास्त्र के प्रवक्ता आचार्यों की परम्परा का उल्लेख किया है । छंदःसूत्र-भाष्य के अन्त में यादवप्रकाश ने छंदःशास्त्र के प्रवर्तक आचार्यों की परम्परा का उल्लेख किया है :—

छंदोज्ञानमिदं भवाद् भगवतो लेभे सुराणां गुरुः,
तस्माद् दुश्च्यवनस्ततो सुरगुरुर्माण्डव्यनामा ततः ।
माण्डव्यादपि सैतवस्तत ऋषिर्यास्कस्ततः पिंगलः,
तस्येदं यशसा गुरोर्भुवि धृतं प्राप्यास्मदाद्यैः क्रमात् ।।

इसी ग्रंथ के अन्त में किसी का एक अन्य श्लोक भी दिया हुआ है :—

छन्दःशास्त्रमिदं पुरा त्रिनयनाल्लेभे गुहोऽनादितः,
तस्मात् प्राप सनत्कुमारमुनितस्तस्मात् सुराणां गुरुः ।
तस्माद्देवपतिस्ततः फणिपतिस्तस्माच्च सत्पिंगलः
तच्छिष्यैर्बहुभिर्महात्मभिरथो मह्यं प्रतिष्ठापितम् ।।[4]

पं० युधिष्ठिर मीमांसक ने इनमें से प्रथम परम्परा को अधिक विश्वसनीय माना है । उन्होंने राजवार्तिक में उल्लिखित —

शिवगिरिजानन्दिफणीन्द्रबृहस्पतिच्यवनशुक्रमाण्डव्याः ।
सैतवपिंगलगरुडप्रमुखा आद्या जयन्ति गुरुचरणाः ।।

१—वैदिक छन्दोमीमांसा पृ० ४६
२—वेदांगानि तु बृहस्पतिः —महाभारत, शान्तिपर्व २१२।३२
३—वेदात् षडंगान्युद्धृत्य —महाभारत, शान्तिपर्व २८४।९२
४—उपर्युक्त मतों के लिए द्रष्टव्य, वैदिक छंदोमीमांसा, पृ० ५७

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तथा यति के प्रसंग में छंदःशास्त्र-प्रवक्ता जयकीर्ति द्वारा उल्लिखित—

वांछन्ति यतिं पिंगलवसिष्ठकौंडिन्यकपिलकम्बलमुनयः ।
नेच्छन्ति भरतकोहलमाण्डव्याश्वतरसैतवाद्याः केचित् ॥

परम्पराओं का उल्लेख भी किया है।[1]

पिंगल-छंदःसूत्र में उल्लिखित आचार्यों का नाम ऊपर आ चुका है। इससे प्रकट है कि आचार्य पिंगल से पहले छंदःशास्त्र के प्रवक्ताओं की एक व्यवस्थित एवं अविच्छिन्न परम्परा विद्यमान थी।

वैदिक और लौकिक छन्दःशास्त्र

छंद दो प्रकार के कहे गये हैं —वैदिक और लौकिक।[2] वेद-संहिताओं में प्रयुक्त गायत्री, अनुष्टुप्, त्रिष्टुप्, जगती, पंक्ति, उष्णिक्, बृहती, विराट् आदि छंद वैदिक कहे जाते हैं। छंदःशास्त्र के प्रारंभिक ग्रंथों में केवल वैदिक छंदों और उनके भेद-प्रभेदों पर ही विचार किया जाता था। बाद में वाल्मीकि ने लौकिक साहित्य में भी छंद का प्रयोग किया। उन्हें आदि-कवि होने का श्रेय मिला। इतिहास, पुराण, काव्य आदि में छंदों का प्रभूत रूप से प्रयोग होने लगा। बाद में इन छंदों के लक्षणादि के विषय में छंदःशास्त्र में विचार प्रारम्भ हुआ। संस्कृत-छंदःशास्त्रों के आधार पर परवर्ती काल में प्राकृत और अपभ्रंश भाषाओं में छंदों के लक्षण-ग्रंथ भी लिखे गये।

छन्द के विषय में उपलब्ध प्राचीनतम सामग्री

वैदिक-संहिताओं में गायत्री आदि छंदों के नाम अनेकधा उल्लिखित हैं परन्तु उनका विवेचन वहाँ प्राप्त नहीं होता। वस्तुतः उन स्थलों पर छन्दों के नामों द्वारा आधिदैविक और आध्यात्मिक रहस्यों की ओर ही संकेत किया गया ज्ञात होता है। मंत्रों के ऐसे संकेतों का ब्राह्मण-ग्रंथों में विस्तार से स्पष्टीकरण किया गया है। विराट् छंद का संबंध विराज-गौ (प्रकृति) से बतलाते हुए ताण्ड्य-महाब्राह्मण में उसे छंदों में ज्योतिस्वरूप कहा गया है—विराड् वै छन्दसां ज्योतिः।[3] विराट् को दशाक्षरा भी कहा गया है।[4] अन्य छंदों के विषय में भी ऐसे ही रहस्यमिश्रित विचार ब्राह्मण-ग्रंथों में मिलते हैं।

१–जयकीर्त्तिकृत छन्दोनुशासन, १।१३ एवं वैदिक छंदोमीमांसा पृ० ५८

२–नारदपुराण —पूर्व भाग २।५७।१

३–ताण्ड्यमहाब्राह्मण, ६।३।६, १०।२।२

४–दशाक्षरा वै विराट् —शतपथब्राह्मण; १।१।१।२२, ऐतरेयब्राह्मण, ६।२०; गोपथब्राह्मण पूर्वार्ध ४।२४; उत्तरार्ध, १।१८, ६।२, ६।१५; ताण्ड्यमहाब्राह्मण, ३।१३।२

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

ऋग्वेद-प्रातिशाख्य को छंदःशास्त्र की प्राचीनतम रचना माना जाता है। यह महर्षि शौनक की रचना है। इसका विवेच्यविषय व्याकरण है परन्तु प्रसंग-वश छंदों की भी चर्चा की गई है। यह चर्चा नितांत अधूरी है। छंदों का ज्ञान प्राप्त किये बिना मंत्रों का उच्चारण ठीक तरह से नहीं हो सकता। इसीलिए इस ग्रंथ में छंदों का विवरण दिया गया है।[1]

ऋग्वेद तथा यजुर्वेद की सर्वानुक्रमणियों में भी छंदों का विवरण मिलता है। छंदोऽनुक्रमणी में दस मंडल हैं और उसमें ऋग्वेद के समस्त छंदों का क्रमशः विवरण दिया गया है। यह भी शौनक की रचना है। शांखायन श्रौतसूत्र में भी प्रसंगवश छंदों पर विचार किया गया है।

पतंजलि ने निदानसूत्र में छंदों का उल्लेख करते हुए कुछ प्राचीन छंदः-शास्त्र के प्रवक्ताओं के नामों का उल्लेख भी किया है। ये पतंजलि महाभाष्कार पतंजलि से भिन्न कोई प्राचीन आचार्य थे। एक अन्य गार्ग्य नामक आचार्य ने उपनिदानसूत्र में इन पतंजलि के अतिरिक्त तण्डिब्राह्मण, पिंगल आदि आचार्यों तथा उक्थशास्त्र का उल्लेख किया है। उक्थशास्त्र, संभव है छन्दःशास्त्र के लिए प्रयुक्त कोई प्राचीन नाम रहा हो। कीथ ने हलायुधकोश की साक्षी से इन वैदिक-परम्परा के प्राचीन ग्रंथों को वेदांग छन्दस् कहा है।[2]

यास्क ने अपने निरुक्त में वैदिक छंदों के नामों का निर्वचन किया है। यथा —

गायत्री गायते स्तुतिकर्मणः। त्रिगमना वा विपरीता। गायतो मुखात् उदपतत् इति च ब्राह्मणम्। उष्णिगुत्स्नाता भवति। स्निह्यतेर्वा स्यात्कान्तिकर्मणः। उष्णीषिणी वेत्यौपमिकम्। उष्णीषं स्नायतेः। ककुप्ककुभिनी भवति। ककुप्च कुब्जश्च कुजतेर्वा। उब्जतेर्वा। अनुष्टुबनुष्टोभनात्। गायत्रीमेव त्रिपदां सतीं चतुर्थेन पादेनानुष्टोभतीति इति च ब्राह्मणम्। बृहती परिबर्हणात्। पंक्तिः पंचपदा। त्रिष्टुबस्तोभत्युत्तरपदा। का तु त्रिता स्यात्। तीर्णतमं छन्दः। त्रिवृद्वज्रस्तस्य स्तोभतीति वा। यत् त्रिरस्तोभत्तत्त्रिष्टुप्त्वम्—इति विज्ञायते। जगती गततमं छन्दः। जलचरगतिर्वा। जल्गल्यमानोऽसृजत् इति च ब्राह्मणम्। विराड् विराजनाद्वा। विराधनाद्वा। विप्रापणाद्वा। विराजनात्सम्पूर्णाक्षरा। विराधनादूनाक्षरा। विप्रापणादधिकाक्षरा। पिपीलिकामध्येत्यौपमिकम्। पिपीलिका पेलतेर्गतिकर्मणः।[3]

१—वैदिक-साहित्य —रामगोविंद त्रिवेदी, पृ० २४०

२—संस्कृत-साहित्य का इतिहास —कीथ (हिंदी अनुवाद, चोखम्बा) पृ० ४६२

३—निरुक्त ७।१३

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यास्क ने गायत्री को अग्नि के साथ, त्रिष्टुप् को इन्द्र के साथ तथा जगती को आदित्य के साथ भाग लेने वाला कहा है।[1]

छंदों का देवों के साथ संबंध तो वाजसनेयी-संहिता आदि में भी मिलता है।[2] वैदिक छंदों के इस प्रकार के विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि रहस्यमिश्रित वर्णन से भी छंदों के स्वरूप पर प्रकाश पड़ता है और वेदार्थ-ज्ञान में उनकी उपयोगिता भी कम नहीं है। पाणिनि ने तो छंद को वेद का पाद कहा है —'छन्दः पादौ तु वेदस्य'।[3]

पिंगल के पूर्ववर्त्ती छन्दःशास्त्र के आचार्य—

पिंगल से पूर्व का कोई ग्रंथ छंदों के विषय में प्राप्त नहीं है, परन्तु उनके पूर्ववर्त्ती अनेक ग्रंथकारों के नाम मिलते हैं। इससे पता चलता है कि उनके पूर्व छंदःशास्त्र की एक अविच्छिन्न परम्परा विद्यमान थी। उनके पहले के कुछ आचार्यों का परिचय यहां दिया जा रहा हैं—

१. शिव व उनका परिवार—

शिव को छंदःशास्त्र के प्रवर्त्तक आदि आचार्य के रूप में यादवप्रकाश और राजवार्त्तिककार ने स्मरण किया है। व्याकरण के आदि आचार्य भी शिव माने जाते हैं। संभव है ये केवल शैव-सम्प्रदाय में ही प्रवर्त्तक माने जाते हों। वेदांगों के शैव या माहेश्वर-सम्प्रदाय का प्राचीन काल में महत्वपूर्ण स्थान रहा ज्ञात होता है। शिव के साथ उनके पुत्र गुह व पत्नी पार्वती का नाम भी छंदःशास्त्र के प्रवक्ता के रूप में लिया जाता है। नन्दी शिव का वाहन माना जाता है। संभव है यह किसी शिव-भक्त आचार्य का नाम रहा हो। राजवार्तिककार के अनुसार ये पतंजलि के गुरु तथा पार्वती के शिष्य थे। वात्स्यायन ने कामशास्त्र के आचार्य के रूप में भी नन्दी के नाम का उल्लेख किया है जो शिव के अनुचर थे।[4]

२. सनत्कुमार—

यादवप्रकाश के भाष्य के अन्त में दी हुई अज्ञात लेखक की परम्परा में

१–निरुक्त ७।८-११

२–वाजसनेयी-संहिता १४।१८-१९; मैत्रायणी-संहिता ५।११९; काठक-संहिता १७।३-४; जैमिनीय-ब्राह्मण ९९

३–पाणिनीय-शिक्षा ४१

४–कामसूत्रम्, १।१।८

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

इनका नाम भी उल्लिखित है। कालक्रम से ये बृहस्पति के पूर्ववर्ती रहे होंगे। उपर्युक्त साक्षी से तो ये बृहस्पति के गुरु ठहरते हैं। परन्तु, इस बात की पुष्टि किसी अन्य सूत्र से होती नहीं जान पड़ती।

३. बृहस्पति—

इनका नाम उपर्युक्त तीनों परम्पराओं में आया है। व्याकरण के बार्हस्पत्य-सम्प्रदाय का अस्तित्व पं० युधिष्ठिर मीमांसक ने माना है।[1] महाभारत की ऊपर दी हुई साक्षी से वेदांगों के प्रवर्तक बृहस्पति हैं। ये माहेश्वर सम्प्रदाय से भिन्न परम्परा के प्रवर्तक ज्ञात होते हैं। बृहस्पति को भारतीय परम्परा में देव-गुरु माना गया है और इन्द्र इनके शिष्य कहे गये हैं।

४. इन्द्र—

ऐन्द्र-व्याकरण के प्रवक्ता इन्द्र का छन्दःशास्त्र के प्रवक्ता के रूप में भी उल्लेख किया जाता है। यादवप्रकाश के भाष्य की दोनों परम्पराओं में इन्द्र का नाम आया है। राजवार्तिक के अनुसार फणीन्द्र ही इन्द्र ज्ञात होता है। पं० युधिष्ठिरजी ने फणीन्द्र को पतंजलि का नाम माना है और च्यवन को दुश्च्यवन मान कर इन्द्र से अभिन्न मानने की सम्भावना प्रकट की है।[2] इस विषय में अभी निश्चय-पूर्वक कुछ भी कहना संभव नहीं है।

६. शुक्र—

यादवप्रकाश व राजवार्तिक दोनों में शुक्र का नाम आया है। सम्भव है शुक्रनीति के प्रवक्ता आचार्य शुक्र और छंदःशास्त्र के प्रवक्ता शुक्र अभिन्न हों।

७. कपिल—

इनको मीमांसकजी ने कृतयुग का अन्तिम आचार्य माना है। जयकीर्ति के छंदःशास्त्र में यति चाहने वाले आचार्य के रूप में इनका नामोल्लेख किया गया है। सांख्यदर्शन के आचार्य कपिल और ये अभिन्न ज्ञात होते हैं।

८. माण्डव्य—

माण्डव्य के नाम का उल्लेख पिंगल, जयकीर्ति, यादवप्रकाश, चन्द्रशेखर भट्ट आदि द्वारा किया गया है। इनको मीमांसक जी ने त्रेतायुगीन माना है।

१—वैदिक-छन्दोमीमांसा, पृ० ५३-५४

२— ५८-५९

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

९. वसिष्ठ—

जयकीर्ति ने इनका नाम छंदःशास्त्र के आचार्य के रूप में लिया है।

१०. सैतव—

इनका नाम सभी परम्पराओं में आया है। ऐसा ज्ञात होता है कि ये बहुत प्रसिद्ध आचार्य रहे होंगे।

११. भरत—

ये नाट्यशास्त्र-कर्त्ता भरत से अभिन्न ज्ञात होते हैं। जयकीर्ति ने छन्दःशास्त्र के प्रवक्ता के रूप में इनके नाम का स्मरण किया है। नाट्यशास्त्र के १४वें तथा १५वें परिच्छेद में भरत ने छन्दों पर विचार किया है। सम्भव है इनका कोई पृथक् ग्रंथ भी इस विषय पर रहा हो।

१२. कोहल—

कोहल का नामोल्लेख भी जयकीर्ति ने ही किया है।

द्वापरयुगीय अन्य छन्दःप्रवक्ता—

मीमांसकजी ने यास्क, रात, क्रौष्टुकि, कौण्डिन्य, ताण्डी, अश्वतर, कम्बल, काश्यप, पांचाल (बाभ्रव्य) तथा पतंजलि को द्वापरकालीन छंदःशास्त्र के आचार्य के रूप में विभिन्न साक्षियों के आधार पर स्वीकार किया है।[1] यास्क के किसी पृथक्-छंद संबंधी ग्रंथ का पता नहीं चलता। अन्य आचार्यों के मतों का ही यत्र-तत्र उल्लेख मिलता है।

कलियुग के प्रारम्भ में होने वाले छंदःप्रवक्ता—

मीमांसकजी ने उक्थशास्त्रकार, कात्यायन, गरुड, गार्ग्य, शौनक आदि का कलियुग के प्रारम्भ में होने वाले छंदःशास्त्र-प्रवक्ताओं के रूप में नामोल्लेख किया है। पिंगल का काल भी उन्होंने यही माना है।

उपर्युक्त छंदःशास्त्र-प्रवक्ताओं के कोई ग्रंथ इस समय प्राप्त नहीं हैं, परंतु उनके मतों के उद्धरण अन्य ग्रंथों में मिल जाते हैं। परवर्ती विद्वानों को सबसे अधिक प्रभावित करने वाले आचार्य पिंगल रहे हैं।

आचार्य पिंगल और पिंगल-छन्दःसूत्र—

पिंगल को कीथ ने प्राकृत-छंदो-विषयक-ग्रंथ "प्राकृत-पैंगलम्" के रचयिता

१—वैदिक-छन्दोमीमांसा ५९

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

से भिन्न अत्यन्त प्राचीन आचार्य माना है ।[1] पिंगलसूत्र ही छंदों के विषय में हमारे सामने सब से प्राचीन ग्रंथ है । कुछ लोगों ने पिंगल को पाणिनि से पूर्ववर्त्ती ग्रंथकार माना है । ऐसे लोगों में से कुछ पिंगल को पाणिनि का मामा मानते हैं, परन्तु युधिष्ठिर मीमांसक तथा गैरोला ने पिंगल को पाणिनि का अनुज, अतः समकालीन ग्रन्थकार माना है ।[2]

पिंगल का महत्व इस बात से समझा जा सकता है कि बाद में छन्दःशास्त्र का नाम ही पिंगल-शास्त्र हो गया । इनका ग्रन्थ सर्वाधिक प्राचीन होने के साथ ही प्रौढ़ तथा सर्वाङ्गपूर्ण है ।[3] इसमें वैदिक-छंदों के साथ ही लौकिक छंदों पर भी विस्तार से प्रकाश डाला गया है । "प्राकृत-पिंगल" का आधार भी इनका पिंगल-सूत्र ही है । परवर्ती सभी छन्दःशास्त्रकार पिंगल के ऋणी हैं ।

पुराणों में छन्दों का विवेचन—

नारदपुराण तथा अग्निपुराण भी छन्दों के विवेचन करने वाले ग्रंथ हैं । अग्निपुराण को भारतीय-साहित्य का विश्वकोश कहा जाता है । उसमें ३२८ से ३३५ तक ८ अध्यायों में छंदों का विवेचन किया गया है । अग्निपुराण में छंदों के विवेचन का आधार पिंगलरचित छंदःसूत्र-ग्रंथ ही रहा है—

छन्दो वक्ष्ये मूलजैस्तैः पिंगलोक्तं यथाक्रमम् ।[4]

इसमें वैदिक व लौकिक दोनों प्रकार के छन्दों का विवेचन है ।

नारदपुराण में पूर्व भाग के द्वितीय पाद के ५७वें अध्याय में वेदांगों का विवेचन करते हुए प्रसंगवश छंदों के लक्षण भी बताये गये हैं । वहाँ एकाक्षर-पाद छंदों से लेकर दण्डक-छंदों तक का वर्णन मिलता है । प्रस्तार-प्रक्रिया से छंदों के विविध भेदों की ओर भी संकेत किया गया है ।

परवर्ती छन्द-सम्बन्धी ग्रन्थ तथा ग्रन्थकार—

परवर्ती छंदःशास्त्र-प्रवक्ताओं में कतिपय आचार्य ऐसे हैं जिनका नामोल्लेख-मात्र प्राप्त है और जिनके ग्रन्थों के नाम और ग्रन्थ अद्यावधि अनुपलब्ध हैं । यथा :—

१–संस्कृत साहित्य का इतिहास —कीथ (हिन्दी) पृ० ४९३
२– ,, ,, —गैरोला, पृ० १९१-९२ तथा संस्कृत-व्याकरणशास्त्र का इतिहास पृ० १३२
३– ,, ,, —गैरोला, पृ० १९२
४–अग्निपुराण, ३२८।१

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

नाम	काल	नाम	काल
१. पूज्यपाद[1] (देवनन्दी)	४७०-५१२ वि.	२. भामह[2]	६ शती
३. दण्डी[3]	७०० वि.	४. पाल्यकीर्त्ति[4]	८७१-९२४ वि.
५. दमसागर मुनि[5]	१०५० वि.	६. वृद्धकवि[6]	
७. सालाहण[7]		८. हाल[8]	
९. मनोरथ[9]		१०. अर्जुन[10]	
११. गोसल[11]		१२. गोविन्द[12]	
१३. चतुर्मुख[13]			

छंदःशास्त्र के परवर्ती ग्रंथों में से प्रसिद्ध कतिपय ग्रन्थ निम्नलिखित हैं :—

१. **बृहत्संहिता** :—यह वराहमिहिर की ज्योतिष विषयक रचना है। प्रसंगवश इसके चौदहवें अध्याय में ग्रह-नक्षत्रों की गति-विधि के साथ छंदों का विवेचन भी मिलता है। कीथ के अनुसार वराहमिहिर का स्वतन्त्र छंदःशास्त्र का ग्रंथ भी होना चाहिए किन्तु ऐसा कोई ग्रंथ अभी तक देखने में नहीं आया।

२. **जानाश्रयी-छन्दोविचिति** :—जनाश्रय (?) नामक कवि ने इसकी रचना विष्णुकुण्डीन (कृष्णा और गोदावरी का जिला) के अधिपति माधववर्मन् प्रथम के राज्य में—जिसका समय ६ शताब्दी A. D. पूर्व माना जाता है—की है। यह ग्रंथ ६ अध्यायों में विभक्त है। इसका प्राकृत-छन्दों का अन्तिम अध्याय महत्वपूर्ण है। गणशैली स्वतन्त्र है। युधिष्ठिर मीमांसकजी[14] ने गणस्वामी को ही इसका कर्त्ता माना है।

३. **जयदेवच्छन्दस्**—जयदेव की रचना होने से यह 'जयदेवच्छन्दस्' के नाम से

१—जयकीर्त्तिः-छंदोनुशासन, ८,१९

२—कीथ : ए हिस्ट्री आव संस्कृत लिटरेचर

३,४,५—वैदिक-छंदोमीमांसा, पृ० ६०-६१

६—विरहांकः-वृत्तजातिसमुच्चय २।८-९ तथा ३।१२

७— ,, ,, २।८-९

८— ,, ,, ३।१२

९—कविदर्पण—राजस्थान प्राच्य विद्या, प्रतिष्ठान जोधपुर, सन् १९६२

१०-११—रत्नशेखर : छन्दःकोश (कविदर्पण गत) ,, ,, ,,

१२-१३—स्वयम्भूछन्द— ,, ,, ,,

१४—वैदिक-छदोमीमांसा. पृ० ६१

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रसिद्ध है। प्रो० एच० डी० वेल्हणकर[1] ने इनका समय ६००-६०० वि० सं० का मध्य माना है। जयदेव जैन कवि थे। इन्होंने अपना यह ग्रंथ पिंगल के अनुकरण पर लिखा है। लौकिक-छंदों की निरूपण शैली पिंगल से भिन्न है। छन्दों का विवेचन संस्कृत-परम्परा के अनुकूल और अत्यन्त व्यवस्थित है।

इसमें आठ अध्याय हैं। द्वितीय और तृतीय अध्याय में वैदिक-छन्दों का निरूपण है। संभवत: जैन लेखक होने के कारण ही इस ग्रन्थ का विशेष प्रसार न हो सका।

४. **गाथालक्षण**—जैन कवि नन्दिताढ्य की यह रचना हैं। श्री वेल्हणकर[2] के मतानुसार इनका समय ईसा की आरम्भिक शताब्दियों में माना जा सकता है। प्राकृत-अपभ्रंश परम्परा के छन्दःशास्त्रीय ग्रन्थों में यह प्राचीनतम ग्रंथ है। नन्दिताढ्य द्वारा इस ग्रंथ में जिन छंदों का चयन किया गया है वे केवल जैनागमों में ही उपलब्ध हैं। ग्रंथकार ने गाथावर्ग के विविध छन्दों का विस्तार से वर्णन किया है। लेखक के दृष्टिकोण से अपभ्रंश-भाषा हेय है।[3] ग्रंथ की भाषा प्राकृत है।

५. **वृत्तजातिसमुच्चय**—विरहांक की यह रचना है। डॉ० वेल्हणकर[4] के के मतानुसार इनका समय ९वीं, १०वीं शताब्दी या इससे भी पूर्व माना जा सकता है। पिंगल के पश्चात् मात्रिक-छंदों का सर्वाधिक विवेचन इसी ग्रंथ में प्राप्त है। इसमें ६ परिच्छेद हैं। भाषा प्राकृत है किन्तु पांचवें परिच्छेद में वर्णिकवृत्तों के लक्षण संस्कृत में हैं। ग्रंथ में यति का उल्लेख नहीं है अतः सम्भव है ये यति-विरोधी सम्प्रदाय के हों। इस ग्रंथ में मगणादि गणों के स्थान पर पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग है जो कि पूर्ववर्त्ती ग्रंथों में प्राप्त नहीं है।

६. **छन्दोनुशासन**—इसके प्रणेता कवि जयदेव कन्नड़ प्रान्तीय दिगम्बर जैन थे। डॉ० वेल्हणकर[5] ने इनका समय १००० ई० के लगभग माना है। पिंगल एवं जयदेव की परम्परा के अनुसार यह ग्रंथ भी आठ अध्यायों में विभक्त है। इसमें अपभ्रंश के मात्रिक-छन्दों का विवेचन भी प्राप्त है। छंदों के लक्षण कारिका-शैली में हैं, उदाहरण स्वतन्त्ररूप से प्राप्त नहीं हैं।

१–देखें, जयदामन् की भूमिका–हरितोषमाला, बम्बई

२–देखें, कविदर्पण — गाथालक्षण की भूमिका–रा.प्रा.वि.प्र. जोधपुर, सन् १९६२

३–गाथालक्षण पद्य ३१

४–देखें, वृत्तजातिसमुच्चय की भूमिका–राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर, सन् १९६२

५–देखें, जयदामन् की भूमिका–हरितोषमाला, बम्बई

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

७. **स्वयम्भूछन्द**—इसके प्रणेता कविराज स्वयम्भू जैन हैं। कर्त्ता के संबंध में विद्वानों के अनेक मत[1] हैं किन्तु डॉ० वेल्हणकर[2] ने इनका समय १०वीं शती का उतरार्द्ध माना है। स्वयंभू अपभ्रंश-भाषा के श्रेष्ठ कवि हैं। अपभ्रंश छन्द-परम्परा की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण कृति है। कवि ने मगणादि गणों का प्रयोग न करके 'छ.प.च.त.द.'[3] पारिभाषिक शब्दों के आधार से छन्दों के लक्षण कहे हैं। इस ग्रंथ में छंदों के उदाहरण-रूप में विभिन्न प्राकृत-कवियों के २०६ पद्य उद्धृत हैं। लेखक ने कवियों के नाम भी दिये हैं।

८. **रत्नमञ्जूषा**—अज्ञातकर्तृक जैन-कृति है। वेल्हणकर[4] ने इसका समय हेमचन्द्र से पूर्व स्वीकार किया है, अतः ११-१२वीं शती माना जा सकता है। इसमें आठ अध्याय हैं लेखक ने वर्णिकवृत्तों का समान प्रमान और वितान शीर्षक से विभाजन किया है। मगणादि-गणों की परिभाषा भी लेखक की स्वतन्त्र हैं। यह पारिभाषिक शब्दावली सम्भवतः पूर्ववर्त्ती एवं परवर्त्ती कवियों ने स्वीकार नहीं की है।

९. **वृत्तरत्नाकर**—इसके प्रणेता कश्यपवंशीय पव्वेकभट्ट के पुत्र केदारभट्ट हैं। कीथ[5] ने इनका समय १५वीं शती माना है किन्तु ११९२ की हस्तलिखित प्रति प्राप्त होने से एवं ११वीं शती की इसी ग्रंथ की त्रिविक्रम की प्राचीन टीका प्राप्त होने से वेल्हणकर[6] ने इनका सत्ताकाल ११वीं शताब्दी ही स्वीकार किया है। पिंगल के अनुकरण पर इसकी रचना हुई है। जयदेवच्छन्दस् की तरह इसमें भी छन्दों के लक्षण लक्ष्य-छंदों में ही देकर लक्षण और उदाहरण का एकीकरण किया गया है। इस ग्रंथ का प्रसार सर्वाधिक रहा है।

१०. **सुवृत्ततिलक**—इसके प्रणेता क्षेमेन्द्र का समय कीथ[7] ने हेमचन्द्र के पूर्व अथवा ११वीं शती माना है। मेकडानल[8] के अनुसार क्षेमेन्द्र की बृहत्कथामंजरी

१–डॉ० भोलाशंकर व्यास: प्राकृतपैंगलम् भा० २, पृ० ३६५; डॉ० शिवनन्दनप्रसाद: मात्रिक छन्दों का विकास पृ० ४५-४६

२–देखें, स्वयम्भूछन्द की भूमिका–राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर, सन् १९६२

३–तुलना के लिये देखें, इसी ग्रंथ का प्रथम परिशिष्ट

४–देखें, रत्नमञ्जूषा की भूमिका–भारतीय ज्ञानपीठ काशी, १९४९ ई०

५–कीथ : ए हिस्ट्री आव् संस्कृत लिटरेचर पृ० ४१७

६–देखें, जयदामन् की भूमिका–हरितोषमाला बम्बई

७–कीथ : ए हिस्ट्री आव् संस्कृत लिटरेचर, पृ० १३५

८–आर्थर ए मेकडॉनल : हिस्ट्री आव् संस्कृत लिटरेचर, पृ० ३७६

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

की रचना १०३४ ई० में हुई थी। अतः क्षेमेन्द्र का समय ११वीं शती निश्चित है। क्षेमेन्द्र ने इस ग्रंथ में पहले छन्द का लक्षण दिया है और तदुपरांत अपने ग्रंथों से उदाहरण दिये हैं। छंदों के नाम दो बार आये हैं, एक वार लक्षण में और दूसरी बार उदाहरण में। यह ग्रन्थ तीन विन्यासों में विभक्त है। क्षेमेन्द्र के विचार में विशेष रसों या प्रसंगों के लिए विशेष छंद ही उपयुक्त और पर्याप्त प्रभावशाली होते हैं। ग्रंथकार के अनुसार उपजाति पाणिनि का, मन्दाक्रांता कालिदास का, वंशस्थ भारवि का और शिखरिणी भवभूति का प्रिय छंद रहा है।

११. **श्रुतबोध**—इसके लेखक कालिदास कहे जाते हैं। कीथ ने इस बात का कोई आधार नहीं माना। कुछ लोग वररुचि को भी इसका लेखक मानते हैं[1]। कृष्णमाचारी[2] नौ कालिदासों में से तीसरा कालिदास मानते हैं। गैरोला के अनुसार ये ७ या ८वीं शताब्दी के कोई अन्य कालिदास होंगे। युधिष्ठिर मीमांसक[3] के अनुसार इस कालिदास का समय १२वीं शती था। संभव है यह मान्यता उचित हो और यह कालिदास राजा भोज के सखा के रूप में लोक-कथाओं में ख्याति प्राप्त कालिदास हो। लक्षण में ही उदाहरण का गतार्थ हो जाना इस ग्रंथ की सब से बड़ी विशेषता है। इसका भी प्रसार सर्वाधिक रहा है।

१२. **छन्दोऽनुशासन**—इसके प्रणेता कलिकाल-सर्वज्ञ हेमचन्द्र पूर्णतलगच्छीय श्रीदेवचंद्रसूरि के शिष्य हैं। अणहिलपुर पत्तन के नृपति सिद्धराज जयसिंह की सभा के ये प्रमुखतम विद्वान् थे और महाराजा कुमारपाल के ये धर्मगुरु थे। इनका समय वि० सं० ११४५-१२२९ माना जाता है। ये बहुमुखी प्रतिभा वाले लेखक और वैज्ञानिक-दृष्टि-सम्पन्न आचार्य एवं शास्त्र-प्रणेता थे। हेमचन्द्र ने अपने इस ग्रंथ को पिंगल, जयदेव और जयकीर्त्ति के अनुकरण पर ही आठ अध्यायों में ग्रथित किया है। वैतालीय और मात्रासमक के कुछ नये भेद जिनका उल्लेख पिंगल, जयदेव, विरहांक, जयकीर्त्ति आदि पूर्ववर्त्ती आचार्यों ने नहीं किया, हेमचन्द्र ने प्रस्तुत किये हैं। इसमें लगभग सातसौ आठसौ छंदों का निरूपण प्राप्त है। नवीन मात्रिक-छंदों की दृष्टि से इस ग्रंथ का सर्वाधिक महत्त्व है।

हेमचन्द्र ने इस ग्रंथ पर स्वोपज्ञ टीका[4] भी बनाई है। इस टीका में हेमचन्द्र ने

१–कीथ : ए हिस्ट्री आव् संस्कृत लिटरेचर, पृ० ४१६

२–एम० कृष्णमाचारी : ए हिस्ट्री आव् क्लासिकल संस्कृत लिटरेचर, पृ० ९०८

३–देखें, वैदिक-छन्दोमीमांसा पृ० ६२

४–डॉ० एच० डी० वेल्हणकर-सम्पादित टीकासहित यह ग्रंथ सिंघी जैनग्रंथमाला में प्रकाशित है।

T CC-0. PDF. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

छंदों के नामान्तर देते हुये 'इति भरतः' कह कर जो नामभेद दिये हैं उनमें से निम्नलिखित छंद वर्तमान में प्राप्त भरत के नाट्यशास्त्र में उपलब्ध नहीं हैं, और यति-विरोधी आचार्यों में गणना होने से संभव है कि नाट्यशास्त्र में निरूपित छंदों के अतिरिक्त भरत ने छंदःशास्त्र पर कोई स्वतन्त्र ग्रंथ भी लिखा हो। भरत के नाम से उल्लिखित अनुपलब्ध छंदों की तालिका निम्न है:—

३	अक्षर	धूः	६	अक्षर	गिरा
,,	,,	तडित्	७	,,	शिखा
४	,,	ललिता	,,	,,	भोगवती
,,	,,	जया	,,	,,	द्रुतगतिः
५	,,	भ्रमरी	१०	,,	पुष्पसमृद्धिः
,,	,,	वागुरा	,,	,,	रुचिरा
,,	,,	कुन्तलतन्वी	११	,,	अपरवक्त्रम्
,,	,,	शिखा	,,	,,	द्रुतपदगतिः
,,	,,	कमलमुखी	,,	,,	रुचिरमुखी
६	,,	नलिनी	१३	,,	मनोवती
,,	,,	वीथी			

१३. कविदर्पण—यह अज्ञात जैन-कर्तृक कृति है। छंदों के उदाहरणों में जिनसिंहसूरि-रचित चूडाल-दोहक[1] का उदाहरण है। जिनसिंहसूरि खरतर-गच्छीय द्वितीय जिनेश्वरसूरि के शिष्य हैं, इनका शासनकाल १३००-१३४१ तक का है। कविदर्पण का सर्वप्रथम उल्लेख सं० १३६५ में रचित अजितशांति-स्तव की टीका में जिनप्रभसूरि ने किया है जो कि जिनसिंहसूरि के शिष्य हैं। अतः यह अनुमान किया जा सकता है कि इसके प्रणेता जिनसिंहसूरि के शिष्य और जिनप्रभसूरि के गुरुभ्राता ही होंगे।

यह ग्रंथ प्राकृतभाषा में ६ उद्देश्यों में विभक्त है। छन्दों के वर्गीकरण तथा लक्षण निर्देश से इसकी मौलिकता प्रकट होती है। प्राकृत-अपभ्रंश की परम्परा में इसका यथेष्ट महत्त्व है।

१४. छन्दःकोष—इसके प्रणेता रत्नशेखरसूरि हेमतिलकसूरि के शिष्य हैं। इनका समय १५वीं शती है। यह ग्रंथ प्राकृतभाषा में है। इसमें कुल ७४ पद्य हैं। इस ग्रंथ के छंदों का विवेचन छंदो व्यवहार के अधिक निकट है और तद्युगीन छंदों के स्वरूप-विकास के अध्ययन की दृष्टि से यह महत्त्वपूर्ण है।

१—कविदर्पण, पृ० २४

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१५. प्राकृत-पिंगल—इसके प्रणेता के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है किन्तु डॉ० भोलाशंकर व्यास[1] के अनुसार हरिब्रह्म या हरिहर इसका कर्त्ता माना जा सकता है और प्राकृतपिंगल का संकलन-काल १४वीं शती का प्रथम चरण मान सकते हैं। इसमें मात्रिक और वर्णिकवृत्त नाम से दो परिच्छेद हैं। लक्षणों में ग्रन्थकार ने टादिगण, प्रस्तारभेद, नाम, पर्याय एवं मगणादिगणों की पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग किया है।

अपभ्रंश और हिन्दी में प्रयुक्त मात्रिक-छंदों के अध्ययन के लिए यह ग्रंथ सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। वर्णिकवृत्तों के लिए संस्कृत-साहित्य में जो स्थान पिंगलकृत छंदःसूत्र का है, मात्रिक-छंदों के लिए वही स्थान प्राकृतपिंगल का है।

१६. वाणीभूषण—इसके प्रणेता दामोदर मिश्र दीर्घघोषकुलोत्पन्न मैथिली ब्राह्मण हैं। डॉ० भोलाशंकर व्यास[2] ने प्राकृतपिंगल के संग्राहक हरिहर को पितामह और रविकर को दामोदर का पिता या पितृव्य स्वीकार किया है। विद्वानों के मतानुसार दामोदर मिथिलापति कीर्त्तिसिंह के दरबार में थे। अतः दामोदर मिश्र और कविवर विद्यापति सम-सामयिक होने चाहिये। दामोदर मिश्र का समय १४३१ से १४९६ तक माना जाता है।

यह ग्रंथ संस्कृत-भाषा में है। इसमें दो परिच्छेद हैं। लक्षणों का गठन पारिभाषिक शब्दावली में है और उदाहरण स्वरचित हैं। वस्तुतः यह ग्रंथ प्राकृत-पिंगल का संस्कृत में रूपान्तर मात्र है।

१७. छन्दोमञ्जरी—गैरोला[3] ने लेखक का नाम दुर्गादास माना है किन्तु यह भ्रामक है। ग्रन्थ के प्रथम पद्य में ही लेखक ने स्वयं का नाम गंगादास और पिता का नाम गोपालदास वैद्य एवं माता का नाम संतोषदेवी लिखा है।[4] इनका समय १५वीं या १६वीं शताब्दी है। ग्रंथकार ने स्वरचित 'अच्युतचरित महाकाव्य' और 'कंसारिशतक' एवं 'दिनेशशतक' का भी उल्लेख किया है।[5] छंदो-

---

१–देखें, प्राकृतपैंगलम् भा० २, पृ० ६-२६

२– ,, ,, ,, ,, १६-१८

३–गैरोला : संस्कृत-साहित्य का इतिहास पृ० १९३

४–देवं प्रणम्य गोपालं वैद्यगोपालदासजः।
सन्तोषातनयश्छन्दो गङ्गादासस्तनोत्यदः ॥१॥

५–सर्गैः षोडशभिः समुज्ज्वलपदैर्नव्यार्थभव्याशयं—
येनाकारि तदच्युतस्य चरितं काव्यं कविप्रीतिदम्।
कंसारेः शतकं दिनेशशतकद्वन्द्वं च तस्यास्त्वसौ,
गंगादासकवेः श्रुतौ कुतुकिनां सच्छन्दसां मञ्जरी ॥८॥

CC-0. ORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

मञ्जरी की शैली वृत्त रत्नाकर से मिलती-जुलती है। इसमें ६ स्तबक हैं। छठे स्तवक में गद्य-काव्य और उनके भेदों पर विचार है जो कि इसकी विशेषता है।

१८. **वृत्तमुक्तावली**[1]—इसके प्रणेता तैलंगवंशीय कवि-कलानिधि देवर्षि कृष्णभट्ट हैं। इस ग्रन्थ का रचनाकाल १७८८ से १७९९ के मध्य का है। इसमें तीन गुम्फ हैं :—१. वैदिक छन्द, २. मात्रिक छंद, और ३. वर्णिक वृत्त। पिंगल और जयदेव के पश्चात् प्राप्त एवं प्रसिद्ध ग्रन्थों में वैदिक-छंदों का निरूपण न होने से इस ग्रंथ का महत्त्व बढ़ जाता है। मात्रिक-गुम्फ प्राकृतपिंगल और वाणीभूषण से अनुप्राणित है। इसमें ४२ दण्डक-छंदों के लक्षण एवं उदाहरण प्राप्त हैं।

१९. **वाग्वल्लभ**—इसके प्रणेता कवि दुःखभंजन शर्मा हैं जो कि काशी-निवासी कान्यकुब्जवंशीय प्रताप शर्मा के पौत्र और चूडामणि शर्मा के पुत्र हैं। इसकी 'वरवर्णिनी' नामक टीका को रचना दुःखभंजन कवि के ही पुत्र महोपाध्याय देवीप्रसाद शर्मा ने वि० सं० १९८५ में की है, अतः इसका रचना समय १९५० से १९७० वि० सं० का मध्य माना जा सकता है। गैरोला ने इनका समय १६वीं शती माना है जो कि भ्रामक है।[2] कवि दुःखभंजन ज्योतिर्विद् तो थे ही; इसीलिए जहाँ आज तक के प्राप्त छंदःशास्त्रों में प्रयुक्त छंद प्रायशः ग्रहण किये हैं तो वहाँ प्रस्तार का आधार लेकर सैकड़ों नवीन छंद भी निर्मित किये हैं। इस ग्रंथ में कुल १५३९ छन्दों का निरूपण है। शैली वृत्त-रत्नाकर की है। प्रत्येक वर्णिकवृत्त प्रस्तार-संख्या के क्रम से दिया है।

इनके अतिरिक्त छंदःशास्त्र के सैकड़ों ग्रंथ और उनकी टीकायें प्राप्त होती हैं जिनकी सूची मैंने इसी ग्रंथ के ८वें परिशिष्ट में दी है।

वृत्तमौक्तिक भी छंदःशास्त्र का बड़ा ही प्रौढ़ और महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है। चन्द्रशेखर भट्ट ने अपने इस ग्रंथ में जिस पांडित्य का परिचय दिया है, वह केवल उन ही तक सीमित नहीं था। उनकी वंश-परम्परा में जैसा कि हम देखेंगे बड़े बड़े माने हुए प्रतिभा-सम्पन्न विद्वान् हुए, और इसमें संदेह नहीं कि ऐसी ज्ञान-समृद्ध परम्परा में जिसका व्यक्तित्व विकसित हुआ हो वह अपने कृतित्व और व्यक्तित्व के लिये उन पूर्वजों का सब से अधिक ऋणी होगा। इसीलिये कवि के परिचय से पूर्व ग्रन्थ के माहात्म्य की पृष्ठभूमि को समझने के लिए सर्वप्रथम कवि के पूर्वजों का परिचय प्राप्त कर लेना भी वांछनीय है।

१–राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर से प्रकाशित

२–गैरोला : संस्कृत साहित्य का इतिहास पृ. १९२

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

कवि-वंश-परिचय

चन्द्रशेखर भट्ट वासिष्ठ-वंशीय[१] लक्ष्मीनाथ भट्ट के पुत्र हैं। ग्रंथकार ने अपने पूर्वजों में वृद्धप्रपितामह रामचन्द्र भट्ट[२], पितामह रायभट्ट[३] और पितृ-चरण लक्ष्मीनाथ भट्ट का उल्लेख किया है।

भट्ट लक्ष्मीनाथ ने प्राकृतपिंगलसूत्र की टीका 'पिंगलप्रदीप' में अपना वंश-परिचय इस प्रकार दिया है —

भट्टः श्रीरामचन्द्रः कविविबुधकुले लब्धदेहः श्रुतो यः
श्रीमान्नारायणाख्यः कविमुकुटमणिस्तत्तनूजोऽजनिष्ट।
तत्पुत्रो रायभट्टः[४] सकलकविकुलख्यातकीर्त्तिस्तदीयो
लक्ष्मीनाथस्तनूजो रचयति रुचिरं पिंगलार्थप्रदीपम् ॥

[मंगलाचरण पद्य ५]

इस आधार से ग्रंथकार का वंशवृक्ष इस प्रकार बनता है :—

रामचन्द्र भट्ट
|
नारायण भट्ट
|
राय भट्ट
|
लक्ष्मीनाथ भट्ट
|
चन्द्रशेखर भट्ट

१—लक्ष्मीनाथ सुभट्टवर्य्य इति यो वासिष्ठवंशोद्भव—
स्तत्सूनुः कविचन्द्रशेखर इति प्रख्यातकीर्त्तिर्भुवि।

[वृत्तमौक्तिक प्रशस्तिः ५]

२—अस्मद्वृद्धप्रपितामहमहाकविपण्डितश्रीरामचन्द्रभट्टविरचिते ···।

[वृत्तमौक्तिक पृ० १०७]

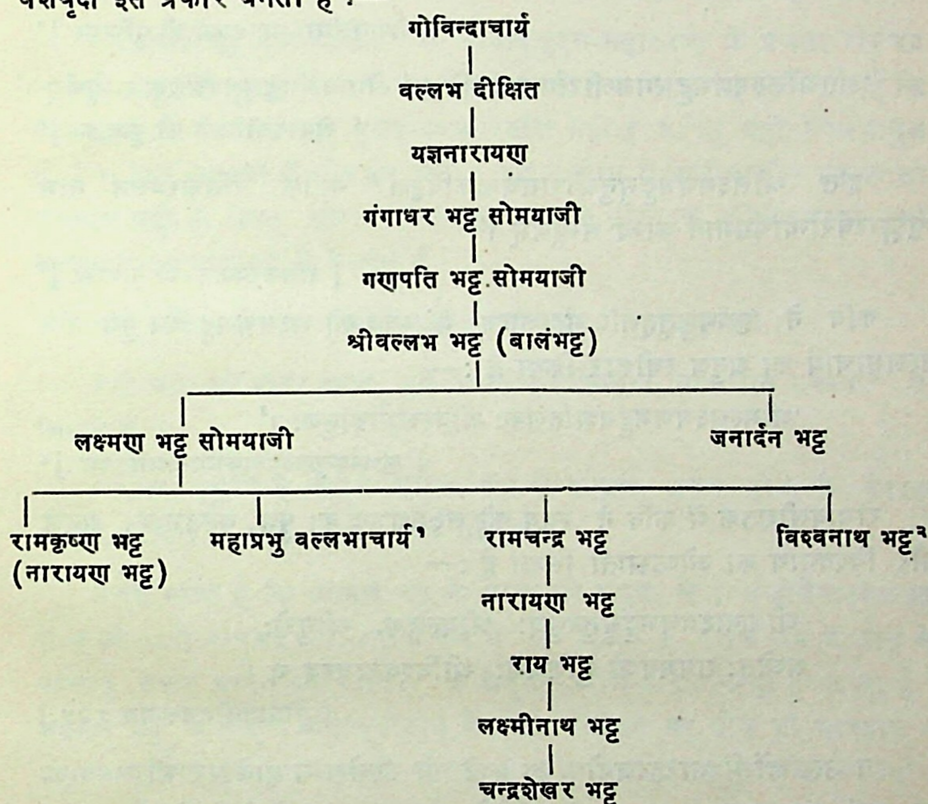
३—अस्मत्पितामहमहाकविपण्डितश्रीरायभट्टकृते···।

[वृत्तमौक्तिक पृ० १२१]

४—निर्णयसागर संस्करण और प्राकृतपैङ्गलम् भा० १ में 'रामभट्टः' मुद्रित है, जो कि अशुद्ध है।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

ग्रंथकार के वृद्धप्रपितामह श्रीरामचन्द्र भट्ट वस्तुतः तैलंगदेशीय वेलनाट यजुर्वेदान्तर्गत तैत्तिरीयशाखाध्यायी आपस्तम्ब त्रिप्रवरान्वित आंगिरस बार्हस्पत्य भारद्वाजगोत्रीय श्री लक्ष्मण भट्ट सोमयाजी के पुत्र हैं; जोकि वसिष्ठवंशीय ननिहाल में मातुल के यहाँ दत्तकरूप में चले गये थे। अतः भारद्वाजीय गोत्रापेक्षया वंशवृक्ष इस प्रकार बनता है :—



वासिष्ठ एवं भारद्वाज दोनो गोत्रों का उल्लेख होने से यहाँ यह विचारणीय है कि रामचन्द्र भट्ट भारद्वाज-गोत्रीय थे या वसिष्ठ-गोत्रीय ? या नाम-साम्य से रामचन्द्र भट्ट एक ही व्यक्ति हैं अथवा भिन्न-भिन्न ? और, यदि एक ही व्यक्ति हैं तो गोत्रभेद का क्या कारण है ? तथा रामचन्द्र भट्ट यदि वल्लभाचार्य के अनुज हैं तो वल्लभ-साहित्य एवं परम्परा में रामचन्द्र एवं इनकी परम्परा का उल्लेख क्यों नहीं है ? आदि प्रश्न उपस्थित होते हैं। अतः इन पर यहाँ विचार करना असंगत न होगा।

१—देखें, कांकरोली का इतिहास, द्वितीय भाग, एवं वल्लभवंशवृक्ष।
२—देखें, वल्लभवंशवृक्ष।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

रामचन्द्र भट्ट ने स्वप्रणीत 'गोपाललीला-महाकाव्य', 'रोमावलीशतक' एवं 'रसिकरञ्जनं' की पुष्पिकाओं में स्वयं को लक्ष्मणभट्ट का पुत्र स्वीकार किया है :—

'इति श्रीलक्ष्मणभट्टात्मजश्रीरामचन्द्रविरचिते गोपाललीलाख्ये महाकाव्ये कंसवधो नाम एकोनविंश: सर्ग: ।'

[गोपाललीला महाकाव्य की पुष्पिका][1]

'इतिश्रीलक्ष्मणभट्टात्मजश्रीरामचन्द्रकविकृतं रोमावलीशृङ्गारशतकं सम्पूर्णम् ।'

[रोमावलीशतक की पुष्पिका][2]

'इति श्रीलक्ष्मणभट्टसूनुश्रीरामचंन्द्रकविकृतं सटीकं रसिकरञ्जनं नाम शृङ्गारवैराग्यार्थसमानं काव्यं सम्पूर्णम् ।'

[रसिकरञ्जन की पुष्पिका][3]

कवि ने 'कृष्णकुतूहल' महाकाव्य में स्वयं को लक्ष्मणभट्ट का पुत्र और वल्लभाचार्य का अनुज स्वीकार किया है :—

'श्रीमल्लक्ष्मणभट्टवंशतिलक: श्रीवल्लभेन्द्रानुज: ।'

[कृष्णकुतूहलमहाकाव्य-प्रशस्तिपद्य][4]

रोमावलीशतक में कवि ने स्वयं को लक्ष्मणभट्ट का पुत्र, वल्लभ का अनुज और विश्वनाथ का ज्येष्ठभ्राता लिखा है :—

'श्रीमल्लक्ष्मणभट्टसूनुरनुज: श्रीवल्लभ: श्रीगुरो:,
अध्येतु: सममग्रजो गुणिमणे: श्रीविश्वनाथस्य च ।'

[रोमावलीशतक-पद्य १२५]

इन उल्लेखों में भारद्वाजगोत्र का कहीं भी उल्लेख न होने पर भी लक्ष्मणभट्ट एवं वल्लभाचार्य का उल्लेख होने से यह स्पष्ट है कि ये भारद्वाजगोत्रीय थे।

रामचन्द्र भट्ट ने 'कृष्णकुतूहल-महाकाव्य' के अष्टम सर्ग के प्रांत में स्वयं का वसिष्ठगोत्र स्वीकार किया है :—

१—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा सन् १९२९ में प्रकाशित
२—राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर, ग्रं. नं० ११२३५
३—काव्यमाला चतुर्थ गुच्छक में प्रकाशित
४—गोपाललीला-भूमिका

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

'विद्यानिष्ठवसिष्ठगोत्रजनुषा तेन प्रणीते महा—
काव्ये कृष्णकुतूहलेंबरहुतिः सर्गोऽजनिष्टाष्टमः ।'

अतः यह स्पष्ट है कि रामचंद्र भट्ट स्वयं को लक्ष्मण भट्ट का पुत्र और वल्लभ का अनुज मानते हुए भी अपना वासिष्ठ-गोत्र स्वीकार करते हैं।

चन्द्रशेखर भट्ट वृत्तमौक्तिक[1] में कृष्णकुतूहल-महाकाव्य के प्रणेता रामचंद्र भट्ट को 'प्रवृद्धपितामह' शब्द से सम्बोधित करते हैं। अतः यह निर्विवाद है कि नाम-साम्य से रामचन्द्र भट्ट पृथक्-पृथक् व्यक्ति नहीं है अपितु वही वल्लभानुज ही हैं। ऐसी अवस्था में गोत्रभेद क्यों ? इस सम्बन्ध में कोई प्राचीन प्रमाण तो उपलब्ध नहीं हैं, किन्तु गोपाललीला-महाकाव्य के सम्पादक श्री बेचनराम शर्मा सम्पादकीय-उपसंहार[2] में लिखते हैं :—

'इयं वसिष्ठगोत्रोद्भवत्वोक्तिर्मातामहगोत्राभिप्रायेण ऊहनीया।'

इसी बात को स्पष्ट करते हुये भारतेन्दु हरिश्चन्द्र 'वल्लभीय सर्वस्व'[3] में लिखते हैं :—

'लक्ष्मण भट्टजी के मातुल वसिष्ठ-गोत्र के ब्राह्मण अपुत्र होने के कारण इनको (रामचन्द्र को) अपने घर ले गये थे।'

इससे स्पष्ट है कि लक्ष्मण भट्ट के मामा जो अपुत्र थे; उन्होंने लक्ष्मणभट्ट से अपने नाती रामचंद्र को दत्तक रूप में ले लिया। दत्तक रूप में जाने के पश्चात् उत्तर भारत की परम्परा के अनुसार गोत्र-परिवर्तन हो ही जाता है। लक्ष्मण भट्ट के मातुल वसिष्ठगोत्रीय थे अतः रामचंद्र का गोत्र भी भारद्वाज न हो कर वसिष्ठ हो गया। यही कारण है कि रामचंद्र भट्ट ने स्वयं का गोत्र वसिष्ठ ही स्वीकार किया है।

वसिष्ठ-गोत्र का उल्लेख करते हुए भी धर्म (दत्तक) पिता का नाम न देकर सर्वत्र लक्ष्मणभट्ट-तनुज और वल्लभानुज का उल्लेख करना अप्रासंगिक सा प्रतीत होता है किन्तु तत्त्वतः विरोध न होकर विरोधाभास ही है। इसका मुख्य कारण यह है कि रामचंद्र भट्ट ने पुरुषोत्तम-क्षेत्र में वल्लभाचार्य के सहवास में रह कर

१—देखें, पृष्ठ १०५, १०७

२—देखें, गोपाललीला पृ० २५५

३—भारतेन्दु ग्रंथावली भाग ३, पृ० ५६८

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

सर्वशास्त्र और सर्व दर्शनों का अध्ययन आचार्यश्री से ही किया था।[१] अतः पितृ-भक्ति, भ्रातृ-प्रेम एवं भक्तिवश ही इनका सर्वत्र स्मरण किया जाना स्वाभाविक ही है।

अतएव यह तो स्पष्ट ही है कि रामचन्द्र भट्ट गोत्रापेक्षया पृथक्-पृथक् व्यक्ति न हो कर लक्ष्मण भट्ट के पुत्र एवं वल्लभ के लघुभ्राता थे और दत्तकरूप में वसिष्ठ-वंश में जाने के कारण भारद्वाजगोत्रीय न रह कर वसिष्ठगोत्रीय हो गये थे। संभव है इसी कारण से पुष्टिमार्गप्रवर्त्तक वल्लभाचार्य के जीवनवृत्त-सम्बन्धी समग्र-साहित्य में रामचंद्र भट्ट एवं इनकी परम्परा का कोई उल्लेख नहीं हुआ हो! अस्तु।

वंश-परिचय गोविन्दाचार्य से न देकर ग्रंथकार-सम्मत वसिष्ठगोत्रापेक्षया रामचन्द्र भट्ट से दिया जा रहा है।

रामचन्द्र भट्ट

इनके पिताश्री का नाम लक्ष्मण भट्ट[२] और मातुश्री का नाम इललम्मागारू था। इनका जन्म अनुमानतः वि० सं० १५४०[३] में काशी में हुआ था। लक्ष्मण भट्ट का स्वर्गवास वि० सं० १५४६ चैत्र कृष्णा नवमी को दक्षिण में वेंकटेश्वर बालाजी नामक स्थान पर हुआ था। स्वर्गवास के पूर्व ही लक्ष्मण भट्ट ने अपने मातामह की संपूर्ण चल और अचल संपत्ति इनको प्रदान कर अयोध्या भेज दिया था। इस सम्बन्ध में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र 'वल्लभीयसर्वस्व'[४] में लिखते हैं :—

'लक्ष्मण भट्टजी साक्षात् पूर्णपुरुषोत्तम के धाम अक्षरब्रह्म शेषजी के स्वरूप हैं, इससे आपको त्रिकाल का ज्ञान है। सो जब आपने अपना प्रयाण समय निकट जाना तब कांकरवार से बड़े पुत्र रामकृष्ण भट्टजी को बालाजी में बुलाया और वहीं आपने डेरा किया। पुत्रों को अनेक शिक्षा देकर श्री रामकृष्ण भट्टजी को श्री

१—'श्रीमल्लक्ष्मणभट्टवंशतिलकः श्रीवल्लभस्य प्रियः,
शिष्यस्सच्चरणप्रसादशरणो यो रामचन्द्रःकविः।'

[भारतेन्दु हरिश्चन्द्रः गोपाललीला-भूमिका]

'पुरुषोत्तमक्षेत्रे समागत्य ज्येष्ठभ्रातुः श्रीवल्लभाचार्यात्.............सकाशात् सर्वाणि शास्त्राणि मतानि च समधीत्य।'

[बेचनराम शर्माः गोपाललीला-उपक्रमवर्णन]

२—लक्ष्मण भट्ट जी के परिचय के लिए देखें, कांकरोली का इतिहास भाग २

३—कृष्णमाचारी : हिस्टोरी ऑफ दी क्लासिकल संस्कृत लिटरेचर, पृ० २६१

४—भारतेन्दु ग्रंथावली भाग ३, पृ० ५७५

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यज्ञनारायण के समय के श्रीरामचन्द्रजी पधराय दिए और कहा कि देश में जा कर सब गांव और घर आदि पर अधिकार और बेल्लिनाटि तैलंग जाति की प्रथा और अपने कुल अनुसार सब धर्म पालन करो। ऐसे ही श्रीयज्ञनारायण भट्ट के समय के एक शालिग्रामजो और मदनमोहनजी श्रीमहाप्रभुजी को देकर कहा कि आप आचार्य होकर पृथ्वी में दिग्विजय करके वैष्णवमत प्रचार करो और छोटे पुत्र रामचन्द्रजी को, जिनका काशी में जन्म हुआ था, अपने मातामह की सब स्थावर-जंगम-संपत्ति दिया।'

यहाँ लक्ष्मण भट्ट के वसिष्ठगोत्रीय मातामह और मातुल का नाम प्राप्त नहीं है। सम्भवत: ये अयोध्या में ही रहते हों और इनकी स्थावर एवं जङ्गम सम्पत्ति भी अयोध्या में ही हो। पो० कण्ठमणि शास्त्री[1] ने लक्ष्मण भट्ट का ननिहाल धर्मपुरनिवासी बह्‌वृच् मौद्‌गल्यगोत्रीय काशीनाथ भट्ट के यहाँ स्वीकार किया है जब कि प्रस्तुत ग्रंथकार चन्द्रशेखर भट्ट एवं भारतेन्दु हरिश्चन्द्र[2] वसिष्ठगोत्र में स्वीकार करते हैं। मेरे मतानुसार संभव है कि लक्ष्मण भट्ट के पिता बालंभट्ट ने दो शादियाँ की हों। एक बह्‌वृच् मौद्‌गल्यगोत्रीया 'पूर्णा' के साथ और दूसरी वसिष्ठगोत्रीया के साथ। फिर भी यह प्रश्न तो रह ही जाता है कि लक्ष्मण भट्ट बह्‌वृच् मौद्‌गल्यगोत्रीया पूर्णा के पुत्र थे या वसिष्ठगोत्रीया के ? इसका समाधान तो इस वंश-परम्परा के विद्वान् ही कर सकते हैं।

कवि रामचन्द्र आदि चार भाई थे। नारायणभट्ट उपनाम रामकृष्ण भट्ट और वल्लभाचार्य बड़े भाई थे और विश्वनाथ छोटे भाई थे। रामकृष्ण भट्ट कांकर-वाड़ में ही रहते थे और पिताश्री लक्ष्मण भट्ट के स्वर्गारोहण के कुछ समय पश्चात् ही सन्यासी हो गये थे।[3] केशवपुरी के नाम से ये प्रसिद्ध थे और दक्षिण-भारत के किसी प्रसिद्ध मठ के अधिपति थे। डॉ० हरिहरनाथ टंडनलिखित 'वार्ता साहित्य एक बृहत् अध्ययन'[4] के अनुसार गोविन्दरायजी (सत्ताकाल

१–कांकरोली का इतिहास, भाग २, पृ० ५

२–भारतेन्दु-ग्रंथावली, भाग ३, पृ० ५६८

३–'ये कांकरवाड़ में ही रहते थे। ये कुछ दिन पीछे सन्यासी हो गये तब केशवपुरी नाम पड़ा। ये ऐसे सिद्ध थे कि खड़ाऊ पहिने गंगा पर स्थल की भांति चलते थे।'

भारतेन्दु ग्रंथावली भा० ३, पृ० ५६८

४–'हरिरायजी के प्रागट्य के सम्बन्ध में सम्प्रदाय के ग्रंथों में यह प्रसिद्ध है कि जब श्री कल्याणरायजी दस वर्ष के थे, तब एक दिन श्रीआचार्यजी के छोटे भाई केशवपुरी जो सन्यासी हो गए थे और दक्षिणभारत के किसी बड़े मठ के अधिपति थे वहां आए और उन्होंने श्रीगुसाईंजी से अपनी गद्दी के लिये एक बालक मांगा, जिस पर आपने कहा कि जिस बालक के पास ठाकुरजी नहीं होंगे उन्हें दे दिया जायगा। श्रीकल्याणरायजी के पास ठाकुरजी नहीं थे। इसलिये उन्हें देना निश्चित हुआ।'

वार्ता साहित्य एक बृहत् अध्ययन पृ० ३६७

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१५९९-१६५०) के प्रथम पुत्र कल्याणरायजी (जन्म सं० १६२५) दस वर्ष की अवस्था में केशवपुरी गुसाईंजी से मिले थे। अतः 'शतायु' से अधिक ये विद्यमान रहे यह निश्चित ही है। वि० सं० १५६८ में रचित 'बद्रिकाश्रमवृत्तिपत्रक'[1] नामक एक पत्र आपका प्राप्त होता हैं ; जिसका आद्यन्त इस प्रकार है :—

गोभिर्वृ तं प्रकृतिसुन्दरमन्दहास-
भाषासमुल्लसितमञ्जुलवक्त्रबिम्बम् ।
श्रीनन्दनन्दनमखण्डितमण्डलाभं,
बालार्यमिश्रय(क)मह्लं हृदि भावयामि ॥१॥

× × ×

विद्वद्भिः किल कृष्णदासकमुखैः शिष्यैरनेकैर्वृ तः,
सोऽहं श्रीबद्री(दरी)वनान्तमगमं शुक्रे(ज्येष्ठ)शकाब्दे तथा।
देवाम्भःपतिभूमिते (१४३३) सह नरं नारायणं वीक्षितुं,
तत्र व्यासमुनीशसङ्गतिरभूदाकस्मिकी मे शुभा ॥६॥

× × ×

श्रीवल्लभाचार्यमहाप्रभूणां नियोगतो बुद्धिमतां विभाव्य ।
श्रीरामकृष्णाभिधभट्ट एतल्लेखं व्यतानीत् पुरतश्च तेषाम् ॥११॥

द्वितीय बृहद्भ्राता महाप्रभु वल्लभाचार्य भारत के प्रसिद्धतम आचार्यों में से हैं। इनका प्रतिपादित पुष्टिमार्ग आज भी भारत के कोने-कोने में फैला हुआ है। इनही के साहचर्य में रह कर रामचन्द्र भट्ट ने समग्र शास्त्रों का अध्ययन किया था और वे इन्हें केवल बड़ा भाई ही नहीं अपितु अपना गुरु भी मानते थे।

रामचन्द्र भट्ट वेदान्त, मीमांसा, व्याकरण, काव्य और साहित्य-शास्त्र के विशिष्ट विद्वान् थे। न केवल विद्वान् ही अपितु वादजेता भी थे। अहर्निश शास्त्रार्थ में रत रहने के कारण कई पराजित वादी आपके विरोधी भी हो गये थे और इसी विरोध-स्वरूप आपको विष भी दे दिया गया था।[2] इससे ऐसा प्रतीत होता है कि ये अल्पायु में ही स्वर्गलोक को प्राप्त हो गए थे।

महाकवि रामचन्द्र भट्ट ने अनेक ग्रंथों का निर्माण किया होगा ! वर्तमान में इनके रचित निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त होते हैं। जिनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है:—

१–यह पत्र वार्ता साहित्य एक बृहत् अध्ययन पृ० १४५ पर प्रकाशित है।
२–भारतेन्दु ग्रंथावली, भाग ३, पृष्ठ [illegible]

CC-0. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१. गोपाललीला महाकाव्य :—कवि ने इस काव्य में भगवान् श्रीकृष्ण का जन्म से लेकर कंस-वध पर्यन्त भगवल्लीला का वर्णन १९ सर्गों में किया है। प्रत्येक सर्ग की पद्यसंख्या इस प्रकार है :—७०, ५८, ७८, ७१, ५१, ७६, ७६, ५२, ६२, ७५, ६१, ६०, ५१, ६१, ५६, ६१, ६६, ५७, ७६। इसमें रचना-संवत् का उल्लेख नहीं है। प्रसाद एवं माधुर्यगुण युक्त रचना है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने इसका प्रकाशन वि० सं० १९२९ में किया है; जो अब अप्राप्त है। इस काव्य का संपादन काशिक राजकीय पाठशाला के सांख्यशास्त्र के प्रधानाध्यापक पं० बेचनराम शर्मा ने किया है। इस काव्य का आद्यन्त इस प्रकार है:—

आदि— शुभममितमचिन्त्यचिद्विचित्रं श्रुतिशतमूर्धनि केशपाशकल्पम्।
दिशतु किमपि धाम कामकोटि-प्रतिभटदीधिति वासुदेवसंज्ञम् ॥१॥
वहति शिरसि नागसम्भवं यः स्फुटमनुरागमिवात्मभक्तियुक्ते।
कटतटविगलन्मदाम्बुदम्भ-श्रितकरुणारसमाश्रये गणेशम् ॥२॥
कविजनरसनाग्रतुङ्ग रङ्ग-स्थलकृतलास्यकलाविलासकाम्या।
कृतिषु सपदि वाञ्छितं यथेच्छं मयि ददती करुणां करोतु वाणी ॥३॥
इह विदधति भव्यकाव्यबन्धान् भुवि यशसे कवयस्तदाप्नुवन्ति।
इति भवति ममापि काव्यबन्धे व्रजन इवाधिगिरि स्पृहाति पङ्गोः ॥४॥
मयि विदधति काव्यबन्धमन्धाः स्तवमथवा पिशुनाः सृजन्तु निन्दाम्।
अहमिह न बिभेमि कीर्त्तनीयं कथमपि कृष्णकुतूहलं मया यत् ॥५॥

अन्त— विप्रैराद्योप्यजादेर्विधिवदुपनयादेत्य जन्म द्वितीयं,
हृद्गायत्र्याः स्वयं तां निजहृदि निदधद् ब्रह्मविच्चित्रकृद्यः।
साङ्गे वेदेऽप्यधीती सपदि किल ऋचो यस्य विश्वासरूपा-
स्तत्राभिर्व्यक्तमूर्त्तिर्विभुरपि स मम श्रीधरः श्रेयसेऽस्तु ॥७६॥

इति श्रीलक्ष्मणभट्टात्मजश्रीरामचन्द्रविरचिते **गोपाललीलाख्ये** महाकाव्ये कंसवधो नाम एकोनविंशः सर्गः।

२. कृष्णकुतूहल महाकाव्य :—कवि ने इस काव्य की रचना वि.सं. १५७७ में अयोध्या में रहते हुए की है।[1] इसका भी प्रतिपाद्य विषय श्रीकृष्णलीला का

१—अब्दे गोत्रमुनीषुचन्द्रगणिते (१५७७) माघस्य पक्षे सिते-
ऽयोध्यायां निवसन् सतां परगुणप्रीत्यात्मनां सेवकः।
श्रीमल्लक्ष्मणभट्टवंशतिलकः श्रीवल्लभेन्द्रानुजः,
काव्यं कृष्णकुतूहलाख्यमकृत श्रीरामचन्द्रः कविः।
[गोपाललीला पृ० २५५]

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

वर्णन ही हैं। श्रीगोपाललीला काव्य की अपेक्षा इसकी रचना अधिक प्रौढ़ और प्राञ्जल है।[1] यह काव्य अद्यावधि अप्राप्त है। बेचनराम शर्मा ने गोपाललीला के सम्पादकीय उपसंहार में अवश्य उल्लेख किया है कि आरम्भ के दो पत्ररहित इसकी प्रति मुझे प्राप्त हुई है।[2] विशेष शोध करने पर संभव है इस महाकाव्य की अन्य प्रतियाँ भी प्राप्त हो जायँ।

प्रस्तुत ग्रन्थ में चन्द्रशेखर भट्ट ने भी मत्तमयूर, प्रहर्षिणी, वसन्ततिलका, प्रहरणकलिका, मालिनी, पृथ्वी, शिखरिणी, हरिणी, मन्दाक्रान्ता, शार्दूलविक्रीडित और स्रग्धरा छन्द के प्रत्युदाहरण कृष्णकुतूहल काव्य के दिये हैं। इन कतिचित् पद्यों का रसास्वादन करने से यह स्पष्ट है कि वस्तुतः यह काव्य महाकाव्य की श्रेणि का ही है।

३. **रोमावलीशतकम्** :—१२५ पद्यों का यह खण्ड-काव्य है। वि० सं० १५७४ में इसकी रचना हुई है। यह लघुकाव्य आलंकारिक-भाषा में श्रृंगार-रस से ओत-प्रोत है। इसमें कवि ने अनेक छन्दों का प्रयोग किया है। इसका आद्यंत इस प्रकार है :—

आदि— श्रीलावण्याब्धिवेलाकलितनववयोवासशालात्रिशाला,
लीला नानाकलानां त्वरितमपसरद्‌वाल्यचेलाञ्चलश्रीः।
ह्रीलाभस्याग्रदूतीविहितपतिवशीभावशीलादिशिक्षा—
भीलास्यं रोमराजी हरतु हरिरुचिर्वाच्यवाचां श्रिया नः ॥१॥

व्यासस्यादिकवेः सुबन्धुविदुषो बाणस्य चान्यस्य वा,
वाचामाश्रितपूर्वपूर्ववचसामासाद्य काव्यक्रमम्।
अर्वाञ्चो भवभूति-भारविमुखाः श्रीकालिदासादयः,
सञ्जाताः कवयो वयं तु कवितां के नाम कुर्वीमहि ॥२॥

इत्थं जातविकत्थनेऽपि कवितामार्गे कथं सञ्चर—
न्नञ्चेयं कविकीर्त्तिमित्यतितरां जागर्त्ति चिन्तां चिरात्।
तत्किं काव्यमुपक्रमेयकविभिः प्राङ्मर्द्दिते वाङ्मये,
भारत्या विभवेऽथवाऽतिसुलभं किं कस्य नाभ्यस्यतः ॥३॥

१—'गोपाललीला की अपेक्षा कृष्णकुतूहल विशेष चमत्कृति बना है।'
भारतेन्दु हरिश्चन्द्र : गोपाललीला भूमिका।

२—'इदं च कृष्णकुतूहलाख्यं काव्यमारम्भे द्वितीयपत्ररहितं मयासादि।' पृ० २५५

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अतिशस्तवस्तुवृत्तिर्बहुशस्तन्यस्तनवरसोपाधिः ।
अर्वाचीनकवीनामुपमाता कालिदासोऽभूत् ॥४॥

प्रभवति परनेकः पञ्चषाणां समाजे,
निजमतगुणजातिर्दुर्ज्जनस्त्याज्यमूर्तिः ।
श्रवणरसनचक्षुर्घ्राणिहृत्त्वक्कदम्बे,
प्रथममिह मनीषी वेत्तु दृष्टान्तमन्तः ॥५॥

श्रितभूपचेतसि सतां जातु न वक्रादिभावविदम् ।
भुवि कविभिरसुलभादौ विदितः सदृशः सतां सदालोड्यः ॥६॥

कृतेराद्यश्लोके मतिमुपयता कर्त्तुमधुना,
न शक्यं केनापि क्वचन शतशो वर्णनमिति ।
मुहुः श्रुत्वा लोकाञ्जनितकृतिकौतूहलहृदा,
मयोपक्रम्यान्यस्सपदि विहितं साहसमिदम् ॥७॥

अस्पृष्टपूर्वकविताच्छवितां दधान,
उर्वीधरेश्वरमनोतिविनोदनाय ।
श्लोकैः शतेन कुतुकात् कविरामचन्द्रो,
रोमावलेः किमपि वर्णनमातनोति ॥८॥

× × ×

अन्त— श्रीमल्लक्ष्मणभट्टसूनुरनुजः श्रीवल्लभश्रीगुरो-
रध्येतुः सममग्रजो गुणिमणेः श्रीविश्वनाथस्य च ।
अब्दे वेदमुनीषुचन्द्रगणिते (१५७४) श्रीरामचन्द्रः कृती,
रोमालीशतकं व्यधात् सकुतुकादुर्वीधरप्रीतये ॥१२५॥

इति श्रीलक्ष्मणभट्टात्मजश्रीरामचन्द्रकविकृतं रोमावलीशृङ्गारशतकं सम्पूर्णम् ।

× × ×

यह काव्य अद्यावधि अप्रकाशित है । इसकी एक पूर्ण प्रति विद्याविभाग सरस्वती भंडार, कांकरोली में है,[1] और दो अपूर्ण प्रतियें राजस्थान प्राच्य-विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर[2] एवं शाखा-कार्यालय जयपुर[3] में है ।

---

१. बंध ६६।१२, पत्र संख्या १२, प्रथमपत्र लिखित परिचय—"पुस्तकमिदं पञ्चनदि-मधुसूदनभट्टस्य । शृङ्गारशतके रामचन्द्रकविकृते ।"–किनारे पर–"लक्ष्मीनाथभट्टीयम् ।"

२. ग्रन्थ नं० ११२३५ पत्र संख्या १७

३. विश्वनाथ शारदानन्दन संग्रह, ग्रंथांक ३३५ ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

४. रसिकरञ्जन स्वोपज्ञटीका-सहित :— इस लघुकाव्य का दूसरा नाम 'शृङ्गारवैराग्यशतम्' भी है। इस काव्य की यह विशेषता है कि प्रत्येक पद्य शृङ्गार और वैराग्य दोनों अर्थों का समानरूप से प्रतिपादन करता है अर्थात् इसे द्वयाश्रय काव्य या द्विसन्धान काव्य भी कह सकते हैं। इसमें कुल १३० पद्य हैं। टीका की रचना स्वयं कवि ने वि० सं० १५८०, अयोध्या में की है। ग्रंथ का आद्यंत इस प्रकार है :—

आदि— शुभारम्भे दम्भे महितमतिडिम्भेङ्गितशतं ,
मणिस्तम्भे रम्भेक्षणसकुचकुम्भे परिणतम् ।
अनालम्बे लम्बे पथि पदविलम्बेऽमितसुखं ,
तमालम्बे स्तम्बेरमवदनमम्बेक्षितमुखम् ॥१॥

× × ×

एकश्लोककृतौ पुरः स्फुरितया सत्तत्त्वगोष्ठया समं ,
साधूनां सदसि स्फुटां विटकथां को वाच्यवृत्त्या नयेत् ।
इत्याकर्ण्य जनश्रुतिं वितनुते श्री**रामचन्द्रः** कविः ,
श्लोकानां सह पञ्चविंशतिशतं शृङ्गारवैराग्ययोः ॥३॥

अन्त— प्रख्यातो यः पदार्थैरमृतहरिगजश्रीसखैः श्लोकशाली ,
स्फीतातिस्फूर्तिरुद्यद्बुधमुदनुगिरं क्षीरधी **रामचन्द्रः** ।
श्रान्तोऽस्मिन् मन्दरागः फणिपतिगुणभृञ्जातुमज्जेत्कथं न,
स्यादाधारोऽमुना चेदिह न विरचितः श्रीमता वाङ्मुखेन ॥१३०॥

× × ×

टीका का उपसंहार—
शृङ्गारवैराग्यशतं सपञ्चविंशत्य**योध्यानगरे** व्यधत्त ।
अब्दे वियद्वारणबाणचन्द्रे (१५८०), श्री**रामचन्द्रो**ऽनु च तस्य **टीकाम्** ॥
श्रीरामचन्द्रकविना काव्यमिदं व्यरचि विरतिबीजतया ।
रसिकानामपि रतये शृङ्गारार्थोऽपि संगृहीतोऽत्र ॥

पुष्पिका—इति श्रीलक्ष्मणभट्टसूनु-श्री**रामचन्द्र**कविकृतं **सटीकं रसिकरञ्जनं** नाम शृङ्गारवैराग्यार्थसमानं काव्यं सम्पूर्णम् ।

यह काव्य वि० सं० १७०३ की लिखित प्रति के आधार से संपादित होकर सन् १८८७ में काव्यमाला के चतुर्थगुच्छक में प्रकाशित हो चुका है, जो कि अब प्रायः अप्राप्य है।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

५. **शृङ्गारवेदान्त**—इसका उल्लेख केवल भारतेन्दु हरिश्चन्द्र[1] ने ही किया है, अन्य किसी भी सूचीपत्र में इसका उल्लेख नहीं है। अप्राप्त ग्रंथ है। मेरे विचारानुसार सम्भव है रसिकरंजनं के अपरनाम 'शृङ्गारवैराग्यशतं' को 'शृङ्गारवेदान्त' मान कर भारतेन्दुजी ने लिख दिया हो !

६. **दशावतार-स्तोत्रम्**—यह स्तोत्र अद्यावधि अप्राप्त है। इसका केवल एक पद्य वृत्तमौक्तिक[2] में पञ्चचामरं छन्द के प्रत्युदाहरण-रूप में उद्धृत हुआ है जो निम्नलिखित है :—

अकुण्ठधार भूमिदार कण्ठपीठलोचन—
क्षणध्वनद्ध्वनत्कृतिक्वणत्कुठारभीषण ।
प्रकामवाम जामदग्न्यनाम रामहैहय—
क्षयप्रयत्ननिर्दय व्ययं भयस्य जृम्भय ॥

७. **नारायणाष्टकम्**—यह स्तोत्र भी अद्यावधि अप्राप्त है। मदालसं छन्द का प्रत्युदाहरण देते हुये चन्द्रशेखरभट्ट[3] ने यह पद्य इस रूप में दिया है—

कुन्दातिभासि शरदिन्दावखण्डरुचि वृन्दावनव्रजवधू—
वृन्दागमच्छलनमन्दावहासकृतनिन्दार्थवादकथनम् ।
वन्दारुबिभ्यदरविन्दासनक्षुभितवृन्दारकेश्वरकृत—
च्छन्दानुवृत्तिमिह नन्दात्मजं भुवनकन्दाकृतिं हृदि भजे ॥

कवि की प्राप्त रचनाओं में सं. १५८० तक का उल्लेख है। अतः अनुमान किया जा सकता है कि इसके कुछ समय पश्चात् ही विषप्रयोग से कवि स्वर्गलोक को प्रयाण कर गया हो।

नारायण भट्ट—

कवि रामचन्द्र भट्ट के पुत्र नारायण भट्ट के सम्बन्ध में कोई विशिष्ट उल्लेख प्राप्त नहीं है और न इनके द्वारा रचित किसी कृति का उल्लेख ही प्राप्त होता है।

रायभट्ट—

कवि रामचन्द्र भट्ट के पौत्र रायभट्ट के सम्बन्ध में भी कोई ऐतिह्य उल्लेख प्राप्त नहीं है। इनका बनाया हुआ शृङ्गारकल्लोल नामक १०४ पद्यों का खण्ड-

---

१—भारतेन्दु ग्रन्थावली, भाग ३, पृ० ५६८
२—वृत्तमौक्तिक पृष्ठ १२९
३— " १६७

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

काव्य अवश्य प्राप्त होता है । इस लघुकाव्य में पार्वती और शंकर का शृङ्गार-वर्णन किया गया है । इस का उपसंहार और पुष्पिका इस प्रकार है :—

उपसंहार—गुम्फो वाचां मसृणमधुरो मालतीनामिव स्यात्,
अर्थो वाच्यः प्रसरणपरः सम्मितः सौरभस्य ।
भावव्यंग्यो रस इव रसस्तद्विदाह्लादहेतु:-
र्मलिवाऽसौ सुकविरचना कस्य भूषां न धत्ते ।।१०४।।

पुष्पिका—इति श्रीविद्यागरिष्ठ-वसिष्ठ-नारायणभट्टात्मजेन महाकविपण्डित-रायभट्टेन विरचितं शृङ्गारकल्लोलनाम खण्डकाव्यम् ।

चन्द्रशेखरभट्ट[1] ने मालिनी छन्द का प्रत्युदाहरण देते हुए लिखा है :—
"अस्मत्पितामहमहाकविपण्डितश्रीरायभट्टकृते शृङ्गारकल्लोले खण्डकाव्ये—

मन इव रमणीनां रागिणी वारुणीयं,
हृदयमिव युवानस्तस्कराः स्वं हरन्ति ।
भवनमिव मदीयं नाथ शून्यो हि देश-
स्तव न गमनमीहे पान्थ कामाभिरामा ।।"

इस पद्य को देखते हुये यह कहा जा सकता है कि काव्य-साहित्य पर आपका अच्छा अधिकार था और यह लघु रचना आपकी सफल रचना है । यह खण्ड-काव्य अद्यावधि अप्रकाशित है। इसकी १६९५ की लिखित[2] एकमात्र १२ पत्रों की प्रति विद्याविभाग सरस्वती भंडार कांकरोली में सं. कां. बंध ६६।१० पर सुरक्षित है । इस प्रति का द्वितीय पत्र अप्राप्त है ।

केटलॉग केटलोगरम् भा. १ पृ. ४७१ के अनुसार रायम्भटरचित 'यति-संस्कार-प्रयोग' नामक ग्रन्थ भी प्राप्त है । रायंभट्ट यही है या अन्य कोई विद्वान् ? इसका निर्णय प्रति के सम्मुख न होने से नहीं किया जा सकता ।

लक्ष्मीनाथ भट्ट—

चन्द्रशेखर भट्ट के पिता एवं कवि रामचन्द्र भट्ट के प्रपौत्र लक्ष्मीनाथ भट्ट के सम्बन्ध में भी कोई ऐतिह्य उल्लेख प्राप्त नहीं है । प्राप्त रचनाओं में पिङ्गल-प्रदीप का रचनाकाल १६५७ है, अतः इनका आविर्भाव-काल १६२० से १६३० के मध्य का माना जा सकता है । इनकी प्राप्त रचनाओं को देखते हुए यह

१. देखें, वृत्तमौक्तिक पृ. १२९.
२. भूतांकषट्विधुमिते (१६९५) वर्षे वारे निशेशस्य ।
चैत्रकृष्णप्रतिपदि लिखितं हरिशङ्करेणेदम् ।।

CC-0. ... Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

निःसंदेह कहा जा सकता है कि इनका अलङ्कार-शास्त्र, छन्दःशास्त्र और काव्य-साहित्य पर एकाधिपत्य था। 'सकलोपनिषद्रहस्यार्णवकर्णधार'[1] विशेषण से संभव है कि इन्होंने किसी उपनिषद् पर या उपनिषद्-साहित्य पर लेखिनी अवश्य ही चलाई हो ! वृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धार की रचना १६८७ में हुई है, अतः अनुमान है कि यह रचना इनकी अन्तिम रचना हो ! इनके द्वारा सर्जित प्राप्त साहित्य का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है:—

१. सरस्वतीकण्ठाभरण-टीका—धाराधिपति भोजनरेन्द्र-प्रणीत इस ग्रन्थ की टीका का नाम 'दुष्करचित्रप्रकाशिका' है। टीकाकार ने इसमें रचना संवत् नहीं दिया है। टीका के नाम से ऐसा प्रतीत होता है कि यह विस्तृत परिमाणवाली टीका न होकर दुर्गम स्थलों का विवेचन मात्र है। इसकी एकमात्र ४९ पत्रों की कीटभक्षित प्रति एशियाटिक सोसायटी, कलकता के संग्रह में सुरक्षित है। इसका आद्यन्त इस प्रकार है:—

आदि— स्मारं स्मारमुदारदारविरहव्याधिव्यथाव्याकुलं,
रामं वारिधिबन्धबन्धुरयशःसम्पृष्टदिङ्मण्डलम् ।
श्रीमद्भोजकृतप्रबन्धजलधौ सेतुः कवीनां मुदो
हेतुं संरचयामि बन्धविविधव्याख्यातकौतुहलैः ॥१॥

अन्त— श्रीरायभट्टतनयेन नयान्वितेन,
धाराधिनाथनृपतेः सुमतेः प्रबन्धे ।
प्रोचे यदेव वचनं रचनं गुणानां,
वाग्देवताऽपि परितुष्यति तेन माता ॥१॥

कुर्वन्तु कवयः कण्ठे दुष्करार्थसुमालिकाम् ।
लक्ष्मीनाथेन रचितां वाग्देवीकण्ठभूषणे ॥२॥

पुष्पिका— इति श्रीमद्रायभट्टात्मज-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टविरचिता सरस्वती-कण्ठाभरणालङ्कारे दुष्करचित्रप्रकाशिका समाप्ता ।

२. प्राकृतपिङ्गल-टीका—इस टीका का नाम पिङ्गलप्रदीप या छन्दःप्रदीप है। इसकी रचना सं. १६५७ में हुई है। प्रौढ एवं प्राञ्जल भाषा में विशद शैली में विवेचन होने से यह टीका छन्दः शास्त्रों के लिये सचमुच प्रदीप के समान ही है। इसका आद्यन्त इस प्रकार है—

---

१. देखें, वृत्तमौक्तिक पृ. २९१, २९४, २९६, २९९, ३०१ आदि

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

आदि— गोपीपीनपयोधरद्वयमिलच्चेलाञ्चलाकर्षण-
क्ष्वेलिव्यापृतचारुचञ्चलकराम्भोजं व्रजत्कानने ।
द्राक्षामञ्जुलमाधुरीपरिणमद्वाग्विभ्रमं तन्मना-
गद्वैतं समुपास्महे यदुकुलालम्बं विचित्रं महः ।।१।।

लम्बोदरमवलम्बे स्तम्बेरमवदनमेकदन्तवरम् ।
अम्बेक्षितमुखकमलं यं वेदो नापि तत्त्वतो वेद ।।२।।

गङ्गाशीतपयोभयादिव मिलद् भालाक्षिकीलादिव,
व्यालक्ष्वेलजफूत्कृतादिव सदा लक्ष्म्यापवादादिव ।
स्त्रीशापादिव कण्ठकालिमकुहूसान्निध्ययोगादिव,
श्रीकण्ठस्य कृशः करोतु कुशलं शीतद्युतिः श्रीमताम् ।।३।।

विहितदयां मन्देष्वपि दत्त्वानन्देन वाङ्मयं देहम् ।
शब्देऽर्थे सन्देहव्ययाय वन्दे चिरं गिरं देवीम् ।।४।।

भट्टश्रीरामचन्द्रः कविविबुधकुले लब्धदेहः श्रुतो यः,
श्रीमान्नारायणाख्यः कविमुकुटमणिस्तत्तनूजोऽजनिष्ट ।
तत्पुत्रो **रायभट्टः** सकलकविकुलख्यातकीर्त्तिस्तदीयो,
लक्ष्मीनाथस्तनूजो रचयति रुचिरं **पिङ्गलार्थप्रदीपम्** ।।५।।

श्री**रायभट्ट**तनयो **लक्ष्मीनाथः** समुल्लसत्प्रतिभः ।
प्रायः **पिङ्गलसूत्रे** तनुते भाष्यं विशालमतिः ।।६।।

जलौकसां तुल्यतमैः खलैः किं रम्येपि दोषग्रहणस्वभावैः ।
सतां परानन्दनमन्दिराणां चमत्कृतिं मत्कृतिरातनोतु ।।७।।

यन्न सूर्येण संभिन्नं नापि रत्नेन भास्वता ।
तत्**पिङ्गलप्रदीपेन** नाश्यतामान्तरं तमः ।।८।।

यद्यस्ति कौतुकं वश्छन्दःसन्दर्भविज्ञाने ।
सन्तः **पिङ्गलदीपं** लक्ष्मीनाथेन दीपितं पठत ।।९।।

किञ्च मत्कृतिरियं चमत्कृतिं चेन्न चेतसि सतां विधास्यति ।
भारती व्रजतु भारतीव्रया लज्जया परमसौ रसातलम् ।।१०।।

अन्त— इत्यादि गद्यकाव्येषु मया किञ्चित्प्रदर्शितम् ।
विशेषस्तत्र तत्रापि नोक्तो विस्तरशङ्कया ।।१।।

मन्दः कथं ज्ञास्यसि सत्पदार्थमित्याकलय्याशु मया प्रदीप्तम् ।
छन्दःप्रदीपं कवयो विलोक्य छन्दः समस्तं स्वयमेव वित्त ।।२।।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अब्दे भास्करवाजिपाण्डवरसक्ष्मा (१६५७) मण्डलोद्भासिते,
भाद्रे मासि सिते दले हरिदिने वारे तमिस्रापतेः ।
श्रीमत्पिङ्गलनागनिर्मितवरग्रन्थप्रदीपं मुदे,
लोकानां निखिलार्थसाधकमिमं लक्ष्मीपतिर्निर्ममे ॥३॥
विशिष्टस्नेहभरितं सत्पात्रपरिकल्पितम् ।
स्फुरद्वृत्तदशं छन्दःप्रदीपं पश्यत स्फुटम् ॥४॥
छन्दःप्रदीपकः सोऽयमखिलार्थप्रकाशकः ।
लक्ष्मीनाथेन रचितस्तिष्ठत्वाचन्द्रतारकम् ॥५॥

पुष्पिका—इत्यालङ्कारिकचक्रचूडामणिश्रीमद्रायभट्टात्मजश्रीलक्ष्मीनाथभट्टविरचिते पिङ्गलप्रदीपे वर्णवृत्ताख्यो द्वितीयः परिच्छेदः समाप्तः ।

डा. भोलाशंकर व्यास द्वारा सम्पादित प्राकृतपैङ्गलम्, भा. १ में यह टीका प्राकृत टेक्स्ट सोसायटी वाराणसी द्वारा सन् १९५९ में प्रकाशित हो चुकी है ।

३. **उदाहरणमञ्जरी**—यह ग्रन्थ अद्यावधि अप्राप्त है। लक्ष्मीनाथ भट्ट की यह स्वतन्त्र कृति प्रतीत होती है । इस ग्रन्थ में केवल छन्दों के ही नहीं, अपितु विपुल संख्या में प्राप्त छन्द-भेदों के उदाहरण भी दिये गये हैं। यही कारण है कि स्वयं लक्ष्मीनाथ ने पिंगलप्रदीप[1] में और भट्ट चन्द्रशेखर ने वृत्तमौक्तिक[2] में गाथा, स्कन्धक, दोहा आदि छन्द-भेदों के उदाहरणों के लिये 'उदाहरणमञ्जरी' देखने का आग्रह किया है । सं० १६५७ में रचित पिंगलप्रदीप में उल्लेख होने से यह निश्चित है कि इसकी रचना १६५७ के पूर्व ही हो चुकी थी ।

केटलॉगस् केटलॉगरम्, भाग २ पृष्ठ १३ पर इसका नाम उदाहरणचन्द्रिका दिया है, जो कि भ्रमवाचक है ।

४. **वृत्तमौक्तिक-द्वितीयखण्ड का अंश**—प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रथम-खण्ड की रचना चन्द्रशेखर भट्ट ने १६७५ में पूर्ण की है और द्वितीय-खण्ड की समाप्ति होने के पूर्व ही चन्द्रशेखर इस लोक से प्रयाण कर गये। प्रयाण करने के पूर्व इन्होंने अपनी आन्तरिक अभिलाषा अपने पिता लक्ष्मीनाथ भट्ट को बतलाई कि मेरे इस ग्रंथ को आप पूर्ण कर दें । सुयोग्य, प्रतिभाशाली, पाण्डवचरित आदि महाकाव्यों के प्रणेता, विनयशील पुत्र की अन्तिम अभिलाषा के अनुसार ही शोकसन्तप्त लक्ष्मीनाथ भट्ट ने अपने पुत्र की कीर्त्ति को अक्षुण्ण रखने के लिये तत्काल ही सं० १६७६ कार्त्तिकी पूर्णिमा के दिन इस ग्रंथ को पूर्ण कर दिया ।

१–देखें, पृष्ठ ३९२, ३९५, ३९७, ४०६, ४०९,
२–देखें, पृष्ठ १०, १३, १४, १६, १७, २१, २४,

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

याते दिवं सुतनये विनयोपपन्ने,
श्रीचन्द्रशेखरकवौ किल तत्प्रबन्धः ।
विच्छेदमाप भुवि तद्वचसैव सार्द्धं,
पूर्णीकृतश्च स हि जीवनहेतवेऽस्य ॥८॥

श्रीवृत्तमौक्तिकमिदं लक्ष्मीनाथेन पूरितं यत्नात् ।
जीयादाचन्द्रार्कं जीवातुर्जीवलोकस्य ॥६॥

× × ×

रसमुनिरसचन्द्रैर्भाविते (१६७६) वैक्रमेब्दे,
सितदलकलितेऽस्मिन्कार्त्तिके पौर्णमास्याम् ।
अतिविमलमतिः श्रीचन्द्रमौलिर्वितेने,
रुचिरतरमपूर्वं मौक्तिकं वृत्तपूर्वम् ॥६॥

यहाँ यह विचारणीय है कि द्वितीय-खंड का कितना अंश चन्द्रशेखरभट्ट ने लिखा है और कितने अंश की पूर्त्ति लक्ष्मीनाथ भट्ट ने की है ? इसका निर्णय करने के लिये वृत्तमौक्तिक का अंतरंग आलोडन आवश्यक है ।

ग्रंथकार की शैली सूत्रकार की तरह संक्षिप्त शैली नहीं है, प्रत्येक छन्द का लक्षण कारिकारूप में न देकर उसी लक्षणयुक्त पूर्ण पद्य में दिया है जिससे छन्द का लक्षण और विराम स्पष्ट हो जाते हैं और वह लक्षण उदाहरण का भी कार्य दे सकता है । पश्चात् स्वयं रचित उदाहरण और प्राचीन महाकवियों के प्रत्युदाहरण दिये हैं । और दूसरी बात, तत्समय में या प्राचीन छन्दःशास्त्रों में प्रयोग-प्राप्त प्रत्येक छन्द का लक्षण देने का प्रयत्न किया है। इस प्रकार की शैली हमें द्वितीय-खण्ड के प्रथमवृत्तनिरूपण प्रकरण तक ही प्राप्त होती है । द्वितीय प्रकरण से छन्दों का संक्षिप्तीकरण दृष्टिगोचर होता है । कतिपय स्थलों पर छन्दों के लक्षण उदाहरण-स्वरूप न होकर कारिका-सूत्ररूप में प्राप्त होते हैं । और, उस कारिका को स्पष्ट करने के लिये स्वोपज्ञ टीका प्राप्त होती है, जो कि प्रथम प्रकरण तक प्राप्त नहीं है । साथ ही, पीछे के प्रकरणों में छन्दःशास्त्रों के प्रचलित छन्दों के भी लक्षण न देकर अन्य ग्रंथ देखने का संकेत किया है एवं कई उदाहरणों के लिये 'ऊह्यम्' कह कर या प्रथमचरण मात्र ही दिया है । अतः यह अनुमान कर सकते हैं कि प्रथम प्रकरण तक की रचना चंद्रशेखर भट्ट की है और द्वितीय प्रकरण से १२वें प्रकरण तक की रचना लक्ष्मीनाथ भट्ट की है । किन्तु, तृतीय प्रकरण में 'प्रचितक' दण्डक का लक्षण छन्दःसूत्रकार आचार्य

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पिङ्गल-सम्मत दो नगण, आठ रगण[1] का प्राप्त है; जब कि लक्ष्मीनाथ भट्ट ने 'पिंगलप्रदीप'[2] में प्रचितक का लक्षण दो नगण, सात यगण स्वीकार किया है। दो नगण, सात यगण के लक्षण को 'वृत्तमौक्तिक में 'सर्वतोभद्र' दण्डक का लक्षण माना है और मतान्तर का उल्लेख करते हुए लिखा है—'एतस्यैवान्यत्र 'प्रचितकं' इति नामान्तरम्।'[3] अतः मेरे मतानुसार चतुर्थ अर्द्धसम-प्रकरण तक की रचना चन्द्रशेखर भट्ट की है और पंचम विषमवृत्त-प्रकरण से अन्त तक की रचना लक्ष्मीनाथ भट्ट की होनी चाहिये। अस्तु.

५. **वृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धार**—चन्द्रशेखरभट्ट रचित वृत्तमौक्तिक-प्रमथ खण्ड के प्रथम गाथा-प्रकरणस्थ पद्य ५१ से ८६ तक के ३६ पद्यों पर यह टीका है। टीकाकार ने इसे ११ विश्रामों में विभक्त किया है। मात्रोद्दिष्ट, मात्रानष्ट, वर्णोद्दिष्ट, वर्णनष्ट, वर्णमेरु, वर्णपताका, मात्रामेरु, मात्रापताका, वृत्तस्थ लघुगुरुसंख्या-ज्ञान, वर्णमर्कटी और मात्रामर्कटी नामक विश्राम हैं। छन्दःशास्त्र में यदि कोई कठिनतम विषय है तो वह है प्रस्तार। इसी प्रस्तार-स्वरूप का टीकाकार ने बहुत ही रोचक शैली में विशद वर्णन किया है, जिससे तज्ज्ञगण सरलता के साथ इस दुष्कर प्रस्तार का अवगाहन कर सकते हैं। इस टीका की रचना सं० १६८७ कार्त्तिककृष्णा पंचमी[4] को हुई है। यह टीका प्रस्तुत ग्रंथ में पृ० २९२ से ३२६ तक में मुद्रित है।

६. **शिवस्तुति**—यह शायद भगवान् शिव का स्तोत्र है या अष्टक या कविकृत किसी ग्रंथ का अंश है निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता! वृत्तमौक्तिक[5] में मदनगृह नामक मात्रिक छन्द का प्रत्युदाहरण देते हुए लिखा हैः— 'यथा वाऽस्मत्पितुः शिवस्तुतौ'। अतः संभवतः यह स्तोत्र ही होना चाहिए। पद्य निम्नलिखित हैः—

करकलितकपालं धृतनरमालं
भालस्थानलहुतमदनं कृतरिपुकदनं।
भवभयहरणं गिरिजारमणं
सकलजनस्तुतशुभचरितं गुणगणभरितम्।

१–देखें, वृत्तमौक्तिक पृ० १८४

२–'अथ प्रचितको दण्डकः—प्रचितकसमभिधो धीरधीभिः स्मृतो दण्डको न द्वयादुत्तरैःसप्तभिर्यैः। नगणद्वयादुत्तरैः सप्तभिर्यगणैर्धीरधीभिः सप्तविंशतिवर्णात्मकचरणः प्रचितकाख्यो दण्डकः स्मृतः।' [प्राकृतपैंगलम् पृ० ५०९]

३–देखें, वृत्तमौक्तिक पृ० १८५

४– ,, पृ० ३२६ ५– ,, पृ० ४५

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

कृतफणिपतिहारं त्रिभुवनसारं
दक्षमखक्षयसंक्षुब्धं रमणीलुब्धं ।
गलराजितगरलं गङ्गाविमलं
कैलाशाचलधामकरं प्रणमामि हरम् ।।

यह पूर्ण स्तोत्र अद्यावधि अप्राप्त है ।

७. **नन्दनन्दनाष्टक**—यह स्तोत्र भी अद्यावधि अप्राप्त है । इसका केवल एक पद्य चर्चरी छन्द के प्रत्युदाहरण-रूप में प्राप्त है:—

"यथा वा, अस्मत्तातचरणानां श्रीनन्दनन्दनाष्टके—[1]

मन्दहासविराजितं मुनिवृन्दवन्द्यपदाम्बुजं,
सुन्दराधरमन्दराचलधारि चारुलसद्भुजम् ।
गोपिकाकुचयुग्मकुंकुमपङ्करूषितवक्षसं ,
नन्दनन्दनमाश्रये मम किं करिष्यति भास्करिः ।

८. **सुन्दरीध्यानाष्टकम्**—यह अष्टकस्तोत्र भी अप्राप्त है । इसका भी केवल एक पद्य चर्चरी छन्द के प्रत्युदाहरण-रूप में प्राप्त है:—

"यथा वा, तेषामेव श्रीसुन्दरीध्यानाष्टके[2]—

कल्पपादपनाटिकावृतदिव्यसौधमहार्णवे ,
रत्नसङ्घकृतान्तरीपसुनीपराजिविराजिते ।
चिन्तितार्थविधानदक्षसुरत्नमन्दिरमध्यगां ,
मुक्तिपादपवल्लरीमिह सुन्दरीमहमाश्रये ।।

९. **देवीस्तुतिः**—यह देवीस्तोत्र भी अद्यावधि अप्राप्त है । इसका केवल एक पद्य प्रस्तुत ग्रन्थ में 'हीरं छन्द' के प्रत्युदाहरण-रूप में प्राप्त है:[3]—

पाहि जननि ! शम्भुरमणि ! शुम्भदलनपण्डिते !
तारतरलरत्नखचितहारवलयमण्डिते !
भालरुचिरचन्द्रशकलशोभि सकलनन्दिते !
देहि सततभक्तिमतुलमुक्तिमखिलवन्दिते !

१०. **खड्गवर्णन**—इसका एक पद्य स्रग्धराछन्द के प्रत्युदाहरण-रूप में प्रस्तुत ग्रन्थ में प्राप्त है । संभवतः कविरचित यह स्फुट पद्य हो, या हो सकता

१, २. वृत्तमौक्तिक पृ. १४४
३. वृत्तमौक्तिक पृ. ४३

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

है कि कोई लघुकाव्य का अंश हो ! पद्य निम्न है:—

संग्रामारण्यचारी विकटभटभुजस्तम्भभूभृद्विहारी ,
शत्रुक्षोणीशचेतोमृगनिकरपरानन्दविक्षोभकारी ।
माद्यन्मातङ्गकुम्भस्थलगलदमलस्थूलमुक्ताग्रहारी ,
स्फारीभूताङ्गधारी जगति विजयते खड्गपञ्चाननस्ते ॥[1]

चन्द्रशेखरभट्ट—

प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रणेता चन्द्रशेखर भट्ट लक्ष्मीनाथ भट्ट के पुत्र हैं । इनकी माता का नाम लोपामुद्रा[2] है । इन्होंने अपनी अन्तिम रचना वृत्तमौक्तिक (सं० १६७५-७६) में स्वप्रणीत पाण्डवचरित महाकाव्य और पवनदूत खण्डकाव्य का उल्लेख किया है अतः ये दोनों रचनायें सं० १६७५ के पूर्व की हैं । महाकाव्य की रचना के लिए कम से कम २५-३० की अवस्था तो अपेक्षित है ही । इस अनुमान से इनका जन्म १६४० और १६४५ के मध्य माना जा सकता है । सं० १६७५ की वसन्त पंचमी और सं० १६७६ की कार्तिकी पूर्णिमा के मध्य में इनका अल्पावस्था में ही स्वर्गवास हो गया था । अनुमान के अतिरिक्त इनके सम्बन्ध में कोई भी ज्ञातव्य वृत्त प्राप्त नहीं है । चन्द्रशेखर लक्ष्मीनाथ भट्ट के एकाकी पुत्र थे या इनके और भी भाई थे ? और चन्द्रशेखर के भी कोई सन्तान थीं या नहीं ? इनकी वंश-परंपरा यहीं लुप्त हो गई या आगे भी कुछ पीढियों तक चली ? आदि प्रश्न तिमिराछन्न ही हैं । इस सम्बन्ध में तो एतद्देशीय भट्ट-वंश के विद्वान् ही प्रकाश डाल सकते हैं ।

ग्रन्थकार द्वारा सर्जित साहित्य इस प्रकार है—

१. पाण्डवचरित महाकव्य—स्वयं ग्रन्थकार ने प्रस्तुत ग्रन्थ में 'द्रुतविलम्बित, मालिनी, शार्दूलविक्रीडित और स्रग्धरा छन्द के उदाहरण एवं प्रत्युदाहरण देते हुये 'मत्कृतपाण्डवचरिते महाकाव्ये, ममैव पाण्डवचरिते,' लिखा है । अतः उल्लिखित पद्य यहाँ दिये जा रहे हैं—

मत्कृतपाण्डवचरिते महाकाव्ये कर्णवर्णनप्रस्तावे[3] —

नृषु विलक्षणमस्यपुनर्वपुस्सहजकुण्डलवर्मसुमण्डितम् ।
सकललक्षणलक्षितमद्भुतं न घटते रथकारकुलोचितम् ॥

---

१. वृत्तमौक्तिक पृ. १६०

२. छन्दःशास्त्रपयोनिधिलोपामुद्रापतिं पितरम् ।
श्रीमल्लक्ष्मीनाथं सकलागमपारगं वन्दे ॥ पृ. २६०

३. वृत्तमौक्तिक पृ. ९२,

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा वा, तत्रैव विदुरोक्तौ—

भिदुरमानसमाशुचिचक्षुषं स विदुरो निनदैरतिभीषणैः ।
सकलबालपराक्रमवर्णनैः सदसि भूमिपतिं समबोधयत् ।।

× × ×

यथा वा, पाण्डचरिते[1] —

भवनमिव ततस्ते बाणजालैरकुर्वन्,
गजरथहयपृष्ठे बाहुयुद्धे च दक्षाः ।
विधृतनिशितखड्गाश्चर्मणा भासमाना
विदधुरथ समाजे मण्डलात् सव्यवामात् ।।

× × ×

यथा वा, ममैव पाण्डवचरिते अर्जुनागमने द्रोणवाक्यम्[2] —

ज्ञानं यस्य ममात्मजादपि जनाः शस्त्रास्त्रशिक्षाधिकं,
पार्थः सोऽर्जुनसंज्ञकोऽत्र सकलैः कौतूहलाद् दृश्यताम् ।
श्रुत्वा वाचमिति द्विजस्य कवची गोधाङ्गुलित्राणवान्,
पार्थस्तूणशरासनादिरुचिरस्तत्राजगाम द्रुतम् ।।

× × ×

यथा, ममैव पाण्डवचरिते[3]

तुष्टेनाऽथ द्विजेन त्रिदशपतिसुतस्तत्र दत्ताभ्यनुज्ञः,
कर्णोऽपि प्राप्तमानस्सदसि कुरुपतेर्द्वन्द्वयुन्द्धार्थमागात् ।
जम्भारातिः स्वसूनोरुपरि जलधरैस्संव्यधादातपत्रं,
चण्डांशुश्चापि कर्णोपरि निजकिरणानाततानातिशीतात् ।।

इन पांचों पद्यों की रचनाशैली, शब्दयोजना, लाक्षणिकता और आलंकारिक योजना को देखते हुये निःसंदेह कह सकते हैं कि यह काव्य गुणों से परिपूर्ण महाकाव्य हो है। लघुवयस्क की रचना होते हुये भी इसमें भावों की प्रौढता और भाषा की प्रांजलता परिलक्षित होती है। खेद है कि यह ग्रन्थ अद्यावधि अप्राप्त है। संभव है शोधकर्ताओं को शोध करते हुये यह महाकाव्य प्राप्त हो जाय तो ग्रन्थकार के जीवन और दर्शन पर अधिक प्रकाश डाला जा सके।

१–वृत्तमौक्तिक पृ. १२१, २–पृष्ठ १५१, ३–पृ. १६०

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

२. पवनदूतम्—यह खण्डकाव्य है। इसको 'दूतम्' शब्द से मेघदूत या किसी दूत-काव्य की पादपूर्तिरूप तो नहीं समझना चाहिए किन्तु रचना इसकी मेघदूत के अनुकरण पर ही हुई है। कृष्ण के मथुरा चले जाने पर राधा पवन के द्वारा संदेश भेजती है और स्वयं की मानसिक-अवस्था का दिग्दर्शन कराती है। यह खण्डकाव्य भी अद्यावधि अप्राप्त है। इसका केवल एक पद्य प्रस्तुत ग्रन्थ में शिखरिणी छन्द के प्रत्युदाहरण-रूप में प्राप्त है—

यथा वा, ममैव पवनदूते खण्डकाव्ये[1] —

यदा कंसादीनां निधनविधये यादवपुरीं,
गतः श्रीगोविन्दः पितृभवनतोऽक्रूरसहितः।
तदा तस्योन्मीलद्विरहदहनज्वालगहने,
पपात श्रीराधा कलिततदसाधारणगतिः॥

३. प्राकृतपिङ्गल-'उद्योत' टीका—प्राकृतपिङ्गल में दो परिच्छेद हैं— १. मात्रावृत्त परिच्छेद और २. वर्णिकवृत्त परिच्छेद। यह उद्योत नामक टीका प्रथम परिच्छेद पर है। इसकी रचना सं. १६७३ में हुई है। वैसे तो इस पर बीसों टीकायें हैं जिनमें रविकर, पशुपति, लक्ष्मीनाथभट्ट, वंशीधर आदि की मुख्य हैं, किन्तु इस टीका की विशेषता यह है कि प्रस्तार और मात्रिक-छंदों का विवेचन लालित्यपूर्ण भाषा में होते हुये भी सरलीकरण को लिये हुये है। पाण्डित्य-प्रदर्शन की अपेक्षा वर्ण्यविषय का अधिक स्पष्टता के साथ प्रतिपादन किया है। इसकी १८वीं शती की लिखित ४५ पत्रों की एकमात्र-प्रति अनूप संस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर में ग्रन्थ नं. ५४१२ पर सुरक्षित है। यह कृति प्रकाशन-योग्य है। इसका आद्यन्त इस प्रकार है—

आदि— अहितहृदयकीलं गोपनारीसुलीलं,
सजलजलदनीलं लोकसंत्राणशीलम्।
उरसि निहितमालं भक्तवृन्दस्य पालं,
कलय दनुजकालं नन्दगोपालबालम् ॥१॥

तातसंरचितपिङ्गलदीपध्वस्तचितघनमोहनसंततिः (?)
अर्थभारयुतपिङ्गलभावोद्योतमाचरति चन्द्रशेखरः ॥२॥

श्रीमत्पिङ्गलनागोक्त सूत्राणां विशदार्थिका।
शिष्यावबोधसिद्धयर्थं संक्षिप्ता वृत्तिरुच्यते ॥३॥

१—वृत्तमौक्तिक पृ. १३६

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अन्त— श्रीमत्पिङ्गलनागोक्तमात्रावृत्तप्रकाशकम् ।
पिङ्गलोद्योतममलमविस्तृतमपि स्फुटम् ।।
हराक्षिमुनिशास्त्रेन्दुमितेऽब्दे (१६७३) मासि चाश्विने ।
सिते······मिते चन्द्रशेखरः संव्यरीरचत् ।।

पुष्पिका—इति महामहोपाध्यायालङ्कारिकचक्रचूडामणि-छन्दःशास्त्रप्रस्थानपरमाचार्य-वेदान्तार्णवकर्णधार-श्री**लक्ष्मीनाथ**भट्टारकात्मज-**चन्द्रशेखर**भट्टविरचितायां **पिङ्गलोद्योता**ख्यायां सूत्रवृत्तौ मात्रावृत्ताख्यः प्रथमः प्रकाशः समाप्तः । समाप्तश्चायं सूत्रवृत्तौ प्रथमः खण्डः ।

संयोज्य पाणियुगलं याचे साधूनहं किमपि ।
मत्सररहितैर्यत्नात् संशोध्यं मे क्वचित् स्खलितम् ।।

भट्ट लक्ष्मीनाथ ने वृत्तमौक्तिक-वार्त्तिकदुष्करोद्धार[1] में इस पिंगलोद्योत टीका के उद्धरण दिए हैं ।

४. वृत्तमौक्तिकम्—छन्दःशास्त्र का प्रस्तुत ग्रन्थ है । इसमें दो खंड हैं । प्रथम मात्रावृत्त खंड; जिसकी १६७५ में रचना हुई है और द्वितीय वर्णवृत्त खंड है, जिसकी रचना १६७६ में हुई है । इस ग्रन्थ का विशेष परिचय आगे दिया जायगा ।

केटलॉगस केटलॉगरम् भाग १, पृष्ठ १८१ पर भट्ट चन्द्रशेखर रचित गंगादासीय छन्दोमंजरी की टीका 'छन्दोमञ्जरीजीवन' का भी उल्लेख है । इसकी एकमात्र प्रति इण्डिया ऑफिस लायब्रेरी लन्दन[2] में है; यह प्रति बंगला लिपि में लिखी हुई है । इस टीका का मंगलाचरण निम्न है:—

वाणीं कमलामभितो दोर्भ्यामालिङ्गितो योऽसौ ।
तं नारायणमादिं सुरतरुकल्पं सदा वन्दे ।।१।।
छन्दसां मञ्जरी तप्ताभिधेया स्फुटभानुना ।
तस्याः किं जीवनं न स्याच्चन्द्रशेखरभारती ।।२।।

किन्तु, इस टीका के मंगलाचरण में टीकाकार ने अपना नाम चन्द्रशेखर

१–वृत्तमौक्तिक पृ० ३०६, ३१३

२–राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर के उपसंचालक श्री गोपालनारायणजी बहुरा ने इण्डिया ऑफिस लायब्रेरी लन्दन के कार्यवाहकों से सम्पर्क करके इस प्रति के आद्यन्त भाग की फोटोकॉपी मँगवा कर उपलब्ध की उसके लिए मैं उनका आभारी हूँ ।–सं०

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

भारती दिया है न कि चन्द्रशेखर भट्ट। चन्द्रशेखर भट्ट ने अपनी कृतियों में अपने नाम के साथ कहीं भी 'भारती' शब्द का प्रयोग नहीं किया है। अपने नाम के साथ सर्वत्र भट्ट एवं लक्ष्मीनाथात्मज का प्रयोग किया है। अतः यह स्पष्ट है कि छन्दोमञ्जरीजीवन के कर्ता चन्द्रशेखर भट्ट नहीं है, अपितु कोई चन्द्रशेखर भारती हैं। संभव है चन्द्रशेखर नाम-साम्य से भ्रमवशात् सम्पादक ने लिख दिया हो!

वृत्तमौक्तिक का सारांश

नामकरण—

कवि चन्द्रशेखर भट्ट ने प्रस्तुत ग्रंथ का नाम 'वृत्तमौक्तिकम्'[१] रखा है, किन्तु द्वितीय-खण्ड के ग्यारहवें प्रकरण में 'वार्त्तिकं वृत्तमौक्तिकम्'[२] तथा प्रथम खण्ड एवं द्वितीय-खण्ड की पुष्पिका में 'वृत्तमौक्तिके पिङ्गलवार्त्तिके[३] और प्रथम-खण्ड के १,३,४,५वें प्रकरणों की तथा द्वितीय-खण्ड के प्रकरण ५, ७ से १० की पुष्पिकाओं में 'वृत्तमौक्तिके वार्त्तिके'[४] का उल्लेख है। लक्ष्मीनाथ भट्ट ने इस ग्रंथ का नाम 'वृत्तमौक्तिक-वार्तिक' ही स्वीकार किया है, इसीलिए टीका का नाम भी 'वृत्तमौक्तिवार्त्तिकदुष्करोद्धार'[५] रखा है। वस्तुतः प्राकृतपिंगल, छन्दः-सूत्र एवं प्राकृतपिंगल के टीकाकार पशुपति और रविकर की टीकाओं और शम्भु[६] प्रणीत छन्दश्चूडामणि (?) के आधार एवं अनुकरण पर पिंगल के वार्त्तिक-रूप में ग्रन्थकार ने इसकी स्वतन्त्र रचना की है। अतः वृत्तमौक्तिक-वार्त्तिकं नाम स्वीकार कर सकते हैं, किन्तु मूलतः अधिकांश स्थानों पर ग्रन्थकार ने एवं टीकाकार महोपाध्याय मेघविजयजी ने 'वृत्तमौक्तिकम्' मौलिक नाम ही ग्रहण किया है; जो कि अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है।

ग्रन्थ का सारांश—

प्रस्तुत ग्रन्थ दो खण्डों में विभक्त हैं। प्रथम-खण्ड मात्रावृत्त खण्ड[७] और द्वितीय-खण्ड वर्णिकवृत्त खंड[८] है।

१–श्रीचन्द्रशेखरकविस्तनुते वृत्तमौक्तिकम्। पृ० १,
स्पष्टार्थं वरवृत्तमौक्तिकमिति ग्रंथं मुदा निर्ममे। पृ० २६०
श्रीवृत्तमौक्तिकमिदम्। पृ० २६१

२–पृ० २७२ ३–पृ० ५६ एवं २६१

४–देखें पृ० १३, ३०, ४६, ४६, १६४, २०६, २१०, २६७, २७१

५–देखें, वार्त्तिक-दुष्करोद्धार का मंगलाचरण एवं प्रत्येक विश्राम की पुष्पिका।

६–रविकर-पशुपति-पिङ्गल-शम्भुग्रन्थान् विलोक्य निर्बन्धात्। पृ० २७३

७–तत्र मात्रावृत्तखण्डे प्रथमे। पृ० २७३

८–अथ द्वितीयखण्डस्य वर्णवृत्तस्य। पृ० २७६

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रथम खंड में छह प्रकरण हैं :—१. गाथाप्रकरण, २. षट्पदप्रकरण, ३. रड्डाप्रकरण, ४. पद्मावतीप्रकरण, ५. सवैयाप्रकरण और ६. गलितक-प्रकरण।

द्वितीय-खण्ड में बारह प्रकरण हैं :—१. वर्णवृत्त प्रकरण, २. प्रकीर्णक-वृत्त-प्रकरण, ३. दण्डक प्रकरण, ४. अर्ध-समवृत्त-प्रकरण, ५. विषमवृत्त प्रकरण, ६. वैतालीय प्रकरण, ७. यतिनिरूपण प्रकरण, ८. गद्य-निरूपण प्रकरण, ९. विरुदावली-प्रकरण, १०. खण्डावली-प्रकरण, ११. विरुदावली-खण्डावली का दोषप्रकरण और १२. दोनों खण्डों की अनुक्रमणिका।

द्वितीय-खण्ड के नवम विरुदावली प्रकरण में चार अवान्तर प्रकरण हैं—१. कलिका-प्रकरण, २. चण्डवृत्त-प्रकरण, ३. त्रिभङ्गीकलिका-प्रकरण और ४. साधारण चण्डवृत्त-प्रकरण।

इस प्रकार दोनों खण्डों के १८ प्रकरण होते हैं और नवम प्रकरण के चारों अवान्तर प्रकरण सम्मिलित करने पर कुल २२ प्रकरण[1] होते हैं।

प्रथम खण्ड का सारांश

१. गाथा प्रकरण :

कवि मंगलाचरण एवं ग्रंथ-प्रतिज्ञा करके वर्णों की गुरु-लघु स्थिति का उदाहरण सहित वर्णन और लक्षण रहित काव्य का अनिष्ट फल का प्रतिपादन करता है। मात्राओं की टगणादि गणों की व्यवस्था और उनके प्रस्तार का निरूपण करते हुए मात्रिक-गणों के नाम तथा उनके पर्यायों की पारिभाषिक-सांकेतिक शब्दों की तालिका[2] देता है। पश्चात् वर्णिकवृत्तों के मगणादि गण, गणदेवता, गणों की मैत्री और गणदेवों का फलाफल प्रदर्शित है।

प्रस्तार का वर्णन करते हुये मात्रोद्दिष्ट, मात्रानष्ट, वर्णोद्दिष्ट, वर्णनष्ट, वर्णमेरु, वर्णपताका, मात्रामेरु, मात्रापताका, वृत्तद्वयस्थ गुरु-लघुज्ञान, वर्णमर्कटी और मात्रामर्कटी का दिग्दर्शन कराते हुये प्रस्तारपिंड-संख्या का निर्देश किया है; जिसके अनुसार समग्रवृत्तों की प्रस्तार संख्या १३,४२,१७,७२६ होती है।

१—उभयोः खण्डयोश्चापि सम्भूयैव प्रकाशितम्।
द्वाविंशतिः प्रकरणं रुचिरं वृत्तमौक्तिके ॥ पृ० २८९

२—पारिभाषिक शब्द संकेतों के लिए प्रथम परिशिष्ट देखें।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

गाथा के विगाथा, गाहू, उद्गाथा, गाहिनी, सिंहिनी और स्कन्धक आर्या-भेदों का नामोल्लेख कर गाथा का लक्षण और आर्या[1] का सामान्य लक्षण उदाहरण सहित दिया है। प्राचीन परम्परा के अनुसार आर्या का विशिष्ट भेद दिखाया है जिसके अनुसार एक जगणयुक्त आर्या कुलीना, दो जगणयुक्त आर्या अभिसारिका, तीन जगणयुक्त आर्या रण्डा और अनेक जगणयुक्त आर्या वेश्या कहलाती है।[2] गाथा छन्द के २५ भेदों के नाम और लक्षण देकर उदाहरणों के लिये स्वपिता लक्ष्मीनाथ भट्ट रचित 'उदाहरणमंजरी' देखने का संकेत किया है।

विगाथा, गाहू, उद्गाथा, गाहिनी, सिंहिनी और स्कन्धक छन्दों के उदाहरण सहित लक्षण दिये हैं और स्कन्धक छन्द के २८ भेदों के नाम और लक्षण देते हुये उदाहरणों के लिये 'उदाहरणमंजरी' का उल्लेख किया है।

इस प्रकार प्रथम प्रकरण में छन्दसंख्या की दृष्टि से गाथादि ७ छंद और गाथा के २५ भेद एवं स्कन्धक के २८ भेदों का प्रतिपादन हैं।

२. षट्पद प्रकरण :

इस प्रकरण में दोहा, रसिका, रोला, गन्धानक, चौपैया, घत्ता, घत्तानन्द, काव्य, उल्लाल और षट्पद छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं। इसमें उल्लाल छन्द का उदाहरण नहीं है। साथ ही दोहा के २३ भेद, रसिका के ८ भेद, रोला के १३ भेद, काव्य के ४५ भेद और षट्पद के ७१ भेदों के नाम और लक्षण दिये हैं तथा इन समस्त भेदों के उदाहरणों के लिए कवि ने 'उदाहरण-मंजरी' देखने का संकेत किया है। इसमें काव्य के प्रथम भेद शक्रछन्द का उदाहरण भी दिया है।

चौपैया छन्द के एक चरण में ३० मात्रायें होती हैं। ग्रंथकार ने चार चरणों का अर्थात् १२० मात्राओं का एक पाद स्वीकार कर चार पदों की ४८० मात्रा स्वीकार की है।

प्रकरण के अन्त में काव्य और षट्पद के प्राकृत और संस्कृत साहित्य के अनुसार दोषों का निरूपण है।

१–संस्कृत साहित्य में जिसे आर्या कहते हैं, उसे प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य में गाथा कहते हैं। "आर्यैव संस्कृतेतरभाषासु गाथासंज्ञेति।" हेमचन्द्रीय-छन्दोनुशासन, पत्र १२८।

२–एकस्मात्तु कुलीना, द्वाभ्यामप्यभिसारिका भवति।
नायकहीना रण्डा, वेश्या बहुनायका भवति॥ पृ० ६

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

३. रड्डा प्रकरण :

इस प्रकरण में पज्झटिका, अडिल्ला, पादाकुलक, चौबोला और रड्डा छन्द के लक्षण एवं उदाहरण हैं। अन्त में रड्डा छन्द के सात भेद :—करभी, नन्दा, मोहिनी, चारुसेना, भद्रा, राजसेना और तालंकिनी के लक्षण मात्र दिये हैं और इनके उदाहरणों के सिए "सुबुद्धिभिः स्वयमूह्यम्" कह करु प्रकरण समाप्त किया है।

४. पद्मावती प्रकरण :

इस प्रकरण में पद्मावती, कुण्डलिका, गगनांगण, द्विपदी, झुल्लणा, खञ्जा, शिखा, माला, चुलिआला, सोरठा, हाकलि, मधुभार, आभीर, दण्डकला, कामकला, रुचिरा, दीपक, सिंहविलोकित, प्लवंगम, लीलावती, हरिगीतम्, त्रिभंगी, दुर्मिलका, हीरं, जनहरण, मदनगृह और मरहठा छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। हरिगीतं छन्द के १. हरिगीतम्, २. हरिगीतकम्, ३. मनोहर हरिगीतं और ४, ५, यतिभेद से लक्षण-द्वय सहित हरिगीता के लक्षण एवं उदाहरण हैं।

सोरठा, हाकलि, दीपक, हीर और मदनगृह छंद के प्रत्युदाहरण भी हैं।

५. सवैया प्रकरण :

इस प्रकरण में मदिरा, मालती, मल्ली, मल्लिका, माधवी और मागधी सवैयों के लक्षण देकर क्रमशः इनके उदाहरण दिये हैं। अन्त में घनाक्षर छन्द का लक्षण एवं उदाहरण दिया है।

६. गलितक प्रकरण :

इस प्रकरण में गलितकम्, विगलितकम्, संगलितकम्, सुन्दरगलितकम्, भूषणगलितकम्, मुखगलितकम्, विलम्बितगलितकम्, समगलितकम्, अपरं समगलितकम्, अपरं संगलितकम्, अपरं लम्बितागलितकम्, विक्षिप्तिकागलितकम्, लम्बितागलितकम्, विषमितागलितकम्, मालागलितकम्, मुग्धमालागलितकम् और उद्गलितकम् छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं।

प्रथमखण्ड के छन्द एवं भेदों का प्रकरणानुसार वर्गीकरण इस प्रकार है—

प्रकरण संख्या	छन्द संख्या	छन्द भेद नाम	भेद संख्या	मूलभेद की न्यूनता	कुल
१	७	गाथा	२५	१	५८
		स्कन्धक	२८	१	

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रकरण संख्या	छन्द संख्या	छन्द भेद नाम	भेद संख्या	मूल भेद की न्यूनता	कुल
२	९	दोहा	२३	१	१६४
		रसिका	८	१	
		रोला	१३	१	
		काव्य	४५	१	
		षटपदी	७१	१	
३	१२	रड्डा		१	११
४	२७	हरिगीतं	५	१	३१
५	७		०	०	७
६	१७		०		१७
६	७९		२१८	९	२८८

छन्द का मूल भेद, छन्द-भेद-संख्या में सम्मिलित होने से ९ भेद कम होते हैं। अतः भेद संख्या २१८ में से ९ कम करने पर २०९ होते हैं और ७९ छंद संख्या सम्मिलित करने पर कुल २८८ छन्द होते हैं। अर्थात् मूल छंद ७९ और भेद २०९ हैं।

इस प्रकार कवि चंद्रशेखर भट्ट ने वि. सं. १६७५ वसंत पंचमी को इसका प्रथम-खण्ड पूर्ण किया है।

द्वितीय-खण्ड का सारांश

१. वर्णिकवृत्त प्रकरण :

कवि चंद्रशेखर 'गौरीश' का स्मरण कर वर्णिक छन्द कहने की प्रतिज्ञा करता है और एकाक्षर से छब्बीस अक्षरों तक के वर्णिकवृत्तों के लक्षण एवं उदाहरण देता है; जो इस प्रकार हैं :—

१ अक्षर—श्री और इः छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं।

२ अक्षर—काम, मही, सार और मधु नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं।

३ अक्षर—ताली, शशी, प्रिया, रमण, पञ्चाल, मृगेन्द्र, मन्दर और कमल नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। ताली छन्द का नाम-भेद नारी दिया है।

४ अक्षर—तीर्णा, धारी, नगानिका और शुभं नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। तीर्णा छन्द का नामभेद कन्या दिया है।

CC-0. IKORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

५ अक्षर—सम्मोहा, हारी, हंस, प्रिया और यमक नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। यमक का प्रत्युदाहरण भी दिया है।

६ अक्षर—शेषा, तिलका, विमोह, चतुरंस, मन्थान, शंखनारी, सुमालतिका, तनुमध्या और दमनक नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। प्राकृतपिंगल के मतानुसार विमोह का विज्जोहा, चतुरंसं का चतुरंसा, मन्थानं का मन्थाना और सुमालतिका का मालती नामभेद भी दिये हैं।

७ अक्षर—शीर्षा, समानिका, सुवासक, करहञ्चि, कुमारललिता, मधुमती, मदलेखा और कुसुमतति नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं।

८ अक्षर—विद्युन्माला, प्रमाणिका, मल्लिका, तुङ्गा, कमल, माणवकक्रीडितक, चित्रपदा, अनुष्टुप् और जलद नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। मल्लिका का नाम-भेद समानिका दिया है।

९ अक्षर—रूपामाला, महालक्ष्मिका, सारंग, पाइन्तं, कमल, बिम्बं, तोमर, भुजगशिशुसृता, मणिमध्यं, भुजङ्गसङ्गता और सुललित नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। प्राकृतपिंगल के अनुसार सारंगं का सारंगिका और पाइन्तं का पाइन्ता नामभेद दिये हैं। भुजगशिशुसृता के लिये लिखा है कि यह नाम आचार्य शम्भु एवं प्राचीनाचार्यों द्वारा सम्मत है और आधुनिक छन्दःशास्त्री इसका नाम भुजगशिशुभृता मानते हैं। सारंग का प्रत्युदाहरण भी दिया है।

१० अक्षर—गोपाल, संयुतं, चम्पकमाला, सारवती, सुषमा, अमृतगति, मत्ता, त्वरितगति, मनोरमं, और ललितगति नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। प्राकृतपिंगल के अनुसार संयुतं का संयुता, चम्पकमाला का रुक्मवती एवं रूपवती तथा मनोरमं का मनोरमा नामभेद दिये हैं। संयुतं और त्वरितगति छन्दों के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

११ अक्षर—मालती, बन्धु, सुमुखी, शालिनी, वातोर्मी, शालिनी-वातोर्म्युपजाति, दमनक, चण्डिका, सेनिका, इन्द्रवज्रा, उपेन्द्रवज्रा, इन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रोपजाति, रथोद्धता, स्वागता, भ्रमरविलसिता, अनुकूला, मोटनक, सुकेशी, सुभद्रिका और बकुल नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। बन्धु का दोधक, चण्डिका का सेनिका और श्रेणी नामभेद दिये हैं। रथोद्धता का प्रत्युदाहरण भी दिया है।

शालिनी-वातोर्मी-उपजाति और इन्द्रवज्रा-उपेन्द्रवज्रा-उपजाति के ग्रन्थकार ने १४-१४ भेद प्रस्तार-दृष्टि से स्वीकार किये हैं किन्तु इन प्रस्तार-भेदों

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

के लक्षण एवं उदाहरण नहीं दिये हैं। इनके उदाहरणों के लिये स्वपितृ-रचित ग्रन्थ[1] को देखने का संकेत किया है।

१२ अक्षर—आपीड, भुजङ्गप्रयात, लक्ष्मीधर, तोटक, सारंगकं, मौक्तिक-दाम, मोदक, सुन्दरी, प्रमिताक्षरा, चन्द्रवर्त्म, द्रुतविलम्बित, वंशस्थविला, इन्द्रवंशा, वंशस्थविला-इन्द्रवंशा-उपजाति, जलोद्धतगति, वैश्वदेवी, मन्दाकिनी, कुसुमविचित्रा, तामरस, मालती, मणिमाला, जलधरमाला, प्रियंवदा, ललिता, ललितं, कामदत्ता, वसन्तचत्वर, प्रमुदितवदना, नवमालिनी और तरलनयन नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं।

आपीड का विद्याधर, लक्ष्मीधर का स्रग्विणी, वंशस्थविला का वंशस्थविलं और वंशस्तनितं, मन्दाकिनी का प्रभा, मालती का यमुना, ललिता का सुललिता, ललितं का ललना और प्रमुदितवदना का प्रभा, ये नामभेद दिये हैं।

सुन्दरी, प्रमिताक्षरा, चन्द्रवर्त्म, द्रुतविलम्बित, इन्द्रवंशा, मन्दाकिनी और मालती के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं, जिसमें द्रुतविलंबित और मालती के प्रत्यु-दाहरण दो-दो हैं।

१३ अक्षर—वाराह, माया, तारक, कन्द, पङ्क्तावली, प्रहर्षिणी रुचिरा, चण्डी, मञ्जुभाषिणी, चन्द्रिका, कलहंस, मृगेन्द्रमुख, क्षमा, लता, चन्द्रलेखं, सुद्युति, लक्ष्मी और विमलगति नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। माया का मत्तमयूर, मञ्जुभाषिणी का सुनन्दिनी तथा प्रबोधिता, चन्द्रिका का उत्पलिनी, कलहंस का सिंहनाद तथा कुटज, और चन्द्रलेखं का चन्द्रलेखा नामभेद दिये हैं। माया के ५, तारक, प्रहर्षिणी और चन्द्रिका के एक-एक प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

१४ अक्षर—सिंहास्य, वसन्ततिलका, चक्रं, असम्बाधा, अपराजिता, प्रहरण-कलिका, वासन्ती, लोला, नान्दीमुखी, वैदर्भी, इन्दुवदनं, शरभी, अहिधृति, विमला, मल्लिका और मणिगण छन्द के लक्षण एवं उदाहरण हैं। इन्दुवदनं का इन्दुवदना नामभेद दिया है। वसन्ततिलका, चक्रं और प्रहरणकलिका के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

---

१. भेदाश्चतुर्दशैतस्याः क्रमतस्तु प्रदर्शिताः।
प्रस्तार्य स्वनिबन्धेषु पित्रातिस्फुटस्ततः॥ पृ. ८१

इससे संभवतः ग्रन्थकार का संकेत लक्ष्मीनाथ भट्ट रचित 'उदाहरणमंजरी' ग्रंथ की ओर ही हो!

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१५ अक्षर—लीलाखेल, मालिनी, चामरं, भ्रमरावलिका, मनोहंस, शरभ, निशिपालक, विपिनतिलक, चन्द्रलेखा, चित्रा, केसरं, एला, प्रिया, उत्सव और उडुगण नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं। लीलाखेल का सारंगिका चामरं का तूणकं, भ्रमरावलिका का भ्रमरावली, शरभं का शशिकला तथा यतिभेद से मणिगुणनिकर एवं स्रग्, चन्द्रलेखा का चण्डलेखा, चित्रा का चित्रं और प्रिया का यतिभेद से अलि नामभेद दिये हैं।

लीलाखेल, मालिनी, चामर, भ्रमरावलिका, मनोहंस, मणिगुणनिकर, स्रग् निशिपालक, और विपिनतिलक के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं, जिसमें मालिनी के ३ प्रत्युदाहरण हैं।

१६ अक्षर—राम, पञ्चचामर, नील, चञ्चला, मदनललिता, नन्दिनी, प्रवरललित, गरुडरुत, चकिता, गजतुरगविलसितं, शैलशिखा, ललितं, सुकेसरं, ललना और गिरिवरधृति नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं। राम का ब्रह्मरूपक, पञ्चचामर का नराच, चञ्चला का चित्रसंगं, गजतुरगविलसितं का ऋषभगजविलसितं और गिरिवरधृति का अचलधृति नामभेद दिये हैं। पञ्चचामर तथा चञ्चला के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

१७ अक्षर—लीलाधृष्टं, पृथ्वी, मालावती, शिखरिणी, हरिणी, मन्दाक्रान्ता वंशपत्रपतितं, नर्द्दटक, यतिभेद से कोकिलक, हारिणी, भाराक्रान्ता, मतङ्गवाहिनी, पद्मकं और दशमुखहर नामक छन्दों के लक्षण सहित उदाहरण दिये हैं। मालावती का प्राकृतपिंगल के अनुसार मालाधर, वंशपत्रपतितं का वंशपत्रपतिता और आचार्य शम्भु के मतानुसार वंशवदनं नामान्तर दिये हैं। पृथ्वी, शिखरिणी, हरिणी, मन्दाक्रान्ता, वंशपत्रपतितं, नर्द्दटक और कोकिलक के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं; जिसमें शिखरिणी के तीन तथा हरिणी के चार प्रत्युदाहरण हैं।

१८ अक्षर—लीलाचन्द्र, मञ्जीरा, चर्चरी, कीडाचन्द्र, कुसुमितलता, नन्दन, नाराच, चित्रलेखा, भ्रमरपद, शार्दूलललित, सुललित और उपवनकुसुम नामक छन्दों के लक्षण सहित उदाहरण दिये हैं। नाराच का मञ्जुला नामान्तर दिया है। मञ्जीरा, चर्चरी, क्रीडाचन्द्र, कुसुमितलता, नन्दन और नाराच के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं जिसमें चर्चरी के पांच और नन्दन के दो प्रत्युदाहरण हैं।

१९ अक्षर—नागानन्द, शार्दूलविक्रीडित, चन्द्र, धवल, शम्भु, मेघविस्फूर्जिता, छाया, सुरसा, फुल्लदाम, और मृदुलकुसुम नामक छन्दों के लक्षण सहित उदाहरण हैं। प्राकृतपिंगलानुसार चन्द्र का चन्द्रमाला, और धवल का

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

धवला नामभेद दिये हैं। शार्दूलविक्रीडित के दो, चन्द्र, धवल, शम्भु और मेघविस्फूर्जिता के एक-एक प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२० अक्षर—योगानन्द, गीतिका, गण्डका, शोभा, सुवदना, प्लवङ्ग-भंगमंगल, शशाङ्कचलित, भद्रक, और अनवधिगुणगणं नामक छन्दों के लक्षण सहित उदाहरण हैं। गण्डका का चित्रवृत्तं एवं वृत्तं नामभेद दिया है। गीतिका के दो, गण्डका और सुवदना के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२१ अक्षर—ब्रह्मानन्द, स्रग्धरा, मञ्जरी, नरेन्द्र, सरसी, रुचिरा और निरुपमतिलक नामक छन्दों के लक्षण सहित उदाहरण हैं। सरसी का सुरतरु और सिद्धकं नामान्तर दिया है। स्रग्धरा और मञ्जरी के दो-दो, नरेन्द्र और सरसी के एक-एक प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२२ अक्षर—विद्यानन्द, हंसी, मदिरा, मन्द्रक, शिखर, अच्युत, मदालस, और तरुवर नामक छन्दों के लक्षण सहित उदाहरण हैं। हंसी का एक और मदालस के दो प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२३ अक्षर—दिव्यानन्द, सुन्दरिका, यतिभेद से पद्मावतिका, अद्रितनया, मालती, मल्लिका, मत्ताक्रीडं और कनकवलय नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। अद्रितनया का अश्वललितं नामान्तर दिया है। अद्रितनया और अश्वललितं के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२४ अक्षर—रामानन्द, दुर्मिलका, किरीट, तन्वी, माधवी और तरलनयन नामक छन्दों के लक्षण सहित उदाहरण हैं। दुर्मिलका और तन्वी के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२५ अक्षर—कामानन्द, क्रौंचपद, मल्ली और मणिगणनामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। क्रौंचपदा का प्रत्युदाहरण भी दिया है।

२६ अक्षर—गोविन्दानन्द, भुजङ्गविजृंभित, अपवाह, मागधी और कमल-दल नामक छन्दों के लक्षण सहित उदाहरण दिये हैं। तथा भुजंगविजृंभित और अपवाह के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

उपसंहार में कवि कहता है कि इस प्रकरण में लक्ष्य-लक्षण-संयुक्त २६५ छन्दों का निरूपण किया है और प्रत्युदाहरण के रूप में प्राचीन कवियों के क्वचित् उदाहरण भी लिये हैं। अन्त में लक्ष्मीनाथभट्ट रचित पिंगलप्रदीप के अनुसार समस्त वृत्तों की प्रस्तारपिंड-संख्या १३,४२,१७,७२६ बतलाई है।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

इस प्रकरण के वर्णाक्षरों के अनुसार प्रस्तारसंख्या, छन्दसंख्या, उदाहरण संख्या, प्रत्युदाहरण संख्या और नामभेदों की तालिका इस प्रकार है:—

वर्णाक्षर	प्रस्तार संख्या	छन्द संख्या	उदाहरण संख्या	प्रत्युदाहरण संख्या	नामभेद संख्या
१	२	२	२	×	×
२	४	४	४	×	×
३	८	८	८	×	१
४	१६	४	४	×	१
५	३२	५	५	१	×
६	६४	९	९	×	४
७	१२८	८	८	×	×
८	२५६	९	९	×	१
९	५१२	११	११	१	३
१०	१०२४	१०	१०	२	३
११	२०४८	२०	२०	१	२
१२	४०९६	३०	२९	९	८
१३	८१९२	१८	१८	८	६
१४	१६,३८४	१६	१६	३	१
१५	३२,७६८	१५	१५	११	७
१६	६५,५३६	१५	१५	२	५
१७	१,३१,०७२	१३	१३	१२	२
१८	२,६२,१४४	१२	१२	११	१
१९	५,२४,२८८	१०	१०	६	२
२०	१०,४८,५७६	९	९	४	१
२१	२०,९७,१५२	७	७	६	१
२२	४१,९४,३०४	८	८	३	×
२३	८३,८८,६०८	७	८	२	१
२४	१,६७,७७,२१७	६	६	२	×
२५	३,३५,५४,४३२	४	४	१	×
२६	६,७१,०८,८६४	५	५	२	×
		२६५	२६५	८७	५०

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

इस प्रकार तालिकानुसार उक्त प्रकरण में कुल २६५ छन्द हैं, उदाहरण २६५ हैं, प्रत्युदाहरण ८७ हैं और नामभेद ५० हैं।

२. प्रकीर्णक-वृत्त-प्रकरण :

इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने पिपीडिका, पिपीडिकाकरभ, पिपीडिकापणव और पिपीडिकामाला-नामक छन्दों के लक्षण की एक प्राचीन आचार्यों की संग्रह-कारिका दी है। स्वयं के स्वतन्त्र लक्षण एवं उदाहरण नहीं हैं। पश्चात् द्वितीय त्रिभंगी और शालूर नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं।

३. दण्डक-प्रकरण :

इस प्रकरण में चण्डवृष्टिप्रपात, प्रचितक, अर्ण, सर्वतोभद्र, अशोकमञ्जरी, कुसुमस्तवक, मत्तमातङ्ग और अनङ्गशेखर नामक दण्डक-वृत्तों के लक्षण सहित उदाहरण दिये हैं। ग्रन्थविस्तार-भय से अन्य प्रचलित दण्डकवृत्तों के लिये लक्ष्मीनाथभट्ट रचित पिंगलप्रदीप देखने के लिये आग्रह किया है।

प्रचितक दण्डक का लक्षण ग्रन्थकार ने छन्दःसूत्रानुसार दो नगण और ८ रगण दिया है जो कि छन्दःसूत्र और वृत्तमौक्तिक के अनुसार 'अर्ण' दण्डक का भी लक्षण है। छन्दःसूत्र के अतिरिक्त समस्त छन्दःशास्त्रियों ने प्रचितक का लक्षण दो नगण, सात यगण स्वीकार किया है। ग्रन्थकार ने इस लक्षण के दण्डक को सर्वतोभद्र दण्डक लिखा है। यही कारण है कि आचार्यों के मतों को ध्यान में रख कर ही 'एतस्यैव अन्यत्र 'प्रचितक' इति नामान्तरम्''[1] लिखा है।

४. अर्धसमवृत्त-प्रकरण :

जिस छन्द में चारों चरणों के लक्षण समान हों वह समवृत्त कहलाता है; जिस छन्द के प्रथम और तृतीय चरण तथा द्वितीय और चतुर्थ चरण एक सदृश हों वह अर्धसमवृत्त कहलाता है और जिस छन्द के चारों चरणों के लक्षण विभिन्न हों वह विषमवृत्त कहलाता है।

इस अर्धसमवृत्त प्रकरण में पुष्पिताग्रा, उपचित्र, वेगवती, हरिणप्लुता, अपरवक्त्र, सुन्दरी, भद्रविराट्, केतुमती, वाङ्मती और षट्पदावली नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं। पुष्पिताग्रा के तीन, अपरवक्त्र और सुन्दरी के एक-एक प्रत्युदाहरण भी दिये हैं। षट्पदावली का उदाहरण नहीं दिया है।

---

१. वृत्तमौक्तिक पृ. १८५।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

५. **विषमवृत्त-प्रकरण :**

जिस छन्द के चारों चरणों के लक्षण भिन्न-भिन्न हों उसे विषमवृत्त कहते हैं। विषमवृत्तों में उद्‌गता, उद्‌गताभेद, सौरभ, ललित, भाव, वक्त्र, पथ्यावक्त्र और अनुष्टुप्-नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं। उद्‌गताभेद का ग्रन्थकार का स्वोक्त उदाहरण नहीं है किन्तु भारवि और माघ के दो उदाहरण हैं।

अनुष्टुप् के लिये लिखा है कि कतिपय आचार्य इसे भी 'वक्त्र' छन्द का ही लक्षण मानते हैं और अनेक पुराणों में नानागणभेद से यह प्राप्त होता है। अत: इसे विषमवृत्त ही मानना चाहिये। पदचतुरूर्ध्वादि और उपस्थित-प्रचुपित आदि विषमवृत्तों के लिये छन्द:सूत्र की हलायुध की टीका देखने का संकेत किया है।

६. **वैतालीय-प्रकरण :**

वैतालीय, औपच्छन्दसक, आपातलिका, नलिन, द्वितीय नलिन, दक्षिणान्तिका-वैतालीय, उत्तरान्तिका-वैतालीय, प्राच्यवृत्ति, उदीच्यवृत्ति, प्रवृत्तक, अपरांतिका और चारुहासिनी नामक वैतालीय छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। दक्षिणान्तिका-वैतालीय का एक, प्राच्यवृत्ति के दो, उदीच्यवृत्ति का एक प्रवृत्तक का एक, अपरान्तिका के दो और चारुहासिनी के दो प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

इस प्रकरण में वृत्तों के लक्षण पूर्ण पद्यों में न होकर सूत्र-कारिका रूप में प्राप्त हैं और साथ ही इन कारिकाओं को स्पष्ट करने के लिये टीका भी प्राप्त है।

७. **यतिनिरूपण-प्रकरण :**

पद्य में जहां पर विच्छेद हो, विभजन हो, विश्राम हो, विराम हो, अवसान हो उसे यति कहते हैं। समुद्र, इन्द्रिय, भूत, इन्दु, रस, पक्ष और दिक् आदि शब्द साकांक्षी होने से यति से सम्बन्ध रखते हैं। ग्रंथकार मूल-शास्त्र अर्थात् छन्द:सूत्र का आलोडन कर उदाहरण सहित इस प्रकरण पर विवेचन करता है।

पद्य ४ से ७ तक प्राचीन आचार्यों की संग्रह-कारिकायें और इनकी व्याख्या दी गई हैं। ये चारों पद्य और इनकी उदाहरणसहित व्याख्या छन्द:सूत्र की हलायुध टीका में प्राप्त है। किंचित् परिवर्तन के साथ यह स्थल यहां पर ज्यों का त्यों उद्धृत किया गया है। अन्त में आचार्य भरत, आचार्य पिङ्गल, जयदेव, श्वेतमाण्डव्य,

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

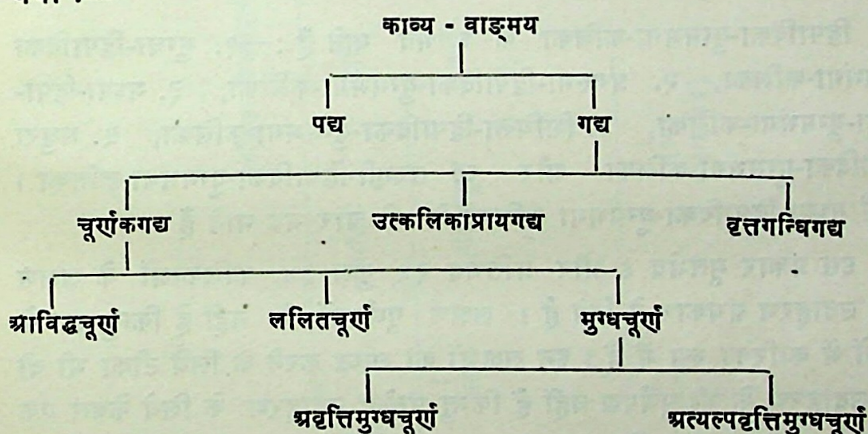
मुरारि, जयदेव (गीतगोविन्दकार), देवेश्वर, गंगादास आदि के मतों का उल्लेख करते हुये यतिभंग से दोष और यतिरक्षा से काव्य-सौन्दर्य की अभिवृद्धि आदि का सुन्दर, विश्लेषण किया है।

८. गद्य-प्रकरण :

वाङ्मय दो प्रकार का है—१. पद्यात्मक और २. गद्यात्मक। पद्य-वाङ्मय का वर्णन प्रारंभ के प्रकरणों में किया जा चुका है। अतः यहाँ इस प्रकरण में गद्य-वाङ्मय का विवेचन है। गद्य के प्रमुख तीन भेद हैं—१. चूर्णगद्य, २. उत्कलिकाप्राय-गद्य और ३. वृत्तगन्धि-गद्य।

चूर्णकगद्य के तीन भेद हैं:—१. आविद्धचूर्ण, २. ललितचूर्ण और ३. मुग्धचूर्ण। मुग्धचूर्ण के भी दो भेद हैं:—१. अवृत्तिमुग्धचूर्ण और २. अत्यल्प-वृत्तिमुग्धचूर्ण।

इस प्रकार इन समस्त गद्य-भेदों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं। उत्कलिकाप्राय का एक और वृत्तगन्धि गद्य के तीन प्रत्युदाहरण भी दिये हैं। यथा :—



अन्य ग्रन्थकारों ने गद्य के चार भेद स्वीकार किये हैं:—१. मुक्तक, २. वृत्तगन्धि, ३. उत्कलिकाप्राय और ४. कुलक। इन चारों भेदों के लक्षण एवं उदाहरण भी ग्रंथकार ने दिये हैं। उत्कलिकाप्राय गद्य का प्राकृत-भाषा का उदाहरण भी दिया है।

९. विरुदावली-प्रकरण :

गद्य-पद्यमयी राजस्तुति को विरुद कहते हैं और विरुदों की आवली = समूह को विरुदावली कहते हैं। यह विरुदावली पाँच प्रकरणों में विभाजित है :—

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१. कलिका-प्रकरण, २. चण्डवृत्त-प्रकरण, ३. त्रिभंगीकलिका-प्रकरण, ४. साधारण चण्डवृत्त-प्रकरण और ५. विरुदावली।

(१) द्विगादिकलिका-अवान्तर-प्रकरण

कलिका के नव भेद माने हैं :—१. द्विगा-कलिका, २. रादिकलिका, ३. मादिकलिका, ४. नादिकलिका, ५. गलादिकलिका, ६. मिश्राकलिका, ७. ७. मध्याकलिका, ८. द्विभङ्गीकलिका और ९. त्रिभङ्गीकलिका। ७. मध्याकालिका के दो भेद हैं।

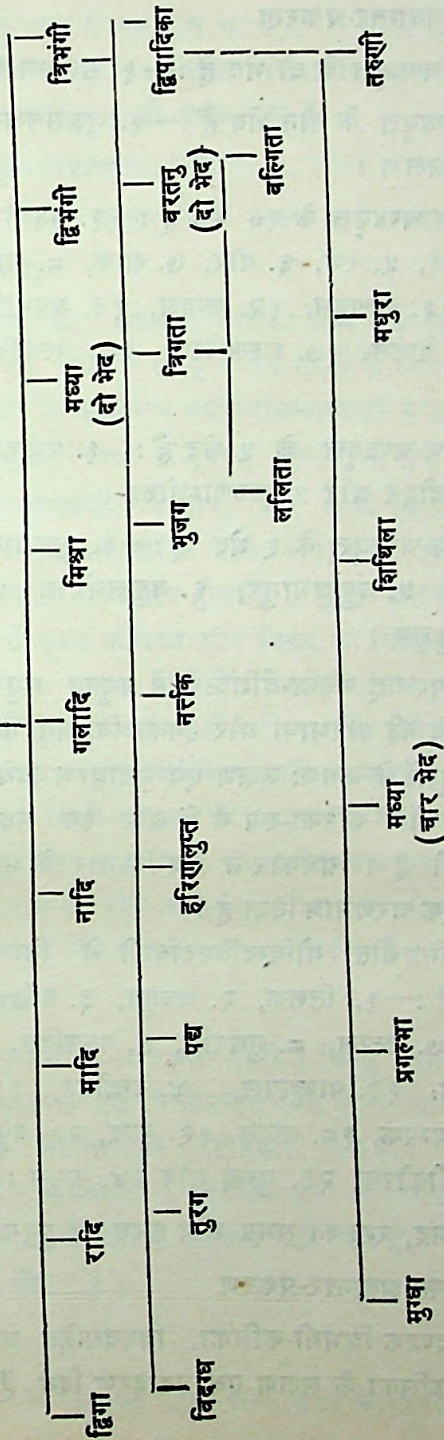
त्रिभंगी-कलिका के भी ९ भेद माने हैं :—१. विदग्धत्रिभङ्गी-कलिका, २. तुरगत्रिभङ्गी-कलिका, ३. पद्मत्रिभंगी-कलिका, ४. हरिणप्लुतत्रिभंगी-कलिका, ५. नर्त्तकत्रिभंगी-कलिका, ६. भुजंगत्रिभंगी-कलिका, ७. त्रिगतात्रिभंगी-कलिका, ८. वरतनुत्रिभंगी-कलिका और ९ द्विपादिका-युग्मभंगा कलिका।

त्रिगतात्रिभंगी-कलिका के दो भेद हैं :—१. ललिता-त्रिगता-त्रिभंगी-कलिका और २. वलिगता-त्रिगता-त्रिभंगी-कलिका। वरतनु-त्रिभंगी-कलिका के भी दो भेद माने हैं।

द्विपादिका-युग्मभंगा-कलिका के ६ भेद माने हैं :—१. मुग्धा-द्विपादिका युग्मभंगा-कलिका, २. प्रगल्भा-द्विपादिका-युग्मभंगा-कलिका, ३. मध्या-द्विपादिका-युग्मभंगा-कलिका, ४. शिथिला-द्विपादिका-युग्मभंगा-कलिका, ५. मधुरा द्विपादिका-युग्मभंगा-कलिका और ६. तरुणी-द्विपादिका-युग्मभंगा-कलिका। इसमें मध्या-द्विपादिका-युग्मभंगा कलिका के भी चार भेद माने हैं।

इस प्रकार मूलभेद ९ और प्रतिभेद २५ कुल ३४ कलिकाओं के लक्षण और उदाहरण ग्रंथकार ने दिये हैं। लक्षण पूर्णपद्यों में नहीं हैं किन्तु पद्य के टुकड़ों में कारिका रूप में हैं। इन लक्षणों को स्पष्ट करने के लिये टीका भी दी है। उदाहरण के भी पूर्णपद्य नहीं हैं किन्तु प्रत्येक उदाहरण के लिये केवल एक चरण दिया है। मध्याकलिका का उदाहरण नहीं दिया है। यथा—

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy



CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

(२) चण्डवृत्त-अवान्तर-प्रकरण

महाकलिकाचण्डवृत्त के दो भेद हैं :—१. सलक्षण और २. साधारण।

सलक्षण चण्डवृत्त के तीन भेद हैं :—१. शुद्धसलक्षण, २. संकीर्णसलक्षण और ३. गर्भितसलक्षण।

शुद्ध सलक्षण चण्डवृत्त के २० भेद हैं :—१. पुरुषोत्तम, २. तिलक, ३. अच्युत, ४. वर्द्धित, ५. रण, ६. वीर, ७. शाक, ८. मातङ्गखेलित, ९. उत्पल, १०. गुणरति, ११. कल्पद्रुम, १२. कन्दल, १३. अपराजित, १४. नर्त्तन, १५. तरत्समस्त, १६. वेष्टन, १७. अस्खलित, १८. पल्लवित, १९. समग्र और २० तुरग।

संकीर्णसलक्षण-चण्डवृत्त के ५ भेद हैं :—१. पङ्केरुह, २. सितकञ्ज, ३. पाण्डूत्पल, ४. इन्दीवर और ५. अरुणाम्भोरुह।

गर्भितसलक्षण-चण्डवृत्त के ९ भेद हैं :—१. फुल्लाम्बुज, २. चम्पक, ३. वंजुल, ४. कुन्द, ५. बकुलभासुर, ६. बकुलमंगल, ७. मञ्जरीकोरक; ८. गुच्छक और ९. कुसुम।

भेदकथन के पश्चात् रचना-वैशिष्टच में प्रयुक्त मधुर, श्लिष्ट, संश्लिष्ट, शिथिल और ह्रादि की परिभाषा और इनका विवेचन करते हुये उपर्युक्त ३४ महाकलिका-चण्डवृत्तों के क्रमशः लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं। लक्षण पूर्ण पद्यों में न होकर खण्डपद्यों में करिका-रूप में हैं और इन लक्षणों को स्पष्ट करने के लिये व्याख्या भी दी है। ग्रंथकार ने ग्रंथ-विस्तार के भय से प्रत्येक चण्डवृत्त के उदाहरण में एक-एक चरणमात्र दिया हं।

श्रीरूपगोस्वामिप्रणीत गोविन्दविरुदावली से निम्नलिखित चण्डवृत्तों के प्रत्युदाहरण दिये हैं :—१. तिलक, २. अच्युत, ३. वर्द्धित, ४. रण, ५. वीर, ६. मातंगखेलित, ७. उत्पल, ८. गुणरति, ९. पल्लवित, १०. तुरग, ११. पंकेरुह, १२. सितकंज, १३. पाण्डूत्पल, १४. इन्दीवर, १५. अरुणाम्भोरुह, १६. फुल्लाम्बुज, १७. चम्पक, १८. वंजुल, १९. कुन्द, २०. बकुलभासुर, २१. बकुलमंगल, २२. मञ्जरीकोरक, २३. गुच्छ और २४. कुसुम।

वीर का वीरभद्र, रण का समग्र और तुरग का तुरंग नामभेद भी दिया है।

(३) त्रिभंगी-कलिका-अवान्तर-प्रकरण

विरुदसहित दण्डक-त्रिभंगी-कलिका, विरुदसहित सम्पूर्णा विदग्धत्रिभंगी-कलिका और मिश्रकलिका के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं। लक्षण-कारिकाओं

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

की टीका भी है। उदाहरण के एक-एक चरण हैं। तीनों ही विरुदावलियों के प्रत्युदाहरण दिये हैं जो कि रूपगोस्वामिकृत गोविन्दविरुदावली के हैं। ग्रंथकार ने तीनों ही भेद चण्डवृत्त के ही प्रभेद माने हैं।

(४) साधारण-चण्डवृत्त-अवान्तर-प्रकरण

इस प्रकरण में साधारण चण्डवृत्तों के लक्षण एवं उदाहरण दिये गये हैं।

(५) विरुदावली-प्रकरण

साप्तविभक्तिकी कलिका, अक्षमयी कलिका और सर्वलघु कलिका के लक्षण देकर इन कारिकाओं की व्याख्या दी है। इन तीनों के स्वयं के उदाहरण नहीं हैं। तीनों ही कलिकाओं के उदाहरण गोविन्दविरुदावली से उद्धृत हैं। अन्त में समग्र कलिकाओं में प्रयुक्त विरुदों के युगपद् लक्षण कहे हैं।

देव, भूपति एवं तत्तुल्यवर्णनों में धीर, वीर आदि विरुदों का प्रयोग होता है। संस्कृत-प्राकृत के श्रव्यकाव्यों में शौर्य, वीर्य, दया, कीर्ति और प्रतापादि प्रधान विषयों में कलिकादि का प्रयोग होता है। गुण, अलङ्कार, रीति, मैत्र्यनुप्रास एवं छन्दाडम्बर से युक्त कलिका और विरुद का निरूपण करते हुए समग्र विरुदावलियों के सामान्य लक्षण दिये हैं। इसके अनुसार कलिका-श्लोकविरुद न्यूनातिन्यून पन्द्रह होते हैं और अधिक से अधिक नव्वे होते हैं। नव्वे कलिका-श्लोक विरुद युक्त विरुदावली अखंडा विरुदावली या महती विरुदावली कहलाती है। मतान्तर के अनुसार किसी कलिका के स्थान पर केवल गद्य होता है या विरुद होता है और कलिका एवं विरुद आशीर्वादात्मक पद्यों से युक्त होता है। प्रत्येक विरुदावली में तीन या पांच कलिकायें और इतने ही श्लोकों की रचना ऐच्छिक होती है। अंत में विरुदावली का फल-निर्देश है।

१०. खण्डावली-प्रकरण

विरुदावली के समान ही खंडावली होती है किन्तु इतना अंतर है कि आदि और अंत में आशीर्वादात्मक पद्य विरुदरहित होते हैं। तामरसखंडावली और मञ्जरी-खंडावली के लक्षणसहित उदाहरण दिये हैं। लक्षणकारिकाओं की टीका भी है। अंत में कवि कहता है कि खंडावली के हजारों भेद सम्भव हैं किंतु ग्रंथ विस्तारभय से मैंने इसके भेदों के उल्लेख नहीं किये हैं; केवल सुकुमारमतियों के लिये मार्ग-प्रदर्शन किया है।

११. दोष-प्रकरण

इस प्रकरण में विरुदावली और खण्डावली के दोषों का दिग्दर्शन कराया

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

है। अमैत्री, अनुप्रासाभाव, दौर्बल्य, कलाहति, असाम्प्रत, हतौचित्य, विपरीतयुत, विशृंखल और स्खलत्तालनामक ९ दोषों के लक्षण एवं उदाहरण देते हुये कहा है कि इन नव दोषों को जो विद्वान् नहीं जानता है और काव्य रचना करता है वह तमोलोक में उलूक होता है अर्थात् काव्य में इन दोषों का त्याग अनिवार्य है।

१२. अनुक्रमणी-प्रकरण

रविकर, पशुपति, पिंगल एवं शम्भु के छंदःशास्त्रों का अवलोकन कर चंद्रशेखर भट्ट ने वृत्तमौक्तिक की रचना की है।

यह प्रकरण दो विभागों में विभक्त है। प्रथम विभागों ४० पद्यों का है जिसमें प्रथम-खण्ड की अनुक्रमणिका दी है और द्वितीय विभाग १८८ पद्यों का है जिसमें द्वितीय-खंड की अनुक्रमणिका दी है।

प्रथम खण्डानुक्रम—इसमें मात्रावृत्त नामक प्रथम खंड के छहों प्रकरणों की विस्तृत सूची है। प्रत्येक छंद का क्रमशः नाम दिया है और अंत में छंद-संख्या भेदों सहित २८८ दिखलाई है।

द्वितीय खण्डानुक्रम :—प्रथम प्रकरण में प्ररूपित अक्षरानुसार अर्थात् एक से छब्बीस अक्षर पर्यन्त छंदों के क्रमशः नाम, नामभेद और प्रस्तारभेद के साथ सूची दी है और अंत में प्रस्तारपिंड की संख्या देते हुये उल्लिखित २६५ छंदों की संख्या दी है। द्वितीय प्रकरण से छठे प्रकरण तक की सूची में छंदनाम और नामभेद दिये हैं। सप्तम यतिप्रकरण का उल्लेख करते हुये आठवें गद्य प्रकरण के भेदों का सूचन किया है और नवम तथा दसवें प्रकरण के समस्त छंदों के नाम और नामभेद दिये हैं एवं ग्यारहवें दोष प्रकरण का उल्लेख किया है।

अंत में दोनों खंडों के प्रकरणों की संख्या देते हुये उपसंहार किया है।

ग्रन्थकृत्प्रशस्ति—

वि०सं० १६७६ कार्तिकी पूर्णिमा को वसिष्ठवंशीय लक्ष्मीनाथ भट्ट के पुत्र चंद्रशेखर भट्ट ने इसकी (द्वितीय खंड) रचना पूर्ण की है। प्रशस्तिपद्य ८ एवं ९ में लिखा है कि चंद्रशेखर भट्ट का स्वर्गवास हो जाने के कारण इस ग्रंथ की पूर्णाहुति लक्ष्मीनाथ भट्ट ने की है।

ग्रन्थ का वैशिष्ट्य

प्रस्तुत ग्रंथ का छंदःशास्त्र की परम्परा में एक विशिष्ट स्थान है। इसी ग्रंथ के पृष्ठांक ४१४ में उल्लिखित छंदःशास्त्र के १९ ग्रंथ और दो टीका-ग्रंथों के साथ

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तुलनात्मक अध्ययन करने पर इस ग्रंथ का महत्त्व कई दृष्टियों से आंका जा सकता है। न केवल संस्कृत और प्राकृत-अपभ्रंश छन्द-परम्परा की दृष्टि से ही अपितु हिन्दी छंद-परम्परा की दृष्टि से भी इस ग्रंथ को छंदःशास्त्र का सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ मान सकते हैं। इस ग्रंथ की प्रमुख-प्रमुख विशेषतायें इस प्रकार हैं :—

१. पारिभाषिक शब्द और गण

इस ग्रंथ में मात्रिक और वर्णिक दोनों छंदों का विधान होने से ग्रंथकार ने संस्कृत और प्राकृत-अपभ्रंश की मगणादिगण एवं टगणादिगणों की दोनों प्रणालिओं का साधिकार प्रयोग किया है। स्वयंभू छंद, छंदोनुशासन और कवि-दर्पण आदि ग्रंथों में षट्कल, पञ्चकल, चतुष्कल आदि कलाओं का ही प्रयोग मिलता है किंतु इनके प्रस्तार-भेद, नाम और उसके कर्ण, पयोधर, पक्षिराज आदि पर्यायों का प्रयोग हमें प्राप्त नहीं होता है। इसका सर्वप्रथम प्रयोग हमें कवि विरहांक कृत वृत्तजातिसमुच्चय में प्राप्त होता है। इसके पश्चात् तो इसका प्रयोग प्राकृतपिंगल, वाणीभूषण और वाग्वल्लभ आदि अनेक ग्रंथों में प्राप्त होता है।

वृत्तमौक्तिक में ट = षट्कल, ठ = पञ्चकल ड = चतुष्कल, ढ = त्रिकल, ण = द्विकल गण स्थापित कर इनके प्रस्तारभेद, नाम और प्रत्येक के पर्याय विशदता के साथ प्राप्त हैं। साथ ही पृथक् रूप से मगणादि आठ गण भी दिये है। इस पारिभाषिक शब्दावली का तुलनात्मक अध्ययन के साथ परिचय मैंने इसी ग्रंथ के प्रथम परिशिष्ट में दिया है, अतः यहाँ पर पुनः पिष्टपेषण अनावश्यक है, किंतु रत्नमञ्जूषा और जानाश्रयी छन्दोविचिति में हमें एक नये रूप में पारिभाषिक शब्दावली प्राप्त होती है जिसका कि पूर्ववर्त्ती और परवर्ती किसी भी ग्रंथ में प्रयोग नहीं मिलता है अतः तुलना के लिये दोनों की संकेत सूची यहाँ देना अप्रासंगिक न होगा।

रत्नमञ्जूषा		वृत्तमौक्तिक
क् और आ	ऽ ऽ ऽ	मगण, हर
च् ,, ए	। ऽ ऽ	यगण, इन्द्रासन आदि
त् ,, औ	ऽ । ऽ	रगण, सूर्य, वीणा आदि
प् ,, ई	। । ऽ	सगण, करतल, कर आदि
श् ,, अ	ऽ ऽ ।	तगण, हीर
ष् ,, उ	ऽ । ऽ	जगण, पयोधर, भूपति आदि
स् ,, ऋ	ऽ । ।	भगण, दहन, पितामह आदि

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

ह् और इ	।।।	नगण, भाव, रस, भामिनी आदि
य्	ऽऽ	कर्ण, सुरतलता, आदि
र्	।ऽ	ध्वज, चिह्न, चिरालय आदि
व्	।।	सुप्रिय, परम
म्	ऽ	हार, ताटंक, नूपुर आदि
न्	।	शर, मेरु, कनक, दण्ड आदि

× × × ×

जानाश्रयी छन्दोविचिति		वृत्तमौक्तिक
भ	ऽ	ग, हार, ताटंक आदि
ह	।	ल, शर, मेरु आदि
गङ्गास्	ऽऽ	गुरुयुगल, कर्ण, रसिक आदि
नदीज्	।ऽ	वलय, तोमर, पवन आदि
ननुर्	।।	सुप्रिय, परम,
नूनंसाग्	ऽऽऽ	मगण, हर,
कृशाङ्गीग्	।ऽऽ	यगण, कुञ्जर, रदन, मेघ आदि
धीवराश्	ऽ।ऽ	रगण, गरुड, भुजंगम, विहग आदि
कुरुतेल्	।।ऽ	सगण, कमल, हस्त, रत्न आदि
तेश्रीःक्वब्	ऽऽ।	तगण, हीर,
विभातिक्	।ऽ।	जगण, भूपति, कुच आदि
सातवत्	ऽ।।	भगण, तात, पद, जंघायुगल आदि
तरतिम्	।।।	नगण, रस, ताण्डव आदि
नचरतिद्	।।।।	विप्र, द्विज, बाण आदि
चन्द्रननु	ऽ।।।	अहिगण
नदीननु	।ऽ।।	कुसुम
ननुचन्द्र	।।ऽ।	शेखर
कमलिनीय्	।।।ऽ	चाप
लोलमालाष्	ऽ।ऽऽ	...
रौतिमयूरोत्र्	ऽ।।ऽऽ	...
धैर्यमस्तुतेट्	ऽ।ऽ।ऽ	...
ननुतरति	।।।।।	पापगण
जयनरवरण	।।।।।।	शालि

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पारिभाषिक शब्दावली का ग्रन्थकार ने सफलता के साथ विविध रूपों में प्रयोग किया है :—१. विशुद्ध टादिगण, २. टादि और मगणादि मिश्र, ३. टादि और पारिभाषिक मिश्र, ४. विशुद्ध पारिभाषिक, ५. विशुद्ध मगणादि और ६. पारिभाषिक एवं मगणादि मिश्र। उदाहरण के तौर पर प्रत्येक प्रयोग का एक-एक पद्य प्रस्तुत है :—

१. विशुद्ध टगणादि का प्रयोग—

> आदौ षट्कलमिह रचय डगणत्रयमिह धेहि।
> ठगणं डगणं द्वयमपि **घत्तानन्दे** धेहि ॥३२॥ [पृ० १९]

अर्थात् घत्तानन्द नामक मात्रिक छंद में षट्कल = ६ मात्रा, डगणत्रय = चतुष्कल तीन १२ मात्रा, ठगण = पञ्चकल ५ मात्रा और डगणद्वय = चतुष्कलद्वय ८ मात्रा कुल ३१ मात्रा होती है।

२. टादि और मगणादि मिश्र का प्रयोग—

> डगणं कुरु विचित्रमन्ते जगणमत्र।
> मध्ये द्विलमवेहि दीपकमिति विधेहि ॥३६॥ [पृ० ३८]

अर्थात् **दीपक** नामक मात्रिक छंद में डगण = चतुष्कल ४ मात्रा, द्विल = दो लघु २ मात्रा और जगण = ४ मात्रा, कुल १० मात्रा होती हैं।

३. टादि और पारिभाषिक-मिश्र का प्रयोग—

> यदि योगडगणकृत - चरणविरचित-द्विजगुरुयुगकरवसुचरणा।
> नायक-विरहितपद - कविजनकृतमदपठनादपि मानसहरणा।
> इह दशवसुमनुभिः क्रियते कविभिर्विरतिर्यदि युगदहनकला।
> सा **पद्मावतिका** फणिपतिभणिता त्रिजगति राजति गुणबहुला ॥१॥
> [पृ० ३०]

अर्थात् पद्मावतीनामक मात्रिक छंद में 'योगडगण' डगण = चतुष्कल, योग = आठ अर्थात् ३२ मात्रायें होती हैं जिनमें द्विज = ।।।। चार मात्रा, गुरु-युग = SS चार मात्रा, कर = ।।S सगण ४ मात्रा, वसुचरण = S।। भगण चार मात्रा का प्रयोग अपेक्षित है और नायक = ।S। जगण चार मात्रा का प्रयोग निषिद्ध है। इस छंद में यति १०, ८, १४ मात्रा पर होती है।

४. विशुद्ध पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग—

> द्विजरसयुता कर्णद्वन्द्वस्फुरद्वरकुण्डला,
> कुचतटगतं पुष्पं हारं तथा दधती मुदा।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

विरुतललितं संबिभ्राणं पदान्तगनूपुरं
रसजलनिधिच्छिन्ना नागप्रिया हरिणी मता ।।४१८।।
[पृ० १३७]

हरिणी नामक छंद १७ वर्णों का होता है। इसमें द्विज = । । । ।, रस = ।, कर्णद्वन्द्व = ऽ ऽ ऽ ऽ, कुण्डल = ऽ , कुच = । ऽ ।, पुष्प = ।, हार = ऽ, विरुत = ।, नूपुर = ऽ होते हैं अर्थात् इस छंद में, नगण, सगण मगण, रगण, सगण, लघु और गुरु होते हैं। ६, ४ और ७ पर यति होती है।

५. विशुद्ध मगणादिगणों का प्रयोग—

कुरु नगणयुगं धेहि तं भगणं ततः,
प्रतिपदविरतौ भासते रगणोऽन्ततः।
मुनिरचितयतिर्नागिराजफणिप्रिया,
सकलतनुभृतां मानसे लसति **प्रिया** ।।३६६।। [पृ० १२७]

१५ वर्ण के प्रियाछन्द का लक्षण है—नगण, नगण, तगण, भगण और रगण। ७ और ८ पर यति होती है।

६. पारिभाषिक और मगणादिमिश्र का प्रयोग—

पूर्वं कर्णत्रित्वं कारय पश्चाद्धेहि भकारं दिव्यं ,
हारं वह्निप्रोक्तं धारय हस्तं देहि मकारं चान्ते ।
रन्ध्रैर्वर्णैर्विश्रामं कुरु पादे नागमहाराजोक्तं,
मञ्जीराख्यं वृत्तं भावय शीघ्रं चेतसि कान्ते स्वीये ।।४४३।।
[पृ० १४३]

१८ अक्षरों के मञ्जीराछन्द का लक्षण है :—कर्णत्रित्वं = ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ, भकार = ऽ । ।, हारं वह्नि = ऽ ऽ ऽ, हस्तं = । । ऽ, और मकार = ऽ ऽ ऽ; अर्थात् इसमें मगण, मगण, भगण, मगण, सगण और मगण होते हैं। यति ६-६ पर है।

इस पारिभाषिक शब्दावली के कारण यह सत्य है कि वृत्तरत्नाकर, छंदोमञ्जरी और श्रुतबोध की तरह वह बाल-सरलता अवश्य ही नहीं रही किन्तु इसके सफल प्रयोग से इस ग्रंथ में जैसा शब्दमाधुर्य, भाषा की प्राञ्जलता, रचना-सौष्ठव और लालित्य प्राप्त होता है वैसा उन ग्रंथों में कहाँ है ?

२. विशिष्ट छन्द—

वृत्तमौक्तिक में जिन छंदों के लक्षण एवं उदाहरण ग्रन्थकार ने दिये हैं उनमें से कतिपय छंद ऐसे हैं जिनका पृष्ठ ४१४ पर दी हुई सन्दर्भ-ग्रंथ-

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

सूची के प्रसिद्ध छंदःशास्त्र के २१ ग्रन्थों में भी उल्लेख नहीं हैं और कतिपय छंद ऐसे हैं जो केवल हेमचन्द्रीय छंदोनुशासन, पिंगलकृत छंदःसूत्र, हरिहरकृत प्राकृतपिंगल और दुःखभञ्जनकृत वाग्वल्लभ में ही प्राप्त होते हैं। इन विशिष्ट छंदों की वर्गीकृत तालिका इस प्रकार है :—

वृत्तमौक्तिक के विशिष्ट छन्द—

मात्रिक छन्द :—कामकला, हरिगीतकम्, मनोहर हरिगीतम्, अपरा हरिगीता, मदिरा सवया, मालती सवया, मल्ली सवया, मल्लिका सवया, माधवी सवया, मागधी सवया, घनाक्षर, अपर समगलितक और अपर संगलितक।

वर्णिक छन्द:—१४ अक्षर – शरभी, अहिधृति; १६ अक्षर – सुकेसरम्, ललना; १७ अक्षर – मतंगवाहिनी; १९ अक्षर – नागानन्द, मृदुलकुसुम; २० अक्षर – प्लवंगभंगमंगल, अनवधिगुणगण; २१ अक्षर – ब्रह्मानन्द, निरुपमतिलक; २२ अक्षर – विद्यानन्द, शिखर, अच्युत; २३ अक्षर – दिव्यानन्द; कनकवलय; २४ अक्षर – रामानन्द, तरलनयन; २५ अक्षर–कामानन्द, मणिगुण; २६ अक्षर–कमलदल और विषमवृत्तों में भाव तथा वैतालीय छंदों में नलिन और अपर नलिन।

इस प्रकार मात्रिक छंद १३ और वर्णिक छंद २४ कुल ३७ छन्द ऐसे हैं जिनका अन्य छंदःशास्त्रों में उल्लेख नहीं है।

निम्नलिखित ११ छंद केवल हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन एवं वृत्तमौक्तिक में ही प्राप्त हैं :—

मात्रिक छन्द :—विगलितक, सुन्दरगलितक, भूषणगलितक, मुखगलितक, विलम्बितगलितक, समगलितक, विक्षिप्तिकागलितक, विषमितागलितक और मालागलितक।

वर्णिक छन्द—१३ अक्षर – सुद्युति और २१ अक्षर – रुचिरा।

१८ वर्ण का लीलाचन्द्र नामक छन्द प्राकृतपिंगल और वृत्तमौक्तिक में ही प्राप्त है।

निम्नांकित १७ वर्णिक छंद वृत्तमौक्तिक और दुःखभंजन कवि रचित वाग्वल्लभ में ही प्राप्त हैं।

८ अक्षर – जलद; ९ अक्षर – सुललित; १० अक्षर – गोपाल, ललितगति; ११ अक्षर – शालिनी-वातोर्म्युपजाति, बकुल; १३ अक्षर – वाराह, विमलगति; १४ अक्षर – मणिगण; १५ अक्षर – उडुगण; १७ अक्षर – लीलाधृष्ट; १८

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अक्षर – उपवनकुसुम; २३ अक्षर – मल्लिका; २४ अक्षर – माधवी; २५ अक्षर – मल्ली; २६ अक्षर – गोविन्दानन्द और मागधी।

दो नगण और आठ रगणयुक्त प्रचितक-नामक दण्डक का प्रयोग केवल छंदःसूत्र और वृत्तमौक्तिक में ही है।

चौपैया नामक मात्रिक छंद अन्य ग्रंथों में भी प्राप्त है। किन्तु जहाँ अन्य ग्रंथों में १२० मात्रा का पूर्ण पद्य माना है वहाँ इस ग्रन्थ में १२० मात्रा का एक पद और ४८० मात्रा का पूर्ण पद्य माना है।

इस वर्गीकरण से स्पष्ट है कि अन्य ग्रंथों की अपेक्षा वृत्तमौक्तिक में छंदों का वैशिष्ट्य और बाहुल्य है।

३. छन्दों के नाम-भेद

प्रस्तुत ग्रंथ में ५० छंद ऐसे हैं जिनका ग्रंथकार ने प्राकृतपिंगल, आचार्य शंभु एवं तत्कालीन आधुनिक छंदःशास्त्रियों के मतानुसार नाम-भेद दिये हैं। इन नामभेदों की तालिका ग्रंथ के सारांश में और चतुर्थ परिशिष्ट (ख) में देखी जा सकती है। इस प्रकार की नामभेदों की प्रणाली अन्य मूलग्रन्थों में उपलब्ध नहीं है। हाँ, हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन की स्वोपज्ञ टीका और वृत्तरत्नाकर की नारायणभट्टी टीका आदि कतिपय टीका-ग्रन्थों में यह प्रणाली अवश्य लक्षित होती है किन्तु इतनी विपुलता के साथ नहीं।

इससे यह तो स्पष्ट है कि ग्रन्थकार ने प्राचीन एवं अर्वाचीन अनेक छन्दःशास्त्रों का आमन्थन कर प्रस्तुत ग्रन्थ द्वारा नवनीत रखने का प्रयास किया है।

४. विरुदावली और खण्डावली

ग्रन्थ के द्वितीय-खण्ड के नवम प्रकरण में विरुदावली, दसवें प्रकरण में खण्डावली और ग्यारहवें प्रकरण में इन दोनों के दोषों का वर्णन है। विरुदावली में ३४ कलिका, ४० विरुदावली और २ खण्डावली के लक्षण एवं उदाहरण ग्रन्थकार ने दिये हैं। यह विरुदावली कवि की मौलिक-सर्जना प्रतीत होती है, क्योंकि अन्य छन्द-ग्रंथों में विरुदावली के भेद और लक्षण तो दूर रहे किन्तु इसका नामोल्लेख भी नहीं है। हाँ, इतना अवश्य है कि कवि ने २९ विरुदावलियों के उदाहरण रूपगोस्वामी प्रणीत गोविन्दविरुदावली से दिये हैं; अतः यह अनुमान किया जा सकता है कि रूपगोस्वामी के पूर्व भी इसकी परम्परा विविध-रूपों में अवश्य विद्यमान थी, अन्यथा इतने भेद और प्रभेद कैसे प्राप्त

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

हो सकते थे ? संभव है, इसका कोई स्वतन्त्र ग्रन्थ भी अवश्य रहा हो ! कतिपय स्फुट विरुदावलियां अवश्य प्राप्त होती हैं तथा शोध करने पर और भी प्राप्त होना संभव है किन्तु इनके भेद, प्रभेद उदाहरणों के साथ संकलन अद्यावधि अप्राप्त है । कवि ने इस विच्छिन्नप्राय परम्परा को अक्षुण्ण रख कर जो साहित्य जगत् को अमूल्य देन दी है वह श्लाघ्य ही नहीं महत्त्वपूर्ण भी है ।

अद्यावधि जो संस्कृत-वाङ्मय प्रकाश में आया है उसमें विरुदावली-साहित्य पर नहीं के समान प्रकाश पड़ा है । अतः शोध-विद्वानों का कर्त्तव्य है कि वे इस अछूते और वैशिष्ट्यपूर्ण विरुदावली-साहित्य पर अनुसंधान कर इसके महत्त्व पर प्रकाश डालें ।

५. यति एवं गद्य प्रकरण—

समग्र छन्दःशास्त्रियों ने मात्रिक और वर्णिक पद्य के पदान्त और पदमध्य में यतिविधान आवश्यक माना है । वृत्तमौक्तिककार ने भी यति प्रकरण में इस का सुन्दर विश्लेषण और विवेचन किया है । इनके मत से काव्य में मधुरता के लिये यति का बन्धन आवश्यक है । यति से काव्य में सौन्दर्य की अभिवृद्धि होती है । यति के बिना काव्य श्रेष्ठतर नहीं हो सकता[1] ।

ग्रन्थकार के मत से भरत, पिंगल और जयदेव संस्कृत-साहित्य में यति आवश्यक मानते हैं और श्वेतमाण्डव्य आदि मुनिगण यति का बन्धन स्वीकार नहीं करते हैं[2] । जयकीर्त्ति के मतानुसार पिंगल वसिष्ठ, कौण्डिन्य, कपिल, कम्बलमुनि यति को अनिवार्य मानते हैं और भरत, कोहल, माण्डव्य, अश्वतर, सैतव आदि कतिपय आचार्य यति को अनावश्यक मानते हैं—

वाञ्छन्ति यतिं पिङ्गल-वसिष्ठ-कौण्डिन्य-कपिल-कम्बलमुनयः ।
नेच्छन्ति भरत-कोहल-माण्डव्याश्वतरसैतवाद्याः केचित् ॥
[छन्दोनुशासन, १.१३]

स्वयम्भूछन्द में लिखा है—

जयदेवपिंगला सक्कयंमि दुच्चिय जइं समिच्छंति ।
मंडव्वभरहकासवसेयवपमुहा न इच्छंति ॥१,७१॥

[जयदेवपिंगलौ संस्कृते द्वावेव यतिं समिच्छन्ति ।
माण्डव्यभरतकाश्यपसैतवप्रमुखा न इच्छन्ति ॥]

अर्थात् जयदेव और पिंगल यति मानते हैं और माण्डव्य, भरत, काश्यप, सैतव आदि नहीं मानते हैं ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१–पृ. २०४ पद्य ८ २–पृ. २०४ पद्य १०

भरत के नाट्यशास्त्र के छन्द-प्रकरण में पादान्त यति तो प्राप्त है ही साथ ही पदमध्ययति भी प्राप्त है।[1] ऐसी अवस्था में जयकीर्त्ति एवं स्वयम्भू-छन्दकार ने भरत को यतिविरोधी कैसे माना, विचारणीय है ! वृत्तमौक्तिककार ने भरत को यतिसमर्थक ही माना है।

यति का सांगोपांग विश्लेषण छन्दःसूत्र की हलायुधटीका, हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन की स्वोपज्ञटीका और वृत्तमौक्तिक में ही प्राप्त है। अन्य छन्द-शास्त्रों में कतिपय छन्द-शास्त्रियों ने इसका सामान्य-वर्णन सा ही किया है।

गद्य काव्य-साहित्य का प्रमुख अंग है। प्रस्तुत ग्रन्थ में इसके भेद, प्रभेदों के लक्षण और प्रत्येक के उदाहरण प्राप्त हैं। साथ ही अन्य आचार्यों के मतों का उल्लेख कर उनके मतानुसार ही उदाहरण भी ग्रंथकार ने दिये हैं। इस प्रकार गद्य-काव्य का विवेचन अन्य छंदग्रंथों में प्राप्त नहीं है। संभव है इसे काव्य का अंग मानकर साहित्य-शास्त्रियों के लिये छोड़ दिया हो !

६. रचना-शैली—

छन्दशास्त्र की प्राचीन और अर्वाचीन रचनाशैली अनेक रूपों में प्राप्त होती है जिनमें तीन शैलियां मुख्य हैं:—१. गद्य सूत्र रूप, २. कारिका-शैली (लक्षण सम्मत चरण रूप) और ३. पूर्णपद्य-शैली।

गद्यसूत्ररूप शैली में छन्दःसूत्र, रत्नमञ्जूषा, जानाश्रयी छन्दोविचिति और हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन की रचनायें आती हैं।

कारिकारूपशैली में जयदेवछन्दस्, स्वयम्भूछन्द, कविदर्पण, जयकीर्त्ति-कृत छन्दोनुशासन, वृत्तरत्नाकर, छन्दोमंजरी और वाग्वल्लभ की रचनायें हैं।

पूर्णपद्यशैली में प्राकृतपिंगल, वाणीभूषण, श्रुतबोध और वृत्तमुक्तावली की रचनायें हैं।

भरत-नाट्यशास्त्र में लक्षण अनुष्टुप् छन्द में है, वृत्तमुक्तावली में मात्रिक छन्दों के लक्षण गद्य में हैं और वाग्वल्लभ में मात्रिक-छन्दों के लक्षण पूर्ण पद्यों में हैं।

छन्दःसूत्र, रत्नमञ्जूषा, जानाश्रयी छन्दोविचिति, जयदेवछन्दस्, जयकीर्त्तीय छन्दोनुशासन, हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन, कविदर्पण, वृत्तरत्नाकर, छन्दोमञ्जरी एवं वाग्वल्लभ में लक्षणमात्र प्राप्त हैं, स्वरचित उदाहरण प्राप्त नहीं हैं। स्वयम्भूछंद, हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन की टीका और प्राकृतपिंगल में कतिपय

१—नाट्यशास्त्र (१६, ३६)

T CC-0. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

स्वरचित एवं अन्य कवियों के उदाहरण प्राप्त हैं। नाट्यशास्त्र, वाणीभूषण और वृत्तमुक्तावली में ग्रन्थकार रचित उदाहरण प्राप्त हैं।

प्रस्तुत ग्रन्थ की रचना-शैली हमें दो रूपों में प्राप्त होती है—१. पूर्णपद्य-शैली और २. कारिकाशैली। प्रारम्भ से द्वितीय-खण्ड के विषमवृत्तप्रकरण तक मात्रिक एवं वर्णिक छन्दों के लक्षण पूर्णपद्यशैली में हैं जिससे छन्द का लक्षण और यति आदि का विश्लेषण विशद और सरल रूप में हो गया है। वैतालीय छन्द तथा विरुदावली-खण्डावली-प्रकरण कारिकाशैली में होने से विषय को स्पष्ट करने के लिये ग्रन्थकार ने व्याख्या का आधार लिया है। यह हम पहले ही कह आये हैं कि ग्रन्थ के मूललेखक चन्द्रशेखर भट्ट का स्वर्गवास द्वितीय-खण्ड के रचनाकाल के मध्य में हो गया था और तदुपरान्त उसकी इच्छा के अनुसार उनके पिता लक्ष्मीनाथ भट्ट ने ग्रन्थ को पूर्ण करने का कार्य पूर्ण मनोयोग के साथ अपने हाथ में लिया था। पंचम प्रकरण में तो उन्होंने जैसे तैसे ही लक्षण स्पष्ट करने के लिये पद्यशैली को अपनाये रखनेका प्रयास किया प्रतीत होता है परन्तु छठे प्रकरण (वैतालीय) पर आते ही दोनों लेखकों के व्यक्तित्व की भिन्नता का प्रतिबिम्ब हमें शैलीगत भिन्नता में मिल जाता है, क्योंकि यहां से लेखक ने कारिका-शैली को इस कार्य के लिये सुविधाजनक समझ कर अपना लिया है और अन्त तक उसी का निर्वाह उन्होंने किया है।

कवि ने स्वप्रणीत मुक्तक पद्यों के माध्यम से ही समग्र छन्दों के उदाहरण दिये हैं। प्रत्युदाहरणों में अवश्य ही पूर्ववर्ती कवियों के पद्य उद्धृत किये हैं। हां, विरुदावलीप्रकरण में स्वप्रणीत उदाहरण एक-एक चरण के ही दिये हैं।

लक्षणों के सीमित दायरे में बद्ध रहने पर भी पारिभाषिक शब्दावली के माध्यम से छन्दों के अनुरूप ही शब्दों का चयन कर कवि ने जो लयात्मक सौन्दर्य, माधुर्य और चमत्कार का सृजन किया है वह अनूठा हैं। यथा–

पूर्णपद्यशैलो का उदाहरण—

हारद्वयं स्फुरदुरोजयुतं दधाना,
हस्तं च गन्धकुसुमोज्ज्वलकंकणाढ्यम्।
पादे तथा सरुतनूपुरयुग्मयुक्ता,
चित्ते वसन्ततिलका किल चाकसीति ॥२९७॥ [पृ० ११३]

कारिकाशैली का उदाहरण—

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अस्य युग्म रचिताऽपरान्तिका ॥२७॥

[व्या.] अस्य-प्रवृत्तकस्य समपादकृता'—'समपादलक्षणयुक्तैश्चतुर्भिः पादै रचिताऽपरान्तिका ।

उदाहरण मुक्तक पद्यों में हैं । इसमें छन्द-नामों के अनुरूप ही शृंगार, वीर, रौद्र और शान्त आदि रसों के अनुकूल जिस शाब्दिक गठन, आलंकारिकता और लाक्षणिकता का कवि ने प्रयोग किया है वह भी दर्शनीय है । उदाहरण के तौर पर दो पद्य प्रस्तुत हैं—

मनोहंस-नामानुरूप उदाहरण—

तनुजाग्निना सखि मानसं मम दह्यते,
तनुसन्धिरुष्णगदारुवत् परिभिद्यते ।
अधरं च शुष्यति वारिमुक्तसुशालिवत्,
कुरु मद्गृहं कृपया सदा वनमालिमत् ।।३४४।। [पृ० १२३]

सिंहास्यछन्द के अनुरूप उदाहरण—

यो दैत्यानामिन्द्रं वक्षस्पीठे हस्तस्याग्रै-
र्भिद्यद् ब्रह्माण्डं व्याकुर्योच्चैर्व्यामृद्नादुग्रैः ।
दत्तालीकान्युन्मिश्रं निर्यद् विद्युद्वृद्धास्य-
स्तूर्णं सोऽस्माकं रक्षां कुर्याद् घोर (वीरः) सिंहास्यः ।।२९६।।
[पृ० ११३]

स्पष्ट है कि उल्लिखित ग्रन्थों की अपेक्षा इस ग्रन्थ की रचनाशैली विशद, स्पष्ट, सरल और विविधता को लिये हुये है ।

७. छन्दजाति—

अद्यावधि उपलब्ध समस्त छन्दःशास्त्रियों ने एक अक्षर से छब्बीस अक्षर-पर्यन्त के वर्णिक छन्दों की निम्नजाति-संज्ञा स्वीकार की है—

उक्ता	=	१ अक्षर	बृहती	=	९ अक्षर
अत्युक्ता	=	२ अक्षर	पंक्ति	=	१० अक्षर
मध्या	=	३ अक्षर	त्रिष्टुप्	=	११ अक्षर
प्रतिष्ठा	=	४ अक्षर	जगती	=	१२ अक्षर
सुप्रतिष्ठा	=	५ अक्षर	अतिजगती	=	१३ अक्षर
गायत्री	=	६ अक्षर	शक्वरी	=	१४ अक्षर
उष्णिक्	=	७ अक्षर	अतिशक्वरी	=	१५ अक्षर
अनुष्टुप्	=	८ अक्षर	अष्टि	=	१६ अक्षर

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अत्यष्टि	=	१७ अक्षर	आकृति	=	२२ अक्षर
धृति	=	१८ अक्षर	विकृति	=	२३ अक्षर
अतिधृति	=	१९ अक्षर	संस्कृति	=	२४ अक्षर
कृति	=	२० अक्षर	अतिकृति	=	२५ अक्षर
प्रकृति	=	२१ अक्षर	उत्कृति	=	२६ अक्षर

किन्तु प्राकृतपिंगल, वाणीभूषण और वृत्तमौक्तिक में यह परम्परा दृष्टि-गोचर नहीं होती है। इन तीनों ग्रन्थों में एकाक्षर, द्व्यक्षर, त्र्यक्षर आदि संज्ञा का ही प्रयोग मिलता है। संभवतः मध्ययुगीन हिन्दी-परम्परा के निकट आ जाने के कारण ही इन ग्रन्थकारों ने वैदिक-परम्परा का त्याग कर सामान्य प्रणालिका अपनाई है।

८. विषयसूची—

प्रस्तुत ग्रन्थ के द्वितीय खण्ड के बारहवें प्रकरण में दोनों खण्डों के प्रत्येक प्रकरणस्थ प्रतिपाद्य विषय की विस्तृत अनुक्रमणिका ग्रन्थकार ने दी है। वर्ण्य विषय के साथ साथ छन्द-नाम, नामभेद और प्रत्येक अक्षर की प्रस्तारसंख्या का भी उल्लेख है। इस प्रकार की अनुक्रमणिका अन्य छन्द-ग्रन्थों में प्राप्त नहीं है, केवल प्राकृतपिंगल में प्रथम परिच्छेद के अंत में मात्रिक-छन्द-सूची और द्वितीय परिच्छेद के अन्त में वर्णिकवृत्त-सूची गद्य में प्राप्त है। इस प्रकार की बृहत्सूची जिस विधिवत् ढंग से दी गई है उससे यह प्रमाणित होता है कि लेखक का ज्ञान बहुत विस्तृत रहा है और उसने छन्दःशास्त्र के प्रतिपादन में वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने का प्रयत्न किया है और वह इसमें सफल भी हुआ है।

निष्कर्ष—उपर्युक्त छन्द-ग्रन्थों के साथ तुलना करने पर यह स्पष्ट है कि सभी दृष्टियों से अन्य ग्रन्थों की अपेक्षा वृत्तमौक्तिक छन्दःशास्त्र का सर्वश्रेष्ठ एवं प्रौढ़ ग्रन्थ है। साथ ही मध्ययुगीन हिन्दी-साहित्य में जो स्थान और महत्व प्राकृतपिंगल का है उससे भी अधिक महत्व इस ग्रन्थ का है क्यों कि जहां प्राकृतपिंगल में सवैया छन्द के उद्भव के अंकुर प्राप्त होते हैं वहां वृत्तमौक्तिक में सवैया (मदिरा, मालती आदि ६ भेद) और घनाक्षरी छन्द सोदाहरण प्राप्त हैं। मध्ययुगीन हिन्दी-साहित्य की दृष्टि से इसमें वे सब छन्द प्राप्त हैं जिनका प्रायः प्रयोग तत्कालीन कवि कर रहे थे। अतः संस्कृत और हिन्दी दोनों के साहित्यिक दृष्टिकोण से वृत्तमौक्तिक का छन्दःशास्त्र में विशिष्ट स्थान और महत्व सुनिश्चित ही है।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

वृत्तमौक्तिक और प्राकृतपिंगल

वृत्तमौक्तिक और प्राकृतपिंगल का आलोडन करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि चन्द्रशेखर भट्ट ने वृत्तमौक्तिक के मात्रावृत्तनामक प्रथम खण्ड में न केवल प्राकृतपिंगल का आधार ही लिया है अपितु पांचवां और छठा प्रकरण तथा कतिपय स्थलों को छोड़ कर पूर्णतः प्राकृतपिंगल की छाया या अनुवाद के रूप में ही रचना की है। मुख्य अंतर है तो केवल इतना ही है कि प्राकृतपिंगल की रचना प्राकृत-अपभ्रंश में है तो वृत्तमौक्तिक की रचना संस्कृत में है। दोनों ही ग्रन्थों की समानतायें इस प्रकार हैं—

१. दोनों ही ग्रन्थ मात्रावृत्त और वर्णवृत्त-नामक दो परिच्छेदों में विभक्त हैं। वृत्तमौक्तिक में परिच्छेद के स्थान पर 'खण्ड' शब्द का प्रयोग किया गया है।

२. प्रारम्भ से अन्त तक विषयक्रम और छन्दःक्रम एकसदृश हैं जो विषय सूची से स्पष्ट है।

३. रचनाशैली में पारिभाषिक (सांकेतिक) शब्दावली और उसका प्रयोग एक-सा ही है।

४. गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य और षट्पद-नामक छन्दों के प्रस्तारभेद और नाम एकसमान हैं। नामों में यत्किंचित् अन्तर अवश्य है, जो चतुर्थ परिशिष्ट (क) में द्रष्टव्य है। दोनों में भेदों के लक्षणमात्र ही हैं, उदाहरण नहीं हैं। वृत्तमौक्तिक में गाथा-छन्द के २७ के स्थान पर २५ भेद स्वीकार किये हैं।

५. रड्डा छन्द के सातों भेदों के उदाहरण दोनों में प्राप्त नहीं हैं।

६. लक्षणों की शब्दावली भी प्रायः समान है। उदाहरण के लिये कुछ पद्य प्रस्तुत हैं—

प्राकृतपिंगल	वृत्तमौक्तिक
दीहो संजुत्तपरो	दीर्घः संयुक्तपरः
बिंदुजुओ पाडिओ य चरणंते।	पादान्तो वा विसर्गबिन्दुयुतः।
स गुरू वंक दुमत्तो	स गुरुर्वक्रो द्विकलो
अण्णो लहु होय सुद्ध एक्ककलो ॥२॥	लघुरन्यः शुद्ध एककलः ॥६॥

× × × ×

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

जह दीहो वि अ वण्णो
लहु जीहा पढइ होइ सो वि लहू ।
वण्णोवि तुरिअपढिओ
दोत्तिण्णि वि एक्क जाणेहु ॥ ८ ॥

यद्यपि दीर्घं वर्णं
जिह्वा लघु पठति भवति सोऽपि लघुः ।
वर्णांस्त्वरितं पठितान्
द्वित्रानेकं विजानीत ॥ ११ ॥

+ + + +

जेम ण सहइ कणअतुला
तिलतुलिअं अद्धअद्धेण ।
तेम ण सहइ सवणतुला
अवछंदं छंदभंगेण ॥ १० ॥

कनकतुला यद्वन्न हि
सहते परमाणुवैषम्यम् ।
श्रवणतुला नहि तद्व—
च्छन्दोभङ्गेन वैषम्यम् ॥ १३ ॥

+ + + +

हर ससि सूरो सक्को
सेसो अहि कमल बंभ कलि चंदो ।
धुअ धम्मो सालिअरो
तेरह भेआ छमत्ताणं ॥ १५ ॥

हर-शशि-सूर्याः शक्रः
शेषोप्यहिकमलधातृकलिचन्द्राः ।
ध्रुव-धर्म-शालिसंज्ञाः
षण्मात्राणां त्रयोदशैव भिदाः॥१६॥

+ + + +

दिअवरगण धरि जुअल
पुण बिअ तिअ लहु पअल
इम विहि विहु छउ पअणि
जिम सुहइ सुससि रअणि
इह रसिअउ मिअणगणि
एअदह कल गअगमणि ॥८६॥

द्विजवरयुगलमुपनय
दहनलघुकमिह रचय
इति विधिशरभववदन-
चरणमिह कुरु सुवदन
इति हि रसिकमनुकलय
भुजगवर कथितमभय ॥१०॥

[द्वितीय प्रकरण]

+ + + +

सोलह मत्तह बे वि पमाणहु
बीअ चउत्थहिं चारिदहा ।
मत्तह सट्ठि समग्गल जाणहु
चारि पआ चउबोल कहा ॥१३१॥

रसविधुकलकमयुगमवधारय,
सममपि वेदविधूपमितम् ।
सर्वंमपि षष्टिकलं विचारय,
चौबोलाख्यं फणिकथितम्॥७॥

[तृतीय प्रकरण]

+ + + +

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

सगणा भगणा दिग्रगणइ
मत्त चउद्दह पन्न पलई ।
संठइ वंको विरइ तहा
हाकलि रूग्रउ एहु कहा ।।१७२।।

सगणैर्भगणैर्नलघुयुतैः
सकलं चरणं प्रविरचितम् ।
गुरुकेन च सर्वं कलितं
हाकलिवृत्तमिदं कथितम्।।२२।।
[चतुर्थ प्रकरण]

\+ \+ \+ \+

प्राकृतपिंगल और वृत्तमौक्तिक में निम्न असमानतायें हैं—

१. प्राकृतपिंगलकार ने छन्दों के उदाहरण पूर्ववर्ती कवियों के दिये हैं और वृत्तमौक्तिककार ने समग्र उदाहरण स्वरचित दिये हैं, प्रत्युदाहरण पूर्ववर्ती कवियों के अवश्य दिये हैं ।

२. शिखा, कामकला, रुचिरा, हरिगीतं के भेद, मदिरा सवैया, मालती सवैया, मल्ली सवैया, मल्लिका सवैया, माधवी सवैया, मागधी सवैया, घनाक्षर और गलितक प्रकरण के १७ छन्द विशिष्ट हैं जो प्राकृतपिंगल में प्राप्त नहीं हैं।

३ प्रथम खण्ड छह प्रकरणों में विभक्त है ।

वृत्तमौक्तिक के द्वितीय खंड की रचना प्राकृतपिंगल के अनुकरण पर नहीं है। रचना-शैली, शब्दावली, प्रकरण आदि सब पृथक् हैं। प्राकृतपिंगल के द्वितीय परिच्छेद में केवल १०४ वर्णिक छन्द हैं और वृत्तमौक्तिक में २६५ वर्णिक छन्द, प्रकीर्णक, दण्डक, अर्धसम, विषम, वैतालीय छन्द, यति-प्रकरण, गद्य-प्रकरण और विरुदावली आदि कई विशिष्ट प्रकरण हैं जो कि अन्यत्र दुर्लभ हैं।

वृत्तमौक्तिक और वाणीभूषण

प्राकृतपिंगलकार हरिहर के पौत्र, रविकर के पुत्र दामोदरप्रणीत वाणीभूषण प्राकृतपिंगल का संस्कृत रूपान्तर है और इस ग्रंथ का वृत्तमौक्तिककार ने भी यथेच्छ प्रयोग किया है। प्रत्युदाहरणों में सुन्दरी, तारक, चक्र, चामर, निशिपालक, चञ्चला, मञ्जीरा, चर्चरी, क्रीडाचन्द्र, चन्द्र, धवल, गण्डका एवं दीपक (मात्रिक) के उदाहरणों का तो प्रयोग किया ही है किन्तु रुचिरा (मात्रिक) और किरीट (वर्णिक) छन्द के तो लक्षण एवं उदाहरण भी ज्यों के त्यों उद्धृत कर दिये हैं । अतः यह निःसंकोच मानना होगा कि पूर्ववर्ती वाणीभूषण का वृत्तमौक्तिककार ने पूर्णतया अनुकरण किया है ।

CC-0. ORSK. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

वृत्तमौक्तिक और वाणीभूषण दोनों की समानताओं का भी उल्लेख करना यहां अप्रासंगिक न होगा।

(१) दोनों ही ग्रंथ मात्रिकवृत और वर्णिकवृत्त नामक दो परिच्छेदों में विभक्त हैं।

(२) विषयक्रम और छन्दक्रम दोनों का समान है।

(३) पारिभाषिक शब्दावली का दोनों ने पूर्ण प्रयोग किया है।

(४) दोनों ग्रंथों में छन्दों के लक्षण कारिका-रूप में न होकर लक्षणसम्मत पूर्ण-पद्यों में हैं।

(५) लक्षण एवं उदाहरण दोनों के स्वरचित हैं।

(६) लक्षणों की शब्दावलो भी एक-सदृश है। तुलना के लिये कुछ स्थल द्रष्टव्य हैं—

वाणीभूषण	वृत्तमौक्तिक
शिवशशिदिनपतिसुरपति- शेषाहिसरोजधातृकलिचन्द्राः । ध्रुवधर्मौ शालिकरः षण्मात्रे स्युस्त्रयोदशविभेदाः ॥९॥	हरशशिसूर्याः शक्रः शेषोप्यहिकमलधातृकलिचन्द्राः । ध्रुवधर्मशालिसंज्ञाः षण्मात्राणां त्रयोदशैव भिदाः ॥१९॥
इन्द्रासनमथ शूर- श्चापो हीरश्च शेखरं कुसुमम् । अहिगणपापगणाविति पञ्चकलानां च नामानि ॥१०॥	इन्द्रासनमथ सूर्यः, चापो हीरश्च शेखरं कुसुमम् । अहिगणपापगणाविति पञ्चकलस्यैव संज्ञाः स्युः ॥२०॥
+ +	+ +
तातपितामहदहनाः पदपर्यायाश्च गण्डबलभद्रौ । जङ्घायुगलं रतिरि- त्यादिगुरोश्चतुष्कले संज्ञाः ॥१७॥	दहनपितामहताताः पदपर्यायाश्च गण्डबलभद्रौ । जङ्घायुगलं रतिरि- त्यादिगुरौ स्युश्चतुष्कले संज्ञाः ॥२२॥
ध्वजचिह्नचिरचिरालय- तोमरतुम्बुरुकचूतमाला च । रसवासपवनवलया लघ्वादित्रिकलनामानि ॥१८॥	ध्वजचिह्नचिरंचिरालय- तोमरपत्राणि चूतमाले च । रसवासपवनवलया भेदास्त्रिकलस्य लघुकमालम्ब्य ॥२३॥
+ +	+ +

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

रोलावृत्तमवेहि
नागपिङ्गलकविभणितं,
प्रतिपदमिह चतुरधिक-
कलविंशतिपरिगणितम् ।
एकादशमधि विरति-
रखिलजनचिन्ताहरणं,
सुललितपदमदकारि
विमलकविकण्ठाभरणम् ॥५६॥

या चरणे कलानां
चतुरधिकविंशैर्गदिता,
सा किल रोला भवति
नागकविपिङ्गलकथिता ।
एकादशकलविरति-
रखिलजनचिन्ताहरणा
सुललितपदकुलकलित-
विमलकविकण्ठाभरणा ॥१६॥

[द्वितीय प्रकरण]

+　　+　　+　　+

अक्षरगुरुलघुनियमविरहितं
भुजगराजपिङ्गलपरिगणितम् ।
भवति सुगुम्फितषोडशकलकं,
वाणीभूषणपादाकुलकम् ॥७५॥

गुरुलघुकृतगणनियमविरहितं,
फणिपतिनायकपिंगलगदितम् ।
रसविधुकलयुतयमकितचरणं
पादाकुलकं श्रुतिसुखकरणम् ॥५॥

[तृतीय प्रकरण]

+　　+　　+　　+

षट्कलमादौ तदनु
चतुस्तुरगं परिसंतनु,
शेषे द्विकलं कलय
चतुष्पदमेवं संचिनु ।
छन्दः षट्पदनाम
भवति फणिनायकगीतं,
रुद्रे विरतिमुपैति
नृपतिसुखकरमुपनीतम् ।
उल्लालयुगलमत्र च
भवेदष्टाविंशतिकलमितं,
शृणु पञ्चदशे विरतिस्थित-
पठनादपि पण्डितजनहितम् ॥७७॥

षट्पदवृत्तं कलय
सरसकविपिंगलभणितं,
एकादश इह विरति-
रथ च दहनैर्विधुगणितम् ।
षट्कलमादौ तदनु
चतुस्तुरगं परिसंतनु,
शेषे द्विकलं रचय
चतुष्पदमेवं संचिनु ।
उल्लालद्वयमत्र हि
भवेदष्टाविंशतिकलयुतं,
यदि पञ्चदशे विरतिस्थितं
पठनादपि गुणिगणहितम् ॥५३॥

[द्वितीय प्रकरण]

+　　+　　+　　+

द्वितीय परिच्छेद
नरेन्द्रमुदेहि । मृगेन्द्रमवेहि ॥२१॥

द्वितीय-खण्ड--१ वृत्तनिरूपण प्रकरण
नरेन्द्रविराजि । मृगेन्द्रमवेहि ॥२५॥

+　　+　　+　　+

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

द्विजगणमाहर, भगणमुपाहर ।	द्विजमिह धारय, भमनु च कारय ।
भणति सुवासकमिति गुणनायक ।।५६।।	भवति सुवासकमिति गुणलासक ।।७२।।
+ +	+ +
विनिधेहि चतुः सगणं रुचिरं,	यदि वै लघुयुग्मगुरुक्रमतः
रविसंख्यकवर्णकृतं सुचिरम् ।	रविसम्मितवर्ण इह प्रमितः ।
फणिनायकपिङ्गलसंभणितं	अहिभूपतिना फणिना भणितं
कुरु तोटकवृत्तमिदं गणितम् ।।१३५।।	सखि तोटकवृत्तमिदं गणितम् ।।१६६।।
+ +	+ +
पादयुगं कुरु नूपुरसंयुत-	पादयुगं कुरु नूपुरराजित-
मत्र करं वररत्नमनोहर,	मत्र करं वररत्नमनोहर,
वज्रयुगं कुसुमद्वयसंगत-	वज्रयुगं कुसुमद्वयसङ्गत-
कुण्डलगन्धयुगं समुपाहर ।	कुण्डलगन्धयुगं समुपाहर ।
पण्डितमण्डलिकाहृतमानस-	पण्डितमण्डलिकाहृतमानस-
कल्पितसज्जनमौलिरसालय,	कल्पितसज्जनमौलिरसालय,
पिङ्गलपन्नगराजनिवेदित-	पिंगलपन्नगराजनिवेदित-
वृत्तकिरीटमिदं परिभावय ।।२२१।।	वृत्तकिरीटमिदं परिभावय ।।५८१।।
+ +	+ +

वाणीभूषण की अपेक्षा वृत्तमौक्तिक में निम्नलिखित विशेषतायें पाई जाती हैं :—

(१) वाणीभूषण में केवल ४३ मात्रिक छन्द हैं जब कि वृत्तमौक्तिक में ७९ मूल छन्द और २०९ छन्द-भेद हैं। निम्न छन्दों का प्रयोग वाणीभूषणकार ने नहीं किया है :—

रसिका, काव्य, उल्लाल, चौबोला, झुल्लणा, शिखा, दण्डकला, कामकला, हरिगीतं के भेद और पंचम सवैया-प्रकरण तथा छठा गलितक-प्रकरण के पूर्ण छन्द।

(२) गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य, और षट्पद के प्रस्तारभेद, नाम एवं लक्षण तथा रड्डा छन्द के सातों भेदों के लक्षण वाणीभूषण में नहीं हैं।

(३) वाणीभूषण में ११२ समवर्णिक छन्द हैं जब कि वृत्तमौक्तिक में २६५ छन्द हैं। इसका वर्गीकरण चतुर्थ परिशिष्ट (ख) में देखा जा सकता है।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

(४) वृत्तमौक्तिक में ७ प्रकीर्णक, ८ दण्डक, ८ विषम, १२ वैतालीय, ७४ विरुदावली और २ खण्डावली छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण प्राप्त हैं जब कि वाणीभूषण में इन छन्दों का उल्लेख भी नहीं है।

(५) वाणीभूषण में अर्द्धसम छन्दों में केवल पुष्पिताग्रा छन्द है जब कि वृत्तमौक्तिक में १० छन्द हैं।

(६) वाणीभूषण में यतिनिरूपण और गद्य-निरूपण-प्रकरण नहीं है।

(७) वृत्तमौक्तिक में दोनों खण्डों के प्रकरणों की सूची है जिसमें छन्द-नाम, नामभेद एवं प्रस्तार संख्या दी है; जब कि वाणीभूषण में सूची नहीं है।

अतः इस तुलना से स्पष्ट है कि वाणीभूषण एक लघुकाय छन्दोग्रन्थ है जब कि वृत्तमौक्तिक छन्दों का आकर और महत्वपूर्ण ग्रन्थ है।

वृत्तमौक्तिक और गोविन्दविरुदावली

वृत्तमौक्तिक के नवम विरुदावली प्रकरण में चण्डवृत्तों के प्रत्युदाहरण देते हुए ग्रंथकार ने श्री रूपगोस्वामी कृत गोविन्दविरुदावली का मुक्त हृदय से प्रयोग किया है। गोविन्दविरुदावली के एक या दो ही उदाहरण ग्रहण नहीं किये हैं अपितु समग्र विरुदावली ही उद्धृत कर दी है, केवल गोविन्दविरुदावली का मंगलाचरण और उपसंहार मात्र ही अवशिष्ट रहा है।[1]

विरुदावली छन्द-क्रम में दोनों में अन्तर है; जो तालिका से स्पष्ट है—

गोविन्दविरुदावली		वृत्तमौक्तिक		
क्रम-संख्या	नाम	क्रम-संख्या	नाम	पृष्ठांक
१	वर्द्धित	४	वर्द्धित	२२२
२	वीरभद्र	६	वीर (वीरभद्र)	२२५
३	समग्र	५	रण (समग्र)	२२४

१—आदि—इयं मङ्गलरूपा स्याद् गोविन्दविरुदावली।
यस्याः पठनमात्रेण श्रीगोविन्दः प्रसीदति॥

अन्त— व्युत्पन्नः सुस्थिरमतिर्गतग्लानिर्गलस्वनः।
भक्तः कृष्णे भवेद् यः स विरुदावलिपाठकः॥
यः स्तौति विरुदावल्या मथुरामण्डले हरिम्।
अनया रम्यया तस्मै तूर्णमेष प्रसीदति॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

४	अच्युत	३	अच्युत	२२१
५	उत्पल	६	उत्पल	२२८
६	तुरङ्ग	२०	तुरग	२३४
७	गुणरति	१०	गुणरति	२२६
८	मातङ्गखेलित	८	मातङ्गखेलित	२२६
६	तिलक	२	तिलक	२२०
१०	पङ्केरुह	२१	पङ्केरुह	२३५
११	सितकञ्ज	२२	सितकञ्ज	२३८
१२	पाण्डूत्पल	२३	पाण्डूत्पल	२३६
१३	इन्दीवर	२४	इन्दीवर	२४०
१४	अरुणाम्भोरुह	२५	अरुणाम्भोरुह	२४२
१५	फुलाम्बुज	२६	फुल्लाम्बुज	२४३
१६	चम्पक	२७	चम्पक	२४५
१७	वञ्जुल	२८	वञ्जुल	२४६
१८	कुन्द	२६	कुन्द	२४७
१६	बकुलभासुर	३०	बकुलभासुर	२४८
२०	बकुलमंगल	३१	बकुलमंगल	२४६
२१	मञ्जरीकोरक	३२	मंजरीकोरक	२५१
२२	गुच्छ	३३	गुच्छक	२५२
२३	कुसुम	३४	कुसुम	२५३
२४	दण्डकत्रिभंगी कलिका	१	दण्डकत्रिभंगी कलिका	२५५
२५	विदग्धत्रिभंगी कलिका	२	संपूर्णा विदग्धत्रिभंगी-कलिका	२५६
२६	मिश्रा कलिका	३	मिश्रकलिका	२५८
२७	साप्तविभक्तिकी कलिका	१	साप्तविभक्तिकी कलिका	२६१
२८	अक्षमयी कलिका	२	अक्षमयी कलिका	२६२
२६	सर्वलघुकलिका	३	सर्वलघुक-कलिका	२६४

गोविन्दविरुदावली के अतिरिक्त जिन चण्डवृत्तों के लक्षण वृत्तमौक्तिक में दिये गये हैं उनके उदाहरण एक-एक चरण के ही प्राप्त हैं, पूर्ण उदाहरण या प्रत्युदाहरण प्राप्त नहीं हैं। इन चण्डवृत्तों की तालिका इस प्रकार है—

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१. पुरुषोत्तम, ७. शाक, ११, कल्पद्रुम, १२. कन्दल, १३. अपराजित, १४. नर्त्तन, १५. तरत्समस्त, १६. वेष्टन, १७. अस्खलित और १९. समग्र।

पल्लवित-नामक विरुदावली गोविन्दविरुदावली में नहीं है। चन्द्रशेखरभट्ट ने इसका प्रत्युदाहरण गोविन्दविरुदावली में प्रदत्त फुल्लाम्बुज के उदाहरणस्थ अंश का दिया है।

वृत्तमौक्तिक में चण्डवृत्त के ३४ भेद, त्रिभंगी-कलिका के ३ भेद और विरुदावली के तीन भेद माने हैं जब कि गोविन्दविरुदावली में इनका वर्गीकरण इस प्रकार है—

चण्डवृत्त-कलिका के दो भेद हैं— १. नख और २. विशिख।

नख के ९ भेद हैं—१. वर्धित, २. वीरभद्र, ३. समग्र, ४. अच्युत, ५. उत्पल ६. तरङ्ग, ७. गुणरति, ८. मातंगखेलित और ९. तिलक।

विशिख के ११ भेद हैं—१. पङ्केरुह, २. सितकञ्ज, ३. पाण्डूत्पल, ४. इन्दीवर, ५. अरुणाम्भोरुह, ६. फुल्लाम्बुज, ७. चम्पक, ८. वञ्जुल, ९. कुन्द, १०. बकुलभासुर और ११. बकुलमंगल।

द्विगादिगणवृत्त-कलिका मंजरी के तीन भेद हैं—१. मञ्जरी-कोरक, २. गुच्छ और ३. कुसुम।

त्रिभंगी-कलिका के दो भेद हैं—१. दण्डकत्रिभंगी-कलिका और २. विदग्ध-त्रिभंगी-कलिका।

मिश्रकलिका के ४ भेद हैं—१. मिश्राकलिका, २. साप्तविभक्तिकी कलिका, ३. अक्षमयी-कलिका और ४. सर्वलघु-कलिका।

इस प्रकार गोविन्दविरुदावली में विरुदावली के कुल २९ भेदों का दिग्दर्शन है तो वृत्तमौक्तिक में ४० विरुदावलियों और ३४ कलिकाओं का निरूपण है।

वृत्तमौक्तिक में उद्धृत अप्राप्त ग्रन्थ

प्रस्तुत ग्रंथ में चन्द्रशेखरभट्ट ने छन्दों के प्रत्युदाहरण देते हुए जिन-जिन ग्रन्थकारों और जिन-जिन ग्रन्थों का उल्लेख किया है उनमें से कतिपय ग्रन्थ अद्यावधि अप्राप्त हैं। अप्राप्त ग्रन्थों की अक्षरानुक्रम से तालिका इस प्रकार है—

संख्या	ग्रन्थ-नाम	ग्रन्थकार	उल्लेख-पृष्ठाङ्क
१.	उदाहरणमञ्जरी	लक्ष्मीनाथ भट्ट	१०,१३,१६ आदि

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

२	कृष्णकुतूहल-महाकाव्य	रामचन्द्र भट्ट	१०५,१०७ आदि
३	दशावतारस्तोत्र	,,	१२९
४	नन्दनन्दनाष्टक	लक्ष्मीनाथ भट्ट	१४४
५	नारायणाष्टक	रामचन्द्र भट्ट	१६७
६	पवनदूतम्	चन्द्रशेखर भट्ट	१३६
७	पाण्डवचरित-महाकाव्य	,,	९२,१२१ आदि
८	शिको-काव्य		१५६
९	शिवस्तुति	लक्ष्मीनाथ भट्ट	४५
१०	सुन्दरीध्यानाष्टक	,,	१४४

इनके अतिरिक्त कुछ ऐसे स्थल हैं जिनमें केवल ग्रन्थकार के नाम हैं और वर्ण्य विषय का संकेत है किन्तु उनके ग्रन्थों का कोई उल्लेख नहीं मिलता।

१	राक्षसकवि	दक्षिणानिलवर्णन	१५३
२	लक्ष्मीनाथभट्ट	खड्गवर्णन	१६०
३	,,	देवीस्तुति	४३
४	शम्भु	छन्दःशास्त्र	१०९,१३९,१९७आदि

वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका में (पृ. १४५) पर शम्भु-प्रणीत छन्दश्चूडामणि ग्रन्थ का उल्लेख है। संभवतः यही शम्भु हों! किन्तु ग्रन्थ अप्राप्त है।

मालती छन्द का प्रत्युदाहरण देते हुये भारवि रचित निम्न पद्य दिया है—

अयि विजहीहि दृढोपगूहनं, त्यज नवसङ्गमभीरु वल्लभम्।
अरुणकरोद्गम एष वर्तते, वरतनु सम्प्रवदन्ति कुक्कुटाः॥ पृ. १००

इसका उल्लेख छन्दोमञ्जरी (पृ. ५६) में भी है किन्तु भारवि कृत किरातार्जुनीय काव्य (मुद्रित) में यह पद्य प्राप्त नहीं है। अतः भारवि कृत किस ग्रन्थ का यह पद्य है, अन्वेषणीय हैं।

प्रस्तुत संस्करण की विशेषतायें

ग्रन्थकार ने प्रस्तुत ग्रन्थ में ६७१ छन्दों के लक्षण एवं उदाहरणों का निरूपण किया है। इन छन्दों के अतिरिक्त मैंने ग्रथान्तरों से पाद-टिप्पणियों में ७७ और पंचम परिशिष्ट में १३८१ छन्दों के लक्षण दिये हैं। अर्थात् इस संकलन में २१२९ छन्दों का दिग्दर्शन है जो कि इस संस्करण की प्रमुख विशेषता है।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

इस संस्करण में मूल ग्रन्थ के पश्चात् दो टीकायें और ८ परिशिष्ट दिये हैं जिनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है :—

(१) वृत्तमौक्तिक-वार्त्तिक-दुष्करोद्धार-टीका

इस टीका और टीकाकार लक्ष्मीनाथ भट्ट का परिचय प्रारंभ में कवि-वंश-परिचय में दिया जा चुका है, अतः यहाँ पिष्टपेषण अनावश्यक है ।

(२) वृत्तमौक्तिक-दुर्गमबोध-टीका

इस दुर्गमबोधटीका के प्रणेता महोपाध्याय मेघविजय १८ वीं शताब्दी के बहुमुखी प्रतिभासम्पन्न विशिष्टतम विद्वान हैं । इनका जन्म संवत्, जन्म स्थान और गार्हस्थ्य जीवन का ऐतिहृय परिचय अद्यावधि अप्राप्त है । श्रीवल्लभोपाध्याय प्रणीत 'विजयदेवमाहात्म्य' पर मेघविजयजी रचित विवरण की सं. १७०९ की लिखित हस्तलिखित[1] प्रति प्राप्त होने से यह निश्चित है कि विवरण की रचना १७०९ के पूर्व ही हो चुकी थी । अतः यह अनुमान सहज-भाव से लगाया जा सकता है कि इस रचना के समय इनकी अवस्था कम से कम २०-२५ वर्ष की अवश्य होगी ! अतः १६८५ और १६९० के मध्य इनका जन्म-समय माना जा सकता है ।

मेघविजयजी श्वेताम्बर-जैन-परम्परा में तपागच्छीय अकबर-प्रतिबोधक जगद्गुरु हीरविजयसूरि की शिष्य-परम्परा में कृपाविजयजी के शिष्य हैं[2] । विजयसिंहसूरि के पट्टधर विजयप्रभसूरि ने इनको उपाध्यायपद प्रदान किया था ।[3]

मेघविजयजी-गुम्फित साहित्य को देखने पर यह साधिकार कहा जा सकता है कि ये एकदेशीय विद्वान् न होकर सार्वदेशीय विद्वान् थे । काव्य-साहित्य, पादपूर्ति, व्याकरण, छन्द, अनेकार्थ, न्यायशास्त्र, दर्शनशास्त्र, ज्योतिष, सामुद्रिक और अध्यात्मशास्त्र आदि प्रत्येक विषय के ये प्रगाढ़ पण्डित थे और इन्होंने प्रत्येक विषय पर साधिकार वर्चस्वपूर्ण लेखिनी चलाई है । इनका साहित्य-सर्जना काल वि. सं. १७०९ से १७६० तक का तो निश्चित ही है । वर्तमान समय में प्राप्त इनकी रचित साहित्य-सामग्री की सूची निम्न है—

१—विजयदेवमाहात्म्य प्रान्तपुष्पिका
२—युक्तिप्रबोध प्रशस्ति
३—देवानन्द महाकाव्य प्रशस्ति

CC-0. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१	सप्तसन्धान-महाकाव्य	र. सं. १७६०[1]	प्रकाशित
२	दिग्विजय-महाकाव्य		,,
३	शान्तिनाथचरित्र (नैषधीय-पादपूर्ति)		,,
४	देवानन्द-महाकव्य (माघ-पादपूर्ति)		,,
५	किरातसमस्यापूर्ति[2]		अप्रकाशित
६	मेघदूत-समस्यालेख (मेघदूत-पादपूर्ति)		प्रकाशित
७	लघुत्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र		अप्रकाशित
८	भविष्यदत्ताचरित्र		प्रकाशित
९	पञ्चाख्यान		अप्रकाशित
१०	पाणिनिद्व्याश्रयविज्ञप्तिलेख[3]		,,
११	,, [4]		,,
१२	विज्ञप्तिका		प्रकाशित[5]
१३	गुरुविज्ञप्तिलेखरूप-चित्रकोशकाव्य		अप्रकाशित[6]
१४	विज्ञप्तिपत्र		,, [7]
१५	,, अपूर्ण[8]		,,
१६	,,		,, [9]
१७	,, अपूर्ण[10]		,,
१८	चन्द्रप्रभा-व्याकरण (हैमकौमुदी)	र० सं० १७५७[11]	प्रकाशित
१९	हैमशब्दचन्द्रिका		,,
२०	हैमशब्दप्रक्रिया[12]		अप्रकाशित

१–वियद्रसमुनीन्दूनां प्रमाणात् परिवत्सरे । [सप्तसन्धान प्रशस्ति]

२–देखें, दिग्विजय-महाकाव्य-प्रस्तावना

३-४ भाण्डारकर ओरियन्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट पूना २९९A, १८८२-८३

५–विज्ञप्तिलेखसंग्रह प्रथम भाग (सिंघी जैन ग्रन्थमाला, बम्बई)

६–अभयजैन-ग्रंथालय, बीकानेर

७–राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, सं० २०४१५

८,९,१०–,, ,, ,, शाखा कार्यालय बीकानेर, मोतीचंद खजांची-संग्रह, 'श' २८४

११–विजयन्ते ते गुरवः शैलशरर्षीन्दुवत्सरे । [चन्द्रप्रभाप्रशस्ति ७]

१२–भाण्डारकर ओरियन्टल रिसर्च इन्सटीट्यूट, पूना

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

२१	चिन्तामणि-परीक्षा[1] (नव्यन्यायप्रवर्तक गंगेशोपाध्याय-कृत तत्त्वचिन्तामणि का परीक्षण)	अप्रकाशित
२२	युक्तिप्रबोध	प्रकाशित
२३	धर्ममञ्जूषा	अप्रकाशित
२४	मेघमहोदयवर्षप्रबोध	प्रकाशित
२५	हस्तसंजीवन स्वोपज्ञ-टीका-सहित	"
२६	रमलशास्त्र	उल्लेख, मेघमहोदय-वर्षप्रबोध
२७	उदयदीपिका, र० सं० १७५२	अप्रकाशित
२८	प्रश्नसुन्दरी	"
२९	वीसायन्त्रविधि	प्रकाशित
३०	मातृकाप्रसाद र० सं० १७४७[2]	अप्रकाशित
३१	ब्रह्मबोध	अप्राप्त[3]
३२	अर्हद्गीता	प्रकाशित
३३	विजयदेवमाहात्म्यविवरण	"
३४	वृत्तमौक्तिक-'दुर्गमबोध' टीका	(प्रस्तुत)
३५	पञ्चतीर्थीस्तुति सटीक[4]	अप्रकाशित
३६	भक्तामरस्तोत्र-टीका[5]	"
३७	चतुर्विंशतिजिनस्तव[6]	"
३८	आदिनाथस्तोत्र[7] अपूर्ण	"

गुर्जर-भाषा में रचित कृतियें

३९	विजयदेवसूरिनिर्वाणरास[8]	अप्रकाशित
४०	कृपाविजयनिर्वाणरास[9]	"
४१	जैनधर्मदीपकस्वाध्याय[10]	"
४२	जैनशासनदीपकस्वाध्याय[11]	"

१–इसका मैं सम्पादन कर रहा हूँ जो राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर से प्रकाशित होगा।

२–संवत्सरेऽश्ववार्ध्यश्वभूमिते पौष उज्ज्वले ।
श्रीधर्मनगरे ग्रंथः पूर्णश्रियमशिश्रयत् । [मातृकाप्रसाद प्रशस्ति]

३,४,५–देखें दिग्विजयमहाकाव्य – प्रस्तावना

६–महोपाध्याय विनयसागर-संग्रह, कोटा

७–राजस्थान प्राच्चविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, सं. २०४१५

८-११–देखें, दिग्विजय-महाकाव्य – प्रस्तावना

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

४३	आहारगवेषणा-स्वाध्याय[1]	अप्रकाशित
४४	चौवीस जिनस्तवन[2]	,,
४५	पार्श्वनाथस्तवन[3]	,,
४६	मक्षीपार्श्वनाथस्तवन[4]	,,

वृत्तमौक्तिक की दुर्गमबोध नामक टीका की रचना मेघविजयजी ने अपने शिष्य भानुविजय के पठनार्थ सं० १६५५ में की है। भट्ट लक्ष्मीनाथीय 'दुष्करोद्धार' टीका के समान ही यह टीका भी वृत्तमौक्तिक के प्रथम खण्ड, प्रथम गाथा-प्रकरण के पद्य ५१ से ८६ तक अर्थात् ३६ पद्यों पर रची गई है। पूर्व टीका की तरह यह भी ९ प्रकरणों में विभक्त है। इसमें वर्णोद्दिष्ट और वर्णनष्ट एक-साथ दे दिये हैं और वृत्तस्थ गुरु-लघु-ज्ञान का स्वतन्त्र प्रकरण नहीं है। प्रस्तार जैसे गहन विषय को मेघविजयजी ने अपनी लेखिनी द्वारा सरलतम बना दिया है। प्राकृत-पिंगल, वाणीभूषण और छन्दोरत्नावली आदि ग्रन्थों के उद्धरण और अनेकों चित्र देकर प्रत्येक प्रकरण के वर्ण्य विषय का विशदता के साथ स्पष्टीकरण किया है। भाषा में प्रवाह और सरलता है। कहीं-कहीं देश्य शब्दों का प्रयोग भी मिलता है।

यह टीका अद्यावधि अज्ञात और अप्राप्त थी। इसकी स्वयं टीकाकार द्वारा लिखित एक मात्र प्रति मेरे निजी संग्रह में है।

परिशिष्टों का परिचय

प्रथम परिशिष्ट—

इस परिशिष्ट में वृत्तमौक्तिककार द्वारा स्वीकृत पारिभाषिक-शब्दावली दी गई है। टगणादि गण, इनका प्रस्तारभेद, नाम तथा उनके पर्याय यहाँ क्रमशः दिये हैं और अन्त में इस पद्धति से मगणादि ८ गणों के पर्याय दिये हैं।

पाद-टिप्पणियों में स्वयम्भूछन्द, वृत्तजातिसमुच्चय, कविदर्पण, हेमचन्द्रीय-छन्दोनुशासन, प्राकृतपिंगल, वाणीभूषण और वाग्वल्लभ के साथ इस पद्धति की तुलना की है अर्थात् इन ग्रन्थकारों ने इस प्रणाली को किस रूप में स्वीकार किया है, कौन-कौन से शब्द स्वीकृत किये हैं, कौन-कौन से शब्द इन ग्रन्थों में नहीं हैं और कौन-कौन से नये पारिभाषिक शब्दों को स्वीकृत किया है; इन सब का दिग्दर्शन है।

---

१ - ३— देखें, दिग्विजय-महाकाव्य – प्रस्तावना.

४—महोपाध्याय विनयसागर-संग्रह, कोटा.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

द्वितीय परिशिष्ट—

(क) मात्रिक छन्दों का अकारानुक्रम—इसमें मात्रिक छन्द ७६ और गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य और षट्पद आदि के २१८ भेदों के नामों को अकारानुक्रम से दिया है।

(ख) वर्णिक छन्दों का अकारानुक्रम—इसमें वर्णिक सम-छन्द, प्रकीर्णक, दण्डक, अर्द्धसम, विषम और वैतालीय-छन्दों का एवं टिप्पणियों में उद्धृत छन्दों का अकारानुक्रम दिया है। छन्दों के आगे ( ) कोष्ठक में प्रकीर्णक का प्र, दण्डक का द, अर्द्धसम का अ, विषम का वि, वैतालीय का वै और टिप्पणी का टि. दिया है। संकेत-कोष्ठक में ग्रन्थकार ने जो छन्दों के नाम-भेद दिये हैं वे भी अकारानुक्रम में सम्मिलित हैं, वे नाम-भेद भी ( ) कोष्ठक में दिये हैं।

(ग) विरुदावली-छन्दों का अकारानुक्रम – इसमें कलिका-विरुदावली, चण्डवृत्त-विरुदावली आदि समस्त विरुदावली-छन्दों का अकारानुक्रम दिया है।

तृतीय परिशिष्ट—

(क) पद्यानुक्रम—इसमें प्रतिपाद्य विषय के पद्यों और छन्द के लक्षण-पद्यों को अकारानुक्रम से दिया है। वैतालीय-प्रकरण की लक्षण-कारिकायें भी इसी में अकारानुक्रम से सम्मिलित कर दी गई हैं।

(ख) उदाहरण-पद्यानुक्रम—इसमें ग्रन्थकार द्वारा स्वरचित-उदाहरण, पूर्ववर्ती कवियों के प्रत्युदाहरण, गद्यांश के उदाहरण और टिप्पणियों में उद्धृत उदाहरण अकारानुक्रम से दिये हैं। गद्यांश के लिये कोष्ठक ( ) में ग, और टिप्पणी के लिये टि. का संकेत दिया है। यति-प्रकरण में उद्धृत और विरुदावली में प्रयुक्त एक-एक चरण के पद्यों को भी अकारानुक्रम में सम्मिलित किया गया है।

चतुर्थ परिशिष्ट—

क. (१) मात्रिक छन्दों के लक्षण एवं नाम-भेद—प्रारंभ में सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची और संकेत देकर वृत्तमौक्तिक के अनुसार छन्द-नाम और उसके टगणादि में लक्षण एवं प्रतिचरण की मात्रायें दी हैं। पश्चात् सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची के २२ ग्रन्थों के साथ छन्द-नाम और लक्षणों की तुलना की गई है। जिन-जिन ग्रन्थों में वृत्तमौक्तिक-लक्षण-सम्मत छन्द का वही नाम है तो उन ग्रन्थों के अंक दे दिये हैं और लक्षण यही होते हुये भी नाम यदि पृथक् है तो वह नाम-भेद देकर

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

उन-उन ग्रन्थों के अंक लगा दिये हैं । ग्रन्थ-विस्तार-भय से यहां पर ग्रन्थों के नाम न देकर उनके अंक दिये हैं ।

क. (२) गाथादि छन्द-भेदों के लक्षण एवं नामभेद—इसमें गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य और षट्पद नामक छन्दों के प्रस्तार-संख्या-क्रम से लक्षण, छन्द-नाम और नामभेद दिये हैं । इन छन्दों के प्रस्तारभेद कुछ ही ग्रन्थों में प्राप्त हैं, समग्र ग्रन्थों में नहीं हैं, इसलिये अंकों का प्रयोग न करके ग्रन्थनाम-शीर्षक से ही दिये हैं ।

ख. वर्णिक-छन्दों के लक्षण एवं नामभेद—इसमें वर्णिक-सम, प्रकीर्णक, दण्डक, अर्द्धसम, विषम और वैतालीय-छन्दों के वृत्तमौक्तिक के अनुसार छन्द-नाम और लक्षण दिये हैं । लक्षण मगणादिगणों के संक्षिप्त रूप 'म. य. र. स. त. ज. भ. न. ल.ग.' रूप में दिये हैं । पश्चात् सन्दर्भ-ग्रन्थों के अंक, नामभेद और अंक दिये हैं । यह प्रणालिका 'क. १. मात्रिक-छन्दों के लक्षण एवं नामभेद' के अनुसार ही है ।

केवल २६५ वर्णिक सम-छन्दों में से ६१ छन्द ही ऐसे हैं जिनके कि नाम-भेद प्राप्त नहीं है । एक ही छन्द के एक से लेकर आठ तक नामभेद प्राप्त होते हैं । नामभेदों की तुलना से यह स्पष्ट है कि इसका प्रयोग कितना व्यापक था ! ऐसा प्रतीत होता है कि नाम-निर्वाचन के लिये छन्दःशास्त्रियों के सम्मुख कोई निश्चित परिपाटी नहीं थी, वे स्वेच्छा से छन्दों का नाम-निर्वाचन कर सकते थे, अन्यथा इतने नामभेद प्राप्त नहीं होते !

ग. छन्दों के लक्षण एवं प्रस्तार-संख्या—इसमें वृत्तमौक्तिक में प्रयुक्त एकाक्षर से षड्विंशाक्षर तक के सम-वर्णिक छन्दों के क्रमशः नाम देकर 'ऽ, ।' गुरु-लघुरूप में लक्षण दिये हैं पश्चात् उसकी प्रस्तारसंख्या दिखाई है कि यह भेद प्रस्तारसंख्या की दृष्टि से कोन सा है । मैंने यथासाध्य समग्र छन्दों की प्रस्तार-संख्या देने का प्रयत्न किया है, फिर भी कतिपय छन्द ऐसे हैं जिनकी प्रस्तार-संख्या प्राप्त नहीं हुई है । तज्ज्ञों से निवेदन है कि इसकी पूर्ति करने का वे प्रयत्न करें ।

प्रकीर्णक, दण्डक, अर्धसम और विषम छन्दों के नाम और लक्षण 'ऽ,।' प्रणालिका से ही दिये हैं ।

पञ्चम परिशिष्ट—

इस परिशिष्ट में जिन छन्दों का वृत्तमौक्तिक में उल्लेख नहीं है और जो सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची के २१ ग्रन्थों में प्रयुक्त हैं उन छन्दों को भी छन्दःशास्त्रविषयक

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

जिज्ञासुओं के लिये प्रस्तार-संख्या के क्रम से दिये हैं। प्रारंभ में प्रस्तार-संख्या, छन्द-नाम, लक्षण और सन्दर्भग्रन्थ के अंक, नामभेद तथा अंक दिये हैं। यह पद्धति 'क. (१) मात्रिक-छन्दों के लक्षण एवं नामभेद' के अनुसार ही है।

इसमें अक्षरानुक्रम से इतने विशिष्ट छन्द प्राप्त हैं :—

४	अक्षर	१२	छन्द	१६	अक्षर	३६	छन्द
५	,,	२७	,,	१७	,,	२७	,,
६	,,	५५	,,	१८	,,	३३	,,
७	,,	१२०	,,	१९	,,	२५	,,
८	,,	८९	,,	२०	,,	१६	,,
९	,,	५७	,,	२१	,,	१८	,,
१०	,,	९८	,,	२२	,,	२०	,,
११	,,	१०३	,,	२३	,,	१८	,,
१२	,,	११२	,,	२४	,,	२१	,,
१३	,,	९०	,,	२५	,,	२०	,,
१४	,,	७७	,,	२६	,,	२७	,,
१५	,,	३८	,,				

इस प्रकार वर्णिक-सम के ११३९, प्रकीर्णक वृत्त २४, दण्डक-वृत्त ६६ तथा अर्धसमवृत्त १५२ अर्थात् कुल १३८१ अवशिष्ट प्राप्त-छन्दों का इसमें संकलन है।

विषमवृत्त के भी सैकड़ों छन्द और वैतालीय के प्रस्तार-भेद से अनेकों भेद प्राप्त होते हैं जिनका संकलन इस संग्रह में समयाभाव से नहीं किया जा सका।

षष्ठ परिशिष्ट—

वृत्तमौक्तिक में गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य और षट्पद के प्रस्तार-भेद से भेदों के नाम एवं संक्षेप में लक्षण प्राप्त हैं किन्तु इनके उदाहरण प्राप्त नहीं हैं। ग्रन्थान्तरों में भी इनके उदाहरण प्राप्त नहीं हैं। केवल कविदर्पण में गाथा-भेदों के उदाहरण और वाग्वल्लभ में गाथा और दोहा-भेदों के लक्षणयुक्त उदाहरण प्राप्त होते हैं। अतः गाथा और दोहा-भेदों के स्वरूप का दिग्दर्शन कराने के लिये इस परिशिष्ट में वाग्वल्लभ से गाथा और दोहा-भेदों के लक्षण-युक्त उदाहरण उद्धृत किये हैं।

CC-0. ROI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

सप्तम परिशिष्ट—

इस परिशिष्ट में ग्रन्थकार चन्द्रशेखर भट्ट ने वृत्तमौक्तिक में छन्दों के प्रत्युदाहरण देते हुए जिन ग्रन्थकारों और ग्रन्थों के उद्धरण दिये हैं उनकी अकारानुक्रम से सूची दी है। कतिपय स्थलों पर 'अन्ये च' 'यथा वा' कह कर जो उद्धरण दिये हैं, उनका भी मैंने इस सूची में उल्लेख कर दिया है।

अष्टम परिशिष्ट—

इस परिशिष्ट में मैंने अनेक सूचीपत्रों के आधार से 'छन्दः शास्त्र के ग्रन्थ और उनकी टीकायें' शीर्षक से ग्रन्थों की अकारानुक्रम से विस्तृत सूची दी है। इसमें ग्रन्थ का नाम, उसकी टीका, ग्रन्थकार एवं टीकाकार का नाम तथा यह ग्रन्थ कहां प्राप्त है या किस सूची में इसका उल्लेख है, संकेत किया है। शोध करने पर और भी अनेकों ग्रन्थ प्राप्त हो सकते हैं। मैं समझता हूं कि छन्दः शास्त्रियों और शोधकर्त्ताओं के लिये यह सूची अवश्य ही उपादेय एवं मार्ग दर्शक सिद्ध होगी।

प्रति–परिचय

मूल ग्रन्थ का सम्पादन पांच प्रतियों के आधार से किया गया है जिसमें तीन प्रतियां प्रथम खण्ड की हैं और दो प्रतियां द्वितीय खण्ड की हैं। इन पांचों प्रतियों का परिचय इस प्रकार है—

वृत्तमौक्तिक, प्रथम खण्ड

१. क संज्ञक, आदर्श प्रति

अनूप संस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर. संख्या ५५२७
माप—२६.५ c.m. × ११.३ c.m.
पत्र संख्या ४१; पंक्ति ७; अक्षर ३६
लेखन-काल १८वीं शती का पूर्वार्द्ध
शुद्धलेखन, शुद्धतम प्रति

२. ख संज्ञक प्रति

अनूप संस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर. संख्या ५५२८
माप—२५.२ c.m. × १०.६ c.m.
पत्र संख्या २३.; पंक्ति १०.; अक्षर ४२.
लेखन काल १६९० के लगभग, संभवतः लालमनि मिश्र की ही लिखी हुई है।
अपूर्ण प्रति। शुद्धलेखन, शुद्धतम प्रति

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

३. ग संज्ञक प्रति

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर. संख्या ५८३

माप—२५.८ c.m. × १०.७ c.m.

पत्र संख्या १०. ; पंक्ति १८. ; अक्षर ५६

लेखनकाल अनुमानतः १८वीं शती का प्रथम चरण; लिपि सुन्दर है किन्तु अशुद्ध है।

इसमें रचना और लेखन-प्रशस्ति नहीं है।

वृत्तमौक्तिक द्वितीय खण्ड

१. क संज्ञक. आदर्श प्रति

अनूप संस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर. संख्या ५५३०

माप—२५.२ c.m. × १०.६ c.m.

पत्र संख्या १६६. ; पंक्ति ७. ; अक्षर ३९

लेखनकाल १६९०. वि० लेखक—लालमनि मिश्र

लेखनस्थान—अर्गलपुर (आगरा)

शुद्धतम एवं संशोधित प्रति है। लेखन-प्रशस्ति इस प्रकार है—

"॥संवत् १६९० समये श्रावणवदि ११ रवौ शुभदिने लिखितं शुभस्थाने अर्गलपुरनगरे लालमनिमिश्रेण। शुभम्। इदं ग्रंथसंख्या ३८५०।"

२ ख. संज्ञक प्रति

अनूप संस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर. संख्या ५५२९

माप २६.५ c.m. × ११.३ c.m.

पत्रसंख्या १९१; पंक्ति ७; अक्षर ३६

लेखनकाल १८वीं शती का पूर्वार्द्ध

शुद्धलेखन, शुद्धप्रति. लेखन प्रशस्ति नहीं है।

दोनों टीकाओं की अद्यावधि एक-एक ही प्रति प्राप्त होने से उन्हीं के आधार से सम्पादन किया है। दोनों टीकाओं की प्रतियों का परिचय इस प्रकार है—

वृत्तमौक्तिक-वार्त्तिकदुष्करोद्धार

टी० लक्ष्मीनाथ भट्ट

अनूप संस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर. संख्या ५५३३

माप २७.५ c.m. × ११.५ c.m.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पत्र संख्या ३८; पंक्ति ७; अक्षर ३७.
लेखनकाल १६६० वि० लेखक - लालमनि मिश्र
लेखन स्थान - अर्गलपुर (आगरा)
शुद्ध एवं संशोधित. पूर्णप्रति. एकमात्र प्रति

लेखन-प्रशस्ति इस प्रकार है :—

"।। संवत् १६६० समये भाद्रपदशुदि३ भौमे शुभदिने अर्गलपुरस्थाने लिखितं लालमनिमिश्रेण । शुभं भूयात् । श्रीविष्णवे नमः ।।"

वृत्तमौक्तिकदुर्गमबोध

टी० महोपाध्याय मेघविजय

महोपाध्याय विनयसागर संग्रह, कोटा, पोथी २३, प्र.नं. ११
माप २५.५ c.m. × १०.७ c.m.
पत्रसंख्या १०; पंक्ति २१; अक्षर ६०
लेखनकाल १८वीं शती. टीकाकार - महोपाध्याय मेघविजय द्वारा स्वयं लिखित. शुद्ध एवं संशोधित एकमात्र प्रति. पत्र २-५ तक प्रस्तार चित्र.

सम्पादन-शैली

सम्पादन में प्रथम खण्ड की तीनों प्रतियों को क, ख, ग और द्वितीय-खण्ड की दोनों प्रतियों को क, ख, संज्ञा प्रदान की है।

प्रथमखण्ड की ख. संज्ञक प्रति और द्वितीयखण्ड की क. संज्ञक प्रति एक ही व्यक्ति की लिखी हुई और प्रथमखण्ड की क. संज्ञक और द्वितीयखण्ड की ख. संज्ञक प्रति संभवतः इसी प्रति की प्रतिलिपि हो; क्योंकि दोनों में अतीव सामीप्य होने से विशेष पाठ-भेद प्राप्त नहीं होते।

दोनों खण्डों की क. संज्ञक प्रति को मैंने आदर्श माना है और अन्य प्रतियों के पाठभेदों को मैंने टिप्पणी में पाठान्तर-रूप में दिये हैं। कतिपय स्थलों पर प्रतिलिपिकार के भ्रम से जो अंश या पंक्तियां क. संज्ञक प्रति में छूट गई हैं वे ख. संज्ञक प्रति से मूल में सम्मिलित कर दी गई हैं और कतिपय शब्द ख. प्रति के शुद्ध होने से उसे मूल में रखकर क. प्रति के पाठ को पाठान्तर में दे दिया है।

ग्रंथकार ने प्रत्युदाहरणों और नामभेदों में जिन ग्रंथों का उल्लेख किया है उन ग्रंथों के स्थल, सर्गसंख्या और पद्यसंख्या टिप्पणी में दी गई हैं और जिन प्रत्यु-

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

दाहरणों के कहीं-कहीं पूर्णपद्य न देकर एक-एक चरण-मात्र दिये हैं उन्हें पूर्णरूप में टिप्पणी में दे दिये हैं ।

इन्द्रवज्रा-उपेन्द्रवज्रा-उपजाति, वंशस्थविला-इन्द्रवंशा-उपजाति और शालिनी-वातोर्मी-उपजाति के ग्रंथकार ने १४-१४ भेद स्वीकार किये हैं किन्तु उनके नाम, लक्षण एवं उदाहरण न होने से मैंने टिप्पणी में इन्द्रवज्रा-उपेन्द्रवज्रा-उपजाति और वंशस्थविला-इन्द्रवंशा-उपजाति के १४-१४ भेदों के नाम, लक्षण एवं उदाहरण अन्य ग्रंथों के आधार से दिये हैं तथा शालिनी-वातोर्मी-उपजाति एवं रथोद्धता-स्वागता-उपजाति के टिप्पणी में लक्षणमात्र दिये हैं क्योंकि अन्य ग्रंथों में इनके नाम और उदाहरण पूर्णरूप में मुझे प्राप्त नहीं हुये ।

कतिपय स्थलों पर लक्षण स्पष्ट न होने से एवं उदाहरण न होने से मैंने टिप्पणी में लक्षणों को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया हैं, साथ ही अन्य ग्रंथों से प्राप्त उदाहरण भी दिये हैं । गाथादि छंदभेदों के लक्षण और नाम टिप्पणी में देकर इन भेदों को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है ।

प्रतियों में छन्द के प्रारम्भ में कहीं 'अथ' का प्रयोग है और कहीं नहीं है, कहीं नाम के साथ 'वृत्त' या 'छन्द' का प्रयोग है और कहीं नहीं है तथा छन्द के अंत में केवल नाम ही प्राप्त है, किन्तु मैंने ग्रंथ में एकरूपता रखने के लिये प्रारंभ में 'अथ' और छन्द का नाम और अंत में 'इति' और छन्द नाम का सर्वत्र प्रयोग किया है । इसी प्रकार श्लोक-संख्या में भी एकरूपता की दृष्टि से मैंने प्रत्येक प्रकरण की श्लोक-संख्या पृथक्-पृथक् दी है ।

गोविन्दविरुदावली के पाठान्तर मैंने राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर ग्रन्थांक २३४८०. पत्र ८. पंक्ति १६. अक्षर ४१. की प्रति से दिये हैं ।

पाठान्तर, टिप्पणियां और परिशिष्टों द्वारा मैंने यथासम्भव इस ग्रन्थ को श्रेष्ठ बनाने का प्रयास किया है किन्तु मैं इसमें कहाँ तक सफल हुआ हूँ इसका निर्णय तो एतद्विषय के विद्वान् ही कर सकेंगे ।

आभार प्रदर्शन—

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर के सम्मान्य सञ्चालक, मनीषी पद्मश्री मुनि श्री जिनविजयजी पुरातत्त्वाचार्य ने इस ग्रन्थ के सम्पादन का कार्य प्रदान कर मुझे जो साहित्य-साधना का अवसर दिया तथा प्रतिष्ठान के उप-संचालक, सम्माननीय श्री गोपालनारायणजी बहुरा, एम.ए. ने जिस आत्मीयता

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

के साथ समय-समय पर परामर्श एवं सहयोग देकर कृतार्थ किया, उसके लिये मैं इन दोनों का हार्दिक अभिनन्दन करता हूं।

श्री अगरचन्दजी नाहटा के सत्प्रयत्न से अनूप संस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर के संरक्षक बीकानेर के महाराजा एवं व्यवस्थापकों ने वृत्तमौक्तिक की प्रतियां सम्पादनार्थ प्रदान की; अतः मैं इन सब का आभारी हूँ।

प्रो० श्री कण्ठमणिशास्त्री कांकरोली, श्री गंगाधरजी द्विवेदी जयपुर, श्री भंवरलालजी नाहटा कलकत्ता, डॉ० श्री नारायणसिंहजी भाटी एम.ए, पी.एच.डी., संचालक राजस्थानी शोध संस्थान जोधपुर, श्रीबद्रीप्रसाद पंचोली एम.ए, एवं इण्डिया ऑफिस लायब्रेरी, लन्दन, के व्यवस्थापक आदि ने परामर्श देकर एवं ग्रन्थों की आद्यन्त-प्रशस्तियां भेज कर जो सहयोग प्रदान किया है उसके लिये मैं इन सब का उपकृत हूँ।

मेरे परममित्र श्री लक्ष्मीनारायणजी गोस्वामी का अभिनन्दन मैं किन शब्दों में करूं! इस ग्रन्थ को शुद्ध एवं श्रेष्ठ बनाने का सारा श्रेय ही इन्हीं को है।

साधना प्रेस जोधपुर के संचालक श्री हरिप्रसादजी पारीक भी धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होंने इसके मुद्रण में पूर्ण सहयोग दिया है।

अन्त में, मैं अपने पूज्य गुरुदेव श्रीजिनमणिसागरसूरिजी महाराज का अत्यन्त ही ऋणी हूँ कि जिनकी कृपा और आशीर्वाद से आज मैं इस ग्रन्थ का सम्पादन करने योग्य बन सका!

श्रीमती सन्तोषकुमारी जैन (मेरी धर्मपत्नी) के सहयोग और प्रेरणा से मैं इस कार्य में संलग्न रहा इसके लिये उसको भी साधुवाद।

आनन्द निवास, जोधपुर. —म. विनयसागर

२४-५-६५

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

परिभाषिक-शब्द

शब्द	गण, कला-मात्रा	पृष्ठ-संख्या	पद्य-संख्या
अधिप	ISS	४	३४
अमृत	SIS	४	३५
अहि	ISIS	३	१९
अहिगण	SIII	३	२०
आनन्द	SI	३	२४
इन्द्रासन	ISS	३	२०
ऐरावत	ISS	४	३४
कङ्कण	S	८४	१७६
कनक	S	३	२६
कनक	I	४	३७
कमल	SISI	३	१९
कमल	IIS	३	२९
कर	IIS	३	२९
करतल	IIS	३	२१
करताल	SI	३	२४
कर्ण	SS	३	२१
कर्णपर्याय	SS	३	३०
कर्णसमान	SS	३	२८
कलि	SSII	३	१९
काहल	I	४	३८
कुच-पर्याय	ISI	४	३१
कुञ्जर-पर्याय	ISS	४	३४
कुण्डलक	S	३	२६
कुन्तीसुत	SS	६५	६४
कुसुम	ISII	३	२०
,,	I	९०	२०४
केयूर	S	४	३७
ग	S		
गज	चतुर्मात्रा	४	३६
गजपति	ISI	४	३१
गजाभरण	IIS	३	२९
गण्ड	SII	४	३२
गन्ध	I	४	३८
गरुड-पर्याय	SIS	४	३५
गुरुयुगल	SS	३	२८
गोपाल	ISI	४	३१
चन्द्र	IISII	३	१९
चाप	IIIS	३	२०
चामर	S	३	२६
चित्त	S	१२५	३५८
चिर	IS	३	२३
चिरालय	IS	३	२३
चिह्न	IS	३	२३
चूतमाला	IS	३	२३
जगण	ISI	४	३९
जङ्घायुगल	SII	४	३२
जोहल	SIS	४	३५
टगण	षण्मात्रा	२	१५
ठगण	पञ्चमात्रा	२	१५
डगण	चतुर्मात्रा	२	१५
ढगण	त्रिमात्रा	२	१५
णगण	द्विमात्रा	२	१५
तगण	SSI	४	३९
ताटङ्क	S	४	३७
ताण्डव	III	३	२५
तात	SII	४	३२
तारापति	ISS	४	३४
ताल	SI	३	२४

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

शब्द	गण कला-मात्रा	पृष्ठ-संख्या	पद्य-संख्या
तुम्बुरु	I S	१६१	५२६
तुरङ्गम	चतुर्मात्रा	४	३६
तूर्य-पर्याय	S I	३	२४
तोमर	I S	३	२३
दण्ड	I	४	३७
दहन	S I I	४	३२
द्विजजाति	I I I I	४	३३
द्विजवर	I I I I	४	३३
धर्म	S I I I I	३	१६
धातु	I I I S I	३	१६
ध्रुव	I S I I I	३	१६
ध्वज	I S	३	२३
नगण	I I I	४	४०
नरेन्द्र-पर्याय	I S I	४	३१
नायक	I S I	४	३१
नारी	I I I	३	२५
निर्वाण	S I	३	२४
नूपुर	S	३	२६
पक्षी	S I S	३३	६१
पक्षिराज	S I S	५४	६४
पञ्चशर	I I I I	४	३३
पटह	S I	३	२४
पत्र	I S	३	२३
पदपर्याय	S I I	४	३२
पदाति	चतुर्मात्रा	४	३६
पयोधर	I S I	३	२१
परम	I I	३	२७
पवन	I S	३	२३
पवन	I S I	४	३१
पाणि	I I S	३	२६
पापगण	I I I I I	३	२०
पितामह	S I I	४	३२
पुष्प	I	४	३८
प्रहरण	[illegible]	३	[illegible]
प्रहरणनामानि	पञ्चमात्रा	४	३६
फणि	S I	३	२६
बाण	I I I I	४	३३
वाण	I	४	३८
बलभद्र	S I I	४	३२
बाहु	I I S	३	२६
भगण	S I I	४	४०
भामिनी-पर्याय	I I I	३	२५
भाव	I I I	३	२५
भुजङ्ग	S I S	४	३५
भुजदण्ड	I I S	३	२६
भुजाभरण	I I S	३	२६
भूपति	I S I	४	३१
मगण	S S S	४	३६
मनोहर	S S	३	२८
मानस	S	३	२६
मुग्धाभरण	S	३	२६
मुनिगण	I I I I	४४	६३
मृगेन्द्र	S I S	४	३५
मेघ	I S S	४	३४
मेरु	I	४	३७
यक्ष	S I S	४	३५
यगण	I S S	४	३६
रगण	S I S	४	३६
रज्जु	I S I	४	३१
रति	S I I	४	३२
रत्न	I I S	३	२६
रथ	चतुर्मात्रा	४	३६
रदन	I S S	४	३४
रस	I S	३	२३
रस	I	४	३८
रसना	S	३	२६
रसलग्न	S S	३	२८
रसिक	S S	३	२८

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

शब्द	गण, कला-मात्रा	पृष्ठ-संख्या	पद्य-संख्या
रूप	।	४	३८
ल, लघु	।		
लहलहित	S S	३	२८
वक्र	S	३	२६
वज्र	। । S	३	२६
वलय	। S	३	२३
वलय	S	३	२६
वसुचरण	S । ।	३	२२
वास	। S	३	२३
विप्र	। । । ।	३	२२
विराट्	S । S	४	३५
विहग	S । S	४	३५
वीणा	S । S	४	३५
शक्र	S । । S	३	१६
शङ्ख	।	४	३८
शब्द	।	४	३८
शर	।	४	३७
शशि	। । S S	३	१६
शालि	। । । । । ।	३	१६
शिखर	। । । ।	४	३३
शेखर	। । S ।	३	२०
शेष	। । । । S	३	१६
सगण	। । S	४	३६
सागर	S ।	३	२४
सात्विकभाव	। । ।	३	२५
सुनरेन्द्र	। S S	४	३४
सुप्रिय	। ।	३	२७
सुमतिलम्बित	S S	३	२८
सुरतलता	S S	३	२८
सुरपति	S ।	३	२४
सूर्य	। S S ।	३	१६
सूर्य	S । S	३	२०
हर	S S S	३	१६
हस्त	। । S	३	२६
हस्तायुध-पर्याय	। । S	३	३०
हार	S	४	३७
हारावलि	S	३	२६
हीर	S S ।	३	२०

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

॥१॥

॥ ६० ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीगुरुभ्यो नमः ॥ युष्मान्पातु चिरन्तनं किमपि तत्सत्यं चि
दकात्मकं ज्योतिर्यच्चराचरात्मकमिदं वाकेतसो येत्वरम्यं यस्माद्विश्वमुदेति भाति च
यतो यस्मिन्पुनर्लीयते यद्धितं श्रीतैरानन्दकानमनसामानन्दकन्दं महः ॥ १ ॥ यद्
भिन्नमेदर्वीकरकलितदुर्वोधविषमभीतद्ध्वदः शास्त्रं यदीपचरि पुनास्ति किंचुला
तथाधाराध्य श्रीपितृचरणसेवासुमतिना तदीयाभिर्वाग्भिर्विरचितपथगम्यं तदू
हा ॥ २ ॥ श्रीलक्ष्मीनाथभट्टस्य पितुर्नत्वा पदांबुजम् ॥ श्रीचंद्रशेखरकविस्तनुते वृत्तमौ
क्तिकम् ॥ ३ ॥ श्रीमत्पिंगलनागोक्तछन्दश्शास्त्रमहोदधेः ॥ पितृप्रसादाद्भवन्मम
गोष्पदसंनिभः ॥ ४ ॥ खलास्तु प्राप्तोत्केचित्कवत्निसुधियः केचित् तत्स्तोषाय भवन्तु वा

॥राम॥
॥१॥

५८३
१

चंद्रशेखरी पिंगलरी का ४१॥

कं रुचिरम् ॥ माघवलक्षपक्षे पंचम्यां चंद्रशेखरस्यैके ॥ २४ ॥ इत्यालंकारिकच
क्रचूडामणिछन्दश्शास्त्रपरमाचार्यसकलोपनिषद्रहस्यार्णवकर्णधारश्रील
क्ष्मीनाथभट्टात्मजकविशेखरश्रीचन्द्रशेखरभट्टविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिके पिंग
लवार्तिकमात्राख्यः प्रथमः परिच्छेदः ॥ ॥ श्रीरस्तु ॥ ॥ शुभमस्तु ॥ ॥छ॥

मात्रापरिछेद

॥राम॥
४१॥

अनूप संस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर से प्राप्त प्रथमखण्ड 'क' संज्ञक प्रति के आद्यन्त पत्रों की प्रतिकृति

CC-0, ORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

श्रीमल्लक्ष्मणनमः श्रीलक्ष्मणनमः गिरिदिव्याङ्गाजलस्यकलालोलकमलान्यलङ्कृत
दाण्डाङ्कुरणविपयान्यारचयता जटायांकुल्यायां हि खेदनेनाथरमसाद्रस्तु गोरीशः ज्ञणयतुमनं क्षे
मनिकरम् १ अवलक्ष्यशिवमय मात्रावृत्तं मुक्ताफलोत्तरहलकःफणीन्द्रभाषितानि अथवर्णशार्ष
कृती वर्णच्छन्दांसि कथयतिस्फुटतः २ ग्रागःसारश्रीः यथा श्रीर्मामव्याव श्रीः ३ अथद् लरश्रिः
यथा शमकुरुः २ इत्येकाक्षरवृत्ते अथद्यक्षरे तत्रकामः गौचेत्कामोनागप्रोक्तः यथा ॥ वन्देक
केलीतल्पम् कामः २ अथमही लगोमही ॥ दत्तर्या ॥ यथा ॥ रमापते ॥ नमास्तते ॥ मही ४ अथसारं राम
वक्रलोलसार ॥ मत्रा यथा ॥ कंसकालं ॥ नौमिबालं ॥ कार अथमधुः द्विलकृति ॥ मधुरिति ॥ यथा ॥ मतिमद १

चंद्रशेष
री
१९९॥

योनिधिलोपाम्बुजापतिंपिंगंतरमु ॥ श्रीमल्लक्ष्मीनाथंसकलागमपारगंवन्दे ॥ ७ ॥ या
तिदिवंसुतनयेविनयोपपन्ने श्रीचन्द्रशेखरकवौकिलतत्प्रबंधः ॥ विछिन्नमायमनु
वितद्वचसेवसाढ्यपूर्तीकृतश्चसहिजीवनदत्तवेऽस्य ॥ ८ ॥ श्रीवृत्तमौक्तिकमिदंल
क्ष्मीनाथेनपूरितंयत्नात् ॥ जीयादाचंद्रार्कंजीवातुर्जीवलोकस्य ॥ ९ ॥ इत्या
लङ्कारिक चक्र चूडामणिछंदःशास्त्रपरमाचार्यसकलोपनिषद्रहस्यार्णव
नाकर्णधारश्रीलक्ष्मीनाथभट्टात्मजकविशेखरश्रीचन्द्रशेखरभट्टविरचिते
श्रीवृत्तमौक्तिकेपिङ्गलवार्त्तिकवर्णवृत्ताख्योद्वितीयःपरिच्छेदः ॥ २ ॥ समाप्तश्चा
यंवार्त्तिकेद्वितीयखंडः ॥ ग्रंथसंख्या २८५० खंडद्वये ॥ ॥ शुभमस्तु ॥

पिंगलवा
र्तिक

॥ राम ॥
१९९॥

अनूप संस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर से प्राप्त द्वितीय खण्ड, क. संज्ञक प्रति के प्रथम पत्र और
ख. संज्ञक प्रति के अन्तिम पत्र की प्रतिकृति

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

श्रीगणेशायनमः ॥ प्रणम्यजगदाधारंविश्वरूपिणमीश्वरं।श्रीचन्द्रशेखरस्फोतवार्त्तिकेवृत्तमौ
क्तिके॥१॥अनन्तःस्फारंसमालोच्यनष्टोद्दिष्टादिदुष्करम्।श्रीलक्ष्मीनाथभट्टेनस्फुटीक्रियतेतरां
॥२॥अथानन्तरंछान्दसिकपरीक्षार्थंकौतुकार्थंचमात्राणामुद्दिष्टमुच्यते।तत्रत्रयोदशविभेदभिन्ने
षट्कलप्रस्तारे[illegible]दित्यादिरूपमितिलिखित्वाष्टषष्ठरूपमुद्दिष्टम्।प्रथमप्रत्ययस्वरूपंतत्प्रका
रमाह।सेहिनश्लोकेन।दद्यादिति।दद्यात्पूर्वयुगांकान्लघोरूपरिगस्पद्भयतः।।अन्त्यांकेयुगे
शोधिस्थितान्विलुंपेदथांकांश्च॥५१॥उर्वरितैअत्रतथांकैर्मात्रोद्दिष्टविजानीयात।तस्मिन्नवलि
तेरूपपूर्वयुगाङ्कान्दद्यात्।।तत्र॥।लघोरूपंपूर्वाङ्केरास्तद्भयतःउपर्यधश्चेत्यर्थः।अथपञ्चा

राम
२

॥२९एकमात्रादिनिरवधिकमात्रप्रस्तारस्तत्तज्जातिमात्रामर्कटीप्रस्तारोद्धारेणभेकाद
१०॥ श्रीमः॥११॥ ॥समाप्तश्चायंवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकेदुष्करोद्धारः॥ ॥शुभमस्तु॥ ॥
॥गराजायनमः॥ ॥संवत्१६८०समयेभाद्रपदशुदि३भौमेशुभदिनेअर्गलपुरस्थानेलि
खितंलालमनिमिश्रेण॥ ॥शुभंभूयात्॥ ॥ श्रीविश्वेशनमः॥ ॥ ॥

राम
२०

वृ.तौ.पर्यात. वृत्तमौक्तिक छै दोय छै [illegible]
[illegible] द्वारकै [illegible]

अनूप संस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर से प्राप्त वृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धार टीका के आद्यन्त पत्रों की प्रतिकृति

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

महोपाध्याय विनयसागर संग्रह, कोटा से प्राप्त वृत्तमौक्तिकदुर्गमबोध टीका के आद्यन्त पत्रों की प्रतिकृति

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

कविशेखर-भट्टश्रीचन्द्रशेखरप्रणीतं

वृत्तमौक्तिकम्

प्रथमः खण्डः

—৩—

प्रथमं गाथाप्रकरणम्

[मङ्गलाचरणम्]

युष्मान् पातु चिरन्तनं किमपि तत्सत्यं चिदेकात्मकं,
प्रोतं यत्र चराचरात्मकमिदं वाक्चेतसोर्यत्परम् ।
यस्माद् विश्वमुदेति भाति च यतो यस्मिन्पुनर्लीयते,
यद्वित्तं श्रुतिशान्तदान्तमनसामानन्दकन्दं महः ॥ १ ॥

अमुष्मिन् मे दर्वी करकलितदुर्बोधविषमे,
मतिः छन्दःशास्त्रे यदपि चरितं नास्ति विपुला ।
तथाप्याराध्यश्रीपितृचरणसेवा[1] सुमतिना,
तदीयाभिर्वाग्भिर्विरचितपथे गम्यत इह ॥ २ ॥

श्रीलक्ष्मीनाथभट्टस्य पितुर्नत्वा पदाम्बुजम् ।
श्रीचन्द्रशेखरकविस्तनुते वृत्तमौक्तिकम् ॥ ३ ॥

श्रीमत्पिङ्गलनागोक्तच्छन्दःशास्त्रमहोदधिः ।
पितृप्रसादादभवन् मम गोष्पदसन्निभः[2] ॥ ४ ॥

अलसाः प्राकृते केचिद् भवन्ति सुधियः क्वचित् ।
तत्सन्तोषाय भवतु वार्त्तिकं वृत्तमौक्तिकम् ॥ ५ ॥

यो नानाविधमात्राप्रस्तारात् सागरं प्राप्य ।
गरुडमवञ्चयदतुलः स हि नागः पिङ्गलो जयति ॥ ६ ॥

गुरुलघुस्थितिः

दीर्घः संयुक्तपरः पादान्तो वा विसर्गबिन्दुयुतः ।
स गुरुर्वक्रो द्विकलो लघुरन्यः शुद्ध एककलः ॥ ७ ॥

---

१. ग. सेवां । २. ग. सन्निभो ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा –

गौरीवरं भस्मविभूषिताङ्गं, इन्दुप्रभाभासितभालदेशम् ।
गङ्गातरङ्गावलिभासमानमूर्द्धानमानन्दितमानमामि ॥ ८ ॥

रेफहकारव्यञ्जनसंयोगात् पूर्वसंस्थितस्य भवेत् ।
वैकल्पिकं लघुत्वं वर्णस्योदाहरन्ति विद्वांसः ॥ ९ ॥

यथा –

जयति प्रदीपितकामो मम मानसह्लदनिमज्जनान्नित्यम् ।
यस्य गलगरलदम्भान् मालिन्यमन्तरस्थितं[1] लग्नम् ॥ १० ॥

विकल्पस्थितिः

यद्यपि दीर्घं वर्णं जिह्वा लघु पठति भवति सोऽपि लघुः ।
वर्णांस्त्वरितं पठितान् द्वित्रानेकं विजानीत[2] ॥ ११ ॥

यथा –

अरे रे* ! कथय वार्त्तां दूति तस्यातिचित्रां
मम सविधमुपैष्यत्येष कृष्णः कदा नु ।
इति चटु कथयन्त्यां राधिकायां तदानी-
मति-डगमगदेहः केशवोप्याऽऽविरासीत् ॥ १२ ॥

काव्यलक्षणेऽनिष्टफलवेदनम्

कनकतुला यद्वन्नहि सहते परमाणुवैषम्यम् ।
श्रवणतुला नहि तद्वच्छन्दोभङ्गेन वैषम्यम् ॥ १३ ॥
लक्षणविकलं काव्यं पण्डितसंसत्सु यो बुधः पठति ।
हस्ताग्रलग्नखड्गैः कृत्तं शीर्षं न जानाति ॥ १४ ॥

मात्राणां गणव्यवस्थाप्रस्तारश्च

रसबाणवेददहनैः पक्षाभ्यां चैव सम्मिता मात्राः ।
येषां ते प्रस्ताराष्ट-ठ-ड-ढ-णेत्येव संज्ञकाः प्रोक्ताः ॥ १५ ॥
ट-त्रयोदशभेदाः स्युरष्टौ भेदोष्ठकारजाः ।
डस्य भेदाः पञ्च ढस्य त्रयो द्वावन्तिमस्य तु[3] ॥ १६ ॥
गुरो आद्यस्याधो[4] लघुकमवधेहि प्रथमत-
स्ततः शेषान् वर्णानुपरितनतुल्यान् घटयत[5] ।

---

१. क.ख. मेन्तरस्थितं । अन्तःस्थितमिति पाठः समीचीनः (सं०) । २. ग. विजानीयात् ।
३. ग. त्रयं णस्य द्वयं स्मृतम् । ४. ग. पूर्वस्याधो । ५. ख. ग. विरचय ।
*अत्र 'रे रे' इति लघुपठनीये स्तः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

स्थले शून्ये तद्वद् घटय[1] गुरुमेवेति नियमो,
लघुं सर्वो वर्णो भवति पदमध्ये च शिशुकाः[2] ॥ १७ ॥
मात्राप्रस्तारे खलु यावद्भिः स्यात् कलापूर्तिः ।
तावन्तो गुरुलघवो देया इत्यनियमः प्रोक्तः ॥ १८ ॥

मात्रागणानां नामानि

हर-शशि-सूर्याः शक्रः शेषोप्यहि-कमल-धातृ-कलि-चन्द्राः ।
ध्रुव-धर्म-शालिसंज्ञाः षण्मात्राणां त्रयोदशैव भिदाः[3] ॥ १९ ॥
इन्द्रासनमथ सूर्यश्चापो हीरश्च शेखरः कुसुमम् ।
अहिगण-पापगणाविति पञ्चकलस्यैव संज्ञाः स्युः ॥ २० ॥
गुरुयुग्मः किल कर्णो गुर्वन्तः करतलो भवति ।
गुरुमध्यमः पयोधर इति विज्ञेयस्तृतीयोऽपि ॥ २१ ॥
आदिगुरुर्वसुचरणो विप्रो लघुभिश्चतुर्भिरेव स्यात् ।
इति हि चतुष्कलभेदाः पञ्चैव भवन्ति पिङ्गलेनोक्ताः ॥ २२ ॥
ध्वज-चिह्न-चिर-चिरालय-तोमर-पत्राणि चूतमाले च ।
रस-वास-पवन-वलया भेदास्त्रिकलस्य लघुकमालम्ब्य ॥ २३ ॥
करताल-पटह-तालाः सुरपतिरानन्दतूर्यपर्यायाः ।
निर्वाण-सागरावपि गुर्वादित्रिकलनामानि ॥ २४ ॥
सात्विकभावास्ताण्डवनारीणां भामिनीनां च ।
नामानि यानि लोके त्रिलघुगणस्यैव तानि जानीत ॥ २५ ॥
नूपुर-रसना-चामर-फणि-मुग्धाभरण-कनक-कुण्डलकम् ।
वक्रो मानस-वलयौ हारावलिरिति गुरोश्च नामानि ॥ २६ ॥
सुप्रिय-परमौ कथितौ द्विलघोरिति नाम संक्षेपात् ।
अथ कथयामि चतुष्कलनामान्यन्यानि पिङ्गलोक्तानि* ॥ २७ ॥
सुरतलता गुरुयुगलं कर्णसमानेन रसिक-रसलग्नौ ।
लम्बित-सुमति-मनोहर-लहलहितानां च नाम्नापि[4] ॥ २८ ॥
कर-पाणि-कमल-हस्ताः प्रहरण-भुजदण्ड-बाहु-रत्नानि ।
वज्रं[5] गजभुजयोरप्याभरणं स्याच्चतुष्कले संज्ञाः ॥ २९ ॥
कर्णपर्यायिनः शब्दाः गुरुयुग्मस्य वाचकाः ।
हस्तायुधस्य पर्यायाः गुर्वन्तस्यैव बोधकाः ॥ ३० ॥

---

१. ग. पूर्वं रचय ।	२. ख. नियतं ।	३. ग. भेदः ।	४. ख. ग. नामानि ।
५. ग. वज्रो ।
* टि. द्रष्टव्यं प्राकृतपैंगलम् । (परि० १, गाथा २२-३२) ।

CC-0. JK ORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

भूपति-नायक-गजपति-नरेन्द्र-कुचवाचकाः शब्दाः ।
गोपाल-रज्जु-पवना मध्यगुरोर्बोधका[1] ज्ञेयाः ॥ ३१ ॥
दहन-पितामह-ताताः पदपर्यायश्च गण्ड[2]-बलभद्रौ ।
जङ्घायुगलं रतिरित्यादिगुरौ स्युश्चतुष्कले संज्ञाः ॥ ३२ ॥
द्विज-जाति-शिखर-विप्राः परमोपायेन[3] पञ्चशर-बाणौ ।
द्विजवर इत्यपि कथिता[4] लघुकचतुष्कले गणे संज्ञाः ॥ ३३ ॥
सुनरेन्द्राधिप-कुञ्जरपर्याया रदन-मेघयोश्चापि ।
ऐरावत-तारापतिरित्यादि लघोश्च पञ्चमात्रस्य ॥ ३४ ॥
वीणा-विराट्-मृगेन्द्रामृत-विहगा गरुडपर्यायाः ।
जोहल[5]-यक्ष-भुजङ्गा मध्यलघोः पञ्चमात्रस्य ॥ ३५ ॥
विविधप्रहरणनामा पञ्चकलः पिङ्गलेनोक्तः ।
गज-रथ-तुरङ्गम-पदातिसंज्ञकः स्याच्चतुर्मात्रः ॥ ३६ ॥
ताटङ्क-हार-नूपुर-केयूरकमिति भवन्ति गुरुभेदाः ।
शर-मेरुदण्ड-कनकं लघुभेदा इति विजानीत ॥ ३७ ॥
शब्द-रूप-रस-गन्ध-काहलैः पुष्प-शङ्ख-बाणनामभिः ।
सत्प्रबन्ध इह **वृत्तमौक्तिके** ज्ञायतां लघुकनाम पण्डिताः ॥ ३८ ॥

वर्णवृत्तानां गणसंज्ञा

मस्त्रिगुरुरादिलघुको यगणो रगणश्च लघुमध्यः ।
अन्तगुरुः सस्तगणोऽप्यन्तर्लघुमध्यगुरुको जः ॥ ३९ ॥
आदिगुरुर्भगणोऽपि च नगणस्त्रिलघुर्मतः सद्भिः ।
इति पिङ्गलप्रकाशितः गणसंज्ञा वर्णवृत्तानाम् ॥ ४० ॥

गणदेवता

पृथ्वी-जल-शिखि-पवना गगनं द्युमणींदु-पन्नगान् क्रमतः[6] ।
इत्यष्टौ गणदेवान् पिङ्गलकथितान् विजानीत ॥ ४१ ॥

गणानां मैत्री

मगणस्त्रिलघू[7] मित्रे भृत्यौ भयगणौ स्मृतौ ।
उदासीनौ जतगणावरी रसगणौ मतौ ॥ ४२ ॥

गणदेवानां फलाफलम्

मगणो ऋद्धिकार्यं यगणः सुखसम्पदो धत्ते ।
रगणो ददाति रमणं 'सगणोदेशाद् विवासयति'[8] ॥ ४३ ॥

---

१. ग. बोधिका । २ ग. गण्डु । ३ ग. परमोपासनेन । ४. ग. नास्ति पाठः । ५. ग. थोहल । ६. ख. ग. पृथिवीजलशिखिकालाः गगनं सर्यश्च चन्द्रमा नागः । ७. ग. त्रिगुरु । ८. '-' ग. जगणो रुजमादधात्येव ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

*तगणः शून्यं[1] तनुते जगणो रुजमादधात्येवं ।
भगणो मङ्गलदायी नगणः सकलं फलं दिशति* ।। ४४ ।।
इति पिङ्गलेन कथितो गणदेवानां फलाफलविचारः ।
ग्रन्थस्यादौ कविना बोद्धव्यः सर्वथा यत्नात् ।। ४५ ।।
मित्रद्वयेन ऋद्धिः स्थिरकार्यं भृत्ययोर्भवति ।
मित्रोदास्ताभ्यामपि कार्याभावश्च बन्धोऽपि ।। ४६ ।।
मित्रारिभ्यां बान्धवपीडा कार्यं च मित्रभृत्याभ्याम् ।
भृत्याभ्यामुग्रो[2]ऽसुख[3]-मुदास्तभृत्यौ धनं हरतः ।। ४७ ।।
भृत्योदासीनाभ्यां भृत्यारिभ्यां[4] च हाक्रन्द[5]: ।
अल्पं कार्यमुदास्तान् मित्रात् संजायतेप्युदास्ताभ्याम् ।। ४८ ।।
सम्यगसम्यङ् न भवत्युदास्तशत्रू च वैरिणं[6] कुरुतः ।
शत्रोर्मित्रान्न फलं स्त्रीनाशः शत्रुभृत्ययोर्भवति ।। ४९ ।।
शत्रूदासीनाभ्यां धननाशः सर्वथा भवति ।
शत्रुभ्यां नायकमृतिरिति फलमफलं गणद्वये कथितम् ।। ५० ।।

मात्रोद्दिष्टम्

दद्यात् पूर्वयुगाङ्कान् लघोरुपरि गस्य तूभयतः ।
अन्त्याङ्के गुरुशीर्षस्थितान् विलुम्पेदथाङ्काश्च ।। ५१ ।।
उर्वरितैश्च[7] तथाङ्कैर्मात्रोद्दिष्टं विजानीयात् ।

मात्रानष्टम्

अथ मात्राणां नष्टं यददृष्टं[8] पृच्छ्यते रूपम् ।। ५२ ।।
यत्कलकप्रस्तारो लघवः कार्याश्च तावन्तः ।
दत्वा पूर्वयुगाङ्कान् पृष्ठाङ्कं[9] लोपयेदन्त्ये ।। ५३ ।।
उर्वरितोवरितानामङ्कानां यत्र[10] लभ्यते भागः ।
परमात्रां च गृहीत्वा स एव गुरुतामुपागच्छेत् ।। ५४ ।।

वर्णोद्दिष्टम्

द्विगुणानङ्कान् दत्वा वर्णोपरि लघुशिरःस्थितानङ्कान् ।
एकेन पूरयित्वा वर्णोद्दिष्टं विजानीत ।। ५५ ।।

- ग. प्रतौ – त्याजयति सोऽपि देशं, तगणः शून्यफलं च विदधाति ।
मंगल भगणो दायी, नगणात् सर्वं समीचीनम् ।

१. ख. शून्यं फलेन विदधति ।　२. ख. ग. मग्रे ।　३. क. सख ।　४. ग. भृत्याद्रिभ्यां ।　५. ग. महाक्रन्दः ।　६. ग. वैरिणां ।　७. ग. उच्चरितैश्च ।　८. ग. विद्वद्भिर्यंत्र ।　९. ग. प्रश्नाङ्कं ।　१०. ग. नास्ति पाठः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

वर्णनष्टम्

नष्टे पृष्ठे भागः कर्त्तव्यः पृष्ठसंख्यायाः ।
समभागे लं[1] कुर्यात् विषमे दत्त्वैकमानयेद् गुरुकम् ॥ ५६ ॥

वर्णमेरुः

कोष्ठानेकाधिकान् वर्णैः[2] कुर्यादाद्यन्तयोः पुनः ।
एकाङ्कमुपरिस्थाङ्कद्वयैरन्यात्(न्?)प्रपूरयेत् ॥ ५७ ॥
वर्णमेरुरयं सर्वगुर्वादिगणवेदकम्[3] ।
प्रस्तारसंख्याज्ञानञ्च फलं तस्योच्यते बुधैः ॥ ५८ ॥

वर्णपताका

दत्वा पूर्वयुगाङ्कान् पूर्वाङ्कैर्योजयेदपरान् ।
अङ्कः पूर्वं यो वै भृतस्ततः पंक्तिसञ्चारः ॥ ५९ ॥
अङ्काः पूर्वं भृता येन तमङ्कं भरणे[4] त्यजेत् ।
अङ्कश्च पूर्वं यः सिद्धस्तमङ्कं नैव साधयेत् ॥ ६० ॥
प्रस्तारसंख्यया चैवमङ्कविस्तारकल्पना ।
पताका सर्वगुर्वादिवेदिकेयं विशिष्य तु ॥ ६१ ॥

मात्रामेरुः

एकाधिककोष्ठानां द्वे द्वे पंक्ती समे कार्ये ।
तासामन्तिमकोष्ठेष्वेकाङ्कं पूर्वभागे तु ॥ ६२ ॥
एकाङ्कमयुक्पंक्तेः समपङ्क्तेः पूर्वयुग्माङ्कम् ।
दद्यादादिमकोष्ठे यावत् पङ्क्तिः प्रपूर्तिः स्यात् ॥ ६३ ॥
आद्याङ्केन तदीयैः शीर्षाङ्कैर्वामभागस्थैः ।
उपरिस्थितेन कोष्ठं विषमायां पूरयेत् पंक्तौ ॥ ६४ ॥
समपंक्तौ कोष्ठानां पूरणमाद्याङ्कमपहाय ।
उपरिस्थाङ्कैस्तदुपरिसंस्थैर्वामस्थितैरङ्कैः ॥ ६५ ॥
मात्रामेरुरयं प्रोक्तः पूर्वोक्तफलभागिति ।

मात्रापताका

अथ मात्रापताकाऽपि कथ्यते कवितुष्टये ॥ ६६ ॥
दत्वोद्दिष्टवदङ्कान् वामावर्तेन लोपयेदन्त्ये[5] ।
अवशिष्टो वै योऽङ्कस्ततो भवेत्[6] पंक्तिसञ्चारः ॥ ६७ ॥
एकैकाङ्कस्य लोपे तु ज्ञानमेकगुरोर्भवेत् ।
द्वित्र्यादीनां विलोपे तु पंक्तिद्वित्र्यादिबोधिनी ॥ ६८ ॥

---

१. ग. लघु । २. ख. वर्णान् । ३. ख. ग. वेदनम् । ४. ग. भरणं । ५. ग. अन्त्यैः । ६. ग. नास्ति पाठः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

वृत्तद्वयस्थगुरुलघुज्ञानम्

पृष्ठे वर्णच्छन्दसि कृत्वा वर्णांस्तथा मात्राः ।
वर्णाङ्केन कलाया लोपे गुरवोऽवशिष्यन्ते[1] ॥ ६९ ॥

वर्णमर्कटी

मर्कटी लिख्यते वर्णप्रस्तारस्यातिदुर्गमा ।
कोष्ठमक्षरसंख्यातं[2] पंक्ती[3] रचय षट् तथा ॥ ७० ॥
प्रथमायामाद्यादीन् दद्यादङ्कांश्च सर्वकोष्ठेषु ।
अपरायां तु द्विगुणान् अक्षरसंज्ञेषु तेष्वेव ॥ ७१ ॥
आदिपंक्तिस्थितैरङ्कैर्विभाव्यापरपंक्तिगान् ।
अङ्कांश्चतुर्थपंक्तिस्थकोष्ठकानपि पूरयेत् ॥ ७२ ॥
[4]पूरयेत् षष्ठ-पञ्चम्याव(म)र्द्धैस्तुर्याङ्कसम्भवैः ।
एकीकृत्य चतुर्थस्थ-पञ्चमस्थाङ्ककान् सुधीः ॥ ७३ ॥
कुर्यात् पंक्तितृतीयस्थकोष्ठकानपि पूरितान् ।
वर्णानां मर्कटी सेयं पिङ्गलेन प्रकाशिता ॥ ७४ ॥
वृत्तं भेदो मात्रा वर्णा गुरवस्तथा च लघवोऽपि ।
प्रस्तारस्य[5] षडेते ज्ञायन्ते पंक्तितः क्रमतः ॥ ७५ ॥

मात्रामर्कटी

कोष्ठान् मात्रासम्मितान् पंक्तिषट्कं[6],
कुर्यान् मात्रामर्कटीसिद्धिहेतोः ।
तेषु द्व्याद्योनादिपंक्ति(क्त्या)वथाङ्कां-
स्त्यक्त्वाऽऽद्याङ्कं सर्वकोष्ठेषु दद्यात् ॥ ७६ ॥
दद्यादङ्कान् पूर्वयुग्माङ्कतुल्यां-
स्त्यक्त्वाऽऽद्याङ्कं पक्षपंक्तावथाऽपि ।
पूर्वस्थाङ्कैर्भावयित्वा ततस्तान्,
कुर्यात् पूर्णान्नेत्रपंक्तिस्थकोष्ठान् ॥ ७७ ॥
प्रथमे द्वितीयमङ्कं द्वितीयकोष्ठे च पञ्चमाङ्कमपि ।
हत्वा बाणद्विगुणं तद् द्विगुणं नेत्रतुर्ययोर्दद्यात् ॥ ७८ ॥
एकीकृत्य तथाङ्कान् पञ्चमपंक्तिस्थितान् पूर्वान् ।
दत्वा तथैकमङ्कं कुर्यात्तेनैव पञ्चमं[7] पूर्णम्[8] ॥ ७९ ॥

---

१. ग. विशिष्यते । २. ग. संज्ञातं । ३. ग. पंक्ति । ४. ग. पूरयत्यष्टपञ्चम्या वेधैः
५. ग. प्रस्तारश्च । ६. ग. षट्कं । ७. ग. पञ्चमां । ८. ग. पूर्णाम् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

त्यक्त्वा पञ्चममङ्कं पूर्वोक्तानेव भावमापाद्य ।
दत्वा तथैवमङ्कं षष्ठं[1] कोष्ठं प्रपूरयेद्[2] विद्वान् ॥ ८० ॥
कृत्वैक्यं चाङ्कानां पञ्चमपंक्तिस्थितानां च ।
त्यक्त्वा पञ्चदशाङ्कं हित्वैकं पूरयेन् मुनेः[3] कोष्ठम् ॥ ८१ ॥
एवं निरवधिमात्राप्रस्तारेष्वङ्कबाहुल्यात् ।
[4]प्रकृतानुपयोगवशान्न कृतोऽङ्कविस्तारः ॥ ८२ ॥
एवं पञ्चमपंक्तिं कृत्वा पूर्णां च प्रथममेकाङ्कम्[5] ।
दत्वा पञ्चमपंक्तिस्थितैरथाङ्कैः प्रपूरयेत् षष्ठीम् ॥ ८३ ॥
एकीकृत्य तथाङ्कान् पञ्चम-षष्ठस्थितान् विद्वान् ।
कुर्याच्चतुर्थपंक्तिं पूर्णां नागाज्ञया तूर्णम् ॥ ८४ ॥
वृत्तं प्रभेदो मात्राश्च वर्णा लघुगुरू तथा ।
एते षट्पंक्तितः पूर्णप्रस्तारस्य विभान्ति वै ॥ ८५ ॥

नष्टादिफलम्

नष्टोद्दिष्टं यद्वन् मेरुद्वितयं तथा पताका च ।
मर्कटिकाऽपि तद्वत् कौतुकहेतुर्निबध्यते तज्ज्ञैः ॥ ८६ ॥

प्रस्तारसंख्या

षड्विंशतिः सप्तशतानि चैव,
　　　　तथा सहस्राण्यपि सप्तपंक्तिः ।
लक्षाणि[6] दृग्वेदसुसम्मितानि,
　　　　कोटचस्तथा रामनिशाकरैः स्युः ॥ ८७ ॥

१३४२१७७२६ समस्तप्रस्तारपिण्डसंख्या ।

एकाक्षरादिषडधिकविंशतिवर्णान्तवर्णवृत्तानाम् ।
उक्ताः समस्तसंख्या लक्ष्यन्ते जातयश्चार्याः[7] ॥ ८८ ॥

गाथाभेदाः

मुनिबाणकला गाथा विगाथापि तथा भवेत् ।
वेदबाणकला गाहू[8] षष्टचो(यु)द्गाथा भवेत् पुनः ॥ ८९ ॥
गाहिनी स्याद् द्विषष्टचा तु मात्राणां सिंहिनी तथा ।
चतुःषष्टचा कलानां तु स्कन्धकं कथ्यते बुधैः ॥ ९० ॥

---

१. ग. नास्ति पाठः । २. ग. वै पूरयेद् । ३. ग. नास्ति पाठः । ४. ग. प्रकृतोपयोगवशते । ५. ग. एकैकम् । ६. ख. ग. लक्षाणि पञ्चाशदष्वाष्टसंख्या, हीनानि कोटचो नवपंक्तिसंख्याः । ७. ग. न लक्षा जातयश्चार्याः । ख. चार्याः । ८. ग. दूणा ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१ गाथा

प्रथमे द्वादशमात्रा मात्रा ह्यष्टादश द्वितीये तु[1] ।
दहने द्वादशमात्रास्तुर्ये दशपञ्च सम्प्रोक्ताः ॥ ९१ ॥
इति गाथाया लक्षणमार्यासामान्यलक्षणं चाऽथ ।
षष्ठे जो वा विप्रो विषमे न हि जो गणाश्च गुर्वन्ताः ॥ ९२ ॥
सप्त हरयः सहाराः षष्ठे रज्जुर्द्विजोऽपि वा भवति ।
चरमदले लघु षष्ठं विषमे पवनस्तु नैव स्यात् ॥ ९३ ॥

यथा–

गोकुलहारी मानसहारी वृन्दावनान्तसञ्चारी ।
यमुनाकुञ्जविहारी गिरिवरधारी हरिः पायात् ॥ ९४ ॥

एकस्मात्तु कुलीना द्वाभ्यामप्यभिसारिका भवति ।
नायकहीना रण्डा वेश्या बहुनायका भवति ॥ ९५ ॥

गाथायाः पञ्चविंशतिभेदाः

सर्वस्या गाथायाः मुनिबाणसमाख्यया कला ज्ञेयाः ।
प्रथमे दले खरामैरपरेऽपि दलेऽश्वपक्षाभ्याम्[2] ॥ ९६ ॥
नखमुनिपरिमितहारा वह्निमिता यत्र लघवः स्युः ।
सा गाथानां गाथा प्रथमा खाग्न्यक्षरा लक्ष्मीः ॥ ९७ ॥[3]
एकैकगुरुवियोगाल्लघुद्वयस्यापि संयोगात् ।
अस्या भवन्ति भेदाः शरपक्षाभ्यां मिता एव ॥ ९८ ॥[4]
मुनिपक्षाभ्यां हाराः लघवो दहनैश्च सः प्रथमः ।
विधुबाणैर्लघवः स्युर्गुरवो दहनैश्च सोऽन्त्यः स्यात् ॥ ९९ ॥
त्रिंशद्वर्णां लक्ष्मीं वदते सर्वपण्डिताः कवयः ।
नश्यत्येकैको यद्वर्णः कथयामि तानि नामानि ॥ १०० ॥[5]
लक्ष्मीऋद्धिर्बुद्धि[6]र्लज्जा विद्या क्षमा च वै देही[7] ।
गौरी धात्री चूर्णा[8] छाया कान्तिर्महामाया ॥ १०१ ॥
कीर्तिः सिद्धिर्मानी[9] रामा विश्वा च वासिता च मता ।
शोभा हरिणी चक्री कुररी[10] हंसी च सारसी च मता ॥ १०२ ॥

---

१. ग. ऽपि । २. ग. प्रथमदले च खरामः स्वरपक्षाभ्यां मिता एव । ख. स्वरपक्षाभ्याम् ।
३-४. ग. पद्यद्वयं ९७-९८ नास्ति । ५. ख. ग. पद्यमेक १०० नास्ति । ६. ग. बृद्धिः ।
७. ख. ग. देही च । ८. ग. पूर्णा । ९. ग. मानिनी । १०. ग. कुररी ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

इति भेदाभिधाः पित्रा रचितायामतिस्फुटम् ।
उदाहरणमञ्जर्यां बोध्यैतासामुदाहृतिः* ॥ १०३ ॥

इति गाथा

२. विगाथा

यस्या द्वितीयचरणे मात्राः शरभूमिभिः प्रोक्ताः ।
सैव विगाथा तुर्ये चरणे वसुभूमिसंख्यकाश्च कलाः ॥ १०४ ॥

---

* टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथविरचितायां पिङ्गलप्रदीपाख्यायां प्राकृतपिङ्गलवृत्तौ गाथाच्छन्दसः सप्तविंशतिभेदाः—

१ लक्ष्मीः	२७ गुरु	३ लघु	३० अक्षर
२ ऋद्धिः	२६ गुरु	५ लघु	३१ अक्षर
३ बुद्धिः	२५ गुरु	७ लघु	३२ अक्षर
४ लज्जा	२४ गुरु	९ लघु	३३ अक्षर
५ विद्या	२३ गुरु	११ लघु	३४ अक्षर
६ क्षमा	२२ गुरु	१३ लघु	३५ अक्षर
७ देही	२१ गुरु	१५ लघु	३६ अक्षर
८ गौरी	२० गुरु	१७ लघु	३७ अक्षर
९ धात्री	१९ गुरु	१९ लघु	३८ अक्षर
१० चूर्णा	१८ गुरु	२१ लघु	३९ अक्षर
११ छाया	१७ गुरु	२३ लघु	४० अक्षर
१२ कान्ति	१६ गुरु	२५ लघु	४१ अक्षर
१३ महामाया	१५ गुरु	२७ लघु	४२ अक्षर
१४ कीर्तिः	१४ गुरु	२९ लघु	४३ अक्षर
१५ सिद्धिः	१३ गुरु	३१ लघु	४४ अक्षर
१६ मानिनी	१२ गुरु	३३ लघु	४५ अक्षर
१७ रामा	११ गुरु	३५ लघु	४६ अक्षर
१८ गाहिनी	१० गुरु	३७ लघु	४७ अक्षर
१९ विश्वा	९ गुरु	३९ लघु	४८ अक्षर
२० वासिता	८ गुरु	४१ लघु	४९ अक्षर
२१ शोभा	७ गुरु	४३ लघु	५० अक्षर
२२ हरिणी	६ गुरु	४५ लघु	५१ अक्षर
२३ चक्री	५ गुरु	४७ लघु	५२ अक्षर
२४ सारसी	४ गुरु	४९ लघु	५३ अक्षर
२५ कुररी	३ गुरु	५१ लघु	५४ अक्षर
२६ सिंही	२ गुरु	५३ लघु	५५ अक्षर
२७ हंसी	१ गुरु	५५ लघु	५६ अक्षर

ग्रन्थेऽस्मिन् सिंही-गाहिनीति द्वौ भेदौ नैव स्वीकृतौ ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

तरणितनूजातीरे चीरेऽपहृतेऽपि वीरेण ।
हिमनीरे रमणीनामकुटिलधारेव मनसि संजज्ञे ॥ १०५ ॥

इति विगाथा

३. गाहू[1]

पूर्वार्द्धे च परार्द्धे सप्ताधिकविंशतिर्मात्राः ।
अर्द्धद्वयेऽपि यस्याः षष्ठो लः सैव गाहू स्यात् ॥ १०६ ॥

यथा–

अतिचटुलचन्द्रिकाञ्चितचञ्चलनवकुन्तलं किमपि ।
राधावितनुज[2]बाधासाधारणमौषधं जयति ॥ १०७ ॥

यथा वा –

कलशीगतदधिचोरं रदजितहीरं स्फुरच्चीरम् ।
राधावदनचकोरं नन्दकिशोरं नमस्यामः ॥ १०८ ॥

इति गाहू ।

४. उद्गाथा

यस्या द्वितीयचरणे चतुर्थचरणे भवन्ति वै मात्राः ।
वसुविधुसंख्यायुक्ताः सोद्गाथा पिङ्गलेन सम्प्रोक्ता ॥ १०९ ॥

यथा –

उपवनमध्यादभिनवविलोकनासक्तराधिकाकृष्णौ ।
अन्योन्यगमनवेलामपेक्षमाणौ[3]न जग्मतुः क्वापि ॥ ११० ॥

इत्युद्गाथा

५. गाहिनी

यस्या द्वितीयचरणे वसुविधुमात्रा भवन्ति तुर्ये तु ।
पादे विंशतिमात्राः सा गाहिनिका तु सिंहिनी विपरीता ॥ १११ ॥

---

१. ग. गाहा । २. ग. वितनु । ३. क. प्रपेक्षमाणौ, ग. अपेक्षमाणो ।

CC-0. BORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

स जयति मुरलीवादनकेलिकलाभिर्विमोहयन् गोपीः ।
वृन्दावनान्तभूमौ रासरसाक्षिप्तविबुध[1]विधिरुद्रमुखः ।। ११२ ।।

इति गाहिनी ।

६. सिंहिनी

यस्या द्वितीयचरणे विंशतिमात्रा मनोहराकारगुणाः ।
सा सिंहिनी प्रदिष्टा नागाधिपपिङ्गलेन सम्प्रोक्ता ।। ११३ ।।

यथा –

वन्देऽरविन्दनयनं वृन्दारकवृन्दवन्दितपदाम्भोजम् ।
नन्दानन्दनिधानं नवजलधररुचिरमन्दिरारमणम् ।। ११४ ।।

इति सिंहिनी

७. अथ स्कन्धकम्

यस्य द्वितीयचरणे चतुर्थचरणे च विंशतिर्मात्राः स्युः ।
स स्कन्धक[2] इति कथितो यस्मिन्नष्टौ गणाश्चतुर्मात्राभिः ।। ११५ ।।

यथा–

राधामुखाब्जतरणिः तरणिः संसारसागरोत्तरणविधौ ।
स जयति निजभक्तानां कामितदाता दुरन्तशक्तिसहायः ।। ११६ ।।

स्कन्धकस्याऽष्टाविंशतिभेदाः

नन्दो[3] भद्रः शिवः शेषः सारङ्ग-ब्रह्म-वारणाः[4] ।
वरुणो मदनो नीलः तालाङ्कः शेखरः शरः ।। ११७ ।।

गगनं शरभो विमतिः क्षीरं नगरं नरः स्निग्धः ।
स्नेहलु-मदकल-भूपाः[5] शुद्धः कुम्भः सरिः कलशः ।। ११८ ।।

शशीति संज्ञका भेदाः स्कन्धकस्य प्रकीर्तिताः ।
वसुपक्षमितास्ते स्युः गुरुह्रासाल्लवृद्धितः ।। ११९ ।।

त्रिंशद्गुरवो यस्मिन् वेदा लघवश्च स प्रथमः ।
वसुशरलघवो यस्मिन् गुरुत्रयं चैव सोऽन्त्यः स्यात् ।। १२० ।।

---

१. ग. विबुध इति पाठो नास्ति । २. ग. स्कन्धं । ३. ग. मन्दो. । ४. ग. वारिणः । ५. ग. स्नेहलुकमलभूपालाः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

वसुपक्षपरिमितानामुदाहृतिः स्वप्रबन्धे तु ।
एतेषामतिरुचिरा पितृचरणैः स्फुटतया प्रोक्ताः ॥ १२१ ॥*

इति स्कन्धकम् ।

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके[1] प्रथमं गाथाप्रकरणं समाप्तम् ।

---

१. ग. नास्ति पाठः ।

*टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथविरचितायां पिङ्गलप्रदीपाख्यायां प्राकृतपिङ्गलवृत्तौ गुरुह्रास-लघुवृद्धचनुपातेन स्कन्धकस्याष्टाविंशतिभेदाः प्रदर्शितास्तद्यथा—

१ नन्दः	३० गुरु	४ लघु	३४ अक्षर
२ भद्रः	२९ गुरु	६ लघु	३५ अक्षर
३ शेषः	२८ गुरु	८ लघु	३६ अक्षर
४ सारङ्गः	२७ गुरु	१० लघु	३७ अक्षर
५ शिवः	२६ गुरु	१२ लघु	३८ अक्षर
६ ब्रह्मा	२५ गुरु	१४ लघु	३९ अक्षर
७ वारणः	२४ गुरु	१६ लघु	४० अक्षर
८ वरुणः	२३ गुरु	१८ लघु	४१ अक्षर
९ नीलः	२२ गुरु	२० लघु	४२ अक्षर
१० मदनः	२१ गुरु	२२ लघु	४३ अक्षर
११ तालाङ्कः	२० गुरु	२४ लघु	४४ अक्षर
१२ शेखरः	१९ गुरु	२६ लघु	४५ अक्षर
१३ शरः	१८ गुरु	२८ लघु	४६ अक्षर
१४ गगनम्	१७ गुरु	३० लघु	४७ अक्षर
१५ शरभः	१६ गुरु	३२ लघु	४८ अक्षर
१६ विमतिः	१५ गुरु	३४ लघु	४९ अक्षर
१७ क्षीरम्	१४ गुरु	३६ लघु	५० अक्षर
१८ नगरम्	१३ गुरु	३८ लघु	५१ अक्षर
१९ नरः	१२ गुरु	४० लघु	५२ अक्षर
२० स्निग्धः	११ गुरु	४२ लघु	५३ अक्षर
२१ स्नेहः	१० गुरु	४४ लघु	५४ अक्षर
२२ मदकलः	९ गुरु	४६ लघु	५५ अक्षर
२३ भूपालः	८ गुरु	४८ लघु	५६ अक्षर
२४ शुद्धः	७ गुरु	५० लघु	५७ अक्षर
२५ सरित्	६ गुरु	५२ लघु	५८ अक्षर
२६ कुम्भः	५ गुरु	५४ लघु	५९ अक्षर
२७ कलशः	४ गुरु	५६ लघु	६० अक्षर
२८ शशी	३ गुरु	५८ लघु	६१ अक्षर

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

द्वितीयं षट्पद-प्रकरणम्

१. दोहा

त्रिदशकला विषमे रचय सम एकादश धेहि ।
दोहालक्षणमेतदिति कविभिः कथितमवेहि ।। १ ।।
टगण-डगण-ढगणाः क्रमत इति विषमे च पतन्ति ।
समपादान्ते चैककलमिति दोहां कथयन्ति ।। २ ।।

यथा–

गौरीविरचिततनुशकल मस्तकराजितगङ्ग ।
जय वृषभध्वज पुरमथन महादेव निःसङ्गः ।। ३ ।।

दोहायाः त्रयोविंशतिभेदाः

यस्याः प्रथमतृतीये पादे जगणा भवन्ति सा कर्त्तुः[1] ।
श्वपचगृहीतस्त्रीवद्[2] दोहादोषं प्रकाशयति ।। ४ ।।
भ्रमर-भ्रामर-शरभाः श्येनो मण्डूक[3]-मर्कटौ करभः ।
मदकल-पयोधर-चलाः नरो मराल[4]स्तथा त्रिकलः ।। ५ ।।
वानर-कच्छौ मत्स्यः शार्दूलोप्यहिवरो व्याघ्रः ।
उन्दुर-शुनक-बिडालाः सर्पश्चैते प्रभेदाः स्युः ।। ६ ।।
रसपक्षवर्णयुक्तो द्वाविंशतिगुरुक-वेदलघुसहितः ।
कथितः प्रथमो भेदः गुरुशून्यः सर्वलघुकोऽन्त्यः ।। ७ ।।[5]
एकैकस्य गुरोर्लोपाल्लघुद्वयविवृद्धितः ।
दोहाभेदस्समुद्दिष्टास्त्रयोविंशतिसंख्यकाः ।। ८ ।।
स्फुटतरमेते भेदाः समुदाहृत्य प्रदर्शिताः **पित्रा** ।
स्वनिबन्धे* कविवर्यैस्तत एव विलोकनीयास्ते ।। ९ ।।

इति दोहा ।

---

१. ग. कर्त्तुः । २. ग. तावद् । ३. ग. सद्धूक । ४. ग. रसाल । ५. ग. पद्यद्वयं ६–७. नास्ति ।

*टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे गुरुह्रास-लघुवृद्ध्यनुपातेन दोहा–द्विपथाच्छन्दसः त्रयोविंशभेदानां वर्गीकरणम्—

१ भ्रमरः	२२ गुरु	४ लघु	२६ अक्षर
२ भ्रामरः	२१ गुरु	६ लघु	२७ अक्षर
३ शरभः	२० गुरु	८ लघु	२८ अक्षर

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

२. रसिका

द्विजवरयुगलमुपनय,
दहनलघुकमिह रचय ।
इति विधिशरभववदन–
चरणमिह कुरु सुवदन ।
इति हि रसिकमनुकलय,
भुजगवर कथितमभय ॥ १० ॥

यथा –

जय जय हर वृषगमन,
तरणिदहन विधुनयन ।
नयनदहन जितमदन,
निजशरकृतपुरकदन ।
मम हृदयगतमपनय–
मविनयमधिकमपनय ॥ ११ ॥

---

४ श्येनः	१९ गुरु	१० लघु	२९ अक्षर
५ मण्डूकः	१८ गुरु	१२ लघु	३० अक्षर
६ मर्कटः	१७ गुरु	१४ लघु	३१ अक्षर
७ करभः	१६ गुरु	१६ लघु	३२ अक्षर
८ नरः	१५ गुरु	१८ लघु	३३ अक्षर
९ मरालः	१४ गुरु	२० लघु	३४ अक्षर
१० मदकलः	१३ गुरु	२२ लघु	३५ अक्षर
११ पयोधरः	१२ गुरु	२४ लघु	३६ अक्षर
१२ चलः	११ गुरु	२६ लघु	३७ अक्षर
१३ वानरः	१० गुरु	२८ लघु	३८ अक्षर
१४ त्रिकलः	९ गुरु	३० लघु	३९ अक्षर
१५ कच्छपः	८ गुरु	३२ लघु	४० अक्षर
१६ मत्स्यः	७ गुरु	३४ लघु	४१ अक्षर
१७ शार्दूलः	६ गुरु	३६ लघु	४२ अक्षर
१८ अहिवरः	५ गुरु	३८ लघु	४३ अक्षर
१९ व्याघ्रः	४ गुरु	४० लघु	४४ अक्षर
२० बिडालः	३ गुरु	४२ लघु	४५ अक्षर
२१ शुनकः	२ गुरु	४४ लघु	४६ अक्षर
२२ उन्दुरः	१ गुरु	४६ लघु	४७ अक्षर
२३ सर्पः	० गुरु	४८ लघु	४८ अक्षर

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

रसिकाया अष्टौ भेदाः

यस्याश्चतुष्कलद्वयमादौ स्यात् पुनरपि त्रिकलः ।
एवं षट्पदयुक्ता या सौक्कच्छा[1] भुजङ्गमप्रोक्ता ॥ १२ ॥
अत्र लघुयुगवियोगादेकैकगुरोश्च संयोगात् ।
अष्टौ भवन्ति भेदाः शेषाः स्युर्दण्डकन्यायात् ॥ १३ ॥
रसिका हंसी रेखा तालाङ्का कम्पिनी च गम्भीरा ।
काली कलरुद्राणी इत्यष्टौ भेदनामानि ॥ १४ ॥
उदाहरणमञ्जर्यामुदाहृतिरतिस्फुटाः ।*
एतेषामपि भेदानां द्रष्टव्या कविपण्डितैः[2] ॥ १५ ॥

इति रसिका

३. रोला

या चरणे कलानां चतुरधिकविंशैर्गदिता,
सा किल रोला भवति नागकविपिङ्गलकथिता ।
एकादशकलविरतिरखिलजनचिन्ताहरणा,
सुललितपदकुलकलितविमलकविकण्ठाभरणा ॥ १६ ॥

यथा–

अरिगणमभितापयति विबुधलोकानुपगच्छति,
धरणिविवरगतभुजगनिकरमभितापेनच्छेति ।
सकलदिगीशपुरमभिनिजतापैरभियोजयति,
भूप कथं प्रतापस्तव[3] कोत्ति न शोषयति ॥ १७ ॥

---

१. ग. यासौ कुच्छा । ख. या सा कच्छी । २. ग. केचिद् पण्डितैः । ३. ग. प्रस्तावस्तव ।

*टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे गुरुवृद्धि-लघुह्रासानुक्रमेण रसिकाया अष्टौ भेदाः—

१ रसिका	६६ लघु	० गुरु	६६ मात्रा
२ हंसी	६४ लघु	१ गुरु	,, ,,
३ रेखा	६२ लघु	२ गुरु	,, ,,
४ तालङ्किनी	६० लघु	३ गुरु	,, ,,
५ कम्पिनी	५८ लघु	४ गुरु	,, ,,
६ गम्भीरा	५६ लघु	५ गुरु	,, ,,
७ काली	५४ लघु	६ गुरु	,, ,,
८ कलरुद्राणी	५२ लघु	७ गुरु	,, ,,

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

रोलायाः त्रयोदशभेदाः

कुन्दः करतल-मेघौ तालाङ्को रुद्र-कोकिलौ कमलम् ।
इन्दुः शम्भुश्चमरो गणेश-शेषौ सहस्राक्षः ॥ १८ ॥
त्रयोदशगुरुर्यत्र सप्ततिर्लघवस्तथा ।
स आद्यभेदो[1] विज्ञेयस्सोऽन्त्य एकगुरुर्यतः ॥ १९ ॥
एकैकस्य गुरोर्नाशा[2] ल्लघुद्वयनिवेशतः[3] ।
भेदास्त्रयोदश ज्ञेया रोलायाः[4] कविशेखरैः ॥ २० ॥
त्रयोदशैव भेदानामुदाहृतिरुदीरिता ।
उदाहरणमञ्जर्यां* द्रष्टव्या तत एव हि ॥ २१ ॥

इति रोला ।

४. गन्धानकम्

रचय प्रथमं पदं मुनिविधुवर्णरचितं,
तथा द्वितीयमपि वसुविधुवर्णैर्यमकचितम्[5] ।
तथान्यदलमपि यतिगणनियमरहितं,
गन्धानकवृत्तमवधेहि कविपिङ्गलगदितम् ॥ २२ ॥

---

१. ग. आदिभेदो । २. ग. ह्रासात् । ३. ग. विवृद्धितः । ४. ग. रोलायां ।
५. ग. युतम् ।

* टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे रोलायाः त्रयोदशभेदानां गुरुह्रास-लघुवृद्ध्यनुसारेण प्रदर्शनम्:—

१ कुन्दः	१३ गुरु	७० लघु	९६ मात्रा
२ करतलः	१२ गुरु	७२ लघु	,, ,,
३ मेघः	११ गुरु	७४ लघु	,, ,,
४ तालाङ्क	१० गुरु	७६ लघु	,, ,,
५ कालरुद्रः	९ गुरु	७८ लघु	,, ,,
६ कोकिलः	८ गुरु	८० लघु	,, ,,
७ कमलम्	७ गुरु	८२ लघु	,, ,,
८ इन्दुः	६ गुरु	८४ लघु	,, ,,
९ शम्भुः	५ गुरु	८६ लघु	,, ,,
१० चामरः	४ गुरु	८८ लघु	,, ,,
११ गणेश्वरः	३ गुरु	९० लघु	,, ,,
१२ सहस्राक्षः	२ गुरु	९२ लघु	,, ,,
१३ शेषः	१ गुरु	९४ लघु	,, ,,

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

लक्ष्मण दिशि दिशि विलसति घनमनु शम्पा,
इयमपि चञ्चलतरङ्गचलजलरुहपम्पा ।
दयितोदन्तः सम्प्रति[1] कथमपि न ह्यवगतं,
सोढुं शक्यो विरहः कथमिह हि मयकानुगतः[2] ॥ २३ ॥

यथा वा–

गर्जति जलधरः परिनृत्यति शिखिनिवहः,
नीपवनीमवधूय वहति दक्षिणगन्धवहः ।
दूरे दयितः कथय सखि ! किमिह हि[3] करवै,
प्रज्वालय दहनं कटिति[4] शलभमनुकरवै ॥ २४ ॥

इति गन्धानकम् ।

५. चौपैया छन्दः

चौपैया छन्दः कविकुलचन्द्रः कथयति पिङ्गलनागः,
कुरु सप्तचतुष्कलगणमिह पुष्कलमधिगुरुचरणविभागः ।
इह दिग्वसुसूर्यैः पण्डितवर्यैर्यतिरिह मात्रास्त्रिंशत्,
यस्मिन् किल[5] कथिते कविजनमथिते राजति नृपवरसंसत् ॥२५॥
या विंशत्यधिकशतैर्मात्राणामेकपादेषु ।
सा चौपैया न्यस्यादशीत्यधिकशतचतुष्टयकलाकाः ॥ २६ ॥

यथा–

चेतः स्मरमहितं कमलासहितं दारितदारुणकंसं,
हृतधेनुकदानवमिच्छामानवमृषिजनमानसहंसम् ।
यमुनावरतीरे तरलसमीरे कारितगोपीरासं,
भवबाधाहरणं राधारमणं कुन्दकुसुमसमहासम् ॥

व्रजजनकुलपालं लालितवालं वादितमृदुरववंशं,[6]
रोचनयुतभालं धृतवनमालं शोभिततरलवतंसम् ।
दितिजव्रजकालं वादिततालं कृतसुरमुनिगणशंसं,
रुचिकलितंतमालं जितघनजालं भासितयादववंशम् ॥

सरसीरुहनयनं जगतामयनं कण्ठतलस्थितहारं,
धृतगोपसुवेषं कुञ्चितकेशं स्मितजितनवघनसारम् ।

---

१. ग. दयितोदन्तमिदानीं । २. ख. ग. न सहनमिदं दुःखं मरणं शरणमनुगतं । ३. ग. नास्ति पाठः । ४. ख. ग झटिति । ५. ग. कल । ६. ग. मृदुतरवंशं ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

जितनयनचकोरं नन्दकिशोरं गोपीमानसचोरं,
कृतराधाधारं सज्जनतारं दितिसुतनाशकठोरम् ॥
नवकलितकदम्बं जगदवलम्बं सेवितयमुनातीरं,
नन्दितसुरवृन्दं जगदानन्दं गोपीजनहृतचीरम् ।
धृतधरणीवलयं करुणानिलयं दन्तविनिर्जितहीरं,
भवसागरपारं भुवनागारं नन्दसुतं यदुवीरम् ॥ २७ ॥

इति चौपैया

६. घत्ता

पिङ्गलकविकथिता त्रिभुवनविदिता घत्ता द्विरसकला भवति ।
कुरु सप्तचतुष्कल-मन्तात्रिकल-त्रिलघुकमेतदपि द्विपदि ॥ २८ ॥
प्रथमं दशसु यतिः स्याद् वसुमात्राभिर्द्वितीयाऽपि ।
दहनावनिभिः पुनरपि यतिरिह(य)मेकार्द्धघत्तायाः ॥ २९ ॥

यथा–

भवबाधाहरणं राधारमणं नन्दकिशोरं स्मर हृदय ।
यमुनायास्तीरे तरलसमीरे कृतमनुरासं त्वमनुसर[1] ॥ ३० ॥

इति घत्ता ।

७. घत्तानन्दम्

अहिपतिपिङ्गलकथितमयुतगुणयुतमिह भवति घत्तानन्दम् ।
यद्येकादशविरतिर्मुनिषु च भवति यतिरधिकजनितानन्दम् ॥ ३१ ॥
आदौ षट्कलमिह रचय डगणत्रयमिह धेहि ।
ठगणं डगणं द्वयमपि घत्तानन्दे धेहि ॥ ३२ ॥

यथा[2]–

दितिसुतनिवहगञ्जनमसुखभञ्जनमनुगतजनतापहरणम् ।
निखिलमानसरञ्जनमतिनिरञ्जनमस्तु किमपि महः शरणम् ॥ ३३ ॥

इति घत्तानन्दम्

८[१] काव्यम्

अथ षट्पदहेतुत्वात् काव्यं सम्यङ् निरूप्यते ।
लक्ष्यलक्षणसंयुक्तं प्रोल्लालं[3] सप्रभेदकम् ॥ ३४ ॥

---

१. ग. तमनुसर । २. ग. तद्यथा । ३. ख. ग. प्रोल्लासम् । उल्लालस्थाने ख. ग. प्रतौ सर्वत्रापि उल्लासं विद्यते ।

CC-0. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

टगणमिहादौ कलय बलधिकलत्रयमनु च कुरु ।
टगणं चान्ते रचय दहनयुतविप्रं जं कुरु ।। ३५ ।।
एकादशकलविरतिरथ दहनविधुभिरपि भवति ।
काव्यं भुजगकविरिति बुधजनसुखकरमनुवदति ।। ३६ ।।

यथा–

मुकुटविराजितचन्द्र चन्द्रकलोपमतिलकवर,
तिलकदहनवरनयन नयनजितमदनमनोहर ।
अमरनिकरकृतमनन मनननिरवधिकरुणाकर,
करधृतमनुजकपाल विवुधजनतिमिरविभाकर ।। ३७ ।।

६. उल्लालम्

आदौ त्रयस्तुरंगास्तदनु त्रिकलो रसस्तथा तुरगः ।
त्रिकलश्चान्ते यस्मिन्नुल्लालं तं विजानीयात् ।। ३८ ।।
षट्पदवृत्तं द्वाभ्यां वृत्ताभ्यां जायते यस्मात् ।
काव्योल्लालौ तस्मान्निरूपितौ वृत्तमौक्तिके स्फुटतः ।। ३९ ।।
प्रस्तारस्तु द्विधा प्रोक्तो गुरुलघ्वादिभेदतः ।
अत्र लघ्वादिभेदेन प्रस्तारपरिकल्पना ।। ४० ।।
चतुरधिका इह चत्वारिंशद् गुरवो भवन्ति काव्येऽस्मिन् ।
यद् गुरुहीनं वृत्तं शक्रं तन्नामतो वृत्तम्[1] ।। ४१ ।।

यथा –

अभिनवजलधरपटलसदृशतर कनकवसनधर,
परिणतशशधरवदन समरविधिकरणचतुरतर ।
अविरतवितरणनिपुण सकलरिपुकुलवनकरिवर,
विदलितगजदलतुरग विगतभय जय जय यदुवर ।। ४२ ।।

काव्यस्य पञ्चचत्वारिंशद्भेदाः

यथा यथाऽस्मिन् वलयो विवर्द्धते,
तथा तथा नाम विधिर्विधीयताम् ।
पठन्तु[2] शम्भुः प्रथमं ततो बुधाः,
भृङ्गं तदन्ते श्रुतियुग्मसम्भवम् ।। ४३ ।।

---

१. ग. वित्तं । २. ख. ग. पठन्ति ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

आदाय गुरुविहीनं शक्रं भेदान् बुधाः पठत ।
इन्द्रियवेदैर्गणितान् नागाधिपपिङ्गलप्रोक्तान् ।। ४४ ।।
अथ लघुयुग्मविलोपा[1]देकैकगुरोर्विवृद्धितः क्रमशः ।
वाणाम्वुधिपरिगणिता भेदाः सम्यक् प्रदर्श्यन्ते ।। ४५ ।।

यथा—

शक्रः शम्भुः सूर्यो गण्डः स्कन्धस्तथा विजयः ।
तालाङ्क-दर्प-समराः सिंहः शेषस्तथोत्तेजाः ।। ४६ ।।
प्रतिपक्षः परिधर्मो मराल-दण्डौ मृगेन्द्रश्च ।
मर्कट-मदनौ राष्ट्रो वसन्त-कण्ठौ मयूरोऽपि ।। ४७ ।।
बन्धो भ्रमरोऽपि तथा भिन्नोऽयं स्यान्महाराष्ट्रः ।
बलभद्रोऽपि च राजा वलितो रामस्तथा च मन्थानः ।। ४८ ।।
मोहो बली ततः स्यात् सहस्रनेत्रस्तथा वालः ।
दृप्तः शरभो दम्भो दिवसोद्दम्भौ तथा च वलिताङ्कः ।। ४९ ।।
तुरगो हरिणोऽप्यन्धो भृङ्गश्चैते प्रसंख्याताः ।
वास्तुकाख्ये छंदसि बाणाम्बुधिर्भिमिता भेदाः ।। ५० ।।
पादे यत्यनुरोधात् तृतीयजगणानुरोधाच्च ।
वेदाङ्कलघुकयुक्तश्चन्द्रगुरुर्यः स आद्यः स्यात् ।। ५१ ।।
शरवेदमिता भेदाः काव्यवृत्तस्य दर्शिताः ।
उदाहरणमञ्जर्यां बोध्यैतेषामुदाहृतिः ।। ५२ ।।*

इति काव्यम् ।

---

१. ग. हृासाद ।

टिप्पणीः— भट्टलक्ष्मीनाथप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे काव्यवृत्तस्य गुरुवृद्धि-लघुह्रासक्रमेण पञ्चचत्वारिंशद्भेदानां वर्गीकरणम्—

१ शक्रः	० गुरु	९६ लघु	९६ अक्षर
२ शम्भुः	१ गुरु	९४ लघु	९५ अक्षर
३ सूर्यः	२ गुरु	९२ लघु	९४ अक्षर
४ गण्डः	३ गुरु	९० लघु	९३ अक्षर
५ स्कन्धः	४ गुरु	८८ लघु	९२ अक्षर
६ विजयः	५ गुरु	८६ लघु	९१ अक्षर
७ दर्पः	६ गुरु	८४ लघु	९० अक्षर
८ तालाङ्कः	७ गुरु	८२ लघु	८९ अक्षर
९ समरः	८ गुरु	८० लघु	८८ अक्षर
१० सिंहः	९ गुरु	७८ लघु	८७ अक्षर

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

११ शेषः	१० गुरु	७६ लघु	८६ अक्षर
१२ उत्तेजाः	११ गुरु	७४ लघु	८५ अक्षर
१३ प्रतिपक्षः	१२ गुरु	७२ लघु	८४ अक्षर
१४ परिधर्मः	१३ गुरु	७० लघु	८३ अक्षर
१५ मरालः	१४ गुरु	६८ लघु	८२ अक्षर
१६ मृगेन्द्रः	१५ गुरु	६६ लघु	८१ अक्षर
१७ दण्डः	१६ गुरु	६४ लघु	८० अक्षर
१८ मर्कटः	१७ गुरु	६२ लघु	७९ अक्षर
१९ मदनः	१८ गुरु	६० लघु	७८ अक्षर
२० महाराष्ट्रः	१९ गुरु	५८ लघु	७७ अक्षर
२१ वसन्तः	२० गुरु	५६ लघु	७६ अक्षर
२२ कण्ठः	२१ गुरु	५४ लघु	७५ अक्षर
२३ मयूरः	२२ गुरु	५२ लघु	७४ अक्षर
२४ बन्धः	२३ गुरु	५० लघु	७३ अक्षर
२५ भ्रमर;	२४ गुरु	४८ लघु	७२ अक्षर
२६ द्वितीयो महाराष्ट्रः	२५ गुरु	४६ लघु	७१ अक्षर
२७ बलभद्रः	२६ गुरु	४४ लघु	७० अक्षर
२८ राजा	२७ गुरु	४२ लघु	६९ अक्षर
२९ वलितः	२८ गुरु	४० लघु	६८ अक्षर
३० रामः	२९ गुरु	३८ लघु	६७ अक्षर
३१ मन्थानः	३० गुरु	३६ लघु	६६ अक्षर
३२ बली	३१ गुरु	३४ लघु	६५ अक्षर
३३ मोहः	३२ गुरु	३२ लघु	६४ अक्षर
३४ सहस्राक्षः	३३ गुरु	३० लघु	६३ अक्षर
३५ बालः	३४ गुरु	२८ लघु	६२ अक्षर
३६ दृप्तः	३५ गुरु	२६ लघु	६१ अक्षर
३७ शरभः	३६ गुरु	२४ लघु	६० अक्षर
३८ दम्भः	३७ गुरु	२२ लघु	५९ अक्षर
३९ अहः	३८ गुरु	२० लघु	५८ अक्षर
४० उद्दम्भः	३९ गुरु	१८ लघु	५७ अक्षर
४१ वलिताङ्कः	४० गुरु	१६ लघु	५६ अक्षर
४२ तुरङ्गः	४१ गुरु	१४ लघु	५५ अक्षर
४३ हरिणः	४२ गुरु	१२ लघु	५४ अक्षर
४४ अन्धः	४३ गुरु	१० लघु	५३ अक्षर
४५ भृङ्गः	४४ गुरु	८ लघु	५२ अक्षर

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१०. षट्पदम्

षट्पदवृत्तं कलय सरसकविपिङ्गलभणितं,
एकादश इह विरतिरथ च दहनैर्विधुगणितम् ।
षट्कलमादौ तदनु चतुस्तुरगं परिसंतनु,
शेषे द्विकलं रचय चतुष्पदमेवं संचिनु ॥
उल्लालद्वयमत्र हि भवेदष्टाविंशतिकलयुतम् ।
यदि पञ्चदशे विरतिस्थितं पठनादपि गुणिगणहितम् ॥ ५३ ॥

दहनगणनियमविरहितकाव्यं सोल्लालचरणयुगलेन ।
कथयति पिङ्गलनागः षट्पदवृत्तं मनोहारि ॥ ५४ ॥

यथा–

जय जय नन्दकुमार मारसुन्दर वरलोचन,
लोचनजितनवकंज कञ्जनिभशय भवमोचन ।
नूतनजलधरनील शीलभूषित गतदूषण,
दूषणहर धृतभाल भालभूषितवरभूषण ॥
दूषणगणमिह[1] मम निखिलमपि कुरु दूरे नन्दकिशोर ।
तव चरणकमलयुगलमनुदिनमनुसेवे नयनचकोर ॥ ५५ ॥

षट्पदवृत्तस्यैकसप्ततिर्भेदाः

वेदयुग्मगुरून् काव्यादुल्लालाद् रसपक्षकान् ।
आदाय तस्य स्थाने तु लघुद्वयनिवेशतः[2] ॥ ५६ ॥
भेदाः स्युर्भू मिमुनिभिर्गृ हीत्वान्त्यं तु सर्वलम् ।
आद्यस्तु रविलो बिन्दुर्मु निगः सोऽजयः स्मृतः ॥ ५७ ॥
विजय-बलि-कर्ण-वीरा वैताल-बृहन्नरौ मर्क्कः ।
हरि-हर-विधीन्दु-चन्दन-शुभङ्कराः श्वा च सिंहश्च ॥ ५८ ॥
शार्दू ल-कूर्म-कोकिल-खर-कुञ्जर-मदन-मत्स्य-तालाङ्काः ।
शेषः सारङ्गोऽपि च पयोधरः कुन्द-कमले च ॥ ५९ ॥
वारण-जङ्गम-शरभास्तथा द्युतीष्टोऽपि दाता च ।
शर-सुशर-समर-सारस-शारद-मद-मदकरा मेरुः ॥ ६० ॥
सिद्धिर्बु द्धिः करतल-कमलाकर-धवल-मानस-ध्रुवकाः ।
कनकं कृष्णो रञ्जन-मेघकर-ग्रीष्म-गरुड-शशि-सूर्याः ॥ ६१ ॥

---

१. ग. दूषणमिह । २. ग. निवेशितः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

शल्यो नवरङ्ग-मनोहरौ गगन-रत्न-नर-हीराः ।
भ्रमरः शेखर-कुसुमाकरौ ततो दीप्त-शंख-वसु-शब्दाः ।। ६२ ।।
इति भेदाभिधाः पित्रा रचितायामपि स्फुटम् ।
उदाहरणमञ्जर्यामुक्तं तासामुदाहृतिः* ।। ६३ ।।

इतिषट्पदम् ।

---

*टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे षट्पदच्छन्दसः गुरुह्रास-लघुवृद्धिपरिपाट्या एकसप्ततिभेदानामुदाहरणानि—

१ अजयः	७० गुरु	१२ लघु	८२ अक्षर
२ विजयः	६९ गुरु	१४ लघु	८३ अक्षर
३ बलिः	६८ गुरु	१६ लघु	८४ अक्षर
४ कर्णः	६७ गुरु	१८ लघु	८५ अक्षर
५ वीरः	६६ गुरु	२० लघु	८६ अक्षर
६ वैतालः	६५ गुरु	२२ लघु	८७ अक्षर
७ वृहन्नलः	६४ गुरु	२४ लघु	८८ अक्षर
८ मर्कटः	६३ गुरु	२६ लघु	८९ अक्षर
९ हरिः	६२ गुरु	२८ लघु	९० अक्षर
१० हरः	६१ गुरु	३० लघु	९१ अक्षर
११ ब्रह्मा	६० गुरु	३२ लघु	९२ अक्षर
१२ इन्दुः	५९ गुरु	३४ लघु	९३ अक्षर
१३ चन्दनम्	५८ गुरु	३६ लघु	९४ अक्षर
१४ शुभङ्करः	५७ गुरु	३८ लघु	९५ अक्षर
१५ श्वा	५६ गुरु	४० लघु	९६ अक्षर
१६ सिंहः	५५ गुरु	४२ लघु	९७ अक्षर
१७ शार्दूलः	५४ गुरु	४४ लघु	९८ अक्षर
१८ कूर्मः	५३ गुरु	४६ लघु	९९ अक्षर
१९ कोकिलः	५२ गुरु	४८ लघु	१०० अक्षर
२० खरः	५१ गुरु	५० लघु	१०१ अक्षर
२१ कुञ्जरः	५० गुरु	५२ लघु	१०२ अक्षर
२२ मदनः	४९ गुरु	५४ लघु	१०३ अक्षर
२३ मत्स्यः	४८ गुरु	५६ लघु	१०४ अक्षर
२४ तालाङ्कः	४७ गुरु	५८ लघु	१०५ अक्षर
२५ शेषः	४६ गुरु	६० लघु	१०६ अक्षर
२६ सारङ्गः	४५ गुरु	६२ लघु	१०७ अक्षर
२७ पयोधरः	४४ गुरु	६४ लघु	१०८ अक्षर

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

काव्यषट्पदयोर्दोषाः

काव्यषट्पदयोश्चापि दोषाः पन्नगभाषिताः ।
वक्ष्यन्ते यान् विदित्वैवं काव्यं कर्त्तुमिहार्हति ॥ ६४ ॥
पददुष्टो भवेत्पङ्गुः कलाहीनस्तु खञ्जकः ।
कलाधिको वातूलः स्यात् तेन शून्यफलश्रुतिः ॥ ६५ ॥
अन्धोऽलङ्काररहितो बधिरो फलवर्जितः ।
प्राकृते संस्कृते चाऽपि विज्ञेयं पददूषणम् ॥ ६६ ॥
गणोट्टवणिका यस्य पञ्चत्रिकलका भवेत् ।
स मूकः कथ्यतेऽर्थेन विना स्याद् दुर्बलस्तथा ॥ ६७ ॥

---

२८ कुन्दः	४३ गुरु	६६ लघू	१०९ अक्षर
२९ कमलम्	४२ गुरु	६८ लघु	११० अक्षर
३० वारणः	४१ गुरु	७० लघु	१११ अक्षर
३१ शरभः	४० गुरु	७२ लघु	११२ अक्षर
३२ जङ्गमः	३९ गुरु	७४ लघु	११३ अक्षर
३३ द्युतीष्टम्	३८ गुरु	७६ लघु	११४ अक्षर
३४ दाता	३७ गुरु	७८ लघु	११५ अक्षर
३५ शरः	३६ गुरु	८० लघु	११६ अक्षर
३६ सुशरः	३५ गुरु	८२ लघु	११७ अक्षर
३७ समरः	३४ गुरु	८४ लघु	११८ अक्षर
३८ सारसः	३३ गुरु	८६ लघु	११९ अक्षर
३९ शारदः	३२ गुरु	८८ लघु	१२० अक्षर
४० मेरुः	३१ गुरु	९० लघु	१२१ अक्षर
४१ मदकरः	३० गुरु	९२ लघु	१२२ अक्षर
४२ मदः	२९ गुरु	९४ लघु	१२३ अक्षर
४३ सिद्धिः	२८ गुरु	९६ लघु	१२४ अक्षर
४४ बुद्धिः	२७ गुरु	९८ लघु	१२५ अक्षर
४५ करतलम्	२६ गुरु	१०० लघु	१२६ अक्षर
४६ कमलाकरः	२५ गुरु	१०२ लघु	१२७ अक्षर
४७ धवलः	२४ गुरु	१०४ लघु	१२८ अक्षर
४८ मनः	२३ गुरु	१०६ लघु	१२९ अक्षर
४९ ध्रुवः	२२ गुरु	१०८ लघु	१३० अक्षर
५० कनकम्	२१ गुरु	११० लघु	१३१ अक्षर
५१ कृष्णः	२० गुरु	११२ लघु	१३२ अक्षर

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

हठात्कृष्टाऽक्षरैश्चापि कठोरः केकरोऽपि च ।
श्लेषः प्रसादादिगुणैर्विहीनः काण उच्यते ॥ ६८ ॥
सर्वैरङ्गैः समः शुद्धः स लक्ष्मीकः स रूपवान् ।
काव्यात्मा पुरुषः कोऽपि राजते वृत्तमौक्तिके ॥ ६९ ॥
दोषानिमानविज्ञाय यस्तु काव्यं चिकीर्षति ।
न संसदि स मान्यः स्यात् कवीनामतदर्हणः ॥ ७० ॥
एते दोषाः समुद्दिष्टाः संस्कृते प्राकृतेऽपि च ।
विशेषतश्च तत्रापि केचित्प्राकृत एव हि ॥ ७१ ॥

इति शाल्मलीप्रस्तारे द्वितीयं षट्पदप्रकरणं समाप्तम् ।

---

५२ रञ्जनम्	१९ गुरु	११४ लघु	१३३ अक्षर
५३ मेघकरः	१८ गुरु	११६ लघु	१३४ अक्षर
५४ ग्रीष्मः	१७ गुरु	११८ लघु	१३५ अक्षर
५५ गरुड़ः	१६ गुरु	१२० लघु	१३६ अक्षर
५६ शशी	१५ गुरु	१२२ लघु	१३७ अक्षर
५७ सूर्यः	१४ गुरु	१२४ लघु	१३८ अक्षर
५८ शल्यः	१३ गुरु	१२६ लघु	१३९ अक्षर
५९ नवरङ्गः	१२ गुरु	१२८ लघु	१४० अक्षर
६० मनोहरः	११ गुरु	१३० लघु	१४१ अक्षर
६१ गगनम्	१० गुरु	१३२ लघु	१४२ अक्षर
६२ रत्नम्	९ गुरु	१३४ लघु	१४३ अक्षर
६३ नरः	८ गुरु	१३६ लघु	१४४ अक्षर
६४ हीरः	७ गुरु	१३८ लघु	१४५ अक्षर
६५ भ्रमरः	६ गुरु	१४० लघु	१४६ अक्षर
६६ शेखरः	५ गुरु	१४२ लघु	१४७ अक्षर
६७ कुसुमाकरः	४ गुरु	१४४ लघु	१४८ अक्षर
६८ दीपः	३ गुरु	१४६ लघु	१४९ अक्षर
६९ शङ्खः	२ गुरु	१४८ लघु	१५० अक्षर
७० वसुः	१ गुरु	१५० लघु	१५१ अक्षर
७१ शब्दः	० गुरु	१५२ लघु	१५२ अक्षर (१५२मात्रा)

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तृतीयं रड्डा-प्रकरणम्

१. पज्झटिका

डगणाश्चतुरः पादे विधेहि,
अन्ते गणमिह मध्यगमवेहि ।
इति पज्झटिका निखिलचरणेषु,
षोडशमात्रा सर्वचरणेषु ।। १ ।।

यथा–

गाङ्गं वन्द्यं परिजयति वारि,
निखिलजनानां दुरितविनिवारि[1] ।
भवमुकुटविराजिजटाविहारि,
मज्जज्जनमानसतापहारि ।। २ ।।

इति पज्झटिका ।

२. अडिल्ला[2] [अरिल्ला]

सर्वे डगणा अरिल्ला छन्दसि,
नायकमत्र नयति तं नन्दसि ।
षोडशमात्रा विदिता यस्मि-
न्नन्ते सुप्रियमपि कुरु तस्मिन् ।। ३ ।।

यथा–

हरिरुपगत इति सखि ! मयि वेदय,
कुञ्जगृहोदरगतमपि खेदय ।
इह यदि सपदि सविधमुपयास्यति,
रदवसनामृतमिदमनुपास्यति ।। ४ ।।

इति अरिल्ला ।

३. पादाकुलकम्

गुरुलघुकृतगण[3]-नियमविरहितं,
फणिपतिनायकपिङ्गलगदितम् ।
रसविधुकलयुतयमकितचरणं,
पादाकुलकं श्रुतिसुखकरणम् ।। ५ ।।

---

१. ग. विनिवासव । २. ग. अडल्ला । ३. ग. गुण ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

जलभरदान[1]-हृरितवनभागः,
शीतलमारुतकृतपरभागः[2] ।
चञ्चलचपलाधूतवनमालः,
समुपागत इह जलधरकालः ।। ६ ।।

इति पादाकुलकम् ।

४. चौबोला

रसविधुकलकमयुगमवधारय,
सममपि वेदविधूपमितम् ।
सर्वमपि षष्टिकलं विचारय,
चौबोलाख्यं फणिकथितम् ।। ७ ।।

यथा–

दिशि दिशि विलसति जलधरगर्जित-
मथ तांकेका राजयते ।
सा मम चेतः कुरुते तर्जित-
मपि कां कान्तो भासयते ।। ८ ।।

इति चौबोला ।

५. रड्डा[3]

विषमचरणेषु ढगण[4]मुपनय
डगणत्रयमनुविरचय
जगणमुत[5] विप्रमन्त्यमुपनय
डगणत्रयमपि रचय
समेऽन्ते[6] सर्वलघु विरचय ।
दोहाचरणचतुष्टयं तेषामन्ते धेहि ।
फणिपतिपिङ्गलभाषितं रड्डा[7]वृत्तमवेहि ।। ९ ।।

विषमः शरविधुमात्रो द्वादशमात्रास्तथा द्वितीयोऽपि ।
तुर्यो रुद्रकलाकः प्रथमान्ते जगणविप्रनियमः स्यात् ।। १० ।।

---

१. जलधरदाव । २. परिभागः । ३. ग. प्रवरज । ४. ग. टगण । ५. ग. मनु । ६. ख. ग. समं ते । ७. ग. रण्डा । ग. प्रतौ रड्डायाः स्थाने सर्वत्रापि रण्डायाः प्रयोगो विद्यते ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अपरान्ते लघुयुगनियमः स्यात् कलाद्वयम् ।
समादौ स्याच्चतुर्थान्ते त्रिलघुर्गण ईरितः ॥ ११ ॥

यथा–

पिकरुतमिदमनुविलसति दिक्षु
किंशुककलिका विकसति[1]
वहति मलयमरुदयमपि सुलघु
विरुतमलिरपि कलयति
विकसति मञ्जुल[2]मञ्जरिरपि च ।
इति मधुरनुवनमनुसरति बहुलीभूय सुकेशि !
हरिरपि विनमति चरणयुगमनुसर तं हृदयेशि ! ॥ १२ ॥

रड्डायाः सप्तभेदाः

अथैतस्याः सप्तभेदाः कथ्यन्ते पिङ्गलोदिताः ।
यान् विधाय कविः काव्यगोष्ठ्यां बहुमतो भवेत् ॥ १३ ॥
प्रथमा करभी प्रोक्ता ततो नन्दा च मोहिनी ।
चारुसेना चतुर्थी स्यात्तथा[3] भद्रापि पञ्चमी ॥ १४ ॥
राजसेना तु षष्ठी स्यात् तथा तालङ्किनी मता ।
सप्तमी कथिता रड्डा भेदा लक्षणमुच्यते ॥ १५ ॥

५[१] करभी

विषमेऽग्निविधुकलाको रुद्रकलाको द्वितीयोऽपि ।
तुर्योऽपि रुद्रमात्रः पञ्चपदानीह कथितानि ॥ १६ ॥
एवं पञ्चपदानामग्रे दोहापि यस्यास्ताम् ।
करभीति नागराजः कथयति गणकल्पना तु दोहावत् ॥ १७ ॥

इति करभी ।

५[२] नन्दा

विषमेषु वेदविधुभिर्द्वितीयतुर्यौ च रुद्रमात्राभिः ।
अग्रे दोहा यस्यां[4] तां नन्दामामनन्ति वृत्तज्ञाः ॥ १८ ॥

इति नन्दा ।

---

१. ग. विलसति । २. घ मञ्जुर । ३. ख. ग. अथ । ४. ग. यस्याः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

५[३] मोहिनी

अयुजि पदे नवमात्राः समेऽपि दिग्रुद्रसंख्याभिः ।
पुरतो दोहा यस्यां शेषस्तां मोहिनीमाह ॥ १९ ॥

इति मोहिनी ।

५[४] चारुसेना

असमपदे शरचन्द्राः[1] समयोरेकादशैव यस्यास्ताम् ।
दोहाविरचितशीर्षां भणति फणीन्द्रस्तु[2] चारुसेनेति ॥ २० ॥

इति चारुसेना ।

५[५] भद्रा

विषमेषु पञ्चदशभिर्द्वितीयतुर्यौ च सूर्यसंख्याभिः ।
या दोहाङ्कितशीर्षा सा भद्रा भवति पिङ्गलेनोक्ता ॥ २१ ॥

इति भद्रा ।

५[६] राजसेना

पूर्ववदेव हि विषमे समे क्रमादेव सूर्यरुद्रैश्च ।
पूर्ववदेव हि दोहा यत्र स्याद् राजसेना सा ॥ २२ ॥

इति राजसेना ।

५[७] तालङ्किनी

विषमे पदेषु (च) यस्यां षोडशमात्रा विराजन्ते ।
पूर्ववदेव हि समयोर्दोहाऽपि च पूर्ववद्भवति ॥ २३ ॥
तालङ्किनीति कथिता सा रड्डा नागराजेन ।
एवं सप्तविभेदा विविच्य सम्यक् प्रदर्शिताः क्रमशः[3] ॥ २४ ॥
उदाहरणमेतेषां ग्रन्थविस्तरशङ्कया ।
नोक्तं सुबुद्धिभिस्तद्धि[4] स्वयमूह्यं[5] महात्मभिः ॥ २५ ॥

इति श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिके[6] तृतीयं रड्डा[7]-प्रकरणं समाप्तम् ।

---

१. ग. चन्द्रौ । २. ख. ग. च. । ३. ग. क्रमतः । ४. म. तद् । ५. ग. विरचया ।
६. ग. 'वार्तिके' नास्ति । ७. ग. यईडा ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

चतुर्थं पद्मावती-प्रकरणम्

१. पद्मावती

यदि योगडगणकृत-चरणविरचित-द्विजगुरुयुगकरवसुचरणाः,
नायकविरहितपद-कविजनकृतमद-पठनादपि मानसहरणा।
इह दशवसुमनुभिः[1] क्रियते कविभिर्विरतिर्यदि युगदहनकला,
सा पद्मावतिका फणिपतिभणिता त्रिजगति राजति गुणबहुला ॥ १ ॥

यथा[2] –

करयुगधृतवंशी रुचिरवतंसी गोवर्द्धनधारणशीलः,
प्रियगोपविहारी भवसन्तारी वृन्दावनविरचितलीलः।
धृतवरवनमाली निजजनपाली वरयमुनाजलरुचिशाली[3],
मम मङ्गलदायी कृतभवमायी[4] वरभूषणभूषितभालो[5] ॥ २ ॥

इति पद्मावती।

२. कुण्डलिका

दोहाचरणचतुष्टयं प्रथमं नियतमवेहि,
कुण्डलिकां फणिरनुवदति काव्यं तदनु विधेहि।
काव्यं तदनु विधेहि पदं प्रतियमकितचरणं,
तदुभयविरतौ भवति पुनरपि च[6] तदुभयपठनम्।
तदुभयसुपठनसमयरचितकरकविजनमोहा।
कुण्डलिका सा भवति भवति यदि पूर्वं दोहा ॥ ३ ॥

यथा–

चरणं शरणं भवतु तव मुरलीवादनशील,
सुरगणवन्दितचरणयुग वनभुवि विरचितलील।
वनभुवि विरचितलील दुष्टजनखण्डनपण्डित,
दुर्जनजनहृदि कील गण्डयुगकुण्डलमण्डित।
दुर्जनजनहृदि कील[7] भीतभयतापविहरणं[8],
मुनिजनमानसहंस हरतु मम तापं चरणम्[9] ॥ ४ ॥

---

१. ग. मुनिभिः। २. ग. तद्यथा। ग. प्रतौ यथा शब्दस्य स्थाने सर्वत्र तद्यथा पाठो दृश्यते। ३. ग. माली। ४. ग. भववरदायी। ५. ग. माली। ६. ग. नास्ति पाठः। ७. ग. नास्ति पाठः। ८. ख. विहरण। ९. ख. चरणः ग. वरणम्।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

३. गगनाङ्गणम्

टगण[1]मिहादौ रचयत विरमित[2]विनतानन्दनं[3],
मध्ये नियमविरहितं रविकृतयति कविवन्दनम्[4] ।
शरपक्षकलितकलाक[5]-नखमित[6]-वर्णविकासितं,
गगनाङ्गणमिदं भवति फणिपतिपिङ्गलभाषितम् ।। ५ ।।

यथा –

मानसमिह मम कृन्तति कोकिलविरुतमकारणं,
कलितशरासनसायकमतनुः कलयति मारणम् ।
मधुसमये कथमपि[7] सखि[8] ! जीवं निजमपि धारये,
रुचिरमधुभिदमन्तरा क्षणमपि सोढुमपारये ।। ६ ।।

इति गगनाङ्गणम् ।

४. द्विपदी

आदौ टगणसमुपरचितं तदनु च शरडगणसुविहितम् ।
गान्तं द्विपदीवृत्तं वसुपक्षकलं फणिपतिभणितम्[9] ।। ७ ।।

यथा–

मम मानसमभिलषति सखि-कृतरासकेलिरसनायके ।
निजरुचिजितनूतनजलधर-मुरलीनादसुखदायके ।। ८ ।।

इति द्विपदी ।

५. झुल्लणा[10]

प्रथममिह दशसु यतिरनु च तदवधि भवति,
तदुपरि च मुनिविधुभिरत्र युक्ता ।
इति[11] हि विधियुगदला मुनिदहनकृतकला
झुल्लणा भवति गणनियममुक्ता ।। ९ ।।

यथा–

करविधृतवंशरवकृतहृदय-चित्तभव
गोकुलानन्दकररुचिररासे ।

---

१. ग. ढगण । २. ग. विरचित । ३. ग. विनतानन्द । ४. ग. कविवन्द । ५. ग. कलां । ६. ग. नक्षमिति । ७. ग. कथितमपि । ८. ग. सखी । ९. ग. भाषितम् । १०. ग. झुल्लणा । ११. ग. इह ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

मम सविधमुपयासि मम वचनमनुपासि
वल्लवीरभिभूय जनितदासे[1] ।। १० ।।

इति झुल्लणा* ।

---

१. ग. हासे ।

*टिप्पणी—श्रीकृष्णभट्टेन वृत्तमुक्तावल्यां द्वितीयगुम्फेऽस्य छन्दसः झुल्लणा-उपझुल्लणा-सुझुल्लन-अतिझुल्लननामभिश्चत्वारो भेदाः प्रदर्शितास्ते चात्राविकलं समुद्ध्रियन्ते—

अथ झुल्लनच्छन्दः

यस्य चरणे सप्त पञ्चकलास्ततो द्वे कले तज् झुल्लनं नाम। यद्यपि पञ्चकलभेदा अविशेषेणैव गृहीतास्तथापि प्रतिगणं द्वितीया कला परया कलया मिश्रितोद्वेजिकेत्यनुभवसाक्षिकम् ।

यथा–

शेषपतगेशविबुधेशभुवनेशभूतेशसविशेषसुनिदेशधरणी,
कन्दलितसुन्दरानन्दमकरन्दरसमज्जनमिलिन्दभवसिन्धुतरणी ।
ज्ञानमण्डनपरा कर्मखण्डनधरा शमनदण्डनपरा भूतिहरणी,
नित्यमिह वक्ति मुनिवृन्दमनुरक्तिमज्जयति हरिभक्तिरासक्तिकरणी ।। ६१ ।।

अष्टत्रिंशत् कलं उपझुल्लम् । तस्मिंश्चोपान्त्यो गुरुरन्त्यो लघुर्नियतः ।

यथा–

चण्डभुजदण्डसदखण्डकोदण्ड(श)शिखण्डशरखण्डझरदण्डितविपक्ष,
पर्वभृतशर्वरीनाथरुचिगर्वहरसर्वहृदखर्वसुखलीलनवलक्ष ।
दुष्टनररुष्टतरपुष्टनयजुष्टजनतुष्टमतिघुष्टचरितौघकृतिदक्ष,
तत्क्षणसमक्षकृतरक्षणसपक्षगणलक्षितसुलक्षण जयेश गतलक्ष ।। ६२ ।।

कलाद्वयाधिक्येन एकोनचत्वारिंशत्कलचरणमपि संभवति, तच्च सुझुल्लनं नाम ।

यथा–

चूतनवपल्लवकषायकलकण्ठबलमञ्जुकलकोकिलाकूजितनिदानं,
माधुरीमधुरमधुपानमत्तालिकुलवल्लकीतारझङ्कारसुखदानम् ।
चारुमलयाचलोद्यातपवमानजवजागरितचित्तभवसायकवितानम्,
पश्य सखि पश्य कुसुमाकरमुदित्वरं मा कलय मानसे मानमतिमानम् ।। ६३ ।।

चत्वारिंशत्कलं अतिझुल्लनमपि स्वीकार्यम् ।

यथा–

कासकैलाससविलासहरहासमधुमाससविकाससितसारससमानगति,
शारदतुषारकरसारघनसारभरहारहिमपारदविसारसमुदारमति ।
बालकमृणालमृदुमालतीजालरुचिचालितविशालविबुधालयमरालतति,
राजमगराजवर राजते तव यशो राम सुरराजसमभाजितसमाजनति ।। ६४ ।।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

६. खञ्ज

नवजलधिकलमितगणमिह[1] समुपनय
तदनु च कुरुत रगणमपि फणिभणितखञ्जके ।
इति विधिविरचितदलयुगमिह भवति
निखिलभुवनगतवरकविजनहृदयसुखसञ्जके ॥ ११ ॥

यथा–

निजतनुरुचिविजितनवजलधररुचि-
विधृतरुचिरतर[2]मुकुट हरिरिह मम हृदि भासताम् ।
मम हृदयमविरतमनुभवतु तव
निजजनसुखवितरणरसिकचरणसरसिजदासताम् ॥ १२ ॥

इति खञ्जा ।

७. शिखा

रसजलधिकलमुपनयत फणिरिति वदति सकलकविसखा हि ।
अपरदलमथ मुनिकृतमुभयमपि जगणविरतिगमिति[3] भवति शिखा हि ॥१३

यथा–

विकचनलिनगतमधुरमधुकरकलरवमनुकलय सुकेशि !
हरिरिति विनमति चरणयुगमपि मयि[4] कुरु हृदयमपरुषमति[5] सुवेषि! ॥१४।

इति शिखा ।

८. माला

जलनिधिकलमिह[6] नवगणमुपनय तदनु च
रगणमपि हि गुरुयुगगणमथ कुरु पिङ्गलप्रोक्तम् ।
गाथोत्तरार्द्धसहितं मालावृत्तं विजानीहि ॥ १५ ॥

यथा–

त्रपितहृदय करयुगकृतवसन वसनहरण-
परवशयुवतिकृतविनतिरभयमान्ततद्वासाः[7] (?) ।
तीरे कदम्बशाली वरवनमाली हरिः पायात् ॥ १६ ॥

इति माला ।

---

१. ग. कलनगुणनगणमिह । २. ग. वर । ३. ग. विरचितमिति । ४. ग. तम् ।
५. ग. हृदि रुषमति । । ६. ग. सिंह । ७. ग. कृतत्रासः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

९. चुलिआला[1]

यदि दोहादलविरतिकृत,
शरकलकुसुमगणो हि विराजति ।
फणिनायकपिङ्गलरचित,
चुलिआला किल जातिषु राजति ।। १७ ।।

यथा–

क्षणमुपविश वनभुवि हरे,
मम पुनरागमनाऽवधि पालय ।
उपयाता[2]मिह मम सखी[3],
तामङ्के राधामुपलालय[4]।। १८ ।।

इति चुलिआला ।

१०. सोरठा

सोरठाख्यं तत्तु फणिनायक भणितं भवति ।
दोहावृत्तं यत्तु विपरीतं कविजनमवति ।। १९ ।।

यथा–

रूपविनिर्जितमार ! सकलयादवकुलपालक ! ।
जय जय नन्दकुमार ! गोपगोपीजनलालक ! ।। २० ।।

यथा वा–

गलकृतमस्तकमाल ! भालगतदहनविराजित !
जय जय हर ! भूतेश ! शेषकृतभूषणभासित ! ।। २१ ।।

इति सोरठा

११. हाकलि

सगणै[5]र्भगणैर्न्नलघुयुतैः,
सकलं चरणं प्रविरचितम्[6] ।
गुरुकेन च सर्वं कलितं,
हाकलिवृत्तमिदं कथितम् ।। २२ ।।

प्रथमद्वितीयचरणौ रुद्रार्णावथ तृतीयतुर्यौ च ।
दशवर्णौ सकलेषु च मात्रा वेदेन्दुभिः प्रोक्ताः ।। २३ ।।

---

१. ग. चूलीआला । २. ख. उपुयाता । ३. ख. ग. सखीं । ४. ग. पालय ।
५. ग. सगुणैः । ६. ग. प्रविरचितं ।

CC-0. ORI Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

विकृतभयानकवेषकलं,
चरणाङ्कितवरभूमितलम् ।
व्योमतलामलकम्बुगलं,
नौमि विभूषितभालतलम् ॥ २४ ॥

यथा वा[1]–

यमुनाजलकेलिषु कलितं,
वनिताजनमानसवलितम् ।
सुरभीगणसङ्गा[2]च्चलितं,
नौमि हृदा बलसम्मिलितम् ॥ २५ ॥

इति हाकलि ।

१२. मधुभारः

डगणमवधेहि, जगणमनु देहि ।
मधुभारमाशु, परिकलय वासु ॥ २६ ॥

यथा–

उरसि कृतमाल, भक्तजनपाल ।
रुचिजिततमाल, जय नन्दबाल ॥ २७ ॥

इति मधुभारः ।

१३. आभीरः

अन्ते जगणमवेहि,
विधुयुगकला विधेहि ।
आभीरं परिशोभि,
कविजनमानसलोभि ॥ २८ ॥

यथा –

व्रजभुवि रचितविहार,
श्रुतिशतकलितविचार ।
यदुकुलजनितनिवास,
जय भूतलकृतरास[3] ॥ २९ ॥

इत्याभीरः ।

---

१. ग उक्तञ्च । २. ग. संगात् । ३. ग. जय जय भुवि कृतरास ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१४. दण्डकला

वेदडगणविरचितमनु[1] च[2] टगणकृत[3]-मन्ते डगणद्वयविहितं,
गुरुकृतपदविरतं कविजनसुमतं दण्डकलाख्यमिदं विदितम् ।
वरफणिकुलपतिना विमलसुमतिना पक्षदहनकृतचरणकलं,
गगनेन्दुविराजित-योगविकासित-वेदावनिकृतयतिविमलम् ॥ ३० ॥

यथा–

खरकेशिनिषूदन-विनिहतपूतन-रचितदितिजकुलबलदलनं,
बाणावलिमालित-सङ्गरपालित-पार्थविलोकितशुभवदनम् ।
कृतमायामानव-रणहतदानव-दुस्तरभवजलराशितरिं,
सुरसिद्धि[4]-विधायक-यादवनायकमशुभहरं प्रणमामि हरिम् ॥ ३१ ॥

इति दण्डकला ।

१५. कामकला

यदि रसविधुमात्राणामन्ते विरतिर्भवेत्तदा सैव[5] ।
कामकलेति फणीश्वरपिङ्गलकथिता मता सद्भिः[6] ॥ ३२ ॥

यथा–

कमलाकरलालितपदकमलं निजजनहृदयविनाशित[7]शमलं,
पीतवसनपरिभासितममलं जितकम्बुमनोहरविमलगलम् ।
नाभिकमलगतविधिकृतनमनं फणिमणिकुण्डलमण्डितवदनं,
नौमि जलधिशयमतिरुचिसदनं दानवनिवहसमरकृतकदनम् ॥ ३३ ॥

इति कामकला ।

१६. रुचिरा

सप्तचतुष्कलकलितसकलदल-मन्त्याहितकुण्डलरुचिरा ।
न कुरु पयोधरमिह फणिपतिवर-भणितमिदं वृत्तं रुचिरा ॥ ३४ ॥

यथा–

कस्य तनुर्मनुजस्य सितासित-सङ्गममधिविधितः पतिता ।
यस्य कृते करभोरु विषीदसि मिहिरातपनिहिते[8]च लता ॥३५॥

इति रुचिरा ।

---

१. ग. तनु । २. ग. 'च' नास्ति । ३. ग. विरचित । ४. ग. सिद्ध । ५. ग. सैष । ६. ग. सद्भ्यः । ७. हृदयविभासित । ८. ग. विहितेव ।

CC-0. BORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१७. दीपकम्

डगणं कुरु विचित्र-
मन्ते जगणमत्र ।
मध्ये द्विलमवेहि[1],
दीपकमिति विधेहि ॥ ३६ ॥

यथा–

शेषविरचितहार,
पितृकाननविहार ।
जय जय हर ! महेश,
गौरीकृतसुवेष ! ॥ ३७ ॥

अथवा–

तुरगैकमुपधाय,
सुनरेन्द्र[2]मवधाय ।
इति[3] दीपकमवेहि,
लघुमन्तमधिधेहि ॥ ३८ ॥

यथा[4]–

क्षणमात्रमतिवल्गु,
जगदेतदतिफल्गु ।
धनलोभमपहाय,
नम पद्मनयनाय ॥ ३९ ॥

इति दीपकम् ।

१८. सिंहविलोकितम्

सगणद्विजगणविरचितचरणं,
चरणे रसभूमिकलाभरणम् ।
फणिनायकपिङ्गलभणितवरं,
वरसिंहविलोकितहृदयहरम् ॥ ४० ॥

यथा–

हतदूषणकृतजलनिधितरणं,
रणभुवि[5]कृतदानवकुलमरणम् ।
रणरणितशरासन[6]भङ्गकरं,
करकलितशिरो नम[7] देववरम् ॥४१॥

इति सिंहविलोकितम् ।

---

१. ग. द्विकलमवेहि । २. ग. सुनवेन्द्र । ३. ग. ब्रह । ४. ग. उव
५. ग. 'रण' नास्ति । ६ ग. शबासन । ग. मम ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१९. प्लवङ्गमः

आदावादिगुरुं कुरु षट्कलभाषितं,
[पञ्चकलं तदनु च डगणं विभूषितम् ।
अन्ते नायकमथ रचय गुरुविकासितं][1]
वृत्तमिदं प्लवङ्गममहिपतिसुभाषितम् ॥ ४२ ॥

यथा–

कुञ्चितचञ्चलकुन्तलकलितवराननं,
वेणुविरावविनोदविमोहित[2]काननम् ।
मण्डलनायकदानवखण्डनपण्डितं,
चिन्तय चण्डकरोपमकुण्डलमण्डितम् ॥ ४३ ॥

इति प्लवङ्गमः ।

२०. लीलावती

लघुगुरुवर्णरचित-नियमविरहित-वसुडगणकृत-चरणविरचिता,
सगणद्विजवर-जगण-भगण-गुरुयुगकृतपदमतियमकसुकथिता ।
लीलावतिका पक्षदहनकृतकला वरकविजनहृदयमहिता,
विरचितललितपद-जनहृदयकृतमद-फणिनायकपिङ्गलभणिता ॥ ४४ ॥

यथा–

गुञ्जाकृतभूषणमखिलजनहृतदूषणमधिककृतरासकलं,
करयुगधृतमुरलिं नवजलधर[3]नीलं वृन्दावनभुवि चपलम् ।
हृतगोपीमानं नारदकृतगानं लीलाबलदेवयुतं,
स्मर नन्दतनूजं सुरवरकृतपूजं मम हृदयमुनिजननुतम् ॥ ४५ ॥

इति लीलावती ।

२१[१] हरिगीतम्

चरणे प्रथमं विरचय ठगणं तदनु टगणविराजितं,
रचय शरकलं तदनु दहनमितमन्ते गुरुविकासितम् ।
वसुपक्षकलाकं कविजनसंसदि हृदयसुखदायकं,
हरिगीतमिति वृत्तमहिपतिकविनृपतिजल्पितनायकम् ॥ ४६ ॥

---

१. कोष्ठकान्तर्गतोऽयं पाठः ख. ग. प्रतावेवास्ति । पाठेऽस्मिन् पञ्चकल-चतुष्कलयोर्विधानं दृश्यते तच्च प्राकृतपैङ्गलमतविरुद्धं 'पंचमत्त चउमत्त गणा णहि किज्जए' इति नियमात् । (सं०)

२. ग. विमोदित । ३. नयनजलधर ।

CC-0. BORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

रचय कदलीदलनवशयनं कमलदलावलिमालितं,
वीजय मृदुपवनेन घनाघनसुन्दरविरहदालितम् ।
अङ्गकमपि घनसारविराजितचन्दनरचनलालितं,
कुरु मम वचनमानय कमलाननवनमालिनमालि तम् ।। ४७ ।।

इति हरिगीतम्*

२१. [२] हरिगीत[क]म्

अन्ते यदि गुरुयुगकृतचरणं नूनं भवेदिदं हि तदा ।
हरिगीत[क]मिति फणीश्वरपिङ्गलकथितं विजानीत ।। ४८ ।।

यथा–

उरसि विलसिता[1]ऽनुपमनलिनकृतमधुकररुतयुतवनमालं,
मुनिजनयमनियमादिविनाशकसकलदनुजकुलविकरालम् ।

---

१. ग. विशलता ।

*टिप्पणी—श्रीकृष्णभट्टेन वृत्तमुक्तावल्यां द्वितीयगुम्फे 'हरिगीत' वृत्तस्य अनुहरिगीतं मन्द्रहरिगीतं लघुहरिगीतञ्चेति त्रयो भेदाः स्वीकृतास्ते यथा—

"अन्त्यगुरुमात्रेण हीनं अनुहरिगीतम् । यथाः—
नवकोकिलाकुलललितकलकलकलितजागरकाम,
मतिधीरमलयसमीरधोरणिवलितमधुकरदाम ।
सखि भूरिकुसुमपरागपूरितकुञ्जमञ्जुलधाम,
परिपश्य मानिनि मधुदिनं रमणेन सन्तनु साम ।। ४९ ।।

यदा तु अनुहरिगीतस्यादौ कलाद्वयं वर्द्धते तदा मन्द्र(हरि)गीतं उत्प्रेक्षितं भवति । यथा–

जलधरधामधारण मोहतारण भवनिवारणशील,
मधुमुरनरकगञ्जन दुरितभञ्जन नयनरञ्जनलील ।
त्रिभुवनभव्यभावक निजजननावक कलितपावकपान,
जय रसकेलिभाजन सुरभाजन कृतसभाजनमान ।। ५० ।।

अथ कलाद्वयह्रासे लघुहरिगीतम् । यथाः—

मल्लिकानवमल्लिकासुमतल्लिकारसपीन,
मालिकानवमालिकाकमलालिकामधुलीन ।
सोऽधुना विकरालकालकलाकुलोद्यत एव,
कुन्दकाननकौतुकी मा वाव मधुकरदेव ।। ५१ ।।"

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

मुरलीरव[1]-मोहनमनु[2]-मोहितनिखिलयुवतिजन[3]-कृतरासं,
विलसतु मम हृदि किमपि गोपिकाजनमानसजनितविलासम् ॥ ४६ ॥

इति हरिगीत[क]म् ।

२१. [३] मनोहरं हरिगीतम्[4]

इयमेव यदि विरामे गुर्वन्तं शरकलं भवति ।
नैयत्येन कवीन्द्रैर्वसुपक्षकलं मनोहरं कथितम् ॥ ५० ॥

एतदनुसारेण पाठान्तरं यथा–

उरसि विलसितानुपमनलिनकृतमधुकररुतयुतमालं,
मुनिजनयमनियमादिविनाशकसकलदनुजकुलकालम् ।
मुरलीरवमोहनमनुमोहितनिखिलयुवतिकृतरासं,
विलसतु मम हृदि किमपि गोपिकामानसजनितविलासम् ॥ ५१ ॥

इति मनोहरं हरिगीतम्

२१. [४] हरिगीता

रन्ध्रैर्मुनिभिः सूर्यैः कृतविरतिर्भाविता कविभिः ।
इद(य)मेव हि हरिगीता फणिनायकपिङ्गलोदिता भवति ॥ ५२ ॥

यथा–

भुजगपरिवारित-वृषभधारित-हस्तडमरुविराजितं,
कृतमदनगञ्जन-मशुभभञ्जन-सुरमुनिगणसभाजितम् ।
हिमकरणभासित-दहनभूषित-भालमुमया सङ्गतं,
धृतकृत्तिवासममलमानसमनुसर सुखदमङ्ग तम् ॥ ५३ ॥

इति हरिगीता ।

२१. [५] अपरा हरिगीता

इयमेव वेदचन्द्रैः कृतविरतिर्भाविता कविभिः ।
पितृचरणैरतिविशदा पिङ्गलविवृतावुदाहृता स्फुटतः ॥ ५४ ॥

तदुदाहरणं यथा[5]–

सखि ! वंभ्रमीति मनो भृशं जगदेव शून्यमवेक्ष्यते,
परिभिद्यते मम हृदयमर्म न शर्म सम्प्रति वीक्ष्यते ।

---

१. ग. वर । २. मम । ३. ग. 'जन' नास्ति । ४. ग. प्रतौ छन्दसोऽस्य लक्षणोदाहरणे न स्तः । ५. क. ग. प्रतौ [illegible]

CC-0. ORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

परिहीयते वपुषा भृशं नलिनीव हिमततिसङ्गता,
नुदती वने[1] वदतीति सा सुदती रतीशवशंगता ।। ५५ ।।

इत्यपरा हरिगीता ।

२२. त्रिभङ्गी

प्रथमं दशसु च[2] यतिरनु च वसुषु यतिरथ च तदधिकृति-रस[3]कथितं,
शेषे गुरुगदितं त्रिभुवनविदितं जगणविरहितं जगति हितम् ।
वसुडगणकृतचरण-मधिकसुखकरण-सकलजनशरण-मतिसुमतिः,
वदतीति त्रिभङ्गीमिह निरनङ्गीकृतरतिसङ्गी फणिनृपतिः ।। ५६ ।।

यथा–

वरमुक्ताहारं हृदि कृतभारं विरहितसारं कुरु मुषितं,
छादय विधुबिम्बं न कुरु विलम्बं हर निकुरुम्बं कमलकृतम् ।
जहि[4] मलयजपवनं लघु लघुवहनं तनुकृतदहनं मोहकरं,
मम चित्तमधीरं रदजितहीरं यदुवरवीरं याति परम् ।। ५७ ।।

इति त्रिभङ्गी ।

२३. दुर्मिलका

यत्राऽष्टौ डगणाः कविसुखकरणाः प्रतिपदगुम्फनललितयुता
　　गगनावनिरचिता वसुषु च कथिता यत्र वेदविधुयतिरुदिता ।
द्वात्रिंशन्मात्राः स्युरतिविचित्राश्चरणे यस्मिन् कविगणिता
　　जनहृदि सुखदात्री बुद्धिविधात्री सा दुर्मिलका फणिभणिता ।। ५८ ।।

यथा–

हैयङ्गवचोरं नन्दकिशोरं तन्दुलकणरुचिसमरदनं,
　　घनकुञ्चितकेशं मञ्जुलवेषं विजितमनुजसुररुचिसदनम् ।
अपरिस्फुटगदनं दधियुतवदनं नौमि दितिजवरशकटहरं,
　　मुक्ताभूषालकमद्भुतबालकमखिलमुनिजनहृदि सुखकरम्[5] ।। ५९ ।।

इति दुर्मिलका ।

---

१. 'रुवती परं' इति पाठः पिङ्गलप्रदीपे । २. ग. नास्ति । ३. क.अथ । ४. ग. नास्ति । ५. 'मुक्ताभूषालकमद्भुतबालकमृषिजनहृदये सौख्यकरम्' इति पाठे श्रुतिकटुत्व-दोषनिवृत्तिः स्यात् (सं.)

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

२४. हीरम्

आदिगयुत-वेदलयुत-नागरचितषट्कलं,
वह्निगदित-लोकविदितमन्त्यकथितमध्यकलम् ।
भाति यदनु-पादमतनु-कान्तिसुतनुसङ्गतं,
हीरमहिपवीरकथितमीदृगखिलसम्मतम् ॥ ६० ॥

यथा—

चन्द्रवदन-कुन्दरदन-मन्दहसनभूषणं,
भीतिकदन-नीतिसदन[1]-कान्तिमदनदूषणम् ।
धीरमतुलहीरवहुलचीरहरणपण्डितं,
नौमि विमलधूतकमलनेत्रयुगलमण्डितम् ॥ ६१ ॥

यथा वाऽस्मत्तातचरणानाम्—

पाहि जननि ! शम्भुरमणि ! शुम्भ[2]दलनपण्डिते !
तारतरलरत्नखचितहारवलयमण्डिते ।
भालरुचिरचन्द्रशकलशोभि[3]सकलनन्दिते[4] !
देहि सततभक्तिमतुलमुक्तिमखिलवन्दिते ! ॥ ६२ ॥

इत्यादिमहाकविप्रबन्धेषु शतशः प्रत्युदाहरणानि ।

इति हीरम्* ।

---

१. ग. नास्ति । २. ग. शम्भु । ३. ग. कलशशोभि । ४. ग. सकलसनन्दिते ।

*टिप्पणी—वृत्तमुक्तावल्यां द्वितीयगुम्फे 'हीर'वृत्तस्य सुहीरं हीरं लघुहीरकं परिवृत्ताहीरकं-चेति चत्वारो भेदा निबद्धास्तेऽत्र प्रदर्श्यन्ते—

प्रतिषट्कलं यत्या रहितं **सुहीरम्** ।

यथा—

रासललितलासकलितहासवलितशोभनं,
लोकसकलशोकशमलमोकमखिललोभनम् ।
जातनयनपातजनितशातमुदितभारसं,
भाति मदनमानकदनमीशवदनसारसम् ॥ ५५ ॥

यथा—

प्रतिषट्कलं यत्या सहितं **हीरम्** ।

खञ्जनवरगञ्जनकरमञ्जनरुचिराजितं,
कामहृदभिराममतिललामरतिसभाजितम् ।
नीलकमलशीलमुदितकीलविरहमोचनं,
जातिकुटिलयति सुकृति भाति तव विलोचनम् ॥ ५६ ॥

CC-0. ORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

२५. जनहरणम्

गगनविधुयतिमहित-वसुजयतिसहित-
मनु वसुजविहितचरणयतिं,
कुरु मुनिमुनिगणकल[1]-विगत[2]सकलमल-
वरसगणबहुलपदविरतिम् ।
वसुडगणकृतचरण-सकलसुखकरण-
मधिकरुचिधरणकविशरणं,
फणिवरनृपतिरचित-निखिलमनुजहित-
सकलगुरुरहितजनहरणम् ॥ ६३ ॥

यथा–

वरजलनिधिजलशय निरुपमरुचिचय
सुरगणहृतभय गतकुमते,
बहुदितिसुतकुलहर निजजनसुखकर
सुरमुनिगणवरकृतसुमते ।
अमलकनकसुवसन कटिधृतसुरसन
कुसुमनिभहसन सुखकरणं,
तव भवतु पदकमलमधिकतरविमल
सुखद शुभयुगल भवतरणम् ॥ ६४ ॥

इति जनहरणम् ।

---

१. अत्र मुनिगणो विप्रगणपर्यायः (सं.) । २. ग. गलित ।

अत्र षट्कलस्य सर्वलघुत्वे, तुर्याक्षरस्यैव गुरुत्वे वा छन्दोऽन्तरमुत्प्रेक्षितं भवति । तच्च लघुहीरकं परिवृत्तहीरकं चेति व्यवहर्त्तव्यम् । द्वयमपि यथा--

विरहगरलभरिततरलकुटिलसरसलोचना,
चरणनखरकलितमदनयुवतिमदविमोचना ।
अमलकमलरजनिरमणमुकुरविलसितानना,
त्वमिह जयसि सुतनु किरणवलितसकलकानना ॥ ५७ ॥

विलसदङ्गरुचितरङ्गललितरङ्गरञ्जिनी,
लसदपारपटिमभारमदनदारगञ्जिनी ।
सकलयामसुखदवामतरललामलीलना,
जयसि नामहृदभिरामरतिनिकामशीलना ॥ ५८ ॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

२६ः मदनगृहम्

प्रथमं द्विल[1]सहितं वरगुरुमहितं
　　विरतौ विमलसकल[2]-चरणे श्रुति[3]-सुखकरणे,
नवडगणविकासित-मध्यविराजित-
　　जनशुभदायकदेहधरं फणिभणितवरम् ।
गगनावलिकल्पित-वसुमितजल्पित-
　　वेदविधूदितयतिसहितं[4] वसुयतिमहितं,[5]
गगनोदधिमात्रं भवति विचित्रं
　　मदनगृहं पवनविरहितं[6] सकलकविहितम् ॥ ६५ ॥

यथा–

सुरनतपदकमलं हृतजनशमलं
　　वारिजविजयिनयनयुगलं वारिद[7]विमलं,
दितिसुतकुलविलयं कमलानिलयं
　　कल[8]करयुगलकलितवलयं केलिषु सलयम् ।
चन्द्रकचित[9]-मुकुटं विनिहतशकटं
　　दुष्टकंसहृदि बहुविकटं मुनिजननिकटं,
गतयमुनारूपं कृतबहुरूपं
　　नमतारूढहरितनीपं[10] श्रुतिशतदीपम् ॥ ६६ ॥

यथा वाऽस्मत्पितुः शिवस्तुतौ—

करकलितकपालं धृतनरमालं
　　भालस्थानलहुतमदनं कृतरिपुकदनं,
भवभयभरहरणं[11]गिरिजारमणं
　　सकलजनस्तुतशुभचरितं गुणगणभरितम्[12] ।
कृतफणिपतिहारं त्रिभुवनसारं
　　दक्षमखक्षयसंक्षुब्धं रमणीलुब्धं,
गलराजितगरलं गङ्गाविमलं
　　कैलाशाचलधामकरं प्रणमामि हरम् ॥ ६७ ॥

इति प्रत्युदाहरणम् ।
इति मदनगृहम् ।

---

१. ग. द्विजसहितम् । २. ग. कमल । ३. ग. श्रति । ४. ख. महितम् । ५. ग. 'वसुयतिमहित' नास्ति । ६. 'पवनविरहितं मदनगृहं' इति पाठात् श्रुतिकटुत्वदोषनिरासः स्यात् । (सं०) ७. ग. वारिज । ८. ग. वरकर । ९. ग. चन्द्रकजुत । १०. ग. हरितानीपम् । ११. ख. ग. भवभवभयहरणम् । १२. ग. त्रैलोक्यहितम् ।

T　CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

२७. मरहट्टा [महाराष्ट्रम्]

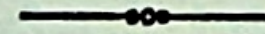
प्रथमं कुरु टगणं पुनरपि डगणं शरपरिमितमतिशोभि,
शेषे कुरु हारं लघुमथ सारं कविजनमानसलोभि ।
गगनेन्दौ विरतिं तदनु वसुयतिं पुनरथ विधुयुगलेऽपि,
मरहट्टावृत्ते कविजनचित्ते नवयुगरचितकलेऽपि ।। ६८ ।।

यथा–

गर्वावलिभासुर हतकंसासुर भुवि कृतविमलविलास,
मुरलीभासितकर वृषभासुरहर वरतरुणीकृतरास[१] ।
दावानलबालक[२]गोधनपालक हिमकरकरनिभहास,
कृपया कुरु दृष्टिं मयि सुखवृष्टिं मुनिहृदि[३]जनितविकास ।। ६९ ।।

इति मरहट्टा ।

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके चतुर्थं पद्मावतीप्रकरणम् ।



१. ग॰ हास । २. ग. मिहकर । ३. ग. नास्ति ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पञ्चमं सवया-प्रकरणम्

अथ सवया[1]

सप्तभकारविभूषित-पिंगलभाषितमन्तगुरूपहितं[2],
अन्यदथापि तथैव भभूषितमन्तगुरुद्वयसंविहितम् ।
अष्टसकारमथो गुरुसङ्गतमेतदथान्यदपि प्रथितं,
सप्तजकारविराजितमन्त्यलघुं[3] गुरु[4]भासितमन्यदिदम् ॥ १ ॥
अन्यदिदं [मुनिनायकभाषितमन्त्यलघुं गुरुयुग्मसुयुक्तं,
योगचतुष्कलपूजित][5]मन्यदिदं युगवह्निकलाभिरमुक्तम्[6] ।
पण्डितमण्डलिनायकभूपतिमानसरञ्जनमद्भुतवृत्तं,
सर्वमिदं सवयाभिधमुक्तमशेषकवीन्द्रविमोहितचित्तम् ॥ २ ॥

अथैतेषां भेदानां नामानि

मदिरा मालती मल्ली मल्लिका माधवी तथा ।
मागधीति च नामानि तेषामुक्तान्यशेषतः ॥ ३ ॥

क्रमेणोदाहरणानि[7], यथा[8]—

१. मदिरा सवया

भालविराजितचन्द्रकलं नयनानलदाहितकामवरं,
बाहुविराजितशेषफणीन्द्रफणामणिभासुरकान्तिधरम् ।
भूधरराजसुतापरिमण्डितखण्डित[9]नूपुरदण्डधरं,
नौमि महेशमशेषसुरेशविलक्षणवेषमुमेश[10]हरम् ॥ ४ ॥

इति मदिरा सवया ।

२. मालती सवया

चन्द्रकचारुचमत्कृतिचञ्चलमौलिविलुम्पित-[11]चन्द्रिकशोभं,
वन्यनवीनविभूषणभूषितनन्दसुतं वनिताधरलोभम् ।
धेनुकदानवदारणदक्ष-दयानिधिदुर्गमवेदरहस्यं
नौमि हरिं दितिजावलिमालित[12]-भूमिभरापनुदं सुयशस्यम् ॥ ५ ॥

इति मालती सवया ।

---

१. ग. सवईया । २. ग. पिहितम् । ३. ख. ग. लघु । ४. ग. मुनि । ५. कोष्ठकगतोंशो नास्ति क प्रतौ । ६. ग. कलारसमुक्तम् । ७. ग. तासां क्रमेणोदाहरणानि । ८. ग. तद्यथा । ९. क प्रतौ 'खण्डित' शब्दो नैव । १०. ग. मुनेश । ११. ग. विलम्बित । १२. ग. दितिजावलिभारित ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

३. मल्ली सवया

गिरिराजसुताकमनीयमनङ्गविभङ्गकरं गलमस्तकमालं,
परिधूतगजाजिनवाससमुद्धतनृत्यकरं विगृहीतकपालम् ।
गरलानलभूषित-दीनदयालु-सदभ्रमरोद्धत[1]-दानवकालं,
प्रणमामि विलोलजटातटगुम्फितशेष[2]-कलानिधिलालितभालम् ।। ६ ।।

इति मल्ली सवया ।

४. मल्लिका सवया

धुनोति मनो मम चम्पककाननकल्पितकेलिरयं पवनः,
कथामपि नैव करोमि तथापि वृथा कदनं कुरुते मदनः ।
कलानिधिरेष बलादयि ! मुञ्चति वह्निकलापमलीकहिमः
विधेहि तथा मतिमेति यथा सविधेन पथा व्रजभूमहिमः ।। ७ ।।

इति मल्लिका सवया ।

५. माधवी सवया

विलोलविलोचनकोणविलोकित-मोहितगोपवधूजनचित्तः,
मयूरकलापविकल्पितमौलिरपारकलानिधिबालचरित्रः ।
करोति मनो मम विह्वलमिन्दुनिभस्मितसुन्दरकुन्दसुदन्तः,
सखीमिति[2] कापि जगाद हरेरनुरागवशेन विभावितमन्तः ।। ८ ।।

इति माधवी सवया ।

६. मागधी सवया

माधव[3]विद्युदियं गगने तव कलयति पीतवसनमभिरामम्,
जलधरनीलगगनपद्धतिरपि तव तनुरुचिमनुसरति निकामम् ।
इन्द्रशरासनमपि तव वक्षसि भासितवरवनमालाशोभं.
[कुरु मम वचनं सफलय हृदयं राधाधरमधुविरचितलोभम्[4]] ।। ९ ।।

इति मागधी सवया ।

उक्तानि सवयाख्यानि छन्दांस्येतानि कानिचित् ।
ऊह्यानि लक्ष्यमालोच्य[5] शेषाणि निजबुद्धितः ।। १० ।।

---

१. ग. मदोधक । २. ग. सखीरिति । ३. ग. मागध । ४. चतुर्थचरणः क. प्रतौ नास्ति । ५. ग. ग्रालोक्य ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

७. घनाक्षरम्[1]

रसभूमिवर्णयतिकं[2] तदनु च शरभूमिविरतिकं यत्तु[3] ।
विधुवह्निवर्णं[4]सङ्गतमिदमप्रतिमं घनाक्षरं वृत्तम् ॥ ११ ॥

यथा–

रावणादिमानपूर-दूरनाशनेति वीर
　　राम किं विशालदुर्गमायाजालमेव ते,
मैथिलीविलासहास धूतसिन्धुवासर(रा)स[5]
　　भूतपतिशरासनभङ्गकर[6] भासते ।
दीनदुःखदानसावधान पारावारपार[7]-
　　यान-वीरवानरेन्द्रपक्ष किं महामते !,
ते रणप्रचण्डबाहुदण्डमेव हेतुमत्र
　　बाणदावदग्धशत्रुसैनिकाः प्रकुर्वते ॥ १२ ॥

इति घनाक्षरम् ।

इति वृत्तमौक्तिके वार्त्तिके[8] पञ्चमं सवया[9] प्रकरणम् ।



१. ग. तद्यथा आर्या । २. ग. य कि । ३. ग. कमनुः । ४. ग. विधुवर्णे वह्नी । ५. ग. वाससार । ६. ग. संगकर । ७. ग. पाराबान । ८. ग. नास्ति । ९. ग. सवाय ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

षष्ठं गलितकप्रकरणम्

अथ गलितकानि—

१. गलितकम्

शरकलं पञ्चपरिमितं जलधिकलयुगं
प्रविलसति यस्मिंश्चरणे लघुगुर्वनुगम्[1] ।
विधुयुगकलारचितमहिपतिफणिकलितकं
वरकविजनमानसहरं[2] भवति गलितकम् ॥ १ ॥

यथा—

मल्लि[3]-मालतियूथिपङ्कजकुन्दकलिके,
कुमुदचम्पककेतकिपरिमलबलदलिके[4] ।
मलयपर्वतशीतल त्वयि जातपवनः,
हरिवियोगतनोरियं मम कथं दहनः ॥ २ ॥

इति गलितकम् ।

२. विगलितकम्

ठगणद्वयं[5] भवति चतुष्कलद्वयसङ्गतं
तदनु च शरकलं भवति सुललितकविसम्मतम् ।
दहनपक्षकलाविलसितविमलसकलचरणं,
विगलितकमेतत् फणिपतिमधिकसुखकरणम् ॥ ३ ॥

यथा —

भवजलधितारिणि[6] सकलतापहारिणि गङ्गे,
अघदहनकारिणि रुचिधारिणि हरकृतसङ्गे ।
गिरिनिकरदारिणि मनोहारिणि तरलभङ्गे,
स्वपिमि वारिणि हंसहारिणि तव विलसदङ्गे ॥ ४ ॥

इति विगलितकम् ।

३. सङ्गलितकम्

डगणयुगेन विराजितं,
पञ्चकलेन सभाजितम् ।
सङ्गलितकमिति कल्पितं,
फणिपतिपिङ्गलजल्पितम् ॥ ५ ॥

---

१. ग. गुर्वतुगः । २. ग. मानसहर तवति । ३. ग. मल्लिका । ४. ग. कुन्दचम्पकके परिमलवल्लिके । ५. ख. टगणद्वयम् । ६. ग. भवजलधितंरणि ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

धृतिमवधारय मानसे,
हरिमपि[1] गततनुरानशे ।
सखि ! तव वचनं मानये,
ननु वनमालिनमानये ॥ ६ ॥

इति सङ्कलितकम् ।

४. सुन्दरगलितकम्

ठगणद्वयेन भाषितं,
लादित्रिकलविकासितम्[2] ।
सुन्दरगलितकनामकं,
वृत्तममलरुचिधामकम् ॥ ७ ॥

यथा–

विगलितचिकुरविलासिनीं,
नवहिमकरनिभहासिनीम् ।
सुबलराधिकान्तामये[3],
तनुजितकनकां कामये ॥ ८ ॥

इति सुन्दरगलितकम् ।

५. भूषणगलितकम्

ठगणद्वितयं प्रथमं चरणे,
रसभूमिसुसंख्यकलाभरणे ।
त्रिकलद्वितयं पुनरेव यदा,
फणिभाषित-भूषणकेति तदा[4] ॥ ९ ॥

यथा–

रुचिरवेणुविरावविमोहिता
द्रुतपदाः कृतरासरसैः[5] हिताः ।
हरिमदूरवने हरिणेक्षणा-
स्तमनुजग्मुरनन्यगतेक्षणाः[6] ॥ १० ॥

इति भूषणगलितकम् ।

६. मुखगलितकम्

षट्कलं प्रथममथ वेदत्रिकलयुतं,
पुनरपि यच्चरणशेषगतवलयचितम् ।

---

१. ग. हरिमपगत । २. ग. विलासितम् । ३. ग. सुबलिराधिकाम् । ४. ग. यदा ।
५. ख.ग. रसे । ६. ग. क्षणम् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

गगनपक्षकलाकृतचरणविकासितं,
मुखगलितकमिदं वरफणिपतिभाषितम् ।। ११ ।।

यथा–

ब्रह्मभवादिकनुतपदपङ्कजयुगलं,
नाशितभक्तहृदयगतदारुणशमलम् ।
दीनकृपानिधि-भवजलराशितारकं,
नौमि हरिं कमलनयनमशुभदारकम्[1] ।। १२ ।।

इति मुखगलितकम् ।

७. विलम्बितगलितकम्

आदौ षट्कलं तदनु चान्तगेन सहितं,
जलनिधिकलचतुष्कमहिनायकेन विहितम् ।
समगणे जगणेन सहितं[2] फणीन्द्रभणितं,
विलम्बिताख्यमेतदखिलसुकवीन्द्रगणितम्[3] ।। १३ ।।

यथा–

नमामि पङ्कजाननं सकलदुःखहरणं,
भवाम्बुराशितारकं निखिलवन्द्यचरणम्[4] ।
कपोललोलकुण्डलं[5] व्रजवधूजनसहितं,
विलासहासपेशलं सरसरासमहितम् ।। १४ ।।

इति विलम्बितगलितकम् ।

८ [१]. समगलितकम्

डगणविभूषं प्रथममवेहि पञ्चकलयुगयुतं[6],
तदनु चतुष्कलयुगसहितं विरतौ लगुरुमहितम्[7] ।
शरयुगमात्रासहितमनुत्तमपिङ्गलभाषितं,
समगलितकमिदमतिसुखकरसुललितपदभासितम् ।। १५ ।।

यथा–

निखिलसुरगणविनुतपङ्कजकोमलचरणयुगलं,
पीतवसनविलसितशरीरमनुत्तमकम्बुगलम् ।
नौमि निगमपरिगदितमपारगुणयुतमिन्दुमुखं,
नन्दतनूजं निखिलगोपवधूजनदत्तसुखम् ।। १६ ।।

इति समगलितकम् ।

---

१. ग. दायकम् । २. ग. रहितम् । ३. ग. गदितम् । ४. ग. वन्द्यं चरणम् ।
५. ग. कुञ्जं । ६. ग. ज्युतम् । ७. ग. लघुगुरुसहितम् ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

८ [२]. अपरं समगलितकम्

समगलितकं प्रभवति[1] विषमे यदि ङगणत्रिकलाभ्यां कलितकम्[2] ।
मुखगलितकं समचरणे किल भवति निखिलपण्डितमुखवलितकम्[3] ॥ १७ ॥

यथा–

विभूतिसितं शिरसि निवसिता[4]-नुपमनदीभवपङ्कजविलसितम् ।
अहिप[5]-रुचिरं किमपि विलसितां[6] मम हृदि वेदरहस्यमतिसुचिरम् ॥ १८ ॥

इति द्वितीयं समगलितकम् ।

८ [३]. अपरं सङ्गलितकम्

विपरीतस्थितसकलपदयुतमेव समगलितकं सङ्गलितकम्[7] ॥ १९ ॥

विपरीतपठितमिदमेवोदाहरणम् । यथा–

शिरसि निवसिता[8]नुपमनदीभव-पङ्कजविलसितं विभूतिसितम् ।
किमपि विलसितां मम हृदि वेदरहस्यमतिसुचिरं अहिप[9]-रुचिरम् ॥ २० ॥

इति द्वितीयं सङ्गलितकम् ।

८ [४]. अपरं लम्बितागलितकम्

शरमितङगणैः स्याद् भाविता[10] निखिलपादे
विषमजगणमुक्ता चान्तगा[11]विगतवादे ।
युगयुगकृतमात्राः कल्पिता[12] यदनुपादं,
फणिपतिभणितेयं लम्विता त्यज विषादम् ॥ २१ ॥

यथा–

राजति वंशीरुतमेतत् काननदेशे,
गच्छति कृष्णे तस्मिन्नथ मञ्जुलकेशे ।
याहि मया सार्द्धमितो रासाहितचित्ते,
तत्सविधे प्रेमविलोले तेन च वित्ते[13] ॥ २२ ॥

इति द्वितीयं लम्बितागलितकम् ।

९. विक्षिप्तिकागलितकम्

शरोदितकलो यदि भाति[14] गणो विषमस्थितियुतः
समास्थित(ति)विभूषितेन तदनु चतुष्कलेन युतः ।

---

१. ग. 'समगलितकं' नास्ति, भवति च । २. ग. सकलितकम् । ३. ग. मुखवतिलकम् । ४. ग. निवासिता । ५. ग. फणिप । ६. ग. विलसतां । ७. ग. नास्ति ८. ग. विलासिता । ९. ख. ग. फणिप । १०. ग. भावित । ११. ग. चान्तगावितवादे । १२. ग. कल्पित । १३. ग. चलचित्ते । १४. क. भावि ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

शरोदितगणैः परिभावितसकलचरणैः सहिता[1],
कवीन्द्रकथितान्तगुरुः[2] किल विक्षिप्तिका महिता[3] ॥ २३ ॥

यथा–

चन्द्रकचितमुकुटमखिलमुनिजनहृदयसुखकरणं,
धृतवेणुकलं वरभक्तजनस्याद्भुतं शरणम् ।
वृन्दावनभूमिषु वल्लवनारीमनोहरणं,
रुचिरं निजचेतसि चिन्तय गोवर्द्धनोद्धरणम्[4] ॥ २४ ॥

इति विक्षिप्तिकागलितकम् ।

१०. ललितागलितकम्

पूर्वं कथिता विक्षिप्तिकैव[5] चरणसुकलिता,
ठगणे[6] चतुष्कलेन भूषिता प्रभवति ललिता ॥ २५ ॥

यथा–

कमलापतिं कमलसुलोचनमिन्दुनिभाननं,
मञ्जुलपरिपीतवाससमपारगुणकाननम् ।
सनकादिकमानसजनितनिवाससमस्तनुतं,
प्रणमामि हरिं निजभक्तजनस्य हिते निरतम् ॥ २६ ॥

इति ललितागलितकम् ।

११. विषमितागलितकम्

पूर्वं द्वितीयचरणे विषमस्थितिकपञ्चकलः,
तुर्ये[7] तृतीयचरणे प्रथमं भवति चतुष्कलः ।
सकले समस्थित(ति)वेदकलो[8] विरतौ विरचिता,
या(यो)गेन[9] शरोक्तगणेन च सा भवति विषमिता ॥ २७ ।

यथा–

वेणुं करे[10] कलयता सखि ! गोपकुमारकेण,
पीताम्बरावृतशरीरभृता भवतारकेण ।
प्रेमोद्गतस्मितरुचा वनजभूषणशोभिना,
चेतो ममाऽपि कवलीकृतं मानसलोभिना ॥ २८ ॥

इति विषमितागलितकम् ।

---

१. ग. सहिताः । २. ग. गुरुं । ३. ग. महिताः । ४. ग. धरणम् । ५. ग. विक्षिप्तिकैः कथिता च । ६. ग.ठगणेन । ७. ग. तुर्यं । ८. ग. कलौ । ९. ग. सागेन । १०. ग. वेणुकरे ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१२. मालागलितकम्

षट्कलविरचितं तदनु च दश[1]-संख्यडगण-
परिभावितचरणमुदेति मालाभिधं गलितकम् ।
मध्यगुरुजगणेन विरचितसमस्तसमगण-
रसोदधिकलकमहीन्द्रफणिवदने[2] वलितकम् ।।२९।।

यथा[3]–

कालियकुलविभञ्जक-मसुरविडम्बक-दनुजविलुम्पक-
मखिलजनस्तुतशुभचरितंमुनिनुतं,
नौमि विमलतरं सकलसुखकरं कलिकलुषहरं,
भवजलधितरिं हरिं पालने सुनियतम् ।
कंसहृदि विकटं मुनिगणनिकटं विनिहतशकटं
परिधृतमुकुटं जगद्विरचनेऽतिचतुरं,
भक्तजनशरणं भवभयहरणं वरसुखकरणं
स्वपदवितरणं जगन्नाशने धृतधुरम् ।। ३० ।।

इति मालागलितकम् ।

१३. मुग्धमालागलितकम्[4]

मालाभिख्यमेव[5] हि भवति चतुष्कल-
युगरहितं फणिपविन्न[6] मुग्धपूर्वम् ।। ३१ ।।

यथा[7]–

वन्दे नन्दनन्दनमनवरतं मरकतसुतनुं धृतरुचिं मुरारिमा(मी)शं,
वादितवंशमानतमुनिजन-नारदविरचितगानमवनीमणीमनीषम् ।
कारितरासहासपरवशरतं विरचितसुरतं वितितकुङ्कुमेन पीतं,
तं देवं प्रमोदभरसुविदितं मुदितसुरनुतं सततमात्मजेन गीतम् ।। ३२ ।।

इति मुग्धमालागलितकम् ।

१४. उद्गलितकम्

मुग्धपूर्वकमेव डगणयुगलेन रहितपदमुद्गलितकम् ।। ३३ ।।

यथा[8]–

नन्दनन्दनमेव कलयति न किञ्चिदिह जगति सारमपरं,
पुत्रमित्रकलत्रमखिलमपि चित्रघटितमिव भाति न परम् ।

---

१. ग. शरसंख्य ।　२. ग. फणिपवनेद ।　३. ग. ऊह्यमुदाहरणं, उदाहरणं नास्ति । ४. ग. मुग्धामालागलितकम् ।　५. ग. मालाभिसख्यमेव ।　६. ग. वित्त ।　७. ग. ऊह्यमुदाहरणं, उदाहरणं नास्ति ।　८. ग. [illegible] उदाहरणं नास्ति ।

CC-0. ORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

सावधानतयैव लवमपि मनः परमचलमिदं न विदितं
भावयन्तु दिवानिशमनिमिषमात्मनि परमपदं प्रमुदितम् ।। ३४ ।।

इत्युद्गलितकम् ।

एवं गलितकादीनि वृत्तान्युक्तानि कानिचित् ।
लक्ष्याणि लक्ष्यमालक्ष्य शेषाणि निजबुद्धितः[१] ।। ३५ ।।

इति गलितक-प्रकरणं षष्ठम्[२] ।

[ग्रन्थकृत्प्रशस्तिः]

रन्ध्रसूर्याश्वसंख्यातं मात्राच्छन्द इहोदितम् ।
सप्रभेदवसुद्वन्द्वशतद्वयमुदीरितम् २८८ ।। ३६ ।।

सोदाहरणमेतावदस्मिन्खण्डे मयोदितम् ।
प्रस्तारसंख्यया तेषां भाषणे पिङ्गलः क्षमः ।। ३७ ।।

[३]श्रीचन्द्रशेखरकृते रुचिरतरे वृत्तमौक्तिकेऽमुष्मिन् ।
मात्रावृत्तविधायकखण्डः सम्पूर्णतामगमत् ।। ३८ ।।

बाणमुनितर्कचन्द्रैः[१६७५] गणितेब्दे वृत्तमौक्तिके रुचिरम् ।
माघे धवलपक्षे पञ्चम्यां चन्द्रशेखरश्चक्रे[४] ।। ३९ ।।

[५]इत्यालङ्कारिकचक्रचूडामणि-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-सकलोपनिषद्रहस्यार्णव-
कर्णधारश्रीलक्ष्मीनाथभट्टात्मज-कविशेखर-श्रीचन्द्रशेखरभट्ट-
विरचिते श्रीवृत्तमौक्तिके पिङ्गलवार्त्तिके
मात्राख्यः प्रथमः परिच्छेदः ।

श्रीरस्तु ।

---

१. ग. पूर्णं पद्यं नास्ति । २. ग. इति वृत्तमौक्तिके गलितकं प्रकरणं षष्ठं । तदनन्तरं ग. प्रतौ निम्नपद्यं वर्तते--

जनकुलपालं लालितबालं वादितमृदुतरशंखं,
रोचनयुतभालं धृतवनमालं शोभिततरलवशंखम् ।
दितिव्रजकालं वादिततालं कृतसुरमुनिगणशंसं,
रुचिकलिततमालं जितघनजालं भासितयादववंशम् ।।

३. ग. इति श्रीमच्चन्द्रशेखरकृते रुचिरवरे वृत्तमौक्तिकेऽमुष्मिन् मात्रावृत्तविधायकखण्डः समाप्तम् । ४. ग. पूर्णं पद्यं नास्ति । ५. ग. 'इत्यालं' प्रारभ्य 'परिच्छेदः' पर्यन्तं पाठं नास्ति[३] ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

श्रीलक्ष्मीनाथभट्टसूनु-कविचन्द्रशेखरभट्टप्रणीतं

वृत्तमौक्तिकम्

द्वितीयः खण्डः

प्रथमं वृत्तनिरूपण - प्रकरणम्

[मङ्गलाचरणम्]

शिरोऽदिव्यद्[1] गङ्गाजलभवकलालोलकमला-
न्यलं शुण्डादण्डोद्धरणविषयान्यारचयता ।
जटायां कृष्टायां द्विरदवदनेनाथ रभसा,
दुदश्रुर्गौरीशः क्षपयतु मनः क्षोभनिकरम् ।। १ ।।

मात्रावृत्तान्युक्त्वा कौतूहलतः फणीन्द्रभणितानि ।
अथ चन्द्रशेखरकृती वर्णच्छन्दांसि कथयति स्फुटतः ।। २ ।।

[अथैकाक्षरं वृत्तम्]

१. श्रीः

यो गः । सा श्रीः ।। ३ ।।

यथा–

श्री-र्मा-मव्यात् ।। ४ ।।

इति श्रीः १

२. अथ इः

ल इ-रि-ति ।। ५ ।।

यथा–

श-म कु-रु ।। ६ ।।

इति इः २.

अत्रैकाक्षरस्य प्रस्तारगत्या द्वावेव भेदौ भवतः[2] ।

इत्यैकाक्षरं वृत्तम् ।

---

१. ख. दीप्यद् । २. पंक्तिरियं नास्ति क प्रतौ ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अथ द्वयक्षरम्

तत्र–

३. कामः

गौ चेत् कामो ।
नाग-प्रोक्तः ॥ ७ ॥

यथा

वन्दे कृष्णम् ।
केली-तृष्णम् ॥ ८ ॥

इति कामः ३.

४. अथ मही

लगौ महीम् ।
वदत्यहिः ॥ ९ ॥

यथा–

रमापते ।
नमोऽस्तु ते ॥ १० ॥

इति मही ४.

५. अथ सारम्

वक्र-लौ च ।
सार-मत्र ॥ ११ ॥

यथा–

कंस-काल ।
नौमि बाल ॥ १२ ॥

इति सारम् ५.

६. अथ मधुः

द्विलक्कृति ।
मधुरिति ॥ १३ ॥

यथा–

मतिमव ।
मम भव ॥ १४ ॥

इति मधुः ६.

अत्रापि द्वयक्षरस्य प्रस्तारगत्या चत्वार ४ एव भेदा भवन्तीति, तावन्तोप्युक्ताः ।

इति द्वयक्षरम् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अथ त्र्यक्षरम्

तत्र–

७. ताली

पादे या म प्रोक्ता ।
ताली सा नागोक्ता ॥१५॥

यथा–

गोवृन्दे सञ्चारी ।
पायाद् दुग्धाहारी ॥ १६ ॥

इति ताली ७. 'नारी'त्यन्यत्र ।

८ अथ शशी

शशीवृत्तमेतत् ।
यकारो यदि स्यात् ॥ १७ ॥

यथा–

मुदे नोऽस्तु कृष्णः ।
प्रियायां सतृष्णः ॥ १८ ॥

इति शशी ८.

९. अथ प्रिया

वल्लकी राजते ।
सा प्रिया भासते ॥ १९ ॥[1]

यथा–

राधिका-रागिणम् ।
नौमि गोचारिणम् ॥ २० ॥

इति प्रिया .९

१०. अथ रमणः

क्रियते सगणः ।
फणिना रमणः ॥ २१ ॥

यथा–

सखि मे भविता ।
हरिरप्यचिता ॥ २२ ॥

इति रमणः १०.

१. वृत्तमेतद् रत्नपोपहले । (सं)

CC-0. KORG Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

११. अथ पञ्चालम्[1]

पादेषु तो यहि ।
पञ्चाल-वृत्तं हि ॥२३॥

यथा–

शं देहि गोपेश ।
मन्दे महत्केश ॥ २४ ॥

इति पञ्चालम् ११.

१२. अथ मृगेन्द्रः

नरेन्द्र विराजि ।
मृगेन्द्रमवेहि ॥ २५ ॥

यथा–

विलोलवतंस ।
नमो धृतवंश ॥ २६ ॥

इति मृगेन्द्रः १२.

१३. अथ मन्दरः

भो यदि सुन्दरि ।
मन्दरमेव हि ॥ २७ ॥

यथा–

चञ्चलकुन्तल ।
नौमि सुमङ्गल ॥ २८ ॥

इति मन्दरः १३.

१४. अथ कमलम्

नमनुकलय ।
कमलममल ॥ २९ ॥

यथा–

अहिपवलय ।
शमिह कलय ॥ ३० ॥

इति कमलम् १४.

अत्राऽपि त्र्यक्षरस्य प्रस्तारगत्या अष्टौ भेदा भवन्तीति तावन्तोप्युदाहृताः ।

इति त्र्यक्षरम् ।

---

१. क. प्रतौ पाञ्चालवृत्तस्य लक्षणमुदाहरणे नोल्लिखिते ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अथ चतुरक्षरम्

तत्र–

१५. तीर्णा

यस्मिन् कर्णौ वृत्ते स्वर्णौ ।
सा स्यात् तीर्णा नागोत्कीर्णा ॥ ३१ ॥

यथा–

गोपीचित्ताकर्षे सक्तम् ।
न्दे कृष्णं गोभिर्युक्तम् ॥ ३२ ॥

इति तीर्णा १५. 'कन्या' इत्यन्यत्र ।

१६. अथ धारी

पक्षिभासि मेरुधारि ।
वारिराशि वर्णवारि[1] ॥ ३३ ॥

यथा–

गोपिकोडुसङ्घचन्द्र ।
नौमि जन्मपूतनन्द ॥ ३४ ॥

इति धारी १६.

१७. अथ नगाणिका

विधेहि जं ततो गुरुम् ।
नगाणिका भवेदरम् ॥ ३५ ॥

यथा–

विलोलमौलिभासुरम् ।
नमामि संहृतासुरम् ॥ ३६ ॥

इति नगाणिका १७.

१८. अथ शुभम्

द्विजवरमिह यदि ।
विदधत, शुभमिति ॥ ३७ ॥

यथा–

अशुभमपहरतु ।
हृदि हरिरुदयतु ॥ ३८ ॥

इति शुभम् १८.

अत्रापि चतुरक्षरस्य प्रस्तारगत्या षोडश १६ भेदा भवन्ति, तेषु चाद्यन्तभेद-युक्ता ग्रन्थविस्तरशङ्कयाऽत्र चत्वारो भेदाः प्रदर्शिताः, शेषभेदाः सुधीभिरूह्या इति ।*

इति चतुरक्षरम् ।

---

१. ख. वर्णधारि ।

*शेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्याः ।

T CC-0. Kavi. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अथ पञ्चाक्षरम्

तत्र–

१९. सम्मोहा

आदौ म प्रोक्तं पश्चात् कर्णोक्तम् ।
बाणार्णैर्युक्तं सम्मोहावृत्तम् ॥ ३९ ॥

यथा–

वन्दे गोपालं दैत्यानां कालम् ।
गोपीगोपानां पालं दीनानाम् ॥ ४० ॥

इति सम्मोहा १९.

२०. अथ हारी

यस्मिन् तकारः पक्षोक्तहारः ।
पञ्चार्णयुक्तं हारीति वृत्तम् ॥ ४१ ॥

यथा–

आनन्दकारी गोपीविहारी ।
मां पातु बालः केलीरसालः ॥ ४२ ॥

इति हारी २०.

२१. अथ हंसः

आदिरथान्तः कुण्डलयुक्तः ।
मध्यगतः सो यत्र स हंसः ॥ ४३ ॥

यथा –

नन्दकुमारः सुन्दरहारः ।
गोकुलपालः पातु स बालः ॥ ४४ ॥

इति हंसः २१.

२२. अथ प्रिया

सगणाहिता लग-संयुता ।
भवतीह या किल सा प्रिया ॥ ४५ ॥

यथा –

सखि ! गोकुले सुखसंकुले[1] ।
व्रजसुन्दरो ननु निर्दयः ॥ ४६ ॥

इति प्रिया २२.

---

१. ख. 'सुखसंकुले' नास्ति ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

२३. अथ यमकम्

नमिह कुरु लयुगमथ ।
इति यमकमनुकलय ।। ४७ ।।

यथा–

असुरयम शमिह मम ।
अनुकलय फणिवलय ।। ४८ ।।

यथा वा–

लुषहर धरणिधर ।
दलितभव सुजनमव ।। ४९ ।।

इति यमकम् २३.

अत्र प्रस्तारगत्या पञ्चाक्षरस्य द्वात्रिंशद् ३२ भेदा भवन्ति, तेषु कतिचनोक्ताः शेषास्तूह्याः ।*

इति पञ्चाक्षरम् ।

अथ षडक्षरम्

तत्र–

२४. शेषा

नागाधीशप्रोक्तं सर्वैर्दीर्घैर्युक्तम् ।
षड्भिर्वर्णैर्वृत्तं[1] शेषाख्यं स्याद् वृत्तम् ।। ५० ।।

यथा–

कंसादीनां कालः गोगोपीनां पालः ।
पायान्मायाबालः मुक्ताभूषाभालः[2] ।। ५१ ।।

इति शेषा २४.

२५. अथ तिलका

यदिसद्वितयाचित सर्व पदा ।
तिलकेति फणिर्वदतीह तदा ।। ५२ ।।

यथा–

कमनीयवपुः शकटादिरिपुः ।
जयतीह हरिः भवसिन्धुतरिः ।। ५३ ।।

इति तिलका २५.

---

१. ग. विन्तं इव ।　२. ख. मालः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

*टिप्पणी—शेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्याः ।

२६. अथ विमोहम्

पक्षिराजद्वयं यत्र पादस्थितम् ।
पिङ्गलेनोदितं तद् विमोहं मतम् ।। ५४ ।।

यथा–

गोपिकामानसे यः सदा व्यानशे ।
पातु मां सेवकं सोऽहनद्यो बकम्[1] ।। ५५ ।।

इति विमोहम् २६.

'विज्जोहा' इति स्त्रीलिङ्गं पिङ्गले*[1] ।

२७. अथ चतुरंसम्

प्रथमनकारं[2] तदनु यकारम् ।
कुरु चतुरंसे फणिकृतशंसे ।। ५६ ।।

यथा–

विनिहतकंसं तरलवतंसम् ।
नम धृतवंशं सुरकृतशंसम् ।। ५७ ।।

इति चतुरंसम् २७.

'चउरंसा' इति स्त्रीलिङ्ग पिङ्गले*[2]।

२८. अथ मन्थानम्

पादे द्वितं देहि षड्वर्णमाधेहि ।
जानीहि नागोक्तमन्थानमेतद्धि ।। ५८ ।।

यथा-

धूतासुराधीश गोगोपकाधीश ।
मां पाहि गोविन्द गोपीजनानन्द[3] ।। ५९ ।।

इति मन्थानम् २८. स्त्रीलिङ्गमन्यत्र ।

२९. अथ शङ्खनारी

यदा स्तो यकारौ रसप्रोक्तवर्णौ ।
तदा शङ्खनारी फणीन्द्रोदिता स्यात् ।। ६० ।।

यथा

व्रजे रासकारी मनस्तापहारी ।
वधूभिः समेतो हरिः पातु चेतः ।। ६१ ।।

इति शङ्खनारी २९. 'सोमराजी' त्यन्यत्र ।

---

१. ख. पंक्तिरियं नास्ति । २. क. ख. पुस्तके 'नकार' स्थाने 'नमस्कार' पाठः सोऽसमीचीनः । (सं०) ३. ख. अमन्द ।

*टिप्पणी—१ प्राकृतपैङ्गलम परिच्छेद २ पद्य ४५
*टिप्पणी—२ " " " ४७

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

३०. अथ सुमालतिका

जकारयुगेन विभाति युतेन ।
अहिर्वदतीति सुमालतिकेति ॥ ६२ ॥

यथा— व्रजाधिपबाल विभूषितबाल[1] ।
सुरारिविनाश नमाम्यनलाश ॥ ६३ ॥

इति सुमालतिका ३०. 'मालती'ति पिङ्गले*[1] ।

३१. अथ तनुमध्या

यस्यां शरयुग्मं कुन्तीसुतयुग्मे ।
ग्रन्थैः खलु साध्या सा स्यात्तनुमध्या ॥ ६४ ॥

यथा— राधासुखकारी वृन्दावनचारी ।
कंसासुरहारी पायाद् गिरिधारी ॥ ६५ ॥

इति तनुमध्या ३१.

३२. अथ दमनकम्

नगणयुगलमिह रचयत ।
दमनकमिति परिकलयत ॥ ६६ ॥

यथा— व्रजजनयुत सुरगणवृत ।
जय मुनिनुत व्रजपतिसुत ॥ ६७ ॥

इति दमनकम् ३२.

अत्र प्रस्तारगत्या षडक्षरस्य चतुःषष्टिः ६४ भेदा भवन्ति, तेषु आद्यन्तसहिताः कियन्तो भेदा उक्ताः, शेषभेदाः सुधीभिरूह्या । ग्रन्थविस्तरशङ्कया नात्रोक्ता इति ।°[2]

इति षडक्षरम् ।६।

अथ सप्ताक्षरम्

तत्र— ३३. शीर्षा

वर्णा दीर्घा यस्मिन् स्युः पादेऽद्रीणां संख्याकाः ।
नागाधीशप्रोक्तं तत् शीर्षाभिख्यं वृत्तं स्यात् ॥६८॥

यथा— मुण्डानां मालाजालै-र्भास्वत्कण्ठं भूतेशम् ।
कालव्यालैः खेलन्तं वन्दे देवं गौरीशम् ॥ ६९ ॥

इति शीर्षा ३३.

---

१. ख. भाल ।
*टिप्पणी—१ प्राकृतपैङ्गलम्–परिच्छेद २ पद्य ५४ ।
°टिप्पणी—२ शेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्याः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

३४. अथ समानिका

पक्षिराजभासिता जेन संविभूषिता ।
अन्तगेन शोभिता सा समानिका मता ।। ७० ।।

यथा–

फुल्लपङ्कजाननं केलिशोभिकाननम् ।
वल्लवीमनोहरं नौमि राधिकावरम् ।। ७१ ।।

इति समानिका ३४.

३५. अथ सुवासकम्

द्विजमिह धारय भमनु च कारय ।
भवति सुवासक-मिति गुणलासक ।। ७२ ।।

यथा–

विबुधतरङ्गिणि भुवि कृत[1]रिङ्गिणि ।
तरलतरङ्गिणि जय हरसङ्गिनि ।। ७३ ।।

इति सुवासकम् ३५.

३६. अथ करहञ्चि

नगणमिह धेहि तदनु समवेहि ।
इति किल[श]रांचि भवति करहञ्चि ।। ७४ ।।

यथा–

व्रजभुवि विलास युवतिकृत[रा]स ।
जय निहतदैत्य जघन[2]कृतशैत्य ।। ७५ ।।

इति करहञ्चि ३६.

३७. अथ कुमारललिता

जक'रयुतकर्णा मुनीन्द्रमितवर्णा ।
लघुद्वितयमध्या कुमारललिता स्यात् ।। ७६ ।।

यथा–

व्रजाधिपकिशोरं नवीनदधिचोरम् ।
कुमारललितं [तं] नमामि हृदि सत्तम् ।। ७७ ।।

इति कुमारललिता ३७.

३८. अथ मधुमती

नगणयुगयुता तदनु ग-महिता ।
वदति मधुमती-महिरतिसुमतिः ।। ७८ ।।

---

१. ख 'क्षुभ' ।　२. ख. नयन ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

दितिसुतकदनः शशधरवदनः ।
विलसतु हृदि नः तनुजितमदनः ॥ ७९ ॥

इति मधुमती ३८.

३९. अथ मदलेखा

आद्यन्ते कृतकर्णा शैलैः सम्मितवर्णा ।
मध्ये भेन विशेषा नागोक्ता मदलेखा ॥ ८० ॥

यथा–

गोपालं कृतरासं गो - गोपीजनवासम् ।
वन्दे कुन्दसुहासं वृन्दारण्यनिवासम् ॥ ८१ ॥

इति मदलेखा ३९.

४०. अथ कुसुमततिः

द्विजमनुकलय नमनु विरचय ।
अहिरनुवदति कुसुमततिरिति ॥ ८२ ॥

यथा–

विषमशरकृत कुसुमततियुत ।
युवतिमनुसर मनसि-शयकर ॥ ८३ ॥

इति कुसुमततिः ४०.

अत्र प्रस्तारगत्या सप्ताक्षरस्य अष्टाविंशत्यधिकं शतं १२८ भेदा भवन्ति, तेषु आद्यन्तसहितं भेदाष्टकं प्रोक्तं, शेषभेदा ऊहनीयाः सुबुद्धिभिर्ग्रन्थविस्तर-शङ्कया नात्रोक्ता इति ।*[1]

इति सप्ताक्षरम् ।

अथ अष्टाक्षरं वृत्तम्

तत्र–

४१. विद्युन्माला

सर्वे वर्णा दीर्घा यस्मिन्नष्टौ नागाधीशप्रोक्ता ।
अब्धावब्धौ विश्रामः स्याद् विद्युन्मालावृत्तं तत् स्यात् ॥ ८४ ॥

यथा–

कण्ठे राजद्विद्युन्मालः श्यामाम्भोदप्रख्यो बालः ।
गो-गोपीनां नित्यं पालः पायात् कंसादीनां कालः ॥ ८५ ॥

इति विद्युन्माला ४१.

*१ शेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्याः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

४२. अथ प्रमाणिका

शरैस्तथा च कुण्डलैः क्रमेण याऽतिशोभिता ।
गिरीन्द्रवर्णभासिता प्रमाणिकेति सा मता ॥ ८६ ॥

यथा–

विलोलमौलिशोभितं व्रजाङ्गनासु लोभितम् ।
नमामि नन्ददारकं तटस्थचीरहारकम् ॥ ८७ ॥

इति प्रमाणिका ४२.

४३. अथ मल्लिका

हारमेरुमत्र देहि तं पुनः क्रमादवेहि ।
धेहि योगवर्णमासु(शु) मल्लिकां कुरुष्व वासु ॥ ८८ ॥

यथा–

वेणुरन्ध्रपूरकाय गोपिकासु मध्यगाय ।
वन्यहारमण्डिताय मे नमोऽस्तु केशवाय ॥ ८९ ॥

इति मल्लिका ४३.

इयमेव ग्रन्थान्तरे अष्टाक्षरप्रस्तारे समानिका इत्युच्यते । अस्माभिस्तु सप्ताक्षरप्रस्तारे समानिका प्रोक्तेति विशेषः ।

४४. अथ तुङ्गा

द्विजवरगणयुक्ता तदनु करतलोक्ता ।
पुनरपि गुरुसङ्गा फणिपतिकृततुङ्गा ॥ ९० ॥

यथा–

व्रजविहरणशीलः युवतिषु कृतलीलः ।
हृदि विलसतु विष्णुः दितिसुतकुलजिष्णुः ॥ ९१ ॥

इति तुङ्गा ४४.

४५. अथ कमलम्

नगण-सगणाचितं लघुगुरुविराजितम् ।
फणिनृपविकासितं कमलमिति भाषितम् ॥ ९२ ॥

यथा–

वरमुकुटभासुरः व्रजभुवि हतासुरः ।
व्रजनृपतिनन्दनः जयति हृदि[1] चन्दनः ॥ ९३ ॥

इति कमलम् ४५.

---

१. ख. धृत ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

४६. अथ माणवकक्रीडितकम्

भेन युतं तेन चितं दण्डकृतं हारवृतम् ।
वेदयतिं नागमतं माणवकक्रीडितकम् ॥ ९४ ॥

यथा–

वेणुधरं तापहरं[1] नन्दसुतं बालयुतम् ।
चन्द्रमुखं भक्तसुखं नौमि सदा शुद्धहृदा ॥ ९५ ॥

इति माणवकक्रीडितकम् ४६.

४७. अथ चित्रपदा

भद्वितयाचितकर्णा शैलविकासितवर्णा ।
वारिनिधौ यतियुक्ता चित्रपदा फणिनोक्ता ॥ ९६ ॥

यथा–

वेणुविराजितहस्तं गोपकुमारकशस्तम् ।
वारिदसुन्दरदेहं नौमि कलाकुलगेहम् ॥ ९७ ॥

इति चित्रपदा ४७.

४८. अथ अनुष्टुप्

सर्वत्र पञ्चमं यस्य लघु षष्ठं गुरु स्मृतम् ।
सप्तमं समपादे तु ह्रस्वं तत्स्यादनुष्टुभम् ॥ ९८ ॥

यथा–

कमलं ललितापाङ्गि-कालालिकुलसङ्कुलम् ।
विलूलत् कुन्तलं सुभ्रु ! कलयत्यतुलं सुखम् ॥ ९९ ॥

इति अनुष्टुप् ४८.

४९. अथ जलदम्

कुरु नगणयुगल-मनु च लयुगमिह ।
वरफणिपतिकृति[2] कलय जलदमिति ॥ १०० ॥

यथा–

नवजलदविमल शुभनयनकमल ।
कलय मम हृदय-मखिलजनसदय ॥ १०१ ॥

इति जलदम् ४९.

अत्र च प्रस्तारगत्या अष्टाक्षरस्य षट्पञ्चाशदधिकं द्विशतं २५६ भेदास्तेषु आद्यन्तसहितं कियन्तस्समुदाहृताः, शेषभेदाः प्रस्तार्य समुदाहर्त्तव्या इति ।*

इत्यष्टाक्षरम् ।

---

१. 'तापहरं' क प्रतौ नास्ति ।　२. ख. फणिपतिकृतमथ ।

*टिप्पणी—ग्रन्थान्तरेषु सम्प्राप्ता ये शेषभेदास्ते पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्याः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अथ नवाक्षरम्

तत्र–

५०. रूपामाला

नेत्रोक्ता माः पादे दृश्यन्ते यस्मिन्नङ्का वर्णा भासन्ते ।
यच्छ्रुत्वा भूपाला मोदन्ते तद् रूपामालाख्यं प्रोक्तं ते ।। १०२ ।।

यथा –

भव्याभिः केकाभिः सम्मिश्राः कुर्वन्तः सम्पूर्णाः सर्वाशाः ।
एते दन्तीन्द्राणां संकाशा मेघाः पूर्णास्तस्मात् सन्त्वाशाः ।। १०३ ।।

इति रूपामाला ५०.

५१. महालक्ष्मिका

वैनतेयो यदा भासते साऽपि चेद् वह्निना भूष्यते ।
रन्ध्रवर्णा यदा सङ्गताः सा महालक्ष्मिका सम्मता ।। १०४ ।।

यथा –

कानने भाति वंशीरुतं कामबाणावलीसंयुतम् ।
मानसं भावनादाहितं शीतय स्वं मनो याहि तम् ।। १०५ ।।

इति महालक्ष्मिका ५१.

५२. अथ सारङ्गम्

नगणयकारप्रथितं लघुयुगगैः[1] संकथितम् ।
कविजनसञ्जातमदं कलयत सारङ्गमिदम् ।। १०६ ।।

यथा–

सखि हरिरायाति यदा विरचितकम्पेन हृदा ।
न किमपि वक्तुं कलये कथमपि दृष्टे वलये ।। १०७ ।।

यथा वा–

प्रणमत सर्वाघहरं दितिसुतगर्वापहरम् ।
सुरपतितर्वाहरणं विलसदखर्वाचरणम् ।। १०८ ।।

इति सारङ्गम् ५२.

इदमेव सारङ्गिकेति पिङ्गले* नामान्तरेणोक्तम् ।

---

१. क. युगकैः ।

*टिप्पणी—१ प्राकृतपैंगलम्–परि० २, पद्य

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

५३. अथ पाइन्तम्

यस्यादिर्वै मगणकृतश्चान्तो हस्तेन विरचितः ।
मध्ये भो यस्य विलसितः तत् पाइन्तं फणिभणितम् ।। १०९ ।।

यथा–

गोपालानां रचितसुखं सम्पूर्णेन्दुप्रतिममुखम् ।
कालिन्दीकेलिषु ललितं वन्दे गोपीजनवलितम् ।। ११० ।।

इति पाइन्तम् ५३. पाइन्ता इति पिङ्गले* ।

५४. अथ कमलम्

नगणयुगलमहितं तदनु करविरचितम् ।
फणिकृतमतिविमलं प्रभवति किल कमलम् ।। १११ ।।

यथा–

तरलनयनकमलं रुचिरजलदविमलम् ।
शुभदचरणकमलं कलय हरिमपमलम् ।। ११२ ।।

इति कमलम् ५४.

५५. अथ बिम्बम्

द्विजवरनरेन्द्रकर्णैः प्रविरचितनन्द९वर्णैः ।
फणिनृपतिनागवित्तं कविसुखदबिम्बवृत्तम् ।। ११३ ।।

यथा–

लुलितनलिनालसाक्षः शठललितवाचिदक्षः ।
कलयसि सुरागिवक्षः त्वमपि मयि जातभिक्षः ।। ११४ ।।

इति बिम्बम् ५५.

५६. अथ तोमरम्

सगणं मुदा त्वमवेहि जगणद्वयं च विधेहि ।
नवसङ्ख्या वर्णविधारि कुरु तोमरं सुखकारि ।। ११५ ।।

यथा–

कमलेषु 'संलुलितालि बकुली[कृतं] वरमालि ।
अवलोकये वनमालि वपुरेति'[1] किं वनमालि ।। ११६ ।।

इति तोमरम् ५६.

---

१. ' ' चिह्नमध्यगः पाठो नास्ति ख. प्रतौ ।

* टिप्पणी—प्राकृतपैङ्गलम्–परि० २ पद्य ७० ।

CC-0. JKORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

५७. अथ भुजगशिशुसृता

नगणयुगलसंदिष्टं तदनु मगणनिर्दिष्टम् ।
भुजगशिशुसृतावृत्तं कलयत फणिना वित्तम् ॥ ११७ ॥

यथा– अनुपमयमुनातीरे नवपवस(कमल)लसन्नीरे ।
प्रणमत कदलीकुञ्जे हरिमिह सुदृशां पुञ्जे ॥ ११८ ॥

इति भुजगशिशुसृता ५७.

सृता इत्येव शम्भुप्रभृतिषु पाठः । भृता इति आधुनिकाः पठन्ति*[1]

५८. अथ मणिमध्यम्

आदिभकारं देहि ततः सोऽपि गणान्ते[1] नागमतः ।
मध्यमकारो भाति यदा स्यान्मणिमध्यं नाम तदा ॥ ११९ ॥

यथा– वल्लवनारीमानहरः पूरितवंशीरावपरः ।
गोकुलनेता गोषुचरः पातु हरिस्त्वां गोपवरः ॥ १२० ॥

इति मणिमध्यम् ५८.

५९. अथ भुजङ्गसङ्गता

सगणं विधेहि सङ्गतं जगणं ततोऽपि संयुतम् ।
रगणं च नागसम्मता कथिता भुजङ्गसङ्गता ॥ १२१ ॥

यथा– मम दह्यते मनो भृशं परिभावयाङ्कं कृशम् ।
कथयामि यं तमानये धृतिमालि येन धारये ॥ १२२ ॥

इति भुजङ्गसङ्गता ५९.

६०. अथ सुललितम्

दहन-नमिह वितनु चरणमनु च सुतनु ।
फणिपतिनृपतिकृति कलय सुललितमिति ॥ १२३ ॥

यथा– कलितललितमुकुट निहतदितिजशकट ।
मम सुखमनुकलय करयुगधृतवलय ॥ १२४ ॥

इति सुललितम् ६०.

अत्र प्रस्तारगत्या नवाक्षरस्य द्वादशाधिकपञ्चशत भेदेषु ५१२ आद्यन्त-सहिता एकादशभेदाः प्रदर्शिताः, शेषभेदा ऊहनीयाः ॥ ९ ॥*[2]

इति नवाक्षरं वृत्तम्।

---

१. ख. गणोन्ते ।

*टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी द्वि० स्त० कारिका २४.

* टिप्पणी—२ अवशिष्टाः प्राप्तभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे पर्यालोच्याः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अथ दशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्—

६१. गोपालः

वह्नेस्संख्याका माः पादे यस्मि-न्नन्ते हारश्चैको युक्तो यस्मिन् ।
नागाधीशप्रोक्तं तद् गोपालं पंक्त्यर्णैर्युक्तं मुह्यद्भूपालम् ।। १२५ ।।

यथा—

गो-गोपालानां वृन्दे सञ्चारी भूमौ दृप्यद्दैत्यानां संहारी ।
यद्वेणुक्वाणैर्मोहं संप्रापुः गोप्यः सोऽव्यान् मां यं देवा नापुः[1] ।। १२६ ।।

इति गोपालः ६१.

६२. अथ संयुतम्

सगणं विधाय मनोहरं जगणद्वयं च ततोऽपरम् ।
गुरुसङ्गतं फणिजल्पितं सखि ! संयुतं परिकल्पितम् ।। १२७ ।।

यथा—

सखि गोपवेशविहारिणं शिखिपिच्छचूडविधारिणम् ।
मधुसुन्दराधरशालिनं ननु कामये वनमालिनम् ।। १२८ ।।

यथा वा—

व्रजनायिका हृतकालियं कलयन्ति या मनसालि यम् ।
सदयं मया सह शालिनं कुरु तासु तं वनमालिनम् ।। १२९ ।।

इति संयुतम् ६२.

संयुता इति स्त्रीलिङ्गं पिङ्गले ।*

६३. अथ चम्पकमाला

आदिभकारो यत्र कृतः स्यात् प्रेयसि पश्चान् मोपि मतः स्यात् ।
अन्तसकारो गेन युतः स्यात् चम्पकमालावृत्तमिदं स्यात् ।। १३० ।।

यथा—

सर्वमहं जाने हृदयं ते कामिनि ! किं कोपेन कृतं ते ।
पङ्कजघातैर्लोचनपातैः कामितमाप्तं चेतसि तां तैः ।। १३१ ।।

इति चम्पकमाला ६३.

रुक्मवतीति अन्यत्र । रूपवतीति च क्वचित् नामान्तरेण इयमेव ज्ञेया ।

६४. अथ सारवती

भत्रितयाचित सर्वपदा पण्डितमण्डलिजातमदा ।
गेन युता किल सारवती नागमता गुणभारवती ।। १३२ ।।

---

१. ख. पदैवानापुः ।

*टिप्पणी—प्राकृतपैङ्गलम्, परि० २, पृष्ठ ६० ।

CC-0. ORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

माधवमासि हिमांशुकरं चिन्तय चेतसि तापकरम् ।
माधवमानय जातरसं चित्तमिदं मम तस्य वशम् ।। १३३ ।।

इति सारवती ६४.

६५. अथ सुषमा

आदौ ज(त)गणः पश्चाद् यगणः यस्यामनु पादं स्याद् भगणः ।
हारः कथितश्चान्ते महिता सेयं सुषमा नागप्रथिता[1] ।। १३४ ।।

यथा–

गोपीजनचित्ते संवलितं वृन्दावनकुञ्जे संललितम् ।
वन्दे यमुनातीरे तरलं कंसादिकदैत्यानां गरलम् ।। १३५ ।।

इति सुषमा ६५.

६६. अथ अमृतगतिः

नगण-नरेन्द्र-नविहिता तदनु च चामरमहिता ।
अमृतगतिः कविकथिता फणिभणितोदधिमथिता ।। १३६ ।।

यथा–

सखि मनसो मम हरणं हरिमुरलीकृत[2]करणम् ।
भव मम जीवितशरणं किमु कलये निजमरणम् ।। १३७ ।।

इति अमृतगतिः ६६.

६७. अथ मत्ता

आदौ कुर्यान् मगणसुयुक्तं ज्ञेयं पश्चाद् भगणसुवित्तम् ।
अन्ते हस्तं कुरु युतहारं मत्तावृत्तं कविजनसारम् ।। १३८ ।।

यथा–

वृन्दारण्ये कुसुमितकुञ्जे गोपीवृन्दैः सह सुखपुञ्जे ।
रासासक्तं जलधरनीलं गोपं वन्दे भुवि कृतलीलम् ।। १३९ ।।

इति मत्ता ६७.

६८. अथ त्वरितगतिः

नगणकृता जगणधृता नगणहिता गुरुसहिता ।
इति ह फणिर्भणति यदा त्वरितगतिर्भवति तदा ।। १४० ।।

---

१. ख. प्रहिता । २. ख. रुत ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

सरसमतिर्यदुनृपतिः परमततिस्त्वरितगतिः ।
क्षपितमदः कलितगदः सकलतरिर्जयति हरिः ।। १४१ ।।

यथा वा–

क्षितिविजिति स्थितिविहृति-र्व्रतरतयः परगतयः ।
उरु रुरुधुर्गुरु दुधुवु-र्युधि कुरवः स्वमरिकुलम् ।। १४२ ।।

इति दण्डिनी*[1]

इति त्वरितगतिः ६८.

६९. अथ मनोरमम्

नगणपक्षिराजराजित कुरु मनोरमं सभाजितम् ।
जगणकुण्डलप्रकाशितं फणिप-पिङ्गलेन भाषितम् ।। १४३ ।।

यथा–

कलय भाव नन्दनन्दनं सकललोकचित्तचन्दनम् ।
दितिज-देवराजवन्दनं कठिनपूतनानिकन्दनम् ।। १४४ ।।

इति मनोरमम् ६९.

स्त्रीलिङ्गमिदमन्यत्र*[2] । अत्रापि न तेन काचित् क्षतिः ।

७०. अथ ललितगतिः

दहननमिह कलयत तदनु शरमपि कुरुत ।
वदति फणिनृपतिरिति पठत ललितगतिमिति ।। १४५ ।।

यथा–

ललितललिततरगति हरिरिह समुपसरति ।
तव सविधमयि सुदति ! सफलय निजजनुरति ।। १४६ ।।

इति ललितगतिः ७०.

अत्र प्रस्तारगत्या दशाक्षरस्य चतुर्विंशत्यधिकं सहस्रं १०२४ भेदा भवन्ति तेषु कियन्तो भेदा लक्षिताः, शेषभेदा [स्तु सुधीभिरूह्याः][1] ।*[3]

इति दशाक्षरं वृत्तम् ।

---

१. ख. प्रस्तार्य लक्षणीया ।

*टिप्पणी—१ काव्यादर्श तृतीय परिच्छेद पद्य ८५

*टिप्पणी—२ छंदोमंजरी द्वि० स्त० का० ३४

*टिप्पणी—३ ग्रन्थान्तरेपूपलब्धाः शेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्याः ।

T　CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अथ एकादशाक्षरम्

तत्र–

७१. मालती

यस्याः पादे हारा रुद्रैः संख्याताः,
सर्वे वर्णास्तद्वद् यस्यां विख्याताः ।
सर्वेषां नागानां भूपेनोक्ता सा,
मालत्युक्तेयं लोकानां पूर्णाशा ॥ १४७ ॥

यथा–

सिन्धूनां पृष्ठा[1] यत्पृष्ठे लीयन्ते,
दैत्यात् सर्वे वेदा येनादीयन्ते ।
यत्पुच्छोच्छालैर्देवेन्द्रा घूर्णन्ते,
धर्मं सोऽव्यान्मायामीनस्तूर्णं ते ॥ १४८ ॥

इति मालती ७१.

७२. अथ बन्धुः

भत्रितय-प्रविकाशितवर्णः,
शेषविभूषितभासुरकर्णः ।
पण्डितचेतसि राजति बन्धुः,
पिङ्गलनागकृतो गुणसिन्धुः ॥ १४९ ॥

यथा–

श्यामललोलगजालिसदृक्ष-
श्चण्डसमीरणकम्पितवृक्षः ।
वारिधरस्तरुभञ्जितनीडः,
भूततिवृष्टिकृतावनिपीडः ॥ १५० ॥

इति बन्धुः ७२

इदमेवान्यत्र दोधकमिति नामान्तरेणोक्तं, पिङ्गले* तु उट्टवणिकान्तरकृत-लक्षणान्तरमादाय रूपभेद इति न कश्चिद्विशेषः फलत इति समञ्जसम् ।

७३. अथ सुमुखी

कुरु चरणे प्रथमं नगणं,
तदनु च पक्षमितं जगणम् ।

---

१. ख. प्रेष्ठा ।

*टिप्पणी—१. प्राकृतपैंगलम् परि० २, पद्य १००

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

लघुमथ गं च जनः सुमुखी,
भवति[1] यतः किल सा सुमुखी ।। १५१ ।।

यथा–

तरुणविधूपमितं वदनं,
मम हृदये कुरुते मदनम् ।
इति कथयंश्चरणौ नमते[2],
हरिरनुधेहि दृशं वनिते ।। १५२ ।।

इति सुमुखी ७३.

७४. अथ शालिनी

कृत्वा पादे नूपुरौ हारयुग्मं,
धृत्वा वीणामङ्कितां चामरेण ।
पुष्पप्रोतं चापि[3] कर्णं दधाना,
नागप्रोक्ता शालिनीयं विभाति ।। १५३ ।।

यथा–

चन्द्रार्कौ ते राम[4]कीर्त्तिप्रतापौ,
चित्रं शत्रुक्षोणिपालापकीर्त्तिम् ।
भासागाढध्वान्तमध्वंसयन्तौ,
त्रैलोक्यस्य[5] श्वेततां सन्दधाते ।। १५४ ।।

यतिरप्यत्र वेदलोकैर्ज्ञेया ।

इति शालिनी ७४.

७५. अथ वातोर्मी

पूर्वं पादे मगणेन प्रयुक्ता,
या वै पश्चाद् भगणेनाथ युक्ता ।
वातोर्मीयं तगणान्तस्थकर्णा,
वेदैर्लोकैः स यती रुद्रवर्णा ।। १५५ ।।

यथा–

मायामीनोऽवतु लोकं समस्तं,
लीलागत्या क्षुभिताम्भोधिमध्यः ।
धात्रे दास्यन्नयनं वेदरूपं,
यः कल्पाब्धौ जगृहे तिर्यगाख्याम् ।। १५६ ।।

इति वातोर्मी ७५.

---

१. ख. भवत अतः । २. ख. भजते । ३. ख. वागि । ४. ख. मीन । ५. ख. विश्वस्यापि ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

७६. अथानयोरुपजातिः

चेद् वातोर्मीचरणानां यदि स्यात्,
पाठः सार्द्धं शालिनीवृत्तपादैः ।
इन्द्रप्रोक्ताः सम्भवन्तीह भेदा-
स्तेषां नामान्युपजातीति विद्धि ॥ १५७ ॥

यथा–

गोपं वन्दे गोपिकाचित्तचौरं,
हास्यज्योत्स्नालुब्धहृष्यच्चकोरम् ।
शब्दायन्तं[1] धेनुसंघे धुनानं,
वक्त्रं वंशीमधरे सन्दधानम् ॥ १५८ ॥

इति शालिनी-वातोर्म्युपजातिः ७६.

अनयोरेकत्र पञ्चमाक्षरगुरुत्वादपरत्र च पञ्चमलघुत्वात् अल्पो भेद इति चतुर्दशोपजातिभेदाः, पदेन पदाभ्यां पदैश्च परस्परं योजनात् प्रस्ताररचनया जायन्त इत्युपदेशः ।

७७. अथ दमनकम्

दहनमितनगणरचितं,
तदनु कुरु लघुगुरुयुतम् ।
फणिवरनरपतिमथितं,
दमनकमिदमिति कथितम् ॥ १५९ ॥

---

१. ख. गवन्तं ।

*टिप्पणी—१ छन्दसोऽस्य चतुर्दशभेदानां नामलक्षणोदाहृतयो ग्रन्थकृताप्यनुल्लिखिता, नैव चान्यत्र ग्रन्थेषु भवन्ति समुपलब्धाः,अतश्चात्र प्रस्ताररीत्या चतुर्दशभेदानां लक्षणान्यधो निरूप्यन्ते—

१. शा. वा. वा. वा.
२. वा. शा. वा. वा.
३. शा. शा. वा. वा.
४. वा. वा. शा. वा.
५. शा. वा. शा. वा.
६. शा. वा. वा. शा.
७. शा. शा. शा. वा.
८. वा. वा. वा. शा,
९. शा. वा. वा. शा.
१०. वा. शा. वा. शा.
११. वा. शा. वा. वा.
१२. वा. वा. शा. शा.
१३. वा. वा. शा. वा.
१४. वा. वा. वा. शा.

अत्र 'शा' 'वा' इति संकेतद्वयेन शालिनी-वातोर्मी क्रमशो ज्ञेये ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा –

हृदि कलयत मधुमथनं,
गिरिकृतजलनिधिमथनम् ।
रचितसलिलनिधिशयनं,
तरलकमलनिभनयनम् ॥ १६० ॥

इति दमनकम् ७७.

७८. अथ चण्डिका

आदिशेषशोभिहारभूषितौ,
बिभ्रती पयोधरावदूषितौ ।
स्वर्णशङ्खकुण्डलावभासिता,
चण्डिकाऽहिभूषणस्य सम्मता ॥ १६१ ॥

यथा–

व्यालकालमालिकाविकाशितं,
भालभासितानलप्रकाशितम् ।
शैलराजकन्यकासभाजितं,
नौमि चारुचन्द्रिकाविराजितम् ॥ १६२ ॥

इति चण्डिका ।

सेनिका इति अन्यत्र । क्वचिच्च **श्रेणीति**[१] रगण-जगण-रगण-लघु-गुरुभिर्नामान्तरं, फलतस्तु न कश्चिद्विशेषः । किञ्च इयमेव चण्डिका यदि लघुगुरुक्रमेण क्रियते तदा सेनिका इत्यस्मन्मतम् । अतएव **भूषणकारो**ऽपि*[१] हारशङ्खविपरीताभ्यां रूपनूपुराभ्यां लघुगुरुभ्यां क्रमशो मण्डितां **चण्डिकामेव सेनिकामुदाजहार** । तन्मतमवलम्ब्य वयमपि सलक्षणमुदाहरामः ।

७९. अथ सेनिका

शरेण कुण्डलेन च क्रमेण,
महेश-वर्णसंख्यया भ्रमेण ।
समस्तपादपूरणं विधेहि,
फणिप्रयुक्त-सेनिकामवेहि ॥ १६३ ॥

---

१. ख. रेणीति ।

*टिप्पणी—हारशङ्खकुण्डलेन मण्डिता या पयोधरेण वीणयाङ्किता ।
रूपनूपुरेण चापि दुर्लभा सेनिका भुजङ्गराजवल्लभा ॥ २१२ ॥
[वाणीभूषण द्वि० अ०]

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

सरोजसंस्तरादि संविधेहि,
पिकालिवक्त्रमुद्रणं विधेहि ।
मुरारिवश्यजीवमालि देहि,
मृतामथान्यथा च मामवेहि ॥ १६४ ॥

इति सेनिका ७९.

८०. अथ इन्द्रवज्रा

हारद्वयं मेरुयुतं दधाना,
पादे तथा नूपुरयुग्मकं च ।
हस्तं सुपुष्पं वलयद्वयं च,
संधारयन्ती जयतीन्द्रवज्रा ॥ १६५ ॥

यथा–

आलोक्य वेदस्य सुरारिभीतिं,
यो दैत्यदावं दय(दद)दादिदेवः[1] ।
पाठीनदेहं[2] कठिनं बभार,
मीनः[3] स नो मङ्गलमातनोतु ॥ १६६ ॥

इति इन्द्रवज्रा ८०.

८१. अथ उपेन्द्रवज्रा

पयोधरं कुण्डलयुग्मयुक्तं,
विधारयन्ती वरमेरुयुग्मम् ।
सहारपुष्पं दधती सुकर्ण-
मुपेन्द्रवज्रा रभसेन भाति ॥ १६७ ॥

यथा–

पराम्बुधावामिषवत्सुधांशुं[4],
विलोकितुः पूर्वदरीगतस्य ।
महेन्द्रसिंहस्य विभाति जिह्वा,
समं पुरः सामिखरांशुबिम्बम्[5] ॥ १६८ ॥

इति उपेन्द्रवज्रा ८२.

---

१. ख. ददादिदेवः । २. ख. पाठानदेहं । ३. ख. विष्णुः । ४. वत्सरांशेः ।
५. ख. सामिसुधांशुबिम्बम् ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

८२. अथानयोरुपजातयः

उपेन्द्रवज्राचरणेन युक्तं,
स्यादिन्द्रवज्राचरणं यदैव ।
नागप्रयुक्ताश्च तदैव भेदाः,
महेन्द्रसंख्या उपजातयः स्युः ॥ १६९ ॥

यथा–

मुखन्तवैणाक्षि ! कठोरभानोः,
सोढुं करं नालमिति ब्रुवाणः ।
पटेन पीतेन वनेषु राधां[1],
चकार कृष्णः परिधूतबाधाम् ॥ १७० ॥

इति उपजातिः ८२.

भेदाश्चतुर्दशैतस्याः क्रमतस्तु प्रदर्शिताः ।
प्रस्तार्य स्वनिबन्धेषु पित्राऽतिस्फुटस्ततः ॥ १७१ ॥
विलोकनीया भेदास्ते नास्माभिस्समुदाहृताः ।
कथितत्वाद् विशेषेण ग्रन्थविस्तरशङ्कया*[1] ॥ १७२ ॥

---

१. ख. राधा ।

*टिप्पणी—१. ग्रन्थकृता वृत्तस्यास्य भेदानां लक्षणोदाहरणार्थं स्वपितृश्रीलक्ष्मीनाथभट्टकृतोदाहरणमञ्जरी द्रष्टव्येति संसूचितम्, किन्तु उदाहरणमञ्जरीपुस्तकस्याद्याप्यनुपलब्धत्वादत्रास्माभिः 'प्राकृतपैङ्गला' २(१२२) न्नामलक्षणानि, छन्दःसूत्र- (निर्णयसागरसंस्करण) स्य अनन्तशर्मकृतटिप्पणीत उदाहरणानि समुद्धृतान्यधःप्रदर्शितानि—

१. कीर्तिः [उ. इ. इ. इ]	८. बाला [इ. इ. इ. उ.]
२. वाणी [इ. उ. इ. इ.]	९. आर्द्रा [उ. इ. इ उ]
३. माला [उ. उ. इ. इ.]	१०. भद्रा [इ. उ. इ. उ.]
४. शाला [इ. इ. उ. इ.]	११. प्रेमा [उ. उ. इ. उ.]
५. हंसी [उ. इ. उ. इ.]	१२. रामा [इ. इ. उ. उ.]
६. माया [उ. उ. उ. इ.]	१३. ऋद्धिः [उ. इ. उ उ.]
७. जाया [इ. उ. उ. उ.]	१४. बुद्धिः [इ. उ. उ. उ.]

१. कीर्तिः –

(उ.) स मानसीं मेरुसखः पितॄणां,
(इ.) कन्यां कुलस्य स्थितये स्थितिज्ञः ।

CC-0. BORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

(इ.) मेनां मुनीनामपि माननीया-
(इ.) मात्मानुरूपां विधिनोपयेमे ॥
[कुमारसम्भव १।१८]

२. वाणी—

(इ.) यः पूरयन् कीचकरन्ध्रभागान्,
(उ.) दरीमुखोत्थेन समीरणेन ।
(इ.) उद्गास्यतामिच्छति किन्नराणां,
(इ.) तानप्रदायित्वमिवोपगन्तुम् ॥
[कुमारसम्भव १।८]

३. माला—

(उ.) कपोलकण्डूः करिभिर्विनेतुं,
(उ.) विघट्टितानां सरलद्रुमाणाम् ।
(इ.) यत्र स्नुतक्षीरतया प्रसूतः,
(इ.) सानूनि गन्धः सुरभीकरोति ॥
[कुमारसम्भव १।९]

४. शाला —

(इ.) उद्वेजयत्यङ्गुलिपार्ष्णिभागान्,
(इ.) मार्गे शिलीभूतहिमेऽपि यत्र ।
(उ.) न दुर्वहश्रोणिपयोधरार्ता
(इ.) भिन्दन्ति मन्दां गतिमश्वमुख्यः ॥
[कुमारसम्भव १।११]

५. हंसी [विपरीताख्यानिकी]

(उ.) पदं तुषारस्रुतिधौतरक्तं,
(इ.) यस्मिन्नदृष्ट्वापि हतद्विपानाम् ।
(उ.) विदन्ति मार्गं नखरन्ध्रमुक्तै-
(इ.) र्मुक्ताफलैः केसरिणां किराताः ॥
[कुमारसम्भव १।६]

६. माया—

(उ.) प्रसीद विश्राम्यतु वीरवज्रं,
(उ.) शरैर्मदीयैः कतमः सुरारिः ।
(उ.) बिभेतु मोघीकृतबाहुवीर्यः,
(इ.) स्त्रीभ्योऽपि कोपस्फुरिताधराभ्यः ॥
[कुमारसम्भव ३।६]

७ जाया—

(इ.) कालक्रमेणाथ तयोः प्रवृत्ते,
(उ.) स्वरूपयोग्ये सुरतप्रसङ्गे ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

(उ.) मनोरमं यौवनमुद्वहन्त्या
(उ.) गर्भोऽभवद् भूधरराजपत्न्याः ।।

[कुमारसम्भव १।१९]

८. बाला—

(इ.) यं सर्वशैलाः परिकल्प्य वत्सं,
(इ.) मेरौ स्थिते दोग्धरि दोहदक्षे ।
(इ.) भास्वन्ति रत्नानि महौषधीश्च,
(उ.) पृथूपदिष्टां दुदुहुर्धरित्रीम् ।।

[कुमारसम्भव १।२]

९. आर्द्रा—

(उ.) दिवाकराद् रक्षति यो गुहासु,
(इ.) लीनं दिवाभीतमिवान्धकारम् ।
(इ) क्षुद्रेऽपि नूनं शरणं प्रपन्ने,
(उ.) ममत्वमुच्चैः शिरसां सतीव ।।

[कुमारसम्भव १।१२]

१०. भद्रा (आख्यानिकी)—

(इ.) अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा,
(उ.) हिमालयो नाम नगाधिराजः ।
(इ.) पूर्वापरौ तोयनिधी वगाह्य,
(उ.) स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः ।।

[कुमारसम्भव १।१]

११. प्रेमा—

(उ.) अनन्तरत्नप्रभवस्य यस्य,
(उ.) हिमं न सौभाग्यविलोपि जातम् ।
(इ.) एको हि दोषो गुणसंनिपाते,
(उ.) निमज्जतीन्दोः किरणेष्विवाङ्कः ।।

[कुमारसम्भव १।३]

१२. रामा—

(इ.) यश्चाप्सरोविभ्रममण्डनानां,
(इ.) सम्पादयित्रीं शिखरैर्बिभर्ति ।
(उ.) बलाहकच्छेदविभक्तरागा-
(उ.) मकालसन्ध्यामिव धातुमत्ताम् ।।

[कुमारसम्भव १।४]

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

८३. अथ रथोद्धता

स्वर्णशङ्खवलयं रसाहितं,
सुन्दरं करतलेन सङ्गतम् ।
पुष्पहारमथ राविनूपुरं,
बिभ्रती विजयते रथोद्धता ।। १७३ ।।

यथा–

यामिनीमधिजगाम धामतः,
कामिनीकुलमनन्तसीरिणो[ः] ।
नामनी कथयदाशु संगलत्-
सामिनीवि सखि नन्दनन्दनम् ।। १७४ ।।

यथा वा–

गोपिके तव सुतोऽपि केवलो,
मायिनामयि[1] ममापि नायकः ।
'नीतमेव नवनीतमेधय-
त्येष यः कपटवेषनन्दनः'[2] ।। १७५ ।।

इति रथोद्धता ८३.

८४. अथ स्वागता

हारभूषितकुचाऽतनुबाण-
भ्राजिता कुसुमकङ्कणहस्ता ।

१. क. मायिनामय । २. ख. '–'चोरयत्यनुदिनं गृहे गृहे, न तमेव नवनीतमेषयत् ।

१३. ऋद्धिः—

(उ.) प्रसन्नदिक्पांसुविविक्तवातं,
(इ.) शङ्खस्वनानन्तरपुष्पवृष्टिः ।
(उ.) शरीरिणां स्थावरजङ्गमानां,
(उ.) सुखाय तज्जन्मदिनं बभूव ।।

[कुमारसम्भव १।२३]

१४, बुद्धिः—

(इ.) यत्रांशुकाक्षेपविलज्जितानां,
(उ.) यदृच्छया किंपुरुषाङ्गनानाम् ।
(उ.) दरीगृहद्वारविलम्बिबिम्बा-
(उ.) स्तिरस्करिण्यो जलदा भवन्ति ।।

[कुमारसम्भव १।१४]

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

नूपुरेण च विराजितपादा,
स्वागता भवति चेत् किमिहाऽन्यत् ॥ १७६ ॥

यथा

वल्लवीनयनपङ्कजभानुः,
दानवेन्द्रकुलदावकृशानुः ।
राधिकावदनचन्द्रचकोरः,
संकटादवतु नन्दकिशोरः ॥ १७७ ॥

इति स्वागता*[१] ८४.

८५. अथ भ्रमरविलसिता

पूर्वं मः स्यात् तदनु च भगणः,
पश्चाद् यस्मिन् प्रकटितनगणः ।
अन्ते लो गः कविजनसहिता,
सेयं प्रोक्ता भ्रमरविलसिता ॥ १७८ ॥

यथा–

स्वान्ते चिन्तां परिहर वनिते,
नन्दादेशात् सपदि सुललिते ।
आगन्तास्मिन् हरिरिह न चिरं,
कुञ्जे शय्यां सफलय सुचिरम् ॥ १७९ ॥

इति भ्रमरविलसिता ८५.

---

*टिप्पणी—१ रथोद्धता–स्वागतोपजातिवृत्तास्यास्य ग्रन्थेऽस्मिँल्लक्षणोदाहरणान्यनुल्लिखितानि, नैव च ग्रन्थान्तरेषु समुपलब्धानि, अतोऽत्र चतुर्दशभेदानां प्रस्तारगत्या निम्नलक्षणान्येव समुद्ध्रियन्तेऽस्माभिः—

१.	र.	स्वा.	स्वा.	स्वा.	८. स्वा.	स्वा.	स्वा.	र.
२.	स्वा.	र.	स्वा.	स्वा.	९. र.	स्वा.	स्वा.	र.
३.	र.	र.	स्वा.	स्वा.	१०. स्वा.	र.	स्वा.	र.
४.	स्वा.	स्वा.	र.	स्वा.	११. र.	र.	स्वा.	र.
५.	र.	स्वा.	र.	स्वा.	१२. स्वा.	स्वा.	र.	र.
६.	र.	र.	र.	स्वा.	१३. र.	स्वा.	र.	र.
७.	स्वा.	र.	र.	र.	१४. स्वा.	र.	र.	र.

अत्र 'र' कारेण रथोद्धता 'स्वा'शब्देन स्वागतेति च संज्ञेया ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

८६ अथ अनुकूला

नूपुरमुच्चैः कलितसुरावं,
पुष्पसुहारं सरससुवक्त्रम् ।
रूपविराजत्सवलयहस्तं,
स्यादनुकूला यदि किमिहाऽन्यत् ॥ १८० ॥

यथा–

गोकुलनारीवलयविहारी,
गोधनचारी दितिसुतहारी ।
नन्दकुमारस्तनुजितमारः,
पातु सहारः सुरकुलसारः ॥ १८१ ॥

इति अनुकूला ८६.

८७. अथ मोटनकम्

वन्दे वलयद्वयसंवलितं,
हस्तद्वितयं कलयन्तममुम् ।
गन्धोत्तमपुष्पसुहारधरं,
नागस्य सदा प्रियमोटनकम् ॥ १८२ ॥

यथा–

कृष्णं कलये वनितावलये,
नृत्ये सरसे ललिते सलये ।
दिव्यैः कुसुमैः कलितं मुकुटे,
स्तुत्यं मुनिभिर्वलितं लकुटे ॥ १८३ ॥

इति मोटनकम् ८७.

८८. अथ सुकेशी

बिभ्राणा वलयौ सुवर्णचित्रौ,
संराजत्करसङ्गशोभमानौ ।
हाराभ्यां ललितं कुचं दधाना-
माद्यन्तं कुरुते न कं सुकेशी ॥ १८४ ॥

यथा–

गोपालं कलये विलासिनीनां,
मध्यस्थं कलचारुहासिनीनाम् ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

कुर्वन्तं वदनेन वंशरावं,
यस्तासां प्रकटीचकार भासः[1] ॥ १८५ ॥

इति सुकेशी ८८.

८९. अथ सुभद्रिका

अतनुरचितबाणपञ्चकं,
कुसुमकलितहारसङ्गतम् ।
कुचमनुदधती च नूपुरं,
मुदमिह तनुते सुभद्रिका ॥ १८६ ॥

यथा–

हृदि कलयतु कोपि बालकः,
सुललितमुखलम्बितालकः ।
अलिविलसितपङ्कजश्रियं,
परिकलयति यः स मत्प्रियम् ॥ १८७ ॥

इति सुभद्रिका ८९.

९०. अथ बकुलम्

द्विजवरगणयुगलमिति,
तदनु नगणमपि भवति ।
सुकविफणिपतिविरचित-
मनुकलयत बकुलमिति ॥ १८८ ॥

यथा–

ग्रथय कमलनिचयमिह,
बकुलशयनमनुरचय ।
कुरु मणिहततिमिरगृह-
मिह हरिरुपसरति सखि ! ॥ १८९ ॥

इति बकुलम् ९०.

अत्रापि प्रस्तारगत्या रुद्रसंख्याक्षरस्य अष्टचत्वारिंशदधिकं सहस्रद्वयं २०४८ भेदा भवन्ति। तत्र कियन्तोऽपि भेदा प्रोक्ताः, शेषभेदाः प्रस्तार्य सूचनीया इति[2] ।*[1]

इत्येकादशाक्षरम् ।

---

१. ख. भावम् । २. पंक्तिद्वयं नास्ति क. प्रतौ ।

*टिप्पणी— १ ग्रन्थान्तरेषु [illegible] परिशिष्टे [illegible]वेक्षणीयाः ।

CC-0. RORI Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अथ द्वादशाक्षरम्

तत्र–

६१. आपीडः

यस्मिन् वेदानां संख्याका मा दृश्यन्ते,
पादे वर्णाः सूर्यैः सम्प्रोक्ता जायन्ते ।
आपीडाख्यं दिव्यं वृत्तं धेहि स्वान्ते,
सम्प्रोक्तं नागानामीशेनैतत्कान्ते ! ॥ १६० ॥

यथा–

कूर्मो नित्यं मामव्यादत्यन्तं पीनः,
यत्पृष्ठेऽद्रिः कस्मिंश्चित्कोणे संलीनः ।
यः सर्वेषां देवानां कार्यार्थं जात-
स्त्रैलोक्ये नानारत्नादाता विख्यातः ॥ १६१ ॥

इति आपीडः ६१.

अयमेवान्यत्र विद्याधरः*[1] ।

६२. अथ भुजङ्गप्रयातम्

लघुः पूर्वमन्ते भवेद् यत्र कर्णः,
रवेः संख्यया यत्र चाऽऽभाति वर्णः ।
तकारत्रयं यत्र मध्ये सुयुक्तं,
भुजङ्गप्रयातं तदा भावि वृत्तम् ॥ १६२ ॥

यथा–

चलत्कुन्तलं केलिलोलाकुलाक्षं,
सदा वल्लवीलालितं नन्दबालम् ।
कपोलोल्लसत्कुण्डलालङ्कृताऽऽस्यं,
विलोलामलस्रग्ललामं नमामि ॥ १६३ ॥

इति भुजङ्गप्रयातम् ६२.

६३. अथ लक्ष्मीधरम्

भानुसंख्यामितैरक्षरैर्भासितं,
वेदसंख्यैस्तथा पक्षिभिः शोभितम् ।
सर्वनागाधिराजेन संभाषितं,
तद्धि लक्ष्मीधरं मानसे लोभितम् ॥ १६४ ॥

---

*टिप्पणी—१ प्राकृतपैंगलम्, परि० २, पद्य ११२, एवं वाणीभूषणम् द्वि० अ० २२६

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

वेणुनादेन संमोहयन् गोकुले,
वल्लवीमानसं रासकेलीं व्यधात् ।
यः सदा योगिभिर्वन्दितस्तं तदा[1],
गोपिकानायकं गोकुलेन्द्रं भजे ॥ १६५ ॥

इति लक्ष्मीधरम् ६३.

इदमेवान्यत्र स्रग्विणी* इति नामान्तरं लभते ।

६४. अथ तोटकम्

यदि वै लघुयुग्मगुरुक्रमतः
रविसम्मितवर्ण इह प्रमितः ।
अहिभूपतिना फणिना भणितं,
सखि तोटकवृत्तमिदं गणितम् ॥ १६६ ॥

यथा–

अलिमालितमालतिभिर्ललितं,
ललितादिनितम्बवतीकलितम् ।
कलितापहरं कलवेणुकलं,
कलये नलिनामलपादतलम् ॥ १६७ ॥

इति तोटकम् ६४.

६५. अथ सारङ्गकम्

जायेत हारद्वयेनाथ शङ्खेन,
यद्वै क्रमात् सूर्यसंख्यातवर्णेन ।
सारङ्गकं तत्तु सारङ्गनेत्रेण,
संभाषितं सर्वनागाधिराजेन ॥ १६८ ॥

यथा–

श्रीनन्दसूनो कथं धृष्ट गोपाल,
गोपीषु धाष्ट्यं विधत्से महामाल ।
आस्थाय बालैः सहायं सुखस्थस्य,
भीतिर्न ते कंसतो गोकुलस्य ॥ १६६ ॥

इति सारङ्गकम् ६५.

---

१. ख. हृदा ।

*टिप्पणी—छन्दोमञ्जरी, द्वि० स्त० का० ७१, एवं वृत्तरत्नाकर द्वि० अ० ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

९६. अथ मौक्तिकदाम

पयोनिधिभूपतिमन्त्र विधेहि,
खरांशुविराजितवर्णमवेहि ।
फणीन्द्रविकासितसुन्दरनाम,
हृदा परिभावय मौक्तिकदाम ॥ २०० ॥

यथा–

स्वबाहुबलेन विनाशितकंस,
कपोलविलोलललामवतंस ।
समस्तमुनीश्वरमानसहंस,
सदा जय भासितयादववंश ॥ २०१ ॥

इति मौक्तिकदाम ९६.

९७. अथ मोदकम्

वेदविभावितभं परिभावय,
भानुविभासितवर्णमिहानय ।
भामिनि ! पिङ्गलनागसुभाषित-
मोदकवृत्तमितीह निभालय ॥ २०२ ॥

यथा–

नन्दकुमार विपारगुणाकर,
गोपवधूमुखकंजदिवाकर ।
मद्वचनं हितमाशु निशामय,
कुञ्जगृहं ननु याहि[1] निशामय ॥ २०३ ॥

इति मोदकम् ९७.

९८. अथ सुन्दरी

कुसुमरूपरसेन समाहिता,
ललितनूपुररावविहारिणी ।
कुचयुगोपरिहारविराजिता,
हरति कस्य मनो न हि सुन्दरी ॥ २०४ ॥

यथा–

उदयदर्द्धदिवाकरडंबरं[2],
ललितवर्तुलवाद्यविशेषकम् ।

---

१. ख. माधि । २. ख. द्दुंरं ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

सकलदिग्रचितं विहगारवैः,
स रुतमातनुते विधिभिक्षुकः ।। २०५ ।।

यथा वा, 'वाणीभूषणे'*[1]–

असुलभा शरदिन्दुमुखीप्रिया,
मनसि कामविचेष्टितमीदृशम् ।
मलयमारुतचालितमालती-
परिमलप्रसरो हृतवासरः ।। २०६ ।।

इति सुन्दरी ६८.

६९. अथ प्रमिताक्षरा

सुसुगन्धपुष्पकृतहारकुचा[1],
सरसेन शंखरचितेन यथा ।
वलयेन शोभितकरा कुरुते,
प्रमिताक्षरा रसिकचित्तमुदम् ।। २०७ ।।

यथा–

हरपर्वत इ(ए)व बभुर्गिरयः,
पतगास्तथा जगति हंसनिभाः ।
यमुनापि देवतटिनीव बभौ,
हिमभाससा जगति संवलिते ।। २०८ ।।

यथा वा, 'भूषणे'*[2]–

अभजद् भयादिव नभो वसुधां,
दधुरेकतामिव समेत्य दिशः ।
अभवन् महीपदयुगप्रमिता,
तिमिरावलीकवलिते जगति ।। २०९ ।।

इति प्रमिताक्षरा ६९.

१००. अथ चन्द्रवर्त्म

पक्षिराजमथनं कुरु चरणे,
सं विधेहि भगणं सुखकरणे ।
हस्तमत्र कुरु पिङ्गलकथितं,
चन्द्रवर्त्म कविभिर्हृदि मथितम् ।। २१० ।।

---

१ क. रुचा ।

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम्-द्वितीय अध्याय, पद्य २५२
२ " " २५४

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

देवकूलिनि मिलद्वनसलिले,
दिव्यपुष्पकलिते सुरनमिते ।
चन्द्रशेखरजटावलिवलिते,
देहि शं मम सदा भुवि ललिते ।। २११ ।।

यथा वा–

चन्द्रवर्त्म पिहितं घनतिमिरै-
राजवर्त्म रहितं जनगमनैः ।
इष्टवर्त्म तदलङ्कुरु सरसे,
कुञ्जवर्त्मनि हरिस्तव कुतुकी ।। २१२ ।।

इति छन्दोमञ्जर्यामपि*[1] ।

इति चन्द्रवर्त्म १००.

इति प्रथमं शतकम् ।

१०१. अथ द्रुतविलम्बितम्

कुरु नकारमथो भगणं ततः,
सरवनूपुरपुष्पगुरुं कुरु ।
कलय शब्दमतो गुरुरन्ततो,
द्रुतविलम्बितवृत्तमिदं सखि ! ।। २१३ ।।

अत्रापि समपादस्थयोः पादान्तलघ्वोः वैकल्पिकं गुरुत्वम् ।

यथा–मत्कृत 'पाण्डवचरिते' महाकाव्ये कर्णवर्णनप्रस्तावे––

नृषु विलक्षणमस्य पुनर्वपु-
स्सहजकुण्डलवर्मसुमण्डितम् ।
सकललक्षणलक्षितमद्भुतं,
न घटते रथकारकुलोचितम् ।। २१४ ।।

यथा वा, तत्रैव विदुरोक्तौ—

भिदुरमानसमाशुचिचक्षुषं,
स विदुरो निनदैरतिभीषणैः ।
सकलबालपराक्रमवर्णनैः
सदसि भूमिपतिं समबोधयत् ।। २१५ ।।

टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तबक, कारिकाया ६५ उदाहरणम् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा वा, छन्दोमञ्जर्याम्[१]*–

तरणिजापुलिने नवपल्लवी-
परिषदा सह केलिकुतूहलात् ।
द्रुतविलम्बितचारुविहारिणं,
हरिमहं हृदयेन सदा वहे ॥ २१६ ॥

इत्यादि रघुवंशमहाकाव्यादिषु च सहस्रशो निदर्शनानि ।

इति द्रुतविलम्बितम् १०१.

१०२. अथ वंशस्थविला

पयोधरं हारयुगेन सङ्गतं,
करं तथा पुष्पसुकङ्कणान्वितम् ।
सुरावयुक्तं दधती च नूपुरं,
विभाति वंशस्थविला सखे ! पुरः ॥ २१७ ॥

यथा–

विलोलमौलिं तरलावतंसकं,
व्रजाङ्गनामानसलोभकारकम् ।
करस्थवंशं परिवीतबालकं,
हरिं भजे गोकुलगोपनायकम् ॥ २१८ ॥

इति वंशस्थविला १०२.

नपुंसकमिदमन्यत्र*[२] । वंशस्तनितमिति क्वचित् ।

१०३. अथ इन्द्रवंशा

कर्णं सुरूपं धृतकुण्डलद्वयं,
पुष्पं सुगन्धं दधती च नूपुरम् ।
वक्षोजसंभूषितहारशोभिनी,
स्यादिन्द्रवंशा हृदि मोददायिनी ॥ २१९ ॥

यथा–

कूर्मः श(स)मव्यान् मम यः पयोनिधौ,
पृष्ठे महापर्वतघोरघर्षणात् ।

---

*टिप्पणी––१ छन्दोमञ्जरी, द्वितीय स्तबक, कारिकाया ७४ उदाहरणम् ।
२ 'वदन्ति वंशस्थविलं जतौ जरौ' छन्दोमंजरी द्वि० स्त० का० ६६

CC-0. ORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

कद्रू[1]विनोदेन सुखातिसंभ्रमान्,
निद्रां जगामालसमीलितेक्षणः ॥ २२० ॥

यथा वा–

कम्पायमाना सखि ! सर्वतो दिशं,
शम्पां दधाना नवनीरदावलिः ।
कम्पायितं संविदधाति मानसं,
मां पाहि नन्दस्य सुतं समानय ॥ २२१ ॥

इति इन्द्रवंशा १०३.

१०४. अथानयोरुपजातयः

यदीन्द्रवंशाचरणेन सङ्गता[2],
पादोऽपि वंशस्थविलस्य जायते ।
भेदास्तदा स्युः सुरराजसंख्यकाः,
नागोदितास्तेप्युपजातिसंज्ञकाः ॥ २२२ ॥

इति वंशस्थविलेन्द्रवंशोपजातिः*[1] ।

अनयोरप्येकत्र प्रथमाक्षरं लघुः, अपरत्र च प्रथमाक्षरं गुरुरिति स्वल्पभेदत्वाच्चतुर्दशोपजातिभेदाः पूर्ववदेव प्रस्ताररचनया भवन्ति । तथा चात्र सर्वत्र स्वल्पभेदाच्छन्दोभ्यामुपजातयो भवन्तीति उपदिश्यत इति दिक् ।

---

१. ख. कुण्डविनोदेन । २. ख. सङ्गतः ।

*टिप्पणी—१ क. ख. प्रतौ वंशस्थविलेन्द्रवंशोपजातेरुदाहरणं न विद्यते ।

*टिप्पणी—२ ग्रन्थकारेण वंशस्थविलेन्द्रवंशोपजातेर्द्व तस्य चतुर्दशभेदाः स्वीकृताः, परं तत्तद्भेदानां लक्षणोदाहरणादिभिः प्रतिपादनं नैव कृतम् । अतोऽत्रास्माभिरन्यग्रन्थाधारेण तत्तन्नामलक्षणोदाहरणानि प्रस्तूयन्ते ।

१. वैरासिकी	[वं. इ. इ. इ]	८. वासन्तिका	[इ. इ. इ. वं.]
२. रताख्यानिकी	[इ. वं. इ. इ.]	९. मन्दहासा	[वं. इ. इ. वं.]
३. इन्दुमा	[वं. वं. इ. इ.]	१०. शिशिरा	[इ. वं. इ. वं.]
४. पुष्टिदा	[इ. इ. वं. इ.]	११. वैधात्री	[वं. वं. इ. वं.]
५. उपमेया	[वं. इ. व. इ.]	१२. शङ्खचूडा	[इ. इ. वं. वं.]
६. सौरभेयी	[इ. वं. वं. इ.]	१३. रमणा	[वं. इ. वं. वं.]
७. शीलातुरा	[वं. वं. वं. इ.]	१४. कुमारी	[इ. वं. वं. वं.]

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१. वैरासिकी—

वं. महाचमूनामधिपाः समन्ततः,
इ. संनह्य सद्यः सुतरामुदायुधाः ।
इ. तस्थुर्विनम्रक्षितिपालसङ्कुले,
इ. तस्याङ्गणद्वारि बहिःप्रकोष्ठके ।।

[कुमारसम्भव १५।६]

२. रताख्यानिकी—

इ. पद्मै रनन्वीतवधूमुखद्युतो,
वं. गता न हंसैः श्रियमातपत्रजाम् ।
इ. दूरेऽभवन् भोजबलस्य गच्छतः,
इ. शैलोपमातीतगजस्य निम्नगाः ।।

[शिशुपालवधम् १२।६१]

३. इन्दुमा—

वं. चमूप्रभुं मन्मथमर्दनात्मजं,
वं. विजित्वरीभिर्विजयश्रियाश्रितम् ।
इ. श्रुत्वा सुराणां पृतनाभिरागतं,
इ चित्ते चिरं चुक्षुभिरे महासुराः ।।

[कुमारसम्भव १५।२]

४. पुष्टिदा—

इ. श्रुत्वेति वाचं वियतो गरीयसीं,
इ. क्रोधादहङ्कारपरो महासुरः ।
वं. प्रकम्पिताशेषजगत्त्रयोऽपि स-
इ. न्नाकम्पतोच्चैर्दिवमभ्यधाच्च सः ।

[कुमारसम्भव १५।३६]

५. उपमेया [रामणीयकम्]—

वं. नितान्तमुत्तुङ्गतुरङ्गहेषितै-
इ. रुद्दामदानद्विपबृंहितैः शतैः ।
वं. चलद्ध्वजस्यन्दननेमिनिःस्वनै-
इ. श्चाभून्निरुच्छ्वासमथाकुलं नभः ।

[कुमारसम्भव १४।४१]

६. सौरभेयी—

इ. सङ्गेन वो गर्भतपस्विनः शिशु
वं. र्वराक एषोऽन्तमवाप्स्यति ध्रुवम् ।
वं. अतस्करस्तस्करसङ्गतो यथो,
इ. तद्वो निहन्मि प्रथमं ततोप्यमुम् ।

[कुमारसम्भव १५।७२]

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

७. शीलातुरा—

वं. निवार्यमाणैरभितोनुयायिभि-
वं. र्ग्रहीतुकामैरिव तं मुहुर्मुहुः ।
वं. अपाति गृध्रैरभिमौलि चाकुलै-
इ. र्भविष्यदेतन्मरणोपदेशिभिः ।

[कुमारसम्भव १५।२६]

८. वासन्तिका—

इ. अभ्याजतोऽभ्यागततूर्णतर्णका-
इ. न्निर्याणहस्तस्य पुरो दुधुक्षतः ।
इ. वर्गाद्गवां हुंकृतिचारु निर्यती-
वं. रर्मधोरैक्षत गोमतल्लिकाम् ।

[शिशुपालवध १२।४१]

९. मन्दहासा—

वं. न जामदग्न्यः क्षयकालरात्रिकृत्,
इ. स क्षत्रियाणां समराय वल्गति ।
इ. येन त्रिलोकीसुभटेन तेन ते,
वं. कुतोऽवकाशः सह विग्रहग्रहे ।

[कुमारसम्भव १५।३७]

१०. शिशिरा—

इ. साऽवज्ञमुन्मील्य विलोचने सकृत्,
वं. क्षणं मृगेन्द्रेण सुषुप्सुना पुनः ।
इ. सैन्यान्न यातः समयाऽपि विव्यथे,
वं. कथं सुराजम्भवमन्यथाऽथवा ।

[शिशुपालवध १२।५२]

११. वैधात्री—

वं. प्रयान्ति मन्त्रः(न्त्रैः) प्रशमं भुजङ्गमा-
वं. न मन्त्रसाध्यास्तु भवन्ति धातवः ।
इ. केचिच्च कञ्चिच्च दशन्ति पन्नगाः,
वं. सदा च सर्वं च तुदन्ति धातवः ।

[सौन्दरानन्द]

१२. शङ्खचूडा—

इ. निम्नाः प्रदेशाः स्थलतामुपागमन्,
इ. निम्नत्वमुच्चैरपि सर्वतश्च ते ।
वं. तुरङ्गमाणां व्रजतां खुरैः क्षता-
वं. रथैर्गजेन्द्रैः परितः समीकृताः ॥

[कुमारसम्भव १४।४४]

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१०५. अथ जलोद्धतगतिः

अवेहि जगणं ततोऽपि सगणं,
विधेहि जगणं पुनश्च सगणम् ।
फणीन्द्रकथिता जलोद्धतगतिः,
चकास्ति हृदये कृतातिसुमतिः ॥ २२३ ॥

यथा–

नवीननलिनोपमाननयनं,
पयोदरुचिरं पयोधिशयनम् ।
नमामि कमलासुसेवितहरिं,
सदा निजहृदा भवाम्बुधितरिम् ॥ २२४ ॥

इति जलोद्धतगतिः १०५.

१०६. अथ वैश्वदेवी

कर्णा जायन्ते यत्र पूर्वं नियुक्ताः,
वह्नेस्संख्याकाः य-द्वयेन प्रयुक्ताः ।
बाणार्णैश्छिन्ना वाजिभिश्चापि भिन्ना,
नागेनोक्ता सा वैश्वदेवी विभाति ॥ २२५ ॥

यथा–

वन्दे गोविन्दं वारिधौ राजमानं,
श्रीलक्ष्मीकान्तं नागतल्पे शयानम् ।
अत्यन्तं पीतं वस्त्रयुग्मं दधानं,
पार्श्वे तिष्ठंत्या पद्मया सेव्यमानम् ॥ २२६ ॥

इति वैश्वदेवी १०६.

---

१३. रमणा—
वं. बली बलारातिबलाऽतिशातनं,
इ. दिग्दन्तिनादद्रवनाशनस्वनम् ।
वं. महीधराम्भोधिनवारितक्रमं,
वं. ययौ रथं घोरमथाधिरुह्य सः ॥
[कुमारसम्भव १५।८]

१४. कुमारी—
इ. किं ब्रूथ रे व्योमचरा महासुराः,
वं. स्मरारिसूनुप्रतिपक्षवर्तिनः ।
वं. मदीयबाणव्रणवेदना हि सा-
वं. ऽधुना कथं विस्मृतिगोचरीकृता ।
[कुमारसम्भव १५।४०]

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१०७. अथ मन्दाकिनी

इह यदि नगणद्वयं जायते,
तदनु च रगणद्वयं दीयते ।
फणिपमुखसुमेरुमन्दाकिनी,
प्रभवति हि तदैव मन्दाकिनी ॥ २२७ ॥

यथा–

सखि ! मम पुरतो मुरारेः कथां,
कुरु न कुरु तथा वृथाऽन्यां कथाम् ।
दि मधुरिपुरेति वृन्दावनं,
कलय मम तदा शरीरावनम् ॥ २२८ ॥

इति मन्दाकिनी १०७.

क्वचिदियमेव प्रभेति*[1] नामान्तरं लभते । 'सह शरधि निजं तथा कार्मुकम्' इत्यादि किराते*[2] । यथा वा–'अतिसुरभिरभाजि पुष्पश्रिया' इति माघेऽपि । *[3]

१०८. अथ कुसुमविचित्रा

विरचय विप्रं तदनु च कर्णं,
पुनरपि तद्वत् कुरु रविवर्णम् ।
श्रुतिमितपादे विमलचरित्रा,
परमपवित्रा कुसुमविचित्रा ॥ २२९ ॥

---

*टिप्पणी–१ वृत्तरत्नाकरः अ० ३, का० ६५.

*टिप्पणी–२ सह शरधि निजंस्तथा कार्मुकं
वपुरतनु तथैव संवर्मितम् ।
निहितमपि तथैव पश्यन्नसिं,
वृषभगतिरुपाययौ विस्मयम् ॥

[किरातार्जुनीयम् स० १८, प० १६]

*टिप्पणी–३ अतिसुरभिरभाजि पुष्पश्रिया-
मतनुतरतयेव संतानकः ।
तरुणपरभृतः स्वनं रागिणा-
मतनुत रतये वसन्तानकः ॥

[शिशुपालवधम् स० ६, प० ६७]

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

भययुतचित्तो विगतविलम्बं,
कथमपि यातो हरितकदम्बम् ।
तरणिसुतायास्तटभुवि कृष्णः,
स जयति गोपीवसनसतृष्णः ॥ २३० ॥

इति कुसुमविचित्रा १०८.

१०९. अथ तामरसम्

सरससुरूपसुगन्धसशोभं,
कुचयुगसङ्गमसंवृत[1]लोभम् ।
रसयुतहारयुगाहितमुक्तं,
कलयत तामरसं वरवृत्तम् ॥ २३१ ॥

यथा –

विलसति मालतिपुष्पविकासः,
न हि हरिदर्शनतो वनवासः ।
सखि ! नवकेतकिकण्टककर्षः,
वनकलितोनुतनूरुहहर्षः ॥ २३२ ॥

इति तामरसम् १०९.

११०. अथ मालती

कलय नकारमतोपि नायकौ,
तदनु विधारय पक्षिणां पतिम् ।
फणिपतिपिङ्गलनागभाषिता,
कविहृदि राजति मालती मता ॥ २३३ ॥

यथा–

कलयति[2] चेतसि नन्ददारकं,
सकलवधूजनचित्त[3]हारकम् ।
निखिलविमोहकवेणुधारकं,
दितिसुतसङ्घविनाशकारकम् ॥ २३४ ॥

इति मालती ११०

---

१. ख. संभृतम्। २. ग. कलयत ३. ख. चीरहारकम्।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

कुत्रचिद् इयमेव **यमुना** इति नामान्तरं लभते । 'अयि विजहीहि दृढोपगूहनम्' इत्युदाहरणान्तरं भारविस्थिरम्[1]* ।

१११. अथ मणिमाला

आदौ विदधाना हारौ वरमेरू,
युक्ता रववद्भ्यां सन्नूपुरकाभ्याम् ।
कर्णे रसपुष्पोद्यत्कुण्डलयुग्मा,
छिन्ना रसयुक्तैर्वर्णैर्मणिमाला ।। २३५ ।।

यथा–

गौरीकृतदेहं व्यालावलिमालं,
नृत्ये विधुनानं कृत्तिं पुरकालम् ।
लोलानलकालैः[1] संभूषितभालं,
कामैः शरणं त्वं संप्राप्य शिवालम् ।। २३६ ।।

इति मणिमाला १११.

११२. अथ जलधरमाला

यस्यामादौ पदविरतौ वा कर्णाः,
पक्षप्रोक्ता दिनकरसंख्यावर्णाः ।
मध्ये विप्रो जलनिधिशैलैश्छिन्ना,
नागप्रोक्ता जलधरमाला भिन्ना ।। २३७ ।।

यथा–

शीतैः पुष्पैरभिनवशय्यां कृत्वा,
ताम्यच्चित्ता मलयजमूर्तिं धृत्वा ।
वक्षस्पीठे तव सुचिरं ध्यायन्ती,
तिष्ठत्येषा शठविधिदोषं पश्यन्ती ।। २३८ ।।

इति जलधरमाला ११२.

---

१. ख. कीलैः ।

***टिप्पणी—१.** अयि विजहीहि दृढोपगूहनं
त्यज नवसङ्गमभीरु ! वल्लभम् ।
अरुणकरोद्गम एष वर्तते,
वरतनु ! संप्रवदन्ति कुक्कुटाः ।।

पद्यमिदं वृत्तमौक्तिककारेण छन्दोमञ्जरीकृता च भारवेः स्वीकृतं किन्तु तत्कृतौ किरातार्जुनीये तु नास्त्युपलब्धिरस्य । अतोऽन्यत्र चोह्यम् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

११३. अथ प्रियंवदा

कुसुमसङ्गतकरा रसाहिता,
विमलगन्धकुचहारभूषिता ।
सरुतनूपुरसुशोभिता सदा,
जयति चेतसि सखे ! प्रियंवदा ।। २३९ ।।

यथा–

व्रजवधूजनमनोविमोहनं,
सरसकेलिषु कलानिकेतनम् ।
सरसचन्दनविलेपचर्चितं,
कलय चेतसि हरिं सदार्चितम् ।। २४० ।।

इति प्रियंवदा ११३.

११४. अथ ललिता

हारद्वयाचितकुचेन भूषिता,
हस्तस्थितोज्ज्वलसुपुष्पकङ्कणा ।
पादे विरावयुतनूपुराञ्चिता,
चित्ते चकास्ति ललिता विलासिनी ।। २४१ ।।

यथा–

गोपीषु केलिरससक्तचेतसं,
सूर्यात्मजा विलुलितातिवेतसम् ।
चित्तावमोहकरवेणुधारकं,
वन्दे सदा ललितनन्दधारकम् ।। २४२ ।।

इति ललिता ११४.

इयमेव अन्यत्र सुललिता इति गणभेदेन उक्तम् । अतएव 'तो भो जरौ सुललिता श्रुतौ यतिः ।' इति वृत्तसारे सयति लक्षणं लक्षितमिति ।

११५. अथ ललितम्

धेहि भकारं तदनु च तगणं,
धारय नं वा तदनु च सगणम् ।
बाणविरामं फणिपतिकलितं,
चेतसि वृत्तं कलयत ललितम् ।। २४३ ।।

T　CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

चेतसि कृष्णं कलयति[१] ललितं,
गोकुलगोपीजनहृदि वलितम् ।
वादितवंशं तरलितमुकुटं,
कारितरासं विनिहतशकटम् ।। २४४ ।।

इति ललितम् ११५.

इदमेव अन्यत्र ललना*[१] इत्युक्तम् ।

११६. अथ कामदत्ता

द्विजवर-सगणौ विधेहि तूर्णं,
जगणमथ ततोऽपि देहि कर्णम् ।
सरससुकविपिङ्गलेन वित्ता,
लसति कविमुखेषु कामदत्ता ।। २४५ ।।

यथा–

कलपरिमलचञ्चलालिमालं,
सुललितदलमालतीविशालम् ।
वनमिदमलिसंलुलद्रसालं,
हरिमिह हि विना सुखाय नालम् ।। २४६ ।।

इति कामदत्ता ११६.

११७. अथ वसन्तचत्वरम्

यदा लघुर्गुरुः क्रमेण भासते,
खरांशुवर्णकेन चेद् विकासते ।
फणीन्द्रनागभाषितं सुसत्वरं,
विधेहि मानसे वसन्तचत्वरम् ।। २४७ ।।

यथा–

मुदा विलोलमौलिगोपनायकं,
हृदा सदैव चित्तमोददायकम् ।
यदा विभावयिष्यसि त्वमाशु रे,
तदा सुखे निमज्जितासि[२] भासुरे ।। २४८ ।।

इति वसन्तचत्वरम् ११७.

---

१. ख. ख. कलयत ।　२ ख. निमङ्क्ष्यसि प्रभासुरे ।

*टिप्पणी—१ छन्दःसूत्र टि०पृ० १३७

T　CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

११८. अथ प्रमुदितवदना

सरसकविजनाहिता भाविता,
भवति सुकविपिङ्गलेनोदिता ।
सकलरसिकचित्तहृद्या तदा,
प्रमुदितवदना तु नौ रौ यदा ॥ २४९ ॥

यथा–

कलय सखि ! विराजि वृन्दावनं,
सहचरि ! कुरु मे शरीरावनम् ।
यदि कथमपि मानसे भावयेः,
यदुकुलतिलकं तदैवानयेः ॥ २५० ॥

इति प्रमुदितवदना ११८.

इयमेव अन्यत्र प्रभा*[1] ।

११९. अथ नवमालिनी

सखि ! नवमालिनीं रसविरामां,
ननु कलयालि पूर्वयतियुक्ताम् ।
नजभयकारभावितपदाढ्यां,
फणिपतिनागपिङ्गलविभक्ताम् ॥ २५१ ॥

यथा–

इह कलयालि ! नन्दसुतबालं,
नवघनकान्तिनिर्जिततमालम् ।
सरसविलासरासकृतमालं,
मुनिवरयोगिमानसमरालम् ॥ २५२ ॥

इति नवमालिनी ११९.

१२० अथ तरलनयनम्

जलधि-नगणमिह रचयत,
रविमित लघुमिह कलयत ।
सुकविफणिपतिरिति वदति,
तरलनयनमिति हि भवति ॥ २५३ ॥

*टिप्पणी—१ वृत्तरत्नाकर: प्र० ३, का० ६५

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

तव कुसुमनिभहसितमयि,
गततनुमनुकलयति मयि ।
इति हि सखि ! हरिरनुवदति,
परिकलय दृशमयि सुदति ! ॥ २५४ ॥

इति तरलनयनम् १२०.

'अत्र प्रस्तारगत्या द्वादशाक्षरस्य षण्णवत्यधिकं सहस्रचतुष्टयं ४०९६ भेदा भवन्ति, तेषु कियन्तः प्रदर्शिताः शेषभेदाः, सुधीभिः प्रस्तार्य सूचनीया इति[1] ।'*[1]

इति द्वादशाक्षरम् ।

अथ त्रयोदशाक्षरम्

तत्र–

१२१. वाराहः

यस्मिन् पादे दृश्यन्ते संयुक्ताः षट्कर्णाः,
सूर्याणामेकेनाग्राणां संख्याका वर्णाः ।
कर्णस्यान्ते यस्मिन् संप्रोक्तश्चैको हारः,
सोऽयं नागोक्तो वाराहो वृत्तानां सारः ॥ २५५ ॥

यथा–

कल्पान्तप्रोद्यद्वारां राशौ दृब्धा मग्नं,
यः क्षोणीपृष्ठं दंष्टाग्रे कृत्वा संलग्नम् ।
हत्वा दैत्यं दृप्यन्तं सिन्धोर्मध्यादागात्,
कुर्यात् कालः[2] सोऽयं सर्वेषां रक्षां वेगात् ॥ २५६ ॥

इति वाराहः १२१.

१२२. अथ माया

हारौ कृत्वा स्वर्णसुमेरुद्वययुक्तौ,
प्रत्येकं हस्तौ वलयाभ्यामपि सक्तौ ।
मिथ्याचित्तस्थस्य दधाना[3]वरवर्णे,
माया सर्वेषां हृदये राजति तूर्णे[4] ॥ २५७ ॥

---

१. क. प्रतौ '–' पंक्तिद्वयं नास्ति । २. ख. कोलः । ३. ख. दधानां वरवर्णम् । ४. ख. तूर्णम् ।

*टिप्पणी–१. अन्यग्रन्थेषु प्राप्तशेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टेऽवलोकनीयाः ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

एतस्या एवान्यत्र श्रुतिः नवयतिसहितं मगण - तगण - यगण-सगण-गुरुयुतं **मत्तमयूर**मिति गणान्तरेण नामान्तरमुक्तम् । तथा च **छन्दोमञ्जर्याम्** [द्वितीयस्तबके का. ९७] 'वेदै रन्ध्रैर्म्तौ यसगा मत्तमयूरम् ।' इति लक्षणात् ।

यथा–

वन्दे गोपं गोपवधूभिः कृतरासं,
हस्ते वंशं रावि दधानं वरहासम् ।
नव्ये कुञ्जे संविदधानं नवकेलिं,
लोलाक्षं राधामुखपद्माकरहेलिम् ।। २५८ ।।

इति माया १२२.

यथा वा,

अस्मद्वृद्धप्रपितामहश्रीरामचन्द्रभट्टविरचित **कृष्णकुतूहले महाकाव्ये** रासवर्णनप्रस्तावे—

रासक्रीडासक्तवचस्कायमनस्काः,
संस्कारातिप्रापितनाट्यादिविशेषाः ।
वृन्दारण्यं तालतलोद्घट्टनवाचा-
मत्यासंगाच्चक्रुरिमा मत्तमयूरम् ।। २५९ ।।

यथा वा, **छन्दोमञ्जर्याम्** [द्वितीयस्तबके का० ९७]

लीलानृत्यन्मत्तमयूरध्वनिकान्तं,
चञ्चन्नीपामोदिपयोदानिलरम्यम् ।
कामक्रीडाहृष्टमना गोपवधूभिः,
कंसध्वंसी निर्जनवृन्दावनमाप ।। २६० ।।

'गौरीमम्बामम्बुरुहाक्षीमहमीडे,*[१] तं संसारध्वान्तविनाशं हरिमीडे*[२]'

***टिप्पणी—१**　'लीलारब्धस्थापितलुप्ताखिललोकां
लोकातीतैर्योगिभिरन्तश्चिरमृग्याम् ।
बालादित्यश्रेणिसमानद्युतिपुञ्जां
गौरीमम्बामम्बुरुहाक्षीमहमीडे ।। १ ।।
[शङ्कराचार्यकृतगौरीदशकस्तोत्र प० १]

***टिप्पणी—२**　स्तोष्ये भक्त्या विष्णुमनादिं जगदादिं
यस्मिन्नेतत् संसृतिचक्रं भ्रमतीत्थम् ।
यस्मिन् दृष्टे नश्यति तत्संसृतिचक्रं,
तं संसारध्वान्तविनाशं हरिमीडे ।। १ ।।
[शङ्कराचार्यकृतहरिमीडे स्तोत्र प०-१.]

T　CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

इति च श्रीशङ्कराचार्यविरचिते गौरीदशके हरिस्तोत्रे च। 'हा तातेति-क्रन्दितमाकर्ण्यविषण्ण' *[1] इत्यादि रघुवंशे च सहस्रशो निदर्शनानि।

इति मत्तमयूरम् १२२.

१२३. अथ तारकम्

जलराशिविराजितहस्तसयुक्तं,
चरणस्य तथा विरतौ गुरुवृत्तम्[1]।
हृदये कुरुताखिलमोहितचित्तं,
फणिनायकभाषित-तारकवृत्तम् ॥ २६१ ॥

यथा–

विमलं कमलं गरलं मनुते सा,
सरसेन विसेन सुसेवितवेषा।
अवनं गमनं तदनन्दितचित्तं,
हृदये सदये तदये कुरु वित्तम् ॥ २६२ ॥

अथा वा, भूषणे*[2]–

अतिभारतरं हृदि चन्दनपङ्कं,
मनुते सरसीपवनं विषशङ्कम्।
तव दुस्तरतारवियोगपयोधि-
र्न हि पारमसौ भविता परमाधेः ॥ २६३ ॥

इति तारकम् १२३.

१२४. अथ कन्दम्

शरं हारयुग्मं क्रमादत्र संधेहि,
त्रयः पंक्तिसंख्याकवर्णं तथा धेहि।
इदं कन्दसंज्ञं समुक्तं फणीन्द्रेण,
कवीनां यथा मोदकन्दं कवीन्द्रेण ॥ २६४ ॥

---

१. ख. वित्तम्।

*टिप्पणी—१ हा तातेति क्रन्दितमाकर्ण्य विषण्ण-
स्तस्यान्विष्यन् वेतसगूढं प्रभवं सः।
शल्यप्रोतं वीक्ष्य सकुम्भं मुनिपुत्रं,
तापादन्तः शल्य इवासीत् क्षितिपोपि ॥
[रघुवंश स० ९, प० ७५]

*टिप्पणी—२. वाग्भूषणम् द्वि० अ० पद्य १४८

CC-0. BORI Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

विलोलद्विरेफावलीनां विरावेण,
हिमांशोः कराणां च सङ्गेन दावेण ।
वपुर्मे सदा दाहितं शीतयस्वालि,
पुरो दर्शयित्वा वपुर्मालतीमालि ॥ २६५ ॥

इति कन्दम् १२४.

१२५. अथ पङ्क्तावलिः

भं कुरु तदनु नकारमिहानय,
धेहि जमथ जगणं परिभावय ।
शंखमिह तदनु भामिनि मानय,
पङ्क्सुपरिकलितावलिमानय ॥ २६६ ॥

यथा–

कोमलसुललितमालति[1]मालिनि,
पङ्कजपरिमलसंलुलितालिनि ।
कोकिलकलकल[2]कूजितशालिनि,
राजति हरिरिह वञ्जुलजालिनि ॥ २६७ ॥

इति पङ्क्तावलिः १२५.

१२६. अथ प्रहर्षिणी

कर्णाभ्यां सुललितकुण्डलं दधाना,
शंखाभ्यामतिसुरसा कुचाढ्यहारा ।
विश्रामं ननु रवनूपुरस्य युग्मे,
बिभ्राणा सखि ! जयति प्रहर्षिणीयम् ॥ २६८ ॥

यथा–

यद्दन्ते विलसति भूमिमण्डलं त-
न्मालिन्यश्रियमुपयातमुज्ज्वलाभे ।
देवेन्द्रैरभिकलितः स्तवप्रयोगै-
रस्माकं वितरतु शं स कोलदेहः ॥ २६९ ॥

यथा वा,

अस्मद्वृद्धप्रपितामह-महाकविपण्डितश्रीरामचन्द्रभट्टविरचिते कृष्णकुतूहले महाकाव्ये श्रीभगवदाविर्भाववर्णनप्रस्तावे––

---

१. ख. कुन्दसुमालिनि । २. ख. कोकिलनवकल ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

सत्यं सद्वसु वसुदेवदेवकीभ्यां,
रोहिण्यामुडुनि नभस्य कृष्णपक्षे ।
पर्जन्ये कटति निशीथनीरवाया-
मष्टम्यां निगमरहस्यमाविरासीत् ।। २७० ।।

इति प्रहर्षिणी १२६.

१२७. अथ रुचिरा

पयोधरे कुसुमितहारभूषिता,
सुपुष्पिणी सरसविराविनूपुरा ।
रसान्विता सकनकरावकङ्कणा,
चतुर्यतिः सखि ! रुचिरा विराजते ।। २७१ ।।

यथा–

कलापिनं निजदयिताविहारिणं
पयोधरं सखि ! कलये विराविणम् ।
हरिं विना मम सकलं विषायितं,
हरेः पुनः सकलमिदं सुखायितम् ।। २७२ ।।

इति रुचिरा १२७.

१२८. अथ चण्डी

कलय नयुगमिह धारय हस्तं,
तदनु च विरचय सं किल शस्तम् ।
चरणविरतियुतभासुरहारा,
त्रिजगति वरसखि राजति चण्डी ।। २७३ ।।

यथा–

सरुतचरणयुतनूपुरशोभा,
बहुविधविरचितमानसलोभा ।
हरिगतवनमनुगच्छति राधा
सखि मनसिजकृतमानसबाधा ।। २७४ ।।

इति चण्डी १२८.

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१२९. अथ मञ्जुभाषिणी

करसङ्गिपुष्पयुतकङ्कणान्विता,
रसरूपरावमितनूपुराञ्चिता ।
कुचशोभमानवरहारधारिणी,
कुरुते मुदं मनसि मञ्जुभाषिणी ॥ २७५ ॥

यथा–

जनितेन मित्रविरहेण दुःखिता,
मिलितुं तथैव वनिता हरेर्हरित् ।
विधुबिम्बचित्तभवयन्त्रपूजनं,
कुसुमैस्तनोति नवतारकामयैः ॥ २७६ ॥

इति मञ्जुभाषिणी १२९.

सुनन्दिनी इत्यन्यत्र । अन्यत्रेति शम्भौ । क्वचिदियमेव प्रबोधिता च[1]* ।

१३०. अथ चन्द्रिका

कुरु नगणयुगं धेहि पादे ततः,
तगणयुगलकं गोऽपि चान्ते ततः ।
चरणमनु तथा कामवर्णान्विता ,
हयरसविरतिश्चन्द्रिका पूजिता ॥ २७७ ॥

यथा[1]–

कलयत हृदये शैलसंधारकं,
मुनिजनमहितं देवकीदारकम् ।
व्रजजनवनिता-दुःखसन्तारकं,
जलधररुचिरं दैत्यसंहारकम् ॥ २७८ ॥

इति चन्द्रिका १३०.

यथा वा–

'इह दुरधिगमैः किञ्चिदेवागमैः ।' इत्यादि किरातार्जुनीये*[2] । क्वचिदियमेव उत्पलिनी इति प्रसिद्धा ।

---

१. ख. यथा उदाहरण नास्ति ।

*टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तबक, कारिका ९९ एवं १०२ ।

*टिप्पणी—२　'इह दुरधिगमैः किञ्चिदेवागमैः
सततमसुतरं वर्णयत्यन्तरम् ॥
अमुमतिविपिनं वेददिग्व्यापिनं
पुरुषमिव परं पद्मयोनिः परम् ॥
[किरातार्जुनीयम् स० ५, प० १८]

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१३१ अथ कलहंसः

सगणं विधेहि जगणं च सुयुक्तं,
सगणद्वयं कुरु पुनः फणिवित्तम् ।
गुरुमन्तगं कुरु तथा हृतचित्तं,
कलहंसनामकमिदं वरवृत्तम् ॥ २७९ ॥

यथा–

नवनीतचोरममलद्युतिशोभं,
व्रजसुन्दरीवदनपङ्कजलोभम् ।
ललितादिगोपवनिताकृतरासं,
कलये हरिं निजहृदा वरहासम् ॥ २८० ॥

इति कलहंसः १३१.

कुत्रचिदयमेव सिंहनाद इति, क्वचिच्च कुटजाख्यमिति ।

१३२. अथ मृगेन्द्रमुखम्

कुरु नगणं तदनन्तरं नरेन्द्रं,
तदनु च जं कुरु पक्षिणामथेन्द्रम् ।
तदनु विधारय नूपुरं पदान्ते
रचय मृगेन्द्रमुखं सुखेन कान्ते ! ॥ २८१ ॥

यथा–

कुमुदवनीषु सखे ! विधूतबन्धः,
कमलवनस्य सदा हृतातिगन्धः ।
विधुरुदितो धवलीकृतातिलोकः,
प्रतिरजनीषु च दत्तकोकशोकः ॥ २८२ ॥

इति मृगेन्द्रमुखम् १३२.

१३३. अथ क्षमा

द्विजवर-सगणौ धेहि वैनतेयं,
यगणमथ तथा पण्डितालिगेयम् ।
मुनिरचितयतिः सज्जनादिमेयं,
फणिपतिकथिता राजति क्षमेयम् ॥ २८३ ॥

यथा–

कलयत हृदये नन्दगोपसूनुं,
फणिपतिदमनं न्यक्कृतातिभानुम् ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

शशधरवदनं राधिकारसालं,
सरसिजनयनं पङ्कजालिमालम् ॥ २८४ ॥

इति क्षमा १३३.

इयमेव क्वचिद् गणान्तरेणापि क्षमैव[1]* भवति ।

१३४. अथ लता

कलय नगणं विधेहि ततः करं,
जगणयुगलं च देहि ततः परम् ।
चरणविरतौ गुरुं कुरु सम्मता,
रसकृतयतिर्मुदा विहिता लता ॥ २८५ ॥

यथा–

कलय हृदये मुदा व्रजनायकं,
ललितमुकुटं सदा सुखदायकम् ।
युवतिसहितं व्रजेन्द्रसुतं हरिं,
कनकवसनं भवाम्बुनिधेस्तरिम् ॥ २८६ ॥

इति लता १३४.

१३५. अथ चन्द्रलेखम्

कुरु न-सगणौ पक्षिराजं च युक्तं,
रचय रगणं कामवर्णैरमुक्तम् ।
तदनु च पुनः कुण्डलं धेहि शेषं,
कलय फणिना भाषितं चन्द्रलेखम् ॥२८७॥

यथा–

नमत सततं नन्दगोपस्य सूनुं,
फणिप-दमनं दानवोलूकभानुम् ।
कमलवदनं राधिकाया रसालं,
तरलनयनं पङ्कजालीसुमालम् ॥ २८८ ॥

इति चन्द्रलेखम् १३५.

चन्द्रलेखा[2]* इत्यन्यत्र ।

---

*टिप्पणी—१ वृत्तरत्नाकरस्य (अ० ३ का० ७५) नारायणीटीकायां 'इयं क्षमैव आचार्यो मतभेदेन संज्ञान्तरार्थं पुनरूचे' ।

*टिप्पणी—२ छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तबक, कारिका १०५

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१३६. अथ सुद्युतिः

कुरु न-सगणौ पादे तकारौ तथा,
कलय वलयं स्युः कामवर्णा यथा ।
रसपरिमितैर्वर्णैस्तथा स्याद् यतिः,
फणिपकथिता संशोभते सुद्युतिः ॥ २८९ ॥

यथा–

वदनवलितैर्भृङ्गैर्युता सद्वया,
लुलितललिता लोलालसाक्षिद्वया ।
सखि हरिगृहाद् याति प्रगे राधिका,
सकलसुदृशां नित्यं मनोबाधिका ॥ २९० ॥

इति सुद्युतिः १३६.

१३७. अथ लक्ष्मीः

कर्णे विराजिसरसकुण्डलान्विता,
गन्धाढ्यपुष्पयुतकरेण शोभिता ।
वक्षोरुहे च विमलहारशोभिनी,
लक्ष्मीः सदा फलतु ममातुलं फलम् ॥ २९१ ॥

यथा–

वन्दे हरिं फणिपतिभोगशायिनं,
सर्वेश्वरं सकलजनेष्टदायिनम् ।
पीताम्बरं मणिमुकुटादिभासुरं,
गो-गोपिकानिकरवृतं हतासुरम् ॥ २९२ ॥

इति लक्ष्मीः १३७.

१३८. अथ विमलगतिः

जलधिमित नगणमिह कलय,
तदनु च सखि लघुमिह रचय ।
फणिपतिसुकलितमिति भवति,
विदनु यति विमलगति सुदति ! ॥ २९३ ॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

अभिनवसजलजलदविमल,
निजजनविहृतसकलशमल[1] ।
कमलसुललितनयनयुगल,
जय ! जय ! सुरनुतपदकमल ॥ २६४ ॥

इति विमलगतिः १३८.

[2]अत्रापि प्रस्तारगत्या त्रयोदशाक्षरस्य द्विनवत्युत्तरं शतमष्टौ सहस्राणि च ८१९२ भेदा भवन्ति, तेषु कतिचन भेदाः समुदाहृताः, शेषभेदाः सुधीभिः प्रस्तार्य समुदाहरणीया इत्यलं पल्लवेन ।*

इति त्रयोदशाक्षरम् ।

अथ चतुर्दशाक्षरम्

तत्र–

१३९. सिंहास्यः

यस्मिन्निन्द्रैः संख्याता राजन्ते युक्ता वर्णाः,
पादे सूर्याश्वैः संख्याकाः संशोभन्ते कर्णाः ।
नागानामीशेनैतत् प्रोक्तं सिंहास्यं कान्ते !
भूपालानां चित्तानन्दस्थानं धेहि स्वान्ते ॥ २६५ ॥

यथा–

यो दैत्यानामिन्द्रं वक्षस्पीठे हस्तस्याग्रै-
भिद्यद् ब्रह्माण्डं व्याक्रुश्योच्चैर्व्यामृद्नादुग्रैः ।
दत्तालीकान्युन्मिश्रं निर्यद्विद्युद्वृद्धास्य-
स्तूर्णं सोऽस्माकं रक्षां कुर्याद्घोर(वीरः)सिंहास्यः ॥ २६६ ॥

इति सिंहास्यः १३९.

१४०. अथ वसन्ततिलका

हारद्वयं स्फुरदुरोजयुतं दधाना,
हस्तं च गन्धकुसुमोज्ज्वलकङ्कणाढ्यम् ।
पादे तथा सरुतनूपुरयुग्मयुक्ता,
चित्ते वसन्ततिलका किल चाकसीति ॥ २६७ ॥

---

१. ख. समल । २. पंक्तित्रयं नास्ति क. प्रतौ ।

* टिप्पणी– ग्रन्थान्तरेषु समुपलब्धशेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे पर्यवेक्षणीयाः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

लोके त्वदीययशसा धवलीकृतेऽस्मिन्,
छायाभयं निजशरीरकृतं विमुच्य[1] ।
ज्योत्स्नावतीषु रजनीष्वभिसारिकाणां,
सङ्घः प्रियस्य सदनं सुखतः प्रयाति ॥ २९८ ॥

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

पातुं न पारयति यत्कथितं पयस्त-
द्ध्नो विनाश्य दृढनाशयति स्वकीयान्[2] ।
खण्डं निधाय दधिखण्डमखण्डमेव,
क्षिप्त्वा मुखे निखिलमत्ति मुखे सुतस्ते ॥ २९९ ॥

इति वसन्ततिलका १४०.

१४१. अथ चक्रम्

कुण्डलकलितदहनमित नगणं,
शङ्खसहितमिह विरचय सगणम् ।
कुण्डल[3]नरपतिवरकविकलितं,
क्रमखिलकविजनहृदि ललितम् ॥ ३०० ॥

यथा–

कोकिलकलरवसुललितसमये,
शीतलमलयजपवनसुखमये ।
कामविशिखचयविदलितहृदये,
सुन्दरि ! परिहर हृदयमदमये ॥ ३०१ ॥

यथा वा, वाणीभूषणे— [द्वितीयाध्याय, पद्य २५८]

सुन्दरि ! नभसि जलदचयरुचिरे,
देहि नयनयुगमतिघनचिकुरे ।
मानमिह न कुरु जलधरसमये,
किं तव भवति हृदयमिदमदये ॥ ३०२ ॥

इति चक्रम् १४१.

१४२. अथ असम्बाधा

बिभ्राणा कर्णौ कलितललितताटङ्कौ(ङ्का),
बाणैः सञ्छिन्ना द्विजविरचितशोभाढ्या ।

क. विमुक्तः । २. ख. दृढमाशयति स्वकीयात् । ३. ख कुण्डली ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

हस्ताग्रे राजद्विरचितवलयद्वन्द्वा,
स्तुत्या संप्रोक्ता वरकविभिरसम्बाधा ॥ ३०३ ॥

यथा -

वन्दे गोपालं व्रजजनतरुणीधीरं,
रासक्रीडायामभिगतयमुनातीरम् ।
देवानां वन्द्यं हृतवरवनिताचीरं,
बालैः संयुक्तं दितिसुतदलने वीरम् ॥ ३०४ ॥

इति असम्बाधा १४२.

१४३. अथ अपराजिता

द्विजपरिकलिता करेण विराजिता,
कुचयुगकलिता प्रलम्बितहारिणी ।
भुवननिगदितातिशोभितवर्णिनो,
कृतमुनिविरतिर्जयत्यपराजिता ॥ ३०५ ॥

यथा–

अतिरुचिदशनैः सभातमसां हरः,
दितिसुतरुधिरैः सुरक्तनखाङ्कुरः ।
जलभृदुडुगणौ सटाभिरुपाहरत्[१],
जयति हरितनुर्भटानपि संहरत्[२] ॥ ३०६ ॥

इति अपराजिता १४३.

१४४. अथ प्रहरणकलिका

रचयत नगणद्वयमथ भगणं,
लघुगुरुसहितं कलयत नगणम् ।
प्रहरणकलिका मुनियतिसहिता,
फणिपतिकथिता कविजनमहिता ॥ ३०७ ॥

यथा –

नम मधुमथनं जलनिधिशयनं,
सुरगणनमितं सरसिजनयनम् ।
इति गदनमतिर्भवति हृदि यदा,
भवजलनिधि[त]स्तरति सखि ! तदा ॥ ३०८ ॥

---

१. ख. उपाहरन् ।　२. ख. संहरन् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

व्रजयुवतिभिरित्यभिमतवचसि,
प्रतिपदममृतद्रवमिव विकिरति ।
मनसिजविशिखप्रपतनविधुत-
स्वविरहदहनप्रशमनमकलि[1] ॥ ३०९ ॥

इति प्रहरणकलिका १४४.

१४५. अथ वासन्ती

कर्णौ कृत्वा कुण्डलसहितौ गन्धं पुष्पं,
हस्ते धृत्वा कङ्कणमथ हारं राजन्तम् ।
स्वर्णेनाढ्यं नूपुरमथ धृत्वा राजन्ती,
नागप्रोक्ता राजति कविचित्ते वासन्ती ॥ ३१० ॥

यथा–

वन्दे गोपीमन्मथजनकं कंसारातिं,
भूमेः कार्यार्थं नृषु कृतमिथ्याविख्यातिम् ।
रासे वंशीवादननिपुणं कुञ्जे कुञ्जे,
लीलालोलं गोकुलनवनारीणां पुञ्जे ॥ ३११ ॥

इति वासन्ती १४५.

१४६. अथ लोला

कर्णे कुण्डलयुक्ता हस्तं स्वर्णसनाथं,
बिभ्राणा वलयाढ्यं हारौ चोज्ज्वलपुष्पौ ।
सध्वानं च दधाना दिव्यं नूपुरयुग्मं,
नागोक्ता कविचित्ते कान्ता राजति लोला ॥ ३१२ ।

यथा–

गोपालं कलयेऽहं नित्यं नन्दकिशोरं,
वृन्दारण्यनिवासं गोपीमानसचौरम्[2] ।
वंशीवादनसक्तं नव्ये कुञ्जकुटीरे,
नारीभिः कृतरासं कालिन्दीवरतीरे ॥ ३१३ ॥

इति लोला १४६.

---

१. क. कमलि । २. ख. चोरं ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१४७. अथ नान्दीमुखी

द्विजपरिकलिता हस्तयुक् कङ्कणाढ्या,
　　विरुतविलसितौ नूपुरौ धारयन्ती ।
रसकनकयुतं हारमुच्चैर्दधाना,
　　स्वरविरतियुता भाति नान्दीमुखीयम् ॥ ३१४ ॥

यथा–

नखगलदसृजां पानतो भीषणास्यः
　　सुरनृपतिमुखैर्देवसंघैरुपास्यः ।
भयजनकरवैर्नादयद्दिङ्मुखानि,
　　प्रकटयतु स वः सिंहवक्त्रः सुखानि ॥ ३१५ ॥

इति नान्दीमुखी १४७,

१४८. अथ वैदर्भी

कर्णे कृत्वा कनकसुललितं ताटङ्कं,
　　संबिभ्राणा द्विजमथ वलयं हस्ताग्रे ।
दिव्यं हारद्वितयमथ दधाना युक्तं
　　वेदैश्छिन्ना जगति विजयते वैदर्भी ॥ ३१६ ॥

यथा–

वन्दे नित्यं नरमृगपतिदेहं व्यग्रं,
　　दैत्येशोरःस्थलदलनविधावत्युग्रम् ।
प्रह्लादस्याभिलषितवरदं सृक्काग्रे,
　　संलिह्यन्तं रुधिरविलुलितं जिह्वाग्रम् ॥ ३१७ ॥

इति वैदर्भी १४८.

१४९. अथ इन्दुवदनम्

धेहि भगणं तदनु धारय जकारं,
　　हस्तमथ कारय ततोऽपि च नकारम् ।
हारयुगलं तदनु देहि चरणान्ते,
　　नागकृतमिन्दुवदनं भवति कान्ते ! ॥ ३१८ ॥

यथा–

नौमि वनितावितत रासरसयुक्तं,
　　गोकुलवधूजनमनोहरणसक्तम् ।

T　CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

देवपतिगर्वहरखण्डनसुदक्षं,
भूमिवलये निहतदैत्यगणलक्षम् ।। ३१९ ।।

इति इन्दुवदनम् १४९.

स्त्रीलिङ्गमन्यत्र* ।

१५०. अथ शरभी

कर्णं स्वर्णोज्ज्वलललितताटङ्कयुक्तं,
संबिभ्राणा द्विजमथ रुतं नूपुराढ्यम् ।
हारं पुष्पं वलययुगलं धारयन्ती,
वेदैश्छिन्ना जयति शरभी पिङ्गलोक्ता ।। ३२० ।।

यथा–

वन्दे कृष्णं नवजलधरश्यामलाङ्गं,
वृन्दारण्ये व्रजयुवतिभिर्जातसङ्गम् ।
कालिन्दीये सरसपुलिने क्रीडमानं[1],
कालीयाहेः प्रथितयशसो धूतमानम् ।। ३२१ ।।

इति शरभी १५०.

१५१. अथ अहिधृतिः

रचय नयुगलं कुरु ततो भगणं,
लघुगुरुसहितं कुरु तथा जगणम् ।
मुनिविरतियुता फणिनृपस्य कृतिः,
जगति विजयते सुविमलाऽहिधृतिः ।। ३२२ ।।[2]

यथा–

सकलतनुभृतां जलमपेयतरं,
विगतवि[ष]भयं रचयितुं कृपया ।
पतति तरुवराच्छिरसि नन्दसुते,
भुवनभरसहा विजयतेऽहिधृतिः ।। ३२३ ।।*

इति अहिधृतिः १५१.

१५२. अथ विमला

रचय न-भूपती कुरु तथा भगणं,
लघुवलयाचितं च विरतौ जगणम् ।

---

१. ख. सवमानं । २. पूर्णं पद्यं नास्ति क. प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ वृत्तरत्नाकरः अ० ३, का० ८२

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

फणिपतिभाषिता रविहयैर्विरति-

वैरकविमानसेऽतिविमला जयति ॥ ३२४ ॥

यथा–

व्रजजननागरीदधिहृतावतुला,

तरणिसुतातटे हरितनुर्विमला[1] ।

वरवनितादृशां सुसुकृतैककला,

मम विमले सदा भवतु हृद्यचला ॥ ३२५ ॥

इति विमला १५२.

१५३. अथ मल्लिका

कुरु गन्धयुग्मसहितं मृगाधिपतिं,

रचयाशु सन्ततमथो नरावपि सम् ।

इह मल्लिकां कलयतां विलासवतीं,

नवपञ्चकैर्यतियुतां मुदो[2] जननीम् ॥ ३२६ ॥

यथा–

सखि ! नन्दसूनुरिह मे मनोहरणः,

जनताप्रसादसुमुखस्तमोहरणः ।

भविता सहायकरणो जनानुगतः,

करवै कमत्र शरणं वने सुखतः ॥ ३२७ ॥

इति मल्लिका १५३.

१५४. अथ मणिगणम्

जलधिमित नगणमिह कलयत,

तदनु च लघुयुगमपि रचयत ।

सकलफणिनृपतिविरचितमिति,

निजहृदि कलयत मणिगणमिति ॥ ३२८ ॥

यथा–

भुजयुगलविलसितफणिवलय,

कृतसकलदितिसुतकुलविलय ।

प्रलयसमयभयजनक सलय[3],

वृषगमनमपि सुखमनुकलय ॥ ३२९ ॥

इति मणिगणम् १५४.

---

१. पद्यस्य पूर्वार्धभागं नास्ति क. प्रतौ । २. क. मुदां । ३. ख. जनसफलय ।

T ...-0. ... Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

'अत्रापि प्रस्तारगत्या चतुर्दशाक्षरस्य चतुरशीत्यधिकानि त्रिशतानि षोडश-सहस्राणि च भेदास्तेषु कियन्तो भेदाः प्रदर्शिताः, शेषभेदाः सुधीभिराकरतः स्वमत्या वा प्रस्तार्य समूहनीया इति दिक्'[1]* ।

इति चतुर्दशाक्षरम् ।

अथ पञ्चदशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्–

१५५. लीलाखेलः

यस्मिन् वृत्ते रव्यश्वैः संख्याता दृश्यन्ते कर्णाः,
पादे पादे तिथ्या सम्प्रोक्ताः संशोभन्ते वर्णाः ।
हारश्चैकोऽन्ते यस्मिन्नागानामीशेन प्रोक्तं,
लोके वृत्तानां सारं लीलाखेलाख्यं तद्वृत्तम् ।। ३३० ।।

यथा

देवैर्वन्द्यं त्रैलोक्यास्थानं देहं खर्वीकुर्वन्,
दैत्यानामीशं भूम्यां ख्यातः[2] पातालस्थं कुर्वन् ।
स्वाराज्यं देवेशा यान्त्यन्तं स्थैर्याढ्यं संयच्छन्,
मामव्याद् गोविन्दो वैरोच्यानाशीः[3]पद्यं गर्जन् ।। ३३१ ।।

इति लीलाखेलः १५५.

यथा वा –

'मा कान्ते पक्षस्यान्ते पर्याकाशे देशेस्वाप्सीः', इति ज्यौतिषिकाणां कालपरिमाणपरं उदाहरणमिति **कण्ठाभरणे**[*2] । **लीलाखेलस्य एतस्यैवान्यत्र सारङ्गिका**[3]* इति नामान्तरमुक्तम् ।

१५६. अथ मालिनी

द्विजकरवलयाढ्या नूपुरारावयुक्ता,
श्रवणरचितपुष्पप्रोतताटङ्कयुग्मा ।
वसुरचितविरामा सर्वलोकैकवर्णा,
फणिपनृपतिकान्ता भासते मालिनीयम् ।। ३३२ ।।

---

१. पंक्तित्रयं नास्ति क. प्रतौ । २. ख. चातः । ३. ख. वैरोचन्याशीः

*टिप्पणी—१ ग्रन्थान्तरेषु प्राप्तशेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे पर्यालोच्याः ।

*टिप्पणी—२ मा कान्ते ! पक्षस्यान्ते पर्याकाशे देशे स्वाप्सीः,
कान्तं वक्त्रं वृत्तं पूर्णं चन्द्रं मत्वा रात्रौ चेत् ।
क्षुत्क्षामः प्राटंश्चेतश्चेतो राहुः क्रूरः प्राद्यात्,
तस्माद्ध्वान्ते हर्म्यस्यान्ते शय्यैकान्ते कर्तव्या ।।
[कण्ठाभरण]

*टिप्पणी—३ प्राकृतपैंगलम्-द्वितीयपरिच्छेद, पद्य १५६ ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

अयममृतमरीचिर्दिग्वधूकर्णपूरं
सपदि परिविधातुं कोऽपि कामीव कान्तः ।
सरस इव नभस्तोऽत्यन्तविस्तारयुक्ता-
दुडुगणकुमुदानि प्रोच्चकैरुच्चिनोति ॥ ३३३ ॥

यथा वा, पाण्डवचरिते—

भवनमिव ततस्ते बाणजालैरकुर्वन्,
गजरथहयपृष्ठे बाहुयुद्धे च दक्षाः ।
विधृतनिशितखड्गाश्चर्मणा भासमाना,
विदधुरथ समाजे मण्डलात् सव्यवामात् ॥ ३३४ ॥

यथा वा, अस्मत्पितामहमहाकविपण्डितश्रीरायभट्टकृते शृङ्गारकल्लोले खण्डकाव्ये—

मन इव रमणीनां रागिणी वारुणीयं,
हृदयमिव युवानस्तस्कराः स्वं हरन्ति ।
भवनमिव मदीयं नाथ शून्यो हि देश-
स्तव न गमनमीहे पान्थ कामाभिरामा ॥ ३३५ ॥

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

निरवधिदिनमाना यं विना गोपवध्व-
स्तमभिकमभिसायं वीक्षमाणा ननन्दुः ।
स्मितमधुरमपाङ्गालोकनं प्रीतिवल्याः,
कुसुममिव तदीयं वीक्ष्य कृष्णोप्यतुष्यत् ॥ ३३६ ॥

इति मालिनी १५६.

१५७. अथ चामरम्

पक्षिराजभूपतिक्रमेण यद् विराजते,
बाणभूमिसंख्ययाक्षरं च यत्र भासते ।
नागराजभाषितं तदेव चारुचामरं,
मानसे विधेहि पाठतोऽपि मोहितामरम् ॥ ३३८ ॥

यथा–

नौमि गोपकामिनीमनोविनोदकारणं,
लीलयावधूतकंसराजमत्तवारणम् ।
कालियाहिमस्तकोल्लसन्मणिप्रकाशितं,
नन्दनन्दनं सदैव योगिचित्तभासितम् ॥ ३३८ ॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा वा, भूषणे[1]*—

रासलास्यगोपकामिनीजनेन खेलता,
पुष्पपुञ्जमञ्जुकुञ्जमध्यगेन दोलता ।
तालनृत्यशालिगोपबालिकाविलासिना,
माधवेन जायते सुखाय मन्दहासिना ।। ३३९ ।।

इति चामरम् १५७.

एतस्यैव अन्यत्र तूणकं *[2] इति नामान्तरम् ।

१५८. अथ भ्रमरावलिका

चरणे विनिधेहि सकारमिषूपमितं,
कुरु वर्णमपीषुनिशाकरसंप्रमितम् ।
फणिनायकपिङ्गलचित्तमुदः कलिका,
सखि ! भाति कवीन्द्रमुखे भ्रमरावलिका ।। ३४० ।।

यथा–

कलकोकिलकूजितपूजितनू (त्न) वनं,
वनजाक्षिनवीनसरोजवनीपवनम् ।
हिमदीधितिकान्तिपयःपरिधौतमिदं,
जगदाशु विलोक्य[1] परित्यज मानमिदम् ।। ३४१ ।।

यथा वा, भूषणे[3]–

सखि ! सम्प्रति कं प्रति मौनमिदं विहितं,
मदनेन धनुः सशरं स्वकरे निहितम् ।
नतिशालिनि का वनमालिनि मानकथा,
रतिनायकसायकदुःखमुपैषि[2] वृथा ।। ३४२ ।।

इति भ्रमरावलिका १५८.

भ्रमरावलीति पिङ्गले[4]*

---

१. ख. जगदाशुचि लोक्य । २. 'मुपैति' वाणीभूषणे ।

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, प० २६२
२ छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तबक, कारिका १३७
३ वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य २६६
४ प्राकृतपैङ्गलम्, द्वितीयपरिच्छेद, प० १५४

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१५९. अथ मनोहंसः

प्रथमं विधेहि करं जकारविराजितं,
जगणं ततो भगणेन कारय भूषितम् ।
विनिधेहि पक्षिपतिं ततस्तिथिजाक्षरं,
कुरु हंसमेणविलोचने मनसः परम् ।। ३४३ ।।

यथा–

तनुजाग्निना सखि ! मानसं मम दह्यते,
तनुसन्धिरुष्णगदारुवत् परिभिद्यते ।
अधरं च शुष्यति वारिमुक्तसुशालिवत्,
कुरु मद्गृहं कृपया सदा वनमालिमत् ।। ३४४ ।।

यथा वा–

नवमञ्जुवञ्जुलकुञ्जकूजितकोकिले.
मधुमत्तचञ्चलचञ्चरीककुलाकुले ।
समयेतिधीरसमीरकम्पितमानसे,
किमु चण्डि मानमनोरथे न विखिद्यसे ।। ३४५ ।।

इति मनोहंसः १५९.

१६० अथ शरभम्

जलनिधिकृतमिह विरचय नगणं ,
चरणविरतिमनुविरचय सगणम् ।
वरफणिपतिविरचितमतिरुचिरं ,
शरभमखिलहृदि विलसति सुचिरम् ।। ३४६ ।।

यथा–

नभसि समुदयति सखि ! हिमकिरणं ,
वहति सुलघुलघुमलयजपवनम् ।
त्यजति तिमिरमिदमपि(भि) जननयनं ,
द्रुतमनुविरचय मधुरिपुशयनम् ।। ३४७ ।।

इति शरभम् १६०.

इदमेवान्यत्र **शशिकला***१ इति नामान्तरेण उक्तम् ।

अथ मणिगुणनिकरस्रजौ छन्दसी, किञ्च—

इदमेव हि यदि वसुयति ८ **मणिगुणनिकराख्यमीर्यंते** हि तदा ।
यदि तु रसे ६ विश्रामः स्रगिति समाख्यां तदा लभते ।। ३४८ ।।

***टिप्पणी—१** छन्दोमञ्जरी द्वितीयस्तबक कारिका १३१

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अपि च

मणिगुणनिकरोदाहृतिरिह शरभोदाहृतौ ज्ञेया ।
स्रगुदाहरणं ज्ञेयम् लक्षणवाक्ये तु शरभस्य ।। ३४९ ।।

यथा वा–

नरकरिपुरवतु निखिलसुरगति-
रमितमहिमभरसहजनिवसतिः[1] ।
अनवधिमणिगुणनिकरपरिचितः,
सरिदधिपतिरिव धृततनुविभवः ।। ३५० ।।

अयि ! सहचरि ! रुचिरतरगुणमयो,
अदिमवसतिरनपगतपरिमला ।
स्रगिव निवसति लसदनुपमरसा,
सुमुखि ! मुदितदनुजदलनहृदये ।। ३५१ ।।

इति छन्दोमञ्जर्यामुदाहरणद्वयं*[1] यतिभेदेनोक्तम् । प्रकृतं तु शरभमेव इति न कश्चिद् विशेषः ।

१६१. अथ निशिपालकम्

धेहि भगणं तदनु भूपतिमथो करं,
देहि नगणं च रगणं कुरु ततः परम् ।
नागनृपपिङ्गलसुभाषितमुदीरितं,
वृत्तममलं हृदि निधेहि निशिपालकम् ।। ३५२ ।।

यथा–

गोपतरुणीजनमनोहरणपण्डितं,
हस्तयुगधारितसुवेणुपरिमण्डितम् ।
चन्द्रकविराजितविलोलमुकुटं हृदा,
नौमि हरिमर्कतनयातटगतं सदा ।। ३५३ ।।

यथा वा, भूषणे*[2]–

चन्द्रमुखि ! जीवमुखि(षि) ! वाति मलयानिले,
याति मम चित्तमिव पाति[2] सदनानिले ।

---

१ क. सनिखिल सुगति । २. गा० 'वाणीभूषणे' ।

*टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तवक, कारिका १३३, १३२
२ वाणीभूषणम् द्वितीयाध्याय, पद्य २५६

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तापकर-कामशर-शल्यवरकीलितं[1],

मामिह हि पश्य जहि कोपमतिशीलितम्[2] ॥ ३५४ ॥

इति निशिपालकम् १६१.

१६२. अथ विपिनतिलकम्

रचय नगणं तदनु धेहि हस्तं मुदा,

नगणसहितं रगणयुग्ममन्ते सदा ।

रसनवयतिं फणिपभाषितं सुन्दरं

विपिनतिलकं कलय बाणविध्वक्षरम् ॥ ३५५ ॥

यथा–

नरवरपतेरिव नराः शशाङ्कांशवः,

तिमिरनिकरः सपदि चोरवद् गच्छति ।

अयमपि रविः सखि ! हृताधिकारिप्रभः,

कथयति विधोः खगकुलं जयं बंदिवत् ॥ ३५६ ॥

यथा वा–

जयति करुणानिधिरशेषसत्तारकः,

कलितललितादिवनितामनोहारकः ।

सकलधरणीपकुलमण्डलीपालकः,

परमपदवीकरणदेवकीबालकः ॥ ३५७ ॥

इति विपिनतिलकम् १६२.

१६३. अथ चन्द्रलेखा

कर्णे ताटङ्कयुग्मं पुष्पाढ्यहारौ दधाना,

बिभ्राणा नूपुरस्य द्वन्द्वं सुरावं सुचित्तम् ।

पादान्ते धारयन्ती वीणां सुवर्णावियुक्तां,

नागोक्ता चन्द्रलेखा सप्ताष्टच्छेदैरमुक्ता ॥ ३५८ ॥

यथा–

नित्यं वन्दे महेशं गौरीशरीरार्द्धयुक्तं,

दग्धाऽनङ्गं पुरारिं वेतालसङ्घैरमुक्तम् ।

बिभ्राणं चन्द्रलेखां नृत्येषु कृत्तिं धुनानं,

गङ्गासञ्जातसङ्गं दृष्टया त्रिलोकीं पुनानम् ॥ ३५९ ॥

इति चन्द्रलेखा १६४.

चण्डलेखा इत्यन्यत्र ।

---

१. तल्पभरशीलितम्, 'वाणीभूषणे' । २. शेषमतिसञ्चितम् 'वाणीभूषणे' ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१६४. अथ चित्रा

कर्णद्वन्द्वं ताटङ्काभ्यां योजितं कारयित्वा,
हारौ बिभ्राणा स्वर्णाढ्यं पुष्पयुक्तं तथैव ।
तिथ्युक्तैर्वर्णैः संयुक्ता कङ्कणौ धारयन्ती,
शोभां धत्ते चित्रां चित्रा शब्दवन्नूपुराभ्याम् ।। ३६० ।।

यथा–

कालिन्दीकूले केलीलोलं वधू[1]सङ्घयुक्तं,
वन्दे गोपालं रक्षायां नन्दगोपस्य सक्तम् ।
हस्तद्वन्द्वे धृत्वा श्वासैर्वंशिकां पूरयन्तं,
दैतेयान् हत्वा देवानां संकटं दूरयन्तम् ।। ३६१ ।।

इति चित्रा १६४.

चित्रमिदमन्यत्र[1]* ।

१६५. अथ केसरम्

कुरु नगणं ततोऽपि च विधेहि भूपतिं,
भगणपयोधरौ तदनु पक्षिणां पतिम् ।
फणिपतिभाषितं तिथिविभाविताक्षरं,
सुकविमनोहरं हृदि निधेहि केसरम् ।। ३६२ ।।

यथा–

चिरमिह मानसे कलय नन्ददारकं,
वरवनमालिनं दितिसुतापहारकम् ।
व्रजवनितारसोदधिनिमग्नमानसं,
रवितनयातटे कलितपीतवाससम् ।। ३६३ ।।

इति केसरम् १६५.

१६६. अथ एला

प्रथमं करं रचय जगणमनु कान्ते !
नगणद्वयं तदनु कुरु यगणमन्ते ।
फणिभाषिता शरपरिकलितविरामा,
कृतसंस्तुतिः सकलवरकविभिरेला ।। ३६४ ।।

---

१. ख. बन्धू ।

*टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तबक, कारिका १३६.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

हृदि भावये विमलकमलनयनान्तं ,
जनपावनं नवजलधररुचिकान्तम् ।
व्रजनायिकाहृदयमधिजनितकामं ,
वनमालिनं सकलसुरकुलललामम् ॥ ३६५ ॥

इति एला १६६.

१६७. अथ प्रिया

कुरु नगणयुगं धेहि तं भगणं ततः ,
प्रतिपदविरतौ भासते रगणोऽन्ततः ।
मुनिरचितयति[1]र्नागराजफणिप्रिया ,
सकलतनुभृतां मानसे लसति प्रिया ॥ ३६६ ॥

इदमेव हि यदि वसुयतिक रलिरिति संज्ञां तदाप्नोति ।
लक्षणवाक्ये मुनियतिरुदिता वसुकृतयतिश्च यथा ॥ ३६७ ॥

यथा–

कलय दशमुखारिं हताखिलदानवं ,
मुनिजनमखपालमृषा भुवि मानदम् ।
सरसिजनयनान्तं शरासनभञ्जकं ,
कपिकुलवरराज्ञः सदा प्रियसंज्ञकम् ॥ ३६८ ॥

इति प्रिया १६७.

१६८. अथ उत्सवः

पक्षिराज-नगणौ भगण-द्वितयं ततः
कारयाशु पदशेषकृतो रगणो मतः ।
उत्सवः फणिनागकृतः सखि ! भासते ,
पङ्क्तिजाक्षरविरामयुतः कविमानसे ॥ ३६९ ॥

यथा–

बंभ्रमीति हृदयं जलधौ तरणिर्यथा ,
दह्यते सखि ! तनुर्नलिनीव हिमागमे ।
वायुलोलकदलीव तनुर्मम वेपते ,
चन्दनं शुचि सरोवदिदं परिशुष्यति ॥ ३७० ॥

इति उत्सवः १६९.

---

१ ख. यतिः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१६९. अथ उडुगणम् ।

भुवनविरचितमिह लघुमुपनय ,
तदनु विधुकृतलघुमिह विरचय ।
उडुगणमखिलहृदयकृतसदन—
मृषिकृतविरतिमनुकुरु सुवदन ! ।। ३७१ ।।

यथा–

दहनगतमलकनकनिभवसन,
कटिधृतविरुतरुचिरवररसन ।
सुरकृतनमन जलनिधिनिवसन,
शमनुविरचय कुसुमनिभहसन ।। ३७२ ।।

इति उडुगणम् १६९.

'अत्रापि प्रस्तारगत्या पञ्चदशाक्षरस्य द्वात्रिंशत्सहस्राणि सप्तशतानि अष्ट षष्ट्यु्त्तराणि ३२७६८ भेदास्तेषु आद्यन्तसहिताः कियन्तः प्रोक्ताः, शेषभेदाः प्रस्तार्य लक्षणीया इति दिक्'[1]* ।

इति पञ्चदशाक्षरम् ।

अथ षोडशाक्षरम्

तत्र–

१७०. रामः

यस्मिन्नष्टौ पादस्थित्या युक्ताः संदृश्यन्ते कर्णाः,
संशोभन्ते पादे पादे शृङ्गारैः संख्याता वर्णाः ।
यस्मिन् सर्वस्मिन् पादे स्याद् वेदैर्वेदैर्यद्विश्रामः,
सर्पाणामीशेन प्रोक्तः सच्छन्दः स्युः (स्तु) प्रेष्टो रामः ।।३७३।।

यथा–

इन्द्राद्यैर्देवेन्द्रैर्नित्यं वन्द्यः पायाल्लोकं रामः,
लक्षाणां दातृत्वे दक्षः सर्वेषां क्षत्राणां वामः ।
अङ्गीकृत्यात्यन्वं पित्रा दत्तामाज्ञां शस्त्रं वेगात्,
मातुर्मूर्ध्नि च्छेदे[2] बिभ्रद् यो वै हस्ते कम्पं नागात् ।। ३७४ ।।

इदमेवाऽन्यत्र ब्रह्मरूपकम्[2]*इति नामान्तरं लभते ।

इति रामः १७०.

---

१. पंक्तित्रयं नास्ति क. प्रतौ । २. ख. मातर्मूर्द्धच्छेदे ।

* टिप्पणी—१ ग्रन्थान्तरेषु पञ्चदशाक्षरवृत्तस्योपलब्धशेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्याः ।

* टिप्पणी—२ प्राकृतपैंगलम् द्वितीयपरिच्छेद, प० १७४

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१७१. अथ पञ्चचामरम्

शरेण नूपुरेण यत्क्रमेण भाविताक्षरं,
वसुप्रयुक्तभेदभाग् भवेच्च षोडशाक्षरम् ।
फणीन्द्रराजपिङ्गलोक्तमुक्तमत्र भासुरं,
विधेहि मानसे सदैव चारु पञ्चचामरम् ॥ ३७५ ॥

यथा–

कठोरठात्कृतिध्वनत्कुठारधारभीषणं,
स्वयं कृतप्रतिज्ञया सहस्रबाहुदूषणम् ।
समस्तभूमिदक्षिणे मखे मुनीन्द्रतोषणं,
नतो महेन्द्रवासिनं भृगुन्तु[1] वंशभूषणम् ॥ ३७६ ॥

यथा वा, अस्मद्वृद्धप्रपितामह-**श्रीरामचन्द्रभट्ट**महाकविपण्डितविरचित-**दशावतारस्तोत्रे** जामदग्न्यवर्णने—

अकुण्ठधार भूमिदार कण्ठपीठलोचन-
क्षणध्वनद्ध्वनत्कृतिक्वणत्कुठारभीषण ।
प्रकामवाम जामदग्न्यनाम राम हैहय-
क्षयप्रयत्ननिर्दय व्ययं भयस्य जृम्भय ॥ ३७७ ॥

इति पञ्चचामरम् १७१.

एतस्यैव अन्यत्र **नराचम्**[1]*इति नामान्तरम् ।

१७२. अथ नीलम्

वेद-भकारविराजितमद्भुतवृत्तवरं,
भामिनि ! भावय चेतसि कङ्कणशोभि करम् ।
पिङ्गलनागसुभाषितमालि विमोहकरं,
नीलमिदं रसभूमिविभावितवर्णधरम् ॥ ३७८ ॥

यथा–

पर्वतधारिणि गोपविहारिणि 'नन्दसुते,
सुन्दरि हारिणि'[2] कंसविदारिणि बालयुते ।
पङ्कजमालिनि केलिषु शालिनि मे सुमति-
र्वेणुविराविणि भूम(भ)रहारिणि जातरतिः ॥ ३७९ ॥

इति नीलम् १७२.

---

१. ख. भृगुरुः । '–' २. क. प्रतौ नास्ति ।

*टिप्पणी—१. वाणीभूषणम् द्वितीयाध्याय, प० २७३

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१७३. अथ चञ्चला

[1]हारमेरुजक्रमेण यद्विराजते सुकेशि !,
　　षोडशाक्षरेण यद् विकासितं भवेत् सुवेषि ! ।
पिङ्गलेन भाषितं समस्तनागनायकेन,
　　तद्धि चञ्चलाभिधं कवीन्द्रमोददायकेन ॥ ३८० ॥

यथा–

आलि ! रासजातलास्यलीलया सुशोभितेन,
　　गैरिकादिधातुवन्यभूषणानुभूषितेन ।
गोपिकाविमोहिराववंशिकाविनोदितेन,
　　मन्मनो हृतं व्रजाटवीषु केलिमोदितेन ॥ ३८१ ॥

यथा वा, भूषणे[1]*—

आलि ! याहि मञ्जुकुञ्जगुञ्जितालिलालितेन,
　　भास्करात्मजाविराजिराजि[2]तीरकाननेन ।
शोभिते स्थले स्थितेन सङ्गता यदूत्तमेन,
　　माधवेन भाविनी तडिल्लतेव नीरदेन ॥ ३८२ ॥

इति चञ्चला १७३.

एतस्यैवान्यत्र चित्रसङ्गम्*[2]इति नामान्तरम् ।

१७४. अथ मदनललिता

कर्णं कृत्वा कनकरुचिरं ताटङ्कसहितं,
　　संबिभ्राणा द्विजमथ पुनः स्वर्णाढ्यवलया ।
हारौ धृत्वा कुसुमकलितौ हस्तेन रुचिरा,
　　वेदैः षड्भिर्मदनललिता छिन्ना रसयतिः ॥ ३८३ ॥

यथा–

कालिन्दीये तटभुवि सदा[3] केलीसु ललितं,
　　राधाचित्तप्रणयसदनं गोपेषु(पीसु) वलितम् ।
संबिभ्राणं विरुतरुचिरं वंशं करतले,
　　ध्यायेन्नित्यं व्रजपतिसुतं चित्तेऽतिविमले ॥ ३८४ ॥

इति मदनललिता १७४.

---

१. ख. हारमेरुजक्रमेण सद्विराजते पुरेण, यद्विकासितं भवेत् सुकेशि षोडशाक्षरेण ।
२. ख रम्यतीरकाननेन । ३. ख. तटपरिसरे ।
* टिप्पणी–१. वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य २७८
　　२. छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तबक, कारिका १४८

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१७५. अथ वाणिनी

कुरु नगणं विधेहि जगणं ततो भकारं,
जगणमथोऽपि रेफयुतमन्तजातहारम् ।
षडधिकपंक्तिवर्णकलितं सुवृत्तसारं,
कलयत वाणिनीति कविभिः कृतप्रचारम् ॥ ३८५ ॥

यथा–

अनवरतं खरांशुतनयाचलज्जलौघैः,
तटभुवि[1]संलुप्ते*[1]ऽखिलनृणां विनाशिताघैः ।
द्विजजनसाधिताऽनुपमसप्ततन्तुभोक्ता,
पशुपजनैर्हरिः सह वनोदनं जघास[2] ॥ ३८६ ॥

इति वाणिनी १७५.

१७६. अथ प्रवरललितम्

यकारं पूर्वस्मिन् रचय मगणं धारयाशु,
नकारं ह्रस्वं च प्रथय रगणं धेहि वासु ।
गुरुं पादस्यान्ते विरचय फणीन्द्रेण गीतं,
सुहास्ये विश्रामं प्रवरललितं नाम वृत्तम् ॥ ३८७ ॥

यथा–

तडिल्लोलैर्मेघैर्दिशि दिशि महाध्वानवद्भि-
र्गजानीकाकारैरनवरतमापः सृजद्भिः ।
व्रजं भीतं[3] वीक्ष्य द्रुतमचलराजं कराग्रे,
दधद्रक्षां कुर्यात् भवजलनिधावत्युदग्रे ॥ ३८८ ॥

इति प्रवरललितम् १७६.

१७७. अथ गरुडरुतम्

द्विजवरमत्र धेहि रगणं नकारं ततः,
कुरु रगणं ततोऽपि रगणः पदान्ते मतः ।
षडधिकपंक्तिवर्णकलितं समस्ते पदे,
गरुडरुतं समस्तफणिराजचित्तास्पदे ॥ ३८९ ॥

---

१. ख. विटपितले लुते । २. क. वतोदनं भुक्ति । ३. ख. छन्नं ।

*टिप्पणी—१ अत्र पादे नगणमनु जगणोपस्थितिर्युक्ता किन्त्वत्र 'संलुप्ते' इति पाठे यगणो जायते तदयुक्तम् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

मृगगणदाहके वननदीसरःशोषके,
　　ग्रसति तरून् विलोलनिजहेतिजिह्वाशतैः ।
भयभरखिन्न[1]डिम्भवदनं निरीक्ष्याशु यः,
　　दवदहनं पपौ स दिशतान् मनोवाञ्छितम् ।। ३९० ।।

इति गरुडरुतम् १७७.

१७८. अथ चकिता

देहि भमिह सं कर्णं हारौ कुण्डलमबले !,
　　धारय कुसुमं पुष्पद्वन्द्वं कामिनि ! तरले ! ।
रूपवलयकं पादप्रान्ते स्यादिह चकिता,
　　षड्सु च विरतिः काव्यव्यक्तिः स्मरले[2] भविता ।। ३९१ ।।

यथा–

कामिनि ! सुघने वृन्दारण्ये नन्दय नयनं,
　　भामिनि ! भवने भव्याकारे भावय शयनम् ।
शीतलपवने धन्ये पुण्ये खञ्जननयने,
　　त्वामिह कलये तल्पेऽनल्पे कुञ्जरगमने ।। ३९२ ।।

इति चकिता १७८.

१७९. अथ गजतुरगविलसितम्

धारय रौहिणेयमथ पतगवरपतिं,
　　कारय वह्निमेय-नगणवरगुरुयतिम् ।
षोडशवर्णधारि-गजतुरगविलसितं,
　　भामिनि ! भावयेदमपि मुनियतिरचितम् ।। ३९३ ।।

यथा

सुन्दरि ! नन्दनन्दनमिह धरणिवलये,
　　मानिनि ! मानदानमपि[3] न हि न हि कलये ।
भावय भावनीयगुणगणपरिकलितं,
　　चेतसि चिन्तयाशु सखि ! मुनिजनवलितम् ।। ३९४ ।।

इति गजतुरगविलसितम् १७९.

क्वचिद् इदमेव ऋषभगजविलसितम्[1]* इति नामान्तरेणोक्तम् ।

---

१. ख भिन्न । २. ख. तरले । ३. ख. मानगोचरमुमिह न कलये ।
*टिप्पणी—१ वृत्तरत्नाकरः, अ० ३, का० ९१, छन्दोमञ्जरी, द्वि० स्त० का० १४९

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१८०. अथ शैलशिखा

धेहि भकारमत्र खगराजमवेहि ततः,
कारय नं ततोऽपि भगणो भगणेन युतः ।
नूपुरमेकसंख्यमवधेहि पदान्तगतं,
शैलशिखाभिधं त्वमवधारय नागकृतम् ॥ ३९५ ॥

यथा–

गोपवधूमयूरवनितानवमेघनिभः,
दानवसङ्घदारणविधावतिसप्रतिभः ।
तुम्वरुनारदादिकमनःसरसीषु गजः,
वाञ्छितमातनोतु तव गोपपतेस्तनुजः ॥ ३९६ ॥

इति शैलशिखा १८०.

१८१. अथ ललितम्

कारय भं ततोऽपि रगणं विधेहि नगणं,
पक्षिपतिं विधारय पुनस्तथैव नगणम् ।
कङ्कणमन्तगं कुरु समस्तपादविरतौ,
धेहि मनः सदैव ललिते फणीश्वरकृतौ ॥ ३९७ ॥

अत्रापि सप्तभिर्नवभिः प्रायो विरतिर्भवतीति उपदिश्यते ।

यथा–

गोपवधूमुखाम्बुजविकासने दिनपतिः,
दानवसङ्घमन्तकारिदारणे मृगपतिः ।
लोकभयापहः सकलवन्द्यपादयुगलः,
शं कुरुतां ममापि च विलोलनेत्रकमलः ॥ ३९८ ॥

इति ललितम् १८१.

१८२. अथ सुकेसरम्

नगण-सगणौ विधेहि जगणं ततः परं,
सगण-जगणौ च नूपुरमशोऽनन्तरम् ।
फणिनृपतिभाषितं रसविधूदिताक्षरं,
कलय हृदये सदा सुखकरं सुकेसरम् ॥ ३९९ ॥

यथा–

नरपतिसमूहकण्ठतटघट्टनोद्भवै-
रुडुगणनिभैः स्फुलिङ्गनिकरैर्भयानकः ।
विलसति नृपेन्द्रशत्रुगणधूमकेतुवत्,
तव रणविधौ स्थितः करतले कृपाणकः ॥ ४०० ॥

इति सुकेसरम् १८२.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१८३. अथ ललना

प्रथमं कलय करतलमात्मना ह्यपथां[1],
ललनां नगणयुगलवतीं जभाकलिताम् ।
फणिराजभणितगुण(रु)विराजितामतुलां,
कलयाशु सपदि सुजनमानसे वलिताम्[2] ।। ४०१ ।।

यथा

विदधातु सकलफलमनारतं तनुते,
सनकादिनिखिलमुनिनतो वने वनिते ! ।
व्रजराजतनय इह सदा हृदा कलितः,
स चराचरजनतनुमहोदधौ फलितः ।। ४०२ ।।

इति ललना १८३.

१८४. अथ गिरिवरधृतिः

शरपरिमितमिह नगणमनु कुरुत,
विधुविरचितमथ लघुमपि रचयत ।
फणिपतिरिति किल मधुरमनुवदति,
कलयत निजहृदि गिरिवरधृतिरिति ।। ४०३ ।।

यथा –

विशिखनिचयहतनिखिलरजनिचर !,
निजभुजयुगबलरणविनिहतखर ! ।
विबुधनिहतभय ! दशमुखकुलहर !,
दशरथनृपसुत ! जय ! जय ! रघुवर ! ।। ४०४ ।।

इति गिरिवरधृतिः १८४.

अचलधृतिः[1]*इत्यन्यत्र ।

[3]अत्रापि प्रस्तारगत्या षोडशाक्षरस्य पञ्चषष्टिसहस्राणि पञ्चशतानि षट्-त्रिंशदुत्तराणि ६५५३६ भेदास्तेषु कियन्तो लक्षिताः, शेषभेदाः प्रस्तार्य स्वेच्छया नामानि चारयज्या (विचार्य) लक्षणीया इत्युपदिश्यते ।[2]

इति षोडशाक्षरम् ।

---

१. ख. ह्यथ ताम् । २. ख. वलितम् । ३. पंक्तित्रयं नास्ति क. प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तबक, का० १५५

,, —२ षोडशाक्षरवृत्तस्योपलब्धशेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे पर्यालोच्याः ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अथ सप्तदशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्–

१८५. लीलाधृष्टम्

वृत्ते यस्मिन्नष्टौ पादे कर्णाः संयुक्ता संदृश्यन्ते,
हारश्चैकः प्रान्ते यस्मिन् वर्णाः शैलश्चन्द्रैः शोभन्ते ।
सर्वेषां नागाणामीशेनैतत्संप्रोक्तं धेहि स्वान्ते,
भूपालानां चित्तानन्दस्थानं लीलाधृष्टाख्यं कान्ते ! ॥ ४०५ ॥

यथा–

वारां राशौ सेतुं बद्ध्वा लङ्कायामातङ्कौघं दास्यन्,
नानावर्णैः सुग्रीवाद्यैः लङ्कायां[1] भिन्नं दुर्गं कुर्वन् ।
सीताचित्ते प्रेमाधिक्यैः लोहैः कीलैर्ग्राव्णीवोत्कीर्णाः,
काकुत्स्थः कल्याणं कुर्याद् युष्माकं क्रव्यादाब्धि तीर्णः ॥ ४०६॥

इति लीलाधृष्टम् १८५.

१८६. अथ पृथ्वी

पयोधरविराजिता करसुवर्णवत्कङ्कणा,
सुगन्धकुसुमोज्ज्वला सरसहारसंशोभिनी ।
सुरूपयुतकुण्डला कनकरावसुनूपुरा,
वसुप्रथितसंस्थितिर्जगति भाति पृथ्वी सदा ॥ ४०७ ॥

यथा–

हरिर्भुजगनायकं निजगिरिं भवानीपतिः,
गजेन्द्रममराधिपो निजमरालमब्जासनः ।
द्विजा विबुधकूलिनीं जगति जायमाने नृप !,
त्वदीययशसोज्ज्वले किल गवेषयन्त्यातुराः ॥ ४०८ ॥

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

अनेन नयताऽधुना महदुलूखलं शाखिनो,
रयातियुगमन्तरा ककुभयोरिह क्रामता ।
इतीरयति केचन श्रदधुराशु गोपान्हृदा,
पुरो विहरति स्वके शिशुकदम्बके नापरे ॥ ४०९ ॥

इत्यादि शतशो निदर्शनानि काव्येषु ।

इति पृथ्वी १८६.

---

१. ख. लंकायां ।

CC-0, RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१८७. अथ मालावती

द्विजविलसिता पयोधरविराजिता हारिणी,
सरसकरयुक्सुवर्णवलया लसत्कुण्डला ।
विरुतयुतनूपुरा मुनिदिगीशसंख्याक्षरा,
भुजङ्गपतिभाषिता जगति भाति मालावती ।। ४१० ।।

यथा–

वनचरकदम्बकैरपरसिन्धुशोभाधरैः,
करजदशनायुधैर्जलधिनीरमाच्छादयन् ।
रघुपतिरुपागतः सखि ! निशाचराधीश्वरं,
रणभुवि निहत्य दास्यति तवातुलं सम्मदम् ।। ४११ ।।

इति मालावती १८७.

मालाधर इति पिङ्गले[1]* नामान्तरम् ।

१८८. अथ शिखरिणी

सुरूपं स्वर्णाढ्यं श्रवणमधिताटङ्कयुगलं,
सदा संबिभ्राणा द्विजमथ सुपुष्पाढ्यवलयौ ।
सुरूपं हस्ताग्रं तदनु दधतो राजति रसैः,
शिवैश्छिन्ना नागप्रथितमहिमेयं शिखरिणी ।। ४१२ ।।

यथा–

दिशि स्फारीभूतैः कविनिकरगीतैस्तव रण-
स्तवैर्वात्याचक्रैर्द्विगुणितरयः क्षोणितिलकः ।
प्रतापो दावाग्निस्तव खरकरस्पर्शकठिनो,
विपक्षक्षोणीन्द्रः प्रथितवनमत्र प्रभवति[1] ।। ४१३ ।।

यथा वा, ममैव पवनदूते खण्डकाव्ये—

यदा कंसादीनां निधनविधये यादवपुरीं,
गतः श्रीगोविन्दः पितृभवनतोऽक्रूरसहितः ।
तदा तस्योन्मीलद्विरहदहनज्वालगहने,
पपात श्रीराधाकलिततदसाधारणरतिः ।। ४१४ ।।

---

१. ख. प्रदति ।

*टिप्पणी —१ प्राकृतपैंगलम्, द्वितीय परिच्छेद, पद्य १७८

Digitized by ... Muthulakshmi Research Academy

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

विना तत्तद्वस्तु क्वचिदपि च भाण्डानि भगवत्,
प्रसादान्ताऽभूवन् प्रतिभवनमित्यद्भुतमभूत् ।
भयोद्यद्वैलक्ष्याऽवितथवचसस्तच्चरणयो-
र्निपेतुस्ता हस्ताहृतवसनमुक्तामणिगणाः ॥ ४१५ ॥

यथा वा, रूपगोस्वामिकृत-हंसदूतकाव्ये[1]*—

दुकूलं बिभ्राणो दलितहरितालद्युतिहरं,
जपापुष्पश्रेणीरुचिरुचिरपादाम्बुजतलः ।
तमालश्यामाङ्गो दरहसितलीलाञ्चितमुखः,
परानन्दाभोगः स्फुरतु हृदि मे कोऽपि पुरुषः ॥ ४१६ ॥

यथा वा, श्रीशङ्कराचार्यकृत-सौन्दर्यलहरीस्तोत्रे[2]*—

दृशा द्राघीयस्या दरदलितनीलोत्पलरुचा,
दवीयांसं दीनं स्नपय कृपया मामपि शिवे ।
अनेनाऽयं धन्यो भवति न च ते हानिरियता ,
वने वा हर्म्ये वा समकरनिपातो हिमकरः ॥ ४१७ ॥[1]

इत्यादि महाकविप्रबन्धेषु शतशो निदर्शनानि द्रष्टव्यानि ।

इति शिखरिणी १८८.

१८९. अथ हरिणी

द्विजरसयुता कर्णद्वन्द्वस्फुरद्वरकुण्डला,
कुचतटगतं पुष्पं हारं तथा दधती मुदा ।
विरुतललितं संबिभ्राणं[2] पदान्तगनूपुरं,
रसजलनिधिश्छिन्ना नागप्रिया हरिणी मता ॥ ४१८ ॥

यथा–

सपदि कपयः शौर्यविशस्फुरत्करजद्विजाः,
गिरिवरतरूनुन्मृद्नन्तस्तथोत्पथगामिनः ।
अहमहमिकां कृत्वा वारांनिधेरतिलङ्घने[3],
तटभुवि गताः संप्रेक्षन्ते मुखानि परस्परम् ॥ ४१९ ॥

---

१. क. प्रतौ नास्तीदम्पद्यम् । २. ख. संबिभ्राणा । ३. ख. लंघते ।

*टिप्पणी—१ श्रीरूपगोस्वामिकृत-हंसदूतम् प्रथमपद्यम्
२ शंकराचार्यकृत-सौन्दर्यलहरी पद्य ५७

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

हसितवदने दृष्ट्वा चेष्टां सुतस्य सविस्मये,
ययतुरथ ते गोपापत्यौ तदद्भुतमन्यतः ।
तदनु कतिचिद् बाला मात्रे बलेन सहोचिरे,
मृदमनुपदं कृष्णः प्राशीदिति प्रतिभाजुषः ॥ ४२० ॥

यथा वा, लक्ष्यलक्षणयुक्तं तत्रैव—

ग्रहिलहृदयोदञ्चत्तत्तद्गतिप्रतिभाजुषां,
त्रिभुवनपतिप्रत्यासत्तिस्फुरत्पुलकस्पृशाम् ।
शिथिलकबरीबन्धस्रस्तस्रजां हरिणीदृशां,
न समरसतः कायप्रायो लघुर्गुरुरप्यभूत् ॥ ४२१ ॥

श्लेषार्थ ऊहनीयः । यथा वा– 'अथ स विषयव्यावृत्तात्मा यथाविधिसूनवे'*।' इत्यादि रघुवंशे महाकाव्यादिसत्कविप्रबन्धेषु च भूमनिदर्शनानि ।

इति हरिणी १८९.

१९०. अथ मन्दाक्रान्ता

कर्णौ पुष्पद्वितयसहितौ गन्धवद्धस्तयुक्ता,
हारं रूपं तदनु वलयं स्वर्णसञ्जातशोभम् ।
संबिभ्राणा विरुतललितौ नूपुरौ वा पदान्ते
मन्दाक्रान्ता जयति निगमैश्छेदयुक्ता रसैश्च ॥ ४२२ ॥

यथा–

सिन्धोष्पारे दशमुखपुरी वानरास्तत्र दूताः,
पम्पाशम्पाशतयुतचलन्नीलमेघावलीकाः ।
वासः केकाकवलिततटे मादृशामृष्यमूके,
दैवो वामः पुनरयमतो भावि किं किं न जाने ॥ ४२३ ॥

***टिप्पणी— १.** अथ स विषयव्यावृत्तात्मा यथाविधिसूनवे,
नृपतिककुदं दत्वा यूने सितातपवारणम् ।
मुनिवनतरुच्छायां देव्या तया सह शिश्रिये,
गलितवयसामिक्ष्वाकूणामिदं हि कुलव्रतम् ॥
[रघुवंश, स० ३, प० ७०]

T　CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

हृत्वा ध्वान्तस्थितमपि वसुप्रक्षिपत् पक्ष्म[राजि-]
स्पन्दं विन्दन् व्रजति कुहचित् कैश्चनालक्ष्यमाणः ।
छिद्राणि द्राक् कलयति शयाशक्यशिक्यस्थभाण्डे[1],
निद्रां भंक्त्वा द्रवति जवतस्ताडयत् सुप्तबालात् ।। ४२४ ।। (?)

इति मन्दाक्रान्ता १९०.

१९१. अथ वंशपत्रपतितम्

कारय भं ततोऽपि रगणं रचय न-भगणौ,
धेहि नकारमेरुवलयान् तदनु सुललितान् ।
व्योमसुधांशुभिः कुरु हयैः तदनु च विरतिः[2],
चेतसि वंशपत्रपतितं रचय फणिकृतम् ।। ४२५ ।।

यथा–

जानकि ! नैव चेतसि कृथा रजनिचरमतिं,
राघवदूततामुपगतं कलय हृदि निजे ।
जल्पति मारुतावविति तदा जनकतनयया-
दत्त[3] न मुद्रिकाऽपि कलिता जलपिहितदृशा ।। ४२६ ।।

यथा वा–

'सम्प्रति लब्धजन्म शनकैः कथमपि लघुनि ।' इति किरातार्जुनीये[1]*।

इति वंशपत्रपतितम् १९१.

स्त्रीलिङ्गमिति केचित् । वंशवदनम् इति शाम्भवे तस्यैव नामान्तरमुक्तम् ।

१९२. अथ नर्दटकम्

कुरु नगणं ततः कलय जं वद भं च ततो,
जगणयुगं ततो रचय कारय मेरुगुरू ।
फणिपतिभाषितं मुनिविधूदितवर्णधरं,
कविजनमोहकं हृदि विधारय नर्दटकम् ।। ४२७ ।।

---

१. ख. भारो । २. ख. विरतिं । ३. ख. हन्त ।

*टिप्पणी—१ सम्प्रति लब्धजन्म शनकैः कथमपि लघुनि,
क्षीणपयस्युपेयुषि भिदां जलधरपटले ।
खण्डितविग्रहं बलभिदो धनुरिह विविधाः,
पूरयितुं भवन्ति विभवशिखरमणिरुचः ।।४३।।
[किरातार्जुनीयम् स० ५, प० ४३]

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

अनुलवमूर्च्छया क्षपितदेहलता गलता,
नयनजलेन दूषितमुखी[1] तव भूमिसुता ।
रघुवरमुद्रिकां हृदि निधाय सुखातिशयै-
र्मुकुलितलोचना क्षणमभूदमृतस्नपिता ।। ४२८ ।।

यथा वा, श्रीभागवते दशमस्कन्धे वेदस्तुतौ[1]*—

जय ! जय ! जह्यजामजितदोषगृहीत[2]गुणाम् । इत्यादि ।

इति नर्द्दटकम् १९२.

अथ कोकिलकम्

मुनिरसवेदैर्विरतिर्यदि कोकिलकं तदेदमेव भवेत् ।
तदुदाहरणं लक्षणवाक्ये ज्ञेयं सुधीभिरिति ।। ४२९ ।।

यथा वा, छन्दोमञ्जर्याम्[2]*—

लसदरुणेक्षणं मधुरभाषणमोदकरं,
मधुसमयागमे सरसकेलिभिरुल्लसितम् ।
अलिललितद्युतिं रविसुतावनकोकिलकं,
ननु कलयामि तं सखि ! सदा हृदि नन्दसुतम् ।। ४३० ।।

गणविरचना सैव, विरतिकृत एवात्र भेद इति नामान्तरम् ।

इति कोकिलकम् ।

१९३. अथ हारिणी

कर्णं कृत्वा कनकललितं ताटङ्कसंराजितं,
संबिभ्राणा द्विजमथ रुतस्वर्णाचितौ नूपुरौ ।
पुष्पं हारौ सरसवलयं संधारयन्ती मुदा,
वेदैः षड्भिर्विरचितयतिः शैलोदिता हारिणी ।। ४३१ ।।

---

१. ख. दूषितमुखा । २. ख. गृभीतगुणाम् ।

* टिप्पणी—१. जय जय जह्यजामजितदोषगृभीतगुणां
त्वमसि यदात्मना समवरुद्धसमस्तभागः ।
अगजगदोकसामखिलशक्त्यवबोधक ते
क्वचिदजयात्मना च चरतोऽनुचरेन्निगमः ।।
[भागवत-दशमस्कन्ध, अ० ८७, श्लो० १४]

२. छन्दोमंजरी, द्वि० स्त० का० १६७ ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

बद्ध्वा सिन्धुं नगरमिह मे रामः समायात्ययं,
रोद्धुं[1] श्रुत्वा दशमुख इति प्रीतोऽभवत्तत्क्षणम् ।
बाह्वोः कण्डूं गमयितुमना पश्चान्नरं राघवं,
श्रुत्वाऽवज्ञाकलुषितमना लङ्केश्वरोऽभूत्तदा ॥ ४३२ ॥

इति हारिणी १९३.

१९४. अथ भाराक्रान्ता

आदौ कुर्यान् मगण-भगणौ ततो नगणो मतः,
रेफं दद्यात्तदनुरुचिरं विधेहि करं ततः ।
मेरुं हारं विरचय ततः फणीश्वरभाषिता,
भाराक्रान्ता जलनिधिरसैर्विरामयुता मता ॥ ४३३ ॥

यथा–

सिन्धोर्बन्धं रघुवरकृतं निशम्य दशाननो,
दध्यौ मूर्द्ध्नां[2] सपदि बहुधा व्यधाच्च विधूननम् ।
शङ्के च्योतन्मणिकपटतो रघूत्तमरागिणी,
सत्यामाख्यां जगति तनुते तदा कमलालया ॥ ४३४ ॥

इति भाराक्रान्ता १९४.

१९५. अथ मतङ्गवाहिनी

हारमेरुजक्रमेण जायते यदा विराजिता,
शैलभूमिसंख्यकाक्षरैस्तथा भवेद् विकासिता ।
पण्डितावलीविनोदकारिपिङ्गलेन भाषिता,
जायते मतङ्गवाहिनी गुणावलीविभूषिता ॥ ४३५ ॥

यथा–

नौम्यहं विदेहजापतिं शरासनस्य 'भञ्जकं,
बालिजीवहारिणं विभीषणस्य राज्यसञ्जकम् ।
लक्ष्यवेधने तथा सदा शरासनस्य'[3] धारिणं,
रावणद्रुहं कठोरभानुवंशदीप्तिकारणम् ॥ ४३६ ॥

इति मतङ्गवाहिनी १९५.

---

१ ख. योद्धुम् । २ ख. मूर्द्धनः । ३. '—' चिह्नगतोंऽशः क. प्रतौ नास्ति ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१६६. अथ पद्मकम्

रचय नगणं सं तस्यान्ते धेहि पश्चान्मकारं,
तदनु चरणे तस्य द्वन्द्वं कारयाशु द्विहारम् ।
समुनिविधुभिः पादे छिन्नं पिङ्गलेन प्रयुक्तं,
कलय हृदये छन्दः श्रेष्ठं पद्मकं वृत्तसारम् ॥ ४३७ ॥

यथा–

अयमिह[1] पुरः पारावारः चेतसा गम्यपारः,
सपदि सहितः पादः सङ्घैर्भीषणो वीचिहस्तैः ।
कपिगणमहासेना चेयं पारमुत्प्रेक्षमाणा,
रचय यदिह न्यायं शीघ्रं वानराणां पतेः[2] तत् ॥ ४३८ ॥

इति पद्मकम् १६६.

१६७. अथ दशमुखहरम्

जलनिधिपरिमित नगणमिह विरचय,
तदनु च शरपरिमितलघुमपि कलय ।
सकलफणिगणनरपतिरिति हि वदति,
सखि ! कलय निजहृदि दशमुखहरमिति ॥ ४३९ ॥

यथा–

जय ! जय ! रघुवर ! जलधितरणनिपुण !,
दशरथसुत ! विबुधनिकरकथितगुण ! ।
सुरविमतदशवदनकुलकदनकर !
सुरगणनुतचरण ! शमिह मम वितर ॥ ४४० ॥

इति दशमुखहरम् १६७.

[3]अत्रापि प्रस्तारगत्या सप्तदशाक्षरस्य एकं लक्षं एकत्रिंशत् सहस्राणि द्विसप्ततिश्च १३१०७२ भेदास्तेषु कियन्तः प्रोक्ताः, शेषभेदाः प्रस्तार्य समुदाहरणीया, इत्यलमतिविस्तरेण[1]* ।

इति सप्तदशाक्षरम् ।

---

१. ख. अयमपि । २. ख. पते । ३. पंक्तित्रयं नास्ति क. प्रतौ ।

*टिप्पणी १—सप्तदशाक्षरवृत्तस्यावशिष्टप्राप्तभेदाः पञ्चमपरिशिष्टेऽवलोडनीयाः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अथ अष्टादशाक्षरम्

तत्र–

१९८. अथ लीलाचन्द्रः

अश्वैः संख्याता यस्मिन् वृत्ते पादे पादे शोभन्ते कर्णाः,
पश्चाद् वेदैः संख्याता हाराः योगैश्चन्द्रैस्संयुक्ता वर्णाः ।
लीलाचन्द्राख्यं वृत्तं प्रोक्तं नागानामीशेनैतत् कान्ते !,
रन्ध्राङ्कैर्वर्णैः संविच्छिन्नं धेहि स्वान्ते भास्वन्नेत्रान्ते ॥ ४४१ ॥

यथा–

हालापानोद्घूर्णन्नेत्रान्तस्तुच्छीकुर्वत्कैलासं भासा,
नीलाम्भोजप्रोद्यच्छोभावत् स्कन्धं द्वन्द्वे संराजद्वासाः ।
मालां वक्षःपीठे बिभ्राणो न्यक्कुर्वन्ती कान्त्यालीन् तूर्णं,
तालाङ्कस्सर्वेषां लोकानां कल्याणौघं दद्यात् सम्पूर्णम् ॥४४२॥

इति लीलाचन्द्रः १९८.

१९९. अथ मञ्जीरा

पूर्वं[1] कर्णत्रित्वं कारय पश्चाद्धेहि भकारं दिव्यं,
हारं वह्निप्रोक्तं धारय हस्तं देहि मकारं चान्ते ।
रन्ध्रैर्वर्णैर्विश्रामं कुरु पादे नागमहाराजोक्तं,
मञ्जीराख्यं वृत्तं भावय शीघ्रं चेतसि कान्ते ! स्वीये ॥ ४४३ ॥

यथा–

सिन्धुर्गम्भीरोऽयं राजति गन्तारः कपयस्तत्पारं,
शैले शैले केकी कूजति वातोऽयं मलयाद्रेर्वाति ।
लङ्कायां वैदेही तिष्ठति कामोऽयं पुरतः सज्जास्त्रः,
सामग्रीयं तावल्लक्ष्मण सर्वं पूर्वकृतस्याधीनम् ॥ ४४४ ॥

यथा वा, भूषणे[1]*–

प्रौढध्वान्ते गर्जद्वारिदधाराधारिणि काले गत्वा,
त्यक्त्वा प्राणानग्रे कौलसमाचारानपि हित्वा यान्ती ।
कृत्वा सारङ्गाक्षी साहसमुच्चैः केलिनिकुञ्जं शून्यं,
दृष्ट्वा प्राणत्राणं भावि कथं वा नाथ ! वद प्रेयस्याः ॥४४५॥

इति मञ्जीरा १९९.

---

१ ख. पूर्णम् ।

*टिप्पणी—१. वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य २९४

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

२००. अथ चर्चरी

कुण्डलं दधती सुरूपसुवर्णरावरसाहितं,
नूपुरं कुचयुग्मसङ्गतदिव्यहारविभूषिता ।
हस्तयुक्तसुरूपकङ्कणभासिता फणिभाषिता,
चर्चरी कविमानसे परिभाति भावुकदायिनी ॥ ४४६ ॥

यथा–

रासकेलिरसोद्धतप्रियगोपवेष! जगत्पते !
दैत्यसूदन ! भोगिमर्द्दन ! देवदेव ! महामते !
कंसनाशन ! वारिजासनवन्द्यपाद ! रमापते !,
चिन्तयामि विभो ! हरे ! तव पादुके त्रिदशैर्नुते ॥ ४४७ ॥

[1]यथा वा, अस्मत्तातचरणानां श्रीनन्दनन्दनाष्टके—

मन्दहासविराजितं मुनिवृन्दवंद्यपदाम्बुजं,
सुन्दराधरमन्दराचलधारि चारु लसद्भुजम् ।
गोपिकाकुचयुग्मकुङ्कुमपङ्करूषितवक्षसं,
नन्दनन्दनमाश्रये मम किं करिष्यति भास्करिः ॥ ४४८ ॥

[2]यथा वा, तेषामेव श्रीसुन्दरीध्यानाष्टके—

कल्पपादपनाटिकावृतदिव्यसौधमहार्णवे,
रत्नसङ्घकृतान्तरीपसुनीपराजि विराजते,
चिन्तितार्थविधानदक्षसुरत्नमन्दिरमध्यगां,
मुक्तिपादपवल्लरीमिह सुन्दरीमहमाश्रये ॥ ४४९ ॥

यथा वा, भूषणे[3]*—

कोकिलाकलकूजितं न शृणोषि सम्प्रति सादरं,
मन्यसे तिमिरापहारि सुधाकरं न सुधाकरम् ।
दूरमुज्झसि भूषणं विकलासि चन्दनमारुते,
कस्य पुण्यफलेन सुन्दरि ! मन्दिरं न सुखायते ॥ ४५० ॥

---

१. २. नन्दनन्दनाष्टक–सुन्दरीध्यानाष्टकञ्चेति पद्यद्वयं नास्ति क. प्रतौ ।
३. वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य २९६

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा वा, **मार्कण्डेयमहामुनिविरचितचन्द्रशेखराष्टके**—[प्रथमं पद्यम्]

रत्नसानुशरासनं रजतादिश्रृङ्गनिकेतनं,
सिञ्जिनीकृतपन्नगेश्वरमच्युतानलसायकम् ।
क्षिप्रदग्धपुरत्रयं त्रिदशालयैरभिवन्दितं,
चन्द्रशेखरमाश्रये मम किं करिष्यति वै यमः ॥ ४५१ ॥

यथा वा, **शङ्कराचार्यकृत-नवरत्नमालिकास्तोत्रे**[१]—

कुन्दसुन्दरमन्दहासविराजिताधरपल्लवा-
मिन्दुविम्वनिभाननामरविन्दचारुविलोचनाम् ।
चन्दनागुरुपङ्करूषिततुङ्गपीनपयोधरां,
चन्द्रशेखरवल्लभां प्रणमामि शैलसुतामहम् ॥ ४५२ ॥

इत्यादि महाकविप्रबन्धेषु सहस्रशो निदर्शनानि अनुसन्धेयानि ।

इति चर्चरी २००. इति द्वितीयं शतकम् ।

२०१. अथ क्रीडाचन्द्रः

यकारं रसेनोदितं सर्वपादेषु संधेहि युक्तं,
तथा धेहि पादे नगाधीशशीतांगु[२]संख्यातवर्णम् ।
कवीनामधीशेन नागाधिराजेन संभाषितं तत्,
मुदा क्रीडया शोभितं चन्द्रसंज्ञं हृदा धेहि[३] वृत्तम् ॥ ४५३ ॥

यथा– मुनीन्द्राः पतन्ति स्म हस्तं नृपाः कर्णयुग्मे तथाधुः,
सभायां नियुक्ता दधुः कम्पमुच्चैस्तदा स्तम्भसङ्गाः ।
सुराणां समूहेन नाश्रावि लोके तथान्योन्यवाच[४]-
स्तदा रामसंभिन्नबाणासनाढचातपूर्णो[५] त्रिलोके ॥ ४५४ ॥

यथा वा, भूषणे[टि१]–

भ्रमन्ती धनुर्मुक्तनाराचधारानिरुद्धे समस्ते,
नभः प्राङ्गणे पक्षिवाय्वोः प्रयाते निरन्ते प्रशस्ते ।

---

१. नवरत्नमालिकायाः पद्यं क. प्रतौ नास्ति । २. 'शीतांशु' क. प्रतौ नास्ति । ३. धेहि । ४. ख. वाणी । ५. ख. सनाद्यातपूर्णे ।

टिप्पणी—१ रा.प्रा.वि.प्र. ग्र० सं० १४२५० स्थ उपरोक्तपद्यं नास्ति, किन्त्वस्य स्थाने निम्नोद्धृतं पद्यं वर्तते ।
'पदान्यासनम्रीकृतक्षोणिचक्रत्रुटन्मर्मकूर्मं
भ्रमत्तुङ्गखङ्गाङ्कविक्षेपकीव्रेरवैरं च दर्पम् ।
भुजङ्गेऽशनिः श्वासवातोच्चलच्चक्रवालाचलेन्द्रं,
शिवायास्तु चन्द्रेन्दुचूडामणेस्ताण्डवाडम्बरं वः ॥२९६॥
[वाणीभूषणम्, द्वि. ग्र. प. २९८]

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तथा चण्डगाण्डीवबाणावलीनीचरक्षाविरक्षः[1],
बभूवाङ्गराजो यथा न स्थितोऽसौ विपक्षः स्वपक्षः ॥ ४५५ ॥

इति क्रीडाचन्द्रः २०१.

२०२. अथ कुसुमितलता

कर्णौ ताटङ्कप्रथितयशसो[2] धारयन्ती द्विजं च,
प्रोद्यद्रूपाढ्यं कनककलितं कङ्कणं चादधाना ।
पुष्पाक्तौ हारौ तदनु दधती राववन्नूपुरौ च,
छिन्ना बाणार्णैः कुसुमितलता स्याद् रसैर्वाजिभिश्च ॥४५६॥

यथा—

घूर्णन्नेत्रान्ते हलकलनया[3] भिन्नपातालमूलं,
तालाङ्के गाङ्गं क्षिपति रभसान्नागसाङ्कःप्रवाहे[4] ।
हर्म्याणां सङ्घैः कुरुभिरभितश्चूर्णितं घूर्णितं च,
क्रीडार्थं बालैरिव विरचिते[5] क्रीडितं शैलराजे ॥ ४५७ ॥

यथा वा—

'गौडं पिष्टान्नं दधि सक्तुशरं निर्जलं मद्यमम्लम् ।' इत्यादि वाग्भटे चिकित्साग्रन्थे ।[1]*

इति कुसुमितलता २०२.

२०३. अथ नन्दनम्

रचय नकारयुक्त-जगणं विधेहि पश्चाच्च भं,
कुरु जगणं ततोऽपि रगणं विधेहि रेफं ततः ।
शिवरचितां विधेहि विरतिं तथा हयैर्भासितां,
कविजननन्दनं कुरु सखे ! सदा हृदा नन्दनम् ॥ ४५८ ॥

यथा—

तव यशसा त्रिलोकवलये वलक्षतामागते,
बहुलनिशास्वपि प्रकटिताश्चकोरकैश्चञ्चवः ।
जगति पयःप्रवाहमतिभिः सुखं मरालैर्वृतं,
सपदि गुहां गताः हिमधिया मुनीश्वरा दुर्बलाः ॥ ४५९ ॥

---

१. ख. विलक्षो । २. ख. यशसौ । ३. ख. हलकलजया । ४. ख. प्रवाहो ।
५. ख. विरचितं कौतुकात् ।

*टिप्पणी — १ 'ग्राम्याब्जानूपं पिशितमबलं शुष्कशाकं तिलान्नं;
गौडं पिष्टान्नं दधि सलवणं विज्जलं मद्यमम्लम् ।
धानावल्लूरं समशनमथो गुर्वसात्म्यं दिवा हि,
स्वप्नं चारात्रौ श्वयथुगदवान् वर्जयेन्मैथुनं च ॥
[वाग्भट—अष्टाङ्गहृदय, अ० १७, श्लो० ४२]

T　CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा वा, **छन्दोमञ्जर्याम्**[1]*—

तरणिसुतातरङ्गपवनैः सलीलमान्दोलितं,
मधुरिपुपादपङ्कजरजः सुपूतपृथ्वीतलम् ।
मुरहरचित्रचेष्टितकलाकलापसंस्मारकं,
क्षितितलनन्दनं व्रज सखे ! सुखाय वृन्दावनम् ॥ ४६० ॥

यथा वा, "अहृत धनेश्वरस्य युधि यः समेतमायोधनम्' । इत्यादि **भट्टिकाव्ये**[2]* ।

इति नन्दनम् २०३.

२०४. अथ नाराचः

रचय न-युगलं समस्ते पदे वेदसंख्याकृतं,
तदनु च कलयाशु पक्षिप्रभुं भासमानं पदे ।
वसुहिमकिरणप्रयुक्ताक्षरोद्भासमानं हृदा,
परिकलय फणीन्द्रनागोक्त-नाराचवृत्तं मुदा ॥ ४६१ ॥

यथा–

सुरपतिहरितो गलत्कुन्तलच्छाद्यमानं मुखं,
सपदि विरहजेन दुःखेन मित्रस्य पाण्डुप्रभम् ।
अनुहरति घनेन सञ्छादितः किञ्चिदुद्यत्प्रभः,
समुदितवरमण्डलोऽयं पुरः शीतरश्मिः प्रिये ! ॥ ४६२ ॥

यथा वा, 'रघुपतिरपि तात वेदो विशुद्धो प्रगृह्य प्रियाम् ।' इत्यदि **रघुवंशे**[3]* ।

षोडशाक्षरप्रस्तारे **नराचः**, अत्र तु **नाराच** इत्यनयोर्भेदः ।

इति नाराचः २०४.

मञ्जुला इत्यन्यत्र ।

---

१. पंक्तिरियं नास्ति क. प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ छंदोमञ्जरी, द्वि० स्तबक, का० १७५ या उदाहरणम्

,, २ अहृत धनेश्वरस्य युधि यः समेतमायो धनं,
तमहमितो विलोक्य विबुधैः कृतोत्तमाऽऽयोधनम् ।
विभवमदेन निह्नुतह्रियाऽतिमात्रसम्पन्नकं,
व्यथयति सत्पथादधिगताऽथवेह संपन्न कम् ॥
[भट्टिकाव्य, सर्ग १०, प० ३७]

,, ३ रघुपतिरपि जातवेदोविशुद्धां प्रगृह्य प्रियां,
प्रियसुहृदि विभीषणे संगमय्य श्रियं वैरिणः ।
रविसुतसहितेन तेनानुयातः स सौमित्रिणा,
भुजविजितविमानरत्नाधिरूढः प्रतस्थे पुरीम् ॥
[रघुवंश, स० १३, प० १४]

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

२०५. अथ चित्रलेखा

कर्णं कृत्वा कनकसुललितं कुण्डलप्राप्तशोभं,
　　संबिभ्राणा द्विजमथ च करं कङ्कणेन प्रयुक्तम् ।
पुष्पं हारद्वयमथ दधती राववन्नूपुरौ च,
　　वेदैरश्वैर्मुनिरचितयतिर्भासते चित्रलेखा ॥ ४६३ ॥

यथा–

श्रीमद्राजन्नयमिह गगने त्वत्प्रतापाहितस्य,
　　छिद्रस्येन्दुः कलयति सुषमां मुद्रणे सीसकस्य ।
ताराशोभां विदधति वियतो हारितस्य प्रतापै-
　　स्फोटस्यैषा दिगपि किमु हरे कुङ्कुमैर्भाति कीर्णा ॥४६४॥

इति चित्रलेखा २०५.

२०६. अथ भ्रमरपदम्

कारय भं ततोऽपि रगणमथ नगणयुगलं,
　　धेहि नकारकं तदनु च विरचय करतलम् ।
भासितमक्षरैर्गिरिखरहिमकरपरिमितैः,
　　पिङ्गलभाषितं भ्रमरपदमिदमतिललितम् ॥ ४६५ ॥

यथा–

नीलतमःपटाधिगतमिद[1]मुडुगणमखिलं,
　　मौक्तिकमेष कालनरपतिरतिललिततरम् ।
वासवदिग्गतद्विजपतय इह कलितकरं,
　　यच्छति सोऽपिताननुकलयति निजकरगणैः ॥ ४६६ ॥

इति भ्रमरपदम् २०६.

२०७. अथ शार्दूलललितम्

आदौ मं सततं विधेहि तदनु ज्ञेयं सरसिजं,
　　तत्पश्चाद् विरचय जं कलय सं कर्णं तदनुगम् ।
तस्यान्ते कुरु रूपहस्तमतुलं जानीहि सरसं,
　　नव्यप्रेमभरालसे सुललिते शार्दूलललितम् ॥ ४६७ ॥

---

१. ख. मिम ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

श्रीगोविन्दपदारविन्दमनिशं वन्देऽतिसरसं,
मायाजालजटालमाकुलमिदं मत्वाऽतिविरसम् ।
वृन्दारण्यनिकुञ्जसञ्चरणतः सञ्जातसुषमं,
[1]दम्भोल्यंकुशसध्वजं सरसिजप्रोद्भासमसमम् ॥ ४६८ ॥

इति शार्दूलललितम् २०७.

२०८. अथ सुललितम्

कलय नयुगलं पश्चाद्वक्रं तथातिमनोहरं,
तदनु विरचयेः कर्णौ पुष्पान्वितौ भगणं ततः ।
वितनु सुललितं पक्षीन्द्रं वा विलासिनीसुन्दरं,
मुनिविरतियुतं वेदैश्छिन्नं हयैश्च विभावितम् ॥ ४६९ ॥

यथा–

त्रिजगति जयिनस्ते ते भावा नवेन्दुकलादयः,
परिणतिमधुराः कामं सर्वे मनोरमतां गताः ।
मम तु तदखिलं शून्यारण्यप्रभं सखि ! जायते,
मुररिपुरहितं तस्माद् भद्रे समाह्वय तं हरिम् ॥ ४७० ॥

इति सुललितम् २०८.

२०९. अथ उपवनकुसुमम्

सलिलनिधिपरिमित-नगणमिह विरचय,
तदनु च रसनिगदितलघुमपि कलय ।
कविजनहितसकलफणिपतिकथितमिह,
हृदि कलय सुललितमुपवनकुसुममिति ॥ ४७१ ॥

यथा–

असितवसनवरललितहलमुशलधर !,
निजतनुरुचिविजितपुरमथनगिरिवर ! ।
द्विविदकपिवरकदनकर ! नवरुचिचय !,
जय ! जय ! कुरुनरपतिनगरजनितभय ! ॥ ४७२ ॥

इति उपवनकुसुमम् २०९.

---

१. ख दम्भोल्यंकुशकेतनाब्जनुचिरं सच्छोभमसमम् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

'अत्रापि प्रस्तारगत्या अष्टादशाक्षरस्य लक्षद्वयं द्वाषष्टिसहस्राणि चतुष्चत्वारिंशदुत्तरं च शतं २६२१४४ भेदास्तेषु कियन्तो भेदाः प्रोक्ताः, शेषभेदास्तूह्याः सुधीभिरिति दिक् ।*'

इति अष्टादशाक्षरम् ।

अथ एकोनविंशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्–

२१०. अथ नागानन्दः

अश्वानां संख्याका यस्मिन् सर्वस्मिन् पादे संदृश्यन्ते कर्णाः,
　　पश्चाद् बाणैः संप्रोक्ता हारा युक्ता रन्ध्रैर्भूम्या चोक्ता वर्णाः ।
सर्वेषां नागानामीशेनैतत् प्रोक्तं नागानन्दाख्यं वृत्तं,
　　विश्वेषां यच्छ्रुत्वा संमज्जत्यानन्दानां वारां राशौ चित्तम् ॥ ४७३ ॥

यथा–

जैनप्रोक्तानां धर्माणां सर्वेभ्यो लोकेभ्यः शिक्षां संदास्यन्,
　　यज्ञानां हिंसाङ्गानां तन्मूलानां वेदानां वा निन्दां कुर्वन् ।
सर्वस्मिंस्त्रैलोक्ये भूतानां रक्षारूपां धर्मानेवाधास्यन्,
　　कल्याणं कुर्यात् सोऽयं गोविन्दः क्रीडार्थं बौद्धाभिख्यां गृह्णन् ॥४७४॥

इति नागानन्दः २१०.

२११. अथ शार्दूलविक्रीडितम्

कर्णं कुण्डलपुष्पगन्धललितं हारं च वक्षोरुहे,
　　हस्तं कङ्कणयुग्मसुन्दरतरं शब्दोल्लसन्नूपुरौ ।
रूपाढ्यां रसनां तथैव च दधत्तीक्ष्णांशुविच्छेदितं,
　　श्रीमत्पिङ्गलभाषितं विजयते शार्दूलविक्रीडितम् ॥ ४७५ ॥

यथा

ते राजन्नतिचण्ड[2]कीर्त्तितटिनीडिण्डीरपिण्डाकृति-
　　र्ब्रह्माण्डातिलसत्करण्डनिहितश्वेताण्डजप्रोज्ज्वलम् ।
तन्वीगण्डविपाण्डुरद्युतिपुरस्फूर्जद्विधोर्मण्डलं,
　　राहोर्मण्डक(ल)खण्डमेतदुदयत्याखण्डलाशामुखे ॥ ४७६ ॥

---

१. पंक्तित्रयं नास्ति क. प्रतौ ।　२. ख. राजस्ते परिपूर्णकीर्ति ।

*टिप्पणी—१ अष्टादशाक्षरवृत्तस्य ग्रन्थान्तरेषूपलब्धशेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्याः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा वा, ममैव पाण्डवचरिते अर्जुनागमने द्रोणवाक्यम्—

ज्ञानं यस्य ममात्मजादपि जनाः शस्त्रास्त्रशिक्षाधिकं,
पार्थः सोऽर्जुनसंज्ञकोऽत्र सकलैः कौतूहलाद् दृश्यताम् ।
श्रुत्वा वाचमिति द्विजस्य कवची गोधाङ्गुलित्राणवान्,
पार्थस्तूणशरासनादिरुचिरस्तत्राजगाम द्रुतम् ।। ४७७ ।।

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

उन्मीलन्मकरध्वजव्रजवधूहस्तावधूताञ्चल-
व्याजोदञ्चितबाहुमूलकनकद्रोणीक्षणादीक्षणे ।
उद्यत्कण्टककैतवस्फुटजनानन्दादिसंख्यामित-
ब्रह्माद्वैतसुखश्चिरं स भगवांश्चिक्रीड तत्कन्दुकैः ।। ४७८ ।।

इत्यादि महाकविप्रबन्धेषु सहस्रश उदाहरणानि प्रत्युदाहरणत्वेन[1] द्रष्टव्यानि ।

इति शार्दूलविक्रीडितम् २११.

२१२. अथ चन्द्रम्

प्रतिपदमिह कुरु नगणत्रितयमथ कलय,
जगणमिह नगणयुगलं तदनु च विरचय ।
चरणविरतिमनु रुचिरं कुसुममथ वितनु,
सकलफणिनृपतिकृत-चन्द्रमिति शृणु सुतनु ! ।। ४७९ ।।

यथा –

नवकुलवनजनितमन्दमरुदिह वहति,
किरणमनुकलयति विधुस्त्रिजगति सुमहति ।
सपदि सखि ! मम निजहितं वचनमनुकलय,
समनुसर वनगतहरिं तनुमतिसफलय ।। ४८० ।।

यथा वा, भूषणे[1]*—

अनुपहतकुसुमरसतुल्यमिदमधरदल-
ममृतमयवचनमिदमालि विफलयसि चल ।
यदपि यदुरमणपदमीश मुनिहृदि लुठति,
तदपि तव रतिवलितमेत्य वनतटमटति ।। ४८१ ।।

इति चन्द्रम् २१२.

चन्द्रमाला इत्यस्यैव नामान्तरं पिङ्गले*[2] ।

---

१. ख. 'प्रत्युदाहरणत्वेन' नास्ति ।

टिप्पणी—१. वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य ३००

टिप्पणी—२. प्राकृतपैङ्गलम्, परिच्छेद २, पद्य १९०

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

२१३. अथ धवलम्

द्विजवरगणमिह रचय जलनिधिपरिमितं,
तदनु कलय सगणमथ चरणविरतिगतम् ।
सकलकविकुलहृदयतलविलुठनकरणं,
फणिपतिभणित-धवलमिह शृणु सुखकरणम्[1] ॥ ४८२ ॥

यथा–

जलमिह कलय सखि ! कनकयुतमिव विमलं,
गगनतलमपि विगतजलधरमतिधवलम् ।
गतवचनरचनमिदमपि शिखिकुलमवलं,
नववपुरिदमव मम कुसुमविशिखतरलम् ॥ ४८३ ॥

यथा वा, भूषणे[1]—

उपगत इह सुरभिसमय इति सुमुखि ! वदे,
निधुवनमधि सह पिब मधु जहि रुषमपदे ।
कमलनयनमनुसर सखि ! तव रभसपरं,
प्रियतमगृहगमनमुचितमनुचितमपरम् ॥ ४८४ ॥

इति धवलम् २१३.

धवला इति पिङ्गले[2]* ।

२१४. अथ शम्भुः

कुरु हस्तं स्वर्णविराजत्कङ्कणपुष्पोद्यद्गन्धैर्युक्तं,
श्रवणं ताटङ्कसुरूपप्राप्तरसं हारद्वन्द्वं पश्चात् ।
रसनायुग्मं कनकेनात्यन्तविराजद्वक्राभ्यां प्रान्ते,
नवभूवर्णैः कथितं नागार्चितशम्भ्वाख्यं वृत्तं कान्ते ! ॥४८५॥

यथा–

नवसन्ध्या वह्निजभीत्या पश्चिमसिन्धौ मित्रे संमग्ने,
नलिनीयं पङ्कजनेत्रं मीलयतीवात्यन्तं शोकेन ।
हरितो वध्वः पतगौघानां विरुतैरुच्चैर्नादं संदध्रुः[2],
वरभृत्यांश्चाम्वरमुच्चैर्भानुसमूहारक्तं संबभ्रुः ॥ ४८६ ॥

---

१. ख. सुखशरणम् । २. ख. संचक्रुः ।

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य ३०२
,, २ प्राकृतपैंगलम्, परि० २, पद्य १९२

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा वा*[1]–

जय ! मायामानवमूर्ते दानववंशध्वंसव्यापारी[1],
बलमाद्यद्रावणहत्याकारण[2]लङ्कालक्ष्मीसंहारी[3] ।
कृतकंसध्वंसन-कर्माशंसन-गो-गोपी-गोपानन्दी[4],
बलिलक्ष्मीनाशन-लीलावामन-दैत्यश्रेणीनिष्कन्दी[5] ।। ४८७ ।।

इति शम्भुः २१४.

२१५. अथ मेघविस्फूर्जिता

यकारं संदेहि प्रथममथ मं देहि पश्चान्नकारं,
करं तस्याप्यन्ते रचय रुचिरं रेफयुग्मं ततोपि ।
गुरुं तस्याप्यन्ते कलय ललितं षड्रसच्छेदयुक्तं,
कुरु च्छन्दःसारं फणिपकथितं मेघविस्फूर्जिताख्यम् ।। ४८८ ।।

यथा–

विलोलैः[6] कल्लोलैस्तरणिदुहितुः क्रीडनं कारयन्तं,
लसद्वंशं कंसप्रभृतिकठिनान् दानवानर्दयन्तम् ।
सुराणां सेन्द्राणां ददतमभयं पीतवस्त्रं दधानं,
सलीलं विन्यासैश्चरणरचितैर्भूमिभागं पुनानम् ।। ४८९ ।।

यथा वा, कविराक्षसकृतदक्षिणानिलवर्णने—

उदञ्चत्काबेरीलहरिषु परिष्वङ्गरङ्गे लुठन्तः
कुहूकण्ठी कण्ठीरवरवलवत्रासितप्रोषितेभाः ।
अमी चैत्रे मैत्रावरुणितरुणीकेलिकङ्केल्लिमल्ली-
चलद्वल्लीहल्लीसकसुरभयश्चण्डि चञ्चन्ति वाताः ।।४९०।।

इत्यादि ।

इति मेघविस्फूर्जिता २१५.

२१६. अथ छाया

सुरूपाढ्यं कर्णं कनकललितं ताटङ्कयुग्मान्वितं,
द्विजं गन्धं स्वर्णं वलययुगलं पुष्पाढ्यहारद्वयम् ।
दधाना पादान्ते ललितविरुतप्रोद्भासितं नूपुरं,
रसैः षड्भिश्छिन्ना फणिपकथिता छाया सदा राजते ।।४९१।।

---

१. ख. व्यापारिन् । २. ख. हिंसाकारण । ३. संहारिन् । ४. ख. गोपानन्दिन् । ५. ख. निष्कन्दिन् । ६. ख. वधूटीः ।

*टिप्पणी—१. वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य ३०४

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

भवच्छेदे दक्षं दितिसुतकुलध्वान्तस्य विध्वंसने,
सदार्काभं वक्षःस्थलगतलसद्रत्नांशुभिर्भूषितम् ।
वधूभिर्गोपानां तरणितनयाकुञ्जेषु रासस्पृहं,
सदा नन्दादीनाममितसुखदं गोपालवेषं भजे ॥ ४६२ ॥

इति छाया २१६.

२१७. अथ सुरसा

कर्णद्वन्द्वं विराजत् कुसुमसुललितं कुण्डलयुगं,
संबिभ्राणा ततोपि द्विजमथ च करं कङ्कणयुतम् ।
रूपाढ्या दिव्यरावा कुसुमविलसिता नूपुरयुता,
शैलैरश्वैश्च बाणैर्विरचितविरतिर्भाति सुरसा ॥ ४६३ ॥

यथा–

गोपालं केलिलोलं व्रजजनतरुणी-रासरसिकं,
कालिन्दीये निकुञ्जे पशुपसुतगणैर्वेष्टिततनुम् ।
वंशीरावेण गोपीसुललितमनसां मोहनपरं,
कंसादीनामरातिं व्रजपतितनयं नौमि हृदये ॥ ४६४ ॥

इति सुरसा २१७.

२१८. अथ फुल्लदाम

कर्णौ स्वर्णाढ्यौ कुसुमरसमयौ रूपरावान्वितौ चेद्,
पुष्पोद्यद्रूपौ कनकविरचितं नूपुरं पुष्पशोभम् ।
हारौ रावाढ्यौ विलसदमलगौ कङ्कणेनातिरम्यौ,
शश्वल्लोकानां सुकथितमतुलं फुल्लदाम प्रसिद्धम् ॥ ४६५ ॥

यथा–

दीव्यद् देवानां परमधनकरं कामपूरं जनानां,
शश्वद्भक्तानां परिकलितकलाकौशलं कामिनीनाम् ।
दिव्यानन्दानां परम[1]निलयनं वेदगम्यं पुराणं,
पुण्यारण्यानां गहनमहमिमं नौमि मूर्द्धना नितान्तम् ॥४६६॥

इति फुल्लदाम २१८.

---

१. 'दिव्यानन्दानां परम' इति नास्ति क. प्रतौ ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

२१९. अथ मृदुलकुसुमम्

रचय नगणमिह रसपरिमित[1]मनुकलय,
शिशिरकिरणरचित कुसुमगणनमपि कुरु ।
सकलभुजगनरपतिकथितमिदमतिशय-
सुललितमृदुलकुसुममिति हृदि परिकलय ॥ ४६७ ॥

यथा–

अयि ! सहचरि ! निरुपममृदुलकुसुमरचित-
मनुकलय सरसमलयजकणलुलितमिति ।
वरविपिनगततरुवरतलकलितशयन-
मनुसर सरसिजनयनमनुपमगुणमिह ॥ ४६८ ॥

इति मृदुलकुसुमम् २१९.

[2]अत्रापि प्रस्तारगत्या एकोनविंशत्यक्षरस्य लक्षपञ्चकं चतुर्विंशतिसहस्राणि अष्टाशीत्युत्तरं शतद्वयं ५२४२८८ भेदास्तेषु कतिपयभेदाः प्रोक्ताः, शेषभेदाः सुधीभिः प्रस्तार्य उदाहरणीया, इत्युपदिश्यते[1]* ।

इत्यूनविंशत्यक्षरम् ।

अथ विंशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्–

२२०. योगानन्दः

यस्मिन् वृत्ते दिक्संख्याताः संलग्नाः शोभन्तेऽत्यन्तं पूर्णाः कर्णा-
स्तद्वल्लीलालोले पादप्रान्ते विख्याताः ख्याप्यन्ते नख्या वर्णाः ।
श्रीमन्नागाधीशप्रोक्तं विद्वत्सारं हारोद्धारं धेहि स्वान्ते,
तद्वद्वृत्तं योगानन्दं सर्वानन्दस्थानं धैर्याधानं कान्ते ! ॥४९९॥

यथा–

वन्देऽहं तं रम्यं गम्यं कान्तं सर्वाध्यक्षं देवं दीप्तं धीरं,
नाथं नव्याम्भोदप्रख्यं कामं श्रव्यं रामं मित्रं सेव्यं वीरम् ।
सर्वाधारं भव्याकारं दक्षं पालं कंसादीनां कालं बालं,
आनन्दानां कन्दं विद्यासिन्धुं सेवे येन क्षिप्तं मायाजालम् ॥५००॥

इति योगानन्दः २२०.

---

१. ख. परिगनु । २. पंक्तित्रयं नास्ति क. प्रतौ ।

*टिप्पणी—१. लक्ष्यशेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे विलोकनीयाः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

२२१. अथ गीतिका

कुरु हस्तसंगिसुशङ्खकङ्कणरूपरावसमन्वितं,
वरपक्षिराजविराजितं नवगन्धयुग्मविभूषितम् ।
कुरु वल्लकीरवधारिणं रसमुग्धसुन्दररूपिणो-
रवयुक्तनूपुरमत्र धेहि विधेहि भामिनि ! गीतिकाम् ।। ५०१ ।।

यथा–

अयि ! मुञ्च मानमवेहि दानमुपैहि कुञ्जगतं हरिं,
नवकञ्जचारुविलोचनं भयमोचनं भवसन्तरिम् ।
कुरुषे विलम्बमकारणं सखि ! साधयाशु मनोरथं,
ननु खिद्यसेऽतिभृशं वृथैव जनुर्विधारयसे कथम् ।। ५०२ ।।

यथा वा–

अलमीश-पावक-पाकशासन-वारिजासनसेवया,
गमितं जनुर्जनकात्मजापतिरप्यसेव्यत नो मया ।
करुणापयोनिधिरेक एव[1] सरोजदामविलोचनः,
स परं करिष्यति दुःखशेष[2]मशेषदुर्गतिमोचनः ।। ५०३ ।।

'अथ सालतालतमालवञ्जुलकोविदारमनोरमा' इत्यादि । शिको काव्ये च प्रत्युदाहरण[3]मिति ।

इति गीतिका २२१.

२२२. अथ गण्डका[1]

हारपुष्पसुन्दरं विधेहि तन्मनोहरं मनोहरेण,
नागराजकुञ्जरेण भाषितं च रेण यत्पयोधरेण ।
अन्तगेन चामरेण राजितं विराजितं च काहलेन,
गण्डकेति यस्य नाम धारितं सुपण्डितेन पिङ्गलेन ।। ५०४ ।।

यथा–

देव! देव! वासुदेव! ते पदाम्बुजद्वयं विभावयेम,
नाम पुष्पदाम[4]धामतेजसां सदा हृदा विधारयेम ।
तावदेव सारवस्तु नान्यदस्ति किञ्चनात्र धारितेन,
वाजिराजिकुञ्जरादिसाधनेन तेन किं विभावितेन ।। ५०५ ।।

---

१. ख. एक । २. ख. दुःखनाश । ३. ख. तदुदाहरणम् । ४. ख. पुष्पदान ।

*टिप्पणी— १ वृत्तस्यास्य निर्दिष्टलक्षणकारिका परिस्फुटा नैवास्ति किन्तु ग्रन्थकर्तृर्यद-भीष्टं तदुदाहरणेनैवं परिज्ञायते—'यच्छन्दसि हारपुष्पयोः(ऽ।) नववारमनु-क्रमेण योजनं तदनु चामर-काहलयोः(ऽ।)न्यसनं भवेत्ताद् गण्डकावृत्तं स्यादिति ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा वा, भूषणे[1]* प्रत्युदाहरणम्—

दृष्टमस्ति वासुदेव विश्वमेतदेव शेष[वक्त्र]कं तु[1],
वाजिरत्नभृत्यदारसूनुगेहवित्तमादिवन्नवं तु ।
त्वत्पदाब्जभक्तिरस्तु चित्तसीम्नि वस्तुतस्तु सर्वदैव,
शेषकाललुप्तकालदूतभीतिनाशनीह हन्त सैव ।। ५०६ ।।

क्वचिदियमेव चित्तवृत्तम् इति । केवलं वृत्तमात्रमन्यत्र[2]* ।

इति गण्डका २२२.

२२३. अथ शोभा

यकारः प्रागस्ते तदनु च मगणः कथ्यते यत्र बाले !,
ततोऽपि स्यात् पश्चाद् यदि नगणयुगं स्यात्तकारद्वयं च ।
ततश्चान्ते हारद्वयमुपरितनं कारयाशु प्रकामं,
रसैरश्वैश्छिन्ना मुनिविरतिगता भासते काऽपि शोभा ।।५०७।।

यथा–

रमाकान्तं वन्दे त्रिभुवनशरणं शुद्धभावैकगम्यं,
विरञ्चेः स्रष्टारं विजितघनरुचिं वेदवाचावगम्यम् ।
शिवं लोकाध्यक्षं समरविजयिनं कुन्दवृन्दाभदन्तं(वदातं),
सहस्रार्चीरूपं विधृतगिरिवरं हार्दकञ्जे वसन्तम् ।। ५०८ ।।

इति शोभा २२३.

२२४. अथ सुवदना

आदौ मो यत्र बाले ! तदनु च रगणो जङ्घासुघटितः,
पश्चाद्देयो नकारस्तदनु च यगणस्तातेन रचितः ।
कार्यौ तत् पार्श्वदेशे तदनु लघुगुरू ज्ञेया सुवदना,
नागाधीशेन नुन्ना नखमितचरणा नव्या सुमदना ।। ५०९ ।।

यथा–

श्रीमन्नारायणं तं नमत बुधजना संसारशरणं,
सर्वाध्यक्षं वसन्तं निजहृदि सदयं गोपीविहरणम् ।
कल्याणानां निधानं कलिमलदलनं वाचामविषयं,
क्षीराब्धौ भासमानं दमितदितिसुतं वेदान्तविषयम् ।। ५१० ।।

---

१. शेषवक्त्रभाजि 'वाणीभूषणे' ।

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम्, द्वि० अ०, पद्य ३०८

२ छन्दोमञ्जरी, द्वि० स्तबक, का० २०६ एवं वृत्तरत्नाकर: अ० ३, का. १०३

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा वा, हलायुधभट्टविरचितछन्दोवृत्तौ[1]*—

या पीनाङ्गोरुतुङ्ग[1]स्तनजघनघनाभोगालसगति-
र्यस्याः कर्णावतंसोत्पलरुचिजयिनी दीर्घे च नयने ।
सीमा सीमन्तिनीनां[2] मतिलडहतया या च त्रिभुवने,
सम्प्राप्ता साम्प्रतं मे नयनपथमसौ दैवात् सुवदना ॥ ५११ ॥

इति सुवदना २२४.

२२५. अथ प्लवङ्गभङ्गमङ्गलम्

यदा लघुर्गुरुर्निवेश्यते तदा प्लवङ्गभङ्गमङ्गलं,
जरौ जरौ जरौ रसप्रयुक्तमुच्यते लगौ सुमङ्गलम् ।
कवीन्द्रपिङ्गलोदितं सुशङ्खहारभूषितं मनोहरं,
प्रमाणिका-पदद्वयेन पूर्यते च यच्च पञ्चचामरम् ॥ ५१२ ॥

यथा–

नवीनमेघसुन्दरं भजेम भूपुरन्दरं विभुं वरं,
प्रकामधामभासुरं दधानमद्भुताम्बरं[3] दयापरम् ।
विलासिनीभुजान्तरानिरुद्धमुग्धविग्रहं स्मरातुरं,
चराचरादिजीवजातपातकापहं जगद्धुरन्धरम् ॥ ५१३ ॥

इति प्लवङ्गभङ्गमङ्गलम् २२५.

२२६. अथ शशाङ्कचलितम्

कर्णः पयोधरकरौ यदा च भवतो विलासललिते,
ज्ञेयस्ततः सुतनु ! जः सुहस्तकलितः शशाङ्कचलिते ।
ततोऽपि चेद् भवति जः सुपाणिघटितो वसौ च विरति-
स्ततौ रसैरपि यतिः कलावति भवेत् पुना रसयतिः ॥५१४॥

यथा–

कृष्णं प्रणौमि सततं बलेन सहितं सदा शुभरतं,
कल्याणकारिचरितं सुरैरभिनुतं प्रमोदभणितम्[4] ।
कंसादिदर्पदलनं च कलाकुतुकिनं विलासभवनं,
संसारपारकरणं परोदयकरं सरोजनयनम् ॥ ५१५ ॥

इति शशाङ्कचलितम् २२६.

---

१. मा पीनो गाढतुङ्ग-'हलायुधे' ।　२. श्यामा सीमन्तिनीनां 'हलायुधे' ।　३. ख. अदभुतं वरम् ।　४ ख. भरितम् ।

*टिप्पणी—१. अध्याय ७, कारिकाया २३ उदाहरणम् ।

T　CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

२२७. अथ भद्रकम्

वेदसुसम्मितमादिगुरुं कुरु जोहलं कमलं प्रिये !,
अन्तगतं कुरु पुष्पसुकङ्कणराजितं विजितक्रिये ।
रन्ध्ररसैरपि बाणविभेदितविंशकं कुरु वर्णकं,
कामकलारसरासयुते निजमानसे कुरु भद्रकम् ॥ ५१६ ॥

यथा–

चेतसि पादयुगं नवपल्लवकोमलं किल भावये,
मञ्जुलकुञ्जगतं सरसीरुहलोचनं ननु चिन्तये ।
आनय नन्दसुतं सखि! मानय मेदुरं रजनीमुखं,
कुञ्चितकेशममुं परिशीलय कामुकं कुरु मे सुखम् ॥ ५१७ ॥

इति भद्रकम् २२७.

२२८. अथ अनवधिगुणगणम्

रसपरिमितमिति सरसनगणमिति[1] विरचय,
विकचकमलमुखि ! लघुयुगमनुमतमनुनय ।
सुतनु ! सुदति ! यदि निगदसि बहुविधमनवधि-
गुणगणमनुसर नखलघुमितमनुलवमयि ! ॥ ५१८ ॥

यथा–

अनुपमगुणगणमनुसर मुरहरमभिनव-
मभिमतमनुमत[2]मतिशयमनुनयपरमव ।
सकपटयदुवरकरधृतगिरिवरपरमयि,
कुरु मम सुवचनमफलय सखि न हि न हि मयि ॥ ५१९ ॥

इति अनवधिगुणगणम् २२८.

[3]अत्रापि प्रस्तारगत्या विंशत्यक्षरस्य दशलक्षमष्टचत्वारिंशत्सहस्राणि षट्-सप्तत्युत्तराणि पञ्चशतानि च १०४८५७६ भेदा भवन्ति, तेषु चाद्यन्तसहिताः विस्तरभीत्या कियन्तो भेदा लक्षिताः, शेषभेदाः सुबुद्धिभिः प्रस्तार्यं सूचनीया इति दिक् ।[1]*

इति विंशात्तरम् ।

---

१. ख. मिह । २. ख. मनुगत । ३. पंक्तिचतुष्टयं नास्ति क. प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ लब्धशेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे समालोकनीयाः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अथ एकविंशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्—

२२९. अथ ब्रह्मानन्दः

यस्मिन् वृत्ते पंक्तिः ख्याता शोभन्तेऽत्यन्तं कर्णाः प्रान्ते चैकोहारः,
नागाधीशप्रोक्तोऽपारः सारोद्धारो ब्रह्मानन्दो वृत्तानां सारः ।
विश्रामश्च प्रायो यस्मिन् वेधः श्रोत्रैः शैलेन्द्रैः शस्त्रैर्वा स्यात् प्रान्ते,
विंशत्याः वर्णैरेकाग्रैः संयुक्तैर्लीलालोले सोऽयं ज्ञेयः कान्ते!।।५२०।।

यथा–

सर्वं कालव्यालग्रस्तं मत्वा स्त्रीषु व्यासङ्गं हित्वा कृत्वा धैर्यं,
कालीन्दीये कुञ्जे कुञ्जे भ्राम्यद्भृङ्गैः संगीते भ्रातर्मुक्त्वा क्रौर्यम् ।
श्रीगोविन्दं वृन्दारण्ये मेघश्यामं गायन्तं वेणुक्वाणैर्मन्दं,
ब्रह्मानन्दं प्राप्याजस्रं ध्यात्वा चेतः साफल्यं धेहि स्वान्तेऽमन्दम् ।।५२१

इति ब्रह्मानन्दः २२९.

२३०. अथ स्रग्धरा

आदौ मो यत्र बाले ! तदनु च रगणः स्यात् प्रसिद्धस्तु यस्यां,
पश्चाद् भं चापि नं च त्रिगुणितमपि यं धेहि कान्ते! विचित्रम् ।
शैलेन्द्रैः सूर्यवाहैरपि च मुनिगणैर्दृश्यते चेद् विरामः,
कामव्यासक्तचित्ते सुदति ! निगदिता स्रग्धरा सा प्रसिद्धा ।। ५२२ ।।

यथा, ममैव पाण्डवचरिते—

तुष्टेनाथ द्विजेन त्रिदशपतिसुतस्तत्र दत्ताभ्यनुज्ञः,
कर्णोऽपि प्राप्तमानस्सदसि कुरुपतेर्द्वन्द्वयुद्धार्थमागात् ।
जम्भारातिः स्वसूनोरुपरि जलधरैस्संव्यधादातपत्रं,
चण्डांशुश्चापि कर्णोपरिनिजकिरणानाततानातिशीतात् ।।५२३।।

यथा वा, मत्पितुः खड्गवर्णने—

सङ्ग्रामारण्यचारी विकटभटभुजस्तम्भभूभृद्विहारी,
शत्रुक्षोणीशचेतोमृगनिकरपरानन्दविक्षोभकारी ।
माद्यन्मातङ्गकुम्भस्थलगलदमलस्थूलमुक्ताग्रहारी,
स्फारीभूताङ्गधारी जगति विजयते खड्गपञ्चाननस्ते ।। ५२४।।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

केशिद्वेषिप्रसूश्च क्वचिदथ समये सद्मदासीषु कार्य-
व्यग्रासु प्रग्रहान्तग्रहणचलभुजाकुण्डलोद्ग्रीवसूनुः ।
पुत्रस्नेहस्नुतोरुस्तनमनणुरणत्कङ्कणक्वाणमुद्यत्-
कम्पस्विद्यत्कपोलं दधिकचविगलद्दामबन्धं ममन्थ ॥५२५॥

इति स्रग्धरा २३०.

२३१. अथ मञ्जरी[1]

कङ्कणं कुरु मनोहरं तदनु सुन्दरं रचय तुम्बुरं,
सुन्दरीं कलय सुन्दरीं तदनु पक्षिणामपि पतिं ततः ।
भावमातनु ततः परं सुतनु ! पक्षिणं च कुरु सङ्गतं,
भावमेव कुरु मञ्जरी [तदनु] जोहलं विरचयांततः ॥५२६॥

रगणनगणक्रमेण च सप्तगणा भान्ति यत्र संरचिताः ।
नव-रस-रसयतिसहितां वदन्ति तज्ज्ञास्तु मञ्जरीमिति ताम् ॥ ५२७ ॥

यथा—

हारनूपुरकिरीटकुण्डलविराजितां वरमनोहरं,
सुन्दराधरविराजिवेणुरवपूरिताखिलदिगन्तरम् ।
नन्दनन्दनमनङ्गवर्द्धनगुणाकरं परमसुन्दरं,
चिन्तयामि निजमानसे रुचिरगोपगोधनधुरन्धरम् ॥ ५२८ ॥

यथा वा, श्रीशङ्कराचार्याणां नवरत्नमालिकायाम्—

दाडिमीकुसुममञ्जरीनिकरसुन्दरे मदनमन्दिरे,
यामिनीरमणखण्डमण्डितशिखण्डके तरलकुण्डे (कुण्डले) ।
पाशमंकुशमुदञ्चितं दधति कोमले कमललोचने !
तावके वपुषि सन्ततं जननि ! मामकं भवतु मानसम् ॥५२९॥

इति मञ्जरी २३१.

२३२. अथ नरेन्द्रः

कुण्डलवज्ररज्जुमुनिगणयुतहस्तविराजितशोभः,
पाणिविराजिशंखयुगवलयित-कङ्कणचामरलोभः ।
कामविशोभयोगवरविरतिगचन्द्रविलोचनवर्णः,
पन्नगराजपिङ्गल इति गदति राजति वृत्तनरेन्द्रः ॥ ५३० ॥

*टिप्पणी—१ मञ्जरीवृत्तस्य लक्षणोदाहरणप्रत्युदाहरणानि नैव सन्ति क प्रतौ ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

मानिनि ! मानकारणमिह[1] जहिहि नन्दय तं सखि ! कृष्णं,
चिन्तय चिन्तनीयपदमनुमतमाकलयाशु सतृष्णम् ।
जीवय जीवजातमुपगतमपि मा कुरु मानसभङ्गं,
केवलमेव तेन सह सहचरि ! सन्तनु तत्तनुसङ्गम् ॥ ५३१ ॥

यथा वा–

पङ्कजकोषपानपरमधुकरगीतमनोज्ञतडागः,
पञ्चमनादवादपर[2]परभृतकाननसत्परभागः ।
वल्लभविप्रयुक्तकुलवरतनुजीवनदानदुरन्तः,
किं करवाणि वक्षि[3] मम सहचरि ! सन्निधिमेति वसन्तः ॥ ५३२ ॥

इति नरेन्द्रः २३२.

२३३ अथ सरसी

सहचरि ! नो यदा भवति सा कथिता सरसी कवीश्वरै-
र्यदि तु जभौ जजौ च भवतोपि जरौ समनन्तरं परैः ।
इह विरती यदा शरविलोचनजे भवतो मुनीश्वरैः,
शिशिरकरैस्सदा भवति लोचनतो गणनापदाक्षरैः ॥ ५३३ ॥

यथा–

नमत सदा जनाः प्रणतकल्पतरुं जगदीश्वरं हरिं,
प्रबलहृदन्धकारतरणिं भवसागरपारसन्तरिम् ।
सकलसुरासुरादिजनसेवितपादसरोरुहं परं,
जलरुहशङ्खचक्रकमनीयगदाधरसुन्दराम्बरम् ॥ ५३४ ॥

यथा वा–

'तुरगशताकुलस्य परितः परमेकतुरङ्गजन्मनः ।' इत्यादि माघकाव्ये[1]* ।

इति सरसी २३३.

सुरतरुरिति अन्यत्र । सिद्धकम्[2]* इति क्वचित् ।

---

१. क. मानकारिणिमिह । २. ख. पञ्चमनादगानपर । ३. ख. वदि ।

*टिप्पणी— १. 'तुरगशताकुलस्य परितः परमेकतुरङ्गजन्मनः,
प्रमथितभूभृतः प्रतिपथं मथितस्य भृशं महीभृता ।
परिचलतो बलानुजबलस्य पुरः सततं धृतश्रिय-
श्चिरविगतश्रियो जलनिधेश्च तदाभवदन्तरं महत् ॥ ८२ ॥
[शिशुपालवधम्–स० ३, प० ८२]
२. वृत्तरत्नाकरः, नारायणीटीकायाम्–अ० ३ का० १०४

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

२३४. अथ रुचिरा

कुरु नगणं ततो रचय भूमिपतिं दहनं च सुन्दरं,
तदनु विधेहि जं त्रिगुणितं ललितं विहगं ततः परम् ।
मुनिमुनिभिर्भवेद्विरतिरप्यतुला सुकला मनोहरा,
सुकविवरैः परा निगदिता रुचिरा परमार्थतो वरा ॥ ५३५ ॥

यथा–

नयनमनोहरं परमसौख्यकरं सखि ! नन्दनन्दनं,
कनकनिभांशुकं त्रिजगतीतिलकं मुरलीविनोदनम् ।
भुवनमहोदयं घनरुचिं रुचिरं कलये सदोन्नतं[1],
सुरकुलपालकं श्रुतिनुतं सदयं दयितं श्रियःपतिम् ॥ ५३६ ॥

इति रुचिरा २३४.

२३५. अथ निरुपमतिलकम्

सुतनु ! सुदति ! सरसमुनिमितनगणमिह रचय,
शिशिरकरजनयनमितसुपदमपि परिकलय ।
कनककटकवलयकलितकरकमलमुपनय,
फणिपतिभणितमिह निरुपमतिलकमिति कथय ॥ ५३७ ॥

यथा–

जय ! जय ! निरुपम ! दिशि दिशि विलसितगुणनिकर !,
करधृतगिरिवर ! विगणितगुणगणवरसुकर !।
कनकवसनकटकमुकुटकलित ! मिलितललन !,
विजितमदन ! दलितशकट ! सबलदितिजदलन ! ॥ ५३८ ॥

इति निरुपमतिलकम् २३५.

[2]अत्रापि प्रस्तारगत्या एकविंशत्यक्षरस्य नवलक्षं सप्तनवतिसहस्राणि द्विसमधिकपञ्चाशदुत्तरं शतं २०९७१५२ भेदा भवन्ति, तेषु भेदसप्तकं प्रोक्तं, शेषभेदाः सुधीभिः स्वबुद्ध्या प्रस्तार्य सूचनीया इति दिक् ।*[1]

इति एकविंशाक्षरम् ।

---

१. ख. सदोन्नतिं । २. पंक्तित्रयं नास्ति क. प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ एकविंशत्यक्षरवृत्तस्य ग्रन्थान्तरेषु लब्धशेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्याः

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अथ द्वाविंशत्यक्षरम्

तत्र प्रथमम्—

२३६. विद्यानन्दः

यस्मिन् वृत्ते रुद्रप्रोक्ताः कुन्तीपुत्रा नेत्रैर्नेत्रैर्वर्णाः पादप्रान्ते,
षड्भिः कर्णैर्विश्रामः स्यात् तद्वद् यस्मिन् रम्यैः पाण्डोः पुत्रैः स्यात् तस्यान्ते ।
श्रीमन्नागाधीशेनोक्तं सारं वृत्तं श्रव्यं भव्यं नव्यं काव्यं कान्ते !,
बाले ! लीलालोले ! मुग्धे ! विद्यानन्दं दिव्यानन्दं सम्यग् धेहि स्वान्ते ।।५३९।।

यथा—

काशीक्षेत्रे गङ्गातीरे चञ्चन्नीरे विश्वेशांघ्रिद्वन्द्वं सम्यग् ध्यात्वा,
कृत्वा तत्तन्मात्रायुक्तप्राणायामं शोच्यं नश्यत्तत्सङ्गं मुक्त्वा ।
मायाजालं सर्वं विश्वं मत्वा चित्ते रम्यं हर्म्यं पुत्राः किञ्चिन्नैत-
च्छस्वत्कामक्रोधक्रौर्याक्रान्तः श्रान्तः प्रान्ते नाहं देहं सोऽहं तत्सत् ।।५४०।।

इति विद्यानन्दः २३६.

२३७. अथ हंसी

यस्यामष्टौ पूर्वं हारास्तदनु च दिनपतिमित वरवर्णाः,
दण्डाकाराः कान्ते ! चञ्चत्करयुगविलसितवलयविलोले ।
तद्वद्दीर्घावन्त्यौ वर्णौ *यतिरिह विलसति वसुभुवनार्णैः,
सा विज्ञेया हंसी बाले ! प्रभवति यदि किल नयनयुगार्णा* ।।५४१।।

यथा—

प्रौढध्वान्ते प्रावृट्काले क्षितितलविलसिततरलितकन्दे,
कालिन्दीये कुञ्जे कुञ्जे त्वदभिसरणकृत-सरभसवेषा ।
राधात्यन्तं बाधायुक्ता प्रसरति मनसिजविशिखविलूना,
वन्यस्रग्भिर्विरचितभूषस्त्वमपि च विहरसि सरसकदम्बे*[1] ।। ५४२ ।।

यथा वा—

श्रीकृष्णेन क्रीडन्तीनां क्वचिदपि वनभुवि मनसिजभाजां,
गोपालीनां चन्द्रज्योत्स्नाविशदरजनिगुरुजनितरतीनाम् ।
घर्मभ्रश्यत्पत्रालीनामुपचितरभसविमलतनुभासां,
'रासक्रीडायासध्वंसी मुदमुपनयति' मलयगिरिवातः ।। ५४३ ।।

इति हंसी २३७.

** चिह्नगतोऽयं पाठो नास्ति क. प्रतौ । १. १. क. रासक्रीडायापासध्वंसमुदमुपनयमिद ।

*टिप्पणी—१ पादोऽयं सर्वथाऽशुद्धः वर्णद्वयवर्द्धनाद्दीर्घद्वयरहितत्वाच्च । अतोऽस्मिन् पादे यदि 'विरचित'पदस्थाने 'सृष्टा' पदयोजना स्यात्तद्दोषपरिहारसंभवः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

२३८. अथ मदिरा

आदिगुरुं कुरु सप्तगणं सखि ! पिङ्गलभाषितमन्तगुरुं,
पंक्तिविराजि-यतिं च ततः कुरु सूर्यविभासियतिं च ततः ।
चिन्तय चेतसि वृत्तमिदं मदिरेति च नाम यतः प्रथितं,
सप्तभकारगुरूपहितं बहुभिः कविभिर्बहुधा कथितम् ।। ५४४ ।।

यथा–

मा कुरु मानिनि ! मानमये वनमालिनि सन्तति[1]शालिनि हे,
पाणितलेन कपोलतलं न विमुञ्चति सम्प्रति किं मनुषे ।
यौवनमेतदकारणकं न हि किञ्चिदतोऽपि फलं तनुषे,
कुञ्जगतं परिशीलय तं परिलम्बमिदं सखि ! किं कुरुषे ।। ५४५ ।।

इति मदिरा २३८.

इयमेव अस्माभिर्मात्राप्रस्तारे पूर्वखण्डे सवयाप्रकरणे मदिराभिसन्धाय सवया इत्युक्ता, सा तत एवावधारणीया ।

२३९. अथ मन्द्रकम्

कारय भं ततोपि रगणं ततो नरनरास्ततश्च न-गुरू,
दिग्रविभिर्भवेच्च विरतिर्विलोचनयुगैरपीन्दुवदने ! ।
कल्पय पादमत्र रुचिरं कवीन्द्रवरपिङ्गलेन कथितं,
मन्द्रकवृत्तमेतदबले ! सुभाषितमहोदधेः सुमथितम् ।। ५४६ ।।

यथा–

दिव्यसुगीतिभिः सकृदपि स्तुवन्ति भवये(भुवि ये) भवन्तमभयं,
भक्तिभराघनम्रशिरसः कृताञ्जलिपुटा निराकृतभवम् ।
ते परमीश्वरस्य पदवीमवाप्य सुखमाप्नुवन्ति विपुलं,
मर्त्यभुवं स्पृशन्ति न पुनर्मनोहरसुताङ्गनापरिवृताः ।। ५४७ ।।

इति मन्द्रकम् २३९.

२४०. अथ शिखरम्

मन्द्रकमेव हि वृत्तं यदि दशरसयुगविरति भवेत् ।
शिखरं तदत्र बाले ! कथितं कविपिङ्गलेन तदा ।। ५४८ ।।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१. ख. सन्ततिशालिनी ।

यथा–

कृष्णपदारविन्दयुगलं नमन्ति ननु ये जनाः सुकृतिनः,
संसृतिसागरं सुविपुलं तरन्ति मुदितास्त एव कृतिनः ।
दिव्यधुनीतरङ्गललिते तटे कृतकुटाः स्मरन्ति परमं,
धाम निरन्तरं मनसि तज्जराकवलितं जनुर्न चरमम् ॥ ५४९ ॥

इति शिखरम् २४०.

मन्द्रकस्य गणा एव अत्रापि यतिकृत एव परं भेदः ।

२४१. अथ अच्युतम्

सलयुग-निगमनगणमिह[1]* कुरु पक्षि-पाणिसभाजितं,
तदनु च रचय कमलमुखि ! सखि ! पुष्पहारविराजितम् ।
निगमशिशिरकरविरचितयतियोगबद्ध विभावितं,
कविवरफणिपतिसुभणितमिति[1] मानसे कलयाच्युतम् ॥ ५५० ॥

यथा–

सघनतिमिरभरभरितविपिनमात्मनैव विभावितं,
न खलु सहचरि ! वितनु विदलितमाश्रयामि सुजीवितम् ।
कनकनिभवसनमरुणनयनमानयाशु मनोहरं,
मसृणमणिगणखचिततनुमपि हारयामि तमोहरम् ॥ ५५१ ॥

इति अच्युतम् २४१.

२४२. अथ मदालसम्

कर्णं जकार-रसयुग्मं विधेहि सखि ! कर्णं ततः कुरु रसं,
हारं नकारमथ कर्णं नरेन्द्रमिह हस्तं विधेहि च ततः ।
सूर्याश्वसप्तयति कुर्याद् यथाभिरुचि पश्चाद् वसौ च विरतिः[2],
नेत्रद्वयेन कुरु पादान्तवर्णमिति वृत्तं मदालसमिदम् ॥ ५५२ ॥

यथा–

शम्भो ! जय प्रणमदम्भोजनामविधिदम्भोलिपाणितरणे-
　　रम्भोरुगाढपरिरम्भोपभोगदिवि रम्भोपगीतसततम् ।
स्तम्भोदयप्रणतजम्भोपघाति[3]शिशुदम्भोपकल्पिततनो !,
　　रम्भोदरप्रतिमशंभो! जयामलविदम्भोधि[4]वर्द्धनविधो !॥ ५५३ ॥

---

१. क. सुभाषितमिति । २. ख. विरतिं । ३. ख. जम्भो च घाति । ४. ख. चिदम्भोधि ।

*टिप्पणी—१. 'सलयुगनिगमनगणमिह' इह – अच्युतवृत्ते लघुद्वयसहितंच तुर्नगणमर्थात् चतुर्दशलघ्वक्षरमत्र 'कुरु' रचयेत्यर्थः ।

T　CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा वा–

मन्दाकिनीपुलिनमन्दारदामशतवृन्दारकार्च्चितविभो[1]!
नारायणप्रखरनाराचविद्धपुरनाराधिदुष्कृतवता ।
गङ्गाचलाचलतरङ्गावलीमुकुटरङ्गावनीमतिपटो[2]!
गौरीपरिग्रहणगौरीकृतार्द्धं तव गौरीदृशी श्रुतिगता ॥५५४॥

यथा वा, अस्मद्वृद्धप्रपितामहकविपण्डितमुख्यश्रीमद्रामचन्द्रभट्टकृतनारायणाष्टके-

कुन्दातिभासि शरदिन्दावखण्डरुचि वृन्दावनव्रजवधू-
वृन्दागमच्छलनमन्दावहासकृतनिन्दार्थवादकथनम् ।
वन्दारुविभ्यदरविन्दासनक्षुभितवृन्दारकेश्वरकृत-
च्छन्दानुवृत्तिमिह नन्दात्मजं भुवनकन्दाकृतिं हृदि भजे ॥ ५५५ ॥

इत्यादि महाकविप्रबन्धेषु शतशः प्रत्युदाहरणानि[3] ।

इति मदालसम् २४२.

२४३. अथ तरुवरम्

सहचरि ! रविहयपरिमित सुनगणमिह विरचय,
तदनु शिशिरकरपरिमित कुसुममिह परिकलय ।
कविवरसकलभुजगपतिनिगदितमिदमनुसर,
नवरससुघटित-नरवरसुपठित-तरुवरमिति ॥ ५५६ ॥

यथा–

अवनतमुनिगण ! करधृतगिरिवर ! सदवनपर !,
त्रिभुवननिरुपम ! नरवरविलसित ! सकपटवर ! ।
दमितदितिजकुल ! कलितसकलबल ! सततसदय !,
सरभसविदलितकरिवर ! जय ! जय ! निगमनिलय ! ॥ ५५७ ॥

अत्र प्रायोऽष्टाष्टरसैर्विरतिरित्युपदेशः ।

इति तरुवरम् २४३.

अत्रापि प्रस्तारगत्या द्वाविंशत्यक्षरस्य एकचत्वारिंशल्लक्षाणि चतुर्नवतिसहस्राणि चतुरुत्तरं शतत्रयं ४१९४३०४ भेदाः, तेषु भेदाष्टकमुक्तम् । शेषभेदास्तु शास्त्ररीत्या प्रस्तार्य प्रतिभावद्भिरुदाहर्त्तव्याः । इति दिङ्मात्रमुपदिश्यते[1]* ।

इति द्वाविंशत्यक्षरम् ।

---

१. ख. विभा । २ख. गतिपटो । ३. ख. तदुदाहरणम् ।

*टिप्पणी—१. लब्धाः शेषभेदा द्रष्टव्याः पञ्चमपरिशिष्टे ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अथ त्रयोविंशाक्षरम्

तत्र पूर्वम्—

२४४. दिव्यानन्दः

कुन्तीपुत्रा यस्मिन् वृत्ते दिक्संख्याताः सैकाः शोभन्ते प्रान्ते चैको हारः,
रौद्रैर्नेत्रैर्यस्मिन् सर्वैर्वर्णैर्वा सोऽयं दिव्यानन्दश्छन्दोग्रन्थे सारः ।
विश्रामः स्यात् षड्भिः कर्णैर्यस्मिंस्तद्वत् सार्द्धैः[1] पाण्डोः पुत्रैर्वा स्यात्तस्यान्ते,
बाले ! लीलालोले ! कामक्रीडासक्ते ! पूर्वोक्तं दिव्यं वृत्तं धेहि स्वान्ते ।।५५८।।

यथा–

वन्दे देवं सर्वाधारं विश्वाध्यक्षं लक्ष्मीनाथं तं क्षीराब्धौ तिष्ठन्तं,
यो हस्तीन्द्रं भक्तं ग्राहग्रस्तं मत्वा हित्वाप्तं सर्वं स्त्रीवर्गं भासन्तम् ।
आरूढः सौपर्णे पृष्ठेऽनास्तीर्णेऽपि प्राप्तश्चक्री वेगादेवोच्चैः क्रीडत्,
व्यापाद्यामुं नक्तं[2] मध्ये वक्त्रं सद्यस्तं दन्तीन्द्रं संसारान्मुक्तं कुर्वन् ।।५५९।।

इति दिव्यानन्दः २४४.

२४५ [१]. अथ सुन्दरिका

करयुक्तसुपुष्पद्वयललिता ताटङ्कमनोहरहारधरा,
द्विजकर्णविराजत्पदयुगला गण्डेन सुमण्डितकुण्डलका ।
यदि सप्तविभिन्ना शरविरतिः शर्वैरपि चेद्विहतिर्विहिता,
किल सुन्दरिका सा फणिभणिता नेत्राग्निकला कविराजहिता ।।५६०।।

यथा–

सखि ! पङ्कजनेत्रं मुरहरणं विद्धं कमनीयकलाललितं,
वरमौक्तिकहारं सुखकरणं रम्यं रमणीवलये वलितम् ।
तरुणीजनचित्तं वरतरुणं भव्यं भवभीतिविनाशकरं,
घनकुञ्चितकेशं मुनिशरणं नित्यं कलयेऽखिलदैत्यहरम् ।। ५६० ।।

इति सुन्दरिका २४५[१].

२४५[२]. अथ पद्मावतिका

सुन्दरिकैव हि बाले ! यदि मुनिरसदशविरामिणी भवति ।
विज्ञापयन्ति तज्ज्ञाः पद्मावतिकेति नयनदहनकमलाम् ।। ५६२ ।।

यथा–

सखि ! नन्दकुमारं तनुजितमारं कुण्डलमण्डितगण्डयुगं,
हतकंसनरेशं रचितसुवेशं कुञ्चितकेशमशेषसुगम् ।

---

१. ख. शेषैः । 　१. ख. नक्रं ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यमुनातटकुञ्जे सतिमिरपुञ्जे कारितरासविलासपरं,
मुखनिर्जितचन्द्रं विगलिततन्द्रं चिन्तय चेतसि चित्तहरम् ।। ५६३ ।।

इति पद्मावतिका २४५[२].

२४६. अथ अद्रितनया

सहचरि ! चेन्नजौ भजगणौ भजौ च भवतस्ततो भलगुरू,
शिवविरतिस्तथैव विरतिः प्रभाकरभवा भवेच्च नियता[1] ।
प्रतिपदमत्र वह्निनयनाक्षरैर्गणय पादमिन्दुवदने !,
जगति जया प्रकाशितनया जनैः किल विभाविताऽद्रितनया ।। ५६४ ।।

प्रकारान्तरेणापि लक्षणं यथा—

सुदति ! विधेहि नं तदनु जं ततोऽपि भगणं ततश्च जगणं,
तदनु च देहि भं तदनु जं ततोऽपि भगणं ततो लघुगुरू ।
कुरु विरतिं शिवे दिनकरे यतिं सुरुचिरां विभावितनयां,
दहनविलोचनाक्षरपदां विधेहि सुभगे[2] ! मुदाऽद्रितनयाम् ।। ५६५ ।।

यथा—

नयनमनोरमं विकसितं पलाशकुसुमं विलोक्य सरसं,
विकचसरोरुहां च सरसीं विभाव्य सुभृशं मनोऽतिविरसम् ।
गगनतलं च चन्द्रकिरणैः कणैरिव[3] विभावसोस्सुपिहितं,
सहचरि ! जीवनं न कलये विना सहचरं विधेहि विहितम् ।। ५६६ ।।

यथा वा—

'विलुलितपुष्परेणुकपिशप्रशान्तकलिकापलाशकुसुमम् ।।' इत्यादि भट्टिकाव्ये[1]*

इति अद्रितनया २४६.

अश्वललितमिदमन्यत्र[2]*, तथाहि—

---

१. ख. नियमा ।   २. ख. सुभगं ।   ३. ख. करणैरिव ।

*टिप्पणी—१ 'विलुलितपुष्परेणुकपिशं प्रशान्तकलिका-पलाशकुसुमं,
कुसुमनिपातविचित्रवसुधं सशब्दनिपतद् द्रुमोत्कशकुनम् ।
शकुननिनादनादिककुब्विलोलविपलायमानहरिणं,
हरिणविलोचनाधिवसतिं बभञ्ज पवनात्मजो रिपुवनम् ।।
[भट्टिकाव्य, स० ८, प. १३१]

२ वृत्तरत्नाकर – नारायणी टीका, अ० ३, का० १०९ ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पवनविधूतवीचिचपलं विलोकयति जीवितं तनुभृतां,
न पुनरहीयमानमनिशं जरावनितया वशीकृतमिदम् ।
सपदि निपीडनव्यतिकरं यमादिव नराधिपान्नरपशुः,
परवनितामवेक्ष्य कुरुते तथापि हतबुद्धिरस्खललितम् ।। ५६७ ।।

इति प्रत्युदाहरणम्[1] ।

[2]अत्रापि गणयतिवर्णविन्यासस्तु पूर्ववदेव, नाममात्रे भेदः, फलतो न कश्चिद् विशेषः ।[2]

२४७. अथ मालती

अत्रैव सप्तभगणानन्तरं गुरुद्वयदानेन मालतीवृत्तं भवति । लक्षणं च यथा–

इयमेव सप्तभगणादनन्तरं भवति मालतीवृत्तम् ।
यदि गुरुयुगलोपहिता पिङ्गलनागस्तदाख्याति ।। ५६८ ।।

यथ –

चन्द्रकचारुचमत्कृतिचञ्चलमौलिविलुम्पितचन्द्रकिशोभं,
वन्यनवीनविभूषणभूषितनन्दसुतं वनिताधरलोभम् ।
धेनुकदानवदारणदक्ष-दयानिधि-दुर्गमवेदरहस्यं,
नौमि हरिं दितिजावलिमालितभूमिभरापनुदं[3] सुयशस्यम् ।। ५६९ ।।

इति मालती २४७.

इयमेव अस्माभिः पूर्वखण्डे मालती सवया इत्युक्ता । [सा तत एवावलोकनीया]

किञ्च—

२४८. अथ मल्लिका

सप्तजगणादनन्तरमपि चेल्लघुगुरुनिवेशनं भवति ।
जल्पति पिङ्गलनागः सुकविस्तन्मल्लिकावृत्तम् ।। ५७० ।।

यथा–

धुनोति मनो मम चम्पककाननकल्पितकेलिरयं पवनः,
कथामपि नैव करोमि तथापि वृथा कदनं कुरुते मदनः ।
कलानिधिरेष बलादयि मुञ्चति वह्निकलापमलीकहिमः[4],
विधेहि तथा मतिमेति यथा सविधेन पथा व्रजभूमहिमः[5] ।। ५७१ ।।

इति मल्लिका २४८.

---

१. ख. उदाहरणम् । २–२. चिह्नगोऽयमंशो नास्ति क. प्रतौ । ३. ख. भरापनुदे । ४. ख. हितः । ५. ख. व्रजभूमहितः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

इयमेवास्माभिः पूर्वखण्डे मल्लिका सवया इत्युक्ता। सा तत एवावधारणीया।

२४९. अथ मत्ताक्रीडम्

यस्मिन्नष्टौ पूर्वं हारास्तदनु च मनुमित लघुमिह रचयेत्[1],
पादप्रान्ते चैकं हारं विकचकमलमुखि ! विरचय नियतम्।
मत्ताक्रीडं वृत्तं बाले ! वसुतिथियतिकृतरतिसुखनिवहं,
कुन्तीपुत्रं वेदैरुक्तं निगमनगणमपि विरचय सगणम् ॥ ५७२ ॥

यथा–

नव्ये कालिन्दीये कुञ्जे सुरभिसमयमधुमधुरसुखरसं,
रासोल्लासक्रीडारङ्गे युवतिसुभगभुजरचितवरवशम्[2]।
सान्द्रानन्दं[3] मेघश्यामं मुरलिमधुर[4]रवविमुषितहरिणं,
वृन्दारण्ये दीव्यत्पुण्ये स्मरत परममिह हरिमनवरतम् ॥ ५७३ ॥

इति मत्ताक्रीडम् २४९.

२५०. अथ कनकवलयम्

सुतनु ! सुदति ! मुनिमितमिह सुनगणमिति ह विरचय,
तदनु विकचकमलमुखि ! सखि ! खलु लघुयुगमुपनय।
दहननयनमितलघुमिह पदगतमपि परिकलय,
कनकवलयमिति कथयति भुजगपतिरिति तदवय[5] ॥ ५७४ ॥

यथा–

कनकवलयरचितमुकुट ! *विधृतलकुट ! निकटबल !,
शमितशकट ! कनकसुपट ! दलितदितिजसुभटदल !।
कमलनयन* ! विजितमदन ! युवतिवलयरचितलय !,
तरलवसन ! विहितभजन ! धरणिधरण ! जय ! विजय !॥ ५७५ ॥

इति कनकवलयम् २५०.

[6] अत्रापि प्रस्तारगत्या त्रयोविंशत्यक्षरस्य त्र्यशीतिलक्षाणि अष्टाशीतिसहस्राणि अष्टोत्तराणि षट्शतानि च ८३८८६०८ भेदा भवन्ति, तेषु अष्टौ भेदाः प्रोक्ताः, शेषभेदाः प्रस्तार्य गणयतिवर्णनामसहितास्समुदाहरणीया इति दिगुपदिश्यते*।

इति त्रयोविंशाक्षरम्।

---

१. ख. रचयेः। २. ख. परवशम्। ३. क. सान्द्रावक्षं। ४. ख. ललितमधुर। ५. ख. च तदय। ६. पंक्तित्रयं नास्ति क प्रतौ। *–*चिह्नगतोऽयं पाठः क. प्रतौ नास्ति।

*टिप्पणी—१ अत्र विशेषजिज्ञासुभिः ग्रन्थान्ते परिशिष्टे पर्यालोच्याः।

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammu. Digitized by S3 Foundation USA

अथ चतुर्विंशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्– २५१. रामानन्दः

आदित्यैः संख्याता यस्मिन् वृत्ते दिव्ये श्रीनागाख्याते शोभन्तेऽत्यन्तं कर्णाः,
षड्भिः कर्णैर्द्वित्वं प्राप्तैर्यद्विश्रामः स्यात् सत्तत्त्वैस्सांख्यैः ख्यातास्तद्वद्वर्णाः।
कामक्रीडाकूतस्फीतः प्राप्तानन्दे भव्याकारे चन्द्रागव्ये नव्ये कान्ते !,
वेदैर्नेत्रैर्यस्मिन् पादे हाराः संपत्कन्दं रामानन्दं वृत्तं धेहि स्वान्ते ॥ ५७६ ॥

यथा–

रासोल्लासे गोपस्त्रीभिर्वृन्दारण्ये कालिन्दीये कुञ्जे कुञ्जे गुञ्जद्भृङ्गे,
दिव्यामोदे पुष्पाकीर्णे धृत्वा वंशीं मन्दं मन्दं दिव्यैस्तानैः सङ्गायन्तम् ।
कामक्रीडाकूतस्फीतं तासामङ्गेऽनङ्गं साङ्गं कुर्वन्तंतं कामं कान्तं,
सर्वानन्दं तेजोरूपं विश्वाध्यक्षं वन्दे देवं भासन्तं प्रातःसायान्तम् ॥५७७॥

इति रामानन्दः २५१.

२५२. अथ दुर्मिलका

विनिधाय करं सखि ! पाणितलं कुरु रत्नमनोहरबाहुयुगं,
सगणं च ततः कुरु पाणितलं सखि ! रत्नविराजितपादयुतम् ।
यदि योगरसैरपि पंक्तिविराजित-तत्त्वविभासितवर्णधरा,
भवतीह तदा किल दुर्मिलका सखि ! नेत्रविभावसुभासिकला ॥५७८॥

यथा–

गिरिराजसुताकमनीयमनङ्गविभङ्गकरं नृकपालधरं,
परिधूतगजाजिनवाससमुद्धतनृत्यकरं शशिखण्डवरम् ।
गरलानलभूषित-दीनदयालमदभ्रमदोद्धतनीलगलं,
प्रणमामि विलोलजटातटगुम्फितशेषकलानिधिभालतलम् ॥ ५७९ ॥

यथा वा, भूषणे*[1]–

कति सन्ति न गोपकुले ललिताः स्मरतापहताश्च विहाय च ताः,
रतिकेलिकलारसलालसमानसमागतमुज्झितमानरसम् ।
वनमालिनमालि नमस्य नमस्य नमस्य मुदस्य चिरस्य वृथा,
भविता परितापवती भवती युवती जनसंसदि हासकथा ॥ ५८० ॥

इति दुर्मिलका २५२.

---

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम्, द्वि० अ० पद्य ३१८

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

२५३. अथ किरीटम्

पादयुगं कुरु नूपुरराजितमत्र करं वररत्नमनोहर-
वस्त्रयुगं कुसुमद्वयसङ्गतकुण्डलगन्धयुगं समुपाहर।
पण्डितमण्डलिकाहृतमानसकल्पितसज्जनमौलिरसालय,
पिङ्गलपन्नगराजनिवेदितवृत्तकिरीटमिदं परिभावय ।। ५८१ ।।

यथा–

मल्लिलते मलिनासि किमित्यलिना रहिता भवती वत यद्यपि,
सा पुनरेति शरद्रजनी तव या तनुते धवलानि जगन्त्यपि।
षट्पदकोटिविघट्टितकुण्डल[1]कोटिविनिर्गतसौरभसम्पदि,
न त्वयि कोऽपि विधास्यति सादरमन्तरमुत्तरनागरसंसदि ।। ५८२ ।।

इति किरीटम् २५३.

२५४. अथ तन्वी

कारय भं तं सुचरितभरिते नं कुरु सं सखि ! सुमहितवृत्ते,
धेहि भयुग्मं नगणसुसहितं कारय सुन्दरि ! यगणमिहान्ते।
भूतमुनीनैर्यतिरिह कथिता द्वादशभिश्च सुकविजनवित्ता,
तत्त्वविरामा भुजगविरचिता राजति चेतसि परमिति तन्वी ।। ५८३ ।।

यथा–

मा कुरु मानं कुरु मम वचनं कुञ्जगतं भज सहचरि ! कृष्णं,
कारितरासं वलयितवनितं गोपवधूजनयुवतिसतृष्णम्।
कोकिलरावैर्मधुकरविरुतैः[2] स्फोटितकर्णयुगलपरिखिन्ना,
दाहमुपेता मलयजसलिलैस्सम्प्रतिदेहजशरभरभिन्ना ।। ५८४ ।।

यथा वा, छन्दोवृत्तौ[1]*द्वादशाक्षरविरतिः—

चन्द्रमुखी सुन्दरघनजघना कुन्दसमानशिखरदशनाग्रा,
निष्कलवीणा श्रुतिसुखवचना त्रस्तकुरङ्गतरलनयनान्ता।
निर्मुखपीनोन्नतकुचकलशा मत्तगजेन्द्रललितगतिभावा,
निर्भरलीला निधुवनविधये मुञ्जनरेन्द्र ! भवतु तव तन्वी ।। ५८५ ।।
इति प्रत्युदाहरणम्।

इति तन्वी २५४.

---

१. ख. कुड्मल। २. क. मधुकरविरतिः।

*टिप्पणी—१ छन्दःशास्त्र-हलायुधीयटीका प्र० ४. कारिकाया ३६ उदाहरणम्।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

२५५. अथ माधवी

तत्त्वाक्षरकृतवृत्तं यदि वसुभिर्नायकैर्घटितम् ।
तत्सखि ! पिङ्गलभणितं कथितं त्विह माधवीवृत्तम् ।। ५८६ ।।

यथा-

विलोलविलोचनकोणविलोकितमोहितगोपवधूजनचित्तः,
मयूरकलापविकल्पितमौलिरपारकलानिधिबालचरित्रः ।
करोति मनो मम विह्वलमिन्दुनिभस्मितसुन्दरकुन्दसुदन्तः,
सखीमिति कापि जगाद हरेरनुरागवशेन विभावितमन्तः ।। ५८७ ।।

इति माधवी २५५.

इदमेवास्माभिः पूर्वखण्डे माधवी सवया इत्युक्ता ।

२५६. अथ तरलनयनम्

वसुमितलघुमिह सहचरि ! विकचकमलमुखि ! विरचय,
तदनु घटय सखि ! रसदशलघुमपि तरलनयन इह ।
सकलचरणमिति वसुमितसुनगणमनु कुरु सुरमणि,
फणिमणिरिह विभुरनुवदति सुरुचिरमिति परिकलय ।। ५८८ ।।

यथा-

कुसुमनिकरपरिकलितमधुरवनविहरणसुनिपुण,
सरभसविदलितकरिवरनरवरदलितदितिजगण ।
करधृतगिरिवर विलसितमणिगण मुनिमतमुरहर,
फणिपतिविगणितगुणगण जय जय जय सदवनपर ।। ५८९ ।।

इति तरलनयनम् २५६.

[1]अत्रापि प्रस्तारगत्या चतुर्विंशत्यक्षरस्य एकाकोटिः सप्तषष्टिलक्षाणि सप्तसप्ततिसहस्राणि षोडशोत्तरं शतद्वयं च १६७७७२१६ भेदास्तेषु भेदषट्कमुदाहृतं, शेषभेदाः प्रस्तार्य सुधीभिरुदाहरणीया, इति दिक् ।

इति चतुर्विंशत्यक्षरम् ।

अथ पञ्चविंशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्—

२५७. कामानन्दः

यस्मिन् वृत्ते सावित्राः कौन्तेयाः कान्ताः यत्पादप्रान्ते कान्ते ! चैको मुक्ताहारः,
विश्रामः स्यात् षड्भिः कर्णैर्भव्याकारैः सार्द्धैस्तैरेव स्यात् सोऽयं वृत्तानां सारः ।

१. पंक्तित्रयं नास्ति क. प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ चतुर्विंशत्यक्षरवृत्तस्य लक्षणशेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे पर्यवेक्षणीयाः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तत्त्वैरात्मा यस्मिन् वृत्ते वर्णैः ख्याताः[1] छन्दोविद्भिः सद्भिः संसेव्यः सर्वानन्दः,
सोऽयं नागाधीशेनोक्तो वृत्ताध्यक्षः संसाध्यः पुम्भिश्चित्ते कामं कामानन्दः।५९०।

यथा–

वन्यैः पीतैः पुष्पैर्मालां सङ्ग्रथ्नन्तं[2] श्रीमद्वृन्दारण्ये गोपीवृन्दे[3] खेलन्तं,
मायूरैः पत्रैर्दिव्यं छत्रं कुर्वन्तं वृक्षाणां शाखां धृत्वा हिन्दोले दोलन्तम् ।
वंशीमोष्ठप्रान्ते कृत्वा संगायन्तं तासां तन्नाम्नान्युक्त्वा गोपीराह्वायन्तं,
दक्षं पादं वामे कृत्वा संतिष्ठन्तं काल्पेवार्क्षे[4] मूले वन्दे कृष्णं[5] भासन्तम्।।५९१।।

इति कामानन्दः २५७.

२५८. अथ क्रौञ्चपदा

कारय भं मं धारय सं भं निगमनगणमिह विरचय रुचिरं,
सञ्चितहारा पञ्चविरामा शरवसुमुनियुतसुरचितविरतिः ।
क्रौञ्चपदा स्यात् काञ्चनवर्णे गतिवशसुविजितमदगजगमने,
तत्त्वविभेदैर्वर्णविरामा बहुविधगतिरपि भवति च गणने ।। ५९२ ।।

यथा

या तरलाक्षी कुञ्चितकेशी मदकलकरिवरगमनविलसिता,
फुल्लसरोजश्रेणिकटाक्षा मधुमदसुमुदितसरभसगमना ।
स्थूलनितम्बा पीनकुचाढ्या बहुविधसुखयुतसुरतसुनिपुणा,
सा परिणेया सौख्यकरा स्त्री बहुविधनिधुवनसुखमभिलषता ।। ५९३ ।।

यथा वा, हलायुधे[1]*

या कपिलाक्षी पिङ्गलकेशी कलिरुचिरनुदिनमनुनयकठिना,
दीर्घतराभिः स्थूलशिराभिः परिवृतवपुरतिशयकुटिलगतिः ।
आयतजङ्घा निम्नकपोला लघुतरकुचयुगपरिचितहृदया,
सा परिहार्या क्रौञ्चपदा स्त्री ध्रुवमिह निरवधिसुखमभिलषता ।। ५९४ ।।
इति प्रत्युदाहरणम् ।

इति क्रौञ्चपदा २५८.

२५९. अथ मल्ली

सगणाष्टकगुरुघटिता शरपक्षकवर्णविलसिता या स्यात् ।
तामिह पिङ्गलनागः कथयति मल्लीमिति स्फुटतः ।। ५९५ ।।

---

१. ख. ख्यातः । २. क. सङ्ग्रीष्मन्तं । ३. ख. गोपीवृन्दैः । ४. ख. तं तिष्ठन्तं सत्कादम्बे । ५. क. कृष्णे ।

*टिप्पणी—१ छन्दःशास्त्र हलायुधीयटीकायां अ० ७, कारिकाया ३० उदाहरणम् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

गिरिराजसुताकमनीयमनङ्गविभङ्गकरं गलमस्तकमालं,
परिधूतगजाजिनवाससमुद्धतनृत्यकरं विगृहीतकपालम् ।
गरलानलभूषित-दीनदयालमदभ्रमदोद्धतदानवकालं,
प्रणमामि विलोलजटातटगुम्फितशेषकलानिधिलालितभालम् ।। ५९६ ।।

इति मल्ली २५९.

इयमेव मात्रावृत्ते मल्लीसवया इत्युक्ता ।

२६०. अथ मणिगणम्

सुतनु ! सुदति ! वसुमितनगणमिह विधुसुमुखि ! सुविरचय,
तदनु विकचकमलसदृशमुखि ! सुरभिकुसुममपि कलय ।
गतिवशविदलितमदकलकरिवरगमन इह सुरमणि,
मणिगणमिति फणिपतिरपि कथयति विमलमतिरतिरणि[1] ।। ५९७ ।।

यथा–

निगमविदित सततमुदित परमपुरुषसुक्तसुललित[2],
सकलमनुजकलुषदहन तरलयुवतिवचनविचलित ।
विकटगहनदहनकवल पिहितनयन मिलितसखिवल !
कलितविविधविबुधसुखचय जय जय दलितदितिजदल ।। ५९८ ।।

इति मणिगणम् २६०.

[3]अत्रापि प्रस्तारगत्या पञ्चविंशत्यक्षरस्य कोटित्रयं पञ्चत्रिंशल्लक्षाणि चतुःपञ्चसहस्राणि द्वात्रिंशदुत्तराणि चतुःशतानि च ३३५५४४३२ भेदास्तेषु दिगुपदर्शनार्थं भेदचतुष्टयमुक्तं. वृत्तान्तराणि च प्रस्तार्य सुधीभिरूह्यानीति शिवम्*[1] ।

इति पञ्चविंशत्यक्षरम् ।

अथ षड्विंशाक्षरम्

तत्र प्रथमं सर्वगुरुम्–

२६१. श्रीगोविन्दानन्दः

यस्मिन् वृत्ते दिक्संख्याताः कर्णा रामैः संपन्ना शोभन्तेऽत्यन्तं वामैर्भव्याकाराः,
विश्रामः स्यात् षड्भिः कर्णैः पश्चादन्ते कुन्तीपुत्रैर्मौनैस्तेषां लोकैः ख्याताहाराः ।
सर्वेषां नागानामीशेनायं प्रोक्तः सर्वान्त्यः प्रस्तारः षड्विंशत्याहारैस्तारैः,
सोऽयं श्रीगोविन्दानन्दश्च्छन्दस्सारः सर्वाधारः कार्यश्चित्तेऽपारैश्छन्दस्कारैः
।।५९९।।

---

१. क. विलमतिरतितरणि । २. ख. सुफलित । ३. पंक्ति चतुष्टयं नास्ति क. प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ पञ्चविंशत्यक्षरवृत्तास्योपलब्धशेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे लोकनीयाः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

श्रीगोविन्दः सर्वानन्दश्चित्ते ध्येयः वित्तं मित्रं स्वाराज्यं स्त्रीवर्गः सर्वो हेयः,
वृन्दारण्ये गुञ्जद्भृङ्गे पुष्पैः कीर्णे श्रीलक्ष्मीनाथः श्रीगोपीकान्तः शश्वद्गेयः ।
द्वारे द्वारे व्यर्थं संसारे रे रे रे भ्रामं भ्रामं कामं किं कुर्यास्त्वं क्षामं चेतः,
मायाजालं सर्वं चैतत् पश्यच्छ्रावन्भ्राम्यन्नानायोनौ पूर्वं खिन्नोऽसि त्वं भ्रातः
॥ ६०० ॥

इति श्रीगोविन्दानन्दः २६१.

२६२. अथ भुजङ्गविजृम्भितम्

आदौ यस्मिन् वृत्ते काले[1] मगणयुग-तनननगणा रसौ च लगौ ततो-[2]
वस्वीशाश्वच्छेदोपेतं चपलतरहरिणनयने विधेहि सुखेन वै ।
पादप्रान्तं यस्मिन् वृत्ते रसनरनयनविलसितं मनोहरणं प्रिये !,
नागाधीशेनोक्तं प्रोक्तं[3] विबुधहृदयसुखजनकं भुजङ्गविजृम्भितम् ॥ ६०१ ॥

यथा–

ध्यानैकाग्रालम्बादृष्टिष्कमलमुखि ! लुलितमलकैः करे स्थितमाननं,
चिन्तासक्ता शून्या बुद्धिस्त्वरितगतिपतितरशनातनुस्तनुतां गता ।
पाण्डुच्छायक्षामं वक्त्रं मदजनति रहसि सरसा[4] करोषि न संकथा,
को नामायं रम्यो व्याधिस्तव सुमुखि ! कथय किमिदं न खल्वसि नातुरा[5]
॥ ६०२ ॥

यथा वा, हलायुधे[1]*—

यैः सन्नद्धानेकानीकैर्नरतुरगकरिपरिवृतैः समं तव शत्रवः,
युद्धश्रद्धालुब्धात्मान[6]स्त्वदभिमुखमथ गतभियः पतन्ति धृतायुधाः ।
तेऽद्य त्वां दृष्ट्वा संग्रामे तुडिगनृपकृपणमनसः पतन्ति दिगन्तरं,
किं वा सोढुं शक्यं तैस्तैर्बहुभिरपि सविषविषमं भुजङ्गविजृम्भितम् ॥ ६०३ ॥

इति प्रत्युदाहरणम् ।

इति भुजङ्गविजृम्भितम् २६२.

२६३. अथ अपवाहः

आदौ मं तदनु च कुरु सहचरि ! रसपरिमितमिह नगणं गण्यं,
हस्तं संविरचय सखि ! विकचकमलमुखि ! तदनु च रुचिरं कर्णम् ।
विश्रामः सुतनु ! सुदति ! नवरससशरपरिमित इह बोभूयात्,
नागो जल्पति फणिपतिरतिशयमिति रतिकृतिधृतिरपवाहः स्यात् ॥ ६०४ ॥

---

१. ख. बाले । २. ख. तनो । ३. ख. वृत्तं । ४. ख. सारसा । ५. ख. चातुरा । ६. ख. लब्धात्मानः ।

*टिप्पणी—१ छन्द[illegible]म् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

श्रीकृष्णं भवभयहरमभिमतफलकरणनिपुणतरमाराध्यं,
लक्ष्मीशं दलितदितिजमवजितपरमवनतमुनिवरसंसाध्यम् ।
सर्वज्ञं गरुडगमनमहिपतिकृतरुचिरशयनमनघं नव्यं,
तं वन्दे कनकवसनतनुरुचिजितजलदपटलमजितं दिव्यम् ।। ६०५ ।।

यथा वा, हलायुधे[१]*—

श्रीकण्ठं त्रिपुरदहनममृतकिरणशकलकलितशिरसं रुद्रं,
भूतेशं हतमुनिभयमखिलभुवनमितचरणयुगमीशानम् ।
सर्वज्ञं वृषभगमनमहिपतिकृतवलयरुचिरकरमाराध्यं,
तं वन्दे भवभयनुदमभिमतफलवितरणगुरुमुमया युक्तम् ।। ६०६ ।।

इति प्रत्युदाहरणम् ।

इति अपवाहः २६३.

२६४. अथ मागधी

अत्रैव वसुभगणानन्तरं गुरुद्वयदानेन मागधीवृत्तं भवति । तल्लक्षणं यथा—

भगणाष्टकगुरुयुगला रसयुगवर्णा रसाग्निराशिकला ।
पन्नगपिङ्गलपिता विज्ञेया मागधी सुधिया ।। ६०७ ।।

यथा –

माधव विद्युदियं गगने तव संतनुते[१] नवकाञ्चनरञ्जितवस्त्रं,
नीरदवृत्तमिदं गगनेऽपि च भावयति प्रसभं तव देहमहास्त्रम् ।
इन्द्रशरासनजालमिदं तव वक्षसि भावयते[१] वनमालतिमालां,
मानय मे वचनं कुरु सम्प्रति सुन्दर चेतसि भावयतामिह बालाम् ।।६०८।।

इति मागधी २६४.

इयमेव च द्वात्रिंशत्कलका मागधी सवया इत्युक्ता पूर्वखण्डे । अत्र तु गुरुद्वयमधिकमिति षड्त्रिंशत्कलेति, ततो भेदः । वर्णप्रस्तारत्वाच्च षड्विंशत्यक्षरनियमः । *अतएव च जातिवृत्तसांकर्येण छन्दःसन्दर्भवैचित्रीमावहतीति सर्वत्र रहस्यं चाकसीति छन्दःशास्त्रेषु ।*

---

१. ख. संतनुते । *-*चिह्नगतोऽयं पाठः क. प्रतौ नास्ति ।

*टिप्पणी—१ छन्दःशास्त्रहलायुधटीकायां अ० ७, कारिकाया ३२ उदाहरणम् ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अथान्त्यं सर्वलघु—

२६५. अथ कमलदलम्

सहचरि ! विकचकमलमुखि ! वसुमितसुनगणमिह विरचय,
तदनु सकलपदविशदसुरभिकुसुमयुगमपि परिकलय ।
रसयुगपरिमितपदगतलघुमनुकलय कमलदलमिति,
तदिह मनसि कुरु सुरुचिरगुणवति ! कथयति फणिपतिरपि ।। ६०९ ।।

यथा–

कलुषशमन ! गरुडगमन ! कनकवसन ! कुसुमहसन ! [जय,
ललितमुकुट ! दलितशकट ! कलितलकुट ! रचितकपट ! जय ।
कमलनयन !][1] जलधिशयन ! धरणिधरण ! मरणहरण ! जय,
सदयहृदय ! पठितसुनय ! विदितविनय ! रचितसमय ! जय ।। ६१० ।।

इति कमलदलम् २६५.

[2]अत्रापि प्रस्तारगत्या रसलोचनवर्णस्य कोटिषट्कं एकसप्ततिलक्षाणि वसुसहस्राणि चतुःषष्ट्युत्तराणि अष्टौ शतानि च भेदाः ६७१०८८६४ तेषु भेदपञ्चकमभिहितं, शेषभेदाः प्रस्तार्य गुरूपदेशतः स्वेच्छया नामानि आरचय्य सूचनीया इति सर्वमवदातमिति ।[2]*

इति षड्विंशत्यक्षरम् ।

उक्तग्रन्थमुपसंहरति[2]—

लक्ष्यलक्षणसंयुक्तं मया छन्दोऽत्र कीर्तितम् ।
प्रत्युदाहरणत्वेन क्वचित् प्राचामुदाहृतम् ।। ६११ ।।
सुजातिप्रतिभायुक्तं सालङ्कारं स्फुरद्गुणम् ।
कुर्वन्तु सुधियः कण्ठे **वृत्तमौक्तिक**मुत्तमम् ।। ६१२ ।।
सर्वगुर्वादिलघ्वन्तप्रस्तारस्त्वतिदुष्करः ।
इति विज्ञाय वाद्यन्तभेदकल्पनमीरितम् ।। ६१३ ।।
पञ्चषष्ट्यधिकं नेत्रशतकं समुदीरितम् ।
त्यक्त्वा लक्षणमित्राणि[3] वर्णवृत्तमिति स्फुटम् ।। ६१४ ।।
यथामति यथाप्रज्ञमवधार्य मनीषिभिः ।
शोधनीयं प्रयत्नेन बद्धः सन्तोऽयमञ्जलिः ।। ६१५ ।।

---

१. [-] कोष्ठगतोंऽशः क. प्रतौ नास्ति ।

२. पंक्तिचतुष्टयं नास्ति क. प्रतौ । ३. ख. नास्ति पाठः । ४. ख. वृत्तानि ।

*टिप्पणी—१[illegible]

CC-0. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अत्र चैकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरावधिप्रस्तारपिण्डसंख्या—

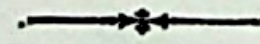
रसलोचनसप्ताश्वचन्द्रदृग्वेदवह्निभिः ।
आत्मना योजितैर्वामगत्या ज्ञेया मनीषिभिः ॥ ६१६ ॥

इत्यस्मत्पितृचरणप्रदीपित 'पिङ्गलप्रदीपभाष्य'* निर्दिष्टदिशा 'त्रयोदश कोटयो द्विचत्वारिंशल्लक्षाणि सप्तदशसहस्राणि षड्विंशत्युत्तराणि सप्तशतानि च १३४२१७७२६ समस्तप्रस्तारस्य ।

षड्विंशतिःसप्तशतानि चैव तथा सहस्राण्यपि सप्तपंक्तिः ।
लक्षाणि दृग्वेदसुसम्मितानि कोटचस्तथा रामनिशाकरैः स्युः ॥६१७॥

इति मदुपदिष्टपूर्वखण्डोक्तपिण्डसंख्या च सिंहावलोकनशालिभिरनुसन्धातव्या इति सर्वमनवद्यम् ।

इति श्रीलक्ष्मीनाथभट्टात्मज-कविशेखरचन्द्रशेखरभट्टविरचिते [1]श्रीवृत्तमौक्तिके एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षर-प्रस्तारेष्वाद्यन्तभेदसहितवृत्तनिरूपण-प्रकरणं प्रथमम् ।



१ ख. वृत्तमौक्तिके पिङ्गलवार्त्तिके एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरान्तप्रस्तारे ।

*टिप्पणी—१ लक्ष्मीनाथभट्टकृतायां प्राकृतपैङ्गलवृत्तौ २११ पद्यस्य टीकायाम् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

द्वितीयं प्रकीर्णक-प्रकरणम्

अथ प्रस्तारोत्तीर्णानि कतिचिद् वृत्तानि वर्णनियमरहितान्यभिधीयन्ते । तत्र प्राचीनानां संग्रहकारिका—

१–४. अथ भुजङ्गविजृम्भितस्य चत्वारो भेदाः

वेदैः पिपीडिका स्यान्नवभिः करभश्चतुर्दशभिः ।
पणवमिदं तु शरैश्चेन्माला इह मध्यगैर्लघुभिरधिकैः ।। १ ।।

इति भुजङ्गविजृम्भितभेदनिरूपणम् १–४.[*1]

---

[*] टिप्पणी—१ ग्रन्थकारेण द्वितीयखण्डस्य द्वादशप्रकरणे विज्ञापितमिदं यदस्य द्वितीयखण्डस्य द्वितीयप्रकरणे पिपीलिका-पिपीलिकाकरभ - पिपीलिकापणव-पिपीलिकामालाच्छन्दांसि लक्षणोदाहरणसहितानि निरूपितानि'। परमत्र चतुर्वृत्तानां लक्षणोदाहरणानि क्वचिदपि नैव दृश्यन्ते, केवलं त्वत्र प्राचीनसंग्रहकारिकैव समुपलभ्यते । कारिकायाः पूर्वापरप्रसङ्गरहितत्वात् लक्षणान्यपि न प्रस्फुटीभवन्ति । अतः कलिकालसर्वज्ञ-हेमचन्द्राचार्यप्रणीताच्छन्दोनुशासनादेषां चतुर्वृत्तानां लक्षणोदाहरणान्यधः प्रस्तूयन्ते । वृत्तान्येतानि सन्ति षड्विंशत्यक्षरात्मक-भुजङ्गविजृम्भितस्यैव भेदरूपाणि ।

"मातनीजभ्राः पिपीलिका जणैः ।३८५।

[व्या०] मद्वयं तगणो नगणचतुष्टयं जभराः । जणैरिति अष्टभिः पञ्चदशभिश्च यतिः । यथा–

निष्प्रत्यूहं पुण्यां लक्ष्मीमविरतमभिलषसि यदि रमयितुं सुखं च यदीच्छसि,
स्थातुं न्यायोन्मीलद्‌वुद्धे लघुभिरपि सह बहुभिरिह कुरु मा विरोधपदं तदा ।
विस्फूर्जत्पूत्कारं क्रीडाकवलितसकलमृगकुलमजगरं भुजङ्गममुन्मदं,
सङ्घातं कृत्वा पश्यैता ग्लपितवपुषमनवधिरचितरुजा अदन्ति पिपीलिकाः ।।३८५।।

एषैव नीपरतः पञ्च-दश-पञ्चदशलवृद्धाक्रमेण करभः ।।३५।। पणवः ।।४०।। माला ।।४५।।—।।३८६।।

[व्या०] एषैव पिपीलिका चतुर्भ्यो नगणेभ्यः परतः पञ्चभिः, दशभिः, पञ्चदशभिश्च लघुभिर्वृद्धाः शेषगणेषु तथैव स्थितेषु क्रमेण करभादयो भवन्ति । तेऽत्र पञ्चभिर्वृद्धा-पिपीलिकाकरभः । यथा—

नित्यं लक्ष्मच्छायाछन्नः कलयतु कथमिव तव
वदनरुचिममृतरुचिश्चिरं क्षयसंयुतः,
तुल्यं नाब्जं स्फूर्जद्‌धूलीविधुरितजननयन-
[illegible]

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

५, अथ द्वितीयत्रिभङ्गी

प्रथमत इह कुरु सहचरि ! दश-परममपि च भं
कुरु शेषे गुरुयुगमं हस्तसुयुक्तं,
पुनरपि गुरुयुग-लघुयुग-गुरुयुगमपि कुरु,
जल्पति नागः कृतरागः पीतविभागः ।
श्रुतिपदमिह सखि ! सममिति विरचय शुभदति[1]
वेदहगुक्तां विरतौ मात्रां कुरु युक्तां,
वसुरसशशिमितकलमिह कलय सकलपद–
मङ्गदभङ्गी सुखरङ्गी सज्जनसङ्गी ॥ २ ॥

---

१. ख. वरतनु ।
*टि०—कण्ठस्येयं दासी श्यामापरभृतयुवतिरपि
मधुपरिचयकलविरुतिर्निसर्गकलध्वनेः,
भ्रूवल्लीभङ्गे छेकाया हरिणनयनमचतुर-
मतिललिततनु करभोरु ते सदृशं दृशः ॥ ३८६ ॥

दशभिर्वृद्धापिपीलिकापणवः । यथा—

रुन्दोऽमन्दः कुन्दच्छायः शरदमलघनतुहिनविकच-
कुमुदवनहरहसितसितः शशाङ्ककरोज्ज्वलः,
तारः पारावारापारः स्थलजलगगनतलसकल-
भुवनपथधवलनपरिचितः प्रसाधितदिङ्मुखः ।
लोकालोकच्छेदं गत्वा दृढकठिनविकटदिग-
वधितटघटनविवलनचलयितो विशुद्धयशश्चयः,
प्रोत्तुङ्गः श्वेतप्राकारो ध्वनितगुणपणव तव जयति
नृपवर नवललितवसतेर्जगत्त्रितयश्रियः ॥३८७॥

पञ्चदशभिर्वृद्धा पिपीलिकामाला । यथा—

उत्फुल्लाम्भोजाक्ष्यास्तस्याः कुसुमशरसुभग तव विरहदव
इह हि जयिनि समुपवरणविषये व्यधायि सखीजनैः,
अङ्गे वासः कर्पूराम्भस्तिमितशुचितुहिनकिरणकरपरि-
भवचतुरधवलिमकुचतटयुगे सुमौक्तिकदाम च ।
रम्भागुल्मं लीलागारं मलयजरसकलितवसुधामभिनव-
विकचकुमुदवनदलसमुदयैश्च तल्पककल्पना,
नव्या मौलौ मल्लीमाला तदिदमखिलमपि दवहुतवहरुहि-
परिचितमहिम विरचयति मुहुः प्रदाहमहाज्वरम् ॥ ३८८ ॥”
[छन्दोनुशासनम् द्वि० अ०]

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

द्वकलघुदशकस्यान्ते भगण-गयुग-सगण-गुरुयुगलम् ।
लघुयुगलं गुरुयुगलं यदि घटितं स्यात् त्रिभङ्गिकावृत्तम् ॥ ३॥

यथा

स जयति हर इह वलयितविषधर तिलकितसुन्दरचन्द्रः
परमानन्दः सुखकन्दः ।
वृषभगमन डमरुधरण नयनदहन जनितातनुभङ्गः
कृतरङ्गः सज्जनसङ्गः ।
जयति च हरिरिह करधृतगिरिवर विनिहतकंसनरेशः
परमेशः कुञ्चितकेशः ।
गरुडगमन कलुषशमनचरणशरणजनमानसहंसः
सुवतंसः पालितवंशः ॥ ४ ॥

इति द्वितीयत्रिभङ्गी ५.

६. अथ शालूरम्

कर्णद्विजवरगणमिह रसपरिमितमतिसुरुचिरमनुकलय करं,
शालूरममलमिति विकचकमलमुखि ! सखि ! सहचरि ! परिकलय वरम् ।
नेत्रानलकलमिदमतिशयसहृदय विशदहृदय सुखरसजनकम् ।
नागाधिपकथितमखिलविबुधजनमथितमगणितगुणगणकनकम् ॥ ५ ॥

यथा–

गोपीजनवलयित - मुनिगणसुमहितमुपचितदितिसुतमदहरणं,
व्यर्थीकृतजलधर-करधृतगिरिवर-गतभय-निजजनसुखकरणम् ।
वृन्दावनविहरण - परपदवितरण - विहितविविधरसरभसपरं,
पीताम्बरधरमरुणचरणकरमनुसर सखि ! सरसिजनयनवरम् ॥ ६ ॥

इति शालूरम् ६.

इति प्रकीर्णकं वृत्तमुक्तं सद्वृत्तमौक्तिके ।
प्रस्तारगत्या वृत्तानि शेषाण्यूह्यानि पण्डितैः ॥ ७ ॥

इति प्रकीर्णक–प्रकरणं द्वितीयम् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तृतीयं दण्डक-प्रकरणम्

अथ दण्डकाः

तत्र यत्र पादे द्वौ नगणौ रगणाश्च सप्त भवन्ति स दण्डको नाम षड्-विंशत्यक्षरपादस्य वृत्तस्यानन्तरं 'दण्डको नौ रः' [॥७।३३॥][1]* इति सूत्रकार-पाठात् सप्तविंशत्यक्षरत्वमेव युक्तं दण्डकस्य। प्रथमं तावदेकाक्षरश्रचादिवृत्ताना-मेकैकाक्षरवृद्धया प्रस्तारप्रवृत्तिरत ऊर्ध्वं पुनरेकैकरेफवृद्धया प्रस्तारः। तल्लक्षणं यथा—

१. अथ चण्डवृष्टिप्रपातः

नगणयुगलादनन्तरमपि यदि रगणा भवन्ति सप्तैव।
दण्डक एष निगदितश्चण्डकवृष्टिप्रपात इति ॥ १ ॥

यथा—

इह हि भवति दण्डकारण्यदेशे स्थितिः पुण्यभाजां मुनीनां मनोहारिणी,
त्रिदशविजयिवीर्यदृप्यद्दशग्रीवलक्ष्मीविरामेण रामेण संसेविते।
जनकयजनभूमिसम्भूतसीमन्तिनीसीमसीतापदस्पर्शपूताश्रमे,
भुवननमितदिव्यपद्माभिधानाम्बिकातीर्थयात्रागतानेकसिद्धाकुले ॥ २ ॥

इति चण्डवृष्टिप्रपातः १.

२. अथ प्रचितकः

'शेषः प्रचितकः' [७।३६][2]* इति सूत्रकारोक्तदिशा [चण्डवृष्टिप्रपातादूर्ध्वं अधिकैकरेफदानेन प्रस्तारे कृते दण्डकः प्रचितक इति संज्ञां लभते। लक्षणं, **यथा—**

यदि ह न-द्वयानन्तरमपि रेफाः स्युर्वसुप्रमिताः।
प्रचितक इति तत्संज्ञा कथिता श्रीनागराजेन ॥ ३ ॥

यथा—

प्रथमकथितदण्डकः][1] चण्डवृष्टिप्रपाताभिधानो मुनेः पिङ्गलाचार्यनाम्नो मतः,
प्रचितक इतितत्परं[2] दण्डकानामियं जातिरेकैकरेफाभिवृद्धया यथेष्टं भवेत्।
स्वरुचिरचितसंज्ञया तद्विशेषैरशेषैः पुनः काव्यमन्येपि कुर्वन्तु वागीश्वराः,
भवति यदि समानसंख्याक्षरैस्तत्र पादव्यवस्था ततो दण्डकः पूज्यतेऽसौ जनैः ॥ ४ ॥

इति प्रचितकः २.

---

१. [—] कोष्ठकान्तर्गतोंऽशो नास्ति क. प्रतौ। २. 'प्रचित इति ततः परं' इति हलायुधे।
*टिप्पणी—१ छन्दःशास्त्र।
२ छन्दःशास्त्र-हलायुधटीका।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

३ अथ अर्णादयः

पितृचरणैरिह कथिताः प्रतिचरणविवृद्धिरेफा ये ।
दण्डकभेदाः पिङ्गलदीपे[1]*ऽप्यर्णादयः स्फुटतः ॥ ५ ॥
तत एव हि ते विबुधैः विज्ञेया रेफवृद्धितः प्राज्ञैः ।
प्रस्तार्य ते विधेया इत्युपदेशः कृतोऽस्माभिः ॥ ६ ॥

अत्रापि समानसंख्याक्षर एव पादो भवतीति ध्येयम् । तत्रार्णो यथा—

जय जय जगदीश विष्णो हरे राम दामोदर श्रीनिवासाच्युतानन्त नारायण,
त्रिदशगणगुरो मुरारे [मुकुन्दासुरारे][1] हृषीकेश पीताम्बर श्रीपते माधव ।
गरुडगमन कृष्ण वैकुण्ठ गोविन्द विश्वम्भरोपेन्द्र चक्रायुधाधोक्षज श्रीनिधे,
बलिदमन नृसिंह शौरे भवाम्भोधिघोरार्णसि त्वं निमज्जन्त[2]मभ्युद्धरोपेत्य माम् ७

इत्युदाहरणम्[3]

इत्यर्णादयो दण्डकाः ३.

४. अथ सर्वतोभद्रः

रसपरिमितलघुकान्ते यदि यगणा स्युर्मुनिप्रमिताः ।
दण्डक एष निगदितः पिङ्गलनागेन सर्वतोभद्रः ॥ ८ ॥

यथा–

जय जय यदुकुलाम्भोधिचन्द्र प्रभो वासुदेवाच्युतानन्तविष्णो मुरारे,
प्रबलदितिजकुलोद्दामदन्तावलस्तोमविद्रावणे केसरीन्द्रासुरारे ।
प्रणतजनपरितापोग्रदावानलच्छेदमेघौघनारायण श्रीनिवास,
चरणनख[ज]सुधांशुच्छटोन्मेषनिःशेषिताशेषविश्वान्धकारप्रकाश ॥९॥

एतस्यैव अन्यत्र **प्रचितक** इति नामान्तरम् ।

इति सर्वतोभद्रः ४.

---

१. [–] कोष्ठगतोंऽशो नास्ति क. प्रतौ । २. ध्वस्तमज्जन्त । ३. क. इति प्रत्युदाहरणम् ।

*टिप्पणी–१. "अथार्णादयः–प्रतिचरणविवृद्धिरेफाः स्युरर्णार्णवव्यालजीमूतलीलाकरोद्दाम-शंखादयः ।
यदि नगणद्वयान्तरमेव प्रतिचरणं विवृद्धिरेफाः क्रमात् समधिकरगणास्तदा अर्ण-अर्णव-व्याल-जीमूत-लीलाकर-उद्दाम-शङ्खादयो दण्डकाः स्युरिति । एतेन नगणयुगल-वसुरेफेण अर्णः । ततः परे क्रमाद् रगणवृद्धया ज्ञेयाः । आदि-शब्दादन्येऽपि रगणवृद्धया स्वबुद्धया नामसमेता दण्डका विधेया इत्युपदिश्यते ।
(प्राकृतपैंगलम् पृ० ५०८)

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

५. अथ अशोककुसुममञ्जरी

रगण-जगण-क्रमेण हि रन्ध्रगणा यत्र लघ्वन्ताः ।
पिङ्गलनागनिगदिता ज्ञेया साऽशोककुसुममञ्जरिका ॥ १० ॥

यथा–

राधिके विलोकयाद्य केलिकाननं पिकावलीविरावराजितं मनोरमं च,
सुन्दराङ्गि चारुचम्पकस्रगावली-विराजिते विलोलहारमण्डितेऽपरं च ।[1]
मद्वचः[2] शृणुष्व ते हितं च वच्मि हे सखि प्रमोदकारणं मनोविनोदनं च,
फुल्लनागकेसरादिपुष्परेणुभूषितं भजाद्य नन्दनन्दनं मनोहरं च ॥ ११ ॥

इति अशोककुसुममञ्जरी ५.

६. अथ कुसुमस्तबकः

सखि ! यत्र रन्ध्र-सगणाः श्रुतिपदघटिता विराजन्ते ।
कुसुमस्तबकं दण्डकमाह तदा तं तु पिङ्गलो नागः ॥ १२ ॥

यथा–

सखि ! नन्दसुतं कमनीयकलाकलितं करुणावरुणालयमीशहरिं,
रजनीशमुखं भवभीतिहरं नवनीतकरं भवसागरपारतरिम् ।
चपलारुचिरांशुकवल्लिधरं कमलावलिमालितमालि तमालरुचिं,
भवमोचन-पङ्कजलोचनरोचनरोचितभालमहं शरणं कलये ॥ १३ ॥

इति कुसुमस्तबकः ६.

७. अथ मत्तमातङ्गः

यत्र स्वेच्छा घटिता भवन्ति विहगाः[3] सरोजाक्षि ! ।
पिङ्गलभुजगाधिपतिः कथयति तं मत्तमातङ्गम् ॥ १४ ॥

यथा–

यामुने सैकते रासखेलागतं गोपिकामण्डलीमध्यगं वेणुवाद्योतरं,
मञ्जुगुञ्जावतंसं जगन्मोहनं चारुहासश्रिया सञ्चितं कुन्तलैरञ्चितम् ।
दिव्यकेलीकलोल्लाससम्भावितं दासवृन्दापदुन्मूलकं कामनापूरकं,
कल्पवृक्षस्य मूले स्थितं चन्द्रिकोत्तंसहाराञ्चितं चेतसा कृष्णचन्द्रं भजे ॥१५॥

इति मत्तमातङ्गः ७.

---

१. ख. द्वितीयचरणं क. प्रतौ नास्ति । २. क. मे वचः । ३. ख. विगहगा ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

८. छ अनङ्गशेखरः

जगण-रगण-क्रमेण च रन्ध्रगणा यत्र लघ्वन्ताः (गुर्वन्ताः) ।
फणिपतिपिङ्गलभणिताः[1] स ज्ञेयोऽनङ्गशेखरः कविभिः ॥ १६ ॥

यथा–

विलोलचारुकुण्डलः स्फुरत्सुगण्डमण्डलः सुलोलमौलिकुन्तलःस्मरोल्लसत्,
नवीनमेघमण्डलीवपुर्विभासिताम्बरप्रभातडित्समाश्रितः स्मितं दधत् ।
मयूरचारुचन्द्रिकाचयप्रपञ्चचुम्बितोल्लसत्किरीटमण्डितः समुच्छ्वसन्,
विलासिनीभुजावलीनिरुद्धबाहुमण्डलः करोतु वः कृतार्थतां जनानवन्[2] ॥१७॥

इति अनङ्गशेखरः ८.

इति दण्डकाः

एवमन्येपि नकारद्वयानन्तरमनियतैस्तकारैः दण्डकाः प्रबन्धेषु दृश्यन्ते । तेऽस्माभिरपि यतत्वादेवोपेक्षिताः ग्रन्थविस्तरभयाच्चेह न लक्षिता, इत्युपरम्यते[*] ।

इति श्रीवृत्तमौक्तिके [तृतीयं] दण्डकप्रकरणम् ।

---

१. ख. भणितः । २. ख. जनाननवन् ।

*टिप्पणी—दण्डकवृत्तस्य ग्रन्थान्तरेषु प्राप्तभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्याः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

चतुर्थं अर्द्धसम-प्रकरणम्

अथ अर्द्धसमवृत्तानि लक्ष्यन्ते—

चतुष्पदं भवेत् पद्यं द्विधा तच्च प्रकीर्तितम् ।
जातिवृत्तप्रभेदेन छन्दः [शास्त्रविशारदैः ॥ १ ॥
मात्राकृता भवेज्जातिर्वृत्तं वर्णकृतं मतम् ।
तच्चापि त्रिविधं प्रोक्तं समार्द्धं][1] समकं तथा ॥ २ ॥
विषमं चेति तस्यापि लक्ष्यते लक्षणं त्विह ।
चतुष्पदी समा यस्य तत्समं परिकीर्तितम् ॥ ३ ॥
यस्य स्यात् प्रथमः पादस्तृतीयेन समस्तथा ।
द्वितीयस्तु चतुर्थेन भवत्यर्द्धं समं हि तत् ॥ ४ ॥
यस्य पादचतुष्कं स्याद् भिन्नं लक्षणभेदतः ।
तदाहुर्विषमं वृत्तं छन्दःशास्त्रविशारदाः ॥ ५ ॥
समं तत्र मया प्रोक्तमथार्द्धसममुच्यते ।
यथा श्रीनागराजेन भाषितं सूत्रवृत्तिभिः ॥ ६ ॥

तत्र प्रथमं—

१. पुष्पिताग्रा

यदि रसलघुरेफतो यकारो, विषमपदे परिभाति पन्नगोक्ता[2] ।
सम इह चरणे च नो जजौ रो, गुरुरपि चेज्जयतीह पुष्पिताग्रा ॥ ७ ॥

यथा–

सहचरि ! कथयामि ते रहस्यं, न खलु कदाचन तद्गृहं व्रजेथाः[3] ।
इह विषमविषमा गिरः सखीनां, सकपटचाटुतराः पुरस्सरन्ति ॥ ८ ॥

यथा वा–

प्रसरति पुरतः सरोजमाला, तदनु मदान्धमधुव्रतस्य पङ्क्तिः ।
तदनु धृतशरासनो मनोभू[4]स्तव हरिणाक्षि विलोकनं तु पश्चात् ॥ ९ ॥

इति वा–

दिशि दिशि परिहासगूढगर्भाः, पिशुनगिरो गुरुगञ्जनं च तादृक् ।
सहचरि ! हरये निवेदनीयं, भवदनुरोधवशादयं विपाकः ॥ १० ॥

---

१. कोष्ठगोंऽशः क. प्रतौ नास्ति । २. ख. पन्नगोक्तः । ३. ख. व्रजेथाम् । ४ क. मनोहर ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अथ च–

इह खलु विषमः पुरा कृतानां, विलसति जन्तुषु कर्मणां विपाकः ।
क्व जनकतनया क्व रामजाया, क्व च रजनीचरसङ्गमापवादः ॥ ११ ॥

इत्यादि महाकविप्रबन्धेषु शतशः प्रत्युदाहरणानि[1] ।

इति पुष्पिताग्रा १.

२. अथ उपचित्रम्

विषमे यदि सौ सलगाः प्रिये ! भौ च समे भगगाः सरसाश्चेत् ।
फणिना भणितं गणितं गणै-र्वृत्तमिदं कथितं ह्युपचित्रम् ॥ १२ ॥

यथा–

नवनीतकरं करुणाकरं, कालियगञ्जनमञ्जनवर्णम् ।
भवमोचन-पङ्कजलोचनं, चिन्तय चेतसि हे सखि ! कृष्णम् ॥ १३ ॥

इति उपचित्रम् २.

३. अथ वेगवती

विषमे यदि सावशनिर्गौ, भत्रितयं समके गुरुयुग्मम् ।
कविना फणिना भणितैवं, वेदय चेतसि वेगवतीयम् ॥ १४ ॥

यथा–

सखि ! नन्दसुतं कमनीयं, यादववंशधुरन्धरमीशम् ।
सनकादिमुनीन्द्रविचिन्त्यं, कुञ्जगतं परिशीलय कृष्णम् ॥ १५ ॥

इति वेगवती ३.

४. अथ हरिणप्लुता

विषमे यदि सौ सगणो लगौ, सखि ! समे नगणे भभराः कृताः ।
कविना फणिना परिजल्पिता, सुमुखि ! सा गदिता हरिणप्लुता ॥ १६ ॥

यथा–

नवनीरदवृत्तमनोहरः[2], कनकपीतपटद्युतिसुन्दरः ।
अलिके तिलकीकृतचन्दन-स्तव तनोतु मुदं मधुसूदनः ॥ १७ ॥

इति हरिणप्लुता ४.

५. अथ अपरवक्त्रम्

विषम इह पदे तु नौ रलौ, गुरुरपि चेद् घटितः सुमध्यमे ।
सम इह चरणे नजौ जरौ, तदपरवक्त्रमिदं भवेन्न किम् ॥ १८ ॥

---

१. ख. समुदाहरणानि । २. ख. वृत्तमनोहरः ।

CC-0. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा—

स्फुटमधुरवचः प्रपञ्चनैः, कलितमिदं हृदयं तदैव ते ।
अलमलमधुना तवाननं, न खलु कदापि विलोकयाम्यहम् ॥ १९ ॥

यथा वा, हर्षचरिते [प्रथमोच्छ्वासे]—

तरलयसि दृशं किमुत्सुका-मविरतवासविलासलालसे[1] ।
अवतर कलहंसि वापिकां, पुनरपि यास्यसि पङ्कजालयम् ॥ २० ॥

इति प्रत्युदाहरणम् ।

इति अपरवक्त्रम् ५.

६. अथ सुन्दरी

विषमे यदि सौ लगौ लगौ, समके स्भौ रलगा भवन्ति चेत् ।
घनपीनपयोधरे ! तदा, कथिता नागनृपेण सुन्दरी ॥ २१ ॥

यथा-

अयि मानिनि ! मानकारणं, ननु तस्मिन्न विलोकयाम्यहम् ।
कुरु सम्प्रति मे वचोऽमृतं, प्रियगेहं व्रज किं विडम्बनैः ॥ २२ ॥

यथा वा-

अथ तस्य विवाहकौतुकं, ललितं बिभ्रत एव पार्थिवः ।
वसुधामपि हस्तगामिनी-मकरोदिन्दुमतीमिवापराम् ॥ २३ ॥*[1]

इति रघुवंशादिमहाकाव्येषु शतशः प्रत्युदाहरणानि[2] ।

इति सुन्दरी ६.

७. अथ भद्रविराट्

यस्मिन् विषमे तजौ रगौ चेद्, मः सो जः समके गुरू भवेताम् ।
तद्वै कथितं कवीन्द्रवर्यै—स्तज्ज्ञैर्भद्रविराडिति प्रसिद्धम् ॥ २४ ॥

यथा-

यद्वेणुविरावमोहितास्ता, गोप्यः स्वं वसनं च न स्मरेयुः[3] ।
द्वार्येव[4] निवारिता जनोघै-र्ध्यातव्ये कृतनिश्चया बभूवुः ॥ २५ ॥

इति भद्रविराट् ७

---

१. मकलुषमानसशासलालिते 'हर्षचरिते' । २. ख. समुदाहरणानि । ३. ख. स्मरन्ति ४. क. द्राप्येव ।

*टिप्पणी—१ रघुवंश, स० ८, पद्य १

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

८. अथ केतुमती

विषमे सजौ सखि ! सगौ चेद्, भः समके रनौ गुरुयुगाभ्याम् ।
मिलितौ यदैव भवतस्तौ, केतुमतीति सा भवति वृत्तम् ॥ २६ ॥

यथा–

यमुनाविहारकलनाभिः, कालियमौलिरत्ननटनाभिः ।
विदितो जनेन परमेशः, केवलभक्तितस्तु भुवनेशः ॥ २७ ॥

इति केतुमती ८.

९. अथ वाङ्मती

यद्ययुग्मयोः रजौ रजौ कृतौ च, जरौ जरौ च युग्मयोर्गसंगतौ वा ।
हारशङ्खकक्रमैरयुग्मतश्च, समानयोर्विपर्ययेण वाङ्मतीयम् ॥ २८ ॥

यथा–

काञ्चनाभ-वाससोपलक्षितश्च, मयूरचन्द्रिकाचयैर्विराजितश्च ।
नन्दनन्दनः पुनातु सन्ततं च, मनोविनोदनः प्रकामभासुरश्च ॥ २९ ॥

अत्र समयोः पादयोः पादान्तगुरुत्वमवधेयम् ।

इति वाङ्मती ९.

१०. अथ षट्पदावली

वाङ्मत्येव हि सुकले, विपरीता भवति चेद् बाले ! ।
कथयति पिङ्गलनागस्तामेतां षट्पदावलीं रुचिराम् ॥ ३० ॥

ऊह्यमुदाहरणम् ।

इति षट्पदावली १०.

इत्यर्द्धसमवृत्तानि कथितान्यत्र कानिचित् ।
सुधीभिरूह्यान्यान्यानि प्रस्तार्य स्वमनीषया ॥ ३१ ॥

इति श्रीवृत्तमौक्तिके [चतुर्थं] अर्द्धसमप्रकरणम् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पञ्चमं विषमवृत्त-प्रकरणम्

अथ विषमवृत्तानि

भिन्नचिह्नचतुष्पादमुद्दिष्टं विषमं मया ।
अथेदानीं तदेवात्र सोदाहरणमुच्यते ॥ १ ॥

तत्र प्रथमम्—

१. उद्गता

सजसा लघुः प्रथमतस्तु, नसजगुरुकाणि युग्मतः ।
स्युस्तदनु भनभा गयुताः, सजसा जगौ चरमतरपदोद्गता ॥ २ ॥

यथा—

विललास गोपरमणीषु, तरणितनयातटे हरिः ।
वंशमधरदले कलयन्, वनिताजनेन निभृतं निरीक्षितः ॥ ३ ॥

इति उद्गता १.

अथोद्गताभेदः

सजसा लघुः प्रथमतस्तु, नसजगुरुकाणि युग्मतः ।
स्युस्तदनु भनलजा गयुताः, सजसा जगौ च खलु तुर्यतो भवेत् ॥ ४ ॥

तृतीयचरणे वा स्याद् भेदः समुपलभ्यते । ततो **भारवि-माघादौ** उद्गते-यमुदीरिता । यथा—

अथ वासवस्य वचनेन, रुचिरवदनस्त्रिलोचनम् ।
क्लान्तिरहितमभिराधयितुं, विधिवत्तपांसि विदधे धनञ्जयः ॥ ५ ॥*[1]

यथा वा, माघे[*2]

तव धर्मराज इति नाम, सदसि यदपष्ठु पठ्यते ।
भौमदिनमभिदधत्यथवा, भृशमप्रशस्तमपि मङ्गलं जनाः ॥ ६ ॥

इति उद्गताभेदः १.

२. अथ सौरभम्

प्रथमं द्वितीयमथ तुर्य-मिह सममुशन्ति पण्डिताः ।
सौरभं यदि तृतीयपदे, विहगो नभौ गुरुरपीह दृश्यते ॥ ७ ॥

***टिप्पणी—१.** किरातार्जुनीयम्, स० ११, पद्य १ ।
,, २. शिशुपालवधम्, स० १५, पद्य १७ ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

यमुनातटे विहरतीह, सरसविपिने मनोहरे ।
रासकेलिरभसेन सदा, व्रजसुन्दरीजनमनोहरो हरिः ॥ ८ ॥

इति सौरभम् २.

३. अथ ललितम्

न-युगं च हस्तयुगलं च, सुमुखि ! चरणे तृतीयके ।
भवति सुकविविदितं ललितं, कथितं तदेव भुवने मनोहरम् ॥ ९ ॥

यथा–

व्रजसुन्दरीसहचरेण[1], मुदितहृदयेन गीयते ।
सुललितमधुरतरं हरिणा, करुणाकरेण सततं मुरारिणा ॥ १० ॥

इति ललितम् ३.

४. अथ भावः

षट्संख्याता हाराः, पादेषु त्रिष्वेवम् ।
अन्ते कान्तं यस्मिन्, भ-त्रय-ग-द्वितयं[2] वद भावम् ॥ ११ ॥

यथा–

राधामाधायैनां, चित्ते बाधां त्यक्त्वा ।
कल्पान्ते यः क्रीडेत्, तं किल चेतसि भावय नित्यम् ॥ १२ ॥

इति भावः ४.

५. अथ वक्त्रम्

कदाचिदर्द्धसमकं, वक्त्रं च विषमं भवेत् ।
द्वयोस्तयोरुपान्तेषु, वृत्तं तदधुनोच्यते ॥ १३ ॥

तत्र वक्त्रम्–

युग्भ्यां वक्त्रं मगौ स्यातां, सागराद् य[3]स्त्वनुष्टुभिः ।
ख्यातं सर्वगणैरेतत्, प्रसिद्धं तद्धलायुधे ॥ १४ ॥

यथा–

मुखाम्भोजं सदा स्मेरं, नेत्रं नीलोत्पलं फुल्लम् ।
गोपिकानां मुरारातेश्चेतोभृङ्गं जहारोच्चैः ॥ १५ ॥

इति वक्त्रम् ५.

---

१. ख. समुदयेन । २. क. भत्रयगद्वितयम । ३. चतुर्थाक्षरादनन्तरं यगणो देय इत्यर्थः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

६. अथ पथ्यावक्त्रम्

अपि च–

युजोश्चतुर्थतो येन (जेन), पथ्यावक्त्रं प्रकीर्तितम् ।
[एवमन्येऽपि भेदास्तु, विज्ञेया गणभेदतः ।। १६ ।।][1]

यथा–

रासकेलिसतृष्णस्य, कृष्णस्य मधुवासरे ।
आसीद् गोपमृगाक्षीणां, पथ्यावक्त्रं मधुश्रुतिः ।। १७ ।।

इति पथ्यावक्त्रम् ६.

एवमन्यान्यपि गणविभेदात् ज्ञेयानि वक्त्रवृत्तानि ।

अथवा–

पञ्चमं लघु सर्वत्र सप्तमं द्विचतुर्थयोः ।
गुरुषष्ठं तु पादानां शेषेष्वनियमो मतः ।। १८ ।।
अतः श्रीकालिदासश्च स्वप्रबन्धे समुज्जगौ ।
तथान्येऽपि कवीन्द्राश्च स्वनिबन्धे बबन्धिरे ।। १९ ।।

यथा–

वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये ।
जगतः पितरौ वन्दे, पार्वतीपरमेश्वरौ ।। २० ।।*[1]

किञ्च–

प्रयोगे प्रायिकं प्राहुः केप्येतद् वक्त्रलक्षणम् ।
लोकेऽनुष्टुबिति ख्यातिस्तस्याष्टाक्षरता कृता ।। २१ ।।
तथा नानापुराणेषु नानागणविभेदतः ।
वृत्तमष्टाक्षरं वक्त्रं, विषमाख्यां प्रयाति हि ।। २२ ।।
एवं तु विषमं वृत्तं दिङ्मात्रमिह कीर्तितम् ।
शेषमाकरतो ज्ञेयं, सुधीभिर्भावनापरैः ।। २३ ।।
पदचतुरूर्द्ध्वं वृत्तं मात्रासमकमेव च ।
उपस्थितप्रचुपित-मथान्यदपि वृत्तकम् ।। २४ ।।
हलायुधे प्रसिद्धत्वादत्र [नात्युप] योगिनः ।
तदग्रन्थगौरवभीत्या च मयका न प्रपञ्चितम्*[2] ।। २५ ।।

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्तिके द्वितीये वृत्तपरिच्छेदे
विषमवृत्तप्रकरणं पञ्चमम् ।

[–] कोष्ठवर्त्यंशो नास्ति क प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ रघुवंश, स० १, प० १

*टिप्पणी—२ पदचतुरूर्द्ध्वादिवृत्तानां लक्षणानि श्रीहलायुधरचित-छन्दःसूत्रटीकानुसारेण संक्षेपेणोद्ध्रियन्ते—

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पदचतुरूर्ध्वम्—प्रथमचरणे अष्टौ वर्णाः, द्वितीयचरणे द्वादशाक्षरवर्णाः, तृतीयचरणे षोडश-वर्णाः, चतुर्थचरणे च विंशतिवर्णाः भवन्ति। अस्मिन् वृत्ते गुरुलघुनियमो नास्ति।

आपीडः— [प्र.च.] लघु ६, गुरु २। [द्वि.च.] लघु १०, गुरु २।
[तृ.च.] लघु १४, गुरु २। [च.च.] लघु १८, गुरु २।

प्रत्यापीडः— [प्र.च.] गुरु २, लघु ६। [द्वि.च.] गुरु २, लघु १०।
[तृ.च.] गुरु २, लघु १४। [च.च.] गुरु २, लघु १८।

प्रत्यापीडः— [प्र.च.] ग २, ल. ४, ग. २। [द्वि.च.] ग. २. ल ८, ग. २।
[तृ.च.] ग २. ल १२, ग. २। [च.च.] ग २, ल. १६, ग २।

मञ्जरी— [प्र.च.] १२ वर्णाः। [द्वि. च.] ८ वर्णाः।
[तृ.च.] १६ वर्णाः। [च.च.] २० वर्णाः।

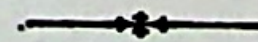
लवली— [प्र.च.] १६ वर्णाः। [द्वि.च.] १२ वर्णाः।
[तृ.च.] ८ वर्णाः। [च.च.] २० वर्णाः।

अमृतधारा—[प्र.च.] २० वर्णाः। [द्वि.च.] १६ वर्णाः।
[तृ.च.] १२ वर्णाः। [च.च.] ८ वर्णाः।

उपस्थितप्रचुपितम्— [प्र.च.] म.स.ज.भ.ग.ग। [द्वि.च.] स.न.ज.र.ग.
[तृ.च.] न.न.स. [च.च.] न.न.न.ज.य.

वर्द्धमानम्— [प्र.च.] म.स.ज.भ.ग.ग. [द्वि.च.] स.न.ज.र.ग.
[तृ.च.] न.न.स.न.न.स. [च.च.] न.न.न.ज.य.

शुद्धविराट्वृषभः— [प्र.च.] म.स.ज भ.ग.ग. [द्वि.च.] स.न.ज.र ग.
[तृ.च.] त.ज.र. [च.च.] न.न.न.ज.य.



CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

षष्टं वैतालीय-प्रकरणम्

१. अथ वैतालीयम्

विषमे रससंख्यकाः कलाः, समकेऽष्टौ न कलाः पृथक्कृताः ।
न समात्र पराश्रया कला, वैतालीयेऽन्त्ये र-दण्ड-गाः ॥ १ ॥
विषमे रसमात्राः स्युः समे चाष्टौ कलास्तथा ।
वैतालीयं भवेद् वृत्तं[1] तयोरन्ते रलौ गुरुः ॥ २ ॥

यथा–

तत्र तन्वि ! कटाक्षवीक्षितैः, प्रचरद्भिः श्रवणान्तगोचरैः ।
विशिखैरिव तीक्ष्णकोटिभिः, प्रहृतः प्राणिति दुष्करं नरः ॥ ३ ॥

अस्य च भूयांसि सप्रपञ्चमुदाहरणप्रत्युदाहरणानि पिङ्गलवृत्तौ सन्ति, तानि तत एवावधेयानि । [नैषधकाव्ये च द्वितीये सर्गे सन्ति तानि तत एवावधेयानि][2]

इति वैतालीयम् १.

२. अथ औपच्छन्दसकम्

तत्रैवान्तेऽधिके गुरौ स्या-दौपच्छन्दसकं कवीन्द्रहृद्यम् ।
फणिभाषितमुत्तमं रसालं, पठनीयं कविपण्डितैरुदारैः ॥ ४ ॥

यथा–

परमर्मनिरीक्षणानुरक्तं, स्वयमत्यन्तनिगूढचित्तवृत्तिम् ।
अनवस्थितमर्थलुब्धमाराद्, विपरीतं विजहीहि मित्रमेवम् ॥ ५ ॥

इति औपच्छन्दसकं वैतालीयम् २.

३. अथ आपातलिका

आपातलिका कथितेयं, भाद् गुरुकावथ पूर्ववदन्यत् ॥ ६ ॥

यथा–

पिङ्गलकेशी कपिलाक्षी, वाचा या विकटोन्नतदन्ती ।
आपातलिका पुनरेषा, नृपतिकुलेऽपि न भाग्यमुपैति ॥ ७ ॥

इति आपातलिका ३.

४. अथ नलिनम्

विषमपदैः स्यान्नलिनाख्यम् ॥ ८ ॥

---

१. क. वृत्तो । २. कोष्ठगतोंशो: नास्ति क. प्रतौ ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

[व्या०] विषमैरेव चतुर्भिरापातलिकापदैर्नलिनाख्यं वैतालीयमित्यर्थः ।
यथा–

कुञ्चितकेशी नलिनाक्षी, स्थूलनितम्बा रुचिकान्ता ।
पद्ममुहस्ता रुचिरौष्ठी, गोष्ठीरसिका परिणेया ।। ६ ।।

इति नलिनाख्यं वैतालीयम्

५. अथापरं नलिनम्

समचरणैरपि चान्यदुदीते ।। १० ।।

[व्या०] समैरेव चतुर्भिरापातलिकापादैरपरं नलिनं भवतीत्यर्थः ।
यथा–

पङ्कजलोचनमम्बुददेहं, बालविनोद-सुनन्दितगेहम् ।
पद्मजशम्भुकृतस्तुतिमीशं, चिन्तय कृष्णमपारमनीषम् ।। ११ ।।

इति अपरं नलिनाख्यं वैतालीयम् ५.

६. अथ दक्षिणान्तिका वैतालीयम्

द्वितीयलस्यान्त्ययोगतः, पदेषु सा स्याद् दक्षिणान्तिका ।। १२ ।।

[व्या०] द्वितीयलघोरन्त्येन–तृतीयेन योगतश्चतुर्षु पादेषु यत्र सा दक्षिणान्तिका इत्यर्थः । अतएव शुद्धवैतालीयस्य विषमपदैर्दक्षिणान्तिका, समपदैरुत्तरान्तिका इति शम्भुरप्याह ।
यथा–

ववौ मरुद्दक्षिणान्तिको, वियोगिनीप्राणहारकः ।
प्रकम्पिताशोकचम्पको, वसन्तजोऽनङ्गबोधकः ।। १३ ।।

यथा वा, ममप्रत्युदाहरणम्[1]—

नमोऽस्तु ते रुक्मिणीपते, जगत्पते श्रीपते हरे ।
भवाम्बुधेस्तारयाशु मां, विधेहि सन्मतिं शुभाम् ।। १४ ।।

इति दक्षिणान्तिका वैतालीयम् ६.

७. अथ उत्तरान्तिका वैतालीयम्

शुद्धवैतालीयस्य समपदैरुत्तरान्तिका ।। १५ ।
यथा–

सहसा सादितकंसभूपतिं, धृतगोवर्द्धनशैलमुद्धुरम् ।
यमुनाकुञ्जविहारिणं हरिं, यदुवीरं कलयाम्यहर्निशम् ।। १६ ।।

इति उत्तरान्तिका वैतालीयम् ७.

८. अथ प्राच्यवृत्तिः

तुर्यस्य तु शेषयोगतः, प्राच्यवृत्तिरिह युग्मपादयोः ।। १७ ।।

---

१. ख. मम(नो)दाहरणम् ।

CC-0. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

[व्या०] [चतुर्थलकारस्य शेषेण–पञ्चमेन योगतः प्राच्यवृत्तिर्नाम वैतालीयं युग्मपादयोः–समपादयोरित्यर्थः ।][1]

यथा– हलायुधे—*[1]

विपुलार्थसुवाचकाक्षराः, कस्य नाम न हरन्ति मानसम् ।
रसभावविशेषपेशलाः, प्राच्यवृत्ति कविकाव्यसम्पदः ।। १८ ।।

यथा वा, सुल्हणे—

स्वगुणैरनुरञ्जितप्रजः, प्राच्यवृत्तिपरिपालने रतः ।
रणभूमिषु भीमविक्रमो, विन्ध्यवर्मनृपतिर्जयत्यसौ ।। १९ ।।

यथा वा, मम[1] प्रत्युदाहरणम्–

कति सन्ति न गोपबालकाः, कामकेलिकलनासुकोविदाः ।
अयि माधव ! एव केवलं, चेतनां ननु[2] परिक्षिणोति मे ।। २० ।।

इति प्राच्यवृत्तिर्नाम वैतालीयम् ८.

९. अथ उदीच्यवृत्तिर्वैतालीयम्

उदीच्यवृत्तिस्त्वयुग्मयोः, भवति तृतीयस्याद्ययोगतः ।। २१ ।।

[व्या०] अयुग्मयोः–प्रथमतृतीययोः पादयोः तृतीयस्य लघोराद्येन–द्वितीयेन योगादुदीच्यवृत्तिर्नाम वैतालीयम् । यथा–

यथा– हलायुधे*[2]

अवाचकमनूर्जिताक्षरं, श्रुतिदुष्टं श्रुतिकष्टमक्रमम् ।
प्रसादरहितं च नेष्यते, कविभिः काव्यमुदीच्यवृत्तिभिः ।। २२ ।।

यथा वा, ममापि उदाहरणम्—

अवञ्चकमनिन्दितं परं, परमेशं परमार्थपेशलम् ।
अनाकलितवैभवं विभुं, जगतां वन्द्यमनारतं भजे ।। २३ ।।

इति उदीच्यवृत्तिर्वैतालीयम् ९.

१०. अथ प्रवृत्तकं वैतालीयम्

प्रवृत्तकं पद्भिरेतयोः ।। २४ ।।

[व्या०] उदीच्यवृत्ति-प्राच्यवृत्त्योर्युगपत्प्रवृत्तयोः पदैः प्रवृत्तकं, युक्पादे पञ्चमेन पूर्वं संयुज्यते, अयुक्पादे तृतीयेन पूर्वमित्यर्थः ।

---

१. [–]कोष्ठगतांशस्य स्थाने 'समयोरित्यर्थः' इत्यंश एवास्ति क. प्रतौ ।

१. ख. ममैवोदाहरणम् । २. ख. न तु ।

*टिप्पणी—१ छन्दःशास्त्र-हलायुधटीका अ० ४ का० ३७ उदाहरणम्
२ ,, ,, ,, ६ ,, ३८ ,,

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा, हलायुधे*[1]—

जयो भरतवंशस्य[1], श्रूयतां श्रुतमनोरसायनम् ।
पवित्रमधिकं शुभोदयं, व्यासवक्त्रकथितं प्रवृत्तकम् ।। २५ ।।

प्रत्युदाहरणम्—

हरिं भजत रे जनाः परं, श्रूयतां परमधर्म्ममुत्तमम् ।
न काल इह कालयत्यसौ, सर्वघस्मरघनाघनद्युतिः[2] ।। २६ ।।

इति प्रवृत्तकं वैतालीयम् १०.

११. अथ अपरान्तिका

अस्य युग्मरचिताऽपरान्तिका ।। २७ ।।

[व्या.] अस्य–प्रवृत्तकस्य समपदकृता–समपादलक्षणयुक्तैश्चतुर्भिः पादैः रचिताऽपरान्तिका ।

यथा, हलायुधे*[2]—

स्थिरविलासनतमौक्तिपेशला[3], [कमलकोमला][4]ङ्गी मृगेक्षणा ।
हरति कस्य हृदयं न कामिनः, सुरतकेलिकुशलाऽपरान्तिका ।। २८ ।।

यथा वा, सुल्हणे—

तुङ्गपीवरघनस्तनालसा, चारुकुण्डलवती मृगेक्षणा ।
पूर्णचन्द्रवदनाऽपरान्तिका, चित्तमुन्मदयतीयमङ्गना ।। २९ ।।

यथा वा, मम प्रत्युदाहरणम्—

चारुकुण्डलयुगेन मण्डितो, बर्हिबर्हकृतमौलिशेखरः ।
ब्रूत भोः पनसपिप्पलादयो, नन्दसूनुरिह नावलोकितः ।। ३० ।।

इति अपरान्तिका ११.

१२. अथ चारुहासिनी

अयुक्कृता चारुहासिनी ।। ३१ ।।

[व्या०] प्रवृतकस्यैव विषमपादलक्षणयुक्तैश्चतुर्भिः पादैर्विरचिता चारुहासिनी नाम वैतालीयम् । किं तल्लक्षणम् ? चतुर्दशमात्रत्वं तृतीयेन च द्वितीययोगः ।

---

१. इदं भरतभूभृताम् । २. ख. द्युतिः । ३. कावली 'हलायुधे' । ४. कोष्ठगतोंऽशो नास्ति क. प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ छन्दःशास्त्रहलायुधटीका अ० ४, का. ३९ उदाहरणम् ।
२ „ „ „ „ ४१ उदाहरणम् ।

T CC-0, RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा, हलायुधः प्राह*[१]—

मनाक्प्रसृतदन्तदीधितिः, स्मरोल्लसितगण्डमण्डला ।
कटाक्षललिता च कामिनी, मनो हरति चारुहासिनी ॥ ३२ ॥

यथा वा, वृत्तरत्नाकरटीकायां सुल्हणः प्रोवाच--

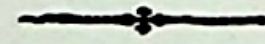
न कस्य चेतः समन्मथं, करोति सा सुन्दराकृतिः ।
विचित्रवाक्योक्तिपण्डिता, विलासिनी चारुहासिनी ॥ ३३ ॥

यथा वा, मम प्रत्युदाहरणम्--

सुवृत्तमुक्तावलीधरं, प्रतप्तचामीकराम्बरम् ।
मयूरपिच्छैर्विराजितं, नमाम्यहं नन्दनन्दनम् ॥ ३४ ॥

इति चारुहासिनी वैतालीयकम् १२.

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वैतालीयप्रकरणं षष्ठम् ।



*टिप्पणी—१ छन्दःशास्त्रहलायुधटीकायां अ० ४, कारिकायाः ४० उदाहरणम्

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

सप्तमं यतिनिरूपण—प्रकरणम्

अथाभिधीयते चात्र यतिर्विच्छेदसंज्ञिता ।
विरामधृतिविश्रामावसानपदरूपिणी ॥ १ ॥
समुद्रेन्द्रियभूतेन्द्ररसपक्षदिगादयः ।
साकांक्षत्वादिमे शब्दा यत्या सम्बन्धमाश्रिताः ॥ २ ॥
तस्यास्तु लक्षणं सम्यगुच्यते **वृत्तमौक्तिके** ।
आलोच्य मूलशास्त्राणि सोदाहरणमञ्जसा ॥ ३ ॥
यतिः सर्वत्र पादान्ते श्लोकस्यार्द्धे विशेषतः ।
समुद्रादिपदान्ते च व्यक्ताव्यक्तविभक्तिके ॥ ४ ॥
क्वचित्तु पदमध्येऽपि समुद्रादौ तथैव च ।
अत्र पूर्वापरौ भागौ न स्यातामेकवर्णकौ ॥ ५ ॥
पूर्वान्तवत् स्वरः सन्धौ क्वचिदेव परादिवत् ।
द्रष्टव्यो यतिचिन्तायां यणादेशः परादिवत् ॥ ६ ॥
नित्यं प्राक्पदसम्बन्धाश्चादयः प्राक्पदान्तवत् ।
परेण नित्यसम्बन्धाः प्रादयश्च परादिवत् ॥ ७ ॥

'यतिः सर्वत्रपादान्ते' इत्यादि कारिकाचतुष्टयं यथास्थानं व्याकरिष्यामः । तत्र–यतिः सर्वत्र सर्ववृत्तेषु इत्यर्थः, पादान्त एव भवति । यथा–

[विशुद्धज्ञानदेहाय, शिवाय गुरवे नमः । इत्यादि ।

तस्यैव प्रत्युदाहरणं यथा][1]—

नमस्तस्मै महादेवाय शशाङ्कार्द्धमौलये । इति ।

'श्लोकस्याऽर्द्धे विशेषतः' इत्यत्र सन्धिकार्याभावः, स्पष्टविभक्तिकत्वं च विशेषतो यत्र भवति । तद्यथा—

नमस्यामि सदोद्भूतमिन्धनीभूतमन्मथम् ।
ईश्वराख्यं परं ज्योतिरज्ञानतिमिरापहम् ॥

अत्रेश्वरमित्यस्य मकारेण संयोगो न कर्त्तव्यः । समासे तस्यैव प्रत्युदाहरणं । यथा–

सुरासुरशिरोरत्नस्फुरत्किरणमञ्जरी–
पिञ्जरीकृतपादाब्जद्वन्द्वं वन्दामहे शिवम् ॥ इति ।

'समुद्रादिपदान्ते च व्यक्ताव्यक्तविभक्तिके ।' तत्र स्वतन्त्रव्यक्तविभक्तिकं समासान्तर्भूतमव्यक्तविभक्तिकम् । यथा–

---

१. [-] क. प्रतौ नास्ति कोष्ठगतोंऽशः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यक्षश्चक्रे जनकतनयास्नानपुण्योदकेषु । इत्यादि

व्यक्ताव्यक्तविभक्तिक इति । यतिः सर्वत्रपादान्ते इत्यनेन सम्बध्यते ।

यथा–

वशीकृतजगत्कालं कण्ठेकालं नमाम्यहम् ।
महाकालं कलाशेषं शशिलेखाशिखामणिम् ।।

अपि च–

नमस्तुङ्गशिरश्चुम्बिचन्द्रचामरचारवे ।
त्रैलोक्यनगरारम्भमूलस्तम्भाय शम्भवे ।।

क्वचित्तु पदमध्येऽपि समुद्रादौ यतिर्भवेत् ।
यदि पूर्वापरौ भागौ न स्यातामेकवर्णकौ ।। ५ ।।

इति । चतुरक्षरा यतिर्भवति । यथा–

पर्याप्तं तप्तचामीकरकटकतटे श्लिष्टशीतेतरांशौ ।

इत्यादि । यथा वा–

उन्मीलन्नीलपङ्केरुहरुचिररुचो देवदेवस्य विष्णोः ।

इत्यादि । तथा–

कूजत्कोयष्टिकोलाहलमुखरभुवः प्रान्तकूलान्तदेशाः ।

इत्यादि । तथा–

वैरिञ्चानां[1] तथोच्चारितरुचिरऋचां चाननानां चतुर्णाम् ।

इत्यादि ।

समुद्रादौ इति किम् ? पादमध्येऽपि यतिः । पदान्ते तु माऽभूत् । तद्यथा–

प्रणमत भवबन्धक्लेशनाशाय नारा-
यणचरणसरोजद्वन्द्वमानन्दहेतुम् ।

इत्यादि ।

पूर्वोत्तरभागयोरकाराक्षरत्वे तु पदमध्ये यतिर्दुष्यति ।

यथा–

एतस्या गण्डमण्डल-ममलं गाहते चन्द्रकक्षाम्[2] ।

इत्यादि । यथा–

एतस्या राजति मुखमिदं पूर्णचन्द्रप्रकाशम् ।

इत्यादि । तथा–

सुरासुरशिरोनिघृष्टचरणारविन्दः शिवः ।

इत्यादि

---

१. क. वैराञ्चिना ।   २. ख. गाहतेन्द्रकक्षाम् ।

T	CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पूर्वान्तवत् स्वरः सन्धौ क्वचिदेव परादिवत् । अस्यायमर्थः—योऽयं पूर्वपरयोरेकादेशः स्वरः सन्धौ विधीयते । स क्वचित् पूर्वस्यान्तवद् भवति, क्वचित् परस्यादिवद् भवति । तथा च पाणिनिः स्मरति–'अन्तादिवच्च' [पा०सू० ६।१।८५] इति । तत्र पूर्वान्तवद्भावे यथा स्यात् । यथा–

स्यादस्थानोपगतयमुनासङ्गमे चाभिरामा[1] ।

इत्यादि । तथा–

जम्भारातीभकुम्भोद्भवमिव दधतः सान्द्रसिन्दूररेणुम् ।

इत्यादि । तथा -

दिक्कालाद्यनवच्छिन्नानन्तचिन्मात्रमूर्त्तये ।
स्वानुभूत्येकमानाय नमः शान्ताय तेजसे ॥

इत्यादि ।

परादिवद्भावे यथा–

स्कन्धं विन्ध्याद्रिमूर्द्धा निकषति [महिषस्याहितोऽसूनहार्षीत् ।

इत्यादि । तथा–

शूलं शूलं तु गाढं प्रहर हर हृषीकेश][2] केशोऽपि वक्त्र—
श्चक्रेणाऽकारि किं ते ।

इत्यादि ।

अत्र हि स्वरूपस्य परादिवद्भावे व्यञ्जनमपि तदभक्तत्वात् तदादिवद् भवति । 'यदि पूर्वापरौ भागौ न स्यातामेकवर्णकौ' इत्यन्तादिवद्भावे विधावपि सम्बध्यते । तेन–

अस्या वक्त्राब्जमवजितपूर्णेन्दुशोभं विभाति ।

इत्येवंविधा यति[नं]भवति । यथा वा स्वरः सन्धौ–

राकाचन्द्रादधिकमबलावक्त्रचन्द्रं विभाति ।

तथा शेषेऽपि, यथा–

रामातरुणिमोद्दामानङ्गरङ्गप्रसङ्गिनी ।

इत्यादि[3] उन्नेयम् । 'यणादेशः परादिवत्' भवतीति शेषः । यथा—

विततजलतुषारास्वादशुभ्रांशुपूर्णा-
स्वविरलपदमालां श्यामलामुल्लिखन्तः ।

इत्यादि ।

'नित्यं प्राक्पदसम्बन्धाश्चादयः प्राक्पदान्तवत् ।' तेभ्यः पूर्वा यतिर्न कर्त्तव्या इत्यर्थः ।

---

१. ख. नाभिरामा । २. कोष्ठगतोंऽशः ख. प्रतौ नास्ति । ३. ख. इत्याद्यन्त्यवद् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा

स्वादु स्वच्छं सलिलमपि च प्रीतये कस्य न स्यात् ।

इत्यादि ।

नित्यं प्राक्पदसम्बन्धा इति किम् ? अन्येषां पूर्वपदान्तवद्भावो माऽभूत् । तद्यथा–

मन्दायन्ते न खलु सुहृदामभ्युपेतार्थकृत्याः ।

इत्यादि ।

'परेण नित्यसम्बन्धः प्रादयश्च परादिवत् ।' तेभ्यः परा यतिर्न भवतीत्यर्थः । तद्यथा–

दुःखं मे प्रक्षिपति हृदये दुस्सहस्तद्वियोगः ।

इत्यादि ।

'परेण नित्यसम्बन्धा' इत्यादि किम् ? कर्मप्रवचनीयसंज्ञकेभ्यः प्रादिभ्यः परापि यतिर्यथा स्यादिति । तच्च यथा–

प्रियं प्रति स्फुरत्पादे मन्दायन्ते न खल्विति ।

श्रेयांसि बहुविघ्नानि भवन्ति महतामपि ।

इत्यादि ।

अयं तु चादीनां प्रादीनां चैकाक्षराणामनेकाक्षराणां वा पादांते यतावादिवद्भाव इष्यते, न तु अनेकाक्षराणां पादमध्ये यतौ । तत्र हि पदमध्येपि च चामीकरादिष्विव यतेरभ्यनुज्ञातत्वात् । तत्र चादीनां यथा–

प्रत्यादेशादपि च मधुनो विस्मृतभ्रूविलासम् ।

इत्यादि ।

प्रादीनामपि, यथा–

दूरारूढः प्रमोदं हसितमिव तथा दृष्टमारात् सखीभिः ।

इत्यादि ।

एवं माधुर्यसंपत्तिनिमित्तं यतिबन्धनम्[1] ।
न विना यतिसौन्दर्यैः काव्यं भव्यतरं भवेत् ।। ८ ।।
भरतादिमुनीन्द्रैरप्येवमेवाभिधीयते ।
तथाऽन्येपि कवीन्द्रास्तु यतिं बध्नन्त्यनुत्तमाम् ।। ९ ।।

अन्यैरप्युक्तम्—

एवं यथा यथोद्वेगः सुधियां नोपजायते ।
तथा तथा मधुरतानिमित्तं यतिरिष्यते ।। १० ।।

इति । किञ्च—

पिङ्गले जयदेवश्च संस्कृते यतिमिच्छतः ।
श्वेतमाण्डव्य[2]मुख्यैस्तु मुनिभिर्नानुमन्यते ।। ११ ।।

---

१. ख. यतिसम्बन्धनम् । २. ख. श्वेतमाण्ढव्य.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तेन संस्कृते यतिरक्षायां गुणः । यतिभङ्गेन दोषोऽपीति तेषामाशयः ।

अतएव मुरारिः*[1]—

याच्ञादैत्यपरांचि यस्य कलहायन्ते मिथस्त्वं वृणु,
त्वं वृण्वित्यभितो मुखानि स दशग्रीवः कथं वर्ण्यताम् ।।

इत्यादि ।

जयदेवोऽपि[2]*–

भावं शृङ्गारसारस्वतमयजयदेवस्य विष्वग् वचांसि ।

इति । एवमन्येऽपि–

कोष्ठीकृत्य जगद्धनं कति वराटीभिर्मुदं यास्यति ।

इत्यादि, महाकवीनां स्वरसादिति दिक् । अपि च—

[3]यतिभङ्गो नामधातुभागभेदे भवेद् यथा ।
पुनातु नरकारिश्चक्रभूषितकराम्बुजः ।। १२ ।।

दिविषद्वृन्दवन्द्यं वन्दे गोविन्दपदद्वयम् ।
स्वरसन्धौ तु न श्रीशोऽस्तु भूत्यै भवतो यथा ।। १३ ।।

न स्याद्विभक्तिभेदे भात्येष राजेति कुत्रचित् ।
क्वचित्तु स्याद् यथा देवाय नमश्चन्द्रमौलये ।। १४ ।।

चादयो न प्रयोक्तव्या विच्छेदात् परतो यथा ।
नमः कृष्णाय देवाय च दानवविनाशिने ।। १५ ।।

---

*टिप्पणी—१. 'संतुष्टे तिसृणां पुरामपि रिपौ कण्डूलदोर्मण्डली-
क्रीडाकृत्तपुनःप्ररूढशिरसो वीरस्य लिप्सोर्वरम् ।
याच्ञादैत्यपराञ्चि यस्य कलहायन्ते मिथस्त्वं वृणु,
त्वां वृण्वित्यभितो मुखानि स दशग्रीवः कथं वर्ण्यताम् ।।
[मुरारिकृत-मनर्घराघवम् अंक–३, प० ४१]

२. 'साध्वी माध्वीकचिन्ता न भवति भवतः शर्करे कर्कशासि,
द्राक्षे द्रक्ष्यन्ति के त्वाममृतमृतमसि क्षीरनीरं रसस्ते ।
माकन्द क्रन्द कान्ताधर धर न तुलां गच्छ यच्छन्ति भावं,
यावच्छृङ्गारसारं शुभमिव जयदेवस्य वैदग्ध्यवाचः ।।
[जयदेवकृत-गीतगोविन्दः–स० १२, प० १२]

३. देवेश्वरकृत-कविकल्पलतायां शब्दस्तबकच्छन्दोऽभ्यासप्रकरणे ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

एकस्वरोपसर्गेण विच्छेदः श्रुतिसौख्यहृत्[१] ।
यथा पिनाकपाणिं प्रणमामि स्मरशाशनम् ॥ १६ ॥

इत्यादि, कविकल्पलतायां वाग्भटनन्दनेन देवेश्वरेणाभ्यधायि ।

छन्दोमञ्जर्यां [१]तु-

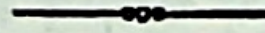
यतिर्जिह्वेष्टविश्रामस्थानं कविभिरुच्यते ।
सा विच्छेदविरामाद्यैः पदैर्वाच्या निजेच्छया ॥ १७ ॥

इति सामान्यलक्षणमुक्तम् । किञ्च—

क्वचिच्छन्दस्यास्ते यतिरभिहिता पूर्वकृतिभिः,
पदान्ते सा शोभां व्रजति पदमध्ये त्यजति च ।
पुनस्तत्रैवासौ स्वरविहितसन्धिः श्रयति तां,
यथा कृष्णः पुष्णात्वतुलमहिमा मां करुणया ॥ १८ ॥

इति छन्दोगोविन्दे[२] गङ्गादासेनाप्युक्तमित्युपरम्यते । इति सर्वमङ्गलम् ।

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्तिके द्वितीयपरिच्छेदे
यतिनिरूपण-प्रकरणं सप्तमम् ।



१. क. ख. सौख्यकृत् ।

*टिप्पणी—१. छन्दोमञ्जरी, प्रथमस्तबक, प० १२, १३ ।

२. 'गोविन्दे' इत्यस्य स्थाने 'मञ्जर्यां' इति पाठ एव समीचीनोऽस्ति गङ्गादासकर्तृत्वात् ।

T　CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अष्टमं गद्यनिरूपण—प्रकरणम्

अथ गद्यानि

वाङ्मयं द्विविधं प्रोक्तं पद्यं गद्यमिति क्रमात् ।
तत्र पद्यं पुरा प्रोक्तं गद्यं सम्प्रति गद्यते ।। १ ।।
असवर्णं सवर्णं च गद्यं तत्रासवर्णकम् ।
त्रिविधं कथितं तच्च कवीन्द्रैर्गद्यवेदिभिः ।। २ ।।
चूर्णकोत्कलिकाप्रायवृत्तगन्धिप्रभेदतः ।

तत्र–

अकठोराक्षरं स्वल्पसमासं चूर्णकं विदुः ।। ३ ।।
तद्धि वैदर्भरीतिस्थं गद्यं हृद्यतरं भवेत् ।
आविद्धं ललितं मुग्धमिति तच्चूर्णकं त्रिधा ।। ४ ।।

तत्र–

दीर्घवृत्ति-कठोरार्णमाविद्धं परिकीर्तितम् ।
स्वल्पवृत्तं कठोरार्णं ललितं कीर्त्यते बुधैः ।। ५ ।।
मुग्धं मृद्वक्षरं प्रोक्तमवृत्त्यत्यल्पवृत्ति वा ।
भवेदुत्कलिकाप्रायं दीर्घवृत्त्युत्कटाक्षरम् ।। ६ ।।
वृत्त्येक[1]देशसम्बद्धं वृत्तगन्धि पुनः स्मृतम् ।
अथात्र क्रमतश्चैषामुदाहरणमुच्यते ।। ७ ।।

तत्र प्रथमं यथा–

१. शुद्धचूर्णकम्

स हि खलु त्रयाणामेव जगतां गतिः परमपुरुषः पुरुषोत्तमो दृप्तसमस्तदैत्यदानवभरेण भङ्गुराङ्गीमिमामवनिमवलोक्य करुणरसामृतपरिपूर्णार्द्रहृदयस्तथा भुवो भारं अवतारयितुं रामकृष्णस्वरूपेण यदुकुलेऽवततार । यः प्रसङ्गेनापि स्मृतोऽभ्यर्चितः प्रणतो वा गृहीतनामा पुंसः संसारसागरपारमवलोकयति ।

इति शुद्धचूर्णकम् १.

१[१]. अथ आविद्धं चूर्णकम्

यथा–

दलदलि[2]सहकारमञ्जरीविगलन्मकरन्दबिन्दुसन्दोहसन्दानितमन्दानिलवीज्यमानदशदिगाभोगसुरभिसमयः समुपाजगाम । इत्यादि ।

इति आविद्धं चूर्णकम् १[१].

---

१. ख. वृत्तैकदेश । २. ख. दरदलित ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१[२]. अथ ललितं चूर्णकम्

यथा–

सदाभिराम नाभिजितकाम रामणीयकधाम माधुर्यसौन्दर्यशौर्यादिगुणग्रामाभिराम भक्तजनपरिपूरितकाम सकललोकविश्रामधाम वामदेवाभिनन्द्यपौरुष राम जय जय ।

इत्यादि ।

इति ललितं चूर्णकम् १[२].

मुग्धमपि द्विविधम् । अवृत्ति-अत्यल्पवृत्ति चेति । तत्र—

१[३]. अवृत्तिमुग्धं चूर्णकम्

यथा–

यत्र च नायिकानां नयनैः कमलमयमिव, वदनैः परिपूर्णचन्द्रमण्डलमयमिव, हस्तैः मृणालमयमिव, जघनैः[1] कदलीस्तम्भमयमिव विराजितं भवनकुलम् ।

इत्यादि ।

इत्यवृत्तिमुग्धं चूर्णकम् १[३].

१[४]. अथ अत्यल्पवृत्तिमुग्धं चूर्णकम्

यथा–

कमलमिव चन्द्रबिम्बमिव मुखं, मृणालमिव कामपाशमिव भुजयुगलं, मीनवृन्दमिव खञ्जरीटयुगमिव नीलोत्पलमिव एणनयनमिव नयनयुगलं, कोकयुग्ममिव सिन्दूरसमूहकमिव पुष्पगुच्छमिव कनककलशयुगलमिव वक्षोजयुगलम् ।

इत्यादि ।

इत्यल्पवृत्तिमुग्धं चूर्णकमिदम् १[४].

२. अथोत्कलिकाप्रायम्

यथा–

सङ्ग्रामसीमकण्डूलदोर्दण्डकुण्डलितकोदण्ड[2]निर्गलितकाण्डप्रचण्डाघातखण्डितारातिवृन्दनरपतिसीमन्तिनीनयनारविन्दाविरलविगलदम्बुनिकरकीर्णसप्तार्णवान्तभ्रमत्कमनीयकीर्त्तिहंसः, त्रिजगत्कामिनीकर्णावतंसानन्तसामन्तसन्तानशिरोमुकुटरत्नरागद्विगुणितांघ्रिनखमयूखानवरतकलधौतदानसम्मानसन्तोषिताशेषयाचकचयविकर्णवाक्पीयूषप्रयाणकालकोलाहलसमुच्छल[3]त्पाथोधिपाथःप्लाविताशेषभुवनमण्डलः, भयङ्करभेरीभाङ्कारसम्मर्दसंभ्रान्तखण्डलातिचपलचलच्चारुचतुरचतुरङ्गचमूचक्रचंक्रमणभरभङ्गुरितफणिपतिफणानिकायविश्वविख्यातनिजान्ववायप्रखरतरतुरगखुरपुटोद्भूतधूलीधारान्धकाराकुलितचक्राङ्गनासमूहनीतिनिरस्तसमस्तप्रत्यूहव्यूहप्रतिनृपतिविलासिनीताटङ्कापसारणसावधानचतुर्दशविद्या-

---

१ क. चरणैः २. ख. कोदण्डि । ३. समुल्लसत् ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

निधानदानपथातीतसुरद्रुमकथासमारम्भरम्भादिविपनारीगणोद्गीयमानकमनीय - कीर्त्तिभरभरणीयजनप्रवृद्धकृपापारावारवारणेन्द्रसमानसारसादितारातियुवतिवचो-वर्णदत्तकर्णकर्णवलिदीयमानोपमानमानवतीमानापमानोदनविशारदशारदेन्दुकुला-वदातकीर्त्तिप्रीणिताशेषजनहृदयानुरूपसमरसीमव्यापादितारातिवर्गचक्रवर्त्तिमहा - महोग्रप्रतापमार्त्तण्डसमरविजयी महाराजाधिराजः समाज्ञापयत्यशेषसामन्तगणान्। इत्यादि ।

यथा वा –

प्रणिपातप्रवणप्रधानाशेषसुरासुरादिवृन्दसौन्दर्यप्रकटकिरीटकोटिनिविष्टस्पष्ट-मणिमयूखच्छटाच्छुरितचरणनखचक्रविक्रमोद्दामवामपादाङ्गुष्ठनखरशिखरखण्डित-ब्रह्माण्डभाण्डविवरनिस्सरत्क्षरदमृतकरप्रकरभास्वरसुरवाहिनीप्रवाहपवित्रीकृत - विष्टपत्रयकैटभारे क्रूरतरसंसारापारसागरनानाप्रकारावर्त्तविवर्त्तमानविग्रहं मामनु-गृहाण । इत्यादि ।

इत्युत्कलिकाप्रायं गद्यम् २.

३. अथ वृत्तगन्धि गद्यम् ।

यथा–

समरकण्डूलनिविडभुजदण्डमण्डलीकृतकोदण्डसिञ्जिनीटङ्कारोज्जागरितवैरि-नागरजनसंस्तुतानेकविरुदावलीविराजमानमानोन्नतमहाराजाधिराज जय जय । इत्यादि ।

यथा वा, मालतीमाधवे[1]*—

गतोऽहमवलोकितालतिलकौतुकः[1] कामदेवायतनम् । इत्यादि ।

यथा वा, कादम्बर्याम्—

पातालतालुतलवासिषु दानवेषु । इत्यादि ।

हरद्रवजितमन्मथो गुह इवाप्रतिहतशक्तिः । इत्यादि ।

यथा वा–

जय जय जनार्दन सुकृतिजनमनस्तडागविकस्वरचरणपद्म पद्मनयन पद्मिनी-विनोदराजहंसभास्वरयशःपटलपूरितभुवनकुहर हरकमलासनादिवृन्दारकवृन्दवन्द-नीयपादारविन्द द्वन्द्वनिर्मुक्त[2]योगीन्द्रहृदयमन्दिराविष्कृतनिरञ्जनज्योतिःस्वरूप नीरूप विश्वरूप स्वर्नाथनाथ जगन्नाथ मामनवधिदुःखव्याकुलं रक्ष रक्ष ।

इति वृत्तगन्धिगद्यम् ३.

---

१. ख. जनितकौतुकः । २. ख. द्वन्द्व द्वन्द्वनिर्मुक्त ।

*टिप्पणी—१ मालतीमाधवम्, प्रथमाङ्के [illegible]

CC-0. JK Sanskrit Academy, Jammu. Digitized by S3 Foundation USA

ग्रन्थान्तरे तु प्रकारान्तरेण चतुर्विधमेव गद्यं तल्लक्षणमुपलक्षितं विचक्षणैः।

यथा–

वृत्तबन्धोज्झितं गद्यं मुक्तकं वृत्तगन्धि च।
भवेदुत्कलिकाप्रायं कुलकं च चतुर्विधम्॥ ८॥

तत्र–

आद्यं समासरहितं वृत्तभागयुतं परम्।
अन्यं दीर्घसमासाढ्यं तुर्यं चाल्पसमासकम्॥ ९॥

तत्र मुक्तकं, यथा—

गुरुर्वचसि[1] पृथुरुरसि। इत्यादि।

वृत्तगन्धि—'समरकण्डूल' इत्यादिनैवोदाहृतम्।

उत्कलिकाप्रायं तु—व्यपगतघनपटलममलजलनिधिसदृशमम्बरतलं विलोक्यते अञ्जनचूर्णपुञ्जश्यामलं शार्वरं तमस्त्यायत। इत्यादि।

यथा वा, प्राकृते चापि—

अणिसविसुमरणि[2] सिदसरविदलिदसमरपरिगदपवरपरबलहणिदमअगलहलहलिदसअलजलणिहिसरिससमत्तुसमूहसंखुहिअवैरिणअरणाअरीणिवह जअ महाराअ चक्कवट्टि करुणाअरा। इत्यादि।

कुलकम्, यथा–

गुणरत्नसागर जगदेकनागर कामिनीमदनजनचित्तरञ्जन करुणापरायणनारायणचरणस्मरणसमासादितपुरुषार्थचतुष्टयप्रार्थनीयगुणगण शरणागतरक्षणविचक्षण जय जय। इत्यादि।

इति श्रीकविशेखरचन्द्रशेखरविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके गद्यनिरूपणमष्टमं प्रकरणम्॥८॥

---

१. ख. गुरुवञ्चसि। २. ख- सुमरःणि।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

नवमं विरुदावली--प्रकरणम्

[प्रथमं कलिकाप्रकरणम्]

अथ विरुदावली

अथाऽत्र विरुदावल्याः सोदाहरणमुच्यते ।
लक्षणं लक्षिताशेष-विशेषपरिकल्पनम् ॥ १ ॥

तत्र–

गद्य-पद्यमयी राजस्तुतिर्विरुदमुच्यते ।
तदावली समाख्याता कविभिर्विरुदावली ॥ २ ॥

किञ्च–

कलिकाभिस्तु कलिता विरुदावलिका मता ।
सवर्णा कलिका प्रोक्ता विरुदाढ्या मनोहरा ॥ ३ ॥

तत्र च

द्वादशार्द्धकलाः कार्याः चतुःषष्टिकलावधि ।
तद्भेदाश्चात्र कथ्यन्ते लक्ष्यलक्षणसंयुताः ॥ ४ ॥
द्विगा रादिश्च मादिश्च नादिर्गलादिरेव च ।
मिश्रा मध्या द्विभङ्गी च त्रिभङ्गी कलिका नव ॥ ५ ॥

तत्र–

१. द्विगाकलिका

चतुर्भिस्तुरगैः निजैर्द्विगा मैत्री हयद्वये ।

यथा–

जय जय वीर ! क्षितिपति हीर !

इत्यादि । एवं चरणचतुष्टयं बोद्धव्यमत्र । ग्रन्थविस्तरभयादस्मिन् प्रकरणे सर्वत्र पादमात्र-मुदाह्रियते ।

इति द्विगाकलिका १.

२. अथ रादिकलिका

वेदैः पञ्चकलैः कार्या मैत्र्यर्द्धे रादिका कला ॥ ६ ॥

यथा –

कामिनीकलितसुख यामिनीरमणमुख ।

इत्यादि ।

इति रादिकलिका २.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

३. अथ मादिकलिका

अष्टभिः षट्कलैर्मादिर्मैत्र्यर्द्धे विरतिर्मता ।

यथा–

भूमीभानो प्रभवसि भुवने बहुलारम्भः
सत्तत्तदा नोन्नता बहुमानोज्वलतरदम्भः ।

इत्यादि ।

इति मादिकलिका ३.

४. अथ नादिकलिका

सानुप्रासस्तु नो नादिः—

यथा–

दलितशकट कलितलकुट
ललितमुकुट रचितकपट ।

इत्यादि ।

इति नादिकलिका ४.

५. अथ गलादिकलिका

—गाद्या गलादिरुच्यते ।। ७ ।।

यथा–

वीरवर हीररद
चीरहर तीरचर ।

इत्यादि

इति गलादिकलिका ५.

६. अथ मिश्राकलिका

तिलतन्दुलवन्मिश्राः—

मनयोस्तिलतन्दुलवद्विन्यासो मिश्राः । यथा–

क्षीरनीरविवेकधीर सङ्गरवीर
गोपिकाचीरहर हरे जय जय ।

इति मिश्राकलिका ६.

७. अथ मध्याकलिका

—मध्या कलिकयोर्यदि ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

मध्ये गद्यं कलावापि गद्ययो रसपद्ययोः[1] ॥ ८ ॥

[व्या०] अस्यार्थः— मध्याकलिका तावत् द्विभेदा, तथा चादावन्ते च कलिका तयोः कलिकयोर्मध्ये यदि गद्यं भवतीत्येको भेदः।१। तथा असवर्णयोर्मैत्रीरहितयोर्गद्ययोर्मध्ये वा कला-कलिका भवतीत्यपरो भेदः ।२। इत्थेवं द्विभेदा मध्याकलिका भवति । ऊह्यमुदाहरणम् ।

इति मध्याकलिका ७.

८. अथ द्विभङ्गी कलिका

द्वितुर्यौ मधुरश्लिष्टौ षड्गा लान्ताश्चतुर्गुरुः ।
अत्र भङ्गात्तयोर्मैत्री षड्भङ्गा स्यात् द्विभङ्गिका ॥ ९ ॥

यथा—

रङ्गरक्त सङ्गसक्त
चण्डचक्र दण्डशक्र
चन्द्रमुद्र सान्द्रभद्र
विष्णो जिष्णो !

इत्यादि ।

इति द्विभङ्गी कलिका ८.

९, अथ त्रिभङ्गी कलिका

तत्र—

त्रिभिर्भङ्गैस्त्रिभङ्गी स्यान्नवधा सा तु कथ्यते ।
विदग्ध-तुरगौ पद्य-हरिणप्लुत-नर्त्तकाः ॥ १० ॥
भुजग-त्रिगते सार्द्धं वरतन्वा द्विपादिका ।
युग्मार्णभङ्गौ त्र्यावृत्तौ तनौ भौ मिश्रितौ ततः ॥ ११ ॥

तत्र—

९[१] विदग्ध-त्रिभङ्गी कलिका

विदग्धे—

यथा—

संदीपितशर-मन्दीकृतपर-नन्दीश्वरपद-भावन-पावन ।

इत्यादि ।

इति विदग्धत्रिभङ्गी कलिका ९ [१].

९[२]. अथ तुरगत्रिभङ्गी कलिका

—तुरगे तद्वत् तभलाः शेषगो गुरुः ।

---

[1] क. ख. रसवर्णयोः ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

चण्डीपतिप्रवण-पण्डीकृतप्रबल-खण्डीकृताहितविभो ।

इत्यादि ।

इति तुरगत्रिभङ्गी कलिका ६[२].

६[३]. अथ पद्मत्रिभङ्गी कलिका

त्रिभङ्गीभिः पदैः पद्मत्रिभङ्गी—

यथा–पद्मावतीत्रिभङ्गीदण्डकलादयोऽत्र स्पष्टाः पूर्वखण्डे समुदाहृतास्तास्तत एव द्रष्टव्याः ।*[1]

इति पद्मत्रिभङ्गी कलिका [६]३.

६[४]. अथ हरिणप्लुतत्रिभङ्गी कलिका

—हरिणप्लुते ॥ १२ ॥

षष्ठभङ्गा त्रिरावृत्ता नयभा[1]मित्रितौ च भौ ।

यथा–

अतिनत-देवाराधित बहुविधसेवासाधित
सुरतरुरेवासि प्रिय-दायक　　ायक !

इत्यादि ।

इति हरिणप्लुतत्रिभङ्गी कलिका ६[४].

६[५]. अथ नर्त्तकत्रिभङ्गी कलिका

हरिणो नजलान्तश्चेन्नर्त्तकः—

[व्या०] हरिणप्लुत एव नयभानन्तरं यदि नगण-जगण-लघ्वन्तो भवेत् तदा नर्त्तको भवतीति शेषः । यथा–

मनसिजरूपाराधित बहुबलभूपाबाधित
बहुतरयूपासञ्जक निजकुलरञ्जक ।

इत्यादि ।

इति नर्त्तकत्रिभङ्गी कलिका ६[५].

६[६]. अथ भुजङ्गत्रिभङ्गी कलिका

—भुजगे पुनः ॥ १३ ॥

त्र्यावृत्ता मभला लान्ता युग्मे तुर्ये च भङ्गिनः ।
क्वचित्तुर्ये न भङ्गः स्यान् मित्रितौ भगणौ ततः ॥ १४ ॥

---

१. क. नयना ।

*१टिप्पणी—३१, ३७, ४२, पृष्ठे द्रष्टव्याः ।

T　CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा–

दम्भारम्भामितवल जम्भालम्भाधिकवल
जम्भासम्भावितरण-मण्डित पण्डित ।

क्वचित्तुर्ये न भङ्गः, इति समुदाह्रियते । यथा–

जम्भारातिप्रतिवल-दम्भाबाधानतदल
सम्भारासादनचण-दारणकारण ।

इति भुजगत्रिभङ्गी कलिका ६[६].

६[७]. अथ त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका

तृतीये कृतभङ्गा त्रिर्मनना भौ च वल्गिता ।
त्र्यावृत्तास्तनभा भोऽन्ते ललितात्रिगता द्वये ।। १५ ।।

[व० १०] अस्यार्थः— त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका तावद् द्विविधा, यत्र मननाः–मगण-नगण-नगणास्त्रयो गणास्त्रिर्वारत्रयं भवन्ति, अन्ते भौ–भगणद्वयं, तृतीये च वर्णे भङ्गः सा वल्गिता-भिधाना त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका । यस्यां च त्र्यावृत्तास्तनभाः–तगण-नगण-भगणास्त्रयो गणा भवन्ति, एतस्यान्ते भो–भगण एक एव भवति । परन्तु द्वये–द्वितीये वर्णे भङ्गः सा ललिता-भिधाना त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका इति द्वैविध्यम् । क्रमेण यथा–

६[७-१]. अथ वल्गिता त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका

वाणाली-हतरिपुगण तालाली-तत-शरवण
मालाली-वृततनुवर-दायक नायक !

इत्यादि ।

इति वल्गिताभिधाना त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका

[६[७-२]. अथ ललिताभिधाना त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका

नाकाधिपसमनायक पाकाधिकसुखदायक
राकाधिपमुखसायक सुन्दर !

इति ललिताभिधाना त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका
एवं त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका द्विविधोदाहृता ६[७].*]

६[८]. अथ वरतनुत्रिभङ्गी कलिका

षष्ठभङ्गा वरतनुस्त्र्यावृत्ता नयना लघुः ।
भौ च—

यथा–

अविकलताराधिपमुख अधिगतनारायणसुख
बहुविधपारायणपर पण्डित मण्डित !

*[-] कोष्ठगतोंऽशः क. प्रतौ नास्ति ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

इत्यादि । किञ्च–

—भङ्गान्तसंयुक्ता छविरेषैव कथ्यते ।। १६ ।।

यथा–

चतुरिमचञ्चद्गुणगण विवलदुदञ्चद्रणचण
मधुरिमचन्द्रस्तवकित कुङ्कुमभूषित ।

इत्यादि ।

इति द्विविधा वरतनुत्रिभङ्गी कलिका ६[८].

६[९]. अथ द्विपादिका युग्मभङ्गा कलिका

द्विपादिका च कलिका षड्विधा परिकीर्तिता ।
द्व्यावृत्ता सा तु विज्ञेया छन्दःशास्त्रविशारदैः ।। १७ ।।

तत्र–

मुग्धा प्रगल्भा मध्या च शिथिला मधुरा तथा ।
तरुणी चेत्यमी भेदा द्विपदाया उदीरिताः ।। १८ ।।

तत्र–

६[९-१]. मुग्धा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

मतला मतलाश्चैव युग्मभङ्गा भयुग्मकम् ।
मुग्धा स्यात्—

यथा–

दण्डादेशाकम्पित चण्डाधोशालम्बित
वन्दन नन्दन !

इत्यादि ।

इति मुग्धा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[९-१].

६[९-२]. अथ प्रगल्भा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

—भद्वये कर्णौ चेत् प्रगल्भा तदा मता ।। १९ ।।

[व्या०] भद्वये– भगणद्वयस्थाने आदेशरूपेण चेत् कर्णौ भवतस्तदा मुग्धैव प्रगल्भा मता इत्यर्थः । यथा–

देवाधीशाराधक सेवादेशासाधक
भूमीभानो

इत्यादि ।

इति प्रगल्भा-द्विपादिका-द्विभङ्गी कलिका ६[९-२].

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

६[६–३]. अथ मध्या द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

उक्ता मभौ समौ मध्या भौ नलौ वा भनौ जलौ ।
ननसा लद्वयं वापि शेषे वा नजना लघू ।। २० ।।

[व्या०] अस्यार्थः—मध्यायास्तावत् चत्वारो भेदा लक्ष्यन्ते । यथा—मभौ–मगण-भगणौ, अथ च समौ–सगण-सगणौ, ततो भौ–भगणद्वयं यत्र भवति, एतादृशी मध्या उक्ता–कथिता इत्यर्थः । इति प्रथमो भेदः ।

यथा–

नित्यं नृत्यं कलयति काली केलीमञ्चति चञ्चति ।

इत्यादि ।

इति मध्यायाः प्रथमो भेदः ।१।

अथ मध्याया द्वितीयो भेदः

[व्या०] 'नलौ वा भनौ जलौ' इति । यत्र नलौ–नगणलघू, अथ च भनौ–भगणनगणौ, ततश्च जलौ —जगणलघू भवतः । इति द्वितीयो भेदः ।

यथा–

रणभुवि अञ्चति रणभुवि चञ्चति ।

इत्यादि ।

इति मध्याया द्वितीयो भेदः ।२।

अथ मध्यायाः तृतीयो भेदः

[व्या०] 'ननसा लद्वयं वापि' इति । ननसाः–नगण-नगण-सगणाः, अथ च लघुद्वयं भवति यत्र स तृतीयो भेदः । यथा—

अतिशयमधिरणमञ्चति ।

इत्यादि ।

इति मध्यायाः तृतीयो भेदः ।३।

अथ मध्यायाश्चतुर्थो भेदः

[व्या०] 'शेषे वा नजना लघू' इति । शेषे–चतुर्थे भेदे नजनाः–नगण-जगण-नगणाः, अथ च लघू–लघुद्वयं यत्र भवति स चतुर्थो भेदः । यथा–

अतिशयमञ्चति रणभुवि ।

इत्यादि ।

इति मध्यायाश्चतुर्थो भेदः ।४।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

एवं मध्याया असंकीर्णाश्चत्वारो भेदाः सलक्षणाः समुदाहृत्य प्रदर्शिताः ।

इति मध्या द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[६–३].

६[६–४]. अथ शिथिला द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

मुग्धाया भद्वये विप्रो यदि सा शिथिला मता ।

[व्या०] मुग्धायाः–प्रथमोक्तायाः भद्वये–भगणद्वयस्थाने आदेशन्यायेन यदि विप्रः–चतुर्लघ्वात्मको गणो भवति तदा सा शिथिला मता भवतीत्यर्थः ।

यथा–

केलीरङ्गारञ्जित–नारीसङ्गासञ्जित मनसिज ।

इत्यादि ।

इति शिथिला द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[६–४].

६[६–५]. अथ मधुरा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

द्व्यावृत्ता मभला लान्ता भद्वयं मधुरा मता ।। २१ ।।

[व्या०] अत्रत्यं द्व्यावृत्तात्वं पूर्वत्र सर्वत्र संबद्धम् । तथा च मभलाः–मगण-भगणलघवश्चेत् द्व्यावृत्ताः सन्तो लान्ता–लघ्वन्ता भवन्ति । अथ च भद्वयं–भगणद्वयं भवति तदा मधुरा मता–सम्मता भवतीत्यर्थः । यथा–

तारादाराधिकमुख–पारावाराशयसुख–दायक नायक ।

इत्यादि ।

इति मधुरा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[६–५].

६[६–६]. अथ तरुणी द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

मधुरा भद्वये कर्णौ तरुणी समनन्तरम् ।

[व्या०] उक्तायाः–मधुरायाः मगणभगणलान्तायाः भद्वये–भगणद्वयस्थाने पूर्वोक्तन्यायेन यदि कर्णौ भवतस्तदा तरुणी भवति ।

ताराहारानतमुख आरादारागतसुख-पाता-दाता ।

इत्यादि ।

इति तरुणी द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[६–६].

इति द्विपादिका कलिका युग्मभङ्गिनो भेदाः प्रोक्ता इति शेषः ।

इति विरुदावल्यामवान्तर–द्विभङ्गी-त्रिभङ्गी-कलिकाप्रकरणं प्रथमम् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

[विरुदावल्यां द्वितीयं चण्डवृत्त-प्रकरणम्]

अथाभिधीयते चण्डवृत्तं विरुदमुत्तमम् ।

शुद्धादिभेदसहितं कलिका-कल्पनान्वितम् ॥ १ ॥

[व्या०] आदिपदेन संकीर्णा गर्भितमिश्रिता गृह्यन्ते तांश्च यथास्थानमुदाहरिष्यामः। अथ महाकलिकारूपं चण्डवृत्तम्, तच्च द्विविधं–सलक्षण-साधारणभेदेन ।

तत्र–

उक्तलक्षणसम्पूर्णं सलक्षणमुदीरितम् ।
अन्यत् साधारणं प्रोक्तं चण्डवृत्तं द्विधा बुधैः ॥ २ ॥

अथ परिभाषा

तत्र–

मधुर-श्लिष्ट-संश्लिष्ट-शिथिल-ह्लादिभेदतः ।
संयोगाः पञ्चह्रस्वाच्च दीर्घाच्च दशधा मताः ॥ ३ ॥
अनुस्वारविसर्गौ तु न दीर्घव्यवधायकौ ।
स्वस्ववर्गान्त्यसंयुक्ता मधुरा इतरे पुनः ॥ ४ ॥
श्लिष्टाः सरेफशिरसः संश्लिष्टास्त्वन्ययोगिनः ।
यमात्रयुक्ता इत्युक्ताः शिथिला ह्लादिनस्त्वमी ॥ ५ ॥
हशेखराः साम्यमत्र नणयोः खषयोस्तथा ।
जययोर्वध्वयोरंहः[1] सच्चयोः[2] सशयोरपि ॥ ६ ॥
ह्यप्ययो[3]र्भ्वध्वयोश्चैव क्षच्छयोरित्सवर्णयोः ।
शषयोः त्सच्छयोश्चैव क्ष्ख्ययोरपि वर्णयोः ॥७॥
श्लिष्टसंश्लिष्टयोरुक्तौ संग्राह्या मधुरेतराः ।
इत्येषा परिभाषाऽत्र राजते वृत्तमौक्तिके ॥ ८ ॥

इति परिभाषा.

अथ चण्डवृत्तस्य महाकलिकारूपस्य व्यापकस्य व्याप्यव्यापकभावेन पुरुषोत्तमादि–कुसुमान्तं चतुस्त्रिंशतिः ३४ प्रभेदा भवन्ति । तेषां चोद्देशक्रमोऽनुक्रमणिकाप्रकरणे स्फुटतरं वक्ष्यमाणत्वान्नेह प्रपञ्च्यते ।

---

१. ख. जययो संचयोरंहः । २. ख. संच्चयो । ३. क. ह्यय्ययोः ।

T CC-0. RORI Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तत्र प्रथमम्–

१. पुरुषोत्तमश्चण्डवृत्तम्

एवं सर्वत्र–

शिलष्टौ तुर्याष्टमौ दीर्घौं त्रि-षष्ठौ सगणौ च भः ।
पुरुषोत्तमचण्डं स्यात्—

[व्या०] अस्यार्थः—यत्र चतुर्थाष्टमौ वर्णौ शिलष्टौ-सरेफशिरस्कौ च, तृतीय-षष्ठौ च दीर्घौ भवतः । तत्र गणनियममाह—'सगणौ' इति । सगणौ भवतः । ततश्च भः–भगणो भवति, तत् पुरुषोत्तमाख्यं महाकलिकारूपं चण्डवृत्तं भवति । नवाक्षरमिदं वृत्तम् । अस्मिन् प्रकरणे सर्वत्र विरामद्वयमेव भवतीत्युपदिश्यते । यथा–

दितिजार्द्दन जातप्रभ ।

इत्यादि ।

इति पुरुषोत्तमश्चण्डवृत्तम् १.

२. अथ तिलकं चण्डवृत्तम्

—सादौ नौ शेषगौ च नौ ॥ ९ ॥

मधुरो दशमो वर्णस्तिलकम्—

[व्या०] अयमर्थः— यत्र सादौ–सगणस्यादिभूतौ नौ–नगणौ यत्र च सगणस्य शेषगौ–शेषे च वर्त्तमानौ नगणावेव भवतः । मध्यभूतस्य सगणस्याद्यन्तयोर्नगणौ भवत इति फलितोऽर्थः । किञ्च—दशमो वर्णो मधुरः–स्ववर्गान्त्यसंयुक्तः परसवर्णो भवति । तत्तिलकं नाम चण्डवृत्तस्यावान्तरो भेद इति । पञ्चदशाक्षरमिदं पदम् । यथा–

विषमविशिखगणगञ्जितपरबल ।

इत्यादि । यथा वा–

अमलकमलरुचिखण्डनपट्टपद
नटनपटिमहृतकुण्डलिपतिमद
नवकुवलयकुलसुन्दररुचिभर
घनतडिदुपमितवन्धुरपटधर
तरणिदुहितृतटमञ्जुलनटवर
नयननटनजितखञ्जनपरिकर
भुजतटगतहरिचन्दनपरिमल
पशुपयुवतिगणनन्दन वरकल
नवमदमधुरदृगञ्चलविलसित
मुखपरिमलभरसञ्चलदलिवृत

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

शरदुपमितशशिमण्डलवरमुख
कनकमकरमयकुण्डलकृतसुख
युवतिहृदयशुकपञ्जरनिभ(ज)भुज
परिहितविचकिलमञ्जर(ञ्जुल)शिरसिज
सुतनुवदनविधुचुम्बनपटुतर
दनुजनिविडमदडुम्बनरणखर
धीर !

रणति हरे[1] तव वेणौ नार्यो दनुजाश्च कम्पिताः खिन्नाः ।
वनमनपेक्षितदयिताः करवालान्प्रोज्झ्य धावन्ति ।

कुङ्कुमपुण्ड्रक गुम्फितपुण्ड्रक-
संकुलकङ्कण कण्ठगरङ्गण
देव !

सारङ्गाक्षीलोचनभृङ्गावलिपानचारुभृङ्गार ।
त्वां मङ्गलभृङ्गारं शृङ्गाराधीश्वर स्तौमि ।

विरुदमिदं तिलकम् २.

३. अथ अच्युतं चण्डवृत्तम्

——वाऽच्युतः पुनः ।

[व्या०] अत्राथ शब्दार्थश्चकारः । तेन अच्युताख्यं चण्डवृत्तमुच्यत इत्युक्तं भवति । लक्षणं गणनियमपूर्वकमाह—

नयौ चेत् पञ्चमो दीर्घः षष्ठः श्लिष्टपरो नजौ ।। १० ।।
सर्वशेषे—

[व्या०] अस्यार्थः—यत्र नयौ–नगणयगणौ चेद् भवतः, किञ्च पञ्चमो वर्णो यत्र दीर्घो भवति, षष्ठो वर्णः श्लिष्टपरः–श्लिष्टः परः सः सप्तमो यस्य स तादृशो भवति । एवं चत्वारोऽष्टौ वा पादा यथेष्टं भवन्ति । सर्वशेषे नजौ–नगण-जगणौ भवतः सोऽच्युताख्यश्चण्डवृत्तस्यावान्तरो भेद इति । चतुर्विंशत्यक्षरमिदं पदम् । यथा–

प्रसरदुदार-द्युतिभरतार-प्रगुणितहार-स्थिरपरिवार ।

इत्यादि । शेषेषु—

कृतरणरंग । इत्यादि ।

यथा वा—

जय जय वीर स्मररसधीर द्विजजितहीर प्रतिभटवीर
स्फुरदुप(रु)हार-प्रियपरिवारच्छुरितविहार-स्थिरमणिहार

[1] क. हरे ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रकटितरास स्तवकितहास स्फुटपटवास-स्फुरितविलास
ध्वनदलिजाल-स्तुतवनमाल व्रजकुलपाल प्रणयविशाल
प्रविलसदंस-भ्रमदवतंस क्वणदुरुवंश-स्वनहृतहंस
प्रशमितदाव प्रणयिषु तावद्विलसितभाव स्तनितविराव
स्तनघनरागश्रितपरभाग क्षतहरियाग त्वरितधृताग
कृतरससंग[१]
वीर !

स्थितिनियतिमतीते धीरताहारिगीते,
प्रियजनपरिवीते कुङ्कुमालेपपीते ।
कलितनवकुटीरे काञ्च्युदञ्चत्कटीरे,
स्फुरतु रसगभीरे गोष्ठवीरे रतिर्नः ।।

अम्बाविनिहतचुम्बामलतर-
विम्बाधरमुखलम्बालक जय !
देव !

दृष्ट्वा ते पदनखकोटिकान्तिपूरं,
पूर्णानामपि शशिनां शतैर्दुरापम् ।
निर्विण्णो मुरहर मुक्तरूपदर्पः,
कन्दर्पः स्फुटमशरीरतामयासीत् ।।

इति अच्युतं चण्डवृत्तम् ३.

४. अथ वर्द्धितञ्चण्डवृत्तम्

—यदि श्लिष्टा, द्वि-नव-द्वादशा अपि ।
वर्द्धितो भनजा जोलः—

[व्या०] एतदुक्तं भवति, यदि द्वि-नव-द्वादश अपि वर्णाः श्लिष्टाः–सरेफशिरस्काश्चेत्–स्युस्तदा वर्द्धित इति नाम चण्डवृत्तं भवतीति । तत्र च गणनियममाह—भनजाः–भगण-नगणजगणाः, अथ च जो–जगणः, ततो लः–लघुरित्यर्थः । त्रयोदशाक्षरमिदं पदं स्वेच्छया यत्र विनिवेशितं भवति तद् वर्द्धिताख्यं चण्डवृत्तम् । यथा–

दुर्जयपरबलगर्जनवर्जित ।

इत्यादि ।

यथा वा, श्रीगोविन्दविरुदावल्याम्—

ब्रह्मा ब्रह्माण्डभाण्डे सरसिजनयन स्रष्टुमाक्रीडनानि,
स्थाणुर्भक्तुं च खेलाखुरलितमतिना तानि येन न्ययोजि ।

---

१. गोवि० कृतरससङ्ग नास्ति ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तादृक्क्रीडाण्डकोटीवृतजलकुडवा यस्य वैकुण्ठकुल्या ,
कर्त्तव्या तस्य का ते स्तुतिरिह कृतिभिः प्रोज्झ्य लीलायितानि ॥

अपि च–

निविडतरतुराषाडन्तरीणोष्मसंपद्[1]-
विघटनपटुखेलाडम्बरोर्मिच्छटस्य ।
सगरिमगिरिराजच्छत्रदण्डायितश्री-
र्जगदिदमघशत्रोः सव्यबाहू[2]र्धिनोतु ॥

अभ्रमुपतिमदमर्द्दिपदक्रम
विभ्रमपरिमललुप्तसुहृच्छ्रम
दुष्टदनुजदलदर्पविमर्द्दन
तुष्टहृदयसुरपक्षविवर्द्धन
दर्प्पकविलसितसर्गनिरर्गल
सर्पतुलितभुजकर्णगकुण्डल[3]
निर्मलमलयजचर्चितविग्रह
नर्म्मलसितपरिवर्जितविग्रह[4]
दुष्करकृतिभरलक्षणविस्मित-
पुष्करभवभयमर्द्दनसुस्मित
वत्सलहलधरतर्क्कितलक्षण
वत्सरविरहितवत्ससुहृद्गण
गर्जितविजयिविशुद्धतरस्वर-
तर्जितखलगण दुर्जनमत्सर
धीर !

तव मुरलीध्वनिरमरीकामाम्बुधिवृद्धिशुभ्रांशुः ।
अचटुलगोकुलकुलजाधैर्याम्बुधिपानकुम्भजो जयति ।

धृतगोवर्द्धन सुरभीवर्द्धन
पशुपालप्रिय रचितोपक्रिय
वीर !

भुजङ्गरिपुचन्द्रकस्फुरदखण्डचूडाङ्कुरे,
निरङ्कुशदृगञ्चलभ्रमिनिवद्धभृङ्गभ्रमे ।

---

१. गोवि. सम्यग् । २. गोवि. सत्यबाहु । ३. गोवि. कुड्मल । ४. गोवि. नर्मल-
लितकृतसर्पविनिग्रह ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पतङ्गदुहितुस्तटीवनकुटीरकेलिप्रिये,

परिस्फुरतु मे मुहुस्त्वयि मुकुन्द शुद्धा रतिः ।

इति विरुदमिदं वर्द्धितः ४.

५. अथ रणश्चण्डवृत्तम्

—त्रि-पञ्च-नव-सप्तमाः ॥ ११ ॥

आदिरेकादशश्चैव श्लिष्टा जो रो जरौ लघुः ।

सर्वशेषे रणाख्ये स्यात्—

[व्या०] इदमत्राकूतम् । यत्र त्रि-पञ्च-नव-सप्तमाः वर्णाः, आदिरेकादशश्चेति च षड्वर्णाः श्लिष्टा भवन्ति । तत्र गणनियममाह—'जो रो जरौ लघुः' जो–जगणः रो–रगणः भवतीति शेषः । अथ च जरौ–जगणरगणौ एव भवतः, ततः सर्वशेषे पदे चैको लघुर्भवति । तत् रणाख्यं सविरुदं महाकलिकारूपचण्डवृत्तं भवति । द्वादशाक्षरमिदं पदम् । चतुर्दशाक्षरं चान्त्यं पदं भवति । विरामद्वयेपि एकैकस्याधिकस्य लघोर्दानादित्याशयः[1] । पदविन्यासस्तु स्वेच्छया भवतीत्युपदेशः । तथा चान्त्यपदे विरामद्वयेपि लघुदानाज्जभलाः–जगण-भगणौ लघवो भवन्तीति वा[2] । यथा—

प्रगल्भविक्रम प्रसर्प्पिसत्क्रम ।

इत्यादि ।

प्रपन्नवर्द्धनक प्रसन्नगर्द्धनक ।

इत्युत्तरम्[3] ।

एतस्य चान्यत्र समग्र इति नामान्तरम् । तथोदाहृतमपि श्रीरूपस्वामिभिः श्रीगोविन्द-विरुदावल्याम् । यथा–

अनिष्टखण्डन[4] स्वभक्तमण्डन
प्रयुक्तचन्दन प्रपन्ननन्दन
प्रसन्नचञ्चल स्फुरद्दृगञ्चल
श्रुतिप्रलम्बक-भ्रमत्कदम्बक
प्रविष्टकन्दरप्रकृष्टसुन्दर-
स्थविष्ठसुन्दरक-प्रसर्पबन्धुरक[5]
देव !

वृन्दारकतरुवीते वृन्दावनमण्डले वीर ।
नन्दितबान्धववृन्द सुन्दरवृन्दारिका रमय ।

---

१. ख. लघ्वोर्दानादित्याशयः । २. ख. च । ३. ख. इत्यन्तम् । ४. गोवि. अरिष्ट-खंडन । ५. गोवि. स्थविष्ठविग्रहप्रसर्पबन्धुर ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

खलिनीडुम्बक मुरलीचुम्बक
जननीवन्दक - पशुपीनन्दक
वीर ।

अनुदिनमनुरक्तः पद्मिनीचक्रवाले,
नवपरिमलमाद्यच्चञ्चरीकानुकर्षी ।
कलितमधुरपद्यः कोऽपि गम्भीरवेदी,
जयति मिहिरकन्याकूलवन्याकरीन्द्रः ।

इति सविरुदं समग्रोदाहरणम् ।

इति रणश्चण्डवृत्तम् ५.

६. अथ वीरश्चण्डवृत्तम्

—मभौ नौ वीरचण्डके ॥ १२ ॥

आद्यवर्णात्तु चत्वारो वर्णाः स्युर्मधुरेतराः ।

[व्या०] अस्यार्थः—यत्र मभौ–मगणभगणौ, अथ च नौ–नगणौ भवतः । किञ्च, आद्यवर्णात्–प्रथमाक्षरात् चत्वारो वर्णाः मधुरेतराः– केवल श्लिष्टा एवेत्यर्थः । तत् वीरचण्डकाख्यं चण्डवृत्तं भवति । इदमपि द्वादशाक्षरमेव पदम् । अत्रापि पदविन्यासः पूर्ववदेव । बाहुल्येन द्वादशपदमिदं भवति, तथा दृष्टत्वादिति । यथा–

युद्धक्रुद्धप्रतिभटजयपर ।

इत्यादि ।

एतस्यैव अन्यत्र वीरभद्र इति नामान्तरम् । यथा–

उद्यद्विद्युद्युतिपरिचितपट
सर्प्पत्सर्प्पस्फुरदुरुभुजतट
स्वस्थस्वस्थत्रिदशयुवतिनुत
रक्षद्दक्षप्रियसुहृदनुसृत
मुग्धस्निग्धव्रजजनकृतसुख
नव्यश्रव्यस्वरविलसितमुख
हस्तन्यस्तस्फुटसरसिजवर
सज्जद्गर्ज्जत्खलवृषमदहर
युद्धक्रुद्धप्रतिभटलयकर
वर्णस्वर्णप्रतिमतिलकधर
रुष्यत्तुष्यद्युवतिषु कृतरस
भक्तव्यक्तप्रणय मनसि वस
वीर !

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रचुरपरमहंसैः काममाचम्यमाने,
प्रणतमकरचक्रैः शश्वदाक्रान्तकुक्षौ ।
अघहर जगदण्डाहिण्डिहिन्दोलहासे,
स्फुरतु तव गभीरे केलिसिन्धौ रतिर्नः ।
उद्गीर्णतारुण्य विस्तीर्णकारुण्य
गुञ्जालतापिञ्छपुञ्जाढ्यतापिञ्छ ।
धीर !

उचितः पशुपत्यलंक्रियायै नितरां नन्दितरोहिणीयशोदः ।
तव गोकुलकेलिसिन्धुजन्मा जगदुद्दीपयति स्म कीर्तिचन्द्रः ।

सविरुदं वीरभद्रोदाहरणमिदम् ।

इति वीरश्चण्डवृत्तम् ।६।

७. अथ शाकश्चण्डवृत्तम्

भौ रो लः पञ्चमः श्लिष्टो दीर्घौ नवम-सप्तमौ ।। १३ ।।
द्वितीयो मधुरः शाके—

[व्या०] अयमर्थः—शाके-शाकाख्ये चण्डवृत्ते प्रथमं भौ-भगणौ, अथ च रो-रगणः, ततो लो-लघुः । किञ्च-पञ्चमो वर्णः श्लिष्टः-संयुक्तो भवति, नवमसप्तमौ दीर्घौ भवतः, द्वितीयो मधुरः-परसवर्णो वर्णो यत्र भवतीत्यर्थः । तत् शाकनामकं चण्डवृत्तं भवति । दशाक्षरं पदं, विन्यासः पूर्ववत् । यथा—

सञ्चितचक्र-भुजाभिराम ।

इत्यादि ।

इति शाकश्चण्डवृत्तम् । ७ ।

८. अथ मातङ्गखेलितं चण्डवृत्तम्

—ह्यथ मातङ्गखेलितम् ।
श्लिष्टौ वा मधुरौ बाणदशमौ रौ यलौ यदि ।। १४ ।।
बाणे भङ्गश्च[1] मैत्री च प्रथमाष्टमषष्ठकाः ।
तृतीयश्चात्र दीर्घाः स्युः—

[व्या०] इदमत्रानुसन्धेयम्— अथ मातङ्गखेलितं-मातङ्गखेलिताभिधानं चण्डवृत्तं लक्ष्यत इति शेषः । अत्र चार्थे वाकारः । तथा च यत्र 'बाणदशमौ' बाणः-पञ्चमः दशमश्चेति द्वौ वर्णौ श्लिष्टौ मधुरौ-परसवर्णौ च भवतः । तथा रौ-रगणौ, अथ च यलौ-यगणलघू यदि

---

१. क. बाणेभंङ्गश्च ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

भवतस्तथा बाणे–पञ्चमे भङ्गश्च–मैत्री च यदि भवति, तथा प्रथमाष्टमषष्ठकाः वर्णा-स्तृतीयश्च वर्णश्चेच्चत्वारोऽत्र वर्णा दीर्घाः स्युस्तदा मातङ्गखेलिताभिधानं चण्डवृत्तं भवति। दशाक्षरं पदमिदम्। अत्र पदविन्यासः स्वेच्छया विधेयः। यथा–

साधितानन्तसारसामन्त।

इत्यादि। यथा वा–

नाथ हे नन्द-गेहिनीशन्द
पूतनापिण्डपातने चण्ड
दानवे दण्डकारकाखण्ड-
सारपौगण्डलीलयोद्दण्ड
गोकुलालिन्दगूढ गोविन्द
पूरितामन्द-राधिकानन्द
वेतसीकुञ्ज-माधुरीपुञ्ज
लोकनारम्भजातसंरम्भ-
दीपितानङ्गकेलिभागङ्ग-
गोपसारङ्ग-लोचनारङ्ग-
कारिमातङ्गखेलितासङ्ग-
सौहृदाशङ्कयोषितामङ्क-
पालिकालम्ब चारुरोलम्ब-
मालिकाकण्ठ कौतुकाकुण्ठ
पाटलीकुन्दमाधवीवृन्द-
सेवितोत्तुङ्गशेखरोत्सङ्ग
मां सदा हन्त पालयानन्त
वीर !

स्फुरदिन्दीवरसुन्दर सान्द्रतरानन्दकन्दलीकन्द।
मां तव पदारविन्दे नन्दय गन्धेन गोविन्द॥

कुन्ददशन मन्दहसन[1]
बद्धरसन रुक्मवसन[2]
देव !

प्रपन्नजनतातमःक्षपणशारदेन्दुप्रभा-
व्रजाम्बुजविलोचना स्मरसमृद्धिसिद्धौषधिः।

---

१. क. 'मन्दहसन' नास्ति। २. गोवि. रुक्मवसन हस्यहसन।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

विडम्बितसुधाम्बुधिप्रबलमाधुरीडम्बरा,
बिभर्त्तु तव माधव स्मितकदम्बकान्तिर्मुदम् ।
इति श्रीगोविन्दविरुदावल्यां मातङ्गखेलितप्रत्युदाहरणम् ।

सविरुदमिदं मातङ्गखेलितम् ।८।

९. अथ उत्पलं चण्डवृत्तम्

—भद्वयं चोत्पलं मतम् ॥ १५ ॥

श्लिष्टौ द्विपञ्चमौ—

[व्या०] अयमर्थः—भद्वयं-भगणयोर्द्वयं, भगणचतुष्टयमित्यर्थः । लक्ष्ये तथा दर्शनादेवं ख्यातम् । किञ्च-तस्मिन्नेव भगणद्वये द्विपञ्चमौ-द्वितीयपञ्चमौ वर्णौ श्लिष्टौ-सरेफशिरस्कौ च भवतो यत्र तद् उत्पलनामकं चण्डवृत्तं भवतीत्यर्थः । षडक्षरं भगणद्वयपक्षे, भगणचतुष्टयपक्षे तु द्वादशाक्षरमेव पदम् । पदविन्यासस्तु पूर्ववदेव । यथा—

सर्वजनप्रिय
सर्वसमक्रिय

इत्यादि । यथा वा, श्रीगोविन्दविरुदावल्याम्—

नर्त्तितशर्क्कर-चर्क्कृतकर्क्कर-
वृद्धमरुद्भर-तर्द्दन निर्भर-
दुष्टविमर्द्दन शिष्टविवर्द्धन
सर्वविलक्षण मित्रकृतक्षण
सद्भुजलक्षित-पर्वतरक्षित-
निष्ठुरगर्ज्जन-खिन्नसुहृज्जन
रुष्टदिवस्पति-गर्वसमुन्नति-
तर्जनविभ्रम निर्गलितभ्रम-
शक्रकृतस्तव विस्फुरदुत्सव
वीर !

बुद्धीनां परिमोहनः किल ह्रियामुच्चाटनः स्तम्भनो
दर्भोदग्रधियां[1] मनःकरटिनां वश्यत्वनिष्पादनः ।
कालिन्दीकलहंस हन्त वपुषामाकर्षणः सुभ्रुवां,
जीयाद् वैणवपञ्चमध्वनिमयो मन्त्राधिराजस्तव ।

१. गोवि. दर्भोदग्रभियाम् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

कानना रब्ध-काकलीशब्द-
पाटवाकृष्ट-गोपिकादृष्ट
चातुरीजुष्ट-राधिकातुष्ट
कामिनीलक्ष-मोदने दक्ष
भामिनीपक्ष[1] माममुं रक्ष,
देव !

अजर्जरपतिव्रताहृदयवज्रभेदोद्धुराः,
कठोरतरमानिनी[2]-निकरमानमर्मच्छिदः[3] ।
अनङ्गधनुरुद्धतप्रचलचिल्लिचापच्युताः,
क्रियासुरघविद्विषस्तव मुदं कटाक्षेषवः ।

सविरुदमिदमुत्पलम् ।९।

१०. अथ गुणरतिश्चण्डवृत्तम्

—सो नो, लश्च दीर्घं तृतीयकम् ।
गुणरत्याख्यं—

[व्या०] अस्यार्थः—यत्र सः–सगणः नो–नगणः ततो लश्च–लघुर्भवति । अत्र चतुर्दशाक्षर-पदविन्यासस्य अन्यत्रापि दृष्टत्वात् सनलानामावृत्तिरवगन्तव्या, तेन प्रकृतोट्टवणिका सिद्धिर्भवति । किञ्च, तृतीयकं–तार्तीयमक्षरं दीर्घं भवति । तद् गुणरत्याख्यं चण्डवृत्तं भवति । चतुर्दशाक्षरं पदम् । पदविन्यासः पूर्ववदेव । यथा–

विदिताखिलसुख
सुख(ष)माधिकमुख ।

इत्यादि । यथा वा–

प्रकटीकृतगुण शकटीविघटन
निकटीकृतनवलकुटीवर वन-
पटलीतटचर नटलोल मधुर
सुरभीकृतवन सुरभीहितकर
मुरलीविलसित-खुरलीहृतजग-
दरुणाधर नव-तरुणायतभुज[4]
वरुणालयसमकरुणापरिमल
कलभायितबल-शलभायितखल

१. गोवि. भाविनीपक्ष । २. गोवि. कठोरवरवर्णिनी । ३. गोवि. वर्मच्छिदः ।
४. गोवि. करुणायतभुज

CC-0. ORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

धवलाधृतिधर[1] गवलाश्रितकर
सरसीकृतनर सरसीरुहधर
कलशीलितमुख कलशीदधिहर
ललितारतिकर ललितावलिपर
धीर !

हरिणीनयनावृत प्रभो करिणीवल्लभकेलिविभ्रम ।
तुलसीप्रिय दानवाङ्गनाकुलसीमन्तहर प्रसीद मे ।।

चन्दनचर्चित गन्धसमर्चित
गण्डविवर्त्तन-कुण्डलनर्त्तन
सन्दलदुज्ज्वल कुन्दलसद्गल
वञ्जुलकुन्तल[2] मञ्जुलकज्जल
सुन्दरविग्रह नन्दलसद्ग्रह
वीर !

रतिमनुबध्य गृहेभ्यः कर्षति राधां वनाय या निपुणा ।
सा जयति निसृष्टार्था[3] वरवंशजकाकली दूती ।

सविरुदा गुणरतिरियम् ।१०।

११. अथ कल्पद्रुमश्चण्डवृत्तम्

तत्र–

—अन्त्यान्त्यो नवमः श्लिष्टपूर्वगः ।। १६ ।।

कल्पद्रुमे तजौ यश्च श्लिष्टाः षट्-त्रि-नव-द्विकाः ।

[व्या०] कोऽर्थः ? उच्यते—यत्र कल्पद्रुमे चण्डवृत्ते अन्त्यो–यगणः तस्यान्त्यो-नवमो वर्णः श्लिष्टपूर्वगः–श्लिष्टो वर्णः पूर्वगो यस्य स तादृशो भवति । तत्र च गणनियममाह— तजौ–तगणजगणौ, अथ च यश्च–यगणोपि भवति । एवं गणत्रयं यत्र भवति तदेतत् कल्पद्रुमाख्यं चण्डवृत्तं भवति । नवाक्षरमिदं पदम् । पदविन्यासोऽपि पूर्ववत् । किञ्च–षट्त्रिनवद्विकाः– षष्ठतृतीयनवमद्वितीयका वर्णाः श्लिष्टा भवन्ति । यत्र च नवमश्लेषादेव द्वितीये पदे प्रथमवर्णस्य गुरुत्वं भवतीति भावः ।

यथा–

उद्रिक्ततरस्थितगर्व
प्रव्यक्तपरिस्थितसर्व ।[4]

१. गोवि. हर । २. गोवि. कुड्मल । ३. गोवि. निसृष्टार्था तव । ४. ख. प्रव्यक्तपरिस्थितशर्वं ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

एवं पदान्तरमपि बोद्धव्यम् ।

इति कल्पद्रुमः ।११।

१२. अथ कन्दलश्चण्डवृत्तम्

कन्दले पञ्चमः श्लिष्टो द्वितीये मधुरोऽनु भौ ।। १७ ।।

[व्या०] कन्दले–कन्दलाख्ये चण्डवृत्ते पञ्चमो वर्णः श्लिष्टो भवति । द्वितीयो वर्णो मधुरः–परसवर्णो भवति । तत्र गणनैयत्यमाह—अत्रास्मिन् भौ–भगणौ एव स्तः । षडक्षरमेव पदम् । तत्कन्दलाभिधानं चण्डवृत्तं भवतीति । यथा–

पण्डितवर्द्धन ।

इत्यादि ।

इति कन्दलः ।१२।

१३. अथ अपराजितञ्चण्डवृत्तम्

षडष्टदशमा दीर्घा द्वितीयो मधुरो यदि ।
अपराजितमेतत्तु भसजाश्च गुरुर्लघुः ।। १८ ।।

[व्या०] एतदुक्तं भवति । यत्र षडष्टदशमाः–षष्ठाष्टमदशमा वर्णा दीर्घा भवन्ति । द्वितीयो वर्णो यदि मधुरः–परसवर्णो भवति । यदि च भसजाः–भगणसगणजगणाः भवन्ति । अथ च गुरुस्ततो लघुश्चेद् भवति । तदेतत् अपराजिताख्यं चण्डवृत्तं भवति । एकादशाक्षरं पदम् । यथा–

गञ्जितपरवीर धीर हीर ।

इत्यादि ।

इति अपराजितम् ।१३।

१४. अथ नर्त्तनञ्चण्डवृत्तम्

चतुःसप्तमकौ श्लिष्टौ सौ रो लौ यदि नर्त्तनम् ।
अष्टमो मधुरः—

[व्या०] अस्यार्थः—यदि चतुःसप्तमकौ वर्णौ श्लिष्टौ भवतः, अष्टमो वर्णो मधुरः–परसवर्णो भवति । किञ्च, यदि सौ–सगणौ स्याताम् । अथ च रो–रगणः, ततो लौ–लघुद्वयं स्यात् तदा नर्त्तनं–नर्त्तनाख्यं चण्डवृत्तं भवति । इदमप्येकादशाक्षरं पदम् । यथा–

भुवनत्रयशत्रुम्प्रमर्द्दय ।

इत्यादि ।

इति नर्त्तनम् ।१४।

१५. अथ तरत्समस्तञ्चण्डवृत्तम्

—श्लिष्ट-संश्लिष्टमधुरा यदि ।। १९ ।।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

षट्त्रिपञ्चमका जो मः सगणो लघुयुग्मकम् ।
तरत्समस्तमित्याहुः—

[व्या०] एवमुक्तं भवति । यदि षट्त्रिपञ्चमकाः-षष्ठतृतीयपञ्चमा वर्णाः श्लिष्ट-संश्लिष्ट-मधुराः स्युः । तत्र गणनियममाह—जो-जगणः, मो-मगणः, सगणः गुर्वन्तश्चतुष्कलो गणस्ततो लघुयुग्मकं-लघुयुगलं च यदि भवति तदा तरत्समस्तमिति नामकं चण्डवृत्तमाहुश्छान्दसिकाः । एकादशाक्षरमेव पदम् । यथा–

निरस्तचण्डद्वेषिधराधर

इत्यादि ।

इति तरत्समस्तम् ।१५।

१६. अथ वेष्टनञ्चण्डवृत्तम्

—दीर्घौ षट्पञ्चमौ यदि ।। २० ।।
वेष्टने सप्तमः श्लिष्टो नयौ लघुचतुष्टयम् ।

[व्या०] अयमर्थः—वेष्टने-वेष्टनाख्ये चण्डवृत्तप्रभेदे यदि षट्पञ्चमौ-षष्ठपञ्चमकौ वर्णौ दीर्घौ स्याताम् । सप्तमश्च वर्णः श्लिष्टो भवेत् । गणनियममाह—नयौ-नगणयगणौ स्तः, ततो लघुचतुष्टयं यत्र भवति । दशाक्षरं च पदं भवति । तत् वेष्टनाभिधानं चण्डवृत्तं भवतीति । यथा–

मलयजसारार्च्चितहर ।

इत्यादि ।

इति वेष्टनम् ।१६।

१७. अथ अस्खलितञ्चण्डवृत्तम्

तरौ भलावस्खलिते त्र्यष्टपञ्चमसप्तमाः ।। २१ ।।
संश्लिष्टा दीर्घ आद्यः स्यात्—

[व्या०] कोऽर्थः ? उच्यते—अस्खलिते-अस्खलिताभिधाने चण्डवृत्ते यदि तरौ-तगणरगणौ स्याताम् । अथ च भलौ-भगणलघूस्तः । किञ्च, त्र्यष्टपञ्चमसप्तमाः-तृतीयाष्टमपञ्चमसप्तमा वर्णाश्चेत् संश्लिष्टा अन्त्ययोगिनः स्युः । आद्यः-प्रथमो वर्णश्चेद् दीर्घः स्यात् तदा अस्खलिताभिधानं चण्डवृत्तं भवति । दशाक्षरमेव पदं भवति । यथा–

आबद्धशुद्धयुद्धप्रणय ।

इत्यादि ।

इति अस्खलितम् ।१७।

१८. अथ पल्लवितञ्चण्डवृत्तम्

—दीर्घौ चेत्तुर्यपञ्चमौ ।
शिथिलो मधुरो वाऽत्र द्वितीयो भतनद्विजाः ।। २२ ।।
एतत् पल्लवितम्—

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

[व्या०] इदमत्रानुसन्धेयम्। अत्र पल्लविताख्ये चण्डवृत्ते तुर्यपञ्चमौ वर्णौ चेद् दीर्घौ भवतः। द्वितीयो वर्णः शिथिलो मधुरो वा भवति। तत्र प्रायेण मधुर एव श्रुतिसौख्यकृत्। तत्र गणनैयत्यमाह—भतनद्विजाः—भगण-तगण-नगण-द्विजगणाः क्रमेण यत्र भवन्ति। एतत् पल्लविताभिधानमिदं चण्डवृत्तं भवति। त्रयोदशाक्षरमिदं पदं भवति। यथा—

रञ्जितनारीजननवमनसिज।

इत्यादि। मधुरद्वितीयवर्णोदाहरणमिदम्।

शिथिलद्वितीयवर्णोदाहरणं, यथा—

वल्लवलीलासमुदयपरिचित
पल्लवरागाधरपुटविलसित
वल्लभगोपीप्रवणित मुनिगण-
दुर्लभकेलीभरमधुरिमकण
मल्लविहाराद्भुततरुणिमधर
फुल्लमृगाक्षीपरिवृतपरिसर
चिल्लिविलासार्पितमनसिजमद
मल्लिकलापामलपरिमलपद
रल्लकराजीहरसुमधुरकल
हल्लकमालापरिचितकचकुल
धीर !

जय चारुहास कमलानिवास
ललनाविलास परिवीतदास
वीर !

वल्लवललनावल्ली-करपल्लवशीलितस्कन्धम्।
उल्लसितः परिफुल्लं भजाम्यहं कृष्णकङ्केल्लिम्।

इति पल्लवितम् ।१८।

१९. अथ समग्रं चण्डवृत्तम्

—जो रः समग्रं श्लिष्टपञ्चमम्।
तृतीयं मधुरं सर्व-कलान्ते लः—

[व्या०] अस्यार्थः—जो—जगणः रो—रगणश्चेति गणद्वयं आम्रेडनीयमित्युपदेशः। तथा च द्वादशाक्षरपदमिदं समग्रं—समग्राख्यं चण्डवृत्तं भवति। किंविशिष्टं ? श्लिष्टपञ्चमं—श्लिष्टः—सरेफशिरस्कः पञ्चमो वर्णो यत्र। किञ्च, तृतीयमक्षरं मधुरं—परसवर्णं यत्र। सर्वकलान्ते—

CC-0. KORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अर्धावन्त्ये पदे लः-एको लघुरधिको देय इत्यर्थः, तेनान्त्यं पदं त्रयोदशाक्षरं भवति। तच्च, जरजभलान्तमित्युपदिश्यते। पदविन्यासस्तु स्वेच्छया विधेयः। यथा–

अनङ्गवर्जन प्रसङ्गसज्जन।

इत्यादि।

अनङ्गमङ्गल प्रसङ्गसञ्जनक।

इत्यन्तम्।

अत्र च मधुरतृतीयत्वादेव विरुदावल्यन्तर-समग्राद् भिन्नमिदं समग्रमिति।

इति समग्रम्।१९।

२०. अथ तुरग[1]श्चण्डवृत्तम्

—भनौ जलौ॥ २३॥

मधुरौ[2] युग्मनवमौ चेच्चण्डतुरगाह्वयम्।

[व्या०] अयमर्थः—यत्र भनौ–भगण-नगणौ भवतः, ततो जलौ–जगणलघू स्याताम्। किञ्च, युग्मनवमौ वर्णौ चेत् मधुरौ–परसवर्णौ स्तस्तदा तुरगाह्वयचण्डवृत्तं भवतीत्यर्थः। दशाक्षरं पदमिदम्। पदविन्यासः पूर्ववत्। यथा–

पण्डितगुणगणमण्डित।

यथा वा–

सँव्वल[3]विचकिलकुण्डल
मण्डितवरतनुमण्डल
कुण्डलिपतिकृतसङ्गर
दण्डित[4]भुवनभयङ्कर
शङ्करकमलजवन्दित
किङ्करनुतिलवनन्दित[5]
गञ्जितसमदपुरन्दर
चञ्चलदमनधुरन्धर
बन्धुरगतिजितसिन्धुर
चन्दनसुरभितकन्धर
सुन्दरभुजलसदङ्गद[6]
सन्ततसखिगणरङ्गद
झङ्कृतिकरमणिकङ्कण

---

१. गोवि. तुरंगः। २. क. मधुरं। ३. गोवि. संचल। ४. गोवि. खण्डित। ५. क. किङ्करतुलितवनन्दित। ६. क. भुजबलबङ्गद।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

कुन्तललुठदुरुरङ्गण
कुङ्कुमरुचिलसदम्बर
लङ्गिमपरिमलडम्बर
नन्दभवनवरमङ्गल-
[मञ्जुलघुसृणसुपिङ्गल
हिङ्गुलरुचिपदपङ्कज
सञ्चितयुवतिसदङ्गज][1]
सन्ततमृगपदपङ्किल
संतनु मयि कुशलङ्किल
वीर !

गिरितटीकुनटीकुलपिङ्गले खलतृणावलिसञ्ज्वलदिङ्गले ।
प्रखरसङ्गरसिन्धुतिमिङ्गिले मम रतिर्वलतां व्रजमङ्गले ।

जय चारुदाम-ललनाभिराम
जगतीललाम रुचिहारिवाम[2]
वीर !

उन्दितहृदयेन्दुमणिः पूर्णकलः कुवलयोल्लासी ।
परितः शार्वरमथनो विलसति वृन्दाटवीचन्द्रः ।

इति तुरगः ।२०।

एते महाकलिकारूपस्य चण्डवृत्तस्य विंशतिः शुद्धाः प्रभेदाः ।

अथ सङ्कीर्णाः

तत्र—

२१. पङ्केरुहं चण्डवृत्तम्

पङ्केरुहं नयौ षष्ठे भङ्गो मैत्री च दृश्यते ।। २४ ।।

सा चेत् कवर्गरचिता यथा लाभमनुक्रमात् ।
तथैव षष्ठो मधुरः स्वरभेदेऽपि तद्भिदा ।। २५ ।।

[व्या०] एतस्यार्थः—यत्र नयौ—नगणयगणौ भवतः। तथा षष्ठे वर्णे भंगो मैत्री च दृश्यते। किञ्च, सा मैत्री चेत् कवर्गेण यथालाभमनुक्रमात् रचिता स्यात्। तथा षष्ठो वर्णो मधुरः—परसवर्णो यदि स्यात् तदा पङ्केरुहं नाम चण्डवृत्तं भवति। किञ्च, स्वरभेदेपि—इकारादिस्वर-भेदेपि सति तद्भिदा पङ्केरुहभेदो भवतीति बोद्धव्यम्। षडक्षरमेव पदम्। पदविन्यासोपि पूर्व-वदिति बोद्धव्यम्।

---

१. [-] कोष्ठगतोंशः नास्ति क. प्रतौ। २. गोवि. रुचिहृतवाम।

T CC-0. ORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा—

जय गतशङ्क
प्रणयविटङ्क
प्रियजनवङ्क
स्मितजितशङ्ख
स्फुटतरशृङ्ग-
ध्वनिधृतरङ्ग
क्षणनटनङ्ग
प्रणयिकुरङ्ग-
व्रजकृतसङ्ग
श्रुतितटरिङ्ग-
न्मधुरसपिङ्ग-
ग्रथितलवङ्ग
स्वनटनभङ्ग-
व्रणितभुजङ्ग
स्तबकिततुङ्ग-
क्षितिरुहशृङ्ग-
स्थितबहुभृङ्ग-
क्वणिततरङ्ग-
प्रवलदनङ्ग-
भ्रमदुरुभृङ्गी-
मुदितकुरङ्गी-
दृगुदितभङ्गी-
भ्रदिमभिरङ्गी-
कृतनवसङ्गी-
तक दरवङ्के-
क्षण नवसङ्के-
तकसुदृगङ्के-
शय सकलङ्के-
तरपृषदङ्के-
डितमुख पङ्के-
रुहपद रङ्के

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

कृपय सपङ्के
किल मयि धीर !

उत्तुङ्गोदयशृङ्गसङ्गमजुषां बिभ्रत्पतङ्गत्विषां,
वासस्तुङ्ग[1]मनङ्गसङ्गरकलाशौटीर्यपारङ्गतः ।
स्वान्तं रिङ्गदपाङ्गभङ्गिभिरलं गोपाङ्गनानां किल[2],
भूयास्त्वं पशुपालपुङ्गव दृशोरव्यङ्ग रंगाय मे ।।

विलसदलिकगतकुङ्कुमपरिमल
कटितटधृतमणिकिङ्किणिवरकल
नवजलधरकुललङ्गिमरुचिभर
मसृणमुरलिकलभङ्गिमधुरतर
धीर !

अवतंसितमञ्जुमञ्जरे तरुणीनेत्रचकोरपञ्जरे ।
नवकुङ्कुमपुञ्जपिञ्जरे रतिरास्तां मम गोपकुञ्जरे ।

पङ्केरुहं सविरुदमिदम् । २१ ।

अथ सितकञ्जादयश्चण्डवृत्तस्य चत्वारो भेदा लक्ष्यन्ते । तत्र—

एतावेव गणौ यत्र भङ्गो मैत्री च पूर्ववत् ।
क्रमेण चादिवर्गैस्तु रचिता साऽपि पूर्ववत् ।। २६ ।।

[व्या०] अस्यार्थः—यत्र एतौ—नगणयगणौ एव—पूर्वोक्तौ गणौ भवतः । किञ्च, भङ्गो मैत्री च पूर्ववत्, षष्ठाक्षर एव भवतीत्यर्थः । एतच्च षष्ठवर्णस्य मधुरत्वमपि लक्षयतीति बोद्धव्यम् । पूर्ववद् इत्यनेनैवोपस्थापितत्वात् । किञ्च, साऽपि मैत्री चादि—चतुर्भिर्वर्गैः पूर्ववत् यथालाभं रचिता चेद् भवति । अपि शब्दात् स्वरान्तरेणाभेदेपि सति तदा तत्तद्भेदो भवतीत्यपि बोद्धव्यम् । षडक्षरमेव पदम् । पदविन्यासोऽपि पूर्ववदेवेति च ।।२६।।

तद्भेदचतुष्टयमाह सार्द्धेन श्लोकेन—

सितकञ्जं तथा पाण्डूत्पलमिन्दीवरं तथा ।
अरुणाम्भोरुहञ्चेति ज्ञेयं भेदचतुष्टयम् ।। २७ ।।
विरुदेन समं चापि चण्डवृत्तस्य पण्डितैः ।

[व्या०] सितकञ्जं, पाण्डूत्पलं, इन्दीवरं, अरुणाम्भोरुहं चेति सविरुदचण्डवृत्तस्य भेदचतुष्टयं पण्डितैः—अधीतछन्दःशास्त्रनिपुणमतिभिर्ज्ञेयमित्युपदिश्यते ।

उदाहरणमेतेषां क्रमेणैवोच्यतेऽधुना ।। २८ ।।

---

[1] गोवि० स्तुङ्ग । [2] गोवि० मिलत ।

CC-0. ORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

[व्या०] एतेषां सितकञ्जादिभेदानाम्, शेषं स्पष्टम् । तत्र–

२२. सितकञ्जञ्चण्डवृत्तम्

जय कचचञ्चद्-
द्युतिसमुदञ्च-
न्मधुरिमपञ्च-
स्तवकितपिञ्छ-
स्फुरित विरिञ्च-
स्तुत गिरिगञ्ज[1]-
व्रजपरिगुञ्ज-
न्मधुकरपुञ्ज-
द्रुतमृदुशिञ्ज
द्विषदहिगञ्ज
व्रततिषु खञ्ज-
न्नवरजसञ्ज[2]-
न्मरुदतिपिञ्ज
प्रवलित[3]मुञ्जा-
नलहर गुञ्जा-
प्रिय गिरिकुञ्जा-
श्रित रतिसञ्जा-
गर नवकञ्जा-
मलकर भञ्जा-
निलहर मञ्जी-
रजरवपञ्जी-
परिमलसञ्जी-
वितनवपञ्चा-
शुगशरसञ्चा-
रणजितपञ्चा-
ननमद धीर ।

---

१. गोवि. गिरिकुञ्ज- । २. गोवि. रसमञ्ज- । ३. गोवि. प्रवणित ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

कर्णिकारकृतकर्णिकाद्युतिः कर्णिकापदनियुक्तगैरिका ।
मेचका मनसि मे चकास्तु ते मेचकाभरण भारिणी[1] तनुः ।

मदनरसङ्गत सङ्गतपरिमल
युवतिविलम्बित लम्बितकचभर
कुसुमविटङ्कित टङ्कितगिरिवर
मधुरससञ्चित सञ्चितनरवर[2]
वीर !

भ्रूमण्डलताण्डवितप्रसूनकोदण्डचित्रकोदण्ड ।
हृतपुण्डरीकगर्भं मण्डय मे[3] पुण्डरीकाक्ष ।

सविरुदं सितकञ्जमिदम् ।२२।

२३. अथ पाण्डूत्पलञ्चण्डवृत्तम्

जय जय दण्ड-
प्रिय कचखण्ड-
ग्रथितशिखण्ड-
दृज शशिखण्ड-
स्फुरणसपिण्ड-
स्मितवृतगण्ड
प्रणयकरण्ड
द्विजपतितुण्ड
स्मररसकुण्ड
क्षतफणिमुण्ड
प्रकटपिचण्ड-
स्थितजगदण्ड
क्वणदणुघण्ट
स्फुटरणघण्ट
स्फुरदुरुशुण्डा-
कृतिभुजदण्डा-
हृतखलचण्डा-
सुरगण पण्डा-

---

१. गोवि. भाविनी । २. गोवि. [illegible] नास्ति । ३. गोवि. मम ।

CC-0. BORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

जनितवितण्डा-
जितबल भण्डी-
रदयित खण्डी-
कृतनवडिण्डी-
[illegible] ह
गण कलकुण्डी[1]-
कृतकलकण्ठी-
कुल मणिकण्ठी-
स्फुरितसुकण्ठी-
प्रिय वरकण्ठी-
रवरण वीर !

दण्डी कुण्डलिभोगकाण्डनिभयोरुद्दण्डदोर्दण्डयोः,
शिलष्टश्चण्डिमडम्बरेण निबिडश्रीखण्डपुण्ड्रोज्ज्वलः ।
निर्द्धूतोद्यदचण्डरश्मिघटया तुण्डश्रिया मामकं
कामं मण्डय पुण्डरीकनयन त्वं हन्त हृन्मण्डलम् ।
कन्दर्पकोदण्ड-दर्प्पक्रियोद्दण्ड-
दृग्भङ्गिकाण्डीर संजुष्टभाण्डीर
धीर !
त्वमुपेन्द्र कलिन्दनन्दिनी-तटवृन्दावनगन्धसिन्धुर ।
जय सुन्दरकान्तिकन्दलैः स्फुरदिन्दीवरवृन्दबन्धुभिः ।
सविरुदं पाण्डूत्पलमिदम् ।२३।

२४. अथ इन्दीवरम्

जय जय हन्त
द्विष दभिहन्त-
र्मधुरिमसन्त-
र्पितजगदन्त-
र्मृदुल वसन्त-
प्रिय सितदन्त-
[स्फुरितदिगन्त
प्रसरदुदन्त][2]

---

१. मोवि. कुण्ठी । २. पंक्तिद्वयं नास्ति क. प्रतौ ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रभवदनन्त-
प्रियसख सन्त-
स्त्वयि रतिमन्तः
स्वमुदहरन्त][1]
प्रभुवर नन्दा-
त्मज गुणकन्दा-
सितनवकन्दा-
कृतिधर[2] कुन्दा-
मलरद तुन्दा-
त्तभुवन वृन्दा-
वनभवगन्धा-
स्पदमकरन्दा-
न्वितनवमन्दा-
रकुसुमवृन्दा-
ञ्चितकच वन्दा-
रुनिखिलवृन्दा[3]-
रकवरबन्दी-
डित विधुसन्दी-
पितलसदिन्दी-
वरपरिनिन्दी-
क्षणयुग नन्दी-
श्वरपतिनन्दी-
हित जय वीर !

स्मितरुचिमकरन्दस्यन्दि वक्त्रारविन्दं,
तव पुरुपरहंसान्विष्ट गन्धं मुकुन्द ।
विरचित[4]पशुपालीनेत्रसारङ्गरङ्गं,
मम हृदयतडागे सङ्गमङ्गीकरोतु ।

अम्बरगतसुरविनतिविलम्बित
तुम्बरुपरिभविमुरलिकरम्बित

[–] १. पंक्तिचतुष्टयं नास्ति क. प्रतौ । २. गोवि. धृतिधर । ३. ख. पंक्तिरियं नास्ति । ४. गोवि. परिचित ।

CC-0. RORI Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

शम्बरमुखमृगनिकरकुटुम्बित
संभ्रमवलयितयुवतिविचुम्बित
धीर !

अम्बुजकुटुम्बदुहितुः कदम्बसम्बाधबन्धुरे पुलिने ।
पीताम्बर कुरु केलिं त्वं वीर ! नितम्बिनीघटया ।।

सविरुदमिदमिन्दीवरम् ।२४।

२५. अथ अरुणाम्भोरुहच्चण्डवृत्तम्

जय रससम्पद्-विरचितझम्प
स्मरकृतकम्प-प्रियजनशम्प
प्रवणितकम्प-स्फुरदनुकम्प
द्युतिजितशम्प-स्फुटनवचम्प-
श्रितकचगुम्प श्रुतिपरिलम्ब-
स्फुरितकदम्ब स्तुतमुख डिम्भ-
प्रिय रविबिम्बो-दयपरिजृम्भो-
न्मुखलसदम्भो-रुहमुख लम्बो-
द्भटभुज लम्बो-दरवरकुम्भो-
पमकुचबिम्बो-ष्ठयुवतिचुम्बो-
द्भट परिरम्भोत्सुक कुरु शं भो-
स्तडिदवलम्बो-जितमिलदम्भो-
धरसुविडम्बो-द्धुर नतशम्भो
रपिजितदम्भो[1]-लिगरिमसम्भा-
वितभुजजृम्भा[2]-हितमद लम्पा-
कमनसि सम्पादय मयि तं पा-
किममनुकम्पालवमिह धीर !

दिव्ये दण्डधरस्वसुस्तटभवे फुल्लाटवीमण्डले,
वल्लीमण्डपभाजि लब्धमदिरस्तम्बेरमाडम्बरः ।
कुर्वन्नञ्जनपुञ्जगञ्जनमति श्यामाङ्गकान्तिश्रिया,
लीलापाङ्गतरङ्गितेन तरसा मां हन्त सन्तर्पय ।

१. गोवि. परिजितदम्भो । २. ख. तम्भाः गोवि. जम्भा ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अम्बुजकिरणविडम्बक खञ्जनपरिचलदम्बक
चुम्बितयुवतिकदम्बक कुन्तललुठितकदम्बक
वीर !

प्रेमोद्वेल्लितवल्गुभिर्वलयितस्त्वं वल्लवीभिर्विभो !
रागोल्लापितवल्लकीविततिभिः कल्याणवल्लीभुवि ।
सोल्लुण्ठं मुरलीकलापरिमलं[1] मल्लारमुल्लासयन्,
बाल्येनोल्लसिते दृशौ मम तडिल्लीलाभिरुत्फुल्लय ।

सविरुदमिदमरुणाम्भोरुहम् ।२५।

एते कादिपञ्चवर्गोत्थापिताः पञ्चचण्डवृत्तस्य महाकलिकारूपस्य सङ्कीर्णाः प्रभेदाः ।

अथ गर्भिताः

तत्र प्रभेदाः—

२६. फुल्लाम्बुजञ्चण्डवृत्तम्

षष्ठे भङ्गश्च मैत्री च नयावेव गणौ यदि ।
अन्तस्थस्य तृतीयेन यदि मैत्रीकृता भवेत् ।। २९ ।।
स्वरोपस्थापिता श्लिष्टा रमणीयतरा क्वचित् ।
फुल्लाम्बुजं तदुद्दिष्टं चण्डवृत्तं सुपण्डितैः ।। ३० ।।

[व्या०] **कोऽर्थः ? उच्यते—यदि नयावेव—नगणयगणावेव गणौ स्तः । षष्ठे वर्णे भङ्गो मैत्री च यदि अन्तस्थस्य यवर्गस्य तृतीयेन लकारेण कृता भवेत् । सापि क्वचित् स्वरोपस्थापिता श्लिष्टा च स्यात् । तदा एतद्देशादृतमिदं नामतः फुल्लाम्बुजं इति प्रसिद्धं सुपण्डितैश्चण्ड-वृत्तमुद्दिष्टं—कथितमित्यर्थः । यथा—**

व्रजपृथुवल्ली[2]-परिसरवल्ली-
वनभुवि तल्लीगणभृति मल्ली-
मनसिजभल्ली-जितशिवमल्ली-
कुमुदमतल्लीजुषि गत झिल्ली-
परिषदि हल्ली-सकसुखझिल्ली[3]-
रत परिफुल्ली-कृतचलचिल्ली-

१. गोवि. कलाभिरमल । २. गोवि. पल्ली । ३. गोवि. भल्ली ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

जितरतिमल्लीमद भर सल्ली-
लतिलक कल्या-तनुशततुल्या-
हृवरसकुल्या-चटुतिलखल्या-
प्रमथन कल्याणचरित धीर।

गोपीः सम्भृतचापल-चापलताचित्रया भ्रुवा भ्रमयन्।
विलस यशोदावत्सल वत्सलसद्धेनुसंवीत।

[1]*वल्लवललनालीलावलयित
पल्लवरचना मल्लीविलसित
वल्लभकलनाखेलासमुदित
तल्लवघटना नीलालकवृत।

तव चरणाम्बुजमनिशं विभावये नन्दगोपाल।
गोपालनाय वृन्दावनभुवि यद् रेणुरञ्जिता धरणी।*

सविरुदं फुल्लाम्बुजमिदम् ।२६।

---

१ *-*टिप्पणी—सङ्केतान्तर्गतांशस्य स्थाने निम्नांशो वर्त्तते गोविन्दविरुदावल्याम्। परञ्च वृत्तमौक्तिककृता चायमंशः पल्लवितञ्चण्डवृत्तस्य शिथिलद्वितीयवर्णोदाहरणरूपेण स्वीकृतः, स च २३३ पृष्ठेऽवलोकनीयो विद्वद्भिः।

वल्लवलीलासमुदयसमुचित
पल्लवरागाधरपुटविलसित
वल्लभगोपीप्रवणित मुनिगण-
दुर्लभकेलीभरमधुरिमकण
मल्लविहाराद्भुततरुणिमधर
फुल्लमृगाक्षीपरिवृतपरिसर
चिल्लिविलासार्पितमनसिजमद
मल्लिकलापामलपरिमलपद
रल्लकराजीहरसुमधुरकल
हल्लकमालापरिवृतकचकुल
वीर!

वल्लवललनावल्ली-करपल्लवशीलितस्कन्धम्।
उल्लसितः परिफुल्लं भजाम्यहं कृष्णकङ्केल्लिम्॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

२७. अथ चम्पकञ्चण्डवृत्तम्

द्वितीयो मधुरो यत्र श्लिष्टः क्वापि भवेद् यदि ।
भनौ षडक्षरं चैतत् स्वेच्छातः पदकल्पनम् ।। ३१ ।।

चम्पकं चण्डवृत्तं स्यात्—

[व्या०] अस्यार्थः—[१]यत्र द्वितीयो वर्णो मधुरः–परसवर्णो भवेत् । क्वापि–कुत्रचित् यदि श्लिष्टोपि स्यात् ।[१] तत्र गणनियममाह— भनौ–भगणनगणौ गणौ भवेताम् । षडक्षरं चैतत् पदम् । किञ्च, पदकल्पनं स्वेच्छातो यत्र भवति तदेतच्चम्पकं नाम चण्डवृत्तं स्यात् । यथा—

सञ्चलदरुण[२]-सुन्दरनयन
कन्दरशयन वल्लवशरण
पल्लवचरण मञ्जुलघुसृण-
पिञ्जलमसृण चन्दनरचन
नन्दनवचन खण्डितशकट
दण्डितविकट-गर्वितदनुज
पर्वितमनुज रक्षितधवल
लक्षितगवल पन्नगदलन
सन्नगकलन वन्धुरवलन
सिन्धुरचलन[३] कल्पितसदन[४]-
जल्पितमदन[५] मञ्जुलमुकुट
वञ्जुललकुट-रञ्जितकरभ
गञ्जितशरभ-मण्डलवलित
कुण्डलचलित-सन्दितलपन
नन्दिततपन-कन्यकसुषम
धन्यककुसुम[६]-गर्भक धरण[७]-
दर्भकशरण तर्णकवलित
वर्णकललित शं वरवलय
डम्बर कलय
देव

१-१. ख. प्रतौ नास्ति पाठः । २. गोवि. संचलदरुणचञ्चलकरुणसुन्दरनयन । ३. क. वदन । ४. गोवि. मदन । ५. गोवि. सदन । ६. गोवि. वन्यककुसुम । ७. गोवि. विरण ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

दानवघटालवित्रे धातुविचित्रे जगच्चित्रे ।
हृदयानन्दचरित्रे रतिरास्तां वल्लवीमित्रे ।
रिङ्गदुरुभृङ्ग-तुङ्गगिरिश्रृङ्ग-
श्रृङ्गरुतभङ्ग-सङ्गधृतरङ्ग
वीर !
त्वमत्र चण्डासुरमण्डलीनां रण्डावशिष्टानि गृहाणि कृत्वा ।
पूर्णान्यकार्षीर्व्रजसुन्दरीभिर्वृन्दाटवीपुण्ड्रकमण्डपानि ॥

सविरुदं चम्पकमिदम् ।२७।

२८. अथ वञ्जुलञ्चण्डवृत्तम्

—वञ्जुलं नजला यदि ।
पञ्चमो मधुरस्तत्र पदं मुनिमितं मतम् ॥ ३२ ॥

[व्या०] अयमर्थः—यदि नजलाः—नगणजगणलघवः स्युः । किञ्च, तत्र पदे पञ्चमो वर्णो मधुरः—परसवर्णो भवति । पदमपि मुनिभिः—सप्तभिर्वर्णैर्मितं—परिमितं यत्र तत् वञ्जुलं—वञ्जुलाख्यमतिमञ्जुलं चण्डवृत्तं मतं—सम्मतमित्यर्थः । पदकल्पनं तु पूर्ववत् । यथा—

जय जय सुन्दर-विहसित मन्दर-
विजितपुरन्दर निजगिरिकन्दर-
रतिरसशन्धर मणियुतकन्धर
गुणमणिमन्दिर हृदि वलदिन्दिर
गतिजितसिन्धुर परिजनबन्धुर
पशुपतिनन्दन तिलकितचन्दन
विधिकृतवन्दन पृथुहरिचन्दन-
परिवृतनन्दन[1]-मधुरिमनिन्दन[2]-
मधुवन वन्दित-कुसुमसुगन्धित-
वनवररञ्जित रतिरभसञ्जित[3]
शिखिदलकुण्डल-सहकृतभण्डिल
नवसिततण्डुल-जयिरदमण्डल
रतिरणपण्डित वरतनुभण्डित
नखपदमण्डित दशनविखण्डित
धीर !

---

१. पंक्तिरियं नास्ति ख. प्रतौ । २. क. मधुरिमनन्दन- । ३. गोवि. रतिभरसञ्जित ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

निनिन्द निजमिन्दिरा वपुरवेक्ष्य यासां श्रियं,
विचार्य गुणचातुरीमचलजा च लज्जां गता ।
लसत्पशुपनन्दिनीततिभिराभिरानन्दितं,
भवन्तमतिसुन्दरं व्रजकुलेन्द्र वन्दामहे ।

रसपरिपाटी स्फुटतरुवाटी
मनसिजधाटी प्रियनतशाटी[1]-
हर जय वीर !

सम्भ्रान्तैः सषडङ्गपातमभितो वेदैर्मुदा वन्दिता,
सीमन्तोपरि गौरवादुपनिषद्देवीभिरप्यर्पिता ।
आनम्रं प्रणयेन च प्रणयतो तुष्टामना[2]विकृतो[3],
मृद्वी ते मुरलीरुतिर्मुररिपोः शर्माणि निर्मातु नः ।

सविरुदं वञ्जुलमिदम् ।२८।

२९. अथ कुन्दञ्चण्डवृत्तम्

द्वितीयषष्ठौ मधुरौ श्लिष्टौ वा क्वापि तौ यदि ।
स्याताम् भजौ तदा कुन्दम्—

[व्या०] एतदुक्तं भवति । यदि द्वितीयषष्ठौ वर्णौ मधुरौ–परसवर्णौ क्वापि पदे श्लिष्टौ वा, तौ वर्णौ स्याताम् । अथ च भजौ–भगणजगणौ भवतः, तदा कुन्दं इति नाम चण्डवृत्तं भवति । षडक्षरमिदं पदम् । पदविन्यासस्तु पूर्ववत् । यथा–

नन्दकुलचन्द्र लुप्तभवतन्द्र
कुन्दजयिदन्त दुष्टकुलहन्त
रिष्टसुवसन्त मिष्टसदुदन्त
संदलितमल्लि-कन्दलितवल्लि-
गुञ्जदलिपुञ्ज-मञ्जुतरकुञ्ज-
लब्धरतिरङ्ग हृद्यजनसङ्ग-
शर्मलसदङ्ग हर्षकृदनङ्ग
मत्तपरपुष्ट-रम्यकलघुष्ट
गन्धभरजुष्ट पुष्पवनतुष्ट
कृतखलक्ष[4] युद्धनयदक्ष

---

१. गोवि. प्रियनवशाटी- । २. गोवि. हृष्टात्मना । ३. गोवि. भिष्टुता । ४. गोवि. यक्ष ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

वल्गुकचपक्ष-[वद्धशिखिपक्ष] [1]
पिष्टनततृष्ण तिष्ठ हृदि कृष्ण
वीर !
तव कृष्ण केलिमुरली हितमहितं च स्फुटं विमोहयति ।
एवं सुधोर्मिसुहृदा विषविषमेणापरं ध्वनिना ।
सन्नीतदैतेयनिस्तार कल्याणकारुण्यविस्तार
पुष्पेषुकोदण्डटङ्कार-विस्फारमञ्जरीझङ्कार
धीर !
रङ्गस्थले ताण्डवमण्डनेन [2] निरस्य मल्लोत्तमपुण्डरीकान् ।
कंसद्विपं चण्डमखण्डयद् यो हृत्पुण्डरीके स हरिस्तवास्तु ।

सविरुदं कुन्दमिदम् ।२६।

३०. अथ वकुलभासुरचण्डवृत्तम्

—अथो [3] वकुलभासुरम् ।। ३३ ।।
चतुर्भिस्तुरगैः निर्जैः पदं यत्रातिसुन्दरम् ।
रसेन्दुमात्रं सोल्लालं—

[व्या०] अस्यार्थः—अथ–कुन्दानन्तरं बकुलभासुरं इति नामकं चण्डवृत्तं कथ्यत इति शेषः । यत्र चतुर्भिः–चतुःसंख्याकैः निर्जैः–जगणविरहितैः चतुर्विधैस्तुरगैः–चतुष्कलैः द्विजगण-कर्ण-भगण-[4] सगणैरेवातिसुन्दरं–अतिरमणीयं, रसेन्दुमात्रं–षोडशमात्रं पदं भवति । तच्च पदं उत्सर्गसिद्धं षोडश-विंशकावधिवाणाधिकं विधेयमित्युपदेशः । किञ्च, सोल्लालं–उल्ललनमेव उल्लालः परावर्त्तनं तेन सहितं शृङ्खलाबद्धन्यायेन घटितमित्यर्थः । तदीदृशं बकुलभासुरं चण्डवृत्तं सविरुदं भवतीति वाक्यार्थः । यथा–

जय जय वंशीवाद्यविशारद
शारदसरसीरुहपरिभावक-
भावकलितलोचनसञ्चारण
चारणसिद्धवधूधृतिहारक
हारकलापरुचाश्रितकुण्डल [5]
कुण्डलसित [6] गोवर्द्धनभूषित
भूषितभूषणविच्छन [7] विग्रह
विग्रहखण्डितखलवृषभासुर

---

१. [-] क. ख. नास्ति पाठः । २. गोवि. मण्डलेन । ३. ख. अथ । ४. ख. तगणसगणौ- । ५. गोवि. रुचाञ्चितकुण्डल । ६. गोवि. कुण्डलसद् । ७. गोवि. चिद्घन- ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

भासुरकुटिलकचार्पितचन्द्रक
चन्द्रकदम्ब[1]रुचाभ्यधिकानन
काननकुञ्जगृहस्मरसङ्गर
सङ्गरसोद्धुरवाहुभुजङ्गम
जङ्गमनवतापिञ्छनगोपम
गोपमनीषितसिद्धिषु दक्षिण
दक्षिणपाणिगदण्डसभाजित
भाजितकोटिशशाङ्कविरोचन
रोचनया कृतचारुविशेषक
शेषकमलभवसनकसनन्दन-
नन्दनगुण मा नन्दय सुन्दर
[2]सुन्दर मामव भीतिविनाशन[2]
वीर !

भवतः प्रतापतरणावुदेतुमिह लोहितायति स्फीते ।
दनुजान्धकारनिकराः शरणं भेजुर्गुहाकुहरम् ॥

पुलिनधृतरङ्ग-युवतिकृतसङ्ग
मदनरसभङ्ग-गरिमलसदङ्ग
धीर !

पशुषु कृपां तव दृष्ट्वा दुष्ट[3]महारिष्टवत्सकेशिमुखाः ।
दर्पं विमुच्य भीताः पशुभावं भेजिरे दनुजाः ॥

सविरुदं बकुलभासुरमिदम् ।३०।

३१. अथ बकुलमङ्गलञ्चण्डवृत्तम्

—अन्तो वकुलमङ्गलम् ॥ ३४ ॥

चतुर्भिर्भगणैरेव हयैर्यत्र पदं भवेत् ।
रसेन्दुकलकं तत्र तृतीये शृङ्खलास्थिता ॥ ३५ ॥

[व्या०] कोऽर्थः ? उच्यते । अन्तः—बकुलभासुरानन्तरं बकुलमङ्गलं—बकुलमङ्गलाख्यं चण्डवृत्तमुच्यत इति शेषः ॥३४॥

यत्र चतुर्भिः—चतुःसंख्याकैः केवलैरादिगुरुकैः—भगणैरेव हयैः—चतुष्कलैः रसेन्दुकलकं—षोडशमात्रं पदं भवेत् । किञ्च, तत्र—तस्मिन्पदे तृतीये अर्थात् तृतीये भगणे शृङ्खलास्थिता चेद्—

---

१. गोवि. चन्द्रकला— । २. गोवि. पंक्तिरियं नास्ति । ३. गोवि. नून ।

CC-0. BORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

भवति, तदा बकुलमङ्गलाभिधानं चण्डवृत्तं सविरुदं भवतीति वाक्यार्थः। पदविन्यासोपदेशस्तु पूर्ववदेव। षोडशमात्रत्वमुभयत्र समानं। परं तु चतुर्थभगणघटनमध्यशृङ्खलाबन्धनमात्रमेव बकुलभासुराद् भेदं बोधयतीत्यवधेयं सुधीभिरिति शिवम् ॥३५॥

यथा–

त्वं जय केशव केशवलस्तुत
वीर्यविलक्षण लक्षणबोधित
केलिषु नागर नागरणोद्धत
गोकुलनन्दन नन्दनतिव्रत-
सान्द्रमुदर्प्पक दर्प्पकमोहन
हे सुषमानवमानवतीगण-
माननिरासक रासकलाश्रित
सस्तनगौरवगौरवधूवृत[1]
कुञ्जशतोषित तोषितयौवत
रूपभराधिकराधिकयार्चित
भीरुविलम्बित लम्बितशेखर
केलिकलालस[2]लालसलोचन
शेषमदारुणदारुणदानव-
मुक्तिदलोकन लोकनमस्कृत-
गोपसभावक भावकशर्मद
हन्त कृपालय पालय मामपि
देव ![3]

पलायनं[4] फेनिलवक्त्रतां च बन्धं च भीतिं च मृतिं च कृत्वा।
पवर्गदातापि शिखण्डमौले त्वं शात्रवाणामपवर्गदोऽसि ॥

प्रणयभरित - मधुरचरित
भजनसहित - पशुपमहित
देव !

अनुभूय विक्रमं ते युधि लब्धाः कांदिशीकत्वम्।
हित्वा[5] किल जगदण्डं प्रपलायांचक्रिरे दनुजाः।

सविरुदं बकुलमङ्गलमिदम् ।३१।

---

१. क. कृत। २. गोवि. केलिकुलालस-। ३. गोवि. वीर। ४. गोवि. परांभवं।
५. गोवि. भित्त्वा।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

३२. अथ मञ्जर्यां कोरकश्चण्डवृत्तम्

मञ्जरी चात्र पूर्वं श्लोको लेखस्तदनन्तरम् ।
कोरकाख्यं चण्डवृत्तं पदसंख्यानखैर्यदि ।। ३६ ।।

[व्या०] अस्यार्थः—अभिधीयत इत्यर्थः । प्रथमतो मञ्जरी ततः कलिका भवतीति लौकिकानां प्रसिद्धेः । तत्र चतुर्भिः भगणैः शुद्धैराद्यन्तयमकाङ्कितैः कोरकाख्यं चण्डवृत्तं । यदि पदस्य आद्यन्तयोर्यमकाङ्कितैः–यमकेन अङ्कितैः सयमकैरिति यावत्, शुद्धैः–शृङ्खलारहितैश्चतुर्भिः भगणैः–आदिगुरुकैर्गणैः पदम् । अथ च पदसंख्या यदि नखैः–विंशत्या भवति, तदा कोरकाख्यं चण्डवृत्तं भवति । शृङ्खलाराहित्यमेवात्र पूर्वस्माद् भेदं गमयतीति ।।३६।।

तत्र प्रथमं मञ्जरी, यथा–

नवशिखिशिखण्डशिखरा[1] प्रसूनकोदण्डचित्रशस्त्रीव ।
क्षोभयति कृष्ण वेणी श्रेणीरेणीदृशां भवतः ।।

कोरकम्, यथा–

मानवतीमदहारिविलोचन
दानवसञ्चयघूकविरोचन
डिण्डिमवादिसुरालिसभाजित
चण्डिमशालिभुजार्गलराजित
दीक्षितयौवतचित्तविलोभन-
वीक्षित सुस्मितमार्दवशोभन
पर्वतसम्भृति[2]निर्धुतपीवर-
गर्वतमःपरिमुग्धशचीवर[3]
रञ्जितमञ्जुपरिस्फुरदम्बर
गञ्जितकेशिपराक्रमडम्बर
कोमलताङ्कितवागवतारक
सोमललाममहोत्सवकारक
हंसरथस्तुतिशंसितवंशक
कंसवधूश्रुतिनुन्नवतंसक
रङ्गतरङ्गितचारुदृगञ्चल
सङ्गतपञ्चशरोदयचञ्चल
लुञ्चितगोपसुतागणशाटक
सञ्चितरङ्गमहोत्सवनाटक
तारय मामुरुसंसृतिशातन

---

१. क. शिखण्डिशिखराः । २. गोवि. पर्वतसंधृति- । ३. ख. शशीवर ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

धारय लोचनमत्र सनातन
धीर !
तुरगदनुसुताङ्गग्रावभेदे दधानः,
कुलिशघटितटङ्कोद्दण्डविस्फूर्जितानि ।
तदुरुविकटदंष्ट्रोन्मु(मृ)ष्टकेयूरमुद्रः,
प्रथयतु पटुतां वः कैशवो वामबाहुः ।
माधव विस्फुर दानवनिष्ठुर
यौवतरञ्जित सौरभसञ्जित
वीर !
पलितंकरणी दशा प्रभो मुहुरन्धंकरणी च मां गता ।
सुभगंकरणी कृपा शुभैर्न तवाढ्यंकरणी च मय्यभूत् ।।

सविरुदः कोरकोऽयम् ।३२।

३३. अथ गुच्छकचण्डवृत्तम्

नसौ जनौ जलौ क्रमात् प्रयोजितौ बुधा यदा ।
तदा तु चण्डवृत्तकं विभावयन्तु गुच्छकम् ।। ३७ ।।

[व्या०] अयमर्थः---हे बुधाः ! यदा नसौ–नगणसगणौ, अथ च जनौ–जगणनगणौ, ततश्च जलौ–जगणलघू क्रमात्–प्रतिपदं प्रयोजितौ भवतः, तदा तु गुच्छकं नाम चण्डवृत्तं विभावयन्तु–कुर्वन्तु । अत्रोभयत्र स्वार्थे कः ।।३७।। किञ्च–

षोडशार्णं पदं चात्र पदान्यपि च षोडश ।
सानुप्रासानि यमकैरङ्कितानि च गुच्छके ।। ३८ ।।

[व्या०] सुगमम् । यथा–

जय जलदमण्डलीद्युतिनिवहसुन्दर
स्फुरदमलकौमुदीमृदुहसितबन्धुर
व्रजहरिणलोचनावदनशशिचुम्बक
प्रचलतर[1]खञ्जनद्युतिविलसदम्बक
स्मरसमरचातुरीनिचयवरपण्डित
प्रणययुतराधिकापटिमभरभण्डित
क्वणदतुलवंशिका[2]हृतपशुपयौवत
स्थिरसमरमाधुरीकुलरमितदैवत

---

१. गोवि. प्रचुरतर- । २. क. वीशिका ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

ग्रथितशिखिचन्द्रकस्फुटकुटिलकुन्तल
श्रवणतट[1]सञ्चरन्मणिमकरकुण्डल
प्रथित तव[2] ताण्डवप्रकटगतिमण्डल
द्विजकिरणधोरणीविजितसिततण्डुल
स्फुरित तव दाडिमीकुसुमयुतकर्णक[3]
छदनवरकाकलीहृतचटुलतर्णक
[4]प्रकटमिह मामके हृदि वससि माधव
स्फुरसि ननु संततं सकलदिशि मामव[4]
धीर !

पुंनागस्तवकनिवद्धकेशजूटः,
कोटीरीकृतवरकेकिपक्षकूटः ।
पायान्मां मरकतमेदुरः स तन्वा,
कालिन्दीतटविपिनप्रसूनधन्वा ।[5]

गर्गप्रिय जय भर्गस्तुत रस
सर्गस्थिरनिज-वर्गप्रवणित
धीर !

दनुजवधूवैधव्यव्रतदीक्षाशिक्षणाचार्यः ।
स जयति विदूरपाती मुकुन्द तव शृङ्गनिर्घोषः ।

सविरुदं गुच्छाख्यं चण्डवृत्तम् ।३३।

३४. अथ कुसुमञ्चण्डवृत्तम्

चतुर्भिर्नगणैर्यत्र पदं यमकितं भवेत् ।
अनन्तनेत्रप्रमितं कुसुमं तत्प्रकीर्तितम् ॥ ३६ ॥

[व्या०] अनन्तं—शून्यं नेत्रं—द्वयं ताभ्यां प्रमितं—गणितं पदं यत्र तत्, विंशतिपदमित्यर्थः । शेषं सुगमम् ।।३६।।

यथा—

कुसुमनिकरनिचितचिकुर[6]
नखरविजितमणिजमुकुर
सुभटपटिमरमितमथुर
विकटसमरनटनचतुर

---

१. गोवि. श्रवणनट- । २. गोवि. प्रथितनव- । ३. गोवि. स्फुरितवरदाडिमीकुसुमयुग-कर्णक । ४-४. गोवि. पंक्तिद्वयं नास्ति । ५. क. नत्वा । ६. गोवि. रचितचिकुर ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

समदभुजगदमनचरण
निखिलपशुपनिचयशरण[1]
[2]अमलकमलविशदचरण
सकलदनुजविलयकरण[2]
मुदितमदिरमधुरनयन
शिखरिकुहररचितशयन
रमितपशुपयुवतिपटल
मदनकलहघटनचटुल
विषमदनुजनिवहमथन
भुवनरसदविशदकथन
कुमुदमृदुलविलसदमल-
हसितमधुरवदनकमल
मधुपसदृशविचलदलक
मसृणघुसृणकलिततिलक
निभृतमुषितमथितकलश
सततमजित मनसि विलस
धीर !

सखि! चातकजीवातुर्माधव सुरकेकिमण्डलोल्लासि ।
तव दैत्यहंसभयदं शृङ्गाम्बुदगर्जितं जयति ॥

पुरुषोत्तम वीरव्रत यमुनाद्भुततीरस्थित
मुरलिध्वनिपूरक्रिय सुरभीव्रजनादप्रिय !
वीर !

जगतीसभावलम्बः स तव जयत्यम्बुजाक्ष दोःस्तम्भः ।
रभसाद्विभेद दनुजान् प्रतापनहरिर्यतोऽभ्युदितः ॥

सविरुदं कुसुममिदम् ।३४।

एते महाकलिकारूपस्य चण्डवृत्तस्य नवभिर्मताः[3] प्रभेदाः । इत्येवं चतुस्त्रिंशतिः ३४ प्रभेदाः ।

[4]इति श्रीवृत्तमौक्तिके विरुदावल्यां महाकलिकारूप-पुरुषोत्तमादिकुसुमान्तं[4]
सविरुदमवान्तरं चण्डवृत्तप्रकरणं द्वितीयम् ।२।

---

१. क. चरण । २-२. गोवि. पंक्तिद्वयं नास्ति । ३. ख. नवगर्भिताः । ४-४. पंक्तिरियं नास्ति क. प्रतौ ।

T GC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

[विरुदावल्यां तृतीयं त्रिभङ्गी-कलिकाप्रकरणम्]

१. अथ दण्डकत्रिभङ्गी कलिका

अथ त्रिभङ्गीकलिकासु दण्डकत्रिभङ्गीकलिकार्गाभितं तद्गतैव[1] लक्ष्यते। तद्भङ्गानां[2] बाहुल्यादेवास्याः कलिकायाः दण्डकत्रिभङ्गीति संज्ञा।

अथाऽस्या लक्षणं सम्यक् सोदाहरणमुच्यते।
भङ्गबाहुल्यतश्चास्या संज्ञाप्यान्वर्थिका[3] भवेत् ॥१॥

यथा–

नगणयुगलादनन्तरमिह चेद् रगणा भवन्ति रन्ध्रमिताः।
विरुदावल्यां कलिका कथितेयं दण्डकत्रिभङ्गीति ॥ २ ॥

[व्या०] रन्ध्राणि–नव कथिता इत्यत्र तदित्यध्याहारः। भङ्गबहुत्वाच्चास्याः दण्डकत्रिभङ्गी संज्ञेति फलितोऽर्थः। अत्र च पदरचनायां पदविन्यासः स्वेच्छया भवतीति सिंहावलोकनरीत्यावगन्तव्यम्। यथा–

चित्रं मुरारे सुरवैरिपक्ष-
स्त्वया समन्तादनुबद्धयुद्धः।
अमित्रमुच्चैरविभिद्य भेदं,
मित्रस्य कुर्वन्नमितं[4] प्रयाति ॥

श्रितमघजलधेर्वहित्रं चरित्रं सुचित्रं विचित्रं
फणित्रं समित्रं पवित्रं लवित्रं रुजाम्।
जगदपरिमितप्रतिष्ठं पटिष्ठं बलिष्ठं गरिष्ठं
[5]अदिष्ठं सुनिष्ठं लघिष्ठं दविष्ठं[5] धियाम्।
निखिलविलसितेऽभिरामं सरामं मुदा मञ्जुदाम-
न्नभामं ललामं धृतामन्दधामं नये।
मधुमथनहरे मुरारे पुरारेरपारे ससारे
विहारे सुरारेरुदारे च दारे प्रभुम्।
स्फुरितमिनसुतातरङ्गे विहङ्गेशरङ्गेण गङ्गे-
ऽष्टभङ्गे भुजङ्गेन्द्रसङ्गे सदङ्गेन भोः।

---

१. ख. अन्तर्गतैव। २. क. तद्भानां। ३. ख. संज्ञाप्यान्नर्थिकी। ४. गोवि. कुर्वन्नमृतं। ५-५. गोवि. वरिष्ठं अदिष्ठं सुनिष्ठं दविष्ठं।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

शिखरिवरदरीनिशान्तं प्रयान्तं सकान्तं विभान्तं
नितान्तं च कान्तं प्रशान्तं कृतान्तं द्विषाम् ।
दनुजहर भजाम्यनन्तं सुदन्तं नुदन्तं दृगन्तं
हसन्तं 'भजन्तं चरन्तं'[1] भवन्तं सदा ।

वीर !

पीत्वा बिन्दुकणं मुकुन्द भवतः सौन्दर्यसिन्धोः सकृत्-
कन्दर्पस्य वशं गता विमुमुहुः के वा न साध्वीगणाः ।
दूरे राज्यमयन्त्रितस्मितकला भ्रूवल्लरीताण्डव-
क्रीडापाङ्गतरङ्गितप्रभृतयः कुर्वन्तु ते विभ्रमाः ॥

चारुतट - रासनट
गोपभट पीतपट
पद्मकर दैत्यहर
कुञ्जचर वीरवर
नर्ममय कृष्ण जय

नाथ !

संसाराम्भसि दुस्तरोर्मिगहने गम्भीरतापत्रयी-
कुम्भीरेण गृहीतमुग्रगतिना[2] क्रोशन्तमन्तर्भयात् ।
दीप्रेणाद्य सुदर्शनेन बिबुधक्लान्तिच्छिदाकारिणा,
चिन्तासन्ततिरुद्धमुद्धर हरे मच्चित्तदन्तीश्वरम् ।

इति सविरुदा दण्डकत्रिभङ्गी कलिका ।१।

२. अथ सम्पूर्णा विदग्धत्रिभङ्गी कलिका

अथापरा सम्पूर्णा विदग्धत्रिभङ्गी कलिका लक्ष्यते । यथा–

युग्मे भङ्गस्तनौ त्र्युक्तौ भौ चान्ते यत्र मित्रितौ ।
वसुसंख्यं परे ह्यत्र[3] पदे सा स्यात् त्रिभङ्गिका ॥ ३ ॥
विदग्धपूर्वा सम्पूर्णा कलिकाऽतिमनोहरा ।
आद्यान्ताशीःपद्ययुक्ता—

[व्या०] एतद् युक्तं भवति । यत्र पदे–यस्यां कलिकायां वा युग्मे–द्वितीयाक्षरे भङ्गो भवति । तथा तनौ–तगणनगणौ स्तः । तौ च त्र्युक्तौ–वारत्रयमुक्तौ चेत् । अन्ते–तना त्रयान्ते[4] मित्रितौ–

---

१. गोवि. वसन्तं भजन्तं । २. गोवि. मतिना । ३. ख. भवेद् यत्र । ४. ख तनत्रयान्ते ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

संलग्नौ भौ–भगणौ च यदि स्तः। यत्र चैवंविधं वसुसंख्यं पदं भवेत्, सा विदग्धपूर्वा–विदग्ध-शब्दपूर्वा सम्पूर्णा प्रथमलक्षितलक्षणविलक्षणा अतिमनोहरा विदग्धत्रिभङ्गीकलिका स्यात् इत्यन्वयः। अष्टपदत्वमेव पूर्वोक्तायाः सकाशात् वैलक्षण्यं स्फुटमेव लक्षयति। एतदेव चास्याः सम्पूर्णत्वमिति। किञ्च, आद्यन्तयोः कलिकाया इति शेषः, आशीःपद्ययुक्ता–आशीःपद्याभ्यां युक्ता आशीर्वादयुक्तपद्याभ्यां संयुक्ता इत्यर्थः। आद्यन्तपदसाहित्यं च तत्कलिकायुक्तेषु पूर्वोक्तेषु सर्वेषु चण्डवृत्तेषु ज्ञेयं सुधीभिरित्युपदेशरहस्यं, अग्रेपि तथैव वक्ष्यमाणत्वादिति। इयमेव च खण्डावलीति व्यपदिश्यते, तथा चाग्रे तथैव लक्षयिष्यमाणत्वादिति। यथा–

उद्वेलत्कुलजाभिमानविकचाम्भोजालिशुभ्रांशवः[1]
केलीकोपकषायिताक्षिललनामानाद्रिदम्भोलयः।
कन्दर्पज्वरपीडितव्रजवधूसन्दोहजीवातवो,
जीयासुर्भवतश्चिरं यदुपते स्वच्छाः कटाक्षच्छटाः॥[2]

चण्डीप्रियनत चण्डीकृतबलरण्डीकृतखलवल्लभ वल्लव
पट्टाम्बरधर भट्टारक वककुट्टाक ललितपण्डितमण्डित
नन्दीश्वरपति-नन्दीहितभर संदीपितरससागर नागर
अङ्गीकृतनवसङ्गीतक वर-भङ्गीलवहृतजङ्गमलङ्गिम
गोत्राहितकर गोत्राहितदय गोत्राधिपधृतिशोभनलोभन
वन्यास्थितवहुकन्यापटहर धन्याशयमणिचोर मनोरम
शम्पारुचिपट सम्पालितभव-कम्पाकुलजन फुल्ल समुल्लस
उर्वीप्रियकर खर्वीकृतखल दर्वीकरपतिगर्वितपर्वत
वीर !

पिष्ट्वा सङ्ग्रामपट्टे पटलमकुटिले[3] दैत्यगोकण्टकानां,
क्रीडालोठीविघट्टैः स्फुटमरतिकरं नैचिकीचारकाणाम्[4]।
वृन्दारण्यं चकाराखिलजगदगदङ्कारकारुण्यकारो[5],
यः सञ्चारोचितं वः सुखयतु स पट्टुः कुञ्जपट्टाधिराजः।

पिच्छलसद्घननीलकेश
चन्दनचर्चितचारुवेश
खण्डितदुर्जनभूरिमाय,
मण्डितनिर्मलहारिकाय।
धीर !

---

१. क. शुभ्रांशनः। २. गोवि. पद्यं नास्ति। ३. क. पटलमकुलिते। ४. गोवि. चारुकाणाम्। ५. गोवि. कारुण्यधारः

CC-0. RORI Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

गीर्वाणं स्फुटमखिलं विवर्द्धयन्तं,
निर्वाणं दनुजघटासु संघटय्य ।
कुर्वाणं व्रजनिलयं निरन्तरोद्यत्-
पर्वाणं मुरमथन स्तुवे भवन्तम् ॥

द्वितीया सम्पूर्णा सविरुदा विदग्धत्रिभङ्गी कलिका ।२।

एते चण्डवृत्तस्य गर्भितान्तर्गताः प्रभेदाः ।

अथ मिश्रिताः

तत्र–

३. मिश्रकलिका

—मिश्रिता चाथ कथ्यते ॥ ४ ॥
आद्यन्ताशीःपद्ययुक्ता गद्याभ्यां चापि संयुता ।
मध्यतः कलिका कार्या सदण्डैर्भनजैर्गणैः ॥ ५ ॥
विरुदेनान्विता चापि रमणीयतरा मता ।
षट्पदा सापि विज्ञेया छन्दःशास्त्रविशारदैः ॥ ६ ॥

[व्या०] अस्यार्थः—अथ–विदग्धत्रिभङ्गीकलिकानन्तरं मिश्रिता-मिश्राकलिका कथ्यते–उच्यत इत्यर्थः । तां विशिनष्टि—कलिकाया आद्यन्तयोराशीःपद्याभ्यां युक्ता, तथा आद्यन्तयोरेव गद्याभ्यां च संयुता मध्यतस्तयोरित्यर्थः, कलिका कार्या । कलिकां विशिनष्टि - सदण्डैः-दण्डो लघुः[1] तत्सहितैः भनजैः–भगणनगणजगणैरन्विता-संयुक्ता इत्यर्थः ।।४-५।।

तथा विरुदेन चाप्यन्विता । अतएवातिरमणीयतरा मता–सम्मता । साऽपि च छन्दःशास्त्रविशारदैः षट्पदा विज्ञेया इत्युपदिश्यत इति वाक्यार्थः । विरुदसाहित्यं च विदग्धत्रिभङ्गीकलिकालक्षणकारिकायामप्यवधेयं सुधीभिरिति शिवम् ।।६।।

अत्र चादौ आशीःपद्यं, ततो गद्यं, ततश्च षट्पदीकलिका, तदनन्तरमपि गद्यं, ततो विरुदं, अनन्तरमपि गद्यमेव । ततोपि विरुदं धीरं सम्बोधनोपलक्षितं, सर्वान्ते चाशीःपद्यम्, इति क्रमेणोक्तलक्षणोपलक्षिता मिश्रा कलिका कार्या, इति फलितोऽर्थः ।

यथा–

उदञ्चदतिमञ्जुलस्मितसुधोर्मिलीलास्पदं,
तरङ्गितवराङ्गनास्फुरदनङ्गरङ्गाम्बुधिः ।
दृगिन्दुमणिमण्डलीसलिलनिर्झरस्यन्दनो,
मुकुन्द मुखचन्द्रमास्तव तनोतु शर्म्मातुलम् ।[2]

---

१. क. लघ्वः । २. गोवि. तनोति शर्माणि नः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

दुष्टदुर्दमारिष्टकण्ठीरवकण्ठविखण्डनखेलदष्टापद नवीनाष्टापदविस्पर्द्धिपदाम्बरपरीत गरिष्ठगण्डशैलसपिण्डवक्षःपट्ट पाटव—

दण्डितचटुलभुजङ्गम
कन्दुकविलसितलङ्घिम
भण्डिल[1]विचकिल[2]मण्डित
सङ्गरविहरणपण्डित
दन्तुरदनुजविडम्बक
कुण्ठितकुटिलकदम्बक ।

खचिताखण्डलोपलविराजदण्डजराजमणिम[य][3]कुण्डलमण्डितमञ्जुलगण्डस्थलविशङ्कटभाण्डीरतटीताण्डवकलारञ्जितसुहृन्मण्डल

नन्दविचुम्बित-कुन्दनिभस्मित
गन्धकरम्बित शन्दविवेष्टित
तुन्दपरिस्फुर-दण्डकडम्बर ।

[4]दुर्जनभोजेन्द्रकण्टककण्ठकन्दोद्धरणो[4]द्दामकुद्दाल विनम्रविपद्दारुणध्वान्तविद्रावणमार्तण्डोपमकृपाकटाक्ष शारदचन्द्र[5]मरीचिमाधुर्यविडम्बितुण्डमण्डल

लोष्ठीकृतमणि-कोष्ठीकुलमु[नि-
गोष्ठीश्वर मधुरोष्ठीप्रिय पर-
मेष्ठी][6]डित परमेष्ठीकृतनर
धीर !

उपहितपशुपालीनेत्रसारङ्गतुष्टिः,
प्रसरदमृतधाराधोरणीधौतविश्वा ।
पिहितरविसुधांशुः प्रांशुतापिञ्छरम्या,
रमयतु बकहन्तुः[7] कान्तिकादम्बिनी वः ।

इति मिश्रकलिका ।३।

अयं चण्डवृत्तस्य मिश्रितः प्रभेदः । एवमन्येपि ।

इति विरुदावल्यां चण्डवृत्तमेव दण्डकत्रिभङ्ग्याद्यवान्तर-
त्रिभङ्गीकलिका प्रकरणं तृतीयम् ।३।

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके सलक्षणं चण्डवृत्तप्रकरणं समाप्तम् ।१।

---

१. ख. तण्डिल । २. क. विचकित । ३. गोवि. मणिम[य]नास्ति । ४. गोवि. दुर्जनभोजेन्द्रकटककदम्बोद्धरणो । ५. गोवि. शारदाचण्ड- । ६ [-] कोष्टगंतोंशो नास्ति क. प्रतौ । ७. क. ख. बहकंतु: ।

CC-0. BORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

[विरुदावल्यां साधारणमतं चण्डवृत्तं चतुर्थप्रकरणम्]

अथ साधारणं चण्डवृत्तम्

तत्र–

स्वेच्छया तु कलान्यासः साधारणमिदं मतम् ।
न च सप्तदशादूर्ध्वं न वर्णत्रितयादधः ।। १ ।।
क्रियते यैर्गणैराद्यान्तैरेव सकलाः कलाः ।
प्रस्वादिवर्णसंयोगेप्यत्र वर्णस्य लाघवम् ।। २ ।।

[व्या०] अस्यार्थः—स्वेच्छया इत्यादि सुगमम् । तत्राक्षरनियममाह—न चेति । न च सप्तदशवर्णादूर्ध्वं न वा वर्णत्रितयादधः कला कार्या इति शेषः । किञ्च नियमान्तरमाह—क्रियत इति । आद्यात्– [illegible] ति् यैरेव गणैः कलाप्रारम्भः क्रियते तैरेव सकला अपेक्षिताः कलाः कर्त्तव्या इति शेषः । अपि च 'प्रस्वादीति' प्रस्वेति आदिशब्देन-ङ्ग-प्र स्फु-स्मि-स्म-क्वेत्यादीनां संयुक्तानां वर्णानां संयोगेपि सति अत्र छन्दःशास्त्रे तत्प्रकरणस्थले वा पूर्वपूर्ववर्णस्य लाघवं–लघुत्वं अवगन्तव्यमित्युत्सर्गः ।

तत्र अक्षरे, यथा–

अङ्गण रिङ्गण ।

इत्यादि । संयुक्ते, यथा–

प्रणयप्रवण ।

इत्यादि । एवं गणान्तरेपि बोद्धव्यम् ।

चतुर्वर्णे सर्वलघौ यथा–

विधुमुख कृतमुख ।

इत्यादि । एवं प्रस्तारान्तरेपि सर्वलघ्वादिस्थले स्वेच्छातः कलान्यासोद्रष्टव्यः ।

मात्रावृत्ते, यथा–

चतुष्कलद्वयेनापि कला जगणवर्जिताः ।

[व्या०] कर्त्तव्या इति शेषः । यथा—

तारापतिमुख सारायितमुख ।

इत्यादि ।

प्रस्तारद्वितयेप्येवं कलान्यासः स्वतः स्मृतः ।।३।।

[व्या०] स्वतः–स्वेच्छातो भवतीति स्मृत इत्यर्थः ।।३।।

साधारणमतं चैतद् दिङ्मात्रमिह दर्शितम् ।
विशेषस्तत्र तत्रापि नोक्तो विस्तारशङ्कया ।। ४ ।।

[व्या०], तत्र तत्रापीति–तत्तत्प्रस्तारेषु इत्यर्थः ।।४।।

इति विरुदावल्यामवान्तरं साधारणमतं चण्डवृत्त-प्रकरणं चतुर्थम् ।४।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१. अथ साप्तविभक्तिकी कलिका

स्तुतिर्विधीयते विष्णोः सप्तभिस्तु विभक्तिभिः ।
यत्र सा कलिका सद्भिर्ज्ञेया साप्तविभक्तिकी ॥ १ ॥
अथोच्यते विभक्तीनां लक्षणं कविसम्मतम् ।
तत्तद्गणोपनिहितं यथाशास्त्रमतिस्फुटम् ॥ २ ॥
भसौ तु घटितौ यत्र प्रथमा सा प्रकीर्तिता ।
नयाभ्यां तु द्वितीया स्यात् तृतीया ननसा लघुः ॥ ३ ॥
त्रिभिस्तैस्तु चतुर्थी स्यात् यत्र यौ पञ्चमी तु सा ।
ताभ्यां तु षष्ठी विज्ञेया यत्र सौ सप्तमी तु सा ॥ ४ ॥
विहाय प्रथमा ज्ञेया सर्वाः साधारणे मते ।
स्थितास्तु गणसाम्येन स्वेच्छयैव यतः[1] कलाः ॥ ५ ॥
उदाहरणमेतासां क्रमतो वृत्तमौक्तिके ।
कथ्यते कविसन्तोषहेतवे* हरिकीर्त्तनैः ॥ ६ ॥

[व्या०] सुलभार्थास्तु कारिका इति न व्याख्यायन्ते । क्रमेणोदाहरणानि, यथा–

यः स्थिरकरुण-स्तर्जितवरुणः ।
तर्पितजनकः सम्मदजनकः ॥ १ ॥
प्रणतविमायं जगुरनपायम् ।
घनरुचिकायं सुकृतिजना यम् ॥ २ ॥
सुजनकलितकथनेन प्रबलदनुजमथनेन ।
प्रणयिषु रतमभयेन प्रकटरतिषु किल येन ॥ ३ ॥

यस्मै परिध्वस्तदुष्टाय चक्रुः स्पृहां माल्यदुष्टाय[2] ।
दिव्याः स्त्रियः केलितुष्टाय कन्दर्परङ्गेण पुष्टाय ॥ ४ ॥

धृतोत्साहपूराद् द्युतिक्षिप्तसूरात् ।
यतोऽरिर्विदूराद् भयं प्राप शूरात् ॥ ५ ॥
यस्योज्वलाङ्गस्य सञ्चार्यपाङ्गस्य ।
वेणुर्ललामस्य हस्तेऽभिरामस्य ॥ ६ ॥
स्मितविस्फुरिते-ऽजनि यत्र हिते ।
रतिरुल्लसिते सदृशां ललिते ॥ ७ ॥

इति सप्तविभक्तयः ।*

- . चिह्नान्तर्गतोयमंशो नास्ति ख. प्रतौ । १. ख. यता । २. गोवि. जुष्टाय ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

***अथ सम्बुद्धिः**

तनौ [तु] घटितौ यत्र तत्सम्बोधनमीरितम् ।
एवं सम्बोधनान्तेयं विभक्तिः सप्तकीर्त्तिता ।। ७ ।।

यथा–

स त्वं जय ! जय ! दुष्टप्रतिभय !
भक्तस्थितदय[1] ! लुप्तव्रजभय ! ।। ८ ।।
वीर !
मित्रकुलोदित नर्मसुमोदित
रञ्जितराधिक शर्म्मभराधिक ।

विरुदमिदम्—

धीर !
हंसोत्तमाभिलषिता सेवकचक्रेषु दर्शितोत्सेका ।
मुरजयिनः कल्याणी करुणाकल्लोलिनी जयति ।

इति साप्तविभक्तिकी कलिका ।१।

२. अक्ष अक्षमयी कलिका

अकारादि-क्षकारान्त-मातृकारूपधारिणी ।
विष्णोः स्तुतिपरा सेयं, कलिकाऽक्षमयी मता ।। ८ ।।
अत्र स्युस्तु*रगाः सर्वे गणाः जगणवर्जिताः ।
मातृकावर्णघटिताः क्रमात् भगवतः स्तुतौ ।। ६ ।।

[व्या०] अस्यार्थः— अत्राक्षमयी भगवतः स्तुतौ सर्वे तुरगाः–चतुष्कलाः कर्ण-द्विजगण-भगण-सगणाः, जगणवर्जिता गणाः क्रमात् मातृकावर्णेषु यथायथं घटिताश्चेत् स्युस्तदा पूर्वोक्तविशेषण-विशिष्टा सेयं अक्षमयी कलिका मता–सम्मता इति पूर्वश्लोकेन अन्वयः । मात्रावृत्ते तु 'चतुष्कल-द्वयेनापि कलाजगणवर्जिताः' इत्यत्रैव उक्तत्वाद् अक्षमयीमात्रावृत्तमेवेति युक्तितः समुत्प-श्यामः । सर्वत्र च मात्रावृत्तेष्वेव जगणस्य हेयत्वेन निर्देशाच्च । यथा–

मधुरेश ! माधुरीमय माधव मुरलीमतल्लिकामुग्ध ।
मम मदनमोहन मुदा मर्दय मनसो महामोहम् ।।
अच्युत जय जय आर्त्तकृपामय ।
इन्द्रमखार्द्दन ईतिविशातन ।। १ ।।
उज्ज्वलविभ्रम ऊर्जितविक्रम ।
ऋद्धिधुरोद्धुर[2] ऋभुदयापर ।। २ ।।

---

१. गोवि. भक्तस्थिरदय । २. गोवि. धुरोद्धर । *-*चिह्नगतोंऽशो नास्ति ख. प्रतौ ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

लृदिवक्त्रपेक्षित लॄवदलक्षित ।
एधितवल्लव ऐन्दवकुलभव ॥ ३ ॥
ओजःस्फूर्जित औग्र्यविवर्जित ।
अंसविशङ्कट अष्टापदपट ॥ ४ ॥.

इति षोडशस्वरादयः ।

अथ कादयः पञ्चवर्गाः

कङ्कणयुतकर खण्डितखलवर[1] ।
गतिजितकुञ्जर घनघुसृणाकर[2] ॥ ५ ॥
ङुतमुरलीरत चलचिल्लीलत ।
छलितसतीशत जलजोद्भवनत[3] ॥ ६ ॥
झषवरकुण्डल ञोङूयितदल ।
टङ्कितभूधर ठसमाननवर[4] ॥ ७ ॥
डमरघटाहर ढक्कितकरतल ।
णखरधृताचल तरलविलोचन ॥ ८ ॥
थूत्कृतखञ्जन दनुजविमर्द्दन ।
धवलावर्द्धन नन्दसुखास्पद ॥ ९ ॥
पङ्कजसमपद फणिनुतिमोदित ।
बन्धुविनोदित भङ्गुरितालक ॥ १० ॥
मञ्जुलमालक—

इति कादिपञ्चवर्गाः ।

अथ यादयः

—यष्टिलसद्भुज
रम्यमुखाम्बुज ललितविशारद ॥ ११ ॥
वल्लवरङ्गद शर्म्मदचेष्टित ।
षट्पदवेष्टित सरसीरुहधर ॥ १२ ॥
हलधरसोदर क्षणदगुणोत्कर ॥ १३ ॥

इति यादयः ।

वीर ।

---

१. क. खलधर । २. गोवि. घनघुसृणाम्बर । ३. गोवि. जलजोद्भवनुत । ४. गोवि. ठनिभाननवर ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

कर्णे कल्पितकर्णिकः कलिकया कामायितः कान्तिभिः,
कान्तानां किलकिञ्चितं किसलयं कीलालधिः कीर्त्तिभिः ।
कुर्वन् कूर्दनकानि केशरितया कैशोरवान् कोटिशः,
कोपीकौकुलकंसकुष्टक्कतिकः[1] कृष्णः क्रियात् कांक्षितम् ।
सौरीतटचर गौरीव्रतपर-
गौरीपटहर चौरीकृतकर ।
धीर !
प्रेमोरुहट्टहिण्डक कक्खटसुभटेन्द्रकण्ठकुट्टाक ।
कुरु कौंकुमपट्टाम्बर भट्टारक ताण्डवं हृदि[2] मे ॥
इति अक्षमयी कलिका ।२।

३. अथ सर्वलघुककलिका

अथ सर्वलघुकं कलिकाद्वयं युगपदेव लक्ष्यते । तत्र–

नगणैर्पञ्चभिर्यत्र लघ्वन्तैर्वापि तैः पुनः ।
क्रमेण पञ्चदशभिर्वर्णैः षोडशभिस्तथा ॥ १० ॥
प्रस्तारद्वयमन्त्यं स्याल्लघुभिः सकलाक्षरैः ।
तत्सर्वलघुकं प्रोक्तं कलिकाद्वयमुत्तमम् ॥ ११ ॥

[व्या०] अस्यायमर्थः—यत्र पञ्चभिः–पञ्चसंख्याकैर्नगणैः–त्रिलघुकैर्गणैः पदं यत्र, च–पुनः लघ्वन्तैर्वापि तैरेव पञ्चभिर्नगणैः–क्रमेण पञ्चदशभिर्वर्णैः षोडशभिर्वा पदं भवति । वा शब्देन सप्तदशाक्षरमपि पदं कर्त्तव्यम् । एतदूर्ध्वं तु न कर्त्तव्यमेवेत्युपदेशः । न च सप्तदशादूर्ध्वमित्यत्रैव निषेधस्य उक्तत्वात् । स्वेच्छया कलान्यासस्तु सप्तदशवर्णपर्यन्तमेव साधारणमते चमत्कारकारी नैतदूर्ध्वमिति, प्रस्तारद्वयेपि सर्वलघुभिस्समस्तैर्वर्णैर्यदन्त्यं प्रस्तारद्वयं भवति तत् सर्वलघुकमुत्तमं कलिकाद्वयं भवतीत्यर्थः ।

तत्र पञ्चदशाक्षरी सर्वलघुका कलिका यथा–

गोपस्त्रीविद्युदालीवलयितवपुषं नन्दगोपादिकेकि-
व्यूहानन्दैकहेतुं दनुजशतभयोद्दामदावाग्निशत्रुम् ।
ईषद्धास्याम्बुधारावितरणभृतसद्बन्धुचेतस्तडागं,
चित्तं श्रीकृष्ण मेऽद्य श्रय शरणमहो दुःखदाहोपशान्त्यै[3] ।
चरणचलनहतजठरशकटक[4]
रजकदलन वशगतपरकटक

---

१. गोविं. कौपीकौकुरकंसकष्टक्कतिकः । २. क. ब्रूहि । ३. गोवि. पूर्णपद्यं नास्ति ।
४. गोवि. जरठ शकटक ।

CC-0. ORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

नटनघटनलसदगवरकटक
सकनकमरकतमयनवकटक ।। १ ।।

इति पञ्चदशाक्षरी सर्वलघुका कलिका ।

अथ षोडशाक्षरी सर्वलघुका कलिका

कपटरुदितनटदकठिनपदतट-
विघटितदधिघट निबिडितसुशकट
रुचितुलितपुरटपटलरुचिरपट-
घटितविपुलकट[1] कुटिलचिकुरघट ।
रविदुहितृनिकटलुठदजठरजट-[2]
विटपनिचितवटतटपटुतरनट-
निजविलसितहठविचटितसुविकट-
चटुलदनुजभट[3] जय युवतिषु शठ ।
धीर !

स्फुटनाटचकडम्बदण्डित-द्रढिमोड्डामर[4] दुष्टकुण्डली ।
जय गोष्ठकुटुम्बसंवृतस्त्वमिडाडिम्बकदम्बडुम्बक ।।

रशनमुखर सुखरनखर
दशनशिखर-विजितशिखर ।
वीर !

विवृतविविधबाधे भ्रान्तिवेगादगाधे,
धवलित[5] भवपूरे मज्जतो मेऽविदूरे ।
अशरणगणबन्धो हा[6] कृपाकौमुदीन्दो,
सकृदकृतविलम्बं देहि हस्तावलम्बम् ।।
नामानि प्रणयेन ते सुकृतिनां तन्वन्ति तुण्डोत्सवं,
धामानि प्रथयन्ति हन्त जलदश्यामानि नेत्राञ्जनम् ।
सामानि श्रुतिशष्कुलीं मुरलिकाजातान्यलंकुर्वते,
कामा निर्वृतचेतसामिह विभो ! नाशापि नः शोभते ।।

इति षोडशाक्षरी सर्वलघुका कलिका ।३।

---

१. गोवि. विपुलघट । २. गोवि. जरठजट । ३. गोवि. चटुलदनुजघट । ४. क. घटितोडामर । ५. गोवि. बलवति । ६. गोवि. हे ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अथ सर्वासु कलिकासु स्थितानां विरुदानां युगपदेव लक्षणमुच्यते—

वसुषट्पंक्तिरविभिर्मनुभिश्चापि सर्वतः ।
कलिकासु कविः कुर्याद् विरुदानां तु कल्पनम् ॥ १२ ॥

[व्या०] अस्यार्थः—सर्वासु कलिकासु वस्वादिभिः पञ्चभिः संख्यासंकेतैश्चकारोक्तैरपि कविर्विरुदानां कल्पनं कुर्यात् । तथा हि–कस्यांश्चित् कलिकायामष्टकलिकं विरुदं, कस्यांश्चित् षट्कलिकं विरुदं, अपरस्यां दशकलिकं विरुदं, अन्यस्याञ्च द्वादशकलिकं विरुदं, कस्यांश्चित् कलिकायां चतुर्दशकलिकं विरुदम् । कुत्रापि चकारोपदिष्टं च विरुदत्रितयमिति क्रमेण सर्वत्र विरुदकल्पनं कविना कार्यमित्युपदिश्यते ॥१२॥

किञ्च–

धीर-वीरादिसंबुद्धया कलिका विरुदादिकम् ।
देव-भूपतितत्तुल्यवर्णनेषु प्रयोजयेत् ॥ १३ ॥
संस्कृतप्राकृतश्रव्यैः शौर्यवीर्यदयादिभिः ।
कीर्त्तिप्रतापप्राधान्यैः कुर्वीत कलिकादिकम् ॥ १४ ॥

[व्या०] सुगमम् ॥१३, १४॥

अपि च–

गुणालङ्कारसहितं सरसं रीतिसंयुतम् ।
मैत्र्यानुप्राससच्छब्दाडम्बरं[1] जीवितं द्वयोः ॥ १५ ॥

[व्या०] द्वयोः–कलिकाविरुदयोरित्यर्थः ॥१५॥

कलिकाश्लोकविरुदत्रिकं त्रिंशत्त्रिकावधि ।
पञ्चत्रिकोर्ध्वं विरुदावली कविभिरिष्यते ॥ १६ ॥

[व्या०] अस्यार्थः—अस्यां कारिकायां सम्पूर्णां विरुदावलीं लक्षयति—विरुदावली तावत् कलिकाश्लोकविरुदैस्त्रिभिः सम्पद्यते । तत्र कलिकाश्लोकविरुदमिति त्रिकं, पञ्चत्रिकोर्ध्वं–पञ्चत्रिकं, पञ्चदश तदूर्ध्वं एतदारभ्य इत्यर्थः । कियदवधीत्यपेक्षायामुच्यते— त्रिंशत्त्रिकावधि–त्रयस्त्रिंशावधिश्चेत् क्रियते तदा अखण्डा विरुदावली भवति । एतादृशी विरुदावली कविभिरिष्यते कर्त्तुं यत्यत इत्यर्थः । यथा श्रुतव्याख्याने तु महती विरुदावली स्यात् । तथा च पञ्चदशादारभ्य त्रिंशत्त्रिकं नवतिस्सम्पद्यते, तत्पर्यन्तं सति महती विरुदावली भवतीति । संकोचात्तथा व्याख्यातमस्माभिरिति सर्वं समञ्जसम् ॥१६॥

क्वचित्तु कलिकास्थाने केवलं गद्यमिष्यते ।
पदमाद्यन्तयोराशीः प्रधानं सुमनोहरम् ॥ १७ ॥
त्रिचतुःपञ्चकलिकाः श्लोकास्तावन्त एव हि ।

---

१. ख. छन्दाडम्बरं ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

[व्या०] इति, सार्द्धेन श्लोकेन विरुदावलीलक्षणे कस्यचिन्मतं उपन्यस्यति। क्वचित्तु–कस्यांश्चित् कलिकायां–कलिकास्थाने गद्यमेवोभयत्र केवलं सविरुदं वा भवतीतीष्यते। किञ्च, आद्यन्तयोः–कलिकाविरुदयोः, आशीःप्रधानं–आशीर्वादोपलक्षितं पद्यमतिसुमनोहरं भवतीति च[1] ॥१७॥

[व्या०] कियन्त्यः कलिकाः, कियन्तश्च श्लोकाः कार्या इत्यपेक्षायामुच्यते – त्रिचतुःपञ्चकलिकाः स्वेच्छया कर्त्तव्याः। श्लोका अपि तावन्त एव हि स्वेच्छयैव विधेया इत्युपदेशः[2]।

एतत् सर्वं यथास्थानमस्माभिः समुदाहृतम् ॥ १८ ॥

[व्या०] सुगमम् ॥१८॥

विरुदावलीपाठफलमुपदिशति––

रम्यया विरुदावल्या प्रोक्तलक्षणयुक्तया।
स्तूयमानः प्रमुदितः श्रीगोविन्दः[3] प्रसीदति ॥ १९ ॥

श्रीः[4]

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके विरुदावली-
प्रकरणं नवमम् ॥९॥

---

१. ख. 'च' नास्ति। २. ख. इत्युपेक्षायामुच्यते। ३. गोवि. वासुदेवः। ४. ख. 'श्रीः' नास्ति।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

दशमं खण्डावली-प्रकरणम्

अथ खण्डावली

आशीःपद्यं यदाद्यन्तयोः[1] स्यात् खण्डावली त्वसौ ।
विनैव विरुदं नानागणभेदैरनेकधा ॥ १ ॥

तत्र-

१. अथ तामरसं खण्डावली

पदे चेद् रगणः सौ च लघुद्वयनिवेशनम् ।
तदा तामरसं नाम साधारणमते भवेत् ॥ २ ॥

[व्या०] अनयोः कारिकयोरयमर्थः । यदा कलिकाया आद्यन्तयोः विरुदं विनैव आशीः-पद्यं भवति तदा नानागणभेदैरनेकधा असौ खण्डावली स्यादित्यन्वयः । किञ्च, तत्र पदे चेत् रगणो भवति, अथ च सौ-सगणौ भवतः, ततो लघुद्वयनिवेशनं-लघुद्वयस्थापनं चेत्-स्यात्तदा साधारणमते स्वेच्छाकलाविन्यासलक्षणे तामरसं इति नाम खण्डावली भवतीति वाक्यार्थः । १-२॥

यथा-

कलक्वणितवंशिकाविकलनागरीसागरी-
भवद्विषमशायकद्विगुणवृद्धिशुभ्रद्युति ।
पतङ्गतनयातटी-वननटी-भवद्विग्रहं,
नवीनघनमण्डलीरुचिरमाविरास्तां महः ॥

देव !

जय वंशीरवोल्लास ! जय वृन्दावनप्रिय ! ।
जय कृष्ण ! कृपाशील! जय लीलासुधाम्बुधे! ।।

वीर !

छन्दसामपि दुर्गमसन्तत-
मिन्दुबिम्बसमानशुभानन !
मन्दहासविकस्वरसुन्दर !
कुन्दकोरकदन्तरुचिद्विज !

---

१. ख. पदाद्यन्तयोः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

सुन्दरीजनमोहनमन्मथ
चन्दनद्रवरज्यदुरःस्थल
नन्दनालयशीलितसद्गुण-
वृन्द कच्छपरूपसमुद्धृत-
मन्दराचलवाहभुजार्गल-
कन्दलीकृतसारसमर्थ पु-
रन्दरेण चिरं परिवेषितः[1]
नन्दिनाथसमञ्चितदिव्यक-[2]
लिन्दशैलसुताजलजन्यर-
विन्दकाननकोषकदम्बमि-
लिन्दशावक निर्जरनायक
वृन्दया सह कल्पितकौतुक
दन्दशूकफणावलिगञ्जन
चन्द्रिकोज्ज्वलनिर्गलितामृत-
बिन्दुदुर्दिनसूनृतसार मु-
कुन्ददेव कृपाल[3]दशि (दृशि) त्वयि
किं दुरापमिहास्ति ममेश्वर
किं दयावरुणालय दुर्जन-
निन्दयापि जगत्त्रयवल्लभ !
कन्दनीलिमदेहमहः कुरु-
विन्दखण्डजपाकुसुमस्फुरद्
इन्द्रगोपकबन्धुरिताधर
चन्द्रकाद्भुतपिञ्छशिरस्तद-
रिन्दम स्वमतिं दयसे यदि
विन्दते सुखमेन[4]जनस्तव
बन्दिवद्गुणगानकरं ध्रुव-
मिन्दयन् विदितो गरुडध्वज
नन्दयन्निजयासनयानय
नन्दगोपकुमार जयीभव ।
देव !

---

१. ख. परिषेवितः । २. ख. दिव्यक । ३. ख. कृपालु । ४. ख. मेव ।

CC-0. BORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

जय नीपावलीवास जय वेणुसुधाप्रिय ।
जय वल्लभसौभाग्य जय ब्रह्मरसायन ।
धीर !
पशुपललनावल्लीवृन्दैः श्रितः करपल्लवै-
विपुलपुलकश्रेणि[1]स्फीतस्फुरत्कुसुमोद्गमः ।
तपनतनयातीरे तीरे तमालतरुप्रभः,
कलयतु मम क्षेमं कश्चिन्नवः कमलेक्षणम्[2] ॥१॥

इति तामरसं नाम खण्डावली ।१।

२. अथ मञ्जरी खण्डावली

नरेन्द्रवर्जिता यत्र रचिताः स्युस्तुरङ्गमाः ।
आद्यन्तपदसंयुक्ता मञ्जरी सा निगद्यते ॥ ३ ॥

[व्या०] अस्यार्थः— यत्र-यस्यां मञ्जर्यां नरेन्द्रेण-जगणेन वर्जिताः-रहिताः तुरङ्गमाः चतुर्विधाश्चतुष्कला रचिता यदि स्युः । किञ्च, आद्यन्तयोः पद्याभ्यां संयुक्ता चेद् भवति तदा सा मञ्जरीति नाम्ना प्रसिद्धा खण्डावली निगद्यते छान्दसिकैरिति शेषः ॥३॥

यथा–

पिशङ्गसिचयाञ्चितं चटुलनैचिकीचारकं[3],
चमत्कृतदृगञ्चलैश्चलुकिता[4]वलानिश्चयम् ।
चलद्रुचिरचन्द्रिकाभरणचुम्बिचूडाञ्चलं,
तमालदलमेचकं सुचिरमाविरास्तां महः ॥
देव !
जय लीलासुधासिन्धो ! जय शीलादिमन्दिरम्[5] ।
जय राधैकसौहार्द जय कन्दर्पविभ्रम ॥
वीर !
जय ज जम्भारि भुजस्तम्भा-
कलिताहम्भा-वाहिनजम्भा-[6]
मुदवष्टम्भा-पहसररम्भा-[7]
श्रय निर्दम्भा-सादितरम्भा-
लघुकुचकुम्भा-दरपरिरम्भा-
निधुवत्तपुम्भा-वप्रारम्भा-

---

१. ख. श्रेणी । २. ख. कमलेक्षणः । ३. ख. वारकं । ४. ख. चुलुकिता । ५. ख. मन्दिरः । ६. वाहितजृम्भा । ७. ख. पहसरंभा ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

धिकसुखसम्भा-वनविश्रम्भा-
भाषणसम्भारैरिह सम्भा-
वय नः सम्भावितमुज्जृम्भा-
म्बुजसदृशम्भाषणमधुरम्भा-
रत्यालम्भा-ग्यायतनम्भा-
क्तमुखं सम्भालयतः[1] किम्भा-
लाक्षरसम्भावनया देव !

कुमारपत्रपिञ्छेन विराजत्कुन्तलश्रियम् ।
सुकुमारमहं वन्दे नन्दगोपकुमारकम् ।।
धीर !

नित्यं यन्मधुमन्थरा मधुकरायन्ते सुधास्वादिन-
स्तन्माधुर्यधुरीणतापरिणतेः प्रायः परीक्षाविधिम् ।
कर्त्तुं स्वांघ्रिसरोरुहं करपुटे कृत्वा मुहुः संलिहन्,
दोलान्दोलनदोलिताखिलतनुः पायाद् यशोदार्भकः ।।

इति मञ्जरी खण्डावली ।२।

इत्थं खण्डावलीनां तु भेदाः सन्ति सहस्रशः ।
साकल्येन मया नोक्ता ग्रन्थविस्तरशङ्कया ।।४।।

सुकुमारमतीनां च मार्गदर्शनतो भवेत् ।
विज्ञानमिति मत्वैव मया मार्गः प्रदर्शितः ।।५।।

सहस्रेण मुखेनैतद् वक्तुं शेषोऽपि न क्षमः ।
कथमेकमुखेनाहमशेषं वाङ्मयं ब्रुवे ।।६।।

श्रीः

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके खण्डावलीप्रकरणं दशमम् ।१०।

श्रीः

---

१. ख. वस्तुकं सम्भालयः ।

T... Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

एकादशं दोष-प्रकरणम्

अथ दोषाः

अथैतयोर्निरूप्यन्ते दोषाः कविसुखावहाः ।
यान्विदित्वैव सुकविः काव्यं कर्त्तुमिहार्हति ॥१॥

[व्या०] अथेति । विरुदावली-खण्डावली-कथनानन्तरमेतयोः—विरुदावली-खण्डावली-भेदयोर्दोषाः निरूप्यन्ते । शेषं सुगमम् ॥१॥

तान् आह—

अमैत्री निरनुप्रासो दौर्बल्यं च कलाहृतिः ।
असाम्प्रतं हतौचित्यं विपरीतयुतं पुनः ॥ २ ॥
विशृङ्खलं स्खलत्तालं नवदोषान्न वेत्ति यः ।
कुर्याच्चैतत् तमोलोके उलूकोऽसौ भवेन्नरः ॥ ३ ॥

[व्या०] अस्यार्थः— अमैत्री–अक्षरमैत्रीराहित्यं । निरनुप्रासः–अनुप्रासाऽभावः । दौर्बल्यं–श्लथवर्णता इति निगदेनैव व्याख्यातं । कलाहृतिः–अन्यपदे पूर्ववर्णस्थानेऽन्यवर्णपाठः । यथा–

कमलवदन सुविमलजल ।
रञ्जितरण सञ्जितगुण ।

अयुक्तवर्णनं–हतौचित्यं । स्पष्टमुदाहरणम् । श्लिष्टवर्णस्थाने मधुरवर्णस्थितिः, मधुरस्थाने वा श्लिष्टस्थापनं, विपरीतयुतं । विशृङ्खलं–न्यूनाधिकश्लिष्टादिवर्णानां ग्रथनम् । स्खलत्तालं–यतिभ्रष्टं लक्षणानुसाराद् ऊह्यानि उदाहरणानि । इत्येतावन्नवदोषान् यः कविः न वेत्ति–न जानाति अविद्वांश्च यदि एतत्–पूर्वोक्तं विरुदावली–खण्डावलीलक्षणं यो नरः–कविः काव्यं कुर्यात् तदा तमोलोके–गाढान्धकाराज्ञानलक्षणे लोके असौ उलूको–दिवान्धःपक्षी भवेदित्यर्थः । तस्माद् दोषज्ञाने महान् गुणः, तद्वैपरीत्ये महदनिष्टं इत्यन्वयव्यतिरेकसिद्धोऽयमर्थः । इति सर्वं निर्मलं मङ्गलम् ।

लक्ष्मीनाथतनूजेन चन्द्रशेखरसूरिणा ।
छन्दःशास्त्रे विरचितं वार्त्तिकं वृत्तमौक्तिकम् ॥

इति दोषनिरूपण-प्रकरणमेकादशम् ॥११॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

द्वादशं अनुक्रमणी – प्रकरणम्

प्रथमखण्डानुक्रमणी

रविकर-पशुपति-पिङ्गल-शम्भुग्रन्थान् विलोक्य निर्बन्धान् ।
सद्वृत्तमौक्तिकमिदं चक्रे श्रीचन्द्रशेखरः सुकविः ॥१॥

अथाऽभिधीयते चाऽत्राऽनुक्रमो वृत्तमौक्तिके ।
अत्र खण्डद्वयं प्रोक्तं मात्रा-वर्णात्मकं पृथक् ॥ २ ॥

तत्र मात्रावृत्तखण्डे प्रथमेऽनुक्रमः स्फुटम् ।
प्रोच्यते यत्र विज्ञाते समूहालम्बनात्मकम् ॥ ३ ॥

ज्ञानं भवेदखण्डस्य[1] खण्डस्य[2] छन्दसोऽपि च ।
मङ्गलाचरणं पूर्वं ततो गुरुलघुस्थितिः ॥ ४ ॥

तयोरुदाहृतिं पश्चात् तद् विकल्पस्य कल्पनम् ।
काव्यलक्षणवैलक्ष्ये अनिष्टफलवेदनम् ॥ ५ ॥

गणव्यवस्थामात्राणां प्रस्तारद्वयलक्षणम् ।
मात्रागणानां नामानि कथितानि ततः स्फुटम् ॥ ६ ॥

वर्णवृत्तगणानां च लक्षणं स्यात् ततः परम् ।
तद्देवता च तन्मैत्री तत्फलं चाप्यनुक्रमात् ॥ ७ ॥

मात्रोद्दिष्टं च तत्पश्चात्तन्नष्टस्याथ कीर्त्तनम् ।
वर्णोद्दिष्टं ततो ज्ञेयं वर्णनष्टमतः परम् ॥ ८ ॥

वर्णमेरुश्च तत्पश्चात् तत्पताका प्रकीर्त्तिता ।
मात्रामेरुश्च तत्पश्चात् तत्पताका प्रकीर्त्तिता ॥ ९ ॥

ततो वृत्तद्वयस्थस्य गुरोर्ज्ञानं लघोरपि ।
वर्णस्य मर्कटी पश्चात् मात्रायाश्चापि मर्कटी ॥ १० ॥

तयोः फलं च कथितं षट्प्रकारं समासतः ।
ततस्त्वेकाक्षरादेश्च षड्विंशत्यक्षरावधेः ॥ ११ ॥

प्रस्तारस्यापि संख्याऽत्र पिण्डीभूता प्रकीर्त्तिता ।
ततो गाथादिभेदानां कलासंख्या प्रकीर्त्तिता ॥ १२ ॥

---

१. ख. भवेदखण्डलस्य । २. ख. खण्डस्य नास्ति ।

CC-0. ROBI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

गाथोदाहरणं पश्चात् सप्रभेदं सलक्षणम् ।
विगाथा च तथा ज्ञेया ततो गाहू प्रकीर्त्तिता ।। १३ ।।

अथोद्गाथा गाहिनी च सिंहिनी च ततः परम् ।
स्कन्धकं चापि कथितं सप्रभेदं सलक्षणम् ।। १४ ।।

इति गाथाप्रकरणं प्रथमं वृत्तमौक्तिके ।
द्वितीयं षट्पदस्याथ द्विपथा तत्र संस्थिता ।। १५ ।।

सलक्षणा सप्रभेदा रसिका स्यात् ततः परम् ।
अथ रोला समाख्याता गन्धाणा स्यात् ततः परम् ।। १६ ।।

चौपैया च ततः प्रोक्ता ततो घत्ता प्रकीर्त्तिता ।
घत्तानन्दमतः काव्यं सोल्लालं सप्रभेदकम् ।। १७ ।।

षट्पदं च ततः प्रोक्तं सप्रभेदमतः परम् ।
काव्यषट्पदयोश्चापि दोषाः सम्यङ् निरूपिताः ।। १८ ।।

प्राकृते संस्कृते चापि दोषाः कविसुखावहाः ।
द्वितीयं षट्पदस्यैतत् प्रोक्तं प्रकरणं त्विह ।। १९ ।।

अथ रड्डाप्रकरणं तृतीयं परिकीर्त्यते ।
तत्र पज्झटिकाछन्दोऽडिल्लाछन्दस्ततः परम् ।। २० ।।

ततस्तु पादाकुलकं चौबोला - छन्द एव च ।
रड्डाछन्दस्ततः प्रोक्तं भेदाः सप्तैव चास्य तु ।। २१ ।।

रड्डाप्रकरणं चैव तृतीयमिह कीर्त्तितम् ।
पद्मावतीप्रकरणं चतुर्थमथ कथ्यते ।। २२ ।।

तत्र पद्मावती पूर्वं ततः कुण्डलिका भवेत् ।
गगनाङ्गं ततः प्रोक्तं द्विपदी च ततः परम् ।। २३ ।।

ततस्तु झुल्लणा-छन्दः खञ्जा-छन्दस्ततः परम् ।
शिखाछन्दस्ततश्च स्यात् मालाछन्दस्ततो भवेत् ।। २४ ।।
ततस्तु चुलिआला स्यात् सोरठा तदनन्तरम् ।
हाकलीर्मधुभारश्चाऽऽभीरश्च स्यादनन्तरम् ।। २५ ।।
अथ दण्डकला प्रोक्ता ततः कामकला भवेत् ।
रुचिराख्यं ततश्छन्दो दीपकश्च ततः स्मृतम् ।। २६ ।।
सिंहावलोकितं छन्दस्ततश्च स्यात् प्लवङ्गमः ।
अथ लीलावतीछन्दो हरिगीतं ततः स्मृतम् ।। २७ ।।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

हरिगीतं[1] ततः प्रोक्तं मनोहरमतः परम् ।
हरिगीता ततः प्रोक्ता यतिभेदेन या स्थिता ॥ २८ ॥

अथ त्रिभङ्गी छन्दः स्यात् ततो दुर्मिलका भवेत् ।
हीरच्छन्दस्ततः प्रोक्तमथो जनहरं मतम् ॥ २९ ॥

ततः स्मरगृहं छन्दो मरहट्टा ततः स्मृता ।
पद्मावतीप्रकरणं चतुर्थमिह कीर्त्तितम् ॥ ३० ॥

सवैयाख्यं प्रकरणं पञ्चमं परिकीर्त्यते ।
तत्र पूर्वं सवैयाख्यं छन्दः स्यादतिसुन्दरम् ॥ ३१ ॥

भेदास्तस्यापि कथिता रससंख्या मनोहराः ।
ततो घनाक्षरं वृत्तमतिसुन्दरमीरितम् ॥ ३२ ॥

पञ्चमं तु प्रकरणं सवैयाख्यमिहोदितम् ।
अथो **गलितकाख्यं** तु **षष्ठं प्रकरणं** भवेत् ॥ ३३ ॥

पूर्वं गलितकं तत्र ततो विगलितं मतम् ।
अथ सङ्गलितं ज्ञेयमतः सुन्दर-पूर्वकम् ॥ ३४ ॥

भूषणोपपदं तच्च मुखपूर्वं ततः स्मृतम् ।
विलम्बितागलितकं समपूर्वं ततो मतम् ॥ ३५ ॥

द्वितीयं समपूर्वं चापरं सङ्गलितं ततः ।
अथापरं गलितकं लम्बितापूर्वकं भवेत् ॥ ३६ ॥

विक्षिप्तिकागलितकं ललितापूर्वकं ततः ।
ततो विषमितापूर्वं मालागलितकं ततः ॥ ३७ ॥

मुग्धमालागलितकमथोद्गलितकं भवेत् ।
षष्ठं गलितकस्यैतत् प्रोक्तं प्रकरणं शिवम् ॥ ३८ ॥

रन्ध्रसूर्यशिवसंख्यातं (७९) मात्रावृत्तमिहोदितम् ।
सप्रभेदं वसुद्वन्द्व-शतद्वय-(२८८) मुदीरितम् ॥ ३९ ॥

तथा **प्रकरणं** चात्र **रससंख्यं**[2] प्रकीर्त्तितम् ।
मात्रावृत्तस्य खण्डोऽयं प्रथमः परिकीर्तितः ॥ ४० ॥

इति प्रथमखण्डानुक्रमणिका ।

---

१. हरगीतं ख. । २. क. रससंख्या ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

द्वितीयखण्डानुक्रमणी

अथ द्वितीयखण्डस्य वर्णवृत्तस्य च क्रमात् ।
वृत्तानुक्रमणी स्पष्टा क्रियते वृत्तमौक्तिके ।। १ ।।
आरभ्यैकाक्षरं वृत्तं षड्विंशत्यक्षरावधि ।
तत्तत्प्रस्तारगत्याऽत्र वृत्तानुक्रमणी स्थिता ।। २ ।।

तत्र श्रीनामकं वृत्तं प्रथमं परिकीर्त्तितम् ।
तत इः कथितं वृत्तं द्वौ भेदावत्र कीर्तितौ ।। ३ ।।

एकाक्षरे, द्वयक्षरे तु पूर्वं कामस्ततो मही ।
ततः सारं मधुश्चेति भेदाश्चत्वार एव हि ।। ४ ।।

त्र्यक्षरे चात्र ताली स्यान्नारी चापि शशी ततः ।
ततः प्रिया समाख्याता रमणः स्यादनन्तरम् ।। ५ ।।
पञ्चालश्च मृगेन्द्रश्च मन्दरश्च ततः स्मृतः ।
कमलं चेति चात्र स्युरष्टौ भेदाः प्रकीर्त्तिताः[1] ।। ६ ।।

अथातो द्विगुणा भेदाश्चतुर्वर्णादिषु स्थिताः ।
यथासम्भवमेतेषामाद्यान्तानुक्रमात् स्फुटम् ।। ७ ।।

वृत्तानुक्रमणी सेयमङ्कसंकेततः कृता ।
प्रतिप्रस्तारविस्तारं षड्विंशत्यक्षरावधि ।। ८ ।।

तत्र–

चतुर्वर्णप्रभेदेषु तीर्णा कन्याऽपि चान्यतः ।
धारी[2] ततस्तु विख्याता नगाणी च ततः परम् ।। ९ ।।

शुभं चेति समाख्यातामत्र भेदचतुष्टयम् ।
शेषभेदा न संप्रोक्ता ग्रन्थविस्तरशङ्कया ।। १० ।।

प्रस्तारगत्या ते भेदाः षोडशैव व्यवस्थिताः ।
सुधीभिरूह्याः प्रस्तार्य यथाशास्त्रमशेषतः ।। ११ ।।

अथ पञ्चाक्षरे[3] पूर्वं सम्मोहा वृत्तमीरितम् ।
हारी ततः समाख्याता ततो हंसः प्रकीर्तितः ।। १२ ।।

---

१. ख. भेदः क्रमात् स्थिता । २. ख. घारी । ३. क. पञ्चाक्षरैः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रिया ततः समाख्याता यमकं तदनन्तरम् ।
प्रस्तारगत्या चैवाऽत्र भेदा द्वात्रिंशदीरिताः (३२) ॥ १३ ॥

षडक्षरेऽपि पूर्वं तु शेषाख्यं वृत्तमीरितम् ।
ततः स्या[illegible]तिलका वृत्तं विमोहं तदनन्तरम् ॥ १४ ॥

विजोहे[1]त्यन्यतः ख्यातं चतुरंसमतः परम् ।
पिङ्गले चउरंसेति स्त्रीलिङ्गं परिकीर्तितम् ॥ १५ ॥

मन्थानं च ततः प्रोक्तं मन्थानेत्यन्यतो भवेत् ।
शङ्खनारी ततः प्रोक्ता सोमराजीति चान्यतः ॥ १६ ॥

स्यात् सुमालतिका चात्र मालतीति च पिङ्गले ।
तनुमध्या ततः प्रोक्ता ततो दमनकं भवेत् ॥ १७ ॥

प्रस्तारगत्या चाप्यत्र भेदा वेदरसैर्मताः (६४) ।
अथ **सप्ताक्षरे** पूर्वं शीर्षाख्यं वृत्तमीरितम् ॥ १८ ॥

ततः समानिका वृत्तं ततोऽपि च सुवासकम् ।
करहञ्चि ततः प्रोक्तं कुमारललिता ततः ॥ १९ ॥

ततो मधुमती प्रोक्ता मदलेखा ततः स्मृता ।
ततो वृत्तं तु कुसुमततिः स्यादतिसुन्दरम् ॥ २० ॥
प्रस्तारगतिभेदेन वसुनेत्रात्मजेरिता[2] (१२८) ।
भेदाः सप्ताक्षरस्यान्या ऊह्याः प्रस्तार्य पण्डितैः ॥ २१ ॥
अथ **वस्वक्षरे** पूर्वं विद्युन्माला विराजते ।
ततः प्रमाणिका ज्ञेया मल्लिका तदनन्तरम् ॥ २२ ॥
तुङ्गावृत्तं ततः प्रोक्तं कमलं तदनन्तरम् ।
माणवकक्रीडितकं ततश्चित्रपदा मता ॥ २३ ॥

ततोऽनुष्टुप् समाख्याता जलदं च ततः स्मृतम् ।
अत्र प्रस्तारगत्यैव रसबाणयुगैर्मताः (२५६) ॥ २४ ॥

भेदा वस्वक्षरे शेषाः सूचनीयाः सुबुद्धिभिः ।
नवाक्षरेऽथ पूर्वं स्याद् रूपामाला मनोरमा ॥ २५ ॥

ततो महालक्ष्मिका स्यात् सारङ्गं तदनन्तरम् ।
सारङ्गिका पिङ्गले तु पाइन्तं तदनन्तरम् ॥ २६ ॥

---

१. ख. विज्जोहे । २. क. वसुनेत्रात्मतेरिताः ।

CC-0. ORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पाइन्ता पिङ्गले तु स्यात् कमलं तदनन्तरम् ।
[बिम्बवृत्तं ततः प्रोक्तं तोमरं तदनन्तरम्][1] ।। २७ ।।
भुजगशिशुसृतावृत्तं मणिमध्यं ततः स्मृतम् ।
भुजङ्गसङ्गता च स्यात् ततः सुललितं स्मृतम् ।। २८ ।।
प्रस्तारगत्या चात्रास्य नेत्रचन्द्रशरैरपि (५१२) ।
भेदा नवाक्षरे शिष्टाः सूचनीयाः सुबुद्धिभिः ।। २९ ।।
अथ पंक्त्यर्णके पूर्वं गोपालः परिकीर्तितः ।
संयुतं कथितं पश्चात् ततश्चम्पकमालिका ।। ३० ।।
क्वचिद् रुक्मवती चेयं क्वचिद् रूपवतीति च ।
ततः सारवती च[2] स्यात् सुषमा तदनन्तरम् ।। ३१ ।।
ततोऽमृतगतिः प्रोक्ता मत्ता स्यात्तदनन्तरम् ।
पूर्वमुक्ताऽमृतगतिः सा चेद् यमकिता भवेत् ।। ३२ ।।
प्रतिपादं तदोक्तैषा त्वरिताऽनन्तरं गतिः ।
मनोरमं ततः प्रोक्तमन्यत्र च मनोरमा ।। ३३ ।।
ततो ललित-पूर्वं तु गतीति समुदीरितम् ।
प्रस्तारान्त्यं सर्वलघुवृत्तमत्यन्तसुन्दरम् ।। ३४ ।।
प्रस्तारगत्या भेदाः स्युः तत्त्वाकाशात्मसंख्यकाः (१०२४) ।
दशाक्षरेऽपरे भेदाः सूच्याः प्रस्तार्य पण्डितैः ।। ३५ ।।
अथ रुद्राक्षरे[3] पूर्वं मालतीवृत्तमीरितम् ।
ततो बन्धुः समाख्यातो ह्यन्यत्र दोधकं भवेत् ।। ३६ ।।
ततस्तु सुमुखीवृत्तं शालिनी स्यादनन्तरम् ।
वातोर्मी तदनु प्रोक्ता छन्दःशास्त्रविशारदैः ।। ३७ ।।
परस्परं चैतयोश्चेत् पादा एकत्रयोजिताः ।
तदोपजातिनामानो भेदास्ते च[4] चतुर्दश ।। ३८ ।।
ततो दमनकं प्रोक्तं चण्डिका तदनन्तरम् ।
सेनिका श्रेणिका चेति तथा नामान्तरं क्वचित् ।। ३९ ।।
नाममात्रे परं भेदः फलतो न तु किञ्चन ।
इन्द्रवज्रा ततः प्रोक्ता ततश्चोपेन्द्रपूर्विका ।। ४० ।।

१. [-] कोष्ठगतोंशो नास्ति क. ख. प्रतौ । २ ख. 'ततः सारवती च' नास्ति । ३. क. रुद्राक्षरैः । ४. ख, तु ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

उपजातिस्ततः प्रोक्ता पूर्वोक्तेनैव वर्त्मना ।
भेदाश्चतुर्दशैतस्याः विज्ञेयाः पिण्डतो बहिः ॥ ४१ ॥

ततो रथोद्धतावृत्तं स्वागतावृत्ततस्तथा ।
भ्रमरान्ते विलसिताऽनुकूला च ततो भवेत् ॥ ४२ ॥

ततो मोट्टनकं[1] वृत्तं सुकेशी च ततो भवेत् ।
ततः सुभद्रिकावृत्तं बकुलं कथितं ततः ॥ ४३ ॥

रुद्रसंख्याक्षरे भेदा वसुवेदखनेत्रकैः (२०४८) ।
प्रस्तारगत्या जायन्ते शिष्टान् प्रस्तार्य सूचयेत् ॥ ४४ ॥

अथ रव्यक्षरे पूर्वमापीडः कथितोऽन्यतः ।
विद्याधरस्ततश्च स्यात् प्रयातं भुजगादनु ॥ ४५ ॥

ततो लक्ष्मीधरं वृत्तमन्यत्र स्रग्विणी ततः ।
तोटकं स्यात् ततः सारङ्गकं मौक्तिकदामतः ॥ ४६ ॥

मोदकं सुन्दरी चापि ततः स्यात् प्रमिताक्षरा ।
चन्द्रवर्त्म ततो ज्ञेयमतो द्रुतविलम्बितम् ॥ ४७ ॥

ततस्तु वंशस्थविला क्वचित् क्लीबमिदं भवेत् ।
क्वचित्तु वंशस्तनितमिन्द्रवंशा ततो भवेत् ॥ ४८ ॥

अनयोरपि चैकत्रपादानां योजनं यदि ।
तदोपजातयो नाम भेदाः स्युस्ते चतुर्दश ॥ ४९ ॥

सर्वत्रैवं स्वल्पभेदे भवन्तीहोपजातयः ।
वृत्ताभ्यामल्पभेदाभ्यामुपदेशः पितुर्मम ॥ ५० ॥

ततो जलोद्धतगतिर्वैश्वदेवी ततो मता ।
मन्दाकिनी ततो ज्ञेया ततः कुसुमचित्रिता ॥ ५१ ॥

ततस्तामरसं वृत्तं ततो भवति मालती ।
कुत्रचिद् यमुना चेति मणिमाला ततो भवेत् ॥ ५२ ॥

ततो जलधरमाला स्यात् ततश्चापि प्रियंवदा ।
ततस्तु ललिता सैव सुपूर्वान्यत्र लक्षिता ॥ ५३ ॥

---

१. ख. मोटनकम् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

ततोऽपि ललितं वृत्तं ललनेत्यपि च क्वचित् ।
कामदत्ता ततः प्रोक्ता ततो वसन्तचत्वरम् ॥ ५४ ॥
प्रमुदितवदना-मन्दाकिन्योर्भेदो न वास्तवो घटितः ।
नामान्तरेण भेदो गणतो यदितो न चोद्दिष्टः ॥ ५५ ॥[1]
प्रमुदितादूद्ध्वं[2] वदने[3] वदनाऽन्यत्र च प्रभा ।
विख्याता कविमुख्यैस्तु ततः स्यान्नवमालिनी ॥ ५६ ॥
सर्वान्त्यं नयनात् पूर्वं तरलं वृत्तमीरितम् ।
अत्र प्रस्ताररीत्या तु भेदा रव्यक्षरे स्थिताः ॥ ५७ ॥
रसरन्ध्रखवेदैस्तु(४०९६) शेषाः सूच्याः[4] सुबुद्धिभिः ।

त्रयोदशाक्षरे पूर्वं वाराहः कथितो मया ॥ ५८ ॥
मायावृत्तं ततस्तु स्यात् क्वचिन्मत्तमयूरकम् ।
ततस्तु तारकं वृत्तं कन्दं पङ्क्तावली तथा ॥ ५९ ॥
ततः प्रहर्षिणीवृत्तं रुचिरा तदनन्तरम् ।
चण्डीवृत्तं ततः प्रोक्तं ततः स्यान्मञ्जुभाषिणी ॥ ६० ॥
शम्भौ सुनन्दिनी चेयं चन्द्रिका तदनन्तरम् ।
क्वचिदुत्पलिनीवृत्तं चन्द्रिकैवोच्यते बुधैः ॥ ६१ ॥
कलहंसस्ततश्च स्यात् सिंहनादोप्ययं क्वचित् ।
ततो मृगेन्द्रवदनं क्षमा पश्चात् ततो लता ॥ ६२ ॥
ततस्तु चन्द्रलेखाख्यं चन्द्रलेखेत्यपि क्वचित् ।
ततश्च सुद्युतिः पश्चाल्लक्ष्मीवृत्तं मनोहरम् ॥ ६३ ॥
ततो विमल-पूर्वं तु गतीतिरुचिरं भवेत् ।
प्रस्तारान्त्यं वृत्तमेतद् भावितं कविपुङ्गवैः ॥ ६४ ॥
प्रस्तारगत्या विज्ञेया भेदाः कामाक्षरे बुधैः ।
नेत्रग्रहेन्दुवसुभिः (८१९२)शेषान् प्रस्तार्य सूचयेत् ॥ ६५ ॥

अथ **मन्वक्षरे** पूर्वं सिंहास्यः कथितो बुधैः ।
ततो वसन्ततिलका ततश्चक्रं प्रकीर्तितम् ॥ ६६ ॥
असम्बाधा ततश्च स्यात् ततः स्यादपराजिता ।
कलिकान्तं प्रहरणं वासन्ती स्यादनन्तरम् ॥ ६७ ॥

---

१. पद्यं नास्ति क. प्रतौ । २. ख. प्रमुदितशब्दस्यान्ते । ३. क. वान्ते । ४. ख. शेषास्तूह्याः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

लोला नान्दीमुखी तस्माद् वैदर्भी तदनन्तरम् ।
प्रसिद्धमिन्दुवदनं स्त्रीलिङ्गमिदमन्यतः ।। ६८ ।।

ततस्तु शरभी प्रोक्ता ततश्चाहिधृतिः स्थिता ।
ततोऽपि विमला ज्ञेया मल्लिका तदनन्तरम् ।। ६९ ।।

ततो मणिगणं वृत्तमन्त्यं मन्वक्षरे भवेत् ।
प्रस्तारगत्या चात्रापि भेदा वेदाष्टतो गुणाः[1] ।। ७० ।।

रसेन्दुप्रमिताश्चापि(१६३८४) विज्ञेयाः कविशेखरैः ।
यथासम्भवसम्प्रोक्ताः शेषास्तूह्याः स्वबुद्धितः ।। ७१ ।।

लीलाखेलमथो वक्ष्ये वृत्तं पञ्चदशाक्षरे ।
सारङ्गिकेति यन्नाम पिङ्गले प्रोक्तमुत्तमम् ।। ७२ ।।

ततस्तु मालिनीवृत्तं ततः स्याच्चारु चामरम् ।
तूणकं चान्यतश्चापि भ्रमरावलिका ततः ।। ७३ ।।

भ्रमरावली पिङ्गले स्यान् मनोहंसस्ततस्ततः ।
शरभं वृत्तमन्यत्र मता शशिकलेति च ।। ७४ ।।

मणिगुणनिकरः स्रगिति च भेदौ द्वावस्य यतिकृतौ भवतः ।
तत्प्रागेवाभिहितं वृत्तद्वयमस्य शरभतो न भिदा ।। ७५ ।।

ततस्तु निशिपालाख्यं विपिनात्तिलकं ततः ।
चन्द्रलेखा ततः प्रोक्ता चण्डलेखाऽपि चान्यतः ।। ७६ ।।[2]

ततश्चित्रा समाख्याता चित्रं चान्यत्र कीर्तितम् ।
ततस्तु केसरं वृत्तमेला स्यात्तदनन्तरम् ।। ७७ ।।

ततः प्रिया समाख्याता यतिभेदादलिः पुनः ।
उत्सवस्तु ततः प्रोक्तस्ततश्चोडुगणं मतम् ।। ७८ ।।

प्रस्तारगत्या सम्प्रोक्ताः भेदाः पञ्चदशाक्षरे ।
वसुशास्त्राश्वनेत्राग्निप्रमिताः (३२७६८) कविपण्डितैः ।।७९।।

प्रस्तार्यं शेषभेदास्तु कृत्वा नामानि च स्वतः ।
अस्मदीयोपदेशेन सूचनीयाः सुबुद्धिभिः ।। ८० ।।

अथ प्रथमतो रामः प्रस्तारे षोडशाक्षरे ।
ब्रह्मरूपकमित्यस्य नाम प्रोक्तं च पिङ्गले ।। ८१ ।।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१. क. गुणः । २. ख. पद्यं नास्ति ।

नराचमिति यन्नाम ततः स्यात् पञ्चचामरम् ।
ततो नीलं समाख्यातं ततः स्याच्चञ्चलाभिधम् ॥ ८२ ॥

इदमेवान्यतश्चित्रसङ्गमित्येव भाषितम् ।
ततस्तु मदनादूर्ध्वं ललिता स्यादनन्तरम् ॥ ८३ ॥

वाणिनीवृत्तमाख्यातं प्रवराल्ललितं ततः ।
अनन्तरं तु गरुडरुतं स्याच्चकिता ततः ॥ ८४ ॥

चकितैव यतिविभेदात् क्वचिदपि गजतुरगविलसितं भवति ।
क्वचिदिदमेव ऋषभगजविलसितमिति नाम संधत्ते ॥ ८५ ॥

ततः शैलशिखावृत्तं ततस्तु ललितं मतम् ।
ततः सुकेशरं वृत्तं ललना स्यादनन्तरम् ॥ ८६ ॥

ततो गिरिधृतिः कुत्राप्यचलानन्तरं धृतिः ।
प्रस्तारगत्यैवात्रापि भेदाः स्युः षोडशाक्षरे ॥ ८७ ॥

रसाग्निपञ्चेषुरसैः (६५५३६) मिताः प्रख्यातबुद्धिभिः ।
प्रस्तार्य सूच्याश्चान्येपि भेदा इत्युपदिश्यते ॥ ८८ ॥

अथ सप्तदशे वर्णप्रस्तारे वृत्तमीर्यते ।
लीलाधृष्टं प्रथमतस्ततः पृथ्वी प्रकीर्तिता ॥ ८९ ॥

ततो मालावतीवृत्तं मालाधर इति क्वचित् ।
ततः शिखरिणीवृत्तं हरिणीवृत्ततस्तथा ॥ ९० ॥

मन्दाक्रान्ता वंशपत्रपतितं पतिता क्वचित् ।
शम्भौ तु वंशवदनमेतन्नाम प्रकीर्तितम् ॥ ९१ ॥

ततो नर्दटकं वृत्तं यतिभेदात्तु कोकिलम् ।
ततस्तु हारिणीवृत्तं भाराक्रान्ता ततो भवेत् ॥ ९२ ॥

मतङ्गवाहिनीवृत्तं ततः स्यात् पद्मकं तथा[१] ।
दशशब्दान्मुखहरमिति वृत्तं समीरितम् ॥ ९३ ॥

प्रस्तारगत्या भेदाः स्युरत्र सप्तदशाक्षरे ।
नेत्राश्वव्योमचन्द्राग्निचन्द्रैः (१३१०७२) परिमिताः परे ॥ ९४ ॥

भेदाः सुबुद्धिभिस्तूह्याः प्रस्तार्य स्वमनीषया ।
अथाष्टादशवर्णानां प्रस्तारे प्रथमं भवेत् ॥ ९५ ॥

---

१. ख. ततः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

लीलाचन्द्रस्ततश्च स्यान्मञ्जीरा चर्चरी ततः ।
क्रीडाचन्द्रस्ततश्च स्यात् ततः कुसुमिताल्लता ॥ ९६ ॥

ततस्तु नन्दनं वृत्तं नाराचः स्यादनन्तरम् ।
मञ्जुलेत्यन्यतः प्रोक्ता चित्रलेखा ततो भवेत् ॥ ९७ ॥

ततस्तु भ्रमराच्चापि पदमित्यतिसुन्दरम् ।
शार्दूलललितं पश्चात् ततः सुललितं भवेत् ॥ ९८ ॥

अनन्तरं चोपवनकुसुमं वृत्तमीरितम् ।
अत्र प्रस्तारगतितो भेदाः ह्यष्टादशाक्षरे ॥ ९९ ॥

वेदश्रुत्यवनीनेत्ररसयुग्मैः(२६२१४४)मिता मताः ।
शेषाः स्वबुद्धचा प्रस्तार्य विज्ञेयाः स्वगुरूक्तितः ॥ १०० ॥

अथ प्रथमतो नागानन्दश्चैकोनविंशके ।
शार्दूलानन्तरं विक्रीडितं वृत्तं ततः स्मृतम् ॥ १०१ ॥

ततश्चन्द्रं समाख्यातं चन्द्रमालेति च क्वचित् ।
ततस्तु धवलं वृत्तं धवलेति च पिङ्गले ॥ १०२ ॥

ततः शम्भुः समाख्यातो मेघविस्फूर्जिता ततः ।
छायावृत्तं ततश्च स्यात् सुरसा तदनन्तरम् ॥ १०३ ॥

फुल्लदाम ततश्च स्यान्मृदुलात् कुसुमं ततः ।
प्रस्तारगत्या भेदाश्चैकोनविंशाक्षरे कृताः ॥ १०४ ॥

वस्वष्टनेत्रश्रुतिदृग्भूतैः (५२४२८८) परिमिताः परे ।
भेदाः प्रस्तार्य बोद्धव्याः स्वबुद्धचा शुद्धबुद्धिभिः ॥ १०५ ॥

अथ विंशाक्षरे पूर्वं योगानन्दः[1] समीरितः ।
ततस्तु गीतिकावृत्तं गण्डका तदनन्तरम् ॥ १०६ ॥

गण्डकैव क्वच्चित्रवृत्तमन्यत्र वृत्तकम् ।
शोभावृत्तं ततः प्रोक्तं ततः सुवदना भवेत् ॥ १०७ ॥

प्लवङ्गभङ्गाच्च पुनर्मङ्गलं वृत्तमुच्यते ।
ततः शशाङ्कचलितं ततो भवति भद्रकम् ॥ १०८ ॥

ततो गुणगणं वृत्तमन्त्यं स्यादतिसुन्दरम् ।
प्रस्तारगत्या चात्रत्या भेदा रसमुनीषुभिः ॥ १०९ ॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१. क. ख. नागानन्दः ।

वसुवेदखचन्द्रैश्च (१०४८५७६) मिताः स्युश्चापरे[1] बुधैः ।
प्रस्तार्य बुद्धया संसूच्या छन्दःशास्त्रविशारदैः ॥ ११० ॥

अथैकविंशत्यक्षरेऽस्मिन् ब्रह्मानन्दादनन्तरम् ।
स्रग्धरा मञ्जरी च स्यान्नरेन्द्रस्तदनन्तरम् ॥ १११ ॥

ततस्तु सरसीवृत्तं क्वचित् सुरतरुर्भवेत ।
सिद्धकं चान्यतः प्रोक्तं रुचिरा तदनन्तरम् ॥ ११२ ॥

ततश्च स्यान्निरुपमतिलकं वृत्तमन्त्यगम् ।
प्रस्तारगत्या चात्रापि भेदाः नेत्रेषुचन्द्रकैः ॥ ११३ ॥

मुनिरन्ध्रखनेत्रैश्च (२०९७१५२) विज्ञेयाः कविशेखरैः ।
प्रस्तार्यान्यत्समुन्नेयं भेदजातं सुबुद्धिभिः ॥ ११४ ॥

अथ प्रथमतो विद्यानन्दवृत्तमुदीरितम् ।
द्वाविंशत्यक्षरे हंसीवृत्तं स्यात्तदनन्तरम् ।
ततस्तु मदिरावृत्तं मन्द्रकं तदनन्तरम् ॥ ११५ ॥
तदेव यतिभेदेन शिखरं परिकीर्तितम् ।
ततः स्यादच्युतं वृत्तं मदालसमनन्तरम् ॥ ११६ ॥
ततस्तरुवरं वृत्तमन्त्यं भवति सुन्दरम् ।
प्रस्तारगत्यैवात्रापि भेदा वेदखवह्निभिः ॥ ११७ ॥
वेदग्रहेन्दुवेदैश्च (४१९४३०४) भवन्तीति विनिश्चितम् ।
तथैवान्येपि ये भेदास्ते प्रस्तार्य स्वबुद्धितः ॥ ११८ ॥
सूचनीयाः कविवरैः छन्दःशास्त्रविशारदैः ।
अथात्र त्र्यधिके विंशत्यक्षरे पूर्वमुच्यते ॥ ११९ ॥
दिव्यानन्दः सर्वगुरुस्ततः सुन्दरिका भवेत् ।
ततस्तु यतिभेदेन सैव पद्मावती भवेत् ॥ १२० ॥
ततोऽद्रितनया प्रोक्ता सैवाश्वललितं क्वचित् ।
ततस्तु मालतीवृत्तं मल्लिका स्यादनन्तरम् ॥ १२१ ॥
मत्ताक्रीडं ततः प्रोक्तं कनकाद्वलयं ततः ।
प्रस्तारगतितो भेदास्त्रयोविंशाक्षरे स्थिताः ॥ १२२ ॥
वसुव्योमरसक्ष्माभृद्वस्वग्निवसुभिर्मिताः (८३८८६०८) ।
शेषभेदाः सुधीभिस्तु सूच्याः प्रस्तार्य शास्त्रतः ॥ १२३ ॥

---

१. क. चाक्षरे ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अथ तत्त्वाक्षरे पूर्वं रामानन्दोऽथ दुर्मिला ।
किरीटं तु ततः प्रोक्तं ततस्तन्वी प्रकीर्तिता ॥ १२४ ॥

ततस्तु माधवीवृत्तं तरलान्नयनं ततः ।
अत्र प्रस्तारभेदेन भेदाः षड्भूमियुग्मकैः ॥ १२५ ॥

सप्तर्षिमुनिशास्त्रेन्दु(१६७७७२१६)मिताः स्युरपरे पुनः ।
गुरूपदेशमार्गेण सूचनीयाः मनीषिभिः ॥ १२६ ॥

अथ **पञ्चाधिके विंशत्यक्षरे** पूर्वमुच्यते ।
कामानन्दस्ततः क्रौञ्चपदा मल्ली ततो भवेत् ॥ १२७ ॥

ततो मणिगणं वृत्तमिति वृत्तचतुष्टयम् ।
प्रस्तारगत्या चात्रापि भेदा नेत्राग्निसिन्धुभिः ॥ १२८ ॥

वेदपञ्चेषुवह्निभ्यामपि(३३५५४४३२)स्युरपरेपि च ।
छन्दःशास्त्रोक्तमार्गेण सूचनीयाः स्वबुद्धितः ॥ १२९ ॥

षड्भिरभ्यधिके विंशत्यक्षरेऽप्यथ गद्यते ।
श्रीगोविन्दानन्दसंज्ञं वृत्तमत्यन्तसुन्दरम् ॥ १३० ॥

ततो भुजङ्गपूर्वं तु विजृम्भितमिति स्मृतम् ।
अपवाहस्ततो वृत्तं मागधी तदनन्तरम् ॥ १३१ ॥

ततश्चान्त्यं भवेद् वृत्तं कमलाऽनन्तरं दलम् ।
प्रस्तारगत्या चात्रत्या भेदाः सम्यग् विभाविताः ॥ १३२ ॥
वेदशास्त्रवसुद्वन्द्वखेन्द्वश्वरससूचिताः । (६७१०८८६४) ।
प्रस्तार्य शास्त्रमार्गेणापरे सूच्याः स्वबुद्धितः ॥ १३३ ॥

एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरावधि कीर्तितम् ।
यथालाभं वर्णवृत्तमन्यदूह्यं महात्मभिः ॥ १३४ ॥
रसलोचनमुन्यश्वचन्द्रनेत्राब्धिवह्निभिः ।
शशिना योजितैरङ्कैः(१३४२१७७२६)पिण्डसंख्या भवेदिह ॥ १३५ ॥
भेदेष्वेतेषु चाद्यन्तसहितैः भेदकल्पनैः ।
पञ्चषष्ठ्यधिकं नेत्रशतकं (२६५) वृत्तमीरितम् ॥ १३६ ॥
द्वितीये खण्डके वर्णवृत्ते सवृत्तमौक्तिके ।
वृत्तानुक्रमणी रूपमाद्यं प्रकरणं त्विदम् ॥ १३७ ॥

प्रकीर्णकप्रकरणं द्वितीयमथ कथ्यते ।
प्रस्तारोसीमवृत्तानि [illegible] वक्ष्महे ॥ १३८ ॥

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

आदौ पिपीडिका तत्र ततस्तु करभः स्मृतः ।
अनन्तरं च पणवं माला स्यात्तदनन्तरम् ॥ १३९ ॥

द्वितीयाऽथ त्रिभङ्गी स्यात् शालूरं तदनन्तरम् ।
इति प्रकीर्णकं नाम द्वितीयं वृत्तमौक्तिके ॥ १४० ॥

प्रोक्तं **प्रकरणं** चाथ **तृतीयमिदमुच्यते** ।
दण्डकानां प्रकरणं क्रमप्राप्तं मनोरमम् ॥ १४१ ॥

तत्र–

चण्डवृष्टिप्रयातस्तु प्रथमं परिकीर्तितः ।
ततः प्रचितकश्चाथ ततोऽप्यर्णादयो मताः ॥ १४२ ॥

ततस्तु सर्वतोभद्रस्ततश्चाऽशोकमञ्जरी ।
कुसुमस्तबकश्चाथ मत्तमातङ्ग एव च ॥ १४३ ॥

अनङ्गशेखरश्चेति तृतीयं परिकीर्तितम् ।
अथार्द्धसमकं नाम **चतुर्थं** परिकीर्त्यते ॥ १४४ ॥

पुष्पिताग्रा भवेत्तत्र प्रथमं वृत्तमुत्तमम् ।
ततश्चैवोपचित्रं स्यादथ वेगवती भवेत् ॥ १४५ ॥

हरिणाऽनन्तरं चापि प्लुता संपरिकीर्तिता ।
ततश्चापरवक्त्रं स्यात् सुन्दरी च ततो मता ॥ १४६ ॥

अथ भद्रविराट् वृत्तं ततः केतुमती स्थिता ।
ततस्तु वाङ्मतीवृत्तमथ स्यात् षट्पदावली ॥ १४७ ॥

इत्यर्द्धसमकं नाम तुर्यं प्रकरणं मतम् ।

अथोच्यते **प्रकरणं** **विषमं** वृत्तमौक्तिके ॥ १४८ ॥
पञ्चमं यत्र पूर्वं स्याद् उद्गता वृत्तमुत्तमम् ।
ततस्तु सौरभं वृत्तं ललितं तदनन्तरम् ॥ १४९ ॥

अथ भावस्ततो वक्त्रं पथ्यावृत्तमतः स्मृतम् ।
ततस्त्वानुष्टुभं वृत्तमष्टाक्षरतया कृतम् ॥ १५० ॥

इत्थं विषमवृत्तानां प्रोक्तं प्रकरणं त्विह ।

अथ षष्ठं प्रकरणं वैतालीयं प्रकीर्त्यते ॥ १५१ ॥
वैतालीयं प्रथमतस्तत्र वृत्तं निगद्यते ।
ततश्चौपच्छन्दसिकमापातलिकमेव च ॥ १५२ ॥

Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

द्विविध नलिनाख्यं च ततः स्याद् दक्षिणान्तिका ।
अथोत्तरान्तिका पश्चात् [प्राच्यवृत्तिरुदीरिता ॥ १५३ ॥

उदीच्यवृत्तिस्तत्पश्चात् प्रवृत्तकमतः परम् ।
अथापरान्तिका पश्चा]¹च्चारुहासिन्युदीरिता ॥ १५४ ॥

वैतालीयं प्रकरणं षष्ठमेतदुदीरितम् ।
यतिप्रकरणं चाथ सप्तमं परिकीर्त्यते ॥ १५५ ॥

यतीनां घटनं यत्र सोदाहरणमीरितम् ।
अथ **गद्यप्रकरणमष्टमं वृत्तमौक्तिके** ॥ १५६ ॥

नानाविधानि गद्यानि गद्यन्ते यत्र लक्षणैः ।
तत्र तु प्रथमं शुद्धं चूर्णकं गद्यमुच्यते ॥ १५७ ॥

अथाऽऽविद्धं चूर्णकं तु ललितं चूर्णकं ततः ।
ततस्तूत्कलिकाप्रायं वृत्तगन्धि ततः स्मृतम् ॥ १५८ ॥

ग्रन्थान्तरमतं चात्र लक्षितं गद्यलक्षणे ।
इति गद्यप्रकरणमष्टमं परिकीर्तितम् ॥ १५९ ॥

विरुदावलीप्रकरणं नवमं चाथ कथ्यते ।

तत्र–

द्विगाद्या च त्रिभङ्ग्यन्ता कलिका नवधा पुरा ॥ १६० ॥

ततस्त्रिभङ्गी कलिका ²नोधा साऽपि² प्रकीर्तिता ।
विदधाद् या द्विपाद्यन्ता सापि षोढा ततः स्मृता ॥ १६१ ॥

मुग्धादिका तरुण्यन्ता मध्ये मध्या चतुर्विधा ।
अवान्तरप्रकरणं कलिकायाः प्रकीर्तितम् ॥ १६२ ॥

अथातो व्यापकं चण्डवृत्तं विरुदमीरितम् ।
सलक्षणं तथा साधारणं चेति द्विधैव तत् ॥ १६३ ॥

ततोऽस्य परिभाषा स्यात् तद्भेदानां व्यवस्थितिः ।

तत्र–

पुरुषोत्तमाख्यं प्रथमं ततस्तु तिलकं भवेत् ॥ १६४ ॥

अच्युतस्तु ततः प्रोक्तो वर्द्धितस्तदनन्तरम् ।
ततो रणः समाख्यातस्ततः स्याद् वीरचण्डकम् ॥ १६५ ॥

---

१. [–] कोष्ठगतोंऽशो क. प्रतौ नोपलभ्यते । २-२. 'नवधा सा' इति सुष्ठु ।

T CC-0. ... Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अन्यत्र वीरभद्रः स्यात् ततः शाकः प्रकीर्तितः ।
मातङ्गखेलितं पश्चादथोत्पलमुदीरितम् ॥ १६६ ॥
ततो गुणरतिः प्रोक्ता ततः कल्पद्रुमो भवेत् ।
कन्दलश्चाथ कथितस्ततः स्यादपराजितम् ॥ १६७ ॥
नर्त्तनं तु ततः प्रोक्तं तरत्पूर्वं समस्तकम् ।
वेष्टनाख्यं चण्डवृत्तं ततश्चास्खलितं मतम् ॥ १६८ ॥
अथ पल्लवितं पश्चात् समग्रं तुरगस्तथा ।
पङ्केरुहं ततः प्रोक्तं सितकञ्जमतः परम् ॥ १६९ ॥
पाण्डूत्पलं ततश्च स्यादिन्दीवरमतः परम् ।
अरुणाम्भोरुहं पश्चादथ फुल्लाम्बुजं मतम् ॥ १७० ॥
चम्पकं तु ततः प्रोक्तं वञ्जुलं तदनन्तरम् ।
ततः कुन्दं समाख्यातमथो बकुलभासुरम् ॥ १७१ ॥
अनन्तरं तु बकुलमङ्गलं परिकीर्तितम् ।
मञ्जर्यां कोरकश्चाथ गुच्छः कुसुममेव च ॥ १७२ ॥
अवान्तरमिदं चापि प्रोक्तं प्रकरणं त्विह ।
अथ त्रिभङ्गी कलिका दण्डकाख्या प्रकीर्तिता ॥ १७३ ॥
विदग्धपूर्वा सम्पूर्णा त्रिभङ्गी कलिका ततः ।
ततस्तु मिश्रकलिका कथिता वृत्तमौक्तिके ॥ १७४ ॥
अवान्तरं प्रकरणं तृतीयमतिसुन्दरम् ।
इत्थं सलक्षणं चण्डवृत्तप्रकरणं कृतम् ॥ १७५ ॥
ततः साधारणमतं चण्डवृत्तमिहोदितम् ।
साधारणमतं चैकदेशतः प्रोक्तमत्र हि ॥ १७६ ॥
अवान्तरप्रकरणं साधारणमते स्थितम् ।
चतुर्थं विरुदावल्यां[1] विज्ञेयं कविपण्डितैः ॥ १७७ ॥
ततस्त्वत्रैव कलिका ज्ञेया सप्तविभक्तिकी ।
अनन्तरं चाक्षमयीकलिका[2] कथिता त्विह ॥ १७८ ॥
ततस्तु सर्वलघुकं कलिकाद्वयमीरितम् ।
ततश्च विरुदानां तु युगपल्लक्षणं कृतम् ॥ १७९ ॥

---

१. ख. विरुदावल्यो । २. क. कलिका* ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

ततस्तु विरुदावल्याः सम्पूर्णं लक्षणं कृतम् ।
विरुदावलीप्रकरणं नवमं वृत्तमौक्तिके ॥ १८० ॥

अथ खण्डावली तत्र पूर्वं तामरसं भवेत् ।
ततस्तु मञ्जरी नाम भवेत् खण्डावली त्विह ॥ १८१ ॥

खण्डावलीप्रकरणं दशमं परिकीर्तितम् ।
अथानयोस्तु दोषाणां निरूपणमुदीरितम् ॥ १८२ ॥

एकादशं प्रकरणमिदमुक्तमतिस्फुटम् ।
ततः खण्डद्वयस्यापि प्रोक्ताऽनुक्रमणी क्रमात् ॥ १८३ ॥

एतत् प्रकरणं चात्र द्वादशं परिकीर्तितम् ।
वृत्तानि यत्र गण्यन्ते तथा प्रकरणानि च ॥ १८४ ॥

पूर्वखण्डे षडेवात्र प्रोक्तं प्रकरणं स्फुटम् ।
द्वितीयखण्डे चाप्यत्र रविसंख्यमुदीरितम् ॥ १८५ ॥

अवान्तरं प्रकरणं चतुःसंख्यं प्रकीर्तितम् ।
सम्भूय चात्र गदितं रसेन्दुमितमुत्तमम् ॥ १८६ ॥

उभयोः खण्डयोश्चापि सम्भूयैव प्रकाशितम् ।
द्वाविंशति[1]प्रकरणं रुचिरं वृत्तमौक्तिके ॥ १८७ ॥

मात्सर्यमुत्सार्य मुदा सदा सहृदयैरिदम् ।
अन्तर्मुखैः प्रकरणं विज्ञैरालोक्यतां मम ॥ १८८ ॥

इति खण्डद्वयानुक्रमणीप्रकरणं द्वादशम् ।१२।

---

१. ख. नेत्रद्वयं ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

ग्रन्थकृत्-प्रशस्तिः

दुस्थीभूतमिमं जलाशयमधिस्थित्वा नयान्तं क्वचि-
न्मोहान्धीकृतगोव्रजं मनसिजस्फूर्जद्विषज्वालया ।
गर्वाग्निं पदपद्मयुग्मवलनैर्निर्वाप्य सर्वात्मना,
त्वं निर्वासय मन्मनोह्लदगतं दुर्वासनाकालियम् ।। १ ।।

यद्दोर्मण्डलचण्डमन्दरतटीनिष्पेषणालोडिता,
दैत्याम्भोनिधयो विनाशमगमन्निस्सारभूता भुवि ।
कालिन्दीतटगन्धसिन्धुरममुं लीलाशतैर्बन्धुरै[1]-
राभीरीनिकुरुम्बभीतिशमनं[2] वन्दे गभीराशयम् ।। २ ।।

निःकामतुच्छीकृतकामधाम-
श्रव्यस्फुरन्नाम जगल्ललाम ।
उद्दामचिन्ताशतदामबद्धं,
श्रीराम मामुद्धर वामबुद्धिम् ।। ३ ।।

श्रीचन्द्रशेखरकृते रुचिरतरे वृत्तमौक्तिकेऽमुष्मिन् ।
अक्षरवृत्तविधायकखण्डस्सम्पूर्णतामगमत् ।। ४ ।।

लक्ष्मीनाथसुभट्टवर्य्य इति यो वासिष्ठवंशोद्भव-
स्तत्सूनुः कविचन्द्रशेखर इति प्रख्यातकीर्तिर्भुवि ।
बालानां सुखबोधहेतुमतुलं सच्छन्दसां मन्दिरं,
स्पष्टार्थं वरवृत्तमौक्तिकमिति ग्रन्थं मुदा निर्ममे ।। ५ ।।

रसमुनिरसचन्द्रैर्भाविते (१६७६) वैक्रमेऽब्दे,
सितदलकलितेऽस्मिन्कार्त्तिके पौर्णमास्याम् ।
अतिविमलमतिः श्रीचन्द्रमौलिर्वितेने,
रुचिरतरमपूर्वं मौक्तिकं वृत्तपूर्वम् ।। ६ ।।

छन्दःशास्त्रपयोनिधिलोपामुद्रापतिं पितरम्[3] ।
श्रीमल्लक्ष्मीनाथं सकलागमपारगं वन्दे ।। ७ ।।

---

१. ख. बन्धुरा । २. ख. भातिशमनं । ३. ख. पितान्तरं ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

याते दिवं सुतनये विनयोपपन्ने,
श्रीचन्द्रशेखरकवौ किल तत्प्रबन्धः ।
विच्छेदमाप भुवि तद्वचसैव सार्द्धं,
पूर्णीकृतश्च स हि जीवनहेतवेऽस्य ॥ ८ ॥

श्रीवृत्तमौक्तिकमिदं लक्ष्मीनाथेन पूरितं यत्नात् ।
जीयादाचन्द्रार्कं जीवातुर्जीवलोकस्य ॥ ९ ॥

श्रीः

इत्यालङ्कारिकचक्रचूडामणि-छन्दःशास्त्र[1]परमाचार्य-सकलोपनिषद्रहस्यार्णव-कर्णधार-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टात्मज-कवि[2]-चन्द्रशेखरभट्टविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिके पिङ्गलवार्त्तिके वर्णवृत्ताख्यो
द्वितीयः परिच्छेदः ।२।

श्रीः

समाप्तश्चायं वार्त्तिके द्वितीयः खण्डः[3] ।

श्रीकृष्णायानन्तशक्तये नमः । श्रीरस्तु ।

समाप्तमिदं श्रीवृत्तमौक्तिकं नाम पिङ्गलवार्त्तिकम् ।

शुभमस्तु ।

संवत् १६६० समये श्रावनवदि ११ रवौ शुभदिने लिखितं शुभस्थाने अर्गलपुरनगरे लालमनिमिश्रेण । शुभम् । इदं ग्रन्थसंख्या ३८५०॥

---

१. ख. छन्दःशास्त्रे । २. ख. कविशेखरभट्ट । ३. ख. द्वितीयखण्डः ।

CC-0. BORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

छन्दःशास्त्रपरमाचार्यश्रीलक्ष्मीनाथभट्टप्रणीतो

वृत्तमौक्तिक-वार्त्तिक-दुष्करोद्धारः

प्रथमो विश्रामः

श्रीगणेशाय नमः

प्रणम्य जगदाधारं विश्वरूपिणमीश्वरम् ।
श्रीचन्द्रशेखरकृते वार्त्तिके वृत्तमौक्तिके ॥ १ ॥
अन्तःसारं समालोच्य नष्टोद्दिष्टादिदुष्करम् ।
श्रीलक्ष्मीनाथभट्टेन सुकरीक्रियतेतराम् ॥ २ ॥

अथानन्तरं छान्दसिकपरीक्षार्थं कौतुकार्थञ्च मात्राणामुद्दिष्टमुच्यते । तत्र त्रयोदशविभेदभिन्नेषु षट्कलप्रस्तारगणेषु इदं कातिमं रूपम् इति लिखित्वा पृष्ठं रूपमुद्दिष्टं प्रथमप्रत्ययस्वरूपं, तत्प्रकारमाह सार्द्धेन श्लोकेन ।

दद्यात् पूर्वयुगाङ्कान् लघोरुपरि गस्य तूभयतः ।
अन्त्याङ्के गुरुशीर्षस्थितान् विलुम्पेदथाङ्कांश्च ॥ ५१ ॥
उर्वरितैश्च तथाङ्कैर्मात्रोद्दिष्टं विजानीयात् ।

दद्यादिति । तस्मिन् लिखिते रूपे पूर्वयुगाङ्कान् दद्यात् । तत्र च लघोरुपर्यैव गुरोस्तु उभयतः—उपर्यधश्चेत्यर्थः । अथ पश्चादन्त्याङ्के—शेषाङ्के गुरुशीर्षस्थितान् अङ्कान् विलुम्पेत् । तथा कृते सति उर्वरितैश्च अङ्कैः मात्राणामुद्दिष्टं जानीयात् । एतदुक्तं भवति । षट्कलप्रस्तारे तावदेको गुरुः, द्वौ लघू, एको गुरुश्च एवंरूपो गणः ऽ।।ऽ कुत्र स्थानेऽस्तीति प्रश्ने कृते, तदाकारं गणं लिखित्वा पूर्वयुगेन समानाः क्रमादङ्काः दातव्याः २ तः १३ [त]त्रादिकलायां प्रथमोऽङ्को देयः, ततः पूर्वयुगाङ्काभावादुत्सर्गसिद्धो द्वितीयोऽङ्कस्तदधः । तदनन्तरं पूर्वाङ्कद्वयमेकीकृत्य तत्संख्यकोऽङ्कोऽग्रे देयः । एवं च पूर्वयुगसमानाङ्कास्त्रिपञ्चादिर्देय इति पूर्वयुगक्रमार्थः । अत्र गुरोरुपर्यधश्चाङ्को देयो द्विकलत्वात् । एतच्च गुरुशीर्षपदाल्लभ्यते । एवं तेषु अङ्केषु अन्त्याङ्के—चरमाङ्के त्रयोदशरूपे १३ यावन्तो गुरुशीर्षस्थितान् अङ्कांस्तान् विलुम्पेत् । ते च नव तथा च त्रयोदशात्मनि चरमेऽङ्के नवाङ्के लुप्ते सति उर्वरितैरङ्कैश्चतुर्भिश्चतुर्थं स्थानं लिखित्वा तत्समानाङ्कस्थानको यद्गण इति जानीयात् । तदेतन्मात्राणामुद्दिष्टम् । उद्दिष्टस्य गणस्य स्थानमात्रानयनादिति भावः ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

एवं चाष्टभेदविभिन्नो पञ्चकलप्रस्तारे—द्वौ लघू, एको गुरुः, एको लघुश्च इत्येवंरूपो गणः ।।ऽ। कुत्र स्थानेऽस्तीति प्रश्ने, प्रथमलघोरुपरि प्रथमाङ्कस्तदनु द्वितीयलघोरुपरि द्वितीयाङ्कस्ततो गुरोरुपरि तृतीयाङ्कस्तदधः पञ्चमाङ्कस्तदनु लघोरुपरि अष्टमाङ्कश्च देयः। अतोऽन्त्याङ्के-अष्टमाङ्के ८ गुरुशिरोऽङ्कस्तृतीयोऽङ्को ३ लोप्योऽवशिष्टः पञ्चमाङ्को भवति। तस्मात् पञ्चमो गणस्तादृशो भवतीति एवं जानीयादिति।

तथा च पञ्चभेदे चतुष्कलप्रस्तारे जगणः ।ऽ। कुत्रास्तीति प्रश्ने, प्रथमलघोरुपरि प्रथमाङ्कस्तदनु गुरोरुपरि द्वितीयाङ्कस्तदधस्तृतीयाङ्कः शेषो लघोरुपरि पञ्चमाङ्को देयः। अतः शेषे पञ्चमाङ्के ५ गुरुशिरोऽङ्को द्वितीयो लोप्यः। अवशिष्टस्तृतीयाऽङ्को भवति। तस्मात् तृतीयस्थाने जगणो वर्त्तत इति जानीयादिति।

एवञ्च सप्ताष्टकलादिकेषु समस्तेषु प्रस्तारेषु प्रथमे शेषे च गणे शङ्कैव नावतरीतर्त्तीति। द्वितीयस्थानादारभ्य उपान्त्यस्थानपर्यन्तं प्रश्ने कृते प्रोक्तप्रकारेण उद्दिष्टं बोद्धव्यमतिविशुद्धबुद्धिभिरित्यास्तां विस्तारेण इत्युपरम्यते। इति शिवम्।

श्रीनागराजाय नमः

प्रस्तारविस्तारणकौतुकेन प्रस्तारयन्तं पतगाधिराजम्।
मध्येसमुद्रं प्रविशन्तमन्तर्भजामि हेतुं भुजगाधिराजम्॥

अथ मात्रा-वर्णोद्दिष्टौ वक्तव्ये तत्र प्रस्तारमन्तरेणोद्दिष्टादीनामशक्यकथनत्वात् समस्तप्रस्तारस्य वसुधावलयेऽप्यसमावेशात् केचन प्रस्ताराः प्रस्तुतोपयोगिनो लिख्यन्ते। एवं अन्येपि षड्विंशत्यक्षरपर्यन्तं प्रस्ताराः बोद्धव्याः सुबुद्धिभिः।

द्विकलप्रस्तारो यथा–

ऽ	१
।।	२

त्रिकलप्रस्तारो यथा–

।ऽ	१
ऽ।	२
।।।	३

चतुष्कलप्रस्तारो यथा–

ऽऽ	१
।।ऽ	२
।ऽ।	३
ऽ।।	४
।।।।	५

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पञ्चकलप्रस्तारो यथा–

। ऽ ऽ	१
ऽ । ऽ	२
। । । ऽ	३
ऽ ऽ ।	४
। । ऽ ।	५
। ऽ । ।	६
ऽ । । ।	७
। । । । ।	८

षट्कलप्रस्तारो यथा—

ऽ ऽ ऽ	१
। । ऽ ऽ	२
। ऽ । ऽ	३
ऽ । । ऽ	४
। । । । ऽ	५
। ऽ ऽ ।	६
ऽ । ऽ ।	७
। । । ऽ ।	८
ऽ ऽ । ।	९
। । ऽ । ।	१०
। ऽ । । ।	११
ऽ । । । ।	१२
। । । । । ।	१३

मात्राणामुद्दिष्टं द्विलोप्यः

१	३
।	ऽ
	३

मात्राणामुद्दिष्टं प्रथमप्रत्ययः

१	३	५	८
ऽ	।	।	ऽ
२			१३

लोपो नवाङ्कः ९

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्र-चूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारक-विरचिते श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके दुष्करोद्धारे मात्राप्रस्तारो-द्दिष्टगणसमुद्धारो नाम प्रथमो विश्रामः ॥ १ ॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

द्वितीयो विश्रामः

अथ मात्राणामदृष्टं रूपं नष्टं द्वितीयप्रत्ययस्वरूपम् । तच्च षट्कलप्रस्तारे प्रस्तारान्तरे वा अमुकस्थाने कीदृशं इति प्रश्नोत्तरमध्यर्द्धेन श्लोकद्वयेनाह—

अथ मात्राणां नष्टं यददृष्टं पृच्छ्यते रूपम् ॥ ५२ ॥
यत्कलकप्रस्तारो लघवः कार्याश्च तावन्तः ।
दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् पृष्ठाङ्कं लोपयेदन्त्ये ॥ ५३ ॥
उर्वरितोर्वरितानामङ्कानां यत्र लभ्यते भागः ।
परमात्रां च गृहीत्वा स एव गुरुतामुपागच्छेत् ॥ ५४ ॥

अथेति । पूर्वार्द्धं अवतारिकयैव व्याख्यातप्रायम् ॥ ५२ ॥

यत्कलकप्रस्तारः कृतः तत्कलकप्रस्तारकृते तावन्त एव लघवः कार्याः । चकारोऽवधारणार्थः । तत्र च दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् एक-द्वि-त्रि-पञ्चाष्ट-त्रयोदशादीन् । यथा— । । । । । । ततः पृष्ठाङ्कं अन्त्ये—शेषे लोपयेत् ॥ ५३ ॥

एवं चोर्वरितोर्वरितानां अवशिष्टानामङ्कानां यत्र यत्राङ्के भागो लभ्यते स स एवाङ्कः शेषाङ्के लोपयितुं शक्यते । सः पुनस्तदधः स्थितकलं परमात्रां च गृहीत्वा गुरुतामुपागच्छेत्—गुरुर्भवतीत्यर्थः । गुरुत्वे चाऽधःस्थितकलाया अपि संग्रहोऽर्थाद् भवतीति । अन्यथा लघुगुरुरित्येवं ब्रूयादिति ॥ ५४ ॥

अनेन व्याख्यानेनाव्युत्पन्नतमः शिष्यो बोधयितुं न शक्यत इति स्फुटीकृत्य सोदाहरणं विलिख्यते । यथा—

षट्कलप्रस्तारे द्वितीयस्थाने कीदृशो गणः ? इति प्रश्ने, पूर्वोक्ताङ्कसहिताः लघुरूपाः षट्कलाः स्थापनीयाः । पूर्वयुगलसदृशा अङ्का देयाः । ततः शेषाङ्के त्रयोदशे १३ पृष्ठाङ्कलोपे द्वितीयाङ्क २ लोपे सति एकादशावशिष्टा ११ भवन्ति । तत्राव्यवहिताष्टलोपे शेषकलाद्वयेन एको गुरुर्भवति । अवशिष्टाङ्कः त्रयं भवति । तत्र च पञ्चलोपाशक्यत्वात् परमात्रां गृहीत्वा गुरुर्भवतीत्युक्तत्वाच्च त्रिलोपे ३ तृतीयचतुर्थाभ्यामपरो गुरुर्भवति । शेषाङ्को नावशिष्यत इति । प्रथमं लघुद्वयमेव । तथा चादौ लघुद्वयमनन्तरं गुरुद्वयमित्येतादृशो । । ऽ ऽ द्वितीयो गणो भवतीत्यर्थः । एवमन्यत्रापि ।

यद्यप्याद्यन्तयोस्सन्देहाभावस्तथापि प्रथमे कीदृशो गणः ? इति प्रश्ने, गुरुत्रयात्मकं प्रथमं गणं लिखित्वा तदोपर्यधः क्रमेण पूर्वयुगाङ्का एक-द्वि-त्रि-पञ्चाष्ट-

CC-0. RORI Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

त्रयोदशाकारा देयाः । यथा— ऽ ऽ ऽ तत्र शेषाङ्के त्रयोदशात्मनि १३ गुरुशीर्षस्था ये अङ्का एकत्र्यष्टरूपास्तैर्जातो द्वादशाङ्को लोप्यस्तथा च लुप्ते तस्मिन् प्रथमो गणस्तादृशो भवतीति वेदितव्यम् ।

अथ च त्रयोदशस्थाने कीदृशो गणः ? इति प्रश्ने, पूर्वं[व]देव लघूनामुपर्यङ्कान् दत्त्वा शेषाङ्के त्रयोदशात्मनि पृष्ठाङ्कलोपे अवशिष्टाङ्काभावान्न गुरुकल्पना । अतो लघव एवावशिष्यन्ते इति । । । । । ।

चतुर्दशादिप्रश्ने श्वाङ्कलोपासम्भवादसत्यत्वमात्रं वाच्यम् । तदधिकप्रस्तारा-भावादित्थं च मात्राप्रस्तारे सर्वत्रैव शेषाङ्कसमसंख्यागणा भवन्तीत्यपि निश्ची-यते । इति गुरुमुखादवगतार्थो लिखित इति शिवम् ।

मात्राणां नष्टम्

१	२	३	५	८	१३
।	।	।	।	।	।
		।	।	ऽ	ऽ

द्वितीयः प्रत्ययः

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिक-चक्रचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथ-भट्टारकरविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारे मात्रा-प्रस्तारनष्टगणसमुद्धारो नाम द्वितीयो विश्रामः ॥ २ ॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तृतीयो विश्रामः

अथ तथैव क्रमप्राप्तं वर्णानामुद्दिष्टमाह—द्विगुणानिति श्लोकेन ।

द्विगुणानङ्कान् दत्त्वा वर्णोपरि लघुशिरःस्थितानङ्कान् ।
एकेन पूरयित्वा वर्णोद्दिष्टं विजानीत ।। ५५ ।।

वर्णानामुपरिप्रसृतानां इति अध्याहार्यम् । तथा च तेषामुपरि द्विगुणानङ्कान् दत्त्वा ततो लघुशिरःस्थितानङ्कान् संयोज्येति शेषः । तथा च तं-संयुक्तं अङ्कं एकेनाधिकेन अङ्केन पूरयित्वा-एकीकृत्य वर्णोद्दिष्टं विजानीत शिष्या इति शेषः ।। ५५ ।।

एवमुक्तं भवति । एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरावधिप्रस्तारेषु प्रतिप्रस्तारमाद्य-भेदे लघ्वभावादुद्देशः सर्वथा नास्त्येव । अतो द्वितीयभेदादारभ्य उपान्त्यभेद-पर्यन्तं उद्देशो भवतीति तत्प्रकारबोधनार्थं शिष्यानभिमुखीकृत्य प्रस्तारा निर्द्धार-पूर्वकं वर्णोद्दिष्टमुच्यते । तथा च—

एकाक्षरप्रस्तारे भेदद्वयं भवति । तत्र प्रथमभेदस्य उद्देशासम्भवात् । द्वितीय-भेदे च एकलघुरूपे द्वितीयाक्षराभावादेकमेवाङ्कं तस्मिन् दत्त्वा तदुपरि एक-मङ्कमधिकं दत्त्वा द्वितीयभेदमुद्दिशेत् । इत्येकाक्षरप्रस्तारः ।

द्व्यक्षरप्रस्तारे भेदचतुष्टयं ४ भवति । तत्र द्वितीये एको लघुरेकोगुरुरित्येवं भेदे । ऽ, प्रथमे लघावेकोऽङ्को, द्वितीये गुरौ द्वितीयोऽङ्को दातव्यः, तदनु लघोरुपरि एकमधिकं दत्त्वा द्वितीयंभेदं उद्दिशेत् । एवं तृतीये एको गुरुरेको लघुरित्येवं भेदे ऽ ।, प्रथमे गुरावेकोऽङ्को, द्वितीये लघौ द्वितीयोऽङ्कोऽन्त्यस्ततो लघोरुपरि स्थिते द्वितीयेऽङ्के एकमधिकं दत्त्वा तृतीयं भेदमुद्दिशेत् । एवमेव लघुद्वयात्मके ।। चतुर्थे भेदे प्रथमे लघौ प्रथमाऽङ्कं दत्त्वा, द्वितीयेऽपि लघौ द्वितीयमङ्कं विधाय तयोरुपरिस्थयोः प्रथमद्वितीयाङ्कयोर्मेलने कृते जाते त्रिके एकाङ्कं अधिकं दत्त्वा तस्य चतुष्टयं सम्पाद्य चतुर्थं भेदमुद्दिशेदिति । इति द्व्यक्षरप्रस्तारः ।

त्र्यक्षरप्रस्तारे तु भेदाष्टकं ८ भवति । तत्र एको लघुः द्वौ गुरू चेति गणः कुत्रास्तीति प्रश्ने कृते पृष्ठं गणं । ऽ ऽ लिखित्वा तत्र प्रथमे लघौ प्रथमाङ्को दातव्यः, द्वितीये गुरौ तद्द्विगुणो द्वितीयोऽङ्को दातव्यः, तृतीये गुरौ तद्द्विगुण-श्चतुर्थाऽङ्को दातव्यः । अत्र सर्वत्र प्रथमादिपदेन वर्णो लक्ष्यते, ततो लघोरुपरि योऽङ्कस्तस्मिन्नेकमधिकं दत्त्वा तेन सह एकीकृत्य द्वयङ्को भवति तस्मात् द्वितीयो यगणाख्याक्षरप्रस्तारे गणो भवतीत्येवं वेदितव्यम् ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

एवं चात्रैव प्रथमं लघुद्वयं ततो गुरुरित्येवं गणः ।।ऽ कस्मिन् स्थानेऽस्तीति प्रश्ने कृते तदाकारं गणं १, २ लिखित्वा प्रथमे लघावेकाङ्कं दत्त्वा १, द्वितीयेऽपि तद्द्विगुणं द्व्यङ्कं २ विधाय, तृतीये गुरौ तद्द्विगुणं चतुर्थमङ्कं कृत्वा ४, ततो लघोरुपरिस्थयोः प्रथमद्वितीयाङ्कयोः संयोगकृतत्रयं भवति ३, तस्मिन्नेकेऽधिके दत्ते सति चतुरङ्को भवति ४ । अतश्चतुर्थस्सगणाख्यस्त्र्यक्षरप्रस्तारे गणो भवतीति ज्ञेयम् । एवमन्यत्र । इति त्र्यक्षरप्रस्तारः ।

अथ चतुरक्षरप्रस्तारे षोडश भेदा १६ भवन्ति । तत्र द्वौ गुरू, एको लघुरेको गुरुश्चेत्येवंरूपो गणः कुत्रास्तीति प्रश्ने कृते, तं पृष्ठं गणं लिखित्वा ऽ ऽ । ऽ तत्र प्रथमगुरोरुपरि प्रथमाङ्को १ देयः, ततो द्विगुणान् द्विगुणान् अङ्कान् दत्त्वा, ततश्च द्वितीयगुरोरुपरि द्वितीयोऽङ्को देयः, तृतीयो लघौ चतुरङ्कः, चतुर्थो गुरावष्टमाङ्को देयः ८ । इति द्वैगुण्यम् । ततो लघोरुपरिश्चतुर्थोऽङ्कस्तं एकेन पूरयित्वा तस्य पञ्चत्वं विधाय तत्समानाङ्कस्थाने स गणोऽस्तीति विज्ञातव्यम् । इत्युद्दिष्टं वर्णप्रस्तारे प्रथमप्रत्ययस्वरूपं विजानीत शिष्या इति ।

अत्र सर्वत्र गणशब्देन तत्तद्भेदो लक्ष्यते । तथा चात्रैव प्रथमं लघुत्रयमनन्तरं एको गुरुरित्येवमाकारको गणः कुत्र स्थानेऽस्तीति प्रश्ने कृते तदाकारं गणं लिखित्वा ।।।ऽ तत्र प्रथमलघोरुपरि प्रथमाङ्कं दत्त्वा, ततोऽपि द्विगुणान् द्विगुणान् अङ्कान् दत्त्वा, तदनु द्वितीयलघोरुपरि तद्द्विगुणं द्वितीयमङ्कं विलिख्य, तृतीये लघौ तद्द्विगुणं चतुरङ्कं विधाय, चतुर्थे गुरावष्टमाङ्कं तद्द्विगुणं दत्त्वा, एवं द्विगुणत्वं सम्पाद्यते । लघुशिरःस्थितान् एक-द्वि-चतुरङ्कान् एकीकृत्य जातं सप्ताङ्कं ७, एकेन ग्रन्थिस्थेन पूरयित्वा तस्याष्टत्वं विधाय तत्समानाङ्कस्थाने स गणोऽस्तीति ज्ञेयम् । इत्युद्दिष्टं विस्पष्टं विजानीत विज्ञाः । इति चतुरक्षरप्रस्तारः ।

किञ्च—

विपरीतप्रस्तारोद्दिष्टे क्रियमाणे लघुशिरःस्थितान् अङ्कान् इत्यत्र गुरुशिरःस्थितान् इति पाठस्तत्रोद्दिष्टप्रकारः सुलभः । एवञ्च सर्वप्रत्ययेषु पाठविपर्ययः कार्य इत्युपदिश्यते । एवञ्च ते सर्वेऽपि प्रत्यया विपरीता भवन्तीति रहस्यान्तरम् । एवमन्येष्वपि प्रस्तारेषु तत्तद्गणस्थानावस्थानं बोद्धव्यमिति विशदबुद्धिभिः । इति संक्षेपः । इति सर्वमवदातम् ।

एकाक्षरप्रस्तारो यथा–

ऽ १

। २

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

द्वयक्षरप्रस्तारो यथा–

ऽ	ऽ	१
।	ऽ	२
ऽ	।	३
।	।	४

त्र्यक्षरप्रस्तारो यथा–

ऽ	ऽ	ऽ	१
।	ऽ	ऽ	२
ऽ	।	ऽ	३
।	।	ऽ	४
ऽ	ऽ	।	५
।	ऽ	।	६
ऽ	।	।	७
।	।	।	८

चतुरक्षरप्रस्तारो यथा–

ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	१
।	ऽ	ऽ	ऽ	२
ऽ	।	ऽ	ऽ	३
।	।	ऽ	ऽ	४
ऽ	ऽ	।	ऽ	५
।	ऽ	।	ऽ	६
ऽ	।	।	ऽ	७
।	।	।	ऽ	८
ऽ	ऽ	ऽ	।	९
।	ऽ	ऽ	।	१०
ऽ	।	ऽ	।	११
।	।	ऽ	।	१२
ऽ	ऽ	।	।	१३
।	ऽ	।	।	१४
ऽ	।	।	।	१५
।	।	।	।	१६

वर्णानां उद्दिष्टं तथैव प्रथमः ।

[इति] श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारप्रस्तारे विस्तारप्रकारः ।

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिक-
चक्रचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मी-
नाथभट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिक-वार्त्तिकदुष्करो-
द्धारे वर्णप्रस्तारोद्दिष्टगणसमुद्धारो नाम
तृतीयो विश्रामः ॥ ३ ॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

चतुर्थो विश्रामः

अथ क्रमप्राप्तं तथैव वर्णानां नष्टमाह—'नष्टे पृष्ठे' इति श्लोकेन ।

नष्टे पृष्ठे भागः कर्त्तव्यः पृष्ठसंख्यायाः ।
समभागे ल कुर्याद् विषमे दत्त्वैकमानयेद् गुरुकम् ।। ५६ ।।

नष्टे–अदृष्टरूपे पृष्ठे सति पृष्ठसंख्यायाः–पृष्ठायाः संख्यायाः भागः कर्त्तव्यः–विधेयः । तत्र समभागे सति लं–लघुं कुर्यात्, विषमेऽवशिष्टे सतीति शेषः । एकं दत्त्वा तस्यापि भागं कृत्वा गुरुकमानयेत्–गुरुं लिखेदित्यर्थः । एवं कृते सति प्रकृतप्रस्तारस्थितादृष्टरूपगणस्थानसिद्धिर्भवतीति भावः ।। ५६ ।।

इदमत्रानुसन्धेयम्—

अत्र तावद् भागो नाम नष्टाङ्कस्य यावत्संख्यापूरणम् । तथाहि सोदाहरणमुच्यते । यथा–

चतुरक्षरप्रस्तारे षष्ठो गणः किमाकारः ? इति प्रश्ने, षडङ्कभागं कृत्वा तदर्द्धं त्रयं ३ स्थापनीयम् । अयं च समो भागः, उभयकोटिसाम्यात् । अथ एको १ गुरुर्लेख्यः । अनन्तरं अवशिष्टस्य त्रयस्य विषमत्वात् एकं १ दत्त्वा चतुष्टयं सम्पाद्य तस्य भागं कृत्वा द्वयं २ स्थापनीयम् । तदा एको गुरुर्लेख्यः, ततो द्वयोर्भागं कृत्वा एकं १ स्थापनीयम् । तदा एको १ लघुर्लेख्यः । ततोऽप्यवशिष्टे विषमे एकं १ दत्त्वा द्वित्वं सम्पाद्य तस्यापि भागं कृत्वा एकमेव स्थापनीयम् । तदा एको गुरुर्लेख्यः । एवञ्च प्रथमं लघुरनन्तरं गुरुस्ततो लघुरन्तरे गुरुरेवमाकारश्चतुरक्षरप्रस्तारे षष्ठो । ऽ । ऽ गण इति वेदितव्यम् ।

तथा चात्रैव सप्तमस्थाने किमाकारको गणः ? इति प्रश्ने, सप्तमस्य विषमत्वात् पूर्वमेको गुरुर्लेख्यः । ततः सप्तसु एकं दत्त्वा अष्टौ कृत्वा विभागः कार्यस्तेन अवशिष्टाश्चत्वारः । अयं च समो भागस्तत एको १ लघुर्लेख्यः । पुनश्चतुष्टयस्यावशिष्टस्य भागं कृत्वा द्वयं समं स्थापनीयम् । अत एको लघुरेव लेख्यः । अनन्तरं अवशिष्टस्य एकाङ्कस्य विषमीभूतत्वाद् गुरुरेव लेख्यः । एवञ्च प्रथमं गुरुरनन्तरं लघुस्ततोऽपि लघुरेव चरमे च गुरुरेवं ऽ । । ऽ आकारश्चतुरक्षरप्रस्तारे सप्तमो गण इति च विज्ञेयम् । एवं पुनः पुनर्भागे समे विभजनीये लघुर्ज्ञातव्यः । विषमे एकं दत्त्वा भागे कृते गुरुर्ज्ञातव्यः । प्रकृते च लघावधिको गण

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

आयातीति षड्विंशतिवर्णप्रस्तारपर्यन्तं विषमस्थलेषु एकैकं दत्त्वा गुरुर्लेख्य इति संक्षेपः। सर्वमिदमतिमञ्जुलवञ्जुलवर्णनष्टमिति शिवम्।

वर्णानां नष्टम्

| ऽ | ऽ ६
ऽ | | ऽ ७

तथैव द्वितीयप्रत्ययः।

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्रचूडा-
मणिसाहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्यश्रीलक्ष्मीनाथभट्टारक-
विरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारवर्णप्रस्तार-
नष्टगणसमुद्धारो नाम चतुर्थो विश्रामः॥ ४॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पञ्चमो विश्रामः

अथ तृतीयप्रत्ययस्वरूपवर्णमेरुमाह—श्लोकद्वयेन कोष्ठानिति ।

> कोष्ठानेकाधिकान् वर्णैः कुर्यादाद्यन्तयोः पुनः ।
> एकाङ्कमुपरिस्थाङ्कद्वयैरन्यान् प्रपूरयेत् ।। ५७ ।।
> वर्णमेरुरयं सर्वगुर्वादिगणवेदकम् ।
> प्रस्तारसंख्याज्ञानञ्च फलं तस्योच्यते बुधैः ।। ५८ ।।

तत्र च क्रमाद् एकाधिकान् कोष्ठान् वर्णैरक्षरैरुपलक्षितान्, पुनराद्यन्तयोरेकाङ्कं च कुर्याद् विलिख्य रचयेत् । ततश्च मध्यस्थकोष्ठकस्योपरि स्थिताङ्कद्वयैरेकीकृतैरित्यर्थः । अन्यान् शून्यान् कोष्ठान् प्रपूरयेत् ।। ५७ ।।

एवं कृते सत्ययं वर्णमेरुर्मेरुरिव भवतीति शेषः । तस्यैवंप्रकारेण विरचितस्य मेरोर्बुधैः—अधीतछन्दःशास्त्रैः भाष्यवार्त्तिकतात्पर्याभिज्ञैरिति यावत् । सर्वगुरुरादौ येषामेवंविधानां गणानां वेदकं—ज्ञापकं अवबोधकमिति, यावत् प्रस्तार संख्याज्ञानं च यतो भवतीति उभयमपि फलविशेषणम् । तथा च तत्तत्पंक्तिस्थकोष्ठगत-तत्तद्वर्णप्रस्तारसंख्याव्यापकं फलं उच्यते—प्रकाश्यत इत्यर्थः ।।५८।।

अस्य निर्गलितार्थस्त्वेवं समुल्लसति—

एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरपर्यन्तं स्वस्वप्रस्तारे कति सर्वगुरवः, कत्येकादिगुरवः, कति सर्वलघवः, कति वा प्रस्तारसंख्येति प्रश्ने कृते वर्णमेरुणा प्रत्युत्तरं देयम् । तत्र एकाक्षरादिक्रमेण यावदिष्टं कोष्ठकान् विरचय्य, आदावन्ते च कोष्ठके प्रथमाङ्को दातव्यः । ततो मध्यस्थकोष्ठके च तदीयशिरःकोष्ठकद्वयाङ्कं शृङ्खलाबन्धन्यायेन एकीकृत्य परं शून्यं कोष्ठकं एकीकृताङ्के पूरयेत् । एवं अन्यत्रापि पूरणीये कोष्ठके कोष्ठानामुपरिस्थितकोष्ठद्वयाङ्कमुक्तबन्धन्यायेन पूरणं विधेयं इति संक्षेपः । एवं पूरितेषु कोष्ठेषु एकाक्षरप्रस्तारे आदावेकगुर्वात्मकस्तदन्ते च एकलघ्वात्मकः संकेत इति ।

द्वयक्षरप्रस्तारे तु सर्वगुरुरादौ त्रिगुरु-द्विगुरुर्वारिभावात् स्थानद्वयेप्येकगुरुरन्ते च सर्वलघुरिति ।

त्र्यक्षरप्रस्तारे चादौ सर्वगुरुस्त्रिगुरोरन्यत्रासम्भवात्, स्थानत्रये द्विगुरुः, स्थानत्रये च एकगुरुरन्ते च सर्वलघुरिति ।

चतुरक्षरप्रस्तारेपि सर्वगुरुरादौ च चतुर्गुरोरन्यत्राभावात्, स्थानचतुष्के त्रिगुरुः, स्थानषट्के द्विगुरुः स्थानचतुष्टये च एकगुरुरन्ते च सर्वलघुरिति ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

एवमनया प्रणालिकया सुधीभिः षड्विंशत्यक्षरप्रस्तारपर्यन्तं अङ्कसञ्चार-प्रकारः समुन्नेयः ।

किञ्चात्र तत्तत्पङ्क्तिकोष्ठगततत्तद्वर्णप्रस्तारपिण्डसंख्यापि तत्तत्पङ्क्ति-स्थिताङ्कैः समुल्लसतीति वर्णमेरुरयं मेरुरिवादिभागसंकुचितान्तविस्ताररूपो विभातीति श्रीगुरुमुखादवगतो वर्णमेरुलिखनक्रमप्रकारः प्रकाशित इति शिवम् ।

श्रीलक्ष्मीनाथभट्टेन रायभट्टात्मजन्मना ।
कृतो मेरुरयं वर्णप्रस्तारस्यातिसुन्दरः ॥

अस्य स्वरूपमुदाहरणमत्र द्रष्टव्यम् ।

वर्णमेरुर्यथा तृतीयः

१	१								
१	२	१							
१	३	३	१						
१	४	६	४	१					
१	५	१०	१०	५	१				
१	६	१५	२०	१५	६	१			
१	७	२१	३५	३५	२१	७	१		
१	८	२८	५६	७०	५६	२८	८	१	
१	९	३६	८४	१२६	१२६	८४	३६	९	१

नववर्णमेरुरयम् । एवं अग्रेपि समुन्नेयः सुधीभिः ।

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिक-चक्रचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथ-भट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारे एकाक्षराद् षड्विंशत्यक्षरावधिवर्णप्रस्तारमेरूद्धारो नाम पञ्चमो विश्रामः ॥५॥

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

षष्ठो विश्रामः

अथ मेरुगर्भां चतुर्थप्रत्ययस्वरूपां वर्णानां पताकामाह—श्लोकत्रयेण दत्त्वेत्यादि ।

दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् पूर्वाङ्के योजयेदपरान् ।
अङ्कः पूर्वं यो वै भृतस्ततः पंक्तिसञ्चारः ॥५९॥
अङ्काः पूर्वं भृता येन तमङ्कभरणं त्यजेत् ।
अङ्कश्च पूर्वं यः सिद्धस्तमङ्कं नैव साधयेत् ॥६०॥
प्रस्तारसंख्यया चैवमङ्कविस्तारकल्पना ।
पताका सर्वगुर्वादिवेदिकेयं विशिष्य तु ॥ ६१ ॥

तत्र पूर्वयुगाङ्कान् एक-द्वि-चतुरष्टादीन् अङ्कान् प्रथमं दत्त्वा पूर्वाङ्कैरेकद्व्या-दिभिरपरान् त्र्यादीन् अङ्कान् योजयेत् बिभृयात् भरणं कुर्यादिति यावत्। किञ्च, य एवाङ्कः पूर्वं भृतः-पूरितः, ततस्तस्मादेव अङ्कात् वै-नियमेन पंक्तिसञ्चारः विधेय इति शेषः ॥ ५९ ॥

अङ्का इति । नियमान्तरं च, येन-अङ्केन पूर्वमङ्का भृताः-पूरिताः तमङ्कं पुनर्भरणं त्यजेत्, प्रयोजनाभावात् । किञ्च, अङ्कश्च पूर्वं यः सिद्धस्तमङ्कं पुनर्न साधयेत्-न स्थापयेदित्यर्थः ॥ ६० ॥

पताकाप्रयोजनमाह–

प्रस्तारेति । एवं प्रस्तारसंख्यया अत्राङ्कविस्तारकल्पना भवतीति शेषः । एतादृशी चेयं पताका विशिष्य-विशिष्टां कृत्वा, तु--अवधारणे, सर्वगुर्वादिसर्व-लघ्वन्तवेदिका-ज्ञापिका विज्ञातव्यैवेति वाक्यार्थः ॥ ६१ ॥

एवमुक्तं भवति—

भो शिष्याः ! उद्दिष्टसदृशा अङ्का देयाः । पूर्वाङ्कैः परभरणं कुर्यात्, पूरयितव्यः । पंक्तेः प्रधानाङ्कस्य पश्चात् स्थिताः पूर्वाङ्का भरणं पूरणम् । एकत्राधिकस्य अङ्कस्य प्राप्तौ सा पंक्तिरेव तदङ्कभरणे त्यज्यत इत्यवधेयम् ।

एवञ्च मेरूक्तप्रस्तारसंख्यया पताकाङ्का वर्द्धयितव्याः । तथाहि—

चतुर्वर्णप्रस्तारे एक-द्वि-चतुरष्टाङ्का देयाः । यथा—१ । २ । ४ । ८ । अत्रैकाङ्कस्य पूर्वाङ्कासम्भवात् द्वितीयाङ्कादारभ्य पंक्तिः पूर्यते । तत्र

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पूर्वाङ्का एकाङ्क एव प्रस्तारादिभूतः सर्वगुरुरूपः, तस्य परे द्वितीयादयः ते च अव्यवहितानतिक्रमेण पूर्यन्ते । तथा च एकेन द्वाभ्यां मिलित्वा त्र्यङ्को भवति सः द्वितीयाङ्काधस्तात् स्थापनीयः । तत एकेन अष्टभिश्च मिलित्वा नवाङ्को भवति स पञ्चमाङ्काधःस्थात् स्थापनीयः । ततः पंक्तिपरित्यागः । मेरौ त्रिगुरूणां रूपाणां चतुःसंख्यादर्शनादिति भावः । एतेन चतुर्वर्णप्रस्तारे प्रथमं रूपं सर्वगुरु ब्रूयात् । द्वि-त्रि-पञ्च-नवस्थानस्थानि चतूरूपाणि त्रिगुरूणि जानीयादिति । एवमङ्कचतुष्टयं साधयित्वा, ततश्चतुरङ्कस्य अधस्तात् पूरित-पंक्तिस्थाः पराङ्कमिलिताः षडङ्का देयाः । तत्र प्रथमः पूरित एवेति त्यज्यते । ततो द्वाभ्यां चतुर्भिर्मिलित्वा षष्ठोऽङ्को ६ भवति, स चतुरङ्काधस्तात् स्थापनीयः । ततः त्रिभिः चतुर्भिः सम्भूय सप्तमोऽङ्को भवति, स च षडङ्काधस्तात् स्थापनीयः । एवं च पञ्चभिश्चतुर्भिर्मिलित्वा जायमानो नवाङ्को न स्थापनीयः । 'अङ्कश्च पूर्वं यः सिद्धस्तमङ्कं नैव साधयेत्' इत्युक्तत्वात् सिद्धस्य साधनायोगादिति युक्ति-सिद्धत्वाच्च इति । ततो द्वाभ्यां अष्टभिर्मिलित्वा दशाङ्को भवति, स च सप्ताङ्का-धस्तात् स्थापनीयः । ततश्च त्रिभिरष्टभिर्मिलित्वा एकादशाङ्को भवति, स च दशाङ्काधस्तात् स्थापनीयः । ततः पञ्चभिरष्टभिर्मिलित्वा त्रयोदशाङ्को भवति, स चान्त एकादशाङ्काधस्तात् स्थापनीय इति । ततः पङ्क्तिपरित्यागः । मेरु-संख्यापरिमाणदर्शनादिति पूर्ववद् हेतुरिति भावः । एतेन च चतुर्वर्णप्रस्तारे चतुः-षट्-सप्त-एकादश-त्रयोदशस्थानस्थानि षड्रूपाणि द्विगुरूणि जानीयादिति । एवमङ्कषट्कं पूर्ववदेव साधयित्वा, ततोऽष्टाङ्काधस्तात् पूरितपक्तिस्थाः पराङ्क-मिलताश्चत्वारोऽङ्का देयाः तथा च चतुर्भिरष्टभिः सम्भूय द्वादशाङ्को भवति, स चाष्टमाङ्काधस्तात् स्थापनीयः । ततः षड्भिरष्टभिश्च संभूय चतुर्दशाङ्को भवति, स तु द्वादशाङ्काधस्तात् स्थापनीयः । ततः सप्तभिरष्टभिश्च संभूय पञ्चदशाङ्को भवति, सोऽपि चतुर्दशाङ्काधस्तात् स्थापनीयः । ततोऽपि पंक्तिपरित्यागः । मेरावेकगुरूणां चतुस्संख्यादर्शनादिति भावः । एतेन चतुर्वर्णप्रस्तारे अष्टमद्वादश-चतुर्दश-पञ्चदशस्थानस्थानि रूपाणि एकगुरूणि ब्रूयादिति । एवं अङ्कचतुष्टयं साधयित्वा, ततो दशभिरष्टभिस्तु प्रस्ताराधिकाङ्कसंभवान्नष्टादशाङ्कसञ्चारः । तर्हि षोडशाङ्कः सर्वलघुरूपः १६ क्वास्तामित्यपेक्षायामष्टमाङ्काग्रे दीयतां सर्व-लघुज्ञानार्थमिति सम्प्रदायः । तथा च प्रथमाङ्कचरमाङ्कयोः सदृशन्यायेन अवस्थानं भवतीति ज्ञेयम् ।

पताकाप्रयोजनं तु मेरौ चतुर्वर्णप्रस्तारस्य एकं रूपं चतुर्गुरूपलक्षितम् । सर्वगुर्वात्मकं चत्वारि त्रिगुरूणि रूपाणि, षड् द्विगुरूणि रूपाणि, चत्वारि एक-गुरूणि रूपाणि, एकं सर्वलघ्वात्मकं रूपमस्ति ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तत्र षोडशभेदाभिन्ने चतुर्वर्णप्रस्तारे कतमस्थाने सर्वगुर्वात्मकं, कतमस्थाने च त्रिगुर्वात्मकं, कतरस्थाने द्विगुर्वात्मकं, कतमस्थाने च एकगुर्वात्मकं, कुत्र वा सर्वलघ्वात्मकं रूपमस्ति, कति वा प्रस्तारसंख्येति प्रश्ने कृते पताकया उत्तरं दातव्यमिति ।

पताकाज्ञानफलमिति श्रीगुरुमुखादवगतो वर्णपताकालिखनप्रकारः प्रकाशित इति दिगुपदर्शनम् । उत्तरत्र च षड्विंशतिवर्णपर्यन्तं पताकाविरचनप्रकारः समुन्नेयः सुधीभिः, ग्रन्थविस्तरभयान्नेहास्माभिः प्रपञ्च्यत इति शिवम् ।

अत्र चतुर्वर्णपताकायां तु सिद्धाङ्कान् पिङ्गलोद्योताख्यायां प्राकृतपिङ्गलसूत्रवृत्तौ श्रीचन्द्रशेखरः श्लोकाभ्यां संजग्राह । यथा—

एक-द्वि-त्रि-शराङ्काश्च वेदर्त्तु-मुनि-दिक्-शिवाः ।
कामाष्ट-सूर्य-मनवस्तिथि-क्षोणीशसम्मिताः ॥१॥
सिद्धाङ्काः स्युश्चतुर्वर्णपताकानुक्रमे स्फुटम् ।
पञ्चकोष्ठे लिखेदङ्कान् शेषानेवं लिखेदिति ॥ २ ॥

शेषान् प्रस्तारान्तरपताकाङ्कान् एवं क्रमात् कोष्ठवर्द्धनपूर्वकक्रमात् लिखेत्-विन्यसेदित्यर्थः ।

अत्र अङ्कविन्यासक्रमस्तु श्रीगुरुमुखादेवावगन्तव्य इति सर्वं मङ्गलम् ।

चतुर्वर्णपताका यथा प्रत्ययकाख्यः—

१	२	४	८	१६
	३	६	१२	
	५	७	१४	
	९	१०	१५	
		११		
		१३		

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्रचूडा-मणि–साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दः-शास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारे वर्णपताकाङ्कोद्धारो नाम षष्ठो विश्रामः ॥६॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

सप्तमो विश्रामः

अथ तृतीयप्रत्ययस्वरूपमेवात्र [मात्रा]मेरुमाह—एकाधिककोष्ठानामित्यादिना सार्द्धेन श्लोकचतुष्टयेन—

एकाधिककोष्ठानां द्वे द्वे पंक्ती समे कार्ये ।
तासामन्तिमकोष्ठेष्वेकाङ्कं पूर्वभागे तु ॥६२॥
एकाङ्कमयुक्पंक्तेः समपंक्तेः पूर्वयुग्माङ्कम् ।
दद्यादादिमकोष्ठे यावत् पंक्तिप्रपूर्तिः स्यात् ॥६३॥
आद्याङ्केन तदीयैः शीर्षाङ्कैर्वामभागस्थैः ।
उपरिस्थितेन कोष्ठं विषमायां पूरयेत् पंक्तौ ॥६४॥
समपंक्तौ कोष्ठानां पूरणमाद्याङ्कमपहाय ।
उपरिस्थाङ्कैस्तदुपरिसंस्थैर्वामस्थितैरङ्कैः ॥६५॥
मात्रामेरुरयं प्रोक्तः पूर्वोक्तफलभागिति ।

तत्र क्रमादेकैकेनाधिकेन कोष्ठेनोपलक्षितानां कोष्ठानां मध्ये द्वे द्वे पंक्ती समे-समाने कार्ये-लिखनीये इत्यर्थः । तासां-सर्वासां पंक्तीनां अन्तिमकोष्ठेषु एकाङ्कं-प्रथमाङ्कं यावदित्थं दद्यात् इत्यन्वयः । अथ च सर्वासां पंक्तीनां पूर्वभागे तु अङ्कविन्यास उच्यत इति शेषः ॥ ६२ ॥

एकाङ्कमिति । तत्रायुक्पंक्तेः-विषमपंक्तेरादिमकोष्ठे-प्रथमकोष्ठे एकाङ्कं-प्रथमाङ्कं समपंक्तेरादिमकोष्ठे-प्रथमकोष्ठे पूर्वयुग्माङ्कं एकान्तरितं प्रथमाङ्कं यावत् पंक्तिप्रपूर्त्तिः-पूरणं स्यात्-भवति तावद् दद्यात्-विन्यसेद् इत्यर्थः ॥ ६३ ॥

तदेवाह—

आद्याङ्केनेति । ततश्च सर्वत्र विषमायां पङ्क्तौ उपरिस्थितेन आद्याङ्केन-प्रथमाङ्केन वामभागस्थैः तदीयैः शीर्षाङ्कैश्च कोष्ठशून्यमिति शेषः प्रपूरयेत्-साङ्कं कुर्यादित्यर्थः ॥ ६४ ॥

किञ्च—

समपङ्क्ताविति । समपङ्क्तौ चाद्याङ्कं अपहाय-त्यक्त्वा उपरिस्थिताङ्कैः-तदुपरिसंस्थैः वामभागस्थितैरङ्कैश्च शून्यानां कोष्ठानां पूरणं विधेयमिति शेषः ॥ ६५ ॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

उक्तं मात्रामेरुमुपसंहरति—मात्रामेरुरयमित्यर्द्धेन ।

भो शिष्याः ! पूर्वोक्तफलभागयं मात्रामेरुरिति प्रकारेणोक्तः । यथा, वर्णमेरोः फलं तथा मात्रामेरोरपीत्यर्थः ।

अत्रैतदुक्तं भवति । द्विमात्रादि-निरवधिकमात्रापंक्तिपर्यन्तं स्वस्वप्रस्तारे कति सर्वगुरवः, कत्येकादिगुरवः, कति सर्वलघवः, कति वा प्रस्तारसंख्येति प्रश्ने कृते मात्रामेरुणा प्रत्युत्तरं देयम् ।

तत्र च क्रमेणैव एकैकेनाधिके कोष्ठेनोपलक्षितानां कोष्ठकानां मध्ये द्वे द्वे कोष्ठे अर्थात् पङ्क्ती समे–सदृशे लिखनीये । तत्र प्रथमे कोष्ठद्वयं । तथा द्वितीयेऽपि कोष्ठद्वयमेव । तृतीये कोष्ठत्रयं । चतुर्थेऽपि कोष्ठत्रयमेव । पञ्चमे चत्वारि । षष्ठेऽपि चत्वार्येव । अत्र कोष्ठपदेन कोष्ठाङ्कः पंक्तिश्च लक्ष्यते, उपचारात् एककलायाः प्रस्तारो नास्तीति प्रथमं न कोष्ठगणनाकल्पना । अतः कोष्ठद्वयात्मिकैव आदौ पंक्तिरिति प्रथम इत्युक्तिरिति समञ्जसम् ।

एवञ्च कोष्ठपंक्तिषु अधोधः क्रमेणाङ्कान् लिखेत् । सर्वत्र च शेषकोष्ठे प्रथमाङ्को देयः । तत्र तत्र च कोष्ठद्वयमध्ये आदावुपरिकोष्ठे च एकरूपोऽङ्को देयः । उपरिस्थितस्योपरिस्थिताङ्काभावाद् उत्सर्गसिद्धैकरूपाङ्केन सहितं कृत्वा द्वितीयकोष्ठे द्वितीयाङ्को देयः इति । तृतीयकोष्ठे तु उपरिस्थिताङ्कसहितं कृत्वा अर्थात् शिरःस्थेनाङ्कद्वयेन मिलितं कृत्वा, अतस्त्रिरूपोऽङ्कस्समायाति । तथा चार्थात् शिरःस्थेनाङ्केन सह प्रथमो द्वितीयेऽधःस्थे मेलनीयः ।

यद्वा, आद्यद्वयमधो मिलतीयं तु प्रक्रिया । तथा च प्रथमकोष्ठद्वयस्य पूरितत्वात् द्वितीयादारभ्याङ्का दातव्याः । तत्र द्वितीये द्वयं, तृतीये पुनरेकं, चतुर्थे त्रयम्, पञ्चमे पुनरेकं, षष्ठे चत्वारि, सप्तमे पुनरेकं, अष्टमे पञ्च, नवमे पुनरेकं, दशमे षट्, एकादशे पुनरेकं, द्वादशे सप्तमेति प्रक्रियया अङ्का देयाः । एवमाद्ये । तदधःकोष्ठेऽन्तकोष्ठे च पूर्णे मध्यस्थशून्यकोष्ठे चैषा प्रक्रिया पूरणीया । कोष्ठशिरः–कोष्ठस्थाङ्कः परकोष्ठस्थाङ्कौ द्वावङ्कौ चैकीकृत्य मध्यकोष्ठे–शून्यकोष्ठे मेलितोऽङ्को देयः । एवं सर्वत्र निरवधिकत्वात् यावदित्थं कोष्ठकं विरच्य मात्रामेरुः पूर्वोक्तरूपः कर्त्तव्य इति ।

अयं त्रयोदशमात्रामेरुलिखनक्रमप्रकारः श्रीगुरुमुखादवगतः प्रकाशित इत्युपरम्यते ।

अत्रेदं अनुसन्धेयम् । समविषमरूपा द्वि-द्वि-मात्रादिप्रस्तारमारभ्य निरवधिकमात्राप्रस्तारपर्यन्तं स्वस्वप्रस्तारे कति समकले [illegible], कति च गुरवः, कति

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

विषमकले लघवः, कति च गुरवः, कति वोभयत्र प्रस्तारसंख्येति प्रश्ने कृते मात्रा-मेरुणा प्रत्युत्तरं देयम् ।

तत्र द्विकले समप्रस्तारे एकः सर्वगुरुः, द्वितीयो द्विकलात्मकः सर्वलघुरिति द्विभेदः प्रस्तारसंकेतः ।

त्रिकले विषमप्रस्तारे द्वावेककलकावेकगुरुकौ चान्ते त्रिकलात्मकः सर्वलघु-रिति द्विभेदः प्रस्तारसंकेतः ।

समकले चतुष्कलप्रस्तारे चादौ द्विगुरुः स्थानत्रये च एकगुरुर्द्विकलश्चान्ते चतुष्कलात्मकः सर्वलघुरिति पञ्चभेदः प्रस्तारसंकेतः ।

विषमकले पञ्चकलप्रस्तारे त्रयो गणा एकलघवः, चत्वारो गणास्त्रिलघवः, स्थानत्रये द्विगुरुः, स्थानचतुष्टये चैकगुरुरन्ते च पञ्चकलात्मकः सर्वलघु-रित्यष्टभेदः प्रस्तारसंकेतः ।

समकले षट्कलप्रस्तारे आदौ सर्वगुरुः, षड्गणा द्विकलाः, पञ्चगणाश्चतु-ष्कलाः, स्थानषट्के द्विगुरुः, स्थानपञ्चके चैकगुरुरन्ते च षट्कलात्मकः सर्वलघुरिति त्रयोदशभेदः प्रस्तारसङ्केत इति ।

एवमनेन प्रकारक्रमेण यावदित्थं मात्रामेवंभीष्टमात्राप्रस्तारे लघुगुर्वादि-प्रकारप्रक्रिया अवगन्तव्या ।

अथवा पूर्वरूपप्रश्ने यावदित्थं यावत्कलकप्रस्तारमात्रामेरुं कोष्ठकैर्विरच्य समकलप्रस्तारे वामतः क्रमेण द्वौ चत्वारः षडष्टावनेन प्रकारेण गुरुज्ञानम् । विषमकलप्रस्तारे तु एक-त्रि-पञ्च-सप्तानेन प्रकारक्रमेण लघुज्ञानम् । अन्ते च सर्वत्र लघुरिति । उभयत्रापि एकः द्वौ त्रयः पञ्चेत्याद्यनया सारण्या दक्षिणतो व्युत्क्रमेण शृङ्खलाबन्धन्यायेन तत्तत्प्रभेदज्ञानम् ।

किञ्चात्र वामभागे सर्वत्रैकैकाङ्कस्थले सर्वगुरुज्ञानं भवतीति विज्ञातव्य-मित्युपदेशरहस्यम् । इति शिवम् । सर्वत्राऽत्र च दक्षिणभागे शृङ्खलाबन्धन्यायेन अग्रिमाङ्कपिण्डोत्पत्तिर्भवतीति रहस्यान्तरमिति च ।

श्रीलक्ष्मीनाथभट्टेन रायभट्टात्मजन्मना ।
कृतो मेरुरयं मात्राप्रस्तारस्यातिदुर्गमः ॥

अस्य स्वरूपमुदाहरणमत्र द्रष्टव्यम् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तथैव तृतीयप्रत्ययः मात्रामेरुः । मात्रामेरुर्यथा--

वि० १	।	१					
स० २	ऽ	१	१				
वि० ३	। ऽ	२	१				
स० ४	ऽ ऽ	१	३	१			
वि० ५	। ऽ ऽ	३	४	१			
स० ६	ऽ ऽ ऽ	१	६	५	१		
वि०	। ऽ ऽ ऽ	४	१०	६	१		
स०	ऽ ऽ ऽ ऽ	१	१०	१५	७	१	
वि०	। ऽ ऽ ऽ ऽ	५	२०	२१	८	१	
स०	ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ	१	१५	३५	२८	९	१
वि०	। ऽ ऽ ; ऽ ऽ	६	३५	५६	३६	१०	१

एकादशमात्रामेरुरयम् । एवं अग्रेऽपि समुन्नेयः ।

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिक-चक्रचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथ-भट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारे एकमात्रादिनिरवधिकमात्राप्रस्तारमेरूद्धारो नाम सप्तमो विश्रामः ॥७॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अष्टमो विश्रामः

अथ मेरुगर्भां चतुर्थप्रत्ययस्वरूपामेव मात्राणां पताकामाह—अथेत्यादि अर्द्धेन श्लोकद्वयेन—

> अथ मात्रापताकापि कथ्यते कवितुष्टये ।।६६।।
> दत्त्वोद्दिष्टवदङ्कान् वामावर्त्तेन लोपयेदन्त्ये ।
> अवशिष्टो वै योऽङ्कस्ततोऽभवत् पंक्तिसञ्चारः ।।६७।।
> एकैकाङ्कस्य लोपे तु ज्ञानमेकगुरोर्भवेत् ।
> द्वित्र्यादीनां विलोपे तु पंक्तिर्द्वित्र्यादिबोधिनी ।।६८।।

अथेति । मात्रामेरुकथनानन्तरं मात्राणां पताकापि कवितुष्टये-कवीनां सन्तोषार्थं कथ्यते-उच्यत इत्यर्थः ।। ६६ ।।

तत्प्रकारमाह—

दत्त्वेति । तत्र उद्दिष्टवत्-उद्देशक्रमवत् अङ्कान्-एक-द्वि-त्रि-पञ्चाष्ट-त्रयोदशादीन् दत्त्वा-लिखित्वा, ततो वामावर्त्तेन-वामभागतः अन्त्ये-त्रयोदशाङ्के लोपयेत् पूर्वमङ्कमिति शेषः । अवशिष्टो वै योऽङ्कः लोपे सतीति शेषः । ततोऽङ्कात् पंक्तिसञ्चारो भवेदिति-जानीयादित्यर्थः ।।६७।।

अपराङ्कलोपेन प्रकारमाह—

एकैकाङ्कस्येति । एकैकाङ्कस्य लोपे तु अन्त्य इति शेषः । एकगुरोर्ज्ञानं भवेत् । द्वित्र्यादीनां अङ्कानां विलोपे तु पंक्तिः द्वित्र्यादिगुरुबोधिनी भवतीति शेषः ।। ६८ ।।

अयमर्थः—उद्दिष्टसदृशा अङ्काः स्थाप्याः । ते यथा—१, २, ३, ५, ८, १३ । एकः द्वित्रिपञ्चाष्टत्रयोदशाद्याः । ततो वामावर्त्तेन परं लोपयेत्–सर्वान्तिमं अङ्कं तत्पूर्वेणाङ्केन लोपयेदित्यर्थः । तत एकेनाङ्केन अन्तिमाङ्कलोपे कृते सति एकगुरुरूपज्ञानं भवति । द्वाभ्यां अन्तिमाङ्के लोपे सति द्विगुरुरूपज्ञानं भवति । त्रिभिरन्तिमाङ्कलोपे सति त्रिगुरुरूपज्ञानं भवतीत्यादि ज्ञेयम् । एवं कृते मात्रापताका सिद्धयति ।

तत्र षट्कलप्रस्तारे यथा—उद्दिष्टसमाना अङ्का एकद्वित्रिपञ्चाष्टत्रयोदशरूपाः स्थापनीयाः । ततः सर्वापेक्षया परस्त्रयोदशाङ्कः तत्पूर्वोऽष्टमाङ्कः, तेनाष्टमाङ्केन त्रयोदशाङ्कस्य लुप्ते सति अवशिष्टाः पञ्च । तस्य पञ्चमाङ्कस्य

CC-0. ... Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तत्पूर्वं त्रिविद्यमानत्वात् अष्टमाङ्कलोपात् परकलया सह गुरुभावाच्च पञ्चमाङ्काद् एकगुरुपंक्तिक्रमो विधेय इति । तत्र च पञ्चमस्थाने आदौ चतुर्लघुकमन्ते चैक-गुरुकमेवं ।।।। ऽ आकारं रूपमस्तीति ज्ञानपताकाफलम् । एवमन्यत्रापि गुरुभावो ज्ञातव्यः ।

तथा पञ्चभिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति अष्टावशिष्यन्ते, ते तु पञ्चाधो लेख्यः । तथा त्रिभिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति दशावशिष्यन्ते ते च अष्टाधो लेख्याः । तथा द्वाभ्यां द्वाभ्यां त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति एकादशावशिष्यन्ते तेऽपि दशाधो लेख्यः । तथा एकेन त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति द्वादशावशिष्यन्ते त एकादशाधो लेख्याः । अत्र सर्वत्र पूर्व एव हेतुरुन्नेयः ।

अतश्च मेरावेकगुरुकचतुर्लघुकरूपगुरुस्थानानि प्रस्तारगत्या पञ्चैव भवन्तीति नाग्रे पंक्तिसञ्चारः । एतेन षट्कलप्रस्तारे पञ्चमाष्टमदशमैकादश-द्वादशस्थानस्थानि रूपाणि एकगुरुकानि ब्रूयादिति । एवं अङ्कपञ्चमके एक-गुरुकमुक्तम् ।

अथ द्विगुरूणि रूपाणि उच्यन्ते—तत्र द्वाभ्यामङ्काभ्यां अन्तिमाङ्कलोपे कृते सति द्विगुरुकं रूपमिति । पञ्चाष्टभिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति भागाभावात् तद्वामावर्त्तस्थैस्त्रिभिस्तदग्रस्थैरष्टभिश्च जातैरेकादशभिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति द्वावशिष्येते, द्वयोस्तत्पूर्वत्र छिद्यमानत्वात् । तत्रैकादशाङ्कलोपात् पर-कलया सह गुरुभावाच्च द्वितीया मारभ्य द्विगुरुकपंक्तिसंचारो भवतीति । तथा च द्वितीयस्थाने प्रथमं द्विलघुकं ततो द्विगुरुकं ।। ऽऽ एवमाकारकं रूप-मस्तीति पूर्ववदेव पताकाफलमुदेतीति ।

एवमन्यत्रापि प्रस्तारान्तरे गुरुभावोऽवगन्तव्यः । तथा च द्वाभ्यां अष्ट-भिश्च जातैर्दशभिः त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति त्रयोऽवशिष्यन्ते; ते द्वयधो लेख्याः । तत एकेन अष्टभिश्च जातैर्नवभिः त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति चत्वारो-ऽवशिष्यन्ते, ते च अधो लेख्याः । ततः पञ्चभिस्त्रिभिश्च जातैरष्टभिस्त्रयोदशांका-वयवलोपाद् अवशिष्टः पञ्चमाङ्को वृत्त एवेति न स्थाप्यते । 'अङ्कश्च पूर्वं यः सिद्धस्तमङ्कं नैव साधयेदिति ।' वर्णपताकातो अनुवृत्तित्वादिति । ततः पञ्चभि-र्द्वाभ्यां च जातो सप्तभिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति सप्तावशिष्यन्ते, ते तु षडधो लेख्याः । द्वित्रिलोपः पञ्चमात्मको वृत्त एवेति न स्थापनीयः, अनुवृत्तसिद्धयादि-निषिद्धत्वादिति । तत एकेन त्रिभिश्च जातैश्चतुर्भिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति नवावशिष्यन्ते, तेऽपि सप्ताधो लेख्याः । एषु च पूर्ववद् हेतुरुन्नेयः । अतश्च मेरौ द्विगुरुक-द्विलघुकरूपस्थानानि प्रस्तारगत्या षडेव भवन्तीति नाग्रे पंक्तिसञ्चारः ।

CC-0. ORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तेन षट्कलप्रस्तारे द्वितीय-तृतीय-चतुर्थ-षष्ठ-सप्तम-नवमस्थानस्थानि रूपाणि द्विगुरूणि ब्रूयादिति ।

तथा च त्रिलोपे त्रिगुरुकं रूपं भवतीति, त्रिपञ्चाष्टलोपे भागो नास्तीति, द्वि-त्रि-पञ्चलोपोऽप्यष्टात्मको वृत्त एवेति, पञ्च-द्वयेकलोपोऽप्यष्टलोपात्मको वृत्त एवेति । एक-द्वि-त्रिलोपोपि वृत्त इति प्रकारेण जायमाना अङ्का न स्थापनीयाः प्रकृतप्रस्तारसमाप्तेरिति भावः ।

ननु प्रथमं रूपं सर्वं गुर्वात्मकं कुत्रास्तीत्यपेक्षायां एक-त्र्यष्टभिर्मिलित्वा जातैर्द्वादशभिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति एकोऽवशिष्टः, स आद्ये स्थाने त्रिगुर्वात्मकं रूपं भवतीति विज्ञातव्यमिति । चरमं रूपं तु अष्टमाङ्काग्रे उद्दिष्टाङ्काऽऽकारत्वेन स्थापितमेवास्ति । तथा चात्रापि प्रथमाङ्कचरमाङ्कयो पूर्वोक्तन्यायेनाऽवस्थानं भवतीति वेदितव्यम् ।

पताकाप्रयोजनं तु मेरौ षट्कलप्रस्तारस्यैकं प्रथमं रूपं त्रिगुरूपलक्षितं सर्वगुर्वात्मकं, षड्द्विगुरूणि रूपाणि, पञ्चैकगुरूणि रूपाणि, एकं सर्वलघ्वात्मकं रूपमस्ति ।

तत्र त्रयोदशभेदभिन्ने षट्कलप्रस्तारे कुत्र स्थाने सर्वगुर्वात्मकं, कतमस्थाने द्विगुर्वात्मकं, कतरस्थाने चैकगुर्वात्मकं, कुत्र वा सर्वलघ्वात्मकं, कति वा प्रस्तार-संख्येति प्रश्ने कृते पताकयोत्तरं दातव्यमिति पताकाज्ञानफलमिति । श्रीगुरुमुखादवगतो मात्रापताकालिखनप्रकारः प्रकाशितः । एवमन्यत्रापि निरवधिकमात्राप्रस्तारेषु पञ्चसप्ताष्टकलानां यथाक्रमं मात्रापताकाविरचनप्रकारः समुन्नेयः सुधीभिः, ग्रन्थविस्तारभयान्नेहास्माभिः प्रपञ्चित इति शिवम् ।

अत्रापि पिङ्गलोद्योताख्यायां सूत्रवृत्तौ सार्द्धेन श्लोकेन षण्मात्रापताकायां सिद्धाङ्काः संगृहीताः । यथा–

एक-द्वि-त्रि-समुद्राङ्ग-मुन्यङ्काश्च त्रयस्तथा ।
पञ्चाष्ट-दिक्-शिवेनाः स्युः तथाष्टौ च त्रयोदश ॥
षण्मात्रिकापताकायामङ्कानुक्रमणी स्मृता ।

इति । इहापि च पंक्त्या विन्यासक्रमो गुरुमुखादवगन्तव्यः ।

किञ्च–

एक-द्वि-त्रि-समुद्राङ्ग-मुनि-वह्नि-शरस्तथा ।
वसु-दिग्-रुद्र-सूर्याष्टक्रमादङ्कान् समालिखेत् ॥
पञ्चमात्रापताकायामङ्कानुक्रमणी मता ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

इति सार्द्धेन श्लोकेन सूत्रवृत्तौ पञ्चमात्रापताकायां सिद्धाङ्कानुक्रमणिका संगृहीता इति ।

अत्राप्यङ्कविन्यासक्रमः पूर्ववदेव । इत्थं सप्ताष्टनवसु कलासु अङ्कान् समुन्नयेत् । दिङ्मात्रमुक्तमस्माभिः ग्रन्थविस्तरशङ्कया इति सर्वमनवद्यम् ।

पञ्चमात्रापताका यथा—

१	२	३	५	८
	३		८	
	४		१०	
	६		११	
	७		१२	

षण्मात्रापताका यथा—

१	२	३	५	८	१३
	३		८		
	४		१०		
	६		११		
	७		१२		
	९				

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिक-चक्रचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथ-भट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारे मात्रा-पताकोद्धारो नामाष्टमो विश्रामः ॥ ८ ॥



CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

नवमो विश्रामः

अथ वृत्तजातिसमार्द्धसमविषमपद्यस्थगुरुलघुसंख्याज्ञानप्रकारमाह 'पृष्ठे' इति श्लोकेन ।

पृष्ठे वर्णच्छन्दसि कृत्वा वर्णांस्तथा मात्राः ।
वर्णाङ्केन कलाया लोपे गुरवोऽवशिष्यन्ते ।। ६९ ।।

तत्राऽमुकसंख्याक्षरप्रस्तारेऽमुके छन्दसि कति गुरवः, कति च लघव इति प्रश्ने कृते गुरुलघुसंख्याज्ञानप्रकारप्रक्रिया प्रकाश्यते ।

तत्रोद्भावितचतुष्पदे वर्णप्रस्तारच्छन्दसि समवृत्ते पृष्ठे सति वर्णान्-तत्रस्थ वर्णान् गुरुलघुरूपतया समुदायमापन्नान् मात्राः-कलाः कृत्वा, तथा गुरुलघुरूपसमुदायतयैव कलारूपतामापद्येत्यर्थः । ततः कलाया इति जात्या एकवचनं । अतः कलानां मध्यत इत्यवधेयम् । वर्णाङ्केन पृष्ठस्य वृत्तस्य वर्णसंख्याङ्केन लोपे लोपावशिष्टकलासंख्यया गुरवोऽवशिष्यन्ते, तत्तद्वृत्तगतगुरून् जानीयादित्यर्थः । गुरुज्ञाने सति परिशेषादवशिष्टवृत्ताक्षरसंख्यया लघूनपि जानीयादित्यर्थः ।। ६९ ।।

अत्र समवृत्तस्यैकपादज्ञानेनैव चतुर्णामपि पादानामुट्टवणिकां विधाय लिखनेन गुरुलघुज्ञानं भवतीत्यनुसन्धेयः सुधीभिः । यथा–

समवृत्ते एकादशाक्षरप्रस्तारे षोडशमात्रात्मके रथोद्धतावृत्तपादे 'रात्परैन्नरलगै रथोद्धता' इत्यत्र ऽ।ऽ, ।।।, ऽ।ऽ, ।ऽ वर्णाः ११, मात्राः १६ षोडशकलासु पिण्डरूपासु संख्यातासु वृत्तस्यैकादशवर्णसंख्यायां लुप्तायां सत्यामवशिष्टपञ्चगुरवः षड्लघवः परिशेषाद् विज्ञेया । इति समवृत्तस्थगुरुलघुज्ञानप्रकारः । एवं पादचतुष्टयेऽपि पादसाम्यात् विंशतिर्गुरवः चतुर्विंशतिर्लघवश्च भवन्तीति ज्ञेयम् । एवं प्रस्तारान्तरेऽपि समवृत्तेषु गुरुलघुज्ञानमूह्यं सुधीभिरित्युपदिश्यते ।

एवञ्च षड्त्रिंशदक्षरायाम्—

गोकुलनारी मानसहारी वृन्दावनान्तसञ्चारी ।
यमुनाकुञ्जविहारी गिरिवरधारी हरिः पायाद् ।।

इत्यस्यां देहीसमाख्यायां गाथाजातौ सप्तपञ्चाशत् संख्यातासु पिण्डरूपासु कलासु षड्त्रिंशदक्षरलोपे कृते सति एकविंशतिगुरवोऽवशिष्यन्ते । पारिशोष्यात् पञ्चदश लघवोऽपीति च ज्ञेयम् । इति गाथाजातिषु गुरुलघुज्ञानप्रकारः ।

CC-0. ORCRI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

उट्टवणिका यथा—

SII SSS IIS SSS ISI SSS

IIS SII SSI III SSI SSS

पूर्वार्द्धे ३० मात्रा, उत्तरार्द्धे २७ मात्रा । मात्रा ५७, अक्षर ३६ ।

एवमेवापरास्वपि जातिषु गुरुलघुज्ञानप्रकार ऊहनीय इत्युपदेशः ।

एवमेव अर्द्धसमवृत्तेऽपि प्रथम-तृतीयविषमपादे द्वितीयचतुर्थसमपादे च—

सहचरि कथयामि ते रहस्यं,
न खलु कदाचन तद्गृहं व्रजेथाः ।
इह विष-विषमागिरः सखीनां,
सकपटचाटुतराः पुरस्सरन्ति ॥

इति पुष्पिताग्राभिधाने छन्दस्य[ष्ट]षष्टिकलात्मके ६८ पिण्डे छन्दोक्षर-संख्यां पञ्चाशदात्मकां ५० लुम्पेत् । एवं लोपे सति अष्टादश १८ गुरवोऽव-शिष्यन्ते, परिशेषाद् द्वात्रिंशल्लघवोऽपि ३२ तत्र वर्तन्त इत्यर्द्धसमवृत्तस्थ-गुरुलघुज्ञानप्रकारः ।

उट्टवणिका यथा—

III III SIS ISS [१२]

III ISI ISI SIS S [१३]

III III SIS ISS [१२]

III ISI ISI SIS S [१३]

१८ गुरु, ३२ लघु, अक्षर ५० ।

एवमन्येष्वप्यर्द्धसमवृत्तस्थगुरुलघुज्ञानप्रकारः । एवमन्येष्वप्यर्द्धसमवृत्तेषूदा-हरणमूह्यं इत्युपदिश्यते ।

तथा च भिन्नचिह्नचतुष्पादे विषमवृत्तेऽपि-

विललास गोपरमणीषु
तरणितनयातटे हरिः ।
वंशमधरदले कलयन्
वनिताजनेन निभृतं निरीक्षितः ।

इत्युद्गताभिधाने छन्दसि सप्तपञ्चाशत् ५७ कलात्मके पिण्डे छन्दोऽक्षर-संख्यां त्रयश्चत्वारिंशदात्मिकां ४३ लुम्पेत् । एवमक्षरसंख्यायां लुप्तायां सत्यां चतुर्दशगुरवोऽवशिष्यन्ते । परिशेषाद् ऊनत्रिंशल्लघवोपि २९ विज्ञेया । इति विषमवृत्तस्थगुरुलघुज्ञानप्रकारः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

उट्टवणिका यथा—

।।ऽ	।ऽ।	।।ऽ	।		[१०]
।।।	।।ऽ	।ऽ।	ऽ		[१०]
ऽ।।	।।।	ऽ।।	ऽ		[१०]
।।ऽ	।ऽ।	।।ऽ	।ऽ।	ऽ	[१३]

मात्रा ५७. अक्षर ४३।

एवमन्येष्वपि विषमवृत्तेषु गुरुलघुज्ञानप्रकार ऊहनीयः सुबुद्धिभिर्ग्रन्थविस्तरभयान्नेहास्माभिः प्रपञ्च्यत इति सर्वं चतुरस्रम्।

वृत्तस्थगुरुलघूनां युगपज्ज्ञानं न जायते येषाम्।
तेषां तदवगमार्थे सुकरोपायो मया रचितः ॥ १ ॥

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्रचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्तिकदुष्करोद्धारे वृत्तजातिसमार्द्धसमविषमसमस्तप्रस्तारेषु तत्तद्वृत्तस्थगुरुलघुसंख्याज्ञानप्रकारसमुद्धारो नाम नवमो विश्रामः ॥ ९ ॥

दशमो विश्रामः

अथ पञ्चमप्रत्ययस्वरूपां वर्णमर्कटीमाह—'मर्कटी लिख्यते' इत्यादिना श्लोकषट्केन—

मर्कटी लिख्यते वर्णप्रस्तारस्यातिदुर्गमा।
कोष्ठमक्षरसंख्यातं पङ्क्ती रचय षट् तथा ॥ ७० ॥
प्रथमायामाद्यादीन् दद्यादङ्कांश्च सर्वकोष्ठेषु।
अपरायां तु द्विगुणानक्षरसंख्येषु तेष्वेव ॥ ७१ ॥
आदिपंक्तिस्थितैरङ्कैर्विभाव्य परपंक्तिगान्।
अङ्कांश्चतुर्थपंक्तिस्थकोष्ठकानपि पूरयेत् ॥ ७२ ॥
पूरयेत् षष्ठपञ्चम्यावर्द्धैस्तुर्याङ्कसम्भवैः।
एकीकृत्य चतुर्थस्थ-पञ्चमस्थाङ्कान् सुधीः ॥ ७३ ॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

कुर्यात् तृतीयपंक्तिस्थकोष्ठकानपि पूरितान् ।
वर्णानां मर्कटी सेयं पिङ्गलेन प्रकाशिता ।। ७४ ।।
वृत्तं भेदो मात्रा वर्णा गुरवस्तथा च लघवोपि ।
प्रस्तारस्य षडेते ज्ञायन्ते पंक्तितः क्रमतः ।। ७५ ।।

तत्र एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरावधिवर्णवृत्तप्रस्तारेषु तत्तद्वर्णवृत्तप्रस्तारे कति कति प्रभेदाः, कियन्त्यः कियन्त्यो मात्राः, कियन्तः कियन्तो वर्णाः, कति कति गुरवः, कति कति च लघवः ? इति महाप्रश्ने कृते, वर्णमर्कटिकया वक्ष्यमाण-स्वरूपया प्रत्युत्तरं देयमिति ।

वर्णमर्कटीविरचनप्रकारो लिख्यते—

मर्कटीति । भो शिष्य ! वर्णप्रस्तारस्य एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरावधि कृतस्येति शेषः । अतिदुर्गमा-अतिदुष्करा मर्कटीव मर्कटी-तन्तुजालैरिव विरचिता अङ्कजालपंक्तिस्तावल्लिख्यते-विरच्यत इति प्रतिज्ञा । तत्र वा स्वेच्छया अक्षर-संख्यातं-कोष्ठं रचय तथा षट्संख्याविशिष्टाः पंक्तींश्च रचय-कुरु इत्यर्थः ।।७०।।

अथ प्रथमां वृत्तपंक्ति साधयति—

प्रथमायामिति । तत्र प्रथमायां-प्रथमपंक्तौ वृत्तपंक्ताविति यावत् सर्वकोष्ठेषु पूर्वविरचितेषु आद्यादीन्-प्रथमादीन् एकद्वित्र्यादीन् अङ्कान् १. २. ३. यावदित्थं दद्यात्-विन्यसेत् । एवं कृते प्रथमवृत्तपंक्तिः सिद्धचति ।

अथ द्वितीयां प्रभेदपंक्ति साधयति—

अपरायामिति । चकारः-आनन्तर्यार्थः । तत अपरायां तु द्वितीयायां प्रभेद-पंक्तावित्यर्थः । अक्षरसंख्येषु-तत्प्रस्ताराक्षरसंख्येषु तेष्वेव विन्यस्तेषु कोष्ठेषु द्विगुणान्-द्विचतुरष्टादिक्रमेण द्विगुणानङ्कान् २. ४. ८ यावदित्यमित्यस्य सर्व-त्रानुवृत्तिः, दद्यात् इति पूर्वेणैव अन्वयः ।। ७१ ।। एवं कृते द्वितीयाप्रभेदपक्तिः सिद्धचति ।

अथ क्रमप्राप्तामपि तृतीयां मात्रापंक्तिमुल्लंघ्य तन्मूलभूतां चतुर्थीं वर्ण-पंक्ति साधयति—

आदिपंक्तिस्थितैरिति । आदिपंक्तिस्थितैः-प्रथमपंक्तिस्थितैः वृत्तपंक्तिस्थितै-रेकद्वित्र्यादिभिरङ्कैः परपंक्तिगान्-द्वितीयपंक्तिस्थितान् द्विचतुरष्टादिक्रमेण स्थितानङ्कान् विभाव्य-गुणयित्वा, ततस्तद्गुणितैः-द्वचष्टचतुर्विंशत्यादिभिरङ्कैः २. ८. २४. चतुर्थपंक्तिस्थकोष्ठकान् पूरयेदित्यन्वयः । अपि एवार्थे । अवि-चारितं पूरयेदेवेत्यर्थः ।। ७२ ।। एवं कृते चतुर्थी वर्णपंक्तिः सिद्धचति ।

Text © ORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अथ षष्ठ-पञ्चमपंक्त्योः पूरणोपायमुपदिशति—

पूरयेदिति । षष्ठपञ्चम्यौ पङ्क्ती कर्मीभूते तुर्याङ्कसम्भवैः-चतुर्थ्यां पंक्ति-स्थिताङ्कोत्पन्नैरर्द्धैरेकचतुर्द्वादशादिभिरङ्कैः १. ४. १२. पूरयेत् । एव कृते षष्ठपञ्चम्यौ गुरुलघुपंक्ती सिद्धयतः । अत्र पंक्त्योर्व्यत्ययः छन्दोऽनुरोधेन कृतः, फलतस्तु न कश्चिद् विशेषोऽङ्कसाम्यादिति पंक्तिद्वयं सिद्धम् ।

अथोर्वरितां तृतीयां मात्रापंक्ति साधयति–

एकीकृत्येति उत्तरार्द्धपूर्वार्द्धाभ्याम् । तत्र सुधीः–अङ्कमेलनकुशलो गणकः चतुर्थपंक्तिस्थितान् द्वयष्टचतुर्विंशत्यादिकान् अङ्कान् पञ्चमपंक्तिस्थितान् एकचतुर्द्वादशादिकानङ्कांश्च, अत्र चकारोऽध्याहार्यः, एकीकृत्य–मेलयित्वा त्रि-द्वादश-षट्त्रिंशदादिरूपतामापद्येति यावत् उर्वरितान्–तृतीयपंक्तिस्थितकोष्ठकानपि त्रि-द्वादश-षट्त्रिंशदादिरूपैर्मेलितैरङ्कैः ३. १२. ३६. पूरितान् कुर्यादि-त्यन्वयः । अत्राप्यपि एवार्थः । अविचारितं पूरितान् कुर्यादेवेत्यर्थः । एवं कृते तृतीयामात्रापंक्तिः सिद्धयति ।

फलितार्थमाह—परमार्द्धेन 'वर्णानां' इति ।

सोऽयं पूर्वोक्तप्रकारेण घटिता वर्णानां मर्कटीव मर्कटी–अङ्कजालरूपिणी पिङ्गलेन–श्रीनागराजेन प्रकाशिता–प्रकटीकृता ॥ ७४ ॥

एवं विरचनप्रकारेण पंक्तिषट्कं साधयित्वा वर्णमर्कटीफलमाह—

वृत्तमिति । वृत्तं वृत्तानि–एकाक्षरादीनि 'एकवचनं तु जात्यभिप्रायेण' भेदः–प्रभेदः वृत्तानां प्रभेदा इत्यर्थः । पूर्ववदत्राप्येकवचननिर्देशः । मात्राः–तत्तद्-वृत्तमात्राः, वर्णाः -तत्तद्वृत्तवर्णाः, गुरवः– तत्तद्वृत्तगुरवः, तथा च लघवोऽपि–तत्तद्वृत्तलघव इत्यर्थः । प्रस्तारस्येति सम्बन्धे षष्ठी । एते वृत्तादयः षट्–षट्-संख्याविशिष्टाः पंक्तितः–षट्पंक्तितः क्रमतः–क्रमाद् ज्ञायते–हृदयङ्गमतां आपद्यन्त इत्यर्थः ॥ ७५ ॥

श्रीलक्ष्मीनाथकृतो मर्कटिकायाः प्रकाशोऽयम् ।
तिष्ठतु बुधजनकण्ठे वरमुक्ताहारभूषणप्रख्यः ॥

अस्याः स्वरूपमुदाहरणमत्र द्रष्टव्यम् । इत्यलं पल्लवेनेति ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

वर्णमर्कटी यथा—

वृत्तं	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
प्रभेदाः	२	४	८	१६	३२	६४	१२८	२५६	५१२	१०२४	२०४८	४०९६	८१९२
मात्राः	३	१२	३६	९६	२४०	५७६	१३४४	३०७२	६९१२	१५३६०	३३७९२	७३७२८	१५९७४४
वर्णाः	२	८	२४	६४	१६०	३८४	८९६	२०४८	४६०८	१०२४०	२२५२८	४९१५२	१०६४९६
गुरवः	१	४	१२	३२	८०	१९२	४४८	१०२४	२३०४	५१२०	११२६४	२४५७६	५३२४८
लघवः	१	४	१२	३२	८०	१९२	४४८	१०२४	२३०४	५१२०	११२६४	२४५७६	५३२४८

इति त्रयोदशवर्णा मर्कटी । एवमन्यापि वर्णमर्कटी समुन्नेया । पंचमः प्रत्ययो वर्णमर्कटिकाख्यः ।

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्रचूडा-मणि-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-साहित्यार्णवकर्णधार-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारक-विरचिते श्रीवृत्तमौक्तिक-वार्त्तिक-दुष्करोद्धारे एकाक्षरादि-षड्विंशत्यक्षरावधिवर्णप्रस्तारेषु वर्णमर्कटीप्रस्तारोद्धारो नाम दशमो विश्रामः ॥ १० ॥

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

एकादशो विश्रामः

श्रीनागराजमानम्य सम्प्रदायानुमानतः ।
श्रीचन्द्रशेखरकृते वार्त्तिके वृत्तमौक्तिके ॥ १ ॥
वर्णमर्कटिकामुक्त्वा मात्रामर्कटिकामपि ।
दुष्करा दुष्करोद्धारे सुकरां रचयाम्यहम् ॥ २ ॥

अथ पंचमप्रत्ययस्वरूपामेव मात्रामर्कटीमाह—'कोष्ठान्' इत्यादिना 'नष्टोद्दिष्टं' इत्यन्ते एकादशश्लोकेन—

कोष्ठान् मात्रासम्मितान् पंक्तिषट्क,
कुर्यान्मात्रामर्कटीसिद्धिहेतोः ।
तेषु द्व्यादीनादिपंक्तावथाङ्का-
स्त्यक्त्वाऽऽद्याङ्कं सर्वकोष्ठेषु दद्यात् ॥ ७६ ॥

दद्यादङ्कान् पूर्वयुग्माङ्कतुल्यान्,
त्यक्त्वाऽऽद्याङ्कं पक्षपङ्क्तावथाऽपि ।
पूर्वस्थाङ्कैर्भावयित्वा ततस्तान्,
कुर्यात् पूर्णान्नेत्रपंक्तिस्थकोष्ठान् ॥ ७७ ॥

प्रथमे द्वितीयमङ्कं द्वितीयकोष्ठे च पञ्चमाङ्कमपि ।
दत्त्वा बाणद्विगुणं तद्द्विगुणं नेत्रतुर्ययोर्दद्यात् ॥ ७८ ॥

एकीकृत्य तथाऽङ्कान् पञ्चमपंक्तिस्थितान् पूर्वान् ।
दत्त्वा तथैकमङ्कं कुर्यात्तेनैव पञ्चमं पूर्णम् ॥ ७९ ॥

दत्त्वा पञ्चममङ्कं पूर्वाङ्कानेकभावमापाद्य ।
दत्त्वा तथैकमङ्कं षष्ठं कोष्ठं प्रपूरयेद् विद्वान् ॥ ८० ॥

कृत्वैक्यं चाङ्कानां पञ्चमपंक्तिस्थितानां च ।
त्यक्त्वा पञ्चदशाङ्कं हित्वैकं पूरयेन् मुनेः कोष्ठम् ॥ ८१ ॥

एवं निरवधिमात्राप्रस्तारेष्वङ्कबाहुल्यम् ।
प्रकृतानुपयोगवशान् न कृतोऽङ्कानां च विस्तारः ॥ ८२ ॥

एवं पञ्चमपंक्ति कृत्वा पूर्णां प्रथममेकाङ्कम् ।
दत्त्वा पञ्चमपंक्तिस्थितैरथाङ्कैः प्रपूरयेत् षष्ठीम् ॥ ८३ ॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

एकीकृत्य तथाऽङ्कान् पञ्चमषष्ठस्थितान् विद्वान् ।
कुर्याच्चतुर्थपंक्तिं पूर्णां नागाज्ञया तूर्णम् ।। ८४ ।।
वृत्तं प्रभेदो मात्राश्च वर्णा लघुगुरू तथा ।
एते षट्पंक्तितः पूर्णप्रस्तारस्य विभान्ति वै ।। ८५ ।।
नष्टोद्दिष्टं यद्वन् मेरुद्वितयं तथा पताका च ।
मर्कटिकापि च तद्वत् कौतुकहेतोर्निबद्धचते तज्ज्ञैः ।। ८६ ।।

तत्र च एकमात्रादिनिरवधिकमात्राप्रस्तारेषु च तत्तज्जातिप्रस्तारे कति कति प्रभेदाः, कियन्त्यः कियन्त्यो मात्राः, कियन्तः कियन्तो वर्णाः, कति कति लघवः, कति कति गुरवः ? इति महाप्रश्ने कृते मात्रामर्कटिकया वक्ष्यमाणस्वरूपया प्रत्युत्तरं दातव्यमिति मात्रामर्कटीविरचनप्रकारो लिख्यते—

कोष्ठानिति । तत्र-तावन्मात्रामर्कटीसिद्धिहेतोः-मात्रामर्कटीसिद्धचर्थं पंक्ति-षट्कं यथा स्यात्तथा मात्रासम्मितान्-मात्राभिः परिमितान् मात्राणां संख्यया संयुक्तानिति यावत् कोष्ठान् कुर्यात्-विरचयेदित्यर्थः । तेषु-कोष्ठेषु आदिपङ्क्तौ-प्रथमपङ्क्तौ वृत्तपङ्क्तौ इति यावत् द्वचादीन्-द्वितीयादीन् द्वितीय-तृतीय-चतुर्थ-पञ्चम-षष्ठादीनङ्कान् २. ३. ४. ५. ६ इत्यादीन् क्रमेण यावदित्थं प्रथमं दद्यात्-विन्यसेत् । किं कृत्वा? अथ चेत्यर्थः । सर्वकोष्ठेषु-षट्स्वपि कोष्ठेषु आद्याङ्कं-प्रथमाङ्कं त्यक्त्वा-परित्यज्य । अत्र सर्वकोष्ठेषु प्रथमाङ्कत्यागो न सर्वथा सर्व-कोष्ठत्यागपरः, किन्तु षष्ठगुरुप्रथमपंक्तिकोष्ठत्यागपर इति प्रतिभाति । तत्र गुरोरभावादेवेति ब्रूमः । अतश्च सम्प्रदायात् पञ्चसु कोष्ठेषु प्रथमाङ्कविन्यासः कर्त्तव्यः । अन्यथा वक्ष्यमाणाङ्कविन्यासभङ्गापत्तेरिति भावः ।। ७६ ।।

एवं अङ्कविन्यासे कृते सति प्रथमा वृत्तपंक्तिः सिद्धचति ।। १ ।।

अथ द्वितीयां प्रभेदपंक्तिं साधयति—

दद्यादिति । अथेति-प्रथमं पंक्तिसिद्धचनन्तरं पक्षपङ्क्तावपि-द्वितीय-पंक्तावपि आद्याङ्कं-प्रथमाङ्कं त्यक्त्वा-परित्यज्य, प्रथमाङ्कस्य पूर्वाङ्काभावात् द्वितीयकोष्ठादारभ्य प्रथमाङ्कशिरःस्थं प्रथमाङ्कं गृहीत्वा पूर्वयुग्माङ्कतुल्यान् उद्देशक्रमानुसारेण एक-द्वि-त्रि-पञ्चाष्ट-त्रयोदशादीन् अङ्कान् १, २, ३, ५, ८, १३ शृङ्खलाबन्धन्यायेन क्रमतो यावदित्थं दद्यात्-विन्यसेदित्यर्थः ।

एवं अङ्कविन्यासे कृते सति द्वितीयाप्रभेदपंक्तिः सिद्धचति ।२।

अथ तृतीयां मात्रापंक्तिं साधयति—

पूर्वस्थाङ्कैरिति । पूर्वस्थाङ्कैः-प्रथमपंक्तिस्थिताङ्कैः ततो द्वितीयपंक्ति-पूरणानन्तरं तां द्वितीयां प्रत्येकं-प्रतिकोष्ठं भावयित्वा-गुणयित्वा इत्यर्थः । नेत्र-

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पंक्तिस्थकोष्ठान्-तृतीयपंक्तिस्थितकोष्ठान् पूर्णान् कुर्यात् । अतश्चात्रैकचतुर्नव-विंशति-चत्वारिंशदष्टसप्तत्यादिभिरङ्कैः १, ४, ६, २०, ४०, ७८ तृतीय पंक्तिस्थितकोष्ठान् पूरितान् कुर्यादित्यर्थः । अत्र नेत्रसंख्या रौद्रीति विज्ञातव्या । पाठान्तरे—अग्निपर्यायत्वात् स एवाऽर्थः । एवमन्यत्रापि । शालिनीछन्दसि ।।७७।।

एवमङ्कविन्यासे कृते सति तृतीया मात्रापंक्तिः सिद्धयति ।।३।।

अथ क्रमप्राप्तां चतुर्थीं वर्णपंक्तिमुल्लंघ्य चतुर्थ-षष्ठपंक्तयो युगपदेव साधनार्थं तन्मूलभूतां प्रथमं तावत् पञ्चमपंक्ति साधयति–

प्रथमे इति । तत्र षट्स्वपि प्रथमपंक्तिषु प्रथमकोष्ठस्य त्यक्तत्वात्, द्वितीय-कोष्ठकमेवात्र प्रथमं कोष्ठकम् । अतः तस्मिन् प्रथमे कोष्ठके द्वितीयमङ्कं, तद-पेक्षायाः द्वितीयकोष्ठके च पञ्चमाङ्कं च दत्त्वा, ततो बाणद्विगुणं-पञ्चद्विगुणं दश १०, तद्द्विगुणं-दशद्विगुणं विंशतिश्च २०, तौ–द्वावङ्कौ नेत्रतुर्ययोः तदपेक्षयैव तृतीयचतुर्थयोः कोष्ठकयोः दद्यात्–विन्यसेदित्यर्थः ।।७८।।

तथा चात्र पञ्चमपंक्तौ प्रथमकोष्ठं विहाय द्वि-पञ्च-दश-विंशतिभिरङ्कैः २, ५, १०, २० कोष्ठचतुष्टयं पूरयित्वा अग्रिमैतत्पञ्चमकोष्ठपूरणार्थं उपाया-न्तरमाह–

एकीकृत्येति । तथा च–इति आनन्तर्यार्थे । ततः पञ्चमपंक्तिस्थितान् पूर्वान् पूर्वाङ्कान्–द्वयादीन् चतुष्कोष्ठस्थान् एकीकृत्य–मेलयित्वा, तथा ततोऽपीत्यर्थः । तस्मिन्नेकीकृताङ्के एकमधिकं दत्त्वा निष्पन्ने एतेनाङ्केन अष्टत्रिंशता ३८ अङ्केनैव पञ्चमं पूर्वापेक्षायां पञ्चमं कोष्ठकं पूर्णं कुर्यात् ।।७६।।

अत्रत्यं षष्ठकोष्ठपूरणोपायमाह––

त्यक्त्वेति । विद्वान्–अङ्कमेलनकुशलो गणकः पूर्वाङ्कान्–द्वितीयादीन् एक-भावमापाद्य–एकीकृत्य संयोज्येति यावत् । ततः पिण्डीकृतेषु एतेषु अङ्केषु पञ्चमाङ्कं प्रथमाङ्कवत् त्यक्त्वा । तथा पुनरित्यर्थः । एकमङ्कमधिकं दत्त्वा पूर्ववज्जातेन तेन एकसप्तत्या ७१ षष्ठं कोष्ठं प्रपूरयेदिति ।।८०।।

अथ तथैवाऽत्रस्थसप्तमकोष्ठपूरणोपायमाह—

कृत्वेति । पञ्चमपंक्तिस्थितानां द्वयादीनां एकसप्तत्यन्तानां षण्णामङ्का-नामैक्यं-पिण्डीभावं कृत्वा तेषु पूर्ववत् पञ्चदशाङ्कं त्यक्त्वा । ततस्तेष्वपि चैकं हित्वा मुनेः कोष्ठं–सप्तमं कोष्ठं त्रिंशदधिकेन शताङ्केन १३० पूरयेत् । इति सप्तमकोष्ठकपूरणप्रकारः ।। ८१ ।।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

एवमङ्कसप्तकेन द्वि-पञ्च-दश-विंशत्यष्टत्रिंशदेकसप्तति-त्रिंशदधिकैकशतक-रूपेण २, ५, १०, २०, ३८, ७१, १३० पञ्चमपङ्क्तौ कोष्ठसप्तकं पूरयेदिति। एवं चात्रत्ये पूरणीये तत्तत्कोष्ठे अत्रत्यानां द्व्यादीनामङ्कानां एकीभावं कृत्वा, यथासम्भवं तत्तदङ्कं त्यक्त्वा, तेष्वपि यथासम्भवं एकादिकं हित्वा तत्तत्कोष्ठकं पूरयेदिति संक्षेपः।

एवं अङ्कविन्यासे कृते सति चतुर्थषष्ठपंक्तिगर्भाः पञ्चमी लघुपंक्तिः सिद्ध्यति। ननु अस्यां पङ्क्तावग्रिमकोष्ठाऽङ्कसञ्चारः क्रियतां इत्याकांक्षायां प्रकृतानुपयोगादङ्कबाहुल्याद् ग्रन्थविस्तरशङ्कया न क्रियत इत्याह—

एवमिति। सुगमम् ॥ ८२ ॥

अथ पंचमपंक्तिपूरणमुपसंहरन् षष्ठगुरुपंक्तिपूरणप्रकारमुपदिशति—

एवमिति। एवं पूर्वोक्तप्रकारेण पञ्चमपंक्तिं पूर्णां कृत्वा तत्र गुरुस्थानीयं प्रथमं कोष्ठं विहाय अग्रिमकोष्ठं–प्रथमं प्रथमत एवाङ्कं दत्त्वा पूरणीयम्। अथ–अनन्तरं पञ्चमपंक्तिस्थितैः द्वितीयादिभिरङ्कैः पूर्वस्थापितैरेव प्रतिकोष्ठं षष्ठीं प्रपूरये-दिति। तथा च षष्ठपङ्क्तौ ०, १, २, ५, १०, २०, ३८, ७१, १३० शून्यैक-द्वि-पञ्च-दश-विंशति-अष्टत्रिंशदेकसप्तति-त्रिंशदधिकैकशताङ्कविन्यस्ता दृश्यन्त इति ॥ ८३ ॥

एवमङ्कविन्यासे कृते सति षष्ठी गुरुपंक्तिः सिद्ध्यति ॥ ६ ॥

अथोर्वरितचतुर्थवर्णपंक्तिपूरणप्रकारमुपदिशति–

एकीकृत्येति। विद्वान्–अङ्कमेलनकुशलो गणकः तथा पूर्वोक्तप्रकारेण पञ्चम-षष्ठपंक्तिस्थितान् द्व्येकादीन् अङ्कान् प्रतिकोष्ठं एकीकृत्य–संयोज्य नागाज्ञया–श्रीपिङ्गलनागोक्तमार्गेण चतुर्थपंक्तितत्पंक्तिस्थकोष्ठकरूपां तूर्णं–अविचारितमेव पूर्णं कुर्यादिति। अत्रत्यप्रथमकोष्ठे असंयुक्तः पञ्चमकोष्ठस्थप्रथमांकः सम्प्रदाय-लभ्यो देय इति रहस्यम् ॥ ८४ ॥

तथा चतुर्थपङ्क्तौ १, ३, ७, १५, ३०, ५८, १०९, २०१ एक-त्रि-सप्त-पञ्चदश-त्रिंशद्-अष्टपञ्चाशन्-नवाधिकशतैकोत्तरद्विशताङ्का विन्यस्ता दृश्यन्त इति।

एवं अङ्कविन्यासे कृते सति चतुर्थी वर्णपंक्तिः सिद्ध्यतीति ॥ ४ ॥

एवं विरचनप्रकारेण पंक्तिषट्कं साधयित्वा मात्रामर्कटीफलमाह—

वृत्तमिति। वृत्तं–वृत्तानि एकमात्रादिनिरवधिकमात्राजातयः। एकवचनं जात्यभिप्रायेण। प्रभेदजातीनां प्रभेदा इत्यर्थः। पूर्ववदत्राप्येकवचननिर्देशः।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

मात्राः–तत्तज्जातिमात्राः, वर्णाः–तत्तज्जातिवर्णाः तथा–तत इत्यर्थः । लघुगुरू–तत्तज्जातिलघवस्तत्तज्जातिगुरवश्चेत्यर्थः । एते वृत्तादयः षट्प्रकाराः पूर्णप्रस्तारस्य समुदिताः षट्पंक्तितो निश्चितं विभान्ति–प्रकाशन्त इत्यर्थः ॥ ८५ ॥

ननु एतत्करणं आवश्यकमनावश्यकं वा ? इति परामर्शे छान्दसिकपरीक्षारूपत्वात् केवलं कौतुकमात्राधायकत्वाच्च अस्य करणं अनावश्यकमेवेत्याह–

नष्टोद्दिष्टमिति । यथा नष्टोद्दिष्टादिकं कौतुकावहं तथैव तद्विरचनमपीत्यर्थ इति सर्वमवदातम् ॥ ८६ ॥

मात्रामर्कटी यथा–

वृत्तम्	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११
प्रभेदाः	१	२	३	५	८	१३	२१	३४	५५	८९	१४४
मात्राः	१	४	९	२०	४०	७८	१४७	२७२	४९५	८९०	१५८४
वर्णाः	१	३	७	१५	३०	५८	१०९	२०१	३६५		
लघवः	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	२३५		
गुरवः	०	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०		

इति एकादशमात्रामर्कटी । एवं अन्येऽपि मात्रामर्कटी समुन्नेया । तथैव मात्रामर्कटिकाख्यः पंचमः प्रत्ययः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

[वृत्तिकृत्प्रशस्तिः]

श्रीमत्पिङ्गलनागेन प्रोक्तो यो मर्कटीक्रमः ।
विविच्य स मया प्रोक्तः शिष्यानुग्रहहेतवे ॥ १ ॥

मुनीभभूपतिमिते १६८७ वैक्रमेऽब्दे प्रमाथिनि ।
कार्त्तिकेऽसितपञ्चम्यां लक्ष्मीनाथो व्यरीरचत् ॥ २ ॥

वार्त्तिके दुष्करोद्धारमुदारं छान्दसप्रियम् ।
अन्तःसारं स्फुटार्थं च कवीनां कौतुकावहम् ॥ ३ ॥

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्र-चूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारक-विरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारे एकमात्रादिनिरवधिक-मात्राप्रस्तारेषु तत्तज्जातिमात्रामर्कटीप्रस्तारोद्धारो नामैकादशो विश्रामः ॥ ११ ॥

समाप्तश्चायं वृत्तमौक्तिकवार्त्तिके दुष्करोद्धारः ।

शुभमस्तु । श्रीनागराजाय नमः ।

संवत् १६६० समये भाद्रपदशुदि ३ भौमे शुभदिने अर्गलपुरस्थाने लिखितं लालमनि-मिश्रेण । शुभं भूयात् । श्रीविष्णवे नमः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

महोपाध्यायश्रीमेघविजयगणिसन्दृब्धः

वृत्तमौक्तिकदुर्गमबोधः

[उद्दिष्टादिप्रकरणव्याख्या]

[मङ्गलाचरणम्]

प्रणम्य फणिना नम्यं सम्यक् श्रीपार्श्वमीश्वरम् ।
उद्दिष्टादिषु सूत्रार्थं कुर्वे श्रीवृत्तमौक्तिके ॥ १ ॥

अथ वृत्तमौक्तिके उद्दिष्टं नष्टं वर्णतो मात्रातो वा विव्रियते—

दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् लघोरुपरि गस्य तूभयतः ।
अन्त्याङ्के गुरुशीर्षस्थितान् विलुम्पेदथाङ्कांश्च ॥ ५१ ॥
उद्धरितैश्च तथाङ्कैर्मात्रोद्दिष्टं विजानीयात् ।

षड्भिः पदैः सूत्रं तद्व्याख्या—

केनापि नरेण लिखित्वा दत्तं । ऽ । ऽ । इदं कतमत् रूपम् ? इति प्रश्ने उद्दिष्टं ज्ञेयम् । तत्र पुर्वयुगलाङ्काः प्रत्येकं धार्याः । पुर्वयुगलाङ्का इति संज्ञा अङ्कानाम् । तत्कथम् ? इति चेत्, मात्रोद्दिष्टे १।२।३।५।८।१३।२१।३४।५५।८९ इति । अत्र १ मध्ये २ योजने ३ । पुनः ३ मध्ये पूर्वाङ्क २ मेलने ५ । पुनः ५ मध्ये स्वपूर्वाङ्क ३ मेलने ८ । तत्रापि स्वपूर्वाङ्क ५ मेलने १३ । तत्रापि स्वपूर्वाङ्क ८ क्षेपणे २१ । तस्मिन्नपि स्वपूर्वाङ्क १३ एकीकरणे ३४ । तन्मध्ये स्वपूर्वाङ्क २१ क्षेपे ५५ । अत्रापि स्वपूर्वाङ्क ३४ योगे ८९ इत्येवं योजनारीतिः । पूर्वं पूर्वमेलनाज्जातत्वात् पूर्वयुगाङ्का इति संज्ञाभाजः । तद्धरणरीतिः—

१	२	५	८	२१
।	ऽ	।	ऽ	।
	३		१३	

एवं लघोरुपरि एकं अङ्कन्यासः गस्य-गुरोस्तु उभयतः-उपरि अधश्च पार्श्वद्वयेऽपि अङ्कधरणम् । एतत् कृत्वा अन्त्याङ्के २१ रूपे गुरोरुपरिस्था अङ्का २।८ मेलने १०, एते २१ मध्यात् विलुम्पयेत्-पराकुर्यात्, उद्धरितोऽङ्कः, ११ एवं निश्चितं ज्ञातं सप्तमात्रे मात्राच्छन्दसि एकादशं रूपमिदम् । ईदृशं ।ऽ।ऽ। अन्यत्रापि ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

त्रिकले छन्दसि ।ऽ इदं कतमं रूपम् ? इति पृच्छायां पूर्वयुगाङ्कधरणं १ २
। ऽ
३

तत्रांत्याङ्कः ३ तन्मध्यात् गुरुशीर्षस्थाङ्क २ विलोपने शेषं १ इति प्रथमं रूपम् । ऽ ईदृशम् । परत्राऽपि ऽ। इदं कतमत् ? इति प्रश्ने १ ३ अन्त्याङ्के ३
। ऽ
२

गुरुशीर्षस्थ १ विलोपे शेषं २ इति द्वितीयं रूपं त्रिकले ऽ। ईदृशम् ।

चतुःकले छन्दसि ऽ ऽ इदं कतमत् ? इति पृच्छायां १ ३ अङ्केषु धृतेषु
ऽ ऽ
२ ५

अन्त्याङ्कः ५ तन्मध्याद् गुरुशीर्षस्थ अङ्कद्वयं १।३ एतयोर्मेलने ४ तद्विलोपने शेषं १ प्रथमं रूपम् ऽऽ; द्वितीऽयेऽपि १ २ ३ अङ्केषु न्यस्तेषु अन्त्याङ्कः ५
। । ऽ
५

तन्मध्यात् २ गुरुशिरःस्थाङ्कः ३ तल्लोपे शेषं २ इति द्वितीयं रूपम् । तृतीये । ऽ। ईदृशेऽङ्काः १ २ ५ अन्त्याङ्कः ५ ततः गुरुशिरःस्थः २ लोपे शेषं ३ तृतीयं
। ऽ ।
३

रूपम् । तुर्ये ऽ । । ईदृशेऽङ्काः १ ३ ५ अन्त्याङ्कः ५ ततः गुरुशिरःस्थ १
ऽ । ।
२

लोपे शेषं तुर्यं रूपं ऽ।।; पञ्चमं सर्वलघुकम् ।

पञ्चकले । ऽ ऽ ईदृशेऽङ्काः १ २ ५ अत्रान्त्याङ्कः ८ ततः गुरुशिरःस्थ
। ऽ ऽ
३ ८

२।५ एवं ७ लोपे प्रथमं रूपम्; ऽ। ऽ ईदृशेऽङ्काः १ ३ ५ अन्त्यः
ऽ । ऽ
२ ८

८ तन्मध्यात् १। ५ एवं ६ तल्लोपे शेषं २ द्वितीयं रूपम् । तृतीयं ।।। ऽ ईदृशेऽङ्काः १ २ ३ ५ अत्र प्राग्वत् ८ मध्यात् गुरुशीर्षस्थ ५ लोपे शेषं
। । । ऽ
८

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

३ तृतीयम् । तुर्येपि १ ३ ८ प्राग्वत् ८ मध्यात् १।३ गुरुशीर्षस्थ ४
S S I
२ ५
लोपे शेषं ४ तुर्यं रूपम् । पञ्चमेऽपि १ २ ३ ८ इत्यत्र गुरुशीर्षस्थ
I I S I
५
३ लोपे अन्त्याङ्क ८ मध्ये शेषं ५ इति [पञ्चमं रूपम्] । षष्ठे १ २ ५ ८
I S I I
३
अन्त्याङ्क ८ मध्यतः गुरुशिरःस्थ २ लोपे शेषं ६ [इति षष्ठं रूपम्] । सप्तमेऽपि
१ ३ ५ ८ तत्र अन्त्यांक ८ मध्यात् गुरुशीर्षस्थ १ लोपे शेषं ७ इति
S I I I
२
सप्तमं रूपम् ।

एवं षट्कले मात्राच्छन्दसि १ ३ ८ अत्रान्त्याङ्कः १३ ततः गुरुशीर्ष-
S S S
२ ५ १३
स्थिताङ्क १।३।८ एषां लोपे शेषं १ प्रथमं रूपम्; १ २ ३ ८ अत्रापि
I I S S
५ १३
प्राग्वत् ३।८ एवं ११ तेषां १३ मध्याल्लोपे शेषं २ द्वितीयं रूपम् । तृतीये
१ २ ५ ८ अन्त्याङ्क १३ ततः २।८ एवं १० गुरुशीर्षस्थ लोपे शेषं ३ ।
I S I S
३ १३

१ २ ५ १३ २१ ५५ अत्र गुरुशीर्षस्थाङ्क सर्वमेलने ८३ तल्लोपः
I S S I S S
३ ८ ३४ ८९
८९ मध्ये शेषं ६ रूपमिदं दशकले छन्दसि ।

पुव्व जुयल सरि अंका दिज्जसु, गुरु सिर अंक सेस मेटिज्जसु ।
उवरिल अंक लेखि कहुआण, ते परि धुअ उद्दिठ्ठा जांण ।।
[प्राकृतपैङ्गलम्, परि. १, पद्य ३९]

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कं गुरुशीर्षाङ्कं विलुप्य शेषाङ्के ।
अङ्कैरितोऽवशिष्टैः शिष्टैरुद्दिष्टमुद्दिष्टम् ।।

[वाणीभूषणम् परि. १, पद्य ३१]

मत्त मत्त धुग्र अंक, लघु सिर गुरुतर हूं धरो ।
जोर अंक सरवंक, सव्वहि घाट उद्दिठ्ठ कहु ।।

लघोः शीर्ष एवाङ्कः धार्यः गुरोः शीर्षे तथा 'तर' इति भाषाविशेषात् तले अधोऽपि अङ्कः धार्यः । यथा—पञ्चकले प्रस्तारे १ २ ५ अत्रान्त्याङ्के ८

। S S

३ ८

ततः गुरुशीर्षस्थाङ्काः २, ५......७ सप्तमं रूपम् ।

१ २ ५ ८ २१ गुरु सिर अंकेयोजने १० ते २१ मध्ये ऊन शेषं ११

। S । S ।

३ १३

संख्या प्राप्ता इति एकादशमिदं रूपमिति छन्दोरत्नावलीग्रन्थे ।

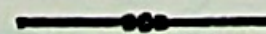
१ २ ३ ५ ८ १३ २१ अत्र प्रश्नः—सप्तकलप्रस्तारे एकादशं

। । । । । । । ११

। S । S ।

रूपं कीदृशम् ? इति, तदा प्राप्तं ।S।S। इदम् ।

इति मात्रोद्दिष्टसूत्रव्याख्या पूर्णा ।



T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

मात्रानष्ट-प्रकरणम्

अथ मात्रानष्टं यथा—

> यत्कलकः प्रस्तारो लघवः कार्याश्च तावन्तः ।
> दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् पृष्टाङ्कं लोपयेदन्त्ये ॥ [॥ ५३ ॥]
> उद्वरितोद्वरितानामङ्कानां यत्र लभ्यते भागः ।
> परमात्राञ्च गृहीत्वा स एव गुरुतामुपागच्छेत् ॥ [॥ ५४ ॥]

अस्यार्थः—यावंत्यः कलाः प्रस्तारे एककलस्य एक एव लघुः : । ईदृशः द्विकलस्य द्वे रूपे, आदौ एक एव गुरुः ऽ ईदृशः, द्वितीयरूपे लघुद्वयम् ॥ ईदृशम् । अत्र पृच्छानवकाशात् न इष्टरूपलाभः, असम्भवात् । त्रिकले मात्राच्छन्दसि त्रीणि रूपाणि । चतुःकले पञ्चरूपाणि १।२।३।५ इति पूर्वयुगाङ्कात् । पञ्चकले अष्टरूपाणि १।२।३।५।८ इति पूर्वयुग्माङ्कात् । षट्कले १३ रूपाणि तावत् एव पूर्वयुग्माङ्कात् । सप्तकले २१ रूपाणि तथैव ।

एवं कलाप्रमाणा लघवो लेख्याः, यथा—सप्तकले मात्राच्छन्दसि इष्टं एकादशं रूपं कीदृशं ? इति, मुखेन केनचित् पृष्टम्, तदा सप्तैव लघवः ।।।।।।। अनया रीत्या लेख्याः । तेषामुपरि १।२।३।५।८।१३।२१ एते धार्याः । अत्र पृष्टे इष्टाङ्कः ११, तस्य २१ मध्याल्लोपे शेषं १।२।३।५।८।१३।१० इति । तदा दशमध्ये त्रयोदश न पतन्तीति भागाभावः, तदा ८ अङ्कः १३ मध्ये पात्यः, एवं अष्टाधः कलामाकृष्य त्रयोदशाधो गुरुः स्थाप्यः, दशाध एका कलाऽवशिष्टा, अष्टकस्य लोपः परमात्राग्रहेण गुरुभावात् । अथ त्रिकस्य कला पञ्चके न गृह्यते, मुख्यैककस्य द्विकेन गृह्यते तदा ऽऽऽ। ईदृशं नवमरूपतापत्तेः । यद्वा त्रिकस्य कला पञ्चके न गृह्यते १।२ अनयोः कलाद्वयं लघुरूपमेव ध्रियते तदा दशमं रूपं ईदृशं स्यात् ।।ऽऽ, तेन पञ्चकाऽधः कला एका भिन्नैव रक्ष्या, अग्रे द्वितीयाङ्कस्य त्रिके कलाग्रहेण त्रिकाधो गुरुः, मुख्यैककलाशेषात्, एवं ।ऽ।ऽ। ईदृशं एकादशं रूपं व्यवस्थितम् । द्विकाष्टकयोर्लोप 'उवरिल अंकलोपके लेख' इति वचनात् । यदुक्तं छन्दोरत्नावल्याम्—

> सब लघु सिर ध्रुव अंक, प्रश्नहीन शेषाङ्क धरि ।
> पर लघु ले लिख वङ्क उवरि भाग जह जह परइं ॥

यद्वा, दशानां भागस्त्रयोदशे प्राप्यते 'दश एके दश' शेषं ३ विषमत्वात् परस्य-अन्यस्य त्रयोदशात् पूर्वस्य अष्टकस्य कलाग्रहेण त्रयोदशस्थानजातत्रिकाधो

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

गः, त्र्यष्टकलोपः, दशाधो लः, पञ्चके त्रिकस्य भागे शेषं २ इति समत्वात् पञ्चाधो लः ऽ।, द्विकस्य त्रिके भागाप्तौ शेषं १ इति विषमाङ्कत्वाद् गुरुः, द्विकस्य कलाग्रहात् द्विकलोपः, मुख्यैकाधो यथास्थितो लघुरेव, एवं । ऽ । ऽ । इत्येकादशं व्यवस्थितं सप्तकले ।

अथ बालबोधाय इयमेव व्याख्या विस्तरतः—

प्रथमं त्रिकले मात्राच्छन्दसि त्रिलघुकरणं तस्य न्यासः १ २ ३ तदुपरि
। । ।
पूर्वयुगाङ्कदानम् । तत्र पृष्टं प्रथमरूपं त्रिकले कीदृग् ? इति, एवं इष्टं एकरूपं तत् त्रिकात् अन्त्याङ्कात् पराक्तं–लुप्तमिति यावत् शेषं १ । २ । २ 'उद्वरितोद्वरितानां अङ्कानां यत्र लभ्यते भागः' इति वचनात् द्विकस्य द्विकेन भागे परद्विकाधो गः, पूर्वस्य द्विकस्य कलाग्रहात् तस्य लोपः, शेषं । ऽ इति प्रथमं रूपम् । पृष्टे द्वितीये, अन्त्यत्रिकात् २ लोपे शेषं १ । २ । १, अत्र अन्त्यैककस्य भागलाभो द्विके तदधो गः, मुख्यैककलाग्रहात् तस्य लोपः, अन्त्यैकाधो लः ऽ। इति द्वितीयं रूपम् । तृतीयं सर्वलघुकमेव ।

अथ चतुःकले १ २ ३ ५ अत्र पृष्टे १ लोपे शेषं १ । २ । ३ । ४,
। । । ।
त्रिकस्य भागः चतुष्के प्राप्यः तदधो गः, त्रिकस्य कलाग्रहात् त्रिकलोपः, द्विकेपि मुख्यैकस्य भागः तेन द्विकाधो गः, एककस्य लोपः, जातं ऽऽ प्रथमम् । पृष्टे २ लोपे शेषं १ । २ । ३ । ३, त्रिके–त्रिकस्य भागे परत्रिकाधो गः, पूर्वत्रिकलोपः कलाग्रहात्, शेषे द्विके एकस्य भागापत्तौ कलाङ्कसाम्यादपि पूर्वरूपापत्तिः, तेन नैकस्यापि लोपः, लघुद्वयं । । ऽ द्वितीयम् । पृष्टे ३ लोपे शेषं १ । २ । ३ । २, एवं द्विकस्य अन्त्यस्य भागस्त्रिके तदधो गः, पूर्वद्विकस्य कलाग्रहाल्लोपः, एवं । ऽ । तृतीयम् । पृष्टे ४ लोपे शेषं १ । २ । ३ । १ एकस्य भागोऽत्र त्रिके, एवमन्त्यैकाधो लः, त्रिकेऽपि शेषाभावादधो लः, 'त्रिण एकुं ३' लघु १ तस्य भागः द्विके तदधो गः, एकलोपः, अत्र मुख्यैकस्य भागो द्विके तदधो गः, कलापूर्त्तेः त्रिके चान्त्यैकके च प्रत्येकं कला मुख्यैककलोपः, ऽ। । तुर्यम् । पञ्चमं लघुसकलरूपम् ।

पञ्चकले १ २ ३ ५ ८ अत्र पृष्टे १ लोपे शेषं १, २, ३, ५, ७,
। । । । ।
अत्र सप्तके पञ्चकस्य भागः, तेन सप्ताधो गः, पञ्चकस्य लोपः, द्विकस्य त्रिके भागः तदधो गः, द्विकलोपः, मुख्यैकाधः कला स्थितैव । ऽऽ प्रथमम् । पृष्टे २ लोपे शेषं १, २, ३, ५, ६, षट्के पञ्चकस्य भागे

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

षडधो गः, पञ्चकलोपः, त्रिके–त्रिकलस्य द्वितीयरूपस्य गुर्वधिकत्वे ताद्रूप्यात् द्विकस्य भागः पूर्वरूपे कृतः तेनात्र द्विके एकस्य भागे द्विकाधो गः, मुख्यैकलोपः, त्रिकाधः कला, द्वितीयं ऽ । ऽ रूपम् । पृष्टे ३ लोपे शेषं १, २, ३, ५, ५, पञ्चकेन पञ्चकस्य भागे परपञ्चकाधो गः, पूर्वपञ्चकलोपः, शेषं कलात्रयमङ्कत्रयं चेति साम्यात् ५, ५ इति समभागाच्च प्रत्येकं लघवस्त्रयः, एवं । । । ऽ तृतीयम् । पृष्टे ४ लोपे शेषं १, २, ३, ५, ४, अत्र चतुष्के पञ्चकभागो न प्राप्यः, पञ्चके चतुःकस्य भागात् पञ्चकाधो गः, त्रिकस्य कलाग्रहाल्लोपः, चतुःकाधः कला, एवं कलात्रये सिद्धे शेषमङ्कद्वयं कलाद्वयं चेति साम्याल्लघुद्वयं कार्यमिति न विचार्यं द्वाभ्यां कलाभ्यां गुरुसिद्धेर्गुरुः स्थाप्यः । पञ्चकलेऽष्टरूपात्मके तुर्यरूपे लघ्वन्ते गुरु-द्वयेनापि कलापूर्त्तेः इति एकस्य द्विके भागात् द्विकाधो गः, मुख्यैकलोपः, एवं ऽ ऽ । तुर्यम् । पृष्टे ५ लोपे शेषं १, २, ३, ५, ३, अत्र त्रिकस्यान्त्यस्य पञ्चके भागात् पञ्चकाधो गः, अन्त्यत्रिकाधो लः, पूर्वत्रिकलोपः, अत्रापि समकलाङ्कत्वे गुरुरिति न कार्यं पूर्वरूपापत्तेः, अर्द्धोपरि लघूनामेव वृद्धेः । तेन लघुद्वयं । । ऽ । पञ्चमम् । पृष्टे ६ लोपे शेषं १, २, ३, ५, २, अत्र पञ्चकस्य त्रिके भागो नेति द्विकस्य त्रिके भागात् त्रिकाधो गः, द्विकलोपः, पञ्चाधो लः, अन्त्यद्विकाधो लः, मुख्यैकाधोऽपि लः, तेन । ऽ । । षष्ठम् । पृष्टे ७ लोपे शेषं १, २, ३, ५, १, अत्र पूर्वरूपे द्वि-कस्य त्रिके भागलाभात् त्रिकाधो गः, उक्तः सप्तमें पुना रूपे द्विके एकस्य भागात् द्विकाधो गः, मुख्यैकलोपः त्रि-पञ्च अन्त्यैकानामधः प्रत्येकं लघुत्रयं, ऽ । । । सप्तमम् । परं सर्वलमष्टमम् ।

षट्कले १, २, ३, ५, ८, १३, इह पृष्टे १ लोपे शेषं १, २, ३, ५, ८, १२,
। । । । । ।

अत्र १२ मध्ये ८ भागे द्वादशाधो गः, अष्टकलोपः, एवं पञ्चके त्रिकस्य भागात् पञ्चकाधो गः, त्रिकलोपः, द्विके मुख्यैकस्य भागात् द्विकाधो गः, मुख्यैकलोपः सर्वत्रकलाग्रहात् ऽऽऽ प्रथमम् । पृष्टे २ लोपे शेषं १, २, ३, ५, ८, ११, अत्रापि ११ मध्येऽष्टभागात् तत्कलाग्रहे ११ अधो गः, ८ लोपः, पञ्चके त्रिकस्य भागात् पञ्चाधो गः, त्रिकलोपः, शेषाङ्ककलासाम्यात् । । ऽ ऽ द्वितीयम् । पुनः पृष्टे ३ लोपेऽन्त्यदशाधो गः, अष्टानां भागे तत्कलाग्रहात् त्रिकाधो गः, द्विकस्य कलाग्रहात् पञ्चाधो लः, मुख्यैकाधो लः, एवं । ऽ । ऽ तृतीयम् । पुनः पृष्टे ४ लोपे शेषं ९, अन्ते तत्राप्यष्टकलाग्रहादधो गः, द्विके एकस्य भागात् कलाग्रहे द्विकाधो गः, त्रिकाधो लः, परस्य अष्टकस्य लोपात् पञ्चाधो लः, भागासम्भवात्, एवं ऽ । । ऽ चतुर्थम् । पृष्टे ५ तस्य १३ मध्यात् लोपे शेषं १, २, ३, ५, ८, ८, पूर्वाष्टककलाग्रहात् पराष्टकाधो गः, पूर्वाष्टकलोपः, शेषे कलाङ्कसाम्यात्

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

चतस्रः कला एव । यद्यत्र पञ्चके त्रिकभागात् द्विके एकस्य भागात् कलाग्रहणादि क्रियते तदा पूर्वरूपापत्तिः, सा तु सर्वत्रापि निषिद्धा 'उवरिल ग्रंक लोपिकें लेख' इति वचनात्, । । । । ऽ पञ्चमम् । षष्ठे पृष्टे १३ मध्यात् ६ लोपे अन्ते ७, तदष्टानां भागो नाप्यः, किन्तु सप्तानां भागोऽष्टके, तेनाष्टाधो गः, सप्ताधो लः, पञ्चकस्य लोपोऽष्टकेन कलाग्रहात् द्विकस्य त्रिके भागात् त्रिकाधो गः, द्विकलोपः, मुख्यैकाधो लः, एवं । ऽ ऽ । षष्ठम् । पृष्टे ७ तल्लोपेऽन्ते ६, तदधो लः, अष्टके षट्कस्य भागात् अष्टाधो गः, पञ्चके लोपात् द्विके एकस्य भागात् द्विकाधो गः, एकस्य कलाग्रहात् एकस्य लोपः, त्रिकाधो लः, एवं ऽ । ऽ । सप्तमम् । पृष्टे ८ तल्लोपेऽन्ते ५ तदधो लः, पञ्चकस्य अष्टके कलाग्रहात् अष्टाधो गः, पञ्चकस्य अन्त्यस्य भागलाभाच्च शेषे कलाङ्कसाम्यात् त्रयः प्रत्येकं लघवः, । । । ऽ । अष्टमम् । पृष्टे ९ लोपे शेषं १, २, ३, ५, ८, ४, चतुष्कस्य अष्टसु भागात् चतुःकाधो लः, अष्टाधोऽपि लः, पञ्चके त्रिकभागात् तत्कलाग्रहेण पञ्चाधो गः, त्रिकलोपः, द्विके एकस्य भागात् तत्कलाग्रहे द्विकाधो गः, एकस्य लोपः, एवं ऽ ऽ । । नवमम् । अत्र पञ्चकस्य कला नाष्टके क्षेप्या पूर्वरूपापत्तेः, गुरूणां रूपाद्यभागसञ्चारात् पश्चिमभागे लघूनामाधिक्याच्च । पृष्टे १० लोपे, शेषं १, २, ३, ५, ८, ३, तदा त्रिकस्यान्त्यस्य अधो लः, अष्टाधोऽपि लः, त्रिकस्य पञ्चके भागात् पञ्चाधो गः, त्रिकलोपः, शेषं १ । २ कलाङ्कसाम्याल्लघुद्वयं । । ऽ । । दशमम् । पृष्टे ११ लोपे प्रान्ते २, तदधो लः, द्विकस्य त्रिके भागात् कलाग्रहे त्रिकाधो गः, द्विकलोपः, शेषं १, ५, ८, एषु प्रत्येकं लः, एवं । ऽ । । । एकादशम् । पृष्टे द्वादशे १२ लोपे, शेषं १, २, ३, ५, ८, १, अत्र द्विकेन मुख्यैकाधः, कलाग्रहात् द्विकाधो गः, मुख्यैकलोपः, शेषं ३, ५, ८, १, एषामधो लघवः, एवं ऽ । । । । द्वादशम् । परं सर्वलघुकम् ।

सप्तकले १ २ ३ ५ ८ १३ २१ अत्र पृष्टे १ लोपे शेषं १, २, ३, ५,
। । । । । । ।

८, १३, २०, अत्र विंशतौ १३ भागप्राप्तिः तेन विंशाधो गः, १३ लोपः, अष्टाधो गः, पञ्चलोपः, त्रिकाधो गः, द्विकलोपः मुख्यैककला स्थितैव, एवं । ऽ ऽ ऽ प्रथमम् । पृष्टे २ लोपे, शेषं १९, तदधो गः, १३ लोपात् अष्टाधो गः, पञ्चलोपात् त्रिके द्विककलाग्रहः प्रथमरूपे, अत्र द्विके मुख्यैककलाग्रहात् द्विकाधो गः, एकलोपः, त्रिके कला, एवं ऽ । ऽ ऽ द्वितीयम् । पृष्टे ३ लोपे अन्ते १८, तदधो गः, १३ भागात् १३ लोपः, अष्टाधो गः, पञ्चकलाग्रहात् तल्लोपः शेषं समकलाङ्कत्वात् ३ लघवः । । । ऽ ऽ तृतीयम् । पृष्टे ४ लोपे शेषं १७, तदधो गः, १३ लोपः पञ्चाधो गः, त्रिककलाग्रहात् अष्टाधो लः, द्विकाधो गः, मुख्यैककला स्थिता ऽ ऽ । ऽ तुर्यम् ।

CC-0. ORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पृष्टे पञ्चलोपे शेषमन्ते १६, तदधो गः, १३ कलाग्रहात् लोपः, अष्टाधो लः, पञ्चकेऽधो गः, त्रिके कलाग्रहाल्लोपः, शेषे समकलाङ्कत्वाल्लघुद्वयं ।।ऽ।ऽपञ्चमम् । पृष्टे ६ तल्लोपे शेषमन्ते १५, तदधो गः, अष्टाधो लः, पञ्चाधो लः, त्रिकाधो गः, द्विकस्य कलाग्रहात् मुख्याधः कला एव, एवं ।ऽ।।ऽषष्ठम् । पृष्टे ७ तल्लोपेऽन्ते १४, तदधो गः, १३ न्यूनत्वात् लोपः ८।५।३ अधो लः, द्विकाधो गः, मुख्यकलाग्रहात् लोपः ऽ।।।ऽसप्तमम् । पृष्टे ८ लोपे शेषमन्ते १३, पूर्वं १३ अधो गः, समभागबलात् पूर्वं १३ लोपः, एवं कलाद्वयं, शेषपञ्चाङ्काः पञ्चकलाः चेति साम्यात् पञ्च लघव एव ।।।।।ऽअष्टमम् । पृष्टे ९ लोपे शेषमन्ते १२, तेन भागः पूर्वं १३ मध्ये, यदुक्तं **वाणीभूषणे**—

> नष्टे कृत्वा कलाः सर्वाः पूर्वयुग्माङ्कयोजिताः ।
> पृष्ठाङ्कहीनशेषाङ्कं येन येनैव लुप्यते ॥
> परां कलामुपादाय तत्र तत्र गुरुर्भवेत् ।
> मात्रायां नष्टमेतत्तु फणिराजेन भाषितम् ॥
> (वाणीभूषणम्, परि. १, पद्य ३२-३३)

तेन १३ अधो गः, १२ अधो लः, अष्टकस्य लोपः कलाग्रहात् एवं पञ्चाधो गः, त्रिकभागेन कलाग्रहात् द्विकाधो गः, मुख्यलोपात्, एवं ऽऽऽ। नवमम् । पृष्टे सप्तकले छन्दसि दशमं रूपं कीदृग् ? इति, तदा १ २ ३ ५ ८ १३ २१ एवं

। । । । । । ।

कलाः कृत्वा पूर्वयुग्माङ्कयोजिताः पृष्टाङ्क १०, ते २१ मध्यात् अपकृष्टाः शेषं ११, तेषां १३ मध्ये भागात् तदधो गः, ११ अधो लः, अष्टकलोपः, पञ्चाधो गः, त्रिककलाग्रहात्, शेषं कलाङ्कयोः साम्याल्लघुद्वयं ।।ऽऽ। दशमं रूपम् । पृष्टे ११ तस्य लोपे १०, ततः १३ मध्ये भागात् १३ अधो गः, अष्टलोपः, त्रिके द्विकभागात् त्रिकाधो गः द्विकलोपः, एवं रूपं ।ऽ।ऽ। एकादशम् । पृष्टे १२ तल्लोपे शेषं ९ तस्य १३ मध्ये भागात् १३ अधो गः, ९ अधो लः, अष्टलोपः, द्विके मुख्यैकस्य भागात् द्विकाधो गः, मुख्यलोपः त्रिकपञ्चकयोः अधो लः प्रत्येकं, एवं ऽ।।ऽ। द्वादशम् । पृष्टे १३ तल्लोपे शेषं ८ तस्य १३ मध्ये भागात् १३ अधो गः, ८ अधो लः, पूर्वाष्टकलोपः, शेषं समाङ्ककलाभावात् १, २, ३, ५ एषामधो लघवः प्रत्येकं, ।।।।ऽ। त्रयोदशम् । पृष्टे १४ तस्य २१ मध्याल्लोपे शेषं ७, तस्य १३ मध्ये भागे शेषं ६ इति परात्–सप्तमात् न्यूनता इति हेतोः १३ अधो लः, सप्ताधोऽपि लः, अष्टके पञ्चकभागात् अष्टाधो गः, पञ्चकलोपः, त्रिके द्विकभागात् त्रिकाधो गः, द्विकलोपः मुख्यैकाधः कला ।ऽऽ।। चतुर्दशम् । पृष्टे १५ लोपे

CC-0. In Public Domain. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

शेषं ६ तदधो लः, १३ अधोऽपि प्राग्सिद्धत्वात् ल एव, अष्टके पञ्चकभागादष्टाधो गः, पञ्चकलोपः, द्विके एकस्य भागात् द्विकाधो गः, त्रिकाधो लः, एवं ऽ।ऽ।। पञ्चदशम् । पृष्टे १६ तल्लोपे शेषं ५ तस्य १३ मध्ये भागे शेषं ८ तदधो लः, पञ्चाधो लः, अष्टके पञ्चकभागात् अष्टाधो गः, पूर्वपञ्चलोपः, शेषे समकलाङ्कत्वात् त्रयोपि लघवः, ।।।ऽ।। षोडशम् । पृष्टे १७ तल्लोपे शेषं ४ तदधो लः, तस्य १३ मध्ये भागे शेषं ९, अयं परोङ्कः पूर्वस्थाष्टकादधिक इति हेतोः तस्याप्यधो लः पञ्चके त्रिकस्य भागात् पञ्चाधो गः, त्रिकलोपः, द्विके मुख्यैकभागाद् द्विकाधो गः, मुख्यैकलोपः, ऽऽ।।। सप्तदशम् । पृष्टे १८ तल्लोपे शेषं ३ तदधो लः, तस्य १३ मध्ये भागे शेषं १० तदधो लः, अष्टकादधिकाः १० इति अष्टकाधो लः, पञ्चके त्रिकभागात् पञ्चाधो गः, त्रिकलोपः, शेषे समकलाङ्कत्वात् लघुद्वयं, ।।ऽ।।। अष्टादशम् । पृष्टे १९ तल्लोपे शेषं २ तस्य १३ मध्ये भागे शेषं ११ तस्य अष्टमध्ये भागाभावात्, अष्टकस्य पञ्चके भागाभावात् सर्वत्र ५, ८, ११, २ एषु लघवः, द्विकस्य त्रिकेऽभावात् त्रिकाधो गः, द्विकलोपः, मुख्याधो लः, एवं ।ऽ।।।। एकोनविंशम् । अथ पृष्टे २० तस्य २१ मध्याल्लोपे शेषं १ तत्र १३ मध्यात् भागे शेषं १२ तस्य नाष्टसु भागः, अष्टानां न पञ्चके भागः, पञ्चकस्य न त्रिके इति सर्वत्र लघवः, पञ्चस्वङ्केषु द्विके मुख्यैकभागात् द्विकाधो गः, एकस्य लोपः, एवं ऽ।।।।। विंशतितमं रूपम् । परतः सर्वलघुकम् इति भाव्यम् । एवं सर्वत्र मात्राच्छन्दसि इष्टज्ञानम् ।

एककले—

।	१

द्विकले द्वे—

ऽ	१
। ।	२

त्रिकले त्रीणि—

। ऽ	१
ऽ ।	२
। । ।	३

चतुष्कले पञ्च—

ऽ ऽ	१
। । ऽ	२
। ऽ ।	३
ऽ । ।	४
। । । ।	५

पञ्चकले अष्ट—

। ऽ ऽ	१
ऽ । ऽ	२
। । । ऽ	३
ऽ ऽ ।	४
। । ऽ ।	५
। ऽ । ।	६
ऽ । । ।	७
। । । । ।	८

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

षट्कले अष्ट—

S S S	१
। । S S	२
। S । S	३
S । । S	४
। । । । S	५
। S S ।	६
S । S ।	७
। । । S ।	८
S S । ।	९
। । S । ।	१०
। S । । ।	११
S । । । ।	१२
। । । । । ।	१३

षट्कलं पूर्णम् ।

सप्तकले एकविंशति—

। S S S	१
S । S S	२
। । । S S	३
S S । S	४
। । S । S	५
। S । । S	६
S । । । S	७
। । । । । S	८
S S S ।	९
। । S S ।	१०
। S । S ।	११
S । । S ।	१२
।। । । S ।	१३
। S S । ।	१४
S । S । ।	१५
।। । S । ।	१६
S S । । ।	१७
। S । । । ।	१८
।S । । । ।	१९
S। । । । ।	२०
।। । । । । ।	२१

सप्तकलं पूर्णम् ।

अष्टकले चतुस्त्रिंशत्—

S S S S	१
।। S S S	२
।S । S S	३
S। । S S	४
।। । । S S	५
। S S । S	६
S । S । S	७
।। । S । S	८
SS । । S	९
।। S । । S	१०
।S । । । S	११
S। । । । S	१२
।। । । । । S	१३
। S S S ।	१४
S । S S ।	१५
।। । S S ।	१६
S S । S ।	१७
। । S । S ।	१८
।S । । S ।	१९
S। । । S ।	२०
।। । । । S ।	२१
S S S । ।	२२
।। S S । ।	२३
।S । S । ।	२४
S। । S । ।	२५
।। । । S । ।	२६
।S S । । ।	२७
S। S । । ।	२८
।। । S । । ।	२९

CC-0 SRORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

SS I I I I ३०
II S I I I I ३१
IS I I I I I ३२
SI I I I I I ३३
II I I I I I I ३४

अष्टकलं पूर्णम् ।

नवकले पञ्चपञ्चाशत्—

I S S S S १
S I S S S २
II I S S S ३
S S I S S ४
II S I S S ५
IS I I S S ६
SI I I S S ७
II I I I S S ८
S S S I S ९
II S S I S १०
IS I S I S ११
SI I S I S १२
II I I S I S १३
IS S I I S १४
SI S I I S १५
II I S I I S १६
SS I I I S १७
II S I I I S १८
IS I I I I S १९
SI I I I I S २०
II I I I I I I S २१
S S S S I २२
II S S S I २३
IS I S S I २४
SI I S S I २५
II I I S S I २६
IS S I S I २७
SI S I S I २८
II I S I S I २९
SS I I S I ३०
II S I I S I ३१
IS I I I S I ३२
SI I I I S I ३३
II I I I I S I ३४
IS S S I I ३५
SI S S I I ३६
II I S S I I ३७
SS I S I I ३८
II S I S I I ३९
IS I I S I I ४०
SI I I S I I ४१
II I I I S I I ४२
SS S I I I ४३
II S S I I I ४४
IS I S I I I ४५
SI I S I I I ४६
II I I S I I I ४७
IS S I I I I ४८
SI S I I I I ४९
II I S I I I I ५०
SS I I I I I ५१
II S I I I I I ५२
IS I I I I I I ५३
SI I I I I I I ५४
II I I I I I I I ५५

नवकलं पूर्णम् ।

दशकले नवाशीति—

S S S S S १
II S S S S २
IS I S S S ३
SI I S S S ४

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

II I I S S S	५	SI I I S S I	४१
IS S I S S	६	II I I I S S I	४२
SI S I S S	७	SS S I S I	४३
II I S I S S	८	II S S I S I	४४
SS I I S S	९	IS I S I S I	४५
II S I I S S	१०	SI I S I S I	४६
IS I I I S S	११	II I I S I S I	४७
SI I I I S S	१२	IS S I I S I	४८
II I I I I S S	१३	SI S I I S I	४९
IS S S I S	१४	II I S I I S I	५०
SI S S I S	१५	SS I I I S I	५१
II I S S I S	१६	II S I I I S I	५२
SS I S I S	१७	IS I I I I S I	५३
II S I S I S	१८	SI I I I I S I	५४
IS I I S I S	१९	II I I I I I I S I	५५
SI I I S I S	२०	SS S S I I	५६
II I I I S I S	२१	I I S S S I I	५७
SS S I I S	२२	IS I S S I I	५८
II S S I I S	२३	SI I S S I I	५९
IS I S I I S	२४	II I I S S I I	६०
SI I S I I S	२५	IS S I S I I	६१
II I I S I I S	२६	SI S I S I I	६२
IS S I I I S	२७	II I S I S I I	६३
SI S I I I S	२८	SS I I S I I	६४
II I S I I I S	२९	II S I I S I I	६५
SS I I I I S	३०	IS I I I S I I	६६
II S I I I I S	३१	SI I I I S I I	६७
IS I I I I I S	३२	I I I I I I S I I	६८
SI I I I I I S	३३	IS S S I I I	६९
II I I I I I I I S	३४	SI S S I I I	७०
IS S S S I	३५	II I S S I I I	७१
SI S S S I	३६	SS I S I I I	७२
II I S S S I	३७	II S I S I I I	७३
SS I S S I	३८	IS I I S I I I	७४
II S I S S I	३९	SI I I S I I I	७५
IS I I S S I	४०	II I I I S I I I	७६

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

S S S I I I I	७७	I I I S I I I I I	८४
I I S S I I I I	७८	S S I I I I I I	८५
I S I S I I I I	७९	I I S I I I I I I	८६
S I I S I I I I	८०	I S I I I I I I I	८७
I I I I S I I I I I	८१	S I I I I I I I I	८८
I S S I I I I I	८२	I I I I I I I I I I	८९
S I S I I I I I	८३		

दशकलं सम्पूर्णम् ।

इष्टशब्देन चित्तेष्टं पृष्टरूपमिहोच्यते ।
प्राचां वाचा नष्टमिहममाङ्गल्यं न चोदितम् ।। १ ।।

उपान्त्यतोऽन्त्येऽभ्यधिके ह्यधो गः,
साम्येपि गो लस्तु ततोऽन्त्यहानौ ।
पश्चाद्गुरोर्लोपनमङ्ककस्य,
कलाङ्कसाम्ये लघवो निधेयाः ।। २ ।।

शेषाङ्कपूर्वापरयोरधो गः,
स्थाप्योऽत्र वृद्धस्य ल एकशेषे ।
न पूर्वरूपं पुनरेव कार्यं,
यो यत्र लुप्येदिति तद्विचार्यम् ।। ३ ।।

पृष्टं पञ्चकले पञ्चमं १ २ ३ ५ ८, तदा पृष्टं पञ्चमं तस्य अन्त्येऽष्टके
I I I I I
लोपे शेषमन्ते ३ तस्याधो लः, उपान्त्यात् हीनत्वात् शेषाङ्काः १, २, ३, ५, अत्र त्रिकस्य पञ्चके भागः वृद्धत्वात् तदधो गः, पश्चात् त्रिकस्य लोपः, शेषं १।२ कलानां अङ्कानां च साम्यात् प्रत्येकं लघवः, इति ।। ऽ। पञ्चमं रूपम् । यद्यत्र एकात् द्विकस्य वृद्धस्याधः गुरुर्दीयते तदा तु पञ्चकले तुर्यरूपापत्तिः । अत्र हि प्रथमरूपत्रये त्रिकलवत् न्यस्ते प्रान्तगुरुत्वम् । पञ्चकत्वाच्छन्दसः त्रिकले पूर्वपूर्वत्वात् प्रश्ने तदतिक्रमे चतुःकलः स्वतः पूर्वस्य द्वितीयरूपप्राप्तिस्तद्भंगश्च दोषश्च । अथ यो नरः पूर्वरूपं न जानाति तस्य का गतिः ? इति चेत्, तेन पुंसा विचार्यं यत् पञ्चकले सर्वरूपाण्यष्ट, तर्हि त्रिरूपव्यतिक्रान्ते गुर्वधिकता न युक्ता । यस्य यावत् कलच्छन्दसः स्वपूर्वच्छन्दसः ५१ परस्य यावद् रूपाधिक्यं तावति रूपे अर्द्धं प्रान्तगुरुता च । यथा– अत्र पञ्चकले स्वपूर्वचतुःकलात् पञ्चरूपात्मकात् रूपत्रयमधिकमिति त्रिरूपीं यावदर्द्धेऽन्तगुरुता च ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पूर्वं-पूर्वत्रिकलरूपतापि । तत्र गुर्वाधिक्यं परार्द्धे लघूनामाधिक्यं प्रान्तलघुता च । यथा, त्रिकलतः चतुःकले रूपद्वयाधिक्यं तेन प्रथमरूपद्वये न गुरुत्वं, शेषद्वये चान्तलघुत्वं, पञ्चमं तु चतुर्लम् । पञ्चकलेपि प्रथमत्रिरूपीत्रिकलस्य पश्चात् पञ्चरूपी चतुःकलस्य तत्रापि प्रान्तलघुता । पञ्चसु रूपेष्वपि द्विकलाद् रूपद्वयं प्रान्तगुरुकं तस्याप्यग्रे एकं लघु । ततोऽपि रूपद्वयं त्रिकलवत् प्रान्तलघुद्वयं चतुःकलापेक्षया पञ्चमं, पञ्चकलापेक्षयाऽष्टमं सर्वलघुकम् ।

पञ्चकलात् षट्कले पञ्चरूपाधिक्यं, पञ्चापि रूपाणि चतुःकलवत् प्रान्ते एकगुरोरधिकस्य दानात् कलापूर्तिः, पञ्चमे रूपे एको गुरुरन्ते शेषं लघुचतुष्टयम् ।

परतोऽष्टरूपाणि पञ्चकलवत् प्रान्ते एकलघुनाऽधिकानि । तत्राप्यष्टमे प्रान्ते एकगुरुः शेषं लघुपञ्चकं, अष्टाष्वपि रूपत्रयं त्रिकलवत् प्रान्ते गुरुलघुभ्यामधिकं षट्सप्तमाष्टरूपं, परं रूपपञ्चकं चतुःकलवत् प्रान्ते लघुद्वयाधिकं इत्यादौ विचार एव बलवान् ।

एवं पृष्टे पञ्चकले षष्ठरूपे तदा प्रान्त्याष्टमध्ये ६ लोपे शेषं १, २, ३, ५, २, अन्त्यद्विकाधो लः, तस्य पञ्चके भागात् उपान्त्यादूनत्वाच्च पञ्चकेपि द्विकस्य भागे लब्ध २ शेषं १ तेन पञ्चकाधोपि लः, त्रिकाधो गः, द्विकलोपः, तुर्ये पञ्चमे च रूपे पञ्चकाधो गः, त्रिकलोपः । पञ्चकले हि त्रिकलवत् त्रिरूपी गुरुणान्तेऽधिका इदं पृष्टं षष्ठं रूपं इति विचारात् लब्धस्य द्विकस्य त्रिके भागाच्च, मुख्यैकाधः कला । ऽ । । इति षष्ठं रूपम् । यथा उपान्त्ये–अन्त्यस्य भागे उपान्त्याधो गः, अन्त्याधो लः, उपान्त्यपूर्वस्य लोपः, तथा द्विकस्य पञ्चके शेषं १ तस्य त्रिके भागेपि संभवति त्रिकाधो गः, पञ्चकस्थानीयद्विकाधो लः, पूर्वद्विकलोपः, मुख्याधो लः । इति रूपनिर्णयः ।

पञ्चकले सप्तमेपि अन्त्याष्टके सप्तलोपे शेषं १ तदधो लः शेषैकस्यापि पञ्चके भागे शेषं पूर्णम् । अग्रे त्रिकस्य द्विके भागाभावः वृद्धत्वात्, मुख्यैकस्य द्विके भागात् द्विकाधो गः, मुख्यैकलोपः, त्रिकाधो लः, इति ऽ । । । सप्तमम् ।

यो यस्मात् पूर्वपूर्वोऽङ्कस्तावद्रूपेषु चान्त्यगः ।
तत्परं प्रान्त-लान्येव स्वतः पूर्वाङ्कसंख्यया ।। ४ ।।

एवं सप्तकले पृष्टे एकादशे रूपे अन्त्याङ्के २१ मध्ये ११ पाते शेषं १० तस्य उपान्त्याङ्के १३ मध्ये भागः प्राप्तः, तत्र अष्टकस्य कलाग्रहात् १३ स्थानीयत्रिकाधो गः, अष्टकलोपः, दशाधो लः, द्विकस्य त्रिके भागः, तेन त्रिकाधो गः, द्विकलोपः, मुख्यैकाधो लः, पञ्चकाधो लः, एवं । ऽ । ऽ । इत्येकादशरूपसिद्धिः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

ननु अत्र पञ्चके त्रयोदशस्थानीयत्रिकस्य भागात् पञ्चकाधो गः, पूर्वत्रिकलोपः, अग्रे १,२ अनयोरधः कलाद्वयमिति कथं न क्रियते ? इति चेत्, न, दशमरूपापत्तेः । परस्य १० अङ्कस्य पूर्वस्मिन् १३ अङ्के भागाधिकारात् पूर्वत्रिके भागश्चेन् सम्भवति तदाऽयं विधिर्युक्तः । यद्यपि त्रयोदशस्थानीयत्रिकस्य परस्य पूर्वस्मिन् पञ्चके भागसम्भवः, परं मध्येष्टकलोपेन व्यवधानान्नायं विधिर्घटते ।

यद्यपि सप्तकले दशमे रूपे अयमेव विधिर्दृश्यते, तथापि सप्तकले पूर्वपूर्वं पञ्चकलं तस्याष्टरूपाणि प्रथमतोऽतिक्रान्तानि शेष ९।१०।११ इति षट्कलस्य तृतीयं रूपं प्रश्ने प्राप्तं, तच्च ।ऽ।ऽ ईदृशमिति, तद्भङ्गापत्तेरानीयमध्वाप्रध्वरः।

षट्कलेपि तादृग् रूपं चतुःकले स्वपूर्वपूर्वे तृतीयरूपे ।ऽ। ईदृशे प्रान्ते गुरुदानात् सिद्धम् । चतुःकलेपि द्विकलवत् रूपद्वये प्रान्ते गुरुणाधिकेप्यतीते त्रिकलस्य प्रथमं रूपं प्राप्तं, चतुःकलापेक्षया तृतीयं, तत्रान्ते लघोरधिकारात् प्रश्ने ।ऽ। ईदृशस्यैव सिद्धेः ।

स्वपूर्वपूर्वस्य कलाप्रमाणे, गोऽन्तः स्वपूर्वस्य कलाप्रमाणे ।
लोऽन्तो विचिन्त्येति निवेद्यमेवं, छन्दोविदा पृष्टमिहेऽष्टरूपम् ॥

नट्ठे सव्व कला कारिज्जसु, पुव्व जुयल सरि अंका दिज्जसु ।
पुच्छिल अंक मेटावहु सेख, उवरिल अंक लोपि के लेख ॥
जत्थ जत्थ पाविज्जह भाग, एह कहें फुर पिंगलनाग ।
परमत्ता लेइ गुरुताइ, जत लेवेहु तत लेवेहु आइ ॥

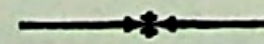
नष्टाङ्के कल्पयेद् भागं समभागे लघुर्भवेत् ।
दत्त्वैकं विषमे भागे कार्यस्तत्र गुरुर्भवेत् ॥

[वाणीभूषणम्, परि० १, पद्य ३५]

अथ सिलमिली [शाल्मली] प्रस्तारः

गुरु पढम हिट्ठ ठाणं, लहुया परि ठवहु अप्पबुद्धेण ।
सरिसा सरिसा पंती, उव्वरिया गुरु-लहू देहु ॥

इति मात्रानष्टं न्यासः।



T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

वर्णोद्दिष्ट-नष्ट-प्रकरणम्

अथ वर्णोऽ[? द्दि]ष्टरूपज्ञानमाह—

द्विगुणानङ्कान् दत्वा वर्णोपरि लघुशिरःस्थितानङ्कान् ।
अङ्केन पूरयित्वा वर्णोद्दिष्टं विजानीयात् [॥ ५५ ॥]

अस्यार्थः सोदाहरणः । यथा, ।ऽ।ऽ इदं चतुरक्षरे छन्दसि कतमं रूपम् ? इति, उद्दिष्टे द्विगुणा अङ्का उपरि देयाः १ २ ४ ८ इति न्यासे लघूपरि १,४
। ऽ । ऽ
मेलने ५, तत्र सैककरणे षष्ठं रूपं इत्युद्देश्यम् ।

उद्दिष्टे वर्णोपरि दत्त्वा द्विगुणक्रमेणाङ्कम् ।
एकं लघुवर्णाङ्के दत्त्वोद्दिष्टं विजानीयात् ॥
[वाणीभूषणम्, परि० १. पद्य ३४]

इ[? न]ष्टज्ञानमपि आह—

नष्टे पृष्टे भागः कर्त्तव्यः पृष्टसंख्यायाः ।
समभागे लं कुर्याद् विषमे दत्त्वैकमानयेद् गुरुकम् [॥ ५६ ॥]

यथा चतुरक्षरे छन्दसि षष्ठं रूपं कीदृशम् ? इति पृष्टे षण्णां भागोऽर्द्धं त्रयं एवं समभागात् लघुः प्राप्तः, पुनस्त्रयाणामर्द्धकरणाभावात् सैककरणे ४, तदर्द्धं २ एवं गुरुः प्राप्तः, द्वयस्यार्द्धं १ एवं लघु प्राप्तः, तस्याप्यर्द्धाऽसम्भवात् सैककरणे २ तदर्धे १ एवं गुरुप्राप्तिः । जातं ।ऽ।ऽ एवं इ(? न)ष्टरूपज्ञानम् ।

इति वर्णोद्दिष्टनष्टप्रकरणम् ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

वर्णमेरु-प्रकरणम्

वर्णमेरुमाह—

कोष्ठानेकाधिकान् वर्णैः कुर्यादाद्यन्तयोः पुनः ।
एकाङ्कमुपरिस्थाङ्क - द्वयैरन्यान् प्रपूरयेत् [।। ५७ ।।]

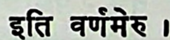
१	१				
१	२	१			
१	३	३	१		
१	४	६	४	१	
१	५	१०	१०	५	१

यस्य छन्दसो यावन्तो वर्णास्तावन्तः कोष्ठा एकेनाधिकाः कर्त्तव्याः । तत्रापि आद्यन्तकोशद्वये एकाङ्कन्यासः, ततः पुनः उपरिस्थाङ्कयोः कोशयोर्मीलनेन विचालस्थकोशपूरणं कार्यम् । यथा—द्विकवर्णच्छन्दसो द्वे रूपे—एकं गुरुकं १, एकं लघुकं च २, एवं कोशद्वयम् । द्विवर्णच्छन्दसोपि चत्वारि रूपाणि—ऽऽ, ।ऽ, ऽ।, ।।, इति । एकं सर्वगुरुकं, द्वे रूपे एकगुरुके, एकं सर्वलघुकं, एवं उपरितनकोशद्वयाङ्कौ १।१ तयोर्मेलने द्वाविति मध्यकोशे द्विकन्यासः । त्रिवर्णच्छन्दसोऽष्टरूपाणि—एकं सर्वगुरु ऽऽऽ, त्रीणि द्विगुरूणि २, ३, ५, त्रीणि एकगुरूणि ४, ६, ७, एकं सर्वलघु, मध्ये कोशद्वये ३।३ न्यासः, उपरिस्थ १।२ मेलने जातः । चतुर्वर्णच्छन्दसि षोडशरूपाणि—एकं सर्वगुरु आद्यं, चत्वारि एक गुरूणि ८, १२, १४, १५, षट् द्विगुरूणि ४, ६, ७, १०, ११, १३, चत्वारि त्रिगुरूणि २, ३, ५, ९, एकं सर्वलघु, एवं षोडशरूपाणि । विचालकोशत्रये १।३ मेलने ४ प्रथम-मध्यकोशपूरणं, उपरितन ३।३ मेलने ६ द्वितीयमध्यकोशे, तृतीयेपि १।३ मेलने ४ इति, एवमग्रेपि ।

'वर्णमेरुरयं' इत्यादि स्पष्टम् ।। ५८ ।।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१	१										२
१	२	१									४
१	३	३	१								८
१	४	६	४	१							१६
१	५	१०	१०	५	१						३२
१	६	१५	२०	१५	६	१					६४
१	७	२१	३५	३५	२१	७	१				१२८
१	८	२८	५६	७०	५६	२८	८	१			२५६
१	९	३६	८४	१२६	१२६	८४	३६	९	१		५१२
१	१०	४५	१२०	२१०	२५२	२१०	१२०	४५	१०	१	१०२४


इति वर्णमेरु ।

द्व्यक्षरे छन्दसि ४ रूपाणि—एकं सर्वगुरुरूपं, द्वे रूपे एक गुरुके, एकं सर्वलघुः । त्र्यक्षरे छन्दसि ८ रूपाणि—१ सर्वगुरुः, त्रीणि एकगुरूणि, त्रीणि द्विगुरूणि, एकं सर्वलघुः । चतुर्वर्णे छन्दसि १६ रूपाणि—४ एकगुरु, द्विगुरु ६, त्रिगुरु ४, एकं सर्वगुरुः, एकं सर्वलघुः । पञ्चवर्णे छन्दसि ३२ रूपाणि । षड्वर्णे ६४ रूपाणि । सप्ताक्षरे १२८ रूपाणि । अष्टाक्षरे २५६ रूपाणि । ९ वर्णे ५१२ रूपाणि । दशाक्षरे छन्दसि १०२४ रूपाणि ।

इति वर्णमेरु-प्रकरणम् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

वर्णपताका-प्रकरणम्

वर्णपताकामाह—

दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् पूर्वाङ्कैर्योजयेदपरान् ।
अङ्कः पूर्वं यो वै धृतस्ततः पंक्तिसञ्चारः ॥ [॥ ५९ ॥]
अङ्काः पूर्वं भृता येन तमङ्कं भरणे त्यजेत् ।
अङ्कश्च पूर्वं यः सिद्धस्तमङ्कं नैव साधयेत् ॥ [॥ ६० ॥]
प्रस्तारसंख्यया चैवमङ्कविस्तारकल्पना ।
पताका सर्वगुर्वादिवेदिकेयं विशिष्यतु ॥ [॥ ६१ ॥]

पूर्वयुगाङ्काः वर्णच्छन्दसि १।२।४।८।१६।३२।६४ इत्यादयः, तद्धरणं न्यासवेद्यम् ।

१	२
१	२

१	२	४
१	२	४
	३	

अथ तान् यथायोगं पूर्वाङ्कैर्योजयेत् तदा अधोऽधस्तनी अङ्कश्रेणिर्जायते । प्रथमं एकवर्णच्छन्दसि रूपद्वयमेव, तत्र २ पङ्क्तिस्थापना । द्विवर्णे मध्यस्था एका-पङ्क्तिः । त्रिवर्णे मध्यस्थं पङ्क्तिद्वयं । चतुर्वर्णे मध्यस्थं पङ्क्तित्रयम् । पञ्चवर्णे मध्यस्थं पङ्क्तिचतुष्टयम् ।

आदौ एक वर्णे ऽ गुरु । लघुश्चेति रूपद्वयम् । द्विवर्णे १।२ इत्यनयोर्योजने ३ द्विकाधः । अत्र पूर्वं अङ्कः धृतः ततः पङ्क्तिसञ्चारः, एकैव द्विकाद्यापङ्क्तिः परतः सिद्धोऽङ्कस्तस्य साधना नास्तीति । तत्र एकं रूपं सर्वगं प्रथमं, द्वे रूपे द्वितीय-तृतीयरूपे एकगुरुके, तुर्यं सर्वलम् । एवं द्विवर्णच्छन्दसः चत्वार्येव रूपाणि भवन्ति ।

१	२	४	८
१	२	४	८
	३	६	
	५	७	

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

त्रिवर्णे छन्दसि १।२ योजने ३ द्विकाधः, पुनः २।४ मेलने ६ परतः सिद्धोऽङ्कः, पुनः २।३ योजने ५, पुनः ४।३ योजने ७, पुनः ४।३ योगे ७ शेषाङ्काभावात् । एवं एकं रूपं सर्वगं, द्वितीय-तृतीय-पञ्चमानि रूपाणि एकेन गुरुणा ऊनानि त्रीणि रूपाणि द्विगुरूणि, ४, ६, ७ रूपाणि गुरुद्वयोनानि एक गुरूणि त्रीणि, एकं अष्टमं सर्वलघुकमिति अग्रेपि मन्तव्यम् ।

सुखेन अग्रेपि करणज्ञानाय विधिः—

१	२	४	८	१६
१	२	४	८	१६
	३	६	१२	
	५	७	१४	
	६	१०	१५	
		११		
		१३		

१।२ योजने ३, पुनः ४।२ योजने ६, पुनः ८।४ योजने १२, द्वितीया कोश-श्रेणिः, १६ त्यागः सिद्धाङ्कत्वात् । अस्याः श्रेणेरप्यधः २।३ योजने ५, पुनः ४।३ योजने ७, पुनः ८।६ योजने १४ तृतीया श्रेणिः । तस्या अधः ४।५ योजने ६, पुनः ४।६ योजने १०, पुनः ८।७ योजने १५ तुर्याश्रेणिः । ६।५ योजने ११, पुनः ६।७ योजने १३, एवं श्रेणिद्वयं एककोशम् । एवं एकं रूपं सर्वगं प्रथमपङ्क्तौ । द्वितीयपङ्क्तौ २।३।५।६ चत्वारि रूपाणि एक गुरुणा ऊनानि त्रिगुरूणि । [तृतीयपङ्क्तौ] ४।६।७।१०।११।१३ इति षड्रूपाणि द्विगुरूणि । [चतुर्थपङ्क्तौ] ८।१२।१४।१५ एतानि एकगुरूणि । [पञ्चमपङ्क्तौ] षोडशं सर्वलघु, एवं षोडशरूपाणि ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१	२	४	८	१६	३२
	३	६	१२	२४	
	५	७	१४	२८	
	९	१०	१५	३०	
	१७	११	२०	३१	
		१३	२२		
		१८	२३		
		१९	२६		
		२१	२७		
		२५	२९		

पञ्चवर्णे छन्दसि १।२ योजने ३ द्विकाधः, २।४ योजने ६ चतुःकाध., ८।४ योजने १२, अष्टाधः, १६।८ योजने २४ द्वितीयश्रेणिः। तदधः २।३ योजने ५, पुनः ४।३ योजने ७, पुनः ८।६ योजने १४, पुनः १६।१२ योजने २८ तृतीयश्रेणिः । ४।५ योजने ९, पुनः ४।६ योजने १०, पुनः ८।७ योजने १५, पुनः १६।१४ योगे ३० तुर्याश्रेणिः । ८।९ योजने १७, ४।७ योजने १ ·, पुनः ८।१२ योजनं २०, पुनः १६।१५ योजने ३१ पञ्चमश्रेणिः । ६।७ योजने १३, पुनः ७।११ योजने १८, पुनः ९।१० योजने १९, पुनः १०।११ योजने २१, पुनः १०।१५ योजने २५, पुनः ८।१४ योजने २२, पुनः ८।१५ योजने २३, पुनः १२।१४ योजने २६, पुनः १२।१५ योजने २७, पुनः १४।१५ योजने २९ एवं पताकया सर्वगुर्वादिज्ञापनम् ।

एकं सर्वगुरुरूपं । २।३।५।९।१७ पंचरूपाणि चतुर्गुरूणि । ४।६।७।१०।११।१३।१८।१९।२१।२५ एतानि त्रिगुरूणि । ८।१२।१४।१५।२०।२२।२३।२६।२७।२९ एतानि द्विगुरूणि । १६।२४।२८।३०।३१ एतानि एकगुरूणि । ३२ एकं सर्वलघुरूपम् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पूर्वाङ्कै उपरितनैः पार्श्वस्थैर्वा पङ्क्त्यन्तरेप्युपरिस्थैरङ्कानां योजना स्यात् १।२ इत्यादयः, साम्ये योज्याः २।३ इत्यादयः, उपरितनैः ३।४ इत्यादयः, पङ्क्त्यन्तरस्थैर्योगो भाव्यः। येन येन अङ्केन मीलितेन य अङ्कः रूपस्य पताकायां भृतस्तमङ्कं पुनर्जायमानं न पूरयेत्, यावद्रूपैः प्रस्तारस्तावद्रूपैः कोषभरणमिति ज्ञेयम्।

उद्दिट्ठा सरि अंका दिज्जसु, पुव्व अंक परभरण करिज्जसु।
पाउल अंक मढ परितिज्जसु, पत्थर संख पताका किज्जसु ॥

एकवर्णपताका

१	२
१	२

S
।

द्विवर्णपताका

१	२	४
१	२	४
	३	

SS	(१)
।S	(२)
S।	(३)
।।	(४)

द्विवर्णे एकं सर्वगुरु, द्वे रूपे एकगुरुके द्वितीय-तृतीये, तुर्यं सर्वलघुकम्।

त्रिवर्णपताका

S S S	(१)
। S S	(२)
S । S	(३)
। । S	(४)

१	२	४	८
१	२	४	८
	३	६	
	५	७	

S S ।	(५)
। S ।	(६)
S । ।	(७)
। । ।	(८)

एकं सर्वगुरु, द्विगुरु २।३।५, एकगुरु ४,६,७ रूपाणि, अष्टमं सर्वलम्।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

चतुर्वर्णपताका

१	२	४	८	१६
	३	६	१२	
	५	७	१४	
	९	१०	१५	
	११			
	१३			

ऽऽऽऽ	(१)	ऽऽऽ।	(९)
।ऽऽऽ	(२)	।ऽऽ।	(१०)
ऽ।ऽऽ	(३)	ऽ।ऽ।	(११)
।।ऽऽ	(४)	।।ऽ।	(१२)
ऽऽ।ऽ	(५)	ऽऽ।।	(१३)
।ऽ।ऽ	(६)	।ऽ।।	(१४)
ऽ।।ऽ	(७)	ऽ।।।	(१५)
।।।ऽ	(८)	।।।।	(१६)

षोडशके प्रस्तारे एकं सर्वगुरुरूपम्, २।३।५।९ एतानि त्रि-गुरूणि, ४,६,७,१०,११,१३ एतानि द्विगुरूणि, ८।१२।१४।१५ एतानि एकगुरूणि, १६ एकं सर्वलघुरूपम् ।

पञ्चवर्णपताका

१	२	४	८	१६	३२
	३	६	१२	२४	
	५	७	१४	२८	
	९	१०	१५	३०	
	१७	११	२०	३१	
		१३	२२		
		१८	२३		
		१९	२६		
		२१	२७		
		२५	२९		

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पञ्चवर्णपताका

श्री	ग									
१	१									
५	२	३	५	९	१७					
१०	४	६	७	१०	११	१३	१८	१९	२१	२५
१०	८	१२	१४	१५	२०	२२	२३	२६	२७	२९
५	१६	२४	२८	३०	३१					
१	३२									
ऐ	शा									

एकद्वयोर्योगे ३, द्विचतुरोर्योगे ६, चतुरष्टयोर्योगे १२, अष्टषोडशयोगे २४। ऊर्ध्वाधः २।३ योगे ५, चतुस्त्रियोगे वक्रत्वे ७, ८।६ योगे १४, १६।१२ योगे २८। १।३।५ योगे ९, ४।६ योगे १०, ८।७ योगे १५, १६।१४ योगे ३०।; ४।६।७ योगे १७, १।३।७ योगे ११, ८।१२ योगे २०, [११।२० योगे ३१; ६।७ योगे १३, ७।११ योगे १८, ९।१० योगे १९, १०।११ योगे २१; १०।१५ योगे २५।] ८।१४ योगे २२, १५।८ योगे २३, १२।१४ योगे २६, १५।१२ योगे २७, १५।१४ योगे २९।

S S S S S	(१)	S S S S I	(१७)
I S S S S	(२)	I S S S I	(१८)
S I S S S	(३)	S I S S I	(१९)
I I S S S	(४)	I I S S I	(२०)
S S I S S	(५)	S S I S I	(२१)
I S I S S	(६)	I S I S I	(२२)
S I I S S	(७)	S I I S I	(२३)
I I I S S	(८)	I I I S I	(२४)
S S S I S	(९)	S S S I I	(२५)
I S S I S	(१०)	I S S I I	(२६)
S I S I S	(११)	S I S I I	(२७)
I I S I S	(१२)	I I S I I	(२८)
S S I I S	(१३)	S S I I I	(२९)
I S I I S	(१४)	I S I I I	(३०)
S I I I S	(१५)	S I I I I	(३१)
I I I I S	(१६)	I I I I I	(३२)

इति वर्णपताका-प्रकरणम्।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

मात्रामेरु–प्रकरणम्

अथ मात्राछन्दो मेरुमाह—

एकाधिककोष्ठानां द्वे द्वे पङ्क्ती समे कार्ये ।
तासामन्तिमकोष्ठेष्वेकाङ्कं पूर्वभागे तु [॥६२॥]

एककलच्छन्दसः ५१ अधिककोष्ठानां द्विकल-त्रिकलादीनां द्वे द्वे समे पङ्क्ती कार्ये । कोऽर्थः ? द्विकल-त्रिकलयोः समे पङ्क्ती द्वयोरपि चतुःकोशात्मिके कार्ये । एवं चतुःकलाष्टकलयोः षट्कोशरूपे । त्रयोदशकल-एकविंशतिकलयोः अष्टकोशात्मिके कृत्वा अन्त्यकोशे एकाङ्क एव धार्यः । पूर्वभागे तु पुनः अयुग्पङ्क्तेः १ । ३ । ५ । ७ इत्यादिकायाः प्रथमकोशेषु सर्वत्र एककः स्थाप्यः, समपङ्क्तेः २ । ४ । ६ । ८ इत्यादिकायाः पूर्वभागे प्रथमकोशे पूर्वयुग्माङ्काः । इह मात्रा छन्दसि १ । २ । ३ । ५ । ८ । १३ । २१ इत्याद्या योज्याः । एतत्तु दुर्बोधम् । सर्वपंक्तिषु आदौ पूर्वयुग्माङ्का देयाः । द्विकलाद्यपेक्षया अयुग्पङ्क्तीनां द्वितीयकोशे एककः, समपंक्तीनां द्वितीयकोशे २ । ३ । ४ । ५ । ६ । ७ । ८ इत्यादयः स्थाप्याः यावता पंक्तिः पूर्यते । आद्य एककलघुकोशापेक्षया २ । ४ । ६ । ८ एतासु पंक्तिसु एकक इति ।

आद्याङ्केन तदीयैः शीर्षाङ्कैर्वामभागस्थैः ।
उपरिस्थितेन कोष्ठ विषमायां पूरयेत् पक्तौ [॥६३॥]

१						१
२	१	१				२
३	२	१				३
५	१	३	१			४
८	३	४	१			५
१३	१	६	५	१		६
२१	४	१०	६	१		७
३४	१	१०	१५	७	१	८
५५	५	२०	२१	८	१	९

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यथा द्वाभ्यां एककाभ्यां मेलने जातं २। अग्रे अन्तकोष्ठे एकः सिद्ध एव इति द्वितीया पंक्तिः। अस्याः प्रथमकोशे त्रिकस्तं विहाय कोशभरणं एवं तृतीय-पङ्क्तौ। विषयामां द्वितीयपङ्क्तिगतः द्विकः तदुपरि वामस्थित एकः, एवं १।२ मीलने जाताः ३, मध्यकोशे, अन्तकोशे पुनः एकः सिद्ध एव। प्रथमकोशे तु 'एकाङ्कमयुग्पङ्क्तेः।' इति सूत्रणात् एकाङ्कः स्थाप्य एव, तस्याप्यादौ पूर्व-युग्माङ्कः पञ्चकः सकोशभरणेन ग्राह्यः। एवं प्राप्तं चतुःकले पञ्चरूपाणि एकं सर्वगं, त्रीणि एकगुरूणि, एकं अन्ते सर्वलघुरूपम्।

एवं पञ्चकलमेरुकोशेषु द्विकलेन समकोशत्वात् चतुःकलस्य १।३ एतौ संयोज्य उपान्त्ये ४ अन्ते एकः सिद्ध एव। ततः द्विकलपंक्तिगं द्विकं त्रिकलपंक्तिगं एकञ्च संयोज्य त्रिकः स्थाप्यः, तस्याप्यग्रेऽष्टकः पूर्वयुग्माङ्कः। एवं च त्रीणि रूपाणि द्विगुरूणि, चत्वारि एक गुरूणि। कानि कानि ? इत्याशङ्का पताकया निरस्या। अत्र मेरौ लग-क्रियावत् रूपसंख्यैव।

षट्कले तु चतुःकलस्यैकं, पञ्चकलस्य चतुःकं च संयोज्य उपान्त्ये पञ्चकः, अन्त्ये तु एकः सिद्ध एव, चतु कलगतत्रिकं तथा पञ्चकलगतत्रिकं संयोज्य जाताः ६। ततोप्याद्यकोशे एककः षट्कलत्वात् आदौ सर्वगुरुकैकरूपज्ञानाय ततोप्यादौ १३ युग्माङ्कः। एवञ्च एकं रूपं त्रिगुरुकं, षट्रूपाणि द्विगुरुकाणि, पञ्चरूपाणि एकगुरुकाणि, एकमन्त्यं सर्वलघुकम्। एवं सर्वाणि १३ रूपाणि।

सप्तकलके पञ्चकलस्य त्रिकं, षट्कलस्यैकं संयोज्य आदौ ४, तस्याप्यादौ २१ युग्माङ्कः। चतुःकात् परकोशे पञ्चकलगतं चतुःकं षट्कलगतं षट्कं संयोज्य १०, ततः परं पञ्चकलगतं एकं षट्कलगतं पञ्चकं संयोज्य षट्, ततोऽन्ते एकः सिद्ध एव। एवं च चत्वारि रूपाणि त्रिगुरूणि, दशरूपाणि द्विगुरूणि, षट्रूपाणि एकगुरूणि, एकं सर्वलघु, एवं २१ सर्वरूपाणि।

अष्टकलके समपङ्क्तित्वात् एकं सर्वगुरुरूपं तदङ्कः १, तस्यादौ ३४ युग्माङ्कः, एकस्य कोशादग्रेतनकोशे षट्कलपंक्तिगतं षट्कं, सप्तकलपंक्तिगतं चतुःकं संयोज्य १०, तदग्रे षट्कलगतं पञ्चकं सप्तकलगतदशक १० योगे १५ धरणं, तदग्रे षट्कलगतं एकं सप्तकलगतं षट्कं संयोज्य ७, अन्ते चैकः। एवं च एकं सर्वगुरु, दशरूपाणि त्रिगुरुकाणि, १५ रूपाणि द्विगुरूणि, सप्त एकगुरूणि, एकं सर्वलं, इति ३४ रूपाणि।

एवं नवकले उपरितनपंक्तिगत ४।१ योगे ५, पुनः १०।१० योगे २०, पुनः ६।१५ योगे २१, पुनः १।७ योगे ८ इति ५५ रूपाणि। इति मात्रामेरुः।

CC-0. IRORI, Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

मात्रामेरु-कर्त्तव्यता—

सिर अंके तसु सिर पर अंके, उवरल कोट्ठ पुरुहु निस्संके ।
मत्तामेरु अंक संचारि, बुज्झइ बुज्झइ जन दुइ चारि ॥

[प्राकृतपैङ्गलम् परि० १, पद्य ४७]

दुई दुई कोठा सरि लिहहु, पढम अंक तसु अंत ।
तसु आईहि पुणु एक्कु सउ, पढमे बे बि मिलंत ॥

२. S	१	१							२
३. IS	२	१							३
४. SS	१	३	१						५
५. ISS	३	४	१						८
६. SSS	१	६	५	१					१३
७. ISSS	४	१०	६	१					२१
८. SSSS	१	१०	१५	७	१				३४
९. ISSSS	५	२०	२१	८	१				५५
१०. SSSSS	१	१५	३५	२८	९	१			८९
११. ISSSSS	६	३५	५६	३६	१०	१			१४४
१२. SSSSSS	१	२१	७०	८४	४५	११	१		२३३
१३. ISSSSSS	७	५६	१२६	१२०	५५	१२	१		३७७
१४. SSSSSSS	१	२८	१२६	२१०	१६५	६६	१३	१	६१०
१५. ISSSSSSS	८	८४	२५२	३३०	२२०	७८	१४	१	९८७

अयुग्पङ्क्तेः पूर्वभागे एकाङ्कं दद्यात्, समकोष्ठकपङ्क्तिद्वयमध्ये प्रथमपंक्ते आदिमकोष्ठे इत्यर्थः । समकोष्ठकपङ्क्तिद्वयमध्ये द्वितीयपङ्क्तेराद्यकोष्ठे पूर्वयुग्माङ्कं दद्यात् ।

CC-0. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

एककलो लघुरेव । द्विकले २ रूपे–एक गुरु, एक लघु इति । त्रिकले त्रीणि रूपाणि–द्वे रूपे एकं गुरुके, एक सर्वलघुरूपम् । चतुःकले ५ रूपाणि–एकं सर्वगुरुकं, त्रीणि एकगुरूणि, एकं सर्वलघु । पञ्चकले ८ रूपाणि–रूपत्रयं द्विगुरुकं, रूपचतुष्टयं एकगुरुकं, एकं सर्वलघु ।

अथ मात्रासूचीमेरुः

अक्खर संखे कोट्ठ करु, आइ अंत पढमंक ।
सिर दुइ अंके अवर भरु, सूई मेरु णिस्संक ॥

[प्राकृतपैङ्गलम् परि. १; पद्य ४४]

१. ।	०	१	१						
२. ऽ	१गु	१ल	२						
३. । ऽ	० ३	२गु	१ल	३					
४. ऽ ऽ	१ ५	३ गु.	१ल	५					
५. ।ऽऽ	० ८	३ द्वि.गु	४ गु१	१	८				
६. ऽऽऽ	१ १३	६ द्विगु १३	५ गु१	१	१३				
७. ।ऽऽऽ	० २१	४	१०	६	१	२१			
८. ऽऽऽऽ	१ ३४	१०	१५	७	१	३४			
९. ।ऽऽऽऽ	० ५५	५	२०	२१	८	१	५५		
१०. ऽऽऽऽऽ	१ ८९	२१	३५	२३	९	१	८९		
११. ।ऽऽऽऽऽ	० १४४	६	३५	५६	३६	१०	१	१४४	
१२. ऽऽऽऽऽऽ	१ २३३	२१	७०	८४	४५	११	१	२३३	
१३. ।ऽऽऽऽऽऽ	० ३७७	७	५६	१२६	१२०	५५	१२	१	३७७
१४. ऽऽऽऽऽऽऽ	२८ ६१०	१२६	२१०	१६५	६६	१३	१	६१०	

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

मात्रासूचीमेरु सेसनागगरुरसंवादे जानीयात् ३०००२७७० ।

एककलस्य एकं रूपं–सर्वलघु तदेव । द्विकलस्य द्वे रूपे–एकं गुरु ऽ रूपं, द्वितीयं ल-द्वयम् । त्रिकलस्य रूपाणि ३, द्वे एकगुरुके, एकं त्रिलघुकम् । चतुःकले–एकं सर्वगुरु, त्रीणि द्विगुरूणि, एकं सर्वलं एवं ५ । पञ्चकले च त्रीणि द्विगुरूणि, चत्वारि एकगुरूणि, एकं सर्वलं एवं ८ । षट्कले–एकं सर्वगुरुरूपं, षट् रूपाणि द्विगुरूणि, पंचरूपाणि एकगुरूणि, एकं सर्वलं, एवं १३ । सप्तकले–चत्वारि त्रि-गुरूणि, दश द्विगुरूणि, षट् एकगुरूणि, एकं सर्वलं, एवं सर्वाणि २१ । अष्टकले–एकं सर्वगुरु, दश त्रिगुरूणि, १५ द्विगुरूणि, सप्त एकगुरूणि, एकं सर्व लं, एवं सर्वाणि ३४ ।

❝१०	९	८	७	६	५	४	३	२	१
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१

अत्र '१० एकं दश' इति । ततः पुनर्दशानां नवतिर्गुणने ९०, तत्र द्वाभ्यां भागे ४५, ततः ४५ अष्टगुणे ३६०, तत्र ३ भागे लब्धं १२० तेषां सप्तगुणत्वे ८४०, तत्र ४ भागे लब्धं २१०, तेषां षड्गुणत्वे १२६०, तत्र पञ्चभिर्भागे लब्धं २५२, तेषां पञ्चगुणत्वे १२६० लब्धं, तत्र षड्भिर्भागे २१०, तेषां चतुर्गुणत्वे ८४०, सप्त-भिर्भागे लब्धं १२०, तेषां त्रिगुणत्वे ३६०, तत्र ८ भागे लब्धं ४५, तेषां द्विगुणत्वे ९०, तत्र ९ भागे लब्धं १०, तत्राप्येकगुणने तदेव १०, तत्र एकेन भागे लब्धं १। एवं मेर्वङ्काः सिद्धाः १।१०।४५।१२०।२१०।२५२।२१०।१२०।४५।१०।१ इति ।❞

इति मात्रामेरु-प्रकरणम् ।

❝–❞ चिह्नान्तर्गतोऽयमंशः वस्तुतस्तु वर्णमेरुप्रकरणे पत्राङ्क ३४५ स्थ-वर्णमेरुचित्रेऽन्तिम-कोष्ठेन सम्बद्धोऽस्ति ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

मात्रापताका-प्रकरणम्

अथ मात्रापताका—

दत्त्वोद्दिष्टवदङ्कान् वामावर्तेन लोपयेदन्त्ये ।
अवशिष्टो वै योऽङ्कस्ततोऽभवत् पङ्क्तिसञ्चारः [॥६७॥]

अत्र उद्दिष्टाङ्काः १।२।३।५।८ इत्यादयः प्रागुक्तास्तेषु द्विकापेक्षया वामस्थ एकः तयोर्योगे ३ इति त्रिके पंक्तित्यागः, द्विकाधस्त्रिकः तदधः ४, तदधः ६, तदधः ७, तदधः ९ । पुनः, उद्दिष्टाङ्कः ५ द्विकत्रिकयोर्योगे जातः, तदधः ८ उद्दिष्टाङ्कस्तस्य पंक्तित्यागः । पञ्चकाधःस्थितेः तदधोऽधः १०।११।१२; पुनः पंक्तौ १३, एवं षट्कलस्य पताका । तस्यां त्रिक-पचञ्कयो एकस्य चतुःकस्य उद्दिष्टे लोपात्—अदर्शनात् त्रिषु गुरुषु प्रथमरूपस्थेषु एकस्यैव लोपः । एतावता २।३।४।६।७।९ रूपाणि द्विगुरूणि, पञ्चकादनन्तर उद्दिष्टे ६।७ अङ्कयोर्लोपात् द्विगुरुलोपेन जातानि ५।८।१०।११।१२ रूपाणि एकगुरूणि इत्यर्थः, एकं १३ सर्वलघुरूपम् । एवं सर्वत्र पताका प्रागेव न्यासेन दर्शिता—उदाहृता दशमात्रिकस्य ८९ पूर्णरूपैः ।

चतुःकले न्यासः

१	२	५
	३	
	४	

पञ्चकलपताका

१	२	५	८
	४	३	
		६	
		७	

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

विषमकले पञ्चकलस्य अष्टरूपाणि । तत्र १।२।४ रूपाणि द्विगुरूणि, ५।३।६।७ रूपाणि त्रिकस्य एकस्य लोपात् एकगुरुलोपेन एकगुरुकानि ।

चतु:कले एकं सर्वगुरुकं, २।३।४ रूपाणि एकलोपात् एकगुरूणि, पञ्चमं सर्वलम् । इति पताकाकरणम् ।

समाङ्कमात्रायां, विषमे तु लोपं प्राप्तोऽङ्कः परोद्दिष्टाङ्काधः स्थाप्य एकलोपे । सप्तकले तत एव लुप्तस्त्रिकः पञ्चकाधः त्रिकाधः, परेपि षडाद्याः सप्तदशान्ता अष्टकषोडशवर्जा उद्दिष्टद्विकाधः ४।६ इत्यङ्कद्वयमेव त्रिगुरुक-एकलघुरूपज्ञापकम् । उद्दिष्टपञ्चकाधः ३।६।७।१० इत्यादीनि रूपाणि द्विगुरुक-त्रिलघुरूपाणि । पुनः त्रयोदशोद्दिष्टाङ्काधः ८।१६।१८।१९।२० एकगुरु-पञ्चलघुरूपाणि । एकं २१ रूपं सर्वलघुकम् ।

पञ्चकलेपि १।२।४ द्विगुरु-एकलघूनि, ५।३।६।७ एकगुरु-त्रिलघूनि, ८ सर्वलम् ।

मात्रापताका

उद्दिट्ठा सरि अंका थिप्पहु, वामावत्ते परलइ लुप्पहु ।
एक लोपे इक गुरु जाण, दुइ तिणि लोपे दुइ तिणि जाण ।
मत्तपताका पिंगल गाव, जे पाइअ तापर हि मेलाव ।।

[प्राकृतपैङ्गलम् परि. १, पद्य ४८]

चतु:कले ५ भेद

१	२	५
	३	
	४	

द्वि–त्रि–चतुर्थानि एकगुरूणि

पञ्चकले ८ भेद

१	२	५	८
	४	३	
		६	
		७	

१।२।४, रूपद्वयं द्विगुरु

५।३।६।७ एकगुरु

अष्टमं सर्वलघु

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

षट्कले पताका

१	२	५	१३
	३	८	
	४	१०	
	६	११	
	७	१२	
	९		

षट्कले १ एकं सर्वगुरु

२।३।४।६।७।९, द्विगुरूणि

पञ्चाष्टदशादीनि ५।८।१०।११।१२। एकगुरूणि

त्रयोदशं सर्वलघु

सप्तकलपताका

१	२	५	१३	२१
	४	३	८	
	९	६	१६	
		७	१८	
		१०	१९	
		११	२०	
		१२		
		१४		
		१५		
		१७		

सप्तकले १।२।४।९ रूपाणि त्रिगुरूणि।

५।३।६।७।१०।११।१२।१४।१५।१७, रूपाणि द्विगुरूणि।

१३।८।१६।१८।१९।२० रूपाणि एक-गुरूणि।

२१ एकं सर्वलघुरूपम्।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१, २, ३, ५, ८, १३, २१, ३४, ५५, ८९

१	२	५	१३	३४	८९
	३	८	२१	५५	
	४	१०	२६	६८	
	६	११	२९	७४	
	७	१२	३१	८१	
	९	१६	३२	८४	
	१४	१८	३३	८६	
	१५	१९	४२	८७	
	१७	२०	४७	८८	
	२२	२३	५०		
	३५	२४	५२		
	३६	२५	५३		
	३८	२७	५४		
	४३	२८	६०		
	५६	३०	६३		
		३७	६५		
		३९	६६		
		४०	६७		
		४१	७१		
		४४	७३		
		४५	७४		
		४६	७५		
		४८	७८		
		४९	७९		
		१	८०		
		५७	८२		
		५८	८३		
		५९	८५		
		६१			
		६२			
		६४			
		६९			
		७०			
		[illegible]			
		७७			

दशमात्रिकस्य पताका

उद्दिष्टवदङ्का देयाः । १।२।३।५।८।१३।२१।५५।८९; अत्र १।२ मेलने ३ इति त्रिकस्य लोपोऽस्ति, ३।५ मेलने ८ तस्य लोपः । ८।१३ मेलने २१ तल्लोपः, २१।३४मेलने५५तल्लोपः। ते लुप्ताङ्का द्वितीयपङ्क्तौ प्रथमपंक्तेरधः स्थाप्याः ।

२।३।४।६ इत्यादि चतुर्गुरुकाणि रूपाणि ।

५।८।१०।११।१२ इत्यादीनि त्रिगुरुकाणि रूपाणि ।

१३।२१।२६।२९ इत्यादीनि द्विगुरूणि ३४।५५।६८।७४ इत्यादि एकगुरूणि, ८९ सर्वलम् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

इति मात्रापताका-प्रकरणम् ।

वर्णमर्कटी–प्रकरणम्

अथ वर्णमर्कटीकरणं यथा—

प्रथमायामाद्यादीन् दद्यादङ्कांश्च सर्वकोष्ठेषु ।
अपरस्यां तु द्विगुणान् अक्षरसंख्येषु तेष्वेव [॥ ७१ ॥]

प्रथमायां पङ्क्तौ १।२।३।४।५।६।७ इत्याद्यान् लिखेत् । अपरस्यां द्वितीय-पङ्क्तौ द्विगुणान् २।४।८।१६।३२।६४।१२८ इत्यादीन् लिखेत् । ऊर्ध्वाधः षट्-पङ्क्तयः कार्याः । प्रथमपंक्तिस्थैरङ्कैर्द्वितीयपंक्तिगान् अङ्कान् विभावयेत्–गुण-येत्, जातैरङ्कैश्चतुर्थपंक्तिकोशान् पूरयेत् । २।८।२४।६४।१६०।३८४।८९६ इत्यादि । ततः पञ्चमीं पंक्ति षष्ठीं च पंक्ति चतुर्थपंक्तिकोशाङ्कार्द्धेन १।४।१२। ३२।८०।१९२।४४८ ईदृशाङ्करूपेण पूरयेत् । ततः तुर्यपंक्तिस्थैः पञ्चमपंक्ति-स्थान् अङ्कान् सम्मील्य तृतीयपंक्तिस्थकोशान् [३।१२।३६।९६।२४०।५७६। १३४४।] पूरितान् कुर्यात् ।

एवमनया मर्कटचा वर्णवृत्तं १, तद्भेदाः २, तेषां मात्राः ३, वर्णाः ४, गुरवः ५, लघवः ६ षडपि पदार्था ज्ञायन्ते । प्रस्तारस्यैते प्रकारा बोध्याः। यन्त्रन्यासः प्रागुक्तः ।[1]

एवं एकाक्षरं वृत्तं तस्य भेदद्वयं, मात्रास्तिस्रः, वर्णद्वयं, एको गुरुः, एको लघुः । द्वयक्षरे वृत्ते चत्वारो भेदाः, द्वादशमात्राः, अष्टौ वर्णाः, चत्वारो गुरवस्तावंत एव लघवः । एवं सर्वत्र ज्ञेयम् ।

आदीति । पूरयेदिति । कुर्यादिति । वृत्तमिति । सूत्रचतुष्टयं गतार्थम् । [॥ ७२–७५ ॥]

अक्खरसंखे कोठा किज्जसु, छह पंती तहि अंका दिज्जसु ।
एक्कहि आइहि पढमा पंती, दूसरि दूणा बेवि णिभंती ॥
आइ वेवि गुण चौढ ठविज्जसु, ता अद्धे पंचमि छठ्ठमि किज्जसु ।
चौथी पंचइ दुहु मेलिज्जसु, तीसरि पंती अंका दिज्जसु ॥
वित्त पअ भेअ मत्त अरु वण्णह, पंचमि छट्ठमि लहु गुरु गण्णह ।

---

१. यन्त्रन्यासः ३६२ पत्राङ्के द्रष्टव्यः ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

गुरु लहु माला जुयलं, वेय वेय ठाविज्जें गुरु-लहुयं ।
तिस पिच्छे इम ठाविज्जइं, अद्ध गुरु अद्ध लहुयाइं ॥

वर्णमर्कटी

वृत्त	१	२	३	४	५	६	७
भेद	२	४	८	१६	३२	६४	१२८
मात्रा	३	१२	३६	९६	२४०	५७६	१३४४
वर्ण	२	८	२४	६४	१६०	३८४	८९६
लघु+	१	४	१२	३२	८०	१९२	४४८
गुरू	१	४	१२	३२	८०	१९२	४४८

+ अत्र लघुसंख्या वृत्तमौक्तिके षष्ठपंक्तावुक्ता युक्ता च ।

आदिपंक्तिस्थित एकः तेन द्वितीयपंक्तिगः द्विकः गुणितः जातं २, एवं तुर्यपंक्तिगः द्विकः सिद्धः। आदिपंक्तिगद्विकेन तदधः ४ गुण्यते जातं ८, एवं त्रिकेन अष्टगुणने २४, चतुष्केन षोडशगुणने ६४, पञ्चकेन ३२ गुणने १६०, षट्केन ६४ गुणने ३८४, सप्तकेन १२८ गुणने ८९६, जातं तुर्यपंक्तिभरणम् । तुर्यपंक्तिस्थाङ्कानां अर्द्धेन पञ्चमीं षष्ठीं च पंक्तिं पूरयेत् । तुर्यपंक्तिस्थं अङ्कं पञ्चमपंक्तिस्थाङ्केन योज्यते तदा तृतीयपंक्तिस्था अङ्का जायन्ते ।

इति वर्णमर्कटीकरणम् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

मात्रामर्कटी-प्रकरणम

अथ मात्रामर्कटीमाह—

कोष्ठान् मात्रासम्मितान् पंक्तिषट्कं,
कुर्यान्मात्रामर्कटीसिद्धिहेतोः ।
तेषु द्व्यादीनादिपङ्क्तावथाङ्कां-
स्त्यक्त्वाऽऽद्याङ्कं सर्वकोशेषु दद्यात् [।। ७६ ।।]

दद्यादङ्कान् पूर्वयुग्माङ्कतुल्यान्,
त्यक्त्वाऽऽद्याङ्कं पक्षपंक्तावथापि ।
पूर्वस्थाङ्कैर्भावयित्वा ततस्तां,
कुर्यात् पूर्णान्नेत्रपंक्तिस्थकोष्ठान् [।। ७७ ।।]

वृत्तं	१	२	३	४	५	६	७	८	९
भेदाः	१	२	३	५	८	१३	२१	३४	५५
मात्राः	१	४	९	२०	४०	७८	१४७	२७२	४९५
वर्णाः	१	३	७	१५	३०	५८	१०९	२०१	३६५
लघवः	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	२३५
गुरवः	०	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०

आद्याङ्कं एककं मुक्त्वा द्वितीयपङ्क्तौ द्व्यादीन्–द्व्यादिभिरेव भावयित्वा–गुणयित्वा, नेत्रशब्देन अत्र हरनेत्राणि त्रीणीति तृतीयां पंक्तिं पूरयेत्, तदङ्काः ४।९।२०।४०।७८।१४७।२७२।४९५ इयं तृतीया पंक्तिः ।

तुर्यां पंक्तिं विमुच्य पञ्चमीं पंक्ति वक्ति—प्रथमे द्वितीयमङ्कं, द्वितीयकोष्ठे च पञ्चमाङ्कमपि दत्त्वा बाणद्विगुणं तद्द्विगुणं नेत्र (३) तुर्य (४) योः दद्यात् । द्विकस्य द्विकेन गुणकारकरणापेक्षया प्रथमकोशः, द्विकाधस्तनः वर्णाङ्कापेक्षया त्रिकाधस्तनः कोशः, तत्र द्विकं ततोऽग्रे द्वितीयकोष्ठे पञ्चमाङ्कं दत्त्वा ततः नेत्र-(३) तुर्य (४) कोशयोः बाणाः–पञ्च, तद्द्विगुणं–दशकं, पुनः तद्द्विगुणं–विंशतिं २० दद्यात् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

एकीकृत्येति । २।५।१०।२० एतान् अङ्कान् सम्मील्य जाते ३७ अङ्के एकं अङ्कं दत्त्वा ३८ गुणकारापेक्षया पञ्चमपङ्क्तेः पञ्चमं कोशं पूर्णं कुर्यात् [।।७९।।]

त्यक्त्वा पञ्चममिति । २।१०।२०।३८ एवं ७० एकं तत्रापि दत्त्वा ७१ पञ्चमपंक्तेः षष्ठं कोशं पूरयेत् [।। ८० ।।]

कृत्वैक्यमिति । २।५।१०।२०।३८।७१ एषां ऐक्ये–मेलने जातं १४६ तत्र पञ्चदशाङ्कं १५ एकं च हित्वा षोडशोनत्वे १३० पञ्चमपंक्तेः सप्तमकोशं मुनि-(७) प्रमितं पूरयेत् [।।८१।।]

एवमिति । स्पष्टार्थम् [।।८२।।]

एवमिति । अनया रीत्या पञ्चमपंक्ति पूरयित्वा प्रथमं गुणकारापेक्षया प्रथमकोशे द्विकाधस्तने एकाङ्कं दत्वा पञ्चमपंक्तिस्थैरङ्कैः षष्ठीं पंक्ति पूरयेत् [।।८३।।]

एकीकृत्येति । पञ्चमपंक्तिस्थैरङ्कैः षष्ठपंक्तिस्थाङ्कानां मीलनेन चतुर्थ-पंक्ति पूर्णां कुर्यात् । यथा—१।२ योगे ३, पुनः ५।२ योगे ७, पुनः ५।१० मीलने १५, पुनः २०।१० मीलने ३० इत्यादि ज्ञेयम् [।।८४।।]

अथ मात्रामर्कटी

छह छह कोठा पंती पार, एक्क कला लिखि लेहु विचार ।
बीए आइहि पढमा पंती, दोसरि पुव्व जुअल निब्भंती ।।
पढम बेवि गुणि अंका लिज्जसु, छद्धइ पंती तिहिं भरि दिज्जसु ।
चौथी अंका पुव्व हि देय्यहु, तीसरि सिर पर तहि करि लेखहु ।।
तीसरि सम छह माले अंका, वांचे पंचमि भरहु निसंका ।
पंच इकट्ठहु ताहि समानहि, चौथी लिखहु लिखाअहु आनहि ।।

सोरठा

लिहि साअर परजन्त, इहि विहि कइ पिंगल ठिअउ ।
अंक भरण यह मत्त, पढम भेअ भणि भणि भरहु ।।

दोहा

वित्त भेअ गुरु लघु सहित, अक्खर कला कहन्त ।
पिंगलक इम क्करि कहिअ, जिह गइंद उरब्भंत ।।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

मात्रामर्कटी

१	२	३	४	५	६	७	८	९	वृ.
१	२	३	५	८	१३	२१	३४	५५	भे.
०	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	गु.
१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	२३५	ल.
१	३	७	१५	३०	५८	१०९	२०१	३६५	व.
१	४	९	२०	४०	७८	१४७	२७२	४९५	मा.

१ एकं तृतीयपंक्तिस्थं, द्विकं तुर्यपंक्तिस्थं एकीकृत्य पञ्चमपंक्तौ त्रिकः। एवं २।५ ऐक्ये ७, तथा ५।१० ऐक्ये १५, १०।२० ऐक्ये ३०, पुनः ३८।२० ऐक्ये ५८, पुनः ३८।७१ ऐक्ये १०९, पुनः ७१।१३० ऐक्ये २०१, पुनः तृतीयपंक्तिस्थ १३० तत्र तुर्यपंक्तिस्थ २३५ ऐक्ये ३६५; एवं पञ्चमीपंक्तिः पूरणीया।

द्वयोर्द्विगुणत्वे ४, त्रिकस्य त्रिगुणत्वे ९, चतुष्कस्य पञ्चगुणत्वे २०, पञ्चानां अष्टगुणत्वे ४०, त्रयोदशानां षड्गुणत्वे ७८, सप्तानां २१ गुणे १४७, अष्टानां ३४ गुणे २७२, नवानां ५५ गुणने ४९५ इति षष्ठी पंक्तिः। प्रथमद्वितीय-पंक्तिभ्यां निष्पन्ना।

चतुर्थीपंक्तिस्तृतीयपंक्तिसमा परं पूर्णाध एकः, ततः २। ५।१०।२०।३८। ७१।१३०। अथ तृतीयपंक्तिस्थ १३० तस्याधः तुर्यपङ्क्तौ २३५।

वृत्तं प्रभेदो मात्रा च, वर्णा लघुगुरू तथा।
एते षट् पंक्तितः पूर्णा—प्रस्तारस्य विभान्ति वै [॥ ८५ ॥]

अत एव लघूनां वर्णानां संख्याङ्काः पञ्चम्यां पङ्क्तौ न्यस्ताः। गुरवः षष्ठ्याम्। वर्णमर्कट्यां लघुन्यासः षष्ठपंक्तौ, गुरुन्यासः पञ्चमपङ्क्तौ वर्णेषु गुर्वादित्वात्। मात्रामर्कट्यां लघुसंख्या पञ्चम्यां युक्ता लघ्वादित्वात्। तत्रापि अष्टमकोष्ठे २३५ भरणं, अनुक्तमपि २।५।१०।२०।३८।७१।१३० एषां ऐक्ये २७६; तत्र ४० हीनकरणं, न्यासे ५ अङ्कादुपरि तिर्यक् १५ ततोप्युपरि पङ्क्तौ तिर्यक्कोशे ४० सद्भावात्। एवं शेषं २३६ ततोऽपि सप्तमकोशभरणवत् एकोनत्वे २३५ लघवो नवकलच्छन्दसि।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अत्र उद्दिष्टादिवत् सर्वे प्रत्ययाः चतुर्विंशतिर्ज्ञेयाः। प्रस्तार १, नष्ट २, उद्दिष्ट ३, लगक्रिया ४, संख्या ५, अध्वा ६, मेरुः ७, पताका ८, मर्कटी ९, समपाद १०, अर्धसमपाद ११, विषमपादता १२। एते वर्णमात्राभ्यां चतुर्विंशतिः। कौतुकहेतुः—

		वृत्तभेदाः			वृत्तभेदाः
१.	[एकाक्षरे]	२	१४.	[चतुर्दशाक्षरे]	१६,३८४
२.	[द्व्यक्षरे]	४	१५.	[पञ्चदशाक्षरे]	३२,७६८
३.	[त्र्यक्षरे]	८	१६.	[षोडशाक्षरे]	६५,५३६
४.	[चतुक्षरे]	१६	१७.	[सप्तदशाक्षरे]	१,३१,०७२
५.	[पञ्चाक्षरे]	३२	१८.	[अष्टादशाक्षरे]	२,६२,१४४
६.	[षडक्षरे]	६४	१९.	[एकोनविंशाक्षरे]	५,२४,२८८
७.	[सप्ताक्षरे]	१२८	२०.	[विंशाक्षरे]	१०,४८,५७६
८.	[अष्टाक्षरे]	२५६	२१.	[एकविंशाक्षरे]	२०,९७,१५२
९.	[नवाक्षरे]	५१२	२२.	[द्वाविंशाक्षरे]	४१,९४,३०४
१०.	[दशाक्षरे]	१,०२४	२३.	[त्रयोविंशाक्षरे]	८३,८८,६०८
११.	[एकादशाक्षरे]	२,०४८	२४.	[चतुर्विंशाक्षरे]	१,६७,७७,२१६
१२.	[दादशाक्षरे]	४,०९६	२५.	[पञ्चविंशाक्षरे]	३,३५,५४,४३२
१३.	[त्रयोदशाक्षरे]	८,१९२	२६.	[षड्विंशाक्षरे]	६,७१,०८,८६४

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

[वृत्तिकृत्प्रशस्तिः]

कोटयस्त्रयोदश-द्वाचत्वारिंशल्लक्षकाः नगाः ।
भूः सहस्राणि षड्विंशत्यग्रा सप्तशती पुनः ॥ १ ॥

प्रस्तारपिण्डसंख्येयं विधृता **वृत्तमौक्तिके** ।
बोधनात् साधनाल्लभ्या येषां नालस्यवश्यता ॥२॥

उद्दिष्टादिषु **वृत्तमौक्तिक**मिति व्याख्यातवान् श्वेतसिक्,
श्रीमेघाद्रिजयाख्यवाचकवरः प्रौढया तपाम्नायिकः ।
यत्सम्यग्विवृत्तं न वाऽनवगमान्मिथ्याधृतं सज्जनै-
स्तत्संशोध्य शुभं विधेयमिति मे विज्ञप्तिमुक्तालता ॥३॥

समित्यर्थशिवभू १७५५ वर्षे, प्रौढिरेषाऽभवच्छ्रिये ।
भान्वादिविजयाध्यायहेतुतः सिद्धिमाश्रिता ॥ ४ ॥

इति श्रीवृत्तमौक्तिकदुर्गमबोध

श्रीरस्तु । वाचकपाठकानाम् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रथम परिशिष्ट

टगणादि कला-वृत्तभेद-पारिभाषिक शब्द सङ्केत

१. टगण[1] ६ मात्रा, भेद १३—

१. SSS हर[2]
२. ।।SS शशि
३. ।SS। सूर्य[3]
४. S।।S शक्र[4]
५. ।।।।S शेष
६. ।S।S अहि
७. S।S। कमल[5]
८. ।।।S। धातृ[6]
९. SS।। कलि
१०. ।।S।। चन्द्र
११. ।S।।। ध्रुव
१२. S।।।। धर्म
१३. ।।।।।। शालि[7]

---

१. ट. ठ. ड. ढ. ण गणों की कलायें, प्रस्तार-भेद, नाम तथा पर्याय प्राकृतपैंगल, वाणीभूषण और वाग्वल्लभ में वृत्तमौक्तिक के अनुसार ही हैं किन्तु प्राकृतपैंगल में ट. ठ. ड ढ. ण के स्थान पर छ, प, च, त, द गण नाम भी स्वीकृत हैं। स्वयम्भूछन्द और कविदर्पण में टादि के स्थान पर छ. प. च. त. द और प. त. ट. च. क. स्वीकृत हैं। इन दोनों ग्रथों में केवल छः पांच, चार आदि कलाविधान ही दिए हैं किन्तु इनके प्रस्तार-भेद, नाम तथा पर्याय की सूची नहीं है। हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन में ष. प. च. त. द गण और प्रस्तार भेद दिये हैं किन्तु नामादि की सूची नहीं है।

२. वाणीभूषण और वाग्वल्लभ में हर के स्थान पर शिव है।

३. सूर्य के स्थान पर प्राकृतपैंगल में सूर, वाणीभूषण में दिनपति, और वाग्वल्लभ में दिनेश्वर है।

४. शक्र के स्थान पर वाणीभूषण में सुरपति और वाग्वल्लभ में सुरेश है।

५. कमल के स्थान पर वाणीभूषण और वाग्वल्लभ में सरोज है।

६. धातृ के स्थान पर प्राकृतपैंगल में ब्रह्मा और वाग्वल्लभ में धाता है।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

७. शालि के स्थान पर प्राकृतपैंगल, वाणीभूषण और वाग्वल्लभ में शालिकर है।

२. ठगण ५. मात्रा, भेद ८—

१. ।ऽऽ. इन्द्रासन, सुनरेन्द्र, अधिप, कुञ्जर पर्याय[1], रदन, मेघ, ऐरावत[2], तारापति ।[3]

२. ऽ।ऽ. सूर्य[4], वीणा, विराट्[5], मृगेन्द्र, अमृत, विहग, गरुड पर्याय[6], जोहल, यक्ष, भुजंगम[7], पक्षी

३. ।।।ऽ चाप

४. ऽऽ। हीर

५. ।।ऽ। शेखर

६. ।ऽ।। कुसुम

७. ऽ।।। अहिगण

८. ।।।।। पापगण

तथा प्रहरण[8] (आयुध) के विविध नाम पंचकल के वाचक हैं।

---

१. कुञ्जर के पर्यायवाची शब्दों में वृत्तमौक्तिक के मतानुसार 'गज' शब्द सम्मिलित नहीं है। 'गज' को चतुर्मात्रिक स्वीकार किया है।

२. वृत्तजातिसमुच्चय के अनुसार पञ्चमात्रिक ।ऽऽ ऐरावत के निम्न पर्याय और स्वीकृत हैं—सुरगज, सुरवारण, सुरहस्तिन्।

३. प्राकृतपैंगल के अनुसार पञ्चमात्रिक ।ऽऽ में गगन, झम्प और लम्प तथा वाग्वल्लभ में दन्तावल पयोददन्त भी स्वीकृत हैं।

४. सूर के स्थान पर प्राकृतपैंगल, वाणीभूषण और वाग्वल्लभ में 'सूर' है।

५. विराट् के स्थान पर प्राकृतपैंगल और वाणीभूषण में बिडाल है।

६. वृत्तजातिसमुच्चय में गरुडपर्यायों में निम्न शब्द और स्वीकृत हैं—पक्षिनाथ, विहगनाथ, विहगाधिपति, विहंगपति, सुपर्ण।

७. प्राकृतपैंगल, वाणीभूषण और वृत्तमौक्तिक में 'भुजंगम' को ऽ।ऽ पंचमात्रिक स्वीकार किया है जब कि वृत्तजातिसमुच्चय में 'भुजगेन्द्र, भोगिन्, विषधर' को ।।।ऽ पंचमात्रिक माना है।

८. वृत्तमौक्तिककार ने प्रहरण (आयुधों) के विविध नाम पञ्चकल के वाचक माने हैं, ऐसा मानते हुए भी 'प्रहरण' और 'वज्र' को ।।ऽ चतुष्कल में, 'पञ्चशर' को ।। चतुष्कलवाची, 'तोमर' को ।ऽ त्रिमात्रिक और 'बाण' को ।।।। चतुष्कलवाची और एकमात्रिक भी स्वीकार किया है। वृत्तजातिसमुच्चयकार ने तोमर, प्रहरण और बाण को पंचकलवाची ही माना है। साथ ही प्रहरण के नामों की निम्नलिखित तालिका भी दी है—अशनि, असि, आयुध, कणक, करवाल, क्षुरप्र, चाप, तोमर, धनुस्, पट्टिश, प्रालम्ब, बाण, बाणासन, मुद्गर, रथाङ्ग, शक्तिदण्ड, शर, शरासन, शिलीमुख।

वृत्तजातिसमुच्चय में पुरोहित, पुरोधस् और मन्त्रिन्' शब्दों को चतुष्कल एवं पञ्चकल वाची स्वीकार किया है। वृत्तमौक्तिक, प्राकृतपैंगल और वाणीभूषण में इनका कोई भी उल्लेख नहीं है।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

३. डगण ४. मात्रा, ५ भेद—

१. ऽऽ (गुरुयुग्म)[1] कर्ण, सुरतलता गुरुयुगल, कर्णसमान, रसिक, रसलग्न, सुमतिलम्बित, मनोहर[2], लहलहित[3]

२. ।।ऽ (गुर्वन्त) करतल, कर[4], पाणि, कमल, हस्त, प्रहरण, भुजदण्ड, बाहु, रत्न, वज्र. गजाभरण, भुजाभरण

३. ।ऽ। (गुरुमध्य) पयोधर[5], भूपति[6], नायक, गजपति, नरेन्द्र, कुच वाचक शब्द, गोपाल, रज्जु, पवन

४. ऽ।। (आदिगुरु) वसुचरण, दहन, पितामह, तात, पद-पर्याय, गण्ड, बलभद्र, जङ्घायुगल, रति[7]

५. ।।।। (सर्वलघु) विप्र, द्विज, जाति, शिखर, पंचशर, बाण, द्विजवर

तथा गज, रथ[8], तुरंगम और पदाति ये सब चतुष्कल के वाचक हैं।

---

१. चतुर्मात्रिक ऽऽ के और ।।।। के पर्याय वाणीभूषण में प्राप्त नहीं है।

२. मनोहर के स्थान पर प्राकृतपैंगल में 'मनहरण' है।

३ प्राकृतपैंगल में ऽऽ चतुर्मात्रिक में सुवर्ण अधिक है।

४. 'करपल्लव' को भी ।।ऽ चतुर्मात्रिक, वृत्तजातिसमुच्चयकार ने माना है। वाग्वल्लभकार ने अलंकृति भी स्वीकार किया है।

५. वृत्तजातिसमुच्चय में पयोधर के वाची 'स्तन, स्तनभार' भी स्वीकृत हैं; जब कि स्तनादि का प्रयोग वृत्तमौक्तिककार ने कुचवाची शब्दों में किया है। वाग्वल्लभ में पयोधृत्, पयोद, जलद, जलधर, वारिद भी स्वीकृत हैं।

६. भूपति के पर्यायों में वृत्तजातिसमुच्चय में नराधिप, पार्थिव, भूमिनाथ, राजन् और सामन्त भी स्वीकृत हैं। प्राकृतपैंगल में नरपति, उद्गतनायक अधिक है। वाणीभूषण में मनुजपति अधिक है। प्रा० पैं० और वाणीभूषण में अश्वपति और चक्रवर्ती अधिक है; जब कि प्रा. पैं., वृत्तजातिसमुच्चय और वाणीभूषण द्वारा समर्थित वसुधाधिप अधिक है। वाग्वल्लभ में मनुजपति, चक्राधीश, तुरगपति और वर्ष अधिक हैं।

७. प्राकृतपैंगल में चतुर्मात्रिक ऽ।। में नूपुर भी स्वीकृत है; जब कि प्राकृतपैंगल, वृत्तमौक्तिकादि में द्विमात्रिक ऽ में स्वीकृत एवं प्रयुक्त हैं। वाग्वल्लभ में दहन, बलभद्र, जङ्घायुगल और रति शब्द हैं एवं पिता, हलायुध और पावक अधिक हैं।

८. वृत्तजातिसमुच्चय में चतुष्कलवाची गजादि के निम्नपर्याय स्वीकृत हैं—करि, कुञ्जर, गज, मातंग, वारण, वारणेन्द्र, हस्तिन्, तुरग, हरि, योध, स्यन्दन। जब कि वृत्तमौक्तिककार ने गजातिरिक्त कुञ्जर पर्यायों को ।ऽऽ पंचमात्रिक स्वीकार किया है।

T CC-0. BORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

४. ढगण ३. मात्रा भेद, ३—

१. ।ऽ ध्वज[1], चिह्न, चिर, चिरालय, तोमर, पत्र, चूतमाला[2], रस, वास, पवन, वलय, तुम्बुरु,

२. ऽ। करताल, पटह[3], ताल, सुरपति, आनन्द, तूर्य, निर्वाण, सागर[4]

३. ।।। भाव[5], रस, ताण्डव और भामिनी के पर्यायवाची शब्द

५. णगण २ मात्रा, भेद २—

१. ऽ नूपुर, रसना, चामर, फणि, मुग्धाभरण, कनक, कुण्डल, वक्र, मानस, वलय, कंकण, हारावली, ताटंक, हार, केयूर[6]

२. ।। सुप्रिय, परम[7]

एक लघु के नाम निम्न प्रकार हैं—

शर, मेरु, दण्ड, कनक, शब्द, रूप, रस, गन्ध, काहल, पुप्प, शंख, तथा बाण[8]।

---

१. वृत्तजातिसमुच्चय में ।ऽ त्रिकलवाची निम्न शब्द और अधिक हैं—कदलिका, ध्वजपट, ध्वजपताका, ध्वजाग्र, पताका, वैजयन्ती। वाग्वल्लभ में पटच्छदन अधिक है।

२. वाणीभूषण में चूतमाला के स्थान पर चूडमाला है। वाग्वल्लभ में चूतभवा, स्रक्, आम्रमाला है।

३. वृत्तमौक्तिककार ने तूर्य और पटह को ऽ। त्रिकलवाची माना है, जब कि वृत्ताजातिसमुच्चयकार ने तूर्य और पटह को ।।। त्रिकलवाची माना है।

४. प्राकृतपैंगल में 'छन्द' ऽ। त्रिकलवाची अधिक है। वाग्वल्लभकार ने सखा, अयः, आयः अधिक स्वीकार किये हैं और सुरपति के स्थान पर स्वःपति तथा आनन्द के स्थान पर नन्द पर्याय स्वीकार किये हैं।

५. वृत्तमौक्तिक में भाव और रस ।।। त्रिकलवाची स्वीकृत हैं, और रस। एककलवाची भी। जब कि वृत्ताजातिसमुच्चय में ।। भाव और रस।। द्विमात्रिक स्वीकृत हैं। वाग्वल्लभ में ।।। में कुलभाविनी भी स्वीकृत है।

६. वृत्ताजातिसमुच्चय में ऽ द्विमात्रिक में निम्न शब्द भी स्वीकृत हैं—कटक, पद्मराग, भूषण, मणि, मरकत, मुक्ता, मौक्तिक, रत्न, विभूषण, हारलता। वाणीभूषण में 'मञ्जरी' भी स्वीकृत है। वाग्वल्लभ में अङ्गद, मञ्जीर, कटक भी स्वीकृत हैं।

७. प्राकृतपैंगल में सुप्रिय, परम के स्थान पर निजप्रिय, परमप्रिय हैं।

८. लघुवाचक। शब्दों में प्राकृतपैंगल में 'लता' और वाणीभूषण एवं वाग्वल्लभ में स्पर्श भी स्वीकृत है।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

इस पद्धति से मगणादि ८ गणों के पर्याय निम्नलिखित होते हैं--

१. मगण – हर

२. यगण – इन्द्रासन, सुनरेन्द्र, अधिप, कुञ्जरपर्याय, रदन, मेघ, ऐरावत, तारापति ।

३. रगण – सूर्य, वीणा, विराट्, मृगेन्द्र, अमृत, विहग, गरुड-पर्याय, जोहल, यक्ष, भुजंगम ।

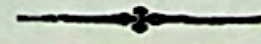
४. सगण – करतल, कर, पाणि, कमल, हस्त, प्रहरण, भुजदण्ड, बाहु, रत्न, वज्र, गजाभरण, भुजाभरण

५. तगण – हीर ।

६. जगण – पयोधर, भूपति, नायक, गजपति, नरेन्द्र, कुच वाचक शब्द, गोपाल, रज्जु, पवन ।

७. भगण – वसुचरण, दहन, पितामह, तात, पद-पर्याय, गण्ड, बलभद्र, जंघा-युगल, रति ।

८. नगण – भाव, रस, ताण्डव और भाभिनी के पर्यायवाची शब्द ।



CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

द्वितीय परिशिष्ट

(क) मात्रिक-छन्दों का अकारानुक्रम

* चिह्नित छन्द गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य और षटपद के भेद हैं।

(टि)—टिप्पणी में उद्धृत छन्द।

CC-0. ROPL. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy



CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

(ख) वर्णिक-छन्दों का अकारानुक्रम

संकेत– ( ) वृत्तमौक्तिक में दिया हुआ नाम-भेद, अ=अर्द्धसम छन्द, द=दण्डक छन्द, प्र=प्रकीर्णक छन्द, वि=विषमवृत्त, वै=वैतालीय वृत्त, टि=टिप्पणी में उद्धृत छन्द ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

(ग.) विरुदावली छन्दों का अकारानुक्रम

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तृतीय परिशिष्ट

(क.) पद्यानुक्रम

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

द

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

(ख.) उदाहरण-पद्यानुक्रम

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

चतुर्थ परिशिष्ट

क. मात्रिक छन्दों के लक्षण एवं नाम-भेद

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची—

	ग्रन्थ-नाम	ग्रन्थकार
१.	वृत्तमौक्तिक	चन्द्रशेखर भट्ट
२.	छन्दःसूत्र	पिङ्गल
३.	नाटचशास्त्र	आचार्य भरत
४.	बृहत्संहिता	वराहमिहिर
५.	स्वयम्भूछन्द	स्वयम्भू
६.	कविदर्पण	अज्ञात
७.	वृत्तजातिसमुच्चय	कवि विरहाङ्क
८.	सुवृत्ततिलक	क्षेमेन्द्र
६.	प्राकृतपैङ्गल	हरिहर(?)
१०.	छन्दोनुशासन	हेमचन्द्राचार्य
११.	छन्दोनुशासन-स्वोपज्ञटीका	,,
१२.	वाणीभूषण	दामोदर
१३.	वृत्तरत्नाकर	केदारभट्ट
१४.	वृत्तरत्नाकर-नारायणीटीका	नारायणभट्ट
१५.	छन्दोमञ्जरी	गंगादास
१६.	वृत्तमुक्तावली	श्रीकृष्णभट्ट
१७.	वाग्वल्लभ	दुःखभञ्जन
१८.	जयदेवच्छन्दः	जयदेव
१६.	छन्दोनुशासन	जयकीर्ति
२०.	रत्नमञ्जूषा	अज्ञात जैन कवि
२१.	गाथालक्षण	नन्दिताढच
२२.	छन्दोविचिति	जनाश्रय

संकेत— **छन्दनाम**=वृत्तमौक्तिक के क्रमानुसार हैं। **मात्रासंख्या**=छन्द के प्रत्येक चरण की मात्रायें। **लक्षण**=ट=६ मात्रा, ठ=५ मात्रा, ड=४ मात्रा, ढ=३ मात्रा, ण=२ मात्रा, ग=दो मात्रा, ल=१ मात्रा। **सन्दर्भ-गन्थ-सङ्केताङ्क**=ऊपर सूचित सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची की क्रम-सूचक संख्या है। छन्द-नाम एवं लक्षण के आगे के अंक यह सूचित करते हैं कि इन-इन अंकों के ग्रन्थों में भी यह छन्द इसी नाम से स्वीकृत हैं और नाम-भेद के आगे के अंक यह सूचित करते हैं कि इन-इन ग्रन्थों में इसी लक्षण का छन्द इस नाम से प्रचलित है। जिन छन्दों का इन ग्रन्थों में उल्लेख नहीं है उनके अंक यहाँ नहीं दिए गए हैं।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

छन्द-नाम	मात्रा-संख्या एवं लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
गाथा	[१२, १८, १२ १५; ड- ७, ग; इसमें छठा 'ड' जगण होता है या चार लघु होते हैं। इसके विषम गणों में अर्थात् १, ३, ५, ७ 'ड' में जगण निषिद्ध है। चतुर्थ चरण में छठा 'ड' केवल एक लघु होता है।]	१, ५, ६. ७, ६, १०, १२, १४, १६, १७, २१; आर्या- १०, १४, १७, १८, १६, २०, २२.
विगाथा	[१२, १५, १२, १८]	१, ६, १२, १४, १६, १७, २१; उद्गीति- ५, ६, १०, १४, १७, १८, १६, २१.
गाहू	[१२, १५, १२, १५]	१, ६, १४; गाथिका- १६; गाह- २१; उपगीति- ५, ६, ७, १०, १२, १४, १७, १८, १६, २१.
उद्गाथा	[१२, १८, १२, १८]	१, ६, १४, १६, १७. २१; गीति- ५, ६, ७, १०, १२, १४, १७, १८, १६, २०, २१, २२.
गाहिनी	[१२, १८, १२, २०]	१, ६, १२. १४, २१; गाथिनी- १६, १७, ललितावल्गुगीति- १४.
सिंहिनी	[१२, २०, १२, १८]	१, ६, १२, १४, १६, १७; ललितावल्गु-गीति- १४.
स्कन्धकम्	[१२, २०, १२, २०]	१, ५, ६, ७, ६, १०, १२, १४, १६, १७, २१; आर्यागीति- १४, १७, १८, १६, २०
दोहा	[१३, ११, १३, ११; प्रथम और तृतीय चरण में ट, ड, ढ और द्वितीय तथा चतुर्थ चरण में ट, ड, ल; अर्द्धसम.]	१, ६. १०, १२, १४, १७; दोहक- ६; द्विपथा- १६; द्विपथ्या- १७; द्विपथक- ७; एवं ५, २१ के अनुसार मात्राएं- १४. १२, १४, १२ हैं।
रसिका	[११; षट्पदी, ड, ड, ढ.]	१. ६. १७; रसिक- १६; उत्कृष्टा- १४; सुललित- १७; सुललितमति- १२.
रोला	[२४, चतुष्पदी]	१, ६, १२, १४, १६, १७.
गन्धानक	[१७, १८, १७, १८ वर्ण; अर्द्धसम]	१, ६, १२, १६; गन्धा-१४; १७ के अनुसार १७ वर्ण २० मात्रा. १८ वर्ण २४ मात्राएँ होती हैं।
चौपैया	[३०; चतुष्पदी; षोडशपदी समग्र मात्रा ४८०; ड-७, ग.]	१, ६, १२, १७; चतुष्पदा- १४; चतुष्पदी- १६.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

छन्द-नाम	मात्रा-संख्या एवं लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
घत्ता	[३१; द्विपदी; ड-७, ढ; 'ढ' त्रिलघुक होता है ।]	१, ६, ६, १२, १४, १६, १७; ६ के अनुसार षट्पदी है, लक्षण भिन्न-भिन्न हैं– १२, ८, १३ । ८, ८, ११ । १०, ८, ११ । १२, ८, ११। १२, ८, १२ । १०, ८, १२। १०, ८, १३ । १०, ८ १४। १०, ८, २२। ५ के अनुसार चतुष्पदी, लक्षण– ६, १४, ६, १४। १२, १२, १२, १२ । १६, १६, १६, १६ है।
घत्तानन्द	[३१; ट. ड. ड. ड. ठ. ड. ड.]	१, ६, १२, १४, १७.
काव्यम्	[२४; चतुष्पदी; ट. ड. ड. ड. ट; तीसरा 'ड' जगण हो या चार लघु हों ।]	१, ६, १२, १४, १६; वस्तुवदन– ६.
उल्लालम्	[२८; चतुष्पदी; ड. ड. ड. ढ. ट. ड. ढ]	१, ६, १२, १४, १६; कर्पूर– १०.
षट्पद	[२४, २४, २४, २४, २८, २८, मिश्रित षट्पदी; ट. ड. ड. ड. ड. ण; दो चरण उल्लाल के लक्षणानुसार]	१, ६, ६, १२, १४, १६, १७; वस्तुक– २१
पज्झटिका	[१६; चतुष्पदी; ड-४; चौथा 'ड' जगण होता है ।]	१, ६, १२, १४, १६, १७; पद्धटिका– ५, १०, २१; पद्धतिका– ६.
अडिल्ला	[१६; चतुष्पदी; ड-४; इसमें जगण वर्जित है और चरण के अन्त में दो लघु होने चाहिए]	१, ५, ६, ७, ६, १०; अरिल्ला– १२; अरिल्लम्– १६, १७; अलिला– १७; अलिल्लिह– १४.
पादाकुलकम्	[१६; चतुष्पदी; गणनियम-रहित]	१, ५, ६, ६, १२, १४, १६, १७, १८, १६, २२; १० के अनुसार १२ मात्रा चतुष्पदी होती है ।
चौबोला	[१६, १४, १६, १४ अ०स०]	१, ६; चतुर्वचनं– १६.
रड्डा	[१५, १२, १५, ११, १५, दोहा के चार चरण; नवपदी; प्रथम चरण में 'ढ. ड. ड. ड.' अन्तिम 'ड' जगण हो या चार	१, ५, ६, ७, ६, १०, १४, १७; नवपदं– ६, १२, १४, १७.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

छन्द-नाम	मात्रा-संख्या एवं लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
	लघु हों; द्वितीय चरण में 'ड. ड. ड.' तीसरा 'ड' चार लघुरूप में हो; तृतीय और पञ्चम चरण में 'ढ. ड. ड. ड.' अन्त में दो लघु आवश्यक हैं; चतुर्थ चरण में 'ड. ड. ढ' और अन्तिम चार चरण दोहा-लक्षणानुसार होते हैं।]	
करभी रड्डा	[१३, ११, १३, ११. १३, दोहा]	१, ७, ६; कलभी– १४.
नन्दा रड्डा	[१४, ११, १४, ११, १४, दोहा]	१, ६, १४; मोदनिका– ७.
मोहिनी रड्डा	[१६, ११, १६, ११, १६, दोहा]	१, ६, १४.
चारुसेना रड्डा	[१५, ११, १५. ११, १५, दोहा]	१, ६, १४; चारुनेत्रा– ७.
भद्रा रड्डा	[१५, १२, १५. १२, १५, दोहा]	१, ६, १४.
राजसेना रड्डा	[१५, १२, १५, ११, १५, दोहा]	१, ६, १४.
तालंकिनी रड्डा	[१६. १२, १६ ११, १६, दोहा]	१, ६, १४; राहुसेनिका– ७.
पद्मावती	[३२; चतुष्पदी; ड- ८; ये 'ड' SS, IIS, SII, IIII रूप में होने चाहियें। जगण का निषेध है।]	१, ६, १२, १४, १६; पद्मावतिका– १७.
कुण्डलिका	[दोहा-काव्य-मिश्रित]	१, ६, १२, १४, १६, १७; प्राकृतपिङ्गलानुसार दोहा-उल्लाला-मिश्रित.
गगनाङ्गणम्	[२५ मात्रा, २० वर्ण; चतुष्पदी; ट. ड. ड. ड. ड. ल. ग.]	१, १२, १७; गगनाङ्ग–६, १६; मदनान्तक– १४.
द्विपदी	[२८; ट. ड. ड. ड. ड. ग.]	१, ६, १२, १४, १६; ५ के अनुसार २६ मात्रा द्विपदी; एवं ६, १०, १६, २१ के अनुसार २८ मात्रा चतुष्पदी; द्विदला– १७; भाण्डीरक्रीडनस्तोत्र की टीका में १२ मात्रा, चतुष्पदी माना है।
झुल्लणा	[३७; द्विपदी; गणनियमरहित]	१; झुल्लन– ६, १६.
खञ्जा	[४१; द्विपदी; ड- ६, रगण; 'ड' चार लघ्वात्मक हों]	१, ६, १२, १४, १६; खञ्जिका– १७; खंजक– ५, ६; १० के अनुसार २३ मात्रा चतुष्पदी है।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

छन्द-नाम	मात्रा-संख्या एवं लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
शिखा	[विषम द्विपदी; प्रथम पद में २८ मात्रा, २७ वर्ण; ड- ६, जगण; द्वितीय पद में ३२ मात्रा, ३१ वर्ण; ड- ७, जगण; दोनों पदों में 'ड' चार लघु-रूप में हों।	१, ९, १२, १४, १६, १७.
माला	[विषम द्विपदी; प्रथम पद में ४५ मात्रा, ४१ वर्ण; ड- ९, रगण, गुरुद्वय; द्वितीय पद में गाथा छन्द का तृतीय और चतुर्थ चरण अर्थात् २७ मात्रा]	१, ९, १२, १४, १६, १७.
चुलिआला	[१३, १६, १३, १६; अर्द्धसम]	१, ९, १२, १६, १७; चूलिका–१४.
सोरठा	[११, १३, ११, १३ अर्द्धसम]	१, ९, १२, १७; सौराष्ट्र– १६, १७; सौराष्ट्रा– १४; सौराष्ट्री– १७.
हाकलि	[१४; चतुष्पदी; प्रथम-द्वितीय चरण में ११-११ वर्ण और तृतीय-चतुर्थ चरण में १०–१० वर्ण; सगण या भगण दो गण हों और नगण तथा लघु गुरु हों]	१, ९, १२, १६, १७; काहलि– १४.
मधुभार	[८; चतुष्पदी; ड, जगण]	१, ९, १२, १६; मधुभारतम्– १४; वसुकला– १७; तालवनचरित की टीका में 'कलगीत'
आभीर	[११; चतुष्पदी; चरण के अन्त में जगण अपेक्षित है।]	१, ९, १२, १४, १६, १७; यमलार्जुन-भञ्जनस्तोत्र की टीका में 'अनुकूला'
दण्डकला	[३२; चतुष्पदी; ड. ड. ड. ड. ट. ड. ड. गुरु]	१, ९, १६; दण्डकाहल– १४.
कामकला	[३२; चतुष्पदी; यतिभेद– दण्डकला में १०, ८, १४ पर यति होती है और इसमें १६, १६ पर यति होती है]	१,
रुचिरा	[३०; द्विपदी; ड- ७, गुरु; जगण निषिद्ध है]	१, १२, १७;

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

छन्द-नाम	मात्रा-संख्या एवं लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
दीपक	[१०; चतुष्पदी; ड, लघु २, जगण]	१, ९ १२, १४, १६, १७.
सिंहविलोकित	[१६; चतुष्पदी; सगण और ४ लघु का यथेच्छ प्रयोग]	१, १२, १६, १७; सिंहावलोक– ९, १४.
प्लवङ्गम	[२१; चतुष्पदी; ट. ठ. ड. जगण, गुरु]	१, ९, १२, १६, १७.
लीलावती	[३२; चतुष्पदी; लघु गुरु वर्ण-नियम रहित; ड- ८; 'ड' में सगण, ४ लघु जगण, भगण, गुरुद्वय का प्रयोग अपेक्षित है]	१, ९, १२, १६; लीलावतिका– १७.
हरिगीतम्	[२८; चतुष्पदी; ठ. ट. ठ. ठ. ठ, गुरु]	१, १२, १६; हरिगीतक– १७.
हरिगीतकम्	[३०; चतुष्पदी; ठ. ट. ठ. ठ. ठ. गुरुद्वय]	१,
मनोहर-हरि गीतम्	२८; चतुष्पदी; ठ. ट. ठ. ठ. ठ. गुरु; विराम पर 'ठ' गुर्वंत अपेक्षित है; यति १६, १२ पर है]	१,
हरिगीता	[२८; चतुष्पदी; ठ. ट. ठ. ठ. ठ. गुरु; विराम ९, ७, १२ पर अपेक्षित है]	१, ९.
अपरा हरि-गीता	[२८; चतुष्पदी; ठ. ट. ठ. ठ. ठ. गुरु; विराम १४-१४ पर अपेक्षित है]	१,
त्रिभंगी	[३२; चतुष्पदी; ड- ८; जगण निषिद्ध है]	१, ९, १२, १६, १७.
दुर्मिलका	[३२; चतुष्पदी; ड- ८;]	१, १२; दुर्मिला– ९, १६, १७;
हीरम्	[२३; चतुष्पदी; ट. ट. ट. रगण; 'ट' एक गुरु और ४ लघु-रूप होना चाहिए ।]	१. ९, १६; हीरक– १२, १७.
जनहरणम्	[३२; चतुष्पदी; ड- ८, जिसमें २८ लघु और अन्त में सगण हो]	१; १६; जलहरण– ९, १२, १७.

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

छन्द-नाम	मात्रा-संख्या एवं लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
मदनगृहम्	[४०; चतुष्पदी; ड- १०; पहला 'ड' सगण होना चाहिए]	१, ६, १२, १७; मदनदीपन- १६.
मरहट्ठा	[२९; चतुष्पदी; ट. ड. ड. ड. ड. ड. गुरु, लघु]	१, ६, १२, १६, १७.
मदिरा सवया	[३०; चतुष्पदी; भ.–७, ग.]	१
मालती सवया	[३२; चतुष्पदी; भ.–७, ग.२]	१
मल्ली सवया	[३४; चतुष्पदी; स.–८, ग.]	१
मल्लिका सवया	[३१; चतुष्पदी; ज.–७. ल.ग.]	१
माधवी सवया	[३३; चतुष्पदी; ज.–७, ल.ग.ग.]	१
मागधी सवया	[३२; चतुष्पदी; ड.–८;]	१
घनाक्षरम्	[४८ मात्रा, ३१ वर्ण; चतुष्पदी]	१
गलितकम्	[२१; चतुष्पदी; ठ. ठ. ड. ड. लघु, गुरु]	१, ६, १०; संपिण्डितागलिता– ७.
विगलितकम्	[२३; चतुष्पदी; ठ. ठ. ड. ड. ठ;]	१, १०.
संगलितकम्	[१३; चतुष्पदी; ड. ड. ठ.]	१, १०; पदगलिता– ७.
सुन्दरगलितकम्	[१३; चतुष्पदी; ठ. ठ. लघु. गुरु;]	१, १०.
भूषणगलितकम्	[१६; चतुष्पदी: ठ. ठ. ढ. ढ.]	१, १०.
मुखगलितकम्	[२०; चतुष्पदी; ट. ढ. ढ. ढ. ढ. गुरु]	१, १०.
विलम्बित-गलितकम्	[२२; चतुष्पदी; ट. ड. ड. ड. ड; अन्तिम 'ड' गुर्वन्त हो]	१, १०.
समगलितकम्	[२५; चतुष्पदी; ड. ठ. ठ. ड. ड. लघु, गुरु]	१, १०.
अपरं सम-गलितकम्	[३२; द्विपदी; प्रथम पद में— ड. ठ. ठ. ड. ड. ल. ग. ड. ढ; द्वितीय पद में—ट. ढ. ढ. ढ. ढ. ग. ड. ड. ड;]	१
अपरं सङ्ग-लितकम्	[३२; द्विपदी; अपरं सङ्ग-लितकम् की पदस्थिति पूर्ण-रूपेण विपरीत होती है]	१

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

छन्द-नाम	मात्रा-संख्या एवं लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
अपरं लम्बिता-गलितकम्	[२२; चतुष्पदी; ड. ड. ड. ड. ड. गुरु; प्रथम और तृतीय चरण में जगण नहीं;]	१; लम्बितागलितकम्–७, १०.
विक्षिप्तिका-गलितकम्	[२५; चतुष्पदी; प्रथम और तृतीय चरण में ठ. ठ. ठ. ठ. ठ; द्वितीय और चतुर्थचरण में ड. ठ. ठ. ठ. ठ. ग. होता है।]	१; विच्छित्तिर्गलितकम्–१०.
ललिता-गलितकम्	[२४; चतुष्पदी; ड- ६;]	१, ७, १०.
विषमिता-गलितकम्	[२५; चतुष्पदी; प्रथम और द्वितीय चरण में ठ. ड. ड. ड. ड. ड; तृतीय एवं चतुर्थ चरण में ड. ड. ड. ड. ड. ड. ग. होता है।]	१; विषमागलितकं– १०;
मालागलितकम्	[४६; चतुष्पदी; ट. ड- १०; अर्थात् १. ३, ५, ७, ६, वां 'ड' जगण; २, ४, ६, ८ वां 'ड' चार लघ्वात्मक, और १० वां 'ड' सगण होना चाहिये]	१, १०.
मुग्धामाला-गलितकम्	[३८; चतुष्पदी; ट. ड- ८]	१; मुग्धगलितकम्– ५, १०.
उद्गलितकम्	[३०; चतुष्पदी; ट. ड- ६;]	१; उद्गाता– ७; उग्रगलितकम्– ५, १०.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क. (२) गाथादि छन्द-भेदों के लक्षण एवं नाम-भेद

गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य एवं षट्पद नामक छन्दों के प्रस्तार-क्रम से भेद, लक्षण एवं नाम-भेद निम्नलिखित ग्रन्थों में ही प्राप्त हैं—

गाथा-प्रस्तार-भेद

प्रस्तार-क्रम	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैंगल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका	वाग्वल्लभ	गाथालक्षण और कवि-दर्पण
१	२७	३	३०	लक्ष्मीः	लक्ष्मीः	लक्ष्मीः	लक्ष्मीः	कमला
२	२६	५	३१	ऋद्धिः	ऋद्धिः	ऋद्धिः	ऋद्धिः	ललिता
३	२५	७	३२	बुद्धिः	बुद्धिः	बुद्धिः	बुद्धिः	लीला
४	२४	९	३३	लज्जा	लज्जा	लज्जा	लज्जा	ज्योत्स्ना
५	२३	११	३४	विद्या	विद्या	विद्या	विद्या	रम्भा
६	२२	१३	३५	क्षमा	क्षमा	क्षमा	क्षमा	मागधी
७	२१	१५	३६	देही	देही	गौरी	देही	लक्ष्मी
८	२०	१७	३७	गौरी	गौरी	देही	गौरी	विद्युत्
९	१९	१९	३८	धात्री	धात्री	रात्री	धात्री (रात्री)	माला
१०	१८	२१	३९	चूर्णा	चूर्णा	पूर्णा	चूर्णा	हंसी
११	१७	२३	४०	छाया	छाया	छाया	छाया	शशिलेखा
१२	१६	२५	४१	कान्तिः	कान्तिः	कान्तिः	कान्तिः	जाह्नवी
१३	१५	२७	४२	महामाया	महामाया	महामाया	महामाया	शुद्धिः
१४	१४	२९	४३	कीर्त्तिः	कीर्त्तिः	कीर्त्तिः	कीर्त्तिः	काली
१५	१३	३१	४४	सिद्धिः	सिद्धिः	सिद्धा	सिद्धा	कुमारी
१६	१२	३३	४५	मानी	मानिनी	मानी	मानिनी (मनोरमा)	मेधा
१७	११	३५	४६	रामा	रामा	रामा	रामा	सिद्धिः
१८	१०	३७	४७	विश्वा	गाहिनी	गाहिनी	गाहिनी	ऋद्धिः
१९	९	३९	४८	वासिता	विश्वा	विश्वा	विश्वा	कुमुदिनी
२०	८	४१	४९	शोभा	वासिता	वासिता	वासिता	धरणी
२१	७	४३	५०	हरिणी	शोभा	शोभा	शोभा	यक्षिणी
२२	६	४५	५१	चक्री	हरिणी	हरिणी	हरिणी	वीणा
२३	५	४७	५२	कुररी	चक्री	चक्री	चक्री	ब्राह्मी (वाणी)
२४	४	४९	५३	हंसी	सारसी	सारसी	सुरसी	गान्धर्वी
२५	३	५१	५४	सारसी	कुररी	कुररी	कुररी	मञ्जरी
२६	२	५३	५५	×	सिंही	सिंही	सिंही	गौरी
२७	१	५५	५६	×	हंसी	हंसी	हंसी (हंसपदवी)	×

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

स्कन्धक प्रस्तार-भेद

प्रस्तार-क्रम	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृतपैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका	वाग्वल्लभ
१	३०	४	३४	नन्दः	नन्दः	×	×
२	२९	६	३५	भद्रः	भद्रः	×	×
३	२८	८	३६	शिवः	शेषः	नन्दः	नन्द्रः
४	२७	१०	३७	शेषः	सारंगः	भद्रः	भद्रः
५	२६	१२	३८	सारङ्गः	शिवः	शेषः	शेषः
६	२५	१४	३९	ब्रह्मा	ब्रह्मा	सारंगः	सारङ्गः
७	२४	१६	४०	वारणः	वारणः	शिवः	शिवः
८	२३	१८	४१	वरुणः	वरुणः	ब्रह्म	ब्रह्मा
९	२२	२०	४२	मदनः	नीलः	चारणः	वारणः
१०	२१	२२	४३	नीलः	मदनः	वरुणः	वरुणः
११	२०	२४	४४	तालाङ्कः	तालाङ्कः	नीलः	नीलः
१२	१९	२६	४५	शेखरः	शेखरः	मदनः	निशङ्कः
१३	१८	२८	४६	शरः	शरः	तालङ्कः	मदनः
१४	१७	३०	४७	गगनम्	गगनम्	शेखरः	तालः
१५	१६	३२	४८	शरभः	शरभः	शरः	शेखरः
१६	१५	३४	४९	विमतिः	विमतिः	गगनम्	शरः
१७	१४	३६	५०	क्षीरम्	क्षीरम्	शरभः	गगनम्
१८	१३	३८	५१	नगरम्	नगरम्	विमतिः	सरभः
१९	१२	४०	५२	नरः	नरः	क्षीरम्	विमतिः
२०	११	४२	५३	स्निग्धः	स्निग्धः	नगरम्	क्षीरम्
२१	१०	४४	५४	स्नेहलुः	स्नेहः	नरः	नगनम्
२२	९	४६	५५	मदकलः	मदकलः	स्निग्धः	नरः
२३	८	४८	५६	भूपः	भूपालः	स्नेहनम्	स्निग्धम्
२४	७	५०	५७	शुद्धः	शुद्धः	मदकलः	स्नेहः
२५	६	५२	५८	कुम्भः	सरित्	लोभः	मदकलः
२६	५	५४	५९	सरिः	कुम्भः	शुद्धः	भूपालः
२७	४	५६	६०	कलशः	कलशः	सरित्	शुद्धः
२८	३	५८	६१	शशी	शशी	कुम्भः	सरित्
२९	२	६०	६२	+	+	कलशः	कुम्भः
३०	१	६२	६३	+	+	शशधरः	शशी

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

दोहा प्रस्तार-भेद

प्रस्तार-क्रम	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका	वाग्वल्लभ	गाथा-लक्षण
१	२३	२	२५	+	+	+	भ्रमरः	+
२	२२	४	२६	भ्रमरः	भ्रमरः	भ्रमरः	भ्रामरः	भ्रमरः
३	२१	६	२७	भ्रामरः	भ्रामरः	भ्रामरः	शरभः	भ्रामरः
४	२०	८	२८	शरभः	शरभः	शरभः	श्येनः	समरः
५	१९	१०	२९	श्येनः	श्येनः	श्येनः	मण्डूकः	सञ्चारः
६	१८	१२	३०	मण्डूकः	मण्डूकः	मण्डूकः	मर्कटः	मकरन्दः
७	१७	१४	३१	मर्कटः	मर्कटः	मर्कटः	करभः	मर्कटकः
८	१६	१६	३२	करभः	करभः	करभः	नरः	नरः
९	१५	१८	३३	मदकलः	नरः	नरः	मरालः	मरालः
१०	१४	२०	३४	पयोधरः	मरालः	मरालः	मदकलः	मदकलः
११	१३	२२	३५	चलः	मदकलः	मदकलः	पयोधरः	पयोधरः
१२	१२	२४	३६	नरः	पयोधरः	पयोधरः	चलः	+
१३	११	२६	३७	मरालः	चलः	वलः	वानरः	+
१४	१०	२८	३८	त्रिकलः	वानरः	वानरः	त्रिकलः	+
१५	९	३०	३९	वानरः	त्रिकलः	त्रिकलः	कच्छपः	+
१६	८	३२	४०	कच्छः	कच्छपः	कच्छपः	मत्स्यः	+
१७	७	३४	४१	मत्स्यः	मत्स्यः	मत्स्यः	शार्दूलः	+
१८	६	३६	४२	शार्दूलः	शार्दूलः	शार्दूलः	अहिवरः	+
१९	५	३८	४३	अहिवरः	अहिवरः	अहिवरः	व्याघ्रः	+
२०	४	४०	४४	व्याघ्रः	व्याघ्रः	व्याघ्रः	विडालः	+
२१	३	४२	४५	उन्दुरः	विडालः	विडालः	श्वा	+
२२	२	४४	४६	शुनकः	शुनकः	श्वा	उदुम्बरः(उन्दुरुः)	+
२३	१	४६	४७	बिडालः	उन्दुरः	उन्दुरः	सर्पः	+
२४	०	४८	४८	सर्पः	सर्पः	सर्पः	शशधरः	+

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

रोला-प्रस्तार-भेद

प्र.क्र.	लघु	गुरु	मात्रा	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	लघु	गुरु	मात्रा	वृत्तरत्नाकर नारायणी-टीका	वाग्वल्लभ
१	६६	०	६६	रसिका	रसिका	६६	०	६६	लोहाङ्गिनी	लोहाङ्गी
२	६४	१	६६	हंसी	हंसी	५८	४	६६	हंसी	हंसिनी
३	६२	२	६६	रेखा	रेखा	५०	८	६६	रेखा	रेखा
४	६०	३	६६	तालाङ्का	तालङ्किनी	४२	१२	६६	तालङ्किनी	तालाङ्की
५	५८	४	६६	कम्पिनी	कम्पिनी	३४	१६	६६	कम्पी	कम्पी
६	५६	५	६६	गम्भीरा	गम्भीरा	२६	२०	६६	गम्भीरा	गम्भीरा
७	५४	६	६६	काली	काली	१८	२४	६६	काली	काली
८	५२	७	६६	कलरुद्राणी	कलरुद्राणी	१०	२८	६६	कलरुद्राणी	कलरुद्राणी

रसिका-प्रस्तार-भेद

प्र.क्र.	गुरु	लघु	मात्रा	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	प्रथम-चरणे गुरु	लघु	मात्रा	वृत्तरत्नाकर नारायणी-टीका	वाग्वल्लभ
१	१३	७०	९६	कुन्दः	कुन्दः	११	२	२४	कुन्दः	कुन्दः
२	१२	७२	९६	करतलः	करतलः	१०	४	२४	करतालः	कर्णांसलः
३	११	७४	९६	मेघः	मेघः	९	६	२४	मेघः	मेघः
४	१०	७६	९६	तालाङ्कः	तालाङ्कः	८	८	२४	तालङ्कः	तालाङ्कः
५	९	७८	९६	रुद्रः	कालरुद्रः	७	१०	२४	कालः	कालरुद्रः
६	८	८०	९६	कोकिलः	कोकिलः	६	१२	२४	रुद्रः	कोकिलः
७	७	८२	९६	कमलम्	कमलम्	५	१४	२४	कोकिलः	कमलः
८	६	८४	९६	इन्दुः	इन्दुः	४	१६	२४	कमलः	चन्द्रः
९	५	८६	९६	शम्भुः	शम्भुः	३	१८	२४	इन्द्रः	शम्भुः
१०	४	८८	९६	चमरः	चामरः	२	२०	२४	शम्भुः	चामरः
११	३	९०	९६	गणेशः	गणेश्वरः	१	२२	२४	चामरः	गणेश्वरः
१२	२	९२	९६	शेषः	सहस्राक्षः	०	२४	२४	गणेश्वरः	+
१३	१	९४	९६	सहस्राक्षः	शेषः					

रसिका छन्द के केवल प्रथम चरण के ही वाग्वल्लभ के मतानुसार ११ भेद होते हैं और वृत्तरत्नाकर के टीकाकार नारायणभट्ट के मतानुसार १२ भेद होते हैं। वाग्वल्लभ और नारायणी टीका के अनुसार अवशिष्ट द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ चरण २४ मात्रा सहित यथेष्ट गुरु, लघु निर्मित होते हैं।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

काव्य-प्रस्तार-भेद

प्र.क्र.	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका
१	०	९६	९६	शक्रः	शक्रः	शक्रः
२	१	९४	९५	शम्भुः	शम्भुः	शम्भुः
३	२	९२	९४	सूर्यः	सूर्यः	शूरः
४	३	९०	९३	गण्डः	गण्डः	गण्डः
५	४	८८	९२	स्कन्धः	स्कन्धः	स्कन्धः
६	५	८६	९१	विजयः	विजयः	विजयः
७	६	८४	९०	तालाङ्कः	दर्पः	दर्पः
८	७	८२	८९	दर्पः	तालाङ्कः	ताराङ्कः
९	८	८०	८८	समरः	समरः	समरः
१०	९	७८	८७	सिंहः	सिंहः	सिंहः
११	१०	७६	८६	शेषः	शेषः	शीर्षः
१२	११	७४	८५	उत्तेजाः	उत्तेजाः	उत्तेजः
१३	१२	७२	८४	प्रतिपक्षः	प्रतिपक्षः	फणिः
१४	१३	७०	८३	परिधर्मः	परिधर्मः	रक्षः
१५	१४	६८	८२	मरालः	मरालः	प्रतिधर्मः
१६	१५	६६	८१	दण्डः	मृगेन्द्रः	मरालः
१७	१६	६४	८०	मृगेन्द्रः	दण्डः	मृगेन्द्र.
१८	१७	६२	७९	मर्कटः	मर्कटः	दण्डः
१९	१८	६०	७८	मदनः	मदनः	मर्कटः
२०	१९	५८	७७	राष्ट्रः	महाराष्ट्रः	अनुबन्धः
२१	२०	५६	७६	वसन्तः	वसन्तः	वासण्ठः
२२	२१	५४	७५	कण्ठः	कण्ठः	कण्ठः
२३	२२	५२	७४	मयूरः	मयूरः	मयूरः
२४	२३	५०	७३	बन्धः	बन्धः	बन्धः
२५	२४	४८	७२	भ्रमरः	भ्रमरः	भ्रमरः
२६	२५	४६	७१	भिन्नमहाराष्ट्रः	द्वितीयो महाराष्ट्रः	भिन्नमहाराष्ट्रः
२७	२६	४४	७०	बलभद्रः	बलभद्रः	बलभद्रः
२८	२७	४२	६९	राजा	राजा	राजा
२९	२८	४०	६८	वलितः	वलितः	वलितः
३०	२९	३८	६७	रामः	रामः	मयूखः
३१	३०	३६	६६	मन्थानः	मन्थानः	मन्थानः

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्र.क्र.	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका
३२	३१	३४	६५	मोहः	बली	बली
३३	३२	३२	६४	बली	मोहः	मोहः
३४	३३	३०	६३	सहस्रनेत्रः	सहस्राक्षः	सहस्राक्षः
३५	३४	२८	६२	बालः	बालः	बालः
३६	३५	२६	६१	दृप्तः	दृप्तः	दर्पितः
३७	३६	२४	६०	शरभः	शरभः	सरभः
३८	३७	२२	५६	दम्भः	दम्भः	दम्भः
३६	३८	२०	५८	दिवसः	अहः	उद्दम्भः
४०	३६	१८	५७	उद्दम्भः	उद्दम्भः	वलितांकः
४१	४०	१६	५६	वलितांकः	वलितांकः	तुरगः
४२	४१	१४	५५	तुरगः	तुरङ्गः	हारः
४३	४२	१२	५४	हरिणः	हरिणः	हरिणः
४४	४३	१०	५३	अन्धः	अन्धः	अन्धः
४५	४४	८	५२	भृङ्गः	भृङ्गः	भृङ्गः

षट्पद-प्रस्तार-भेद

प्र.क्र.	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका
१	७०	१२	८२	अजयः	अजयः	अजयः
२	६६	१४	८३	विजयः	विजयः	विजयः
३	६८	१६	८४	बलिः	बलिः	बलिः
४	६७	१८	८५	कर्णः	कर्णः	वर्णः
५	६६	२०	८६	वीरः	वीरः	वीरः
६	६५	२२	८७	वैतालः	वैतालः	वेतालः
७	६४	२४	८८	बृहन्नरः	बृहन्नलः	बृहन्नलः
८	६३	२६	८६	मर्कः	मर्कटः	मर्कटः
६	६२	२८	६०	हरिः	हरिः	हरिः
१०	६१	३०	६१	हरः	हरः	हरः
११	६०	३२	६२	विधिः	ब्रह्मा	ब्रह्मा
१२	५६	३४	६३	इन्दुः	इन्दुः	इन्दुः
१३	५८	३६	६४	चन्दनम्	चन्दनम्	चन्दनम्
१४	५७	३८	६५	शुभङ्करः	शुभङ्करः	शुभङ्करः

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्र.क्र.	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका
१५	५६	४०	९६	श्वा	श्वा	शाल:
१६	५५	४२	९७	सिंह:	सिंह:	सिंह:
१७	५४	४४	९८	शार्दूल:	शार्दूल:	शार्दूल:
१८	५३	४६	९९	कूर्म:	कूर्म:	कूर्म:
१९	५२	४८	१००	कोकिल:	कोकिल:	कोकिल:
२०	५१	५०	१०१	खर:	खर:	खर:
२१	५०	५२	१०२	कुञ्जर:	कुञ्जर:	कुञ्जर:
२२	४९	५४	१०३	मदन:	मदन:	मदन:
२३	४८	५६	१०४	मत्स्य:	मत्स्य:	मत्स्य:
२४	४७	५८	१०५	तालाङ्क:	तालाङ्क:	सारङ्ग:
२५	४६	६०	१०६	शेष:	शेष:	शेष:
२६	४५	६२	१०७	सारङ्ग:	सारङ्ग:	सारस:
२७	४४	६४	१०८	पयोधर:	पयोधर:	पयोधर:
२८	४३	६६	१०९	कुन्द:	कुन्द:	कुन्द:
२९	४२	६८	११०	कमलम्	कमलम्	कमलम्
३०	४१	७०	१११	वारण:	वारण:	कुन्द:
३१	४०	७२	११२	जङ्गम:	शरभ:	वारण:
३२	३९	७४	११३	शरभ:	जङ्गम:	शरभ:
३३	३८	७६	११४	द्युतीष्टम्	द्युतीष्टम्	जङ्गम:
३४	३७	७८	११५	दाता	दाता	शर:
३५	३६	८०	११६	शर:	शर:	सुशर:
३६	३५	८२	११७	सुशर:	सुशर:	मसर:
३७	३४	८४	११८	समर:	समर:	सारस:
३८	३३	८६	११९	सारस:	सारस:	सरस:
३९	३२	८८	१२०	शारद:	शारद:	मेरु:
४०	३१	९०	१२१	मद:	मेरु:	सकल:
४१	३०	९२	१२२	मदकर:	मदकर:	मृग:
४२	२९	९४	१२३	मेरु:	मद:	सिद्ध:
४३	२८	९६	१२४	सिद्धि:	सिद्धि:	बुद्धि:
४४	२७	९८	१२५	बुद्धि:	बुद्धि:	कलकल:
४५	२६	१००	१२६	करतलम्	करतलम्	कमलाकर:
४६	२५	१०२	१२७	कमलाकर:	कमलाकर:	धवल:
४७	२४	१०४	१२८	धवल:	धवल:	मृतक:

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्र.क्र.	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका
४८	२३	१०६	१२९	मानसः	मनः	ध्रुवः
४९	२२	१०८	१३०	ध्रुवकः	ध्रुवः	वलयः
५०	२१	११०	१३१	कनकम्	कनकम्	किन्नरः
५१	२०	११२	१३२	कृष्णः	कृष्णः	शकः
५२	१९	११४	१३३	रञ्जनम्	रञ्जनम्	जनः
५३	१८	११६	१३४	मेघकरः	मेघकरः	मेघाकरः
५४	१७	११८	१३५	ग्रीष्मः	ग्रीष्मः	ग्रीष्मः
५५	१६	१२०	१३६	गरुडः	गरुडः	गरुडः
५६	१५	१२२	१३७	शशी	शशी	शशी
५७	१४	१२४	१३८	सूर्यः	सूर्यः	सूर्यः
५८	१३	१२६	१३९	शल्यः	शल्यः	शल्यः
५९	१२	१२८	१४०	नवरङ्गः	नवरङ्गः	नरः
६०	११	१३०	१४१	मनोहरः	मनोहरः	तुरगः
६१	१०	१३२	१४२	गगनम्	गगनम्	मनोहरः
६२	९	१३४	१४३	रत्नम्	रत्नम्	गगनम्
६३	८	१३६	१४४	नरः	नरः	रत्नम्
६४	७	१३८	१४५	हीरः	हीरः	नवः
६५	६	१४०	१४६	भ्रमरः	भ्रमरः	हीरः
६६	५	१४२	१४७	शेखरः	शेखरः	भ्रमरः
६७	४	१४४	१४८	कुसुमाकरः	कुसुमाकरः	शेखरः
६८	३	१४६	१४९	दीप्तः	दीपः	कुसुमाकरदीपः
६९	२	१४८	१५०	शङ्खः	शङ्खः	शङ्खः
७०	१	१५०	१५१	वसुः	वसुः	वसुः
७१	०	१५२	१५२	शब्दः	शब्दः	शब्दः

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

ख. वर्णिक छन्दों के लक्षण एवं नाम-भेद

सङ्केत—क्रमाङ्क एवं छन्द-नाम=वृत्तमौक्तिक के अनुसार हैं। लक्षण=छन्द लक्षण में प्रयुक्त ग=गुरु, ल=लघु, म=मगण, य=यगण, र=रगण, स=सगण त=तगण, ज=जगण, भ=भगण और न=नगण के सूचक हैं। सन्दर्भ-ग्रन्थ संकेताङ्क=सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची एवं तदनुसार क्रमसूचक सख्या चतुर्थ परिशिष्ट क. पृ. ४१४ के अनुसार हैं।

एकाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१.	श्रीः	[ग.]	१, ६, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १६, २२; उक्तम्–५; गीः–६; गौ–७.
२.	इः	[ल.]	१, १६; स्नु–१७.

द्व्यक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३.	कामः	[ग. ग.]	१, ६, १२, १६; अत्युक्तं–५; नौ–७; स्त्री–६, १०, १२, १३, १५; पद्मम्–११, १६; आशीः–२२.
४.	मही	[ल. ग.]	१, ६, १२, १६, १७; सुखं–१०, १६.
५.	सारः	[ग. ल.]	१, १६; सारु–६, १२; दुःखं–१०; चारु–१७, जत्रु–१६;
६.	मधुः	[ल. ल.]	१, ६, १२, १६, १७; मदः–१०; पुष्पम्–११; वलि–१६.

त्र्यक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
७.	ताली	[म.]	१, ६, १६; नारी–१, ६, ७, १०, १३, १५, १७; श्यामाङ्गी–१६.
८.	शशी	[य.]	१, ६, १२, १६; मध्यमं–५; केशा–१०; ध्रूः–११; बलाका–१७; वनम्–१६.
६.	प्रिया	[र.]	१, ६, १२, १६; मध्यमं–५; मृगी–६, १०, १३, १५, १७; तडित्–११; सुधी–१६, चञ्चला–२२.
१०.	रमणः	[स.]	१, ६, १२, १६, १७; मध्यमं–५; मदनः–१०; रजनी–११; प्रवरः–१६.
११.	पञ्चालम्	[त.]	१, ६, १२, १६, १७; सेना–१६.
१२.	मृगेन्द्रः	[ज.]	१, ६, १२, १६; मृगेन्दुः–१७; सुवस्तु–१६.

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१३.	मन्दरः	[भ.]	१, ६, १२, १६; मन्दरि-१७; हृदयम्-१९.
१४.	कमलम्	[न.]	१, ६, १२, १६; हरणि-१७; दृग्-१९.

चतुरक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१५.	तीर्णा	[म. ग.]	१, ९. १२, १६; कन्या-१, ६, १०, १३, १५, १७; कीर्णा-१७; गीतिः-१९.
१६.	धारी	[र. ल.]	१, ६, १२, १६, १७; वर्त्म-१९.
१७.	नगाणिका	[ज. ग.]	१, ६; १२, १६; विलासिनी-१०; जया-११, १९; कला-१७.
१८.	शुभम्	[न. ल.]	१; पटु-१७; हरिः-१७; दयि-१९.

पञ्चाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१९.	सम्मोहा	[म.ग.ग.]	१, ६, १६; सम्मोहासारः-१२, १७; बाला-१७.
२०.	हारी	[त.ग.ग.]	१, ६, १२; हारीत-१६; लोलं-१७; सहारी-१७; मृगाक्षि-७; तिष्ठद्गु-१९.
२१.	हंसः	[भ.ग.ग.]	१, ६, १२; पंक्तिः-१०, १२, १३, १५, १७; अक्षरोपपदा-११; कुन्तलतन्वी-११; कांचन-माला-१९.
२२.	प्रिया	[स.ल.ग.]	१, १५, १७; रमा-१९.
२३.	यमकम्	[न.ल.ल.]	१, ६, १६; हलि-१७; जम्भि-१७.

षडक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२४.	शेषा	[म. म.]	१, ६, १२, १६; सावित्री-१०, १९; विद्यु-ल्लेखा-१३, १५, १७.
२५.	तिलका	[स. स.]	१, ९, १२, १६, १७; रमणी-१०; नलिनी-११; कुमुदम्-१९.
२६.	विमोहम्	[र. र.]	१; विमोहा-१७; विज्जोहा-१, ९, १२, १६, १७; मालती-३; शफरिका-१०; गिरा-११; हंसमाला-१९.
२७.	चतुरंसम्	[न.य.]	१, १२, १६; चउरंसा-१; चतुरंसा-६; शशिवदना-१०, १३, १५, १७; मकरकशीर्षा-३, ११; मुकुलिता-११, २०; कनकलता-१९.

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२८.	मन्थानम्	[त. त.]	१, ६, १२, १६; मन्थाना–१.
२९.	शंखनारी	[य.य.]	१, ९, १६; सोमराजी–१, ६, १०, १५, १७; शंखधारी–१२; द्रुतम्–१९.
३०.	सुमालतिका	[ज.ज.]	१, १२; मालती–१, ९; मालतिका–१७; मनोहर–१६.
३१.	तनुमध्या	[त.य.]	१, २, ३, ६, ७, ८, १०, १३, १५, १८, १९, २०, २२.
३२.	दमनकम्	[न.न.]	१, ९. १२, १६; उपवलि–१७.

सप्ताक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३३.	शीर्षा	[म.म.ग.]	१, १२; शीर्षरूपक–९; गान्धर्वी–१०, १९; मुक्तागुम्फ–१६; शिप्रा–१७.
३४.	समानिका	[र.ज.ग.]	१, ९, १२, १६; उष्णिक्–१०; शिखा–११; चामरम्–१७; गोभिनी–१९;
३५.	सुवासकम्	[न.ज.ल.]	१, ९, १२, १६; वासकि–१७; सवासनि–१७;
३६.	करहञ्चि	[न.स.ल.]	१, १२; करहञ्च–९; करहंस–१६; अहरि–१७; करहन्तु–१७; गोपिकागीते सुखदेवम्।
३७.	कुमारललिता	[ज.स.ग.]	१, २, ८, १०, १४, १५, १८, १९, २०, २२.
३८.	मधुमती	[न.न.ग.]	१, १४, १५; हरिविलसितं–१०; हरिविलसितकं–७; चपला–११; द्रुतगतिः–११; लटहः–१९.
३९.	मदलेखा	[म.स.ग.]	१, ६, ७; १०, १३, १५; १९ में लक्षण 'भ. स.ग.' है।
४०.	कुसुमततिः	[न.न.ल.)	१; अचटु–१७.

अष्टाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
४१.	विद्युन्माल	[म.म.ग.ग.]	१, २, ३, ६, ७, ८, ९ १०, १२, १३, १५, १६, १८, १९
४२.	प्रमाणिका	[ज.र.ल.ग.]	१, ६, ८, ९, १२, १३, १५, १६, १९; प्रमाणी–१०, १८; स्थिरः–४; मत्तचेष्टितम्–३, ११; बालगर्भिणी-२२.
४३.	मल्लिका	[र.ज.ग.ल.]	१, ९, १२, १६; समानिका–१, ५; ६,

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
			१०, १३, १५, १७; समानी–१८, १९; समानं–२२.
४४.	तुङ्गा	[न.न.ग.ग.]	१; तुङ्ग–६, १२; रतिमाला–१०; तुरङ्गा-१२.
४५.	कमलम्	[न.स.ल.ग.]	१, ६, १२, १६; लसदसु–१७.
४६.	माणवकक्रीडितकम्	[भ.त.ल.ग.]	१, २, ७, १२, २०, २२; माणवकक्रीडा–१६; माणवकम्–५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९.
४७.	चित्रपदा	[भ.भ.ग.ग.]	१, २, ५, ६, १०, १३, १५, १८, १९; वितानं–७, १८, १९; चित्रपदम्–२०; हंसरुतम्–२२.
४८.	अनुष्टुप्		१, १२; श्लोक–७, ८, १६.
४९.	जलदम्	[न.न.ल.ल.]	१: कृतयुः–१७; कृशयुः–१७.

नवाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
५०.	रूपामाला	[म.म.म.]	१, ६; रूपामाली–१२, १५, १६, १७.
५१.	महालक्ष्मिका	[र.र.र.]	१, ६, १२, १७; महालक्ष्मी–१६.
५२.	सारङ्गम्	[न.य.स.]	१; सारङ्गिका–१, ६, १२, १६, १७; मुखला–१७.
५३.	पाइंत्तम्	[म.भ.स.]	१, पाइंत्ता–१, ६, १२, १६; पापित्ता–१७; सिंहाक्रान्ता–१०; वीरा–१७; अवीरा–१७.
५४.	कमलम्	[न.न.स.]	१, ६, १२; कमला–१५, १६; लघुमणि-गुणनिकरः–१०; मदनकं–१७; रतिपदम्–१७.
५५.	बिम्बम्	[न.स.य.]	१, ६, १२, १६, १७; गुर्वी–७, १८; विशाला–६, १०.
५६.	तोमरम्	[स.ज.ज.]	१, ६, १२, १६, १७.
५७.	भुजगशिशुसृता	[न.न.म.]	१, २, ५, १०, १७, १८, २०, २२. भुजगशिशुसृतम्–१९; भुजगशिशुभृता–१, ८, १३, १५, १७; भुजगशिशुवृता–१७; मधुकरी–३; मधुकरिका–११.

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
५८.	मणिमध्यम्	[भ.म.स.]	१, १५, १७, १८, २२; मणिबन्धम्–१६, १७.
५९.	भुजङ्गसङ्गता	[स.ज.र.]	१, १५, १७.
६०.	सुललितम्	[न.न.न.]	१; चुलकम्–१७.

दशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
६१.	गोपालः	[म.म.म.ग.]	१; पद्मावर्तः–१७.
६२.	संयुतम्	[स.ज.ज ग.]	१, १६; संयुता–१, ९, १७; संयुगा–१७; संगतिका–१२; संहतिका–१७.
६३.	चम्पकमाला	[भ.म.स.ग.]	१, २, ६, ७, ९, ११, १२, १६, १७, १८; रुक्मवती–१, ८, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०; रुमवती–२२; रूपवती–५, १७; सुभावा–११; पुष्पसमृद्धिः–११.
६४.	सारवती	[भ.भ.भ.ग]	१, ९, १६, १७; हारवती–१२; चित्रगति-१०, १९; विश्वमुखी–१७,
६५.	सुषमा	[त य.भ.ग.]	१, ५, ९, १२, १६, १७.
६६.	अमृतगतिः	[न.ज.न.ग.]	१, ९, १६, १७; मृगलतिका–१७.
६७.	मत्ता	[म.भ.स.ग.]	१, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०; हंसी–१६; विलासिता–२२.
६८.	त्वरितगतिः	[न.ज.न.ग.]	१, ७, १०, १५, १९, १९.
६९.	मनोरमम्	[न.र.ज ग.]	१; मनोरमा–१, ६, १०, १३, १५, १७.
७०.	ललितगतिः	[न.न.न.ल.]	१, कृतकवलि–१७.

एकादशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
७१.	मालती	[म.म.म.ग.ग.]	१, ९, १२; माला–१६; मारती–१७; भारती–१७.
७२.	बन्धुः	[भ.भ.भ.ग.ग.]	१, ९, १२, १७; दोधकम्–१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, १२. १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२. उपचित्रा–११; सरोरुह–१६,
७३.	सुमुखी	[न.ज.ज.ल.ग.]	१, ६, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७; द्रुतपदगतिः–११

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
७४.	शालिनी	[म.त.त.ग.ग.]	१, २. ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२.
७५.	वातोर्मी	[म.भ.त.ग.ग.]	१, ३, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९; उर्मिला–४; वातोर्मीमाला–२०, २२. १० एवं १९ में [म.भ.भ.ग.ग.] लक्षण भी माना है।
७६.	उपजातिः	[शालिनी-वातोर्मीमिश्रा]	१,
७७.	दमनकम्	[न.न.न.ल.ग.]	१, ६, १२, १६. १७.
७८.	चण्डिका	[र.ज.र.ल.ग.]	१; श्रेणिका–१; श्रेणिः–१९; श्येनी–२, १०, १५, १७. १८, २०, २२; श्येनिका–५, १३, १७; सेनिका–१२, १७; निःश्रेणिका–५; निःश्रेणिकम्–११; ताल–१६.
७९,	सेनिका	[ज.र.ज.ग.ल.]	१, ६; सैनिकम् - १७;
८०.	इन्द्रवज्रा	[त.त.ज.ग.ग.]	१, २, ३, ४, ६. ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९. २०, २२; उपस्थिता–६, ११.
८१.	उपेन्द्रवज्रा	[ज.त.ज.ग.ग.]	१, २, ३. ४, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२.
८२.	उपजातिः	[इन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रामिश्रा]	१, २, ४, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९; इन्द्रमाला–१९, २०, २२.
८३.	रथोद्धता	[र.न.र.ल.ग.]	१, २, ३, ४, ५. ६: ८, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२.
८४.	स्वागता	[र.न.भ.ग.ग.]	१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, १०, १२, १३, १५, १६, १७. १८, १९, २०, २२.
८५.	भ्रमरविलसिता	[म.भ.न.ल.ग.]	१, ४, ५. १५, १७, १८, २०, २२; भ्रमरविलसितम्–२, ७, १०, १३, १९; वानवासिका–११.
८६.	अनुकूला	[भ.त.न.ग.ग.]	१. १५, १७; कुड्मलदन्ती–२, १०; श्रीः–१०, १३, १७, १८; सान्द्रपदम्–११, १९; रुचिरा–११; मौक्तिकमाला–१७.
८७.	मोटनकम्	[त.ज.ज.ल.ग.]	१, ३, १०, १५, १८; मोटकम्–१९.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
८८.	सुकेशी	[म.स.ज.ग.ग.]	१, एकरूपम्–५, १०, १६; विश्वविराट्–१७; मणिः–१९.
८९.	सुभद्रिका	[न.न.र.ल.ग.]	१, ५, १२, १७, २०; भद्रिका–६, १०, १३, १५, १८, १९; प्रसभम्–४; अपरवक्त्रम्–११; उत्तरान्तिका–११; समुद्रिका–१७.
९०.	बकुलम्	[न.न.न.ल.ल.]	१, अगरिम–१७.

द्वादशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
९१.	आपीडः	[म.म.म.म.]	१, विद्याधरः–९; विद्याधारः–१२, १५, १७; विद्याहारः–१६; कल्याणं–१०; काञ्चनम्–११.
९२.	भुजंगप्रयातम्	[य.य.य.य.]	१, २, ४, ६, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२; अप्रमेया–३, ११.
९३.	लक्ष्मीधरम्	[र.र.र.र.]	१, ६, ९, १०, १२, १६, १७; स्रग्विणी–१, २, १३, १५, १७, १८, १९; पद्मिनी–३, ११; शृङ्गारिणी–१७.
९४.	तोटकम्	[स.स.स.स.]	१, २, ३, ४, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२.
९५.	सारङ्गकम्	[त.त.त.त.]	१, सारङ्गं–१२, १५, १७; सारङ्गरूपम्–१६; सारङ्गरूपकम्–९; कामावतारः–१०, १९, मेनावली–१७; रंगक्रीडास्तोत्र में 'भृङ्गारः'.
९६.	मौक्तिकदाम	[ज.ज.ज.ज.]	१, ९, १०, १२, १३, १५, १७, १९; मुक्तादाम–१६.
९७.	मोदकम्	[भ.भ.भ.भ.]	१, ९, १२, १६, १७; मोटक–१५
९८.	सुन्दरी	[न.भ.भ.र.]	१, ९, १२, १६; हरिणप्लुता–३; मत्तकोकिलकम्–१९.
९९.	प्रमिताक्षरा	[स.ज.स.स.]	१, २, ३, ४, ६, १०, १२, १३, १५, १७, १८, १९, २०; प्रतिमाक्षरा–२२.
१००.	चन्द्रवर्त्म	[र.न.भ.स.]	१, १०, १३, १५, १७, १८, १९.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१०१.	द्रुतविलम्बितम्	[न.भ.भ.र.]	१, २, ६, ७, ८, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२; हरिणप्लुतम्–३, ११.
१०२.	वंशस्थविला	[ज.त.ज.र.]	१; वंशस्थविलम्–१, १५, १७; वंशस्तनितम्–१; वंशस्थम्–३, ६, ७, ८, १०, १३, १६, १७, १८, १९, २२; वंशस्था–२, २०; वसन्तमञ्जरी–७, ११; अभ्रवंशा–११.
१०३.	इन्द्रवंशा	[त.त ज.र.]	१, २, ४, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२; इन्दुवंशा–१७, वीरासिका–१७.
१०४.	उपजाति	[वंशस्थविला-इन्द्रवंशा मिश्रा]	१, १७; करम्बजाति–१९; कुलालचक्रम्–१९; वंशमालिका–१९; वंशमाला–२०.
१०५.	जलोद्धतगतिः	[ज.स.ज.स.]	१, २, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२.
१०६.	वैश्वदेवी	[म.म.य.य.]	१, २, ४, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२; चन्द्रलेखा–३.
१०७.	मन्दाकिनी	[न न.र.र.]	१, १५, १७; गौरी–२; प्रभा–१, १७.
१०८.	कुसुमविचित्रा	[न.य.न.य.]	१, २, १०, १३, १५, १७, २२; मदनविकारा–११; गजलुलितम्–११; गजललिता–१९.
१०९.	तामरसम्	[न.ज.ज.य.]	१, ६, १०, १३, १५, १७; ललितपदा–४, १९; कमलविलासिनी–११.
११०.	मालती	[न.ज.ज.र.]	१, ४, ६, १०, १३, १५, १७; वरतनु–२, ११, १४, १९; यमुना–१.
१११.	मणिमाला	[त.य.त.य.]	१, ६, ११, १३, १५, १७, १९; अब्जविचित्रा–१९; पुष्पविचित्रा–१०, १८.
११२.	जलधरमाला	[म.भ.स.म.]	१, २, १०, १३, १४, १५, १७, १८, १९; कान्तोत्पीडा–२, ११; सौदामिनी–२२
११३.	प्रियम्वदा	[न.भ.ज.र.]	१, ६, १०, १३, १५; प्रियम्वदः–१७; मत्तकोकिला–११.
११४.	ललिता	[त.भ.ज.र.]	१, १०, १३, १५, १७; सुललिता–१.
११५.	ललितम्	[भ.त.न.स.]	१; ललना–१, २, १०; वीरणमाला–१७; रति–१९.

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
११६.	कामदत्ता	[न.न.र.य.]	१, ३, १०, १६; परिमितविजया–१७.
११७.	वसन्तचत्वरम्	[ज.र.ज.र.]	१, ६, ११; विभावरी–१०; पञ्चचामरम्–१३, १५; ललामललिताधरा–१७;
११८.	प्रमुदितवदना	[न.न.र.र.]	१, ६, १०, १३, १७, १६, २२; प्रभा–१, ११, १३, १७; चञ्चलाक्षी–२, ११; मन्दाकिनी–१७; गौरी–१४.
११६.	नवमालिनी	[न.ज.भ.य.]	१, २, १०, १४, १८, १६, २०, २२; नवमालिका–१३, १५; नयमालिनी–१७; वनमालिका–१७.
१२०.	तरलनयनम्	[न.न.न.न.]	१, १२, १५, १७; तरलनयना–१६; तरलनयनी–६.

त्रयोदशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१२१.	वाराहः	[म.म.म.म.ग.]	१; सव्याली–१७.
१२२.	माया	[म.त.य.स.ग.]	१, ६, १२, १६; मत्तमयूरम्–१, २, ३, ४, ६, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १६, २२; मत्तमयूरः–२०.
१२३.	तारकम्	[स.स.स.स.ग.]	१, ६, १२, १६, १७.
१२४.	कन्दम्	[य.य.य.य.ल.]	१, ६, १२, १६; कन्दः–१७; कन्दुकम्–१५.
१२५.	पङ्क्तावलिः	[भ.न.ज.ज.ल.]	१, ६, १२; पङ्क्तवती–१७; कमलावली–१६.
१२६.	प्रहर्षिणी	[म.न.ज.र.ग.]	१, २, ३, ४, ६, ८, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १६, २०, २२; मयूरपिच्छम्–७.
१२७.	रुचिरा	[ज.भ.स.ज.ग.]	१, २, ४, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १६, २०, २२; प्रभावती–३; सदागतिः–७; अतिरुचिरा–१४, १७.
१२८.	चण्डी	[न.न.स.स.ग.]	१, १५, १७; कमलाक्षी–१०; हाकलिका-१७; कलावती–१६.
१२६.	मञ्जुभाषिणी	[स.ज.स.ज.ग.]	१, १३, १५, १७; सुनन्दिनी–१; नन्दिनी-५, १०, १६, २२; प्रबोधिता–१, १५; कनकप्रभा–२, १४; मनोवती–११; १६ में 'न. ज. स. ज. ग.' और १० में 'ज. त. ज. स. ग.' लक्षण भी माना है।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमाङ्क	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१३०.	चन्द्रिका	[न.न.त.त.ग.]	१, १३, १५, १७, उत्पलिनी–१, १७; कुटिलमतिः–२; कुटिलगतिः–१०; ६ में चन्द्रिका का लक्षण 'न. न. त. र. ग.' है और १९ में 'य. म. र. र. ग.' है।
१३१.	कलहंसः	[स.ज.स.स.ग.]	१, १५. १७; सिंहनादः–१, १७; कुटजं–१, १०, १९; कुटजा–१७; भ्रमरः–११; भ्रमरी–१९; क्षमा–१७.
१३२.	मृगेन्द्रमुखम्	[न.ज.ज.र.ग.]	१, १५, १७; सुवक्त्रा–१०, १९; अचला ११.
१३३.	क्षमा	[न.न.त.र.ग.]	१, १३; १० में 'न.त.त.र.ग.' लक्षण है।
१३४.	लता	[न.स.ज.ज.ग.]	१; लयः–१०; उपगतशिखा–१७,
१३५.	चन्द्रलेखम्	[न.स.र.र.ग.]	१, १४; चन्द्रलेखा–१, १०; चन्द्ररेखा–१५.
१३६.	सुद्युतिः	[न.स.त.त.ग.]	१; विद्युन्मालिका–१०.
१३७.	लक्ष्मीः	[त.भ.स.ज.ग.]	१, ४, १०, १९; प्रभावती–१५, १६, १७. रुचिः–१९.
१३८.	विमलगतिः	[न.न.न.न.ल.]	१; अडमरू–१७.

चतुर्दशाक्षर छन्द

क्रमाङ्क	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१३९.	सिंहास्यः	[म.म.म.म.ग.ग.]	१; संकल्पासारः–१७; संकल्पाधारः–१७.
१४०.	वसन्ततिलका	[त.भ.ज.ज.ग.ग.]	१, २, ३, ४, ५, ६, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९; काश्यपमते सिंहोन्नता–२, ७, ११, १३, १७, २२; सैतवमते उद्धर्षिणी–२, १०, १३, १७; राममते मधुमाधवी १७; भरतमते सुन्दरी–१७; वसन्ततिलकम्–८, २०, २२; सैतवमते इन्दुमुखी–२२.
१४१.	चक्रम्	[भ.न.न.न.ल.ग.]	१, १२, १७; चक्रपदम्–९, १६.
१४२.	असम्बाधा	[म.त.न.स.ग.ग.]	१, २, ३, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२.
१४३.	अपराजिता	[न.न.र.स.ल.ग.]	१, २, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२.
१४४.	प्रहरणकलिका	[न.न.भ.न.ल.ग.]	१, ५, ६, १५, १७, १९, २०; प्रहरणकलिता–२, १०, १३, १८; प्रहरणगलिता–२२.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१४५.	वासन्ती	[म.त.न.म.ग.ग.]	१, १५, १७.
१४६.	लोला	[म.स.म.भ.ग.ग.]	१, १३, १५, १७; अलोला–१०, १७.
१४७.	नान्दीमुखी	[न.न.त.त.ग.ग.]	१, ५, १५, १७; नन्दीमुखी–११; वसन्तः-१०, १६.
१४८.	वैदर्भी	[म.भ.न.य.ग.ग.]	१, १४; कुटिला–२, १४; कुटिलं–१०, १४; हंसश्येनी–११; हंसश्यामा–१६; मध्यक्षामा–१४; चूडापीडम्–१७.
१४६.	इन्दुवदनम्	[भ.ज.स.न.ग.ग.]	१; इन्दुवदना–१, १३, १७; वरसुन्दरी–२; स्खलितम्–१०; वनमयूरः–११, १६; इन्द्रवदना–१७; विलासिनी–२२; १० में 'भ.ज.स.न.ल.ग.' लक्षण है।
१५०.	शरभी	[म.भ.न.त.ग.ग.]	१; शरभा–३.
१५१.	अहिधृतिः	[न,न.भ.ज.ल.ग.]	१
१५२.	विमला	[न.ज.भ.ज.ल.ग.]	१; धृतिः–१०; मणिकटकम्–११. १६; प्रमदा–१४.
१५३.	मल्लिका	[स.ज.स.ज.ल.ग.]	१, मञ्जरी–१४; कुररीरुता–१७.
१५४.	मणिगणम्	[न.न.न.न.ल.ल.]	१, अकहरि–१७; अकुहरि–१७.

पञ्चदशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१५५.	लीलाखेलः	[म.म.म.म.म.]	१, १५; सारंगिका–१, ६; सारंगी–१२, १६, १७; कामक्रीडा–१०. १४, १७; लीलालेखः–१७; ज्योतिः–१६; मित्रम्–१६.
१५६.	मालिनी	[न.न.म.य.य.]	१, २, ४, ५, ६, ७, ८, ६, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १६, २०, २२; नान्दीमुखी–३, ११,
१५७.	चामरम्	[र.ज.र.ज.र.]	१, ६, १२, १६, तूणकम्–१, १०, १५, १७; तोणकम्–५; तोटकं–७; पंचयामलं–१७; महोत्सवः–१६.
१५८.	भ्रमरावलिका	[स.स.स.स.स.]	१, १७; भ्रमरावली–१, ६, १२, १६.
१५६.	मनोहंसः	[स.ज.ज.भ.र.]	१, ६, १२; मणिहंसः–१७; पदहंसकम्–१६.
१६०.	शरभम्	[न.न.न.न.स.]	१, ६. १२, १६, १७; शशिकला–१, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १६; मणिगुणनिकरः–१, २, ४, ५. ११, १३, १५, १७

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
			१८. १९, २०, २२; स्रक्–१, ११, १३, १५, १७, १८, १९; चन्द्रावर्ता–२, ११, २२; माला–२, ११, २०, २२; मणिनिकर–१७; रुचिरा–१९; चन्द्रवर्त्मा–२०.
१६१.	निशिपालकम्	[भ.ज.स.न.र.]	१, ९, १२, १६, १७.
१६२.	विपिनतिलकम्	[न.स.न.र.र.]	१, १५, १७.
१६३.	चन्द्रलेखा	[म.र.म.य.य.]	१, ६, १०, १३, १५, १७; चण्डलेखा–१; ७, १०, १४ में 'र.र.म.य.य.' और १९ में 'र.र.त.त.म.' लक्षण है।
१६४.	चित्रा	[म.म.म.य.य.]	१, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८; चित्रम्–१, मण्डुकी–११, १८, १९; चञ्चला–११.
१६५.	केसरम्	[न.ज.भ.ज.र.]	१; प्रभद्रकम्–६, १०, १३, १७; सुकेसरम्–१४, १९.
१६६.	एला	[स.ज.न.न.य.]	१, १०, १३, १७, १९.
१६७.	प्रिया	[न.न.त.भ.र.]	१; उपमालिनी–६, १०; रूपमालिनी–१४
१६८.	उत्सवः	[र.न.भ.भ.र.]	१; सुन्दरम्–१०; मणिभूषणं–११, १९; रमणीयं–११, १९; नूतनं–१७; सृक्कणं–१७.
१६९.	उडुगणम्	[न.न.न.न.न.]	१, शरहतिः–१७.

षोडषाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१७०.	रामः	[म.म.म.म.म.ग.]	१; ब्रह्मरूपकम्–१, ९, १६; ब्रह्मरूपम्–१५; ब्रह्म–१२, १७; कामुकी–१०; चन्द्रापीडम्–१७.
१७१.	पञ्चचामरम्	[ज.र.ज.र.ज.ग.]	१, ५, ६, १०, १४, १५, १९; नराचम्–१, ९, १२, १४, १५, १६, १७.
१७२.	नीलम्	[भ.भ.भ.भ.भ.ग.]	१, ९, १२, १६, १७; अश्वगतिः–६, १४, १५; सङ्गतम्–१०; पद्ममुखी–११, १९; सुरता–११; सद्यमुद्धरणं–११; सोपानकं–११; रवगतिः–१७; विशेषिका–१७.
१७३.	चञ्चला	[र.ज.र.ज.र.ल.]	१, ९, १२, १६, १७; चित्रसंज्ञं–१, १४, १५; चित्रं–५, ६, १७; चित्रशोभा–५;
१७४.	मदनललिता	[म.भ.न.म.न.ग]	१, १०, १५, १७, मदनललितं–५.

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१७५.	वाणिनी	[न.ज.भ.ज.र.ग.]	१, ६, १०, १३, १५, १७, १६; १० में वाणिनी का 'न.ज.ज.ज.र.ग.' लक्षण भी स्वीकार किया है।
१७६.	प्रवरललितम्	[य म.न.स.र.ग.]	१, ३, १५, १७; जयानन्दम्–१०, १६.
१७७.	गरुडरुतम्	[न.ज.भ.ज.त.ग.]	१, १५, १७; चन्द्रलेखा–२२.
१७८.	चकिता	[भ.स.म.त.न.ग.]	१, १५, १७.
१७९.	गजतुरग-विलसितम्	[भ.र.न.न.न.ग.]	१; ऋषभगजविलसितम्–१, २, ३, १०, १३, १५, १७, १८, १६; गजवरविलसितम्–५; मत्तगजविलसितम्–११; वृषभगजविलसिता–२०; ऋषभगजविलसिता–२२.
१८०.	शैलशिखा	[भ.र.न.भ.भ.ग.]	१, २, १०, १४; भामिनी–१६.
१८१.	ललितम्	[भ.र.न.र.न.ग.]	१, ४; धीरललिता–१४, १५; महिषी–१०.
१८२.	सुकेसरम्	[न.स ज.स.ज.ग.]	१,
१८३.	ललना	[स.न.न.ज.भ.ग]	१,
१८४.	गिरिवरधृतिः	[न.न.न.न.न.ल.]	१, अचलधृतिः–१, ५, ६, १०, १५, १७, १८.

सप्तदशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१८५.	लीलाधृष्टम्	[म.म.म.म.म.ग.ग.]	१; मानाक्रान्ता १७.
१८६.	पृथ्वी	[ज.स.ज.स.य.ल.ग.]	१, २, ५, ६, ७, ८, ६, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १६, २०, २२; विलम्बितगतिः ३, ११.
१८७.	मालावती	[न.स.ज.स य.ल.ग.]	१; मालाधरः–१, ६, १२, १६, १७.
१८८.	शिखरिणी	[य.म.न.स.भ.ल.ग.]	१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १६, २०, २२;
१८९.	हरिणी	[न.स.म.र.स.ल.ग.]	१, २, ३, ५, ६, ७, ८, १०, १२, १३, १५, १७, १८, १६, २०, २२; वृषभचरितम्–४; वृषभललितम् ११.
१९०.	मन्दाक्रान्ता	[म.भ.न.त.त.ग.ग.]	१, २, ४, ५, ६, ७, ८, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १६, २०, २२. श्रीधरा–३, ११.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१९१.	वंशपत्रपतितम्	[भ.र.न.भ.न.ल.ग.]	१, २, ३, ४, ६, १०. १२, १५, १७, १८, १९, २२; वंशपत्रपतिता–१, २०; वंशदलम्–१, ११; वंशतलं–५; वंशपत्रललितम्–५; वंशपत्रम्–१७.
१९२.	नर्द्दटकम्	[न.ज.भ.ज.ज.ल.ग.]	१, १७; नर्कुटं–८; नर्कुटकम्–४, ७, ११, १३, १५, १८, १९; अवितथम्–२, १०, १४.
	कोकिलकम्*	[न.ज.भ.ज.ज.ल.ग.]	१, २, १०, १३, १४, १५, १७, १९.
१९३.	हारिणी	[म.भ.न.म.य.ल.ग.]	१, ५, १०, १५; १७ में 'म.भ.न.य.म.ल.ग.' लक्षण है।
१९४.	भाराक्रान्ता	[म.भ.न.र.स.ल.ग.]	१, ५, १०, १५, १७,
१९५.	मतंगवाहिनी	[र.ज.र.ज.र.ल.ग.]	१,
१९६.	पद्मकम्	[न.स.म.त.त.ग.ग.]	१, १०,; पद्मम्–५
१९७.	दशमुखहरम्	[न.न.न.न.न.ल.ल.]	१, अचलनयनम्–१७.

अष्टादशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१९८.	लीलाचन्द्रः	[म.म.म.म.म.म.]	१, ९.
१९९.	मञ्जीरा	[म.म.भ.म.स.म.]	१, ९, १२, १६, १७.
२००.	चर्चरी	[र.स.ज.ज.भ.र.]	१, ९, १२, १६, १७; विबुधप्रिया–२, १४; उज्ज्वलम्– १०; मालिकोत्तरमालिका–११, १९; मत्तकोकिलम्–१७; कूर्परं–१७; चञ्चरी १७; रूपगोस्वामी कृत मुकुन्दमुक्तावली में 'रंगिणी' और गोवर्द्धनोद्धरण में 'मुग्धसौरभम्' नाम दिए हैं।
२०१.	क्रीडाचन्द्रः	[य.य.य.य.य.य.]	१, १२. १७; क्रीडाचक्रम्–१६; वारवाणा–१७; क्रीडगा–१७; चन्द्रिका–१७.
२०२.	कुसुमितलता	[म.त.न.य.य.य]	१, २, ५, १०, १३. १५, २२; चित्रलेखा–३; चन्द्रलेखा–७; कुसुमलतावेल्लिता–१७; १८; कुसुमितलतावेल्लिता–१९, २०
२०३.	नन्दनम्	[न.ज.भ.ज.र.र.]	१, १५, १७.
२०४.	नाराचः	[न.न.र.र.र.र.]	१, १५, १७; नाराचकम्–२; मञ्जुला–१, महामालिका–१७; तारका–६; वरदा–१९; निशा–१९.
२०५.	चित्रलेखा	[म.भ.न.य.य.य.]	१, ५, १०, १४, १५, १७; चन्द्रलेखा–१७; महाराणा कुम्भकर्ण रचित पाठयरत्न-

*लक्षण 'नर्द्दटकम्' का है परन्तु यतिभेद के कारण अपर नाम 'कोकिलकम्' दिया है।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
			कोष के अनुसार 'य. त. न. य. य. स.' लक्षण है।
२०६.	भ्रमरपदम्	[भ.र.न.न.न.स.]	१, ५, ६, १०, १४, १५.
२०७.	शार्दूलललितम्	[म स.ज.स.त.स.]	१, ५, १०, १४, १५, १७.
२०८.	सुललितम्	[न.न.म.त.भ.र.]	१, ५, १०.
२०९.	उपवनकुसुमम्	[न न.न.न.न.न.]	१, तुमुलकम्–१७.

एकोनविंशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२१०.	नागानन्दः	[म.म.म.म.म.म.ग.]	१,
२११.	शार्दूलविक्रीडितम्	[म.स.ज.स.त.त.ग.]	१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२; शार्दूलसट्टकम्–९.
२१२.	चन्द्रम्	[न न.न.ज.न.न ल.]	१, १२, १६; चन्द्रमाला–१, ९.
२१३.	धवलम्	[न न न.न.न.न.ग.]	१, १२, १६, १७; धवला–१, ९.
२१४.	शम्भुः	[स त.य.भ.म.म.ग.]	१, ९, १२, १६, १७.
२१५.	मेघविस्फूर्जिता	[य.म.न.स.र.र.ग.]	१, १०, १४, १५, १८, १९; विस्मिता–२; सुवृत्ता–४; रम्भा–५, ११, १९; चन्द्रकान्ता–७.
२१६.	छाया	[य.म न स.त त.ग.]	१, ५, १० १४, १५, १७.
२१७.	सुरसा	[म.र.भ.न.य.न.ग.]	१, १५, १७.
२१८.	फुल्लदाम	[म.त.न.स.र.र.ग.]	१, १५, १७; पुष्पदाम–५, १०, १४.
२१९.	मृदुलकुसुमम्	[न.न.न.न.न.न.ल.]	१,

विंशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२२०.	योगानन्दः	[म.म.म.म.म.म.ग.ग.]	१,
२२१.	गीतिका	[स.ज.ज.भ.र.स.ल.ग.]	१, १२, १५, १७; गीता–९; हरिगीतम्-१६.
२२२.	गण्डका	[र.ज.र.ज.र.ज.ग.ल.]	१, ९, १२, १७; चित्तवृत्तम्–१; चित्रं–६; वृत्तम्–१, २, १०. १४, १५, १८, १९, २२; मुण्डकं–१६; ईदृशं–१७; मादृशं–१७.
२२३.	शोभा	[य.म.न.न.त.त.ग.ग.]	१, ५, १०, १४, १५, १७.
२२४.	सुवदना	[म.र.भ .न.य.भ.ल.ग.]	१, २, ३, ४, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०; वृत्तम्–७; २२ के अनुसार 'म.र.भ.न.य.भ.ल.ल.' लक्षण है।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२२५.	प्लवङ्गभङ्ग-मङ्गलम्	[ज.र.ज.र.ज.र.ल.ग.]	१,
२२६.	शशाङ्कचलितम्	[त.भ.ज.भ.ज.भ.ल.ग.]	१; शशांकचरितम्–७; शशांकरचितम्–१०.
२२७.	भद्रकम्	[भ.भ.भ.भ.र.स.ल.ग.]	१; नन्दकम्–१०; भासुरम्–१६.
२२८.	अनवधिगुणगणम्	[न.न.न.न.न.न.ल.ल.]	१,

एकविंशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२२९.	ब्रह्मानन्दः	[म.म.म.म.म.म.म.]	१,
२३०.	स्रग्धरा	[म.र.भ.न.य.य.य.]	१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२.
२३१.	मञ्जरी	[र.न.र.न.र.न.र.]	१; तरंगः–१०; तरंगमालिका–१६; कनकमालिका–१७.
२३२.	नरेन्द्रः	[भ.र.न.न.ज.ज.ज.]	१, ९, १२, १६.
२३३.	सरसी	[न.ज.भ.ज.ज.ज.र.]	१, १५, १७; सुरतरु–१; सिद्धकम्–१; सिद्धिः–५, १०; सिद्धिका–६; शशिवदना–२, ११; चित्रलता–११; चित्रलतिका–१६; सलिलम्–१४; श्रीः–१४; चम्पकमालिका–१७, १६; चम्पकावली–१७; पञ्चकावली–१७.
२३४.	रुचिरा	[न.ज भ.ज.ज ज.र.]	१, ११.
२३५.	निरुपम-तिलकम्	[न.न.न.न.न.न.न.]	१,

द्वाविंशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२३६.	विद्यानन्दः	[म.म.म.म.म.म.म.ग.]	१,
२३७.	हंसी	[म.म.त.न.न.न.स.ग.]	१; ९, १२, १५; १६, १७; रजतहंसी–१७.
२३८.	मदिरा	[भ.भ.भ.भ.भ.भ.भ.ग.]	१, ५, १०, १४, १५, १७; लताकुसुमम्–६, ११; १६; सवैया–१६; मानिनी–१७.
२३९.	मन्द्रकम्	[भ.र.न.र.न.र.न.ग.]	१; मद्रकम्–२, ३, ५, १०, १८, १९, २२; भद्रकम्–६, १३, १५, २०; विशुद्धचरितम्–७; १७ में 'भ.र.न.स. न.र.न.ग.' लक्षण है। भद्रकं–१७; भद्रिका–१७;
२४०.	शिखरम्	[भ.र.न.र.न.र.न.ग.]	१.

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२४१.	अच्युतम्	[न.न.न.न.स.ज.ज.ग.]	१,
२४२.	मदालसम्	[त.भ.य.ज.स.र.न.ग.]	१; सितस्तबक–१७; परिस्तबक–१७.
२४३.	तरुवरवृत्तम्	[न.न.न.न.न.न.न.ल.]	१,

त्रयोविंशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२४४.	दिव्यानन्दः	[म.म.म.म.म.म.म.ग.ग.]	१,
२४५.	सुन्दरिका	[स.स.भ.स.त.ज.ज.ल.ग.]	१, ६, १२; सुन्दरी–१६.
	पद्मावतिका	[स.स.भ.स.त.ज.ज.ल.ग.]	१, १२.
२४६.	अद्रितनया	[न.ज.भ.ज.भ.ज.भ.ल.ग.]	१, १५, १७; अश्वललितम्–१, २, ३, १३, १७, १८, १९, २०, २२; ललितं–५, १०; हयलीलाङ्गी–७.
२४७.	मालती	[भ.भ.भ.भ.भ.भ.भ.ग.ग.]	१; सवैया १६; मत्तगजेन्द्रः–१७.
२४८.	मल्लिका	[ज.ज.ज.ज.ज.ज.ज.ल.ग.]	१; मानवती–१७; मानिनी–१७.
२४९.	मत्ताक्रीडम्	[म.म.त.न.न.न.न.ल.ग]	१, १५, १८, १९; मत्ताक्रीडा–२, ५, ६, १०, १३, १७, २०, २२.
२५०.	कनकवलयम्	[न.न.न.न.न.न.न.ल.ल.]	१,

चतुर्विंशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२५१.	रामानन्दः	[म.म.म.म.म.म.म.म.]	१
२५२.	दुर्मिलका	[स.स.स.स.स.स.स.स.]	१, १२; दुर्मिला–२, १६; द्विमिला–१७; सवैया–१६;
२५३.	किरीटम्	[भ.भ.भ.भ.भ.भ.भ.भ.]	१, ६, १२, १७; सुभद्रं–१०; सुभद्रकम्–६; सवैया–१६; मेदुरदन्तं–१७; मेदुरदं-१७.
२५४.	तन्वी	[भ.त.न.स.भ.भ.न.यः]	१, २, ५, ७, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२.
२५५.	माधवी	[ज.ज.ज.ज.ज.ज.ज.ज.]	१; अनामयं–१७.
२५६.	तरलनयनम्	[न.न.न.न.न.न.न.न.]	१.

पंचविंशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२५७.	कामानन्दः	[म.म.म.म.म.म.म.म.ग.]	१
२५८.	क्रौञ्चपदा	[भ.म.स,भ.न.न.न.न.ग.]	१, २, ३, ५, ६, १०, १३, १५, १८, १९, २०; क्रौंचपदी–७; क्रोशपदा–१७; क्रौञ्चीपदा–२२.

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२५९.	मल्ली	[स.स.स.स.स.स.स.स.ग.]	१; मुदिरम्–१७.
२६०.	मणिगुणम्	[न.न.न.न.न.न.न.न.ल.]	१.

षड्विंशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२६१.	गोविन्दानन्दः	[म.म.म.म.ग.म.म.म.ग.ग.]	१; जीमूताधानम्–१७.
२६२.	भुजङ्गविजृम्भितम्	[म.म.त.न न.न.र स.ल.ग.]	१, २, ३, ४, ५, ६, ७, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२.
२६३.	अपवाहः	[म.न.न.न.न.न.न.स.ग.ग.]	१, ५, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०; अपवाहकः–२; २२; अवबाधम्–६;
२६४.	मागधी	[भ.भ.भ.भ.भ.भ.भ.भ.ग.ग.]	१; प्रियजीवितम्–१७.
२६५.	कमलदलम्	[न.न.न.न.न.न.न.न.ल.ल.]	१.

प्रकीर्णक छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१.	पिपीडिका	[म.म.त.न.न.न.न ज.भ.र.]	१, ५, १०; जलद दण्डक–२२
२	पिपीडिकाकरभः	[म.म.त.न.न.न.न.ल–५, ज.भ.र.]	१, ५, १०.
३.	पिपीडिकापणवः	[म.म.त.न.न.न.न.ल–१०, ज.भ.र.]	१, ५, १०.
४.	पिपीडिकामाला	[म.म त.न.न.न.न.ल–१५, ज.भ.र.]	१, ५, १०.
५.	द्वितीयत्रिभङ्गी	[ल–२०, भ.ग.ग.स.ग.ग.ल.ल.ग.ग.]	१, १६.
६	शालूरः	[ग.ग. ल–२४, स.]	१, १६.

दण्डक छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१.	चण्डवृष्टिप्रपातः	[न.न.र–७]	१, १०, १३, १५, १७; मेघमाला–३; चण्डवृष्टिः–५, १०, १६; चण्डवृष्टिप्रयातः–२, ६, १८, १९, २०, २२.
२.	प्रचितकः	[न.न.र–८]	१, २.
३.	अर्णः	[न.न.र–८]	१, ५, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १९; अर्णवः–२२.

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
४.	सर्वतोभद्रः	[न.न.य.य.य.य.य.य.य.य.]	१; प्रचितकः–६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १९.
५.	अशोककुसुम-मञ्जरी	[र.ज.र.ज.र.ज.र.ज.र.ल.]	१; अशोकपुष्पमंजरी–५, ६, १०, १५, १७; अशोकमंजरी–१६.
६.	कुसुमस्तबकः	[स.स.स.स.स.स.स.स.स.]	१, १५, १६, १७; कुसुमस्तर–५; कुसुमस्तरण–१०.
७.	मत्तमातङ्गः	[र.र.र.र.र.र.र.र.र.]	१, १०; मत्तमातंगलीलाकरः–५, १५, १७; मत्तमातंगखेलितः–१६.
८.	अनंगशेखरः	[ज.र.ज.र.ज.र.ज.र.ज.ग.]	१, ५, ६, १०, १५, १६, १७.

अर्द्धसमवृत्त

क्रमांक	छन्द-नाम		लक्षण		लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१.	पुष्पिताग्रा	१,३.*	[न.न.र.य.]	२.४.°	[न.ज.ज.र.ग.]	१, २, ३, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२.
२.	उपचित्रम्	,,	[स.स.स.ल.ग.]	,,	[भ.भ.भ.ग.ग.]	१, ६, १०, १३; १५; उपचित्रा–१७; उपचित्रकम्–२, ५, १८, १९, २०, २२.
३.	वेगवती	,,	[स.स.स.ग.]	,,	[भ.भ.भ.ग.ग.]	१, २, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२.
४.	हरिणप्लुता	,,	[स.स.स.ल.ग.]	,,	[न.भ.भ.र.]	१, २, १०, १३, १५, १६, १७, १८, २२; हरिणीप्लुता–१९, २०; हरिणपदम्–५; हरिणोद्धता–६.
५.	अपरवक्त्रम्	,,	[न.न.र.ल.ग.]	,,	[न.ज.ज.र.]	१, २, ३, ४, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२.
६.	सुन्दरी	,,	[स.स.ज.ग.]	,,	[स.भ.र.ल.ग.]	१, १५, १७; प्रबोधिता–१०; विबोधिता–१९; सुरमालिका–१७; वियोगिनी–१७.
७.	भद्रविराट्	,,	[त.ज.र.ग.]	,,	[म.स.ज.ग.ग.]	१, २, १०, १३, १७, १८, १९, २०, २२; भद्रविराटिका–५.

*–१,३. अर्थात् प्रथम और तृतीय चरण का लक्षण।

°–२,४. अर्थात् द्वितीय और चतुर्थ चरण का लक्षण।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क.	छन्द-नाम	लक्षण		सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
८.	केतुमती	१,३ [स.ज.स.ग.]	२,४. [भ.र.न.ग.ग.]	१, २, ३. ५, ६, १०, १३, १७, १८, १६, २०, २२.
६.	वाङ्मती	,, [र.ज.र.ज.]	,, [ज.र.ज.र.ग.]	१; यवमती–२, ५, ६, १०, १३, १८; अमरावती–१७; यमवती–१७, २०, २२, यवध्वनि–१६; २० के अनुसार 'र.ज.र.ज.ग.' 'ज.र.ज.र.ग.' लक्षण है।
१०.	षट्पदावली	,, [ज.र.ज.र.]	,, [र.ज.र.ज.ग.]	१, ५, १०, १४.

विषमवृत्त

१. उद्गता [*१. स.ज.स.ल. *२. न.स.ज.ग. *३. भ.न.भ.ग. *४. स.ज.स.ग.] — १, २, ४, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १६; उद्गतः २०,

२. उद्गताभेदः [१. स.ज.स.ल. २. न.स.ज.ग. ३. भ.न.ज.ल.ग. ४. स.ज.स.ग.] — १, १५, २२

३. सौरभम् [· त.स.ल. २. न.स.ज.ग. ३. र.न.भ.ग. ४. स.ज.स.ज.ग.] — १, १७; सौरभकम्–२, ५, ६, १०, १३, १५, १८, १६; सौरभकः–२०; सौरभक्तं–२२.

४, ललितम् [१. स.ज.स.ल. २. न.स.ज.ग. ३. न.न.स.स. ४. स.ज.स.ज.ग.] — १, २, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १६, २२, ललितः–२०

५, भावः [१. म.म, २. म.म. ३. म.म. ४. भ.भ.भ.ग.] — १.

६, वक्त्रम् [लक्षण अनुष्टुप् के समान है किन्तु द्वितीय और चतुर्थ चरण में 'म.ग.य ग.' होता है] — १, २, ३, ४, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १६, २०, २२.

७, पथ्यावक्त्रम् [लक्षण अनुष्टुप् के समान है किन्तु द्वितीय एवं चतुर्थ चरण का पांचवां छठा और सातवां अक्षर 'जगण' होता है] — १, २, ६, १०, १३, १५, १७, १८; पथ्या–५, १६, २०, २२.

---

*–१–प्रथम चरण का लक्षण, २–द्वितीय चरण का लक्षण, ३–तृतीय चरण का लक्षण, ४–चतुर्थ चरण का लक्षण।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

वैतालीय-छन्द

क्रमाङ्क	छन्दनाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१.	वैतालीयम्	*१,३. [१४ मात्रा–कला ६, र.ल.ग.]	१,२,४,६,७, १०, १३, १५,
		•२,४. [१६ मात्रा–कला ८, र.ल.ग]	१७,१८, १९, २०, २२.
२.	औपच्छन्दसकम्	१,३. [१६ मात्रा–कला ६, र.ल.ग.ग.]	१, २, ४, ६, ७, १०, १३,
		२,४. [१८ मात्रा–कला ८, र.य]	१५ १७, १८, १९. २०, २२.
३.	आपातलिका	१,३. [१४ मात्रा–कला ६, भ.ग.ग.]	१, २, ६, ७, १०, १३, १७.
		२,४. [१६ मात्रा–कला ८, भ ग.ग.]	१८, १९, २०. २२.
४.	नलिनम्	[१४ मात्रा–कला ६, भ.ग.ग.]	१,
५.	अपरं नलिनम्	[१६ मात्रा–कला ८, भ.ग.ग.]	१,
६.	दक्षिणान्तिका वैतालीयम्	[१४ मात्रा–ल.ग, कला ३, र ल.ग.]	१, ६, १०, १३, १७, २२.
७.	उत्तरान्तिका वैतालीयम्	[१६ मात्रा–कला ८, र.ल.ग.]	१, १३.
८.	प्राच्यवृत्तिः	१,३. [१४ मात्रा–कला ६, र.ल.ग.]	१, २, ६, १०, १३, १७,
		२,४. [१६ मात्रा–कला ३, ग, कला ३, र.ल.ग.]	१८, १९, २०, २२.
९.	उदीच्यवृत्तिः	१,३. [१४ मात्रा–ल.ग, कला ३, र.ल.ग.]	१, २, ६, १३, १७, १८, १९, २०, २२.
		२,४. [१६ मात्रा–कला ८, र.ल.ग.]	
१०.	प्रवृत्तकम्	१,३. [१४ मात्रा–ल. ग. कला ३, र.ल.ग.]	१, २, ६, १०, १३, १७, १८, १९, २०, प्रसक्तकम्–२२.
		२,४. [१६ मात्रा–कला ३, ग. कला ३, र.ल.ग.]	
११.	अपरान्तिका	[१६ मात्रा–कला ३, ग. कला ३, र.ल.ग.]	१, २, ६, १०, १३, १७, १८, २२; अपरान्तिकम्–१९.
१२.	चारुहासिनी	[१४ मात्रा–ल. ग. कला ३, र.ल.ग.]	१, २, ६, १०, १३, १७, १८, १९.

---

*१,३, अर्थात् प्रथम और तृतीय चरण का लक्षण।

•२,४. अर्थात् द्वितीय और चतुर्थ चरण का लक्षण।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

(ग.) छन्दों के लक्षण एवं प्रस्तारसंख्या[a]

क्रमाङ्क	छन्द नाम	लक्षण	प्रस्तार संख्या
		एकाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद २	
१.	श्रीः	ऽ	१
२.	इः	।	२
		द्व्यक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ४	
३.	कामः	ऽऽ	१
४.	मही	।ऽ	२
५.	सारः	ऽ।	३
६.	मधुः	।।	४
		त्र्यक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ८	
७.	ताली	ऽऽऽ	१
८.	शशी	।ऽऽ	२
९.	प्रिया	ऽ।ऽ	३
१०.	रमणः	।।ऽ	४
११.	पाञ्चालम्	ऽऽ।	५
१२.	मृगेन्द्रः	।ऽ।	६
१३.	मन्दरः	ऽ।।	७
१४.	कमलम्	।।।	८
		चतुरक्षर छन्द–प्रस्तारभेद १६	
१५.	तीर्णा	ऽऽऽ ऽ	१
१६.	धारी	ऽ।ऽ ।	११
१७.	नगाणिका	।ऽ। ऽ	६
१८.	शुभम्	।।। ।	१६
		पञ्चाक्षरछन्द–प्रस्तारभेद ३२	
१९.	सम्मोहा	ऽऽऽ ऽऽ	१
२०.	हारी	ऽऽ। ऽऽ	५
२१.	हंसः	ऽ।। ऽऽ	७
२२.	प्रिया	।।ऽ ।ऽ	१२
२३.	यमकम्	।।। ।।	३२

[a] यहाँ क्रमाङ्क और छन्द नाम वृत्तमौक्तिक के अनुसार दिए गए हैं। ऽ चिह्न गुरु अक्षर का सूचक है और । लघु का। अंतिम कोष्ठक में प्रस्तार भेदों की संख्या दी गई है।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
		षडक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ६४	
२४.	शेषा	ऽऽऽ ऽऽऽ	१
२५.	तिलका	।।ऽ ।।ऽ	२८
२६.	विमोहम्	ऽ।ऽ ऽ।ऽ	१९
२७.	चतुरंसम्	।।। ।ऽऽ	१६
२८.	मन्थानम्	ऽऽ। ऽऽ।	३७
२९.	शंखनारी	।ऽऽ ।ऽऽ	१०
३०.	सुमालतिका	।ऽ। ।ऽ।	४६
३१.	तनुमध्या	ऽऽ। ।ऽऽ	१३
३२.	दमनकम्	।।। ।।।	६४
		सप्ताक्षर छन्द–प्रस्तारभेद १२८	
३३.	शीर्षा	ऽऽऽ ऽऽऽ ऽ	१
३४.	समानिका	ऽ।ऽ ।ऽ। ऽ	४३
३५.	सुवासकम्	।।। ।ऽ। ।	११२
३६.	करहञ्चि	।।। ।।ऽ ।	९६
३७.	कुमारललिता	।ऽ। ।।ऽ ऽ	३०
३८.	मधुमती	।।। ।।। ऽ	६४
३९.	मदलेखा	ऽऽऽ ।।ऽ ऽ	२५
४०.	कुसुमततिः	।।। ।।। ।	१२८
		अष्टाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद २५६	
४१.	विद्युन्माला	ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽ	१
४२.	प्रमाणिका	।ऽ। ऽ।ऽ ।ऽ	८६
४३.	मल्लिका	ऽ।ऽ ।ऽ। ऽ।	१७१
४४.	तुङ्गा	।।। ।।। ऽऽ	६४
४५.	कमलम्	।।। ।।ऽ ।ऽ	९६
४६.	माणवक्रक्रीडितकम्	ऽ।। ऽऽ। ।ऽ	१०३
४७.	चित्रपदा	ऽ।। ऽ।। ऽऽ	५५
४८.	अनुष्टुप्		
४९.	जलदम्	।।। ।।। ।।	२५६
		नवाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ५१२	
५०.	रूपामाला	ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ	१
५१.	महालक्ष्मिका	ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ	१४७

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
५२.	सारङ्गम्	।।। ।SS ।।S	२०८
५३.	पाइंत्तम्	SSS S।। ।।S	२४१
५४.	कमलम्	।।। ।।। ।।S	२५६
५५.	बिम्बम्	।।। ।।S ।SS	६६
५६.	तोमरम्	।।S ।S। ।S।	३६४
५७.	भुजगशिशुसृता	।।। ।।। SSS	६४
५८.	मणिमध्यम्	S।। SSS ।।S	१६६
५९.	भुजङ्गसङ्गता	।।S ।S। S।S	१७२
६०.	सुललितम्	।।। ।।। ।।।	५१२

दशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद १०२४

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
६१.	गोपालः	SSS SSS SSS S	१
६२.	संयुतम्	।।S ।S। ।S। S	३६४
६३.	चम्पकमाला	S।। SSS ।।S S	१६६
६४.	सारवती	S।। S।। S।। S	४३६
६५.	सुषमा	SS। ।SS S।। S	३६७
६६.	अमृतगतिः	।।। ।S। ।।। S	४६६
६७.	मत्ता	SSS S।। ।।S S	२४१
६८.	त्वरितगतिः	।।। ।S। ।।। S	४६६
६९.	मनोरमम्	।।। S।S ।S। S	३४४
७०.	ललितगतिः	।।। ।।। ।।। ।	१०२४

एकादशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद २०४८

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
७१.	मालती	SSS SSS SSS SS	१
७२.	बन्धुः	S।। S।। S।। SS	४३६
७३.	सुमुखी	।।। ।S। ।S। ।S	८८०
७४.	शालिनी	SSS SS। SS। SS	२८६
७५.	वातोर्मी	SSS S।। SS। SS	३०५
७६.	उपजाति	[शालिनी वातोर्मी मिश्रित]	
७७.	दमनकम्	।।। ।।। ।।। ।S	१०२४
७८.	चण्डिका	S।S ।S। S।S ।S	६८३
७९.	सेनिका	।S। S।S ।S। S।	१३६६
८०	इन्द्रवज्रा	SS। SS। ।S। SS	३५७
८१.	उपेन्द्रवज्रा	।S। SS। ।S। SS	३५८
८२.	उपजाति	[इन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रा मिश्रित]	

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रम क	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
८३.	रथोद्धता	SIS III SIS IS	६९९
८४.	स्वागता	SIS III SII SS	४४३
८५.	भ्रमरविलसिता	SSS SII III IS	१००९
८६.	अनुकूला	SII SSI III SS	४८७
८७.	मोटनकम्	SSI ISI ISI IS	८७७
८८.	सुकेशी	SSS IIS ISI SS	३४५
८९.	सुभद्रिका	III III SIS IS	७०४
९०.	बकुलम्	III III III II	२०४८

द्वादशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ४०९६

क्रम क	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
९१.	आपीडः	SSS SSS SSS SSS	१
९२.	भुजङ्गप्रयातम्	ISS ISS ISS ISS	५८६
९३.	लक्ष्मीधरम्	SIS SIS SIS SIS	११७१
९४.	तोटकम्	IIS IIS IIS IIS	१७५६
९५.	सारङ्गकम्	SSI SSI SSI SSI	२३४१
९६.	मौक्तिकदाम	ISI ISI ISI ISI	२९२६
९७.	मोदकम्	SII SII SII SII	३५११
९८.	सुन्दरी	III SII SII SIS	१४६४
९९.	प्रमिताक्षरा	IIS ISI IIS IIS	१७७२
१००.	चन्द्रवर्त्म	SIS III SII IIS	१९७९
१०१.	द्रुतविलम्बितम्	III SII SII SIS	१४६४
१०२.	वंशस्थविला	ISI SSI ISI SIS	१३८२
१०३.	इन्द्रवंशा	SSI SSI ISI SIS	१३८१
१०४.	उपजाति	[वंशस्थविलेन्द्रवंशा मिश्रित]	
१०५.	जलोद्धतगतिः	ISI IIS ISI IIS	१८८६
१०६.	वैश्वदेवी	SSS SSS ISS ISS	५७७
१०७.	मन्दाकिनी	III III SIS SIS	१२१६
१०८.	कुसुमविचित्रा	III ISS III ISS	९७६
१०९.	तामरसम्	III ISI ISI ISS	८८०
११०.	मालती	III ISI ISI SIS	१३९२
१११.	मणिमाला	SSI ISS SSI ISS	७८१
११२.	जलधरमाला	SSS SII IIS SSS	२४१
११३.	प्रियम्वदा	III SII ISI SIS	१४००
११४.	ललिता	SSI SII ISI SIS	१३९७

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
११५.	ललितम्	S I I S S I I I I I I S	२०२३
११६.	कामदत्ता	I I I I I I S I S I S S	७०४
११७.	वसन्तचत्वरम्	I S I S I S I S I S I S	१३६६
११८	प्रमुदितवदना	I I I I I I S I S S I S	१२१६
११९.	नवमालिनी	I I I I S I S I I I S S	९४४
१२०.	तरलनयनम्	I I I I I I I I I I I I	४०९६

त्रयोदशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ८१९२

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१२१.	वाराहः	S S S S S S S S S S S S S	१
१२२.	माया	S S S S S I I S S I I S S	१६३३
१२३.	तारकम्	I I S I I S I I S I I S S	१७५६
१२४.	कन्दम्	I S S I S S I S S I S S I	४६८२
१२५.	पङ्क्तावलिः	S I I I I I I S I I S I I	७०३९
१२६.	प्रहर्षिणी	S S S I I I I S I S I S S	१४०१
१२७.	रुचिरा	I S I S I I I I S I S I S	२८०६
१२८.	चण्डी	I I I I I I I I S I I S S	१७९२
१२९.	मञ्जुभाषिणी	I I S I S I I I S I S I S	२७९६
१३०.	चन्द्रिका	I I I I I I S S I S S I S	२३६८
१३१.	कलहंसः	I I S I S I I I S I I S S	१७७२
१३२.	मृगेन्द्रमुखम्	I I I I S I I S I S I S S	१३९२
१३३.	क्षमा	I I I I I I S S I S I S S	
१३४.	लता	I I I I I S I S I I S I S	२९१२
१३५.	चन्द्रलेखम्	I I I I I S S I S S I S S	११८४
१३६.	सुद्युतिः	I I I I I S S S I S S I S	२३३६
१३७.	लक्ष्मीः	S S I S I I I I S I S I S	२८०५
१३८.	विमलगतिः	I I I I I I I I I I I I I	८१९२

चतुर्दशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद १६३८४

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१३९.	सिंहास्यः	S S S S S S S S S S S S S S	१
१४०.	वसन्ततिलका	S S I S I I I S I I S I S S	२९३३
१४१.	चक्रम्	S I I I I I I I I I I I I S	८१९१
१४२.	असम्बाधा	S S S S S I I I I I I S S S	२०१७
१४३.	अपराजिता	I I I I I I S I S I I S I S	५८२४
१४४.	प्रहरणकलिका	I I I I I I S I I I I I I S	८१२८
१४५.	वासन्ती	S S S S S I I I I S S S S S	४८१

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१४६.	लोला	SSS IIS SSS SII S S	३०९७
१४७.	नान्दीमुखी	III III SSI SSI S S	२३६८
१४८.	वैदर्भी	SSS SII III ISS S S	१००९
१४९.	इन्दुवदनम्	SII ISI IIS III S S	३८२३
१५०.	शरभी	SSS SII III SSI S S	
१५१.	अहिधृतिः	III III SII ISI I S	७०९६
१५२.	विमला	III ISI SII ISI I S	७०८८
१५३.	मल्लिका	IIS ISI IIS ISI I S	
१५४.	मणिगणम्	III III III III I I	१६३८४

पञ्चदशाक्षर छन्द प्रस्तारभेद ३२७६८

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१५५.	लीलाखेलः	SSS SSS SSS SSS SSS	१
१५६.	मालिनी	III III SSS ISS ISS	४६७२
१५७.	चामरम्	SIS ISI SIS ISI SIS	१०९२३
१५८.	भ्रमरावलिका	IIS IIS IIS IIS IIS	१४०४४
१५९.	मनोहंसः	IIS ISI ISI SII SIS	११६२८
१६०.	शरभम्	III III III III IIS	१६३८४
१६१.	निशिपालकम्	SII ISI IIS III SIS	१२०१५
१६२.	विपिनतिलकम्	III IIS III SIS SIS	९९९६
१६३.	चन्द्रलेखा	SSS SIS SSS ISS ISS	४६२५
१६४.	चित्रा	SSS SSS SSS ISS ISS	४६०९
१६५.	केसरम्	III ISI SII ISI SIS	११०८४
१६६.	एला	IIS ISI III III ISS	८१७२
१६७.	प्रिया	III III SSI SII SIS	११५८४
१६८.	उत्सवः	SIS III SII SII SIS	११७०७
१६९.	उडुगणम्	III III III III III	३२७६८

षोडशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ६५५३६

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१७०.	रामः	SSS SSS SSS SSS SSS S	१
१७१.	पञ्चचामरम्	ISI SIS ISI SIS ISI S	२१८४६
१७२.	नीलम्	SII SII SII SII SII S	२८०८७
१७३.	चञ्चला	SIS ISI SIS ISI SIS I	४३६९१
१७४	मदनललिता	SSS SII III SSS III S	२९१६९
१७५.	वाणिनी	III ISI SII ISI SIS S	११९८४

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१७६.	प्रवरललितम्	ISS SSS III IIS SIS S	१०,१७८
१७७.	गरुडरुतम्	III ISI SII ISI SSI S	१६,३७६
१७८.	चकिता	SII IIS SSS SSI III S	३०,७५१
१७९.	गजतुरगविलसितम्	SII SIS III III III S	३२,७२७
१८०.	शैलशिखा	SII SIS III SII SII S	
१८१.	ललितम्	SII SIS III SIS III S	३०,१५१
१८२.	सुकेशरम्	III IIS ISI IIS ISI S	
१८३	ललना	IIS III III ISI SII S	
१८४.	गिरिवरधृतिः	III III III III III I	६५,५३६

सप्तदशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद १,३१,०७२

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१८५.	लीलाधृष्टम्	SSS SSS SSS SSS SSS SS	१
१८६.	पृथ्वी	ISI IIS ISI IIS ISS IS	३८,७५०
१८७.	मालावती	III IIS ISI IIS ISS IS	३८,७५२
१८८.	शिखरिणी	ISS SSS III IIS SII IS	५९,३३०
१८९.	हरिणी	III IIS SSS SIS IIS IS	४६,११२
१९०.	मन्दाक्रान्ता	SSS SII III SSI SSI SS	१८,९२९
१९१.	वंशपत्रपतितम्	SII SIS III SII III IS	६४,९८३
१९२.	नर्दटकम्	III ISI SII ISI ISI IS	५६,२४०
	कोकिलकम्	III ISI SII ISI ISI IS	५६,२४०
१९३.	हारिणी	SSS SII III SSS ISS IS	३७,८७३
१९४.	भाराक्रान्ता	SSS SII III SIS IIS IS	४६,५७७
१९५.	मतङ्गवाहिनी	SIS ISI SIS ISI SIS IS	
१९६.	पद्मकम्	III IIS SSS SSI SSI SS	
१९७.	दशमुखहरम्	III III III III III II	१,३१,०७२

अष्टदशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद २,६२,१४४

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१९८.	लीलाचन्द्रः	SSS SSS SSS SSS SSS SSS	१
१९९.	मञ्जीरा	SSS SSS SII SSS IIS SSS	१२,६७२
२००.	चर्चरी	SIS IIS ISI ISI SII SIS	९३,०१९
२०१.	क्रीडाचन्द्रः	ISS ISS ISS ISS ISS ISS	३७,४५०
२०२.	कुसुमितलता	SSS SSI III ISS ISS ISS	३७,८५७
२०३.	नन्दनम्	III ISI SII ISI SIS SIS	७६,७२०
२०४.	नाराचः	III III SIS SIS SIS SIS	७४,९४४
२०५.	चित्रलेखा	SSS SII III ISS ISS ISS	३७,८७३

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
२०६.	भ्रमरपदम्	SII SIS III III III IIS	१,३०,९७१
२०७.	शार्दूलललितम्	SSS IIS ISI IIS SSI IIS	१,१६,५६९
२०८.	सुललितम्	III III SSS SSI SII SIS	
२०९.	उपवनकुसुमम्	III III III III III III	२,६२,४४

एकोनविंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ५,२४,२८८

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
२१०.	नागानन्दः	SSS SSS SSS SSS SSS SSS S	१
२११.	शार्दूलविक्रीडितम्	SSS IIS ISI IIS SSI SSI S	१,४९,३३७
२१२.	चन्द्रम्	III III III ISI III III I	५,२३,२६४
२१३.	धवलम्	III III III III III III S	२,६२,१४४
२१४.	शम्भुः	IIS SSI ISS SII SSS SSS S	३,१७२
२१५.	मेघविस्फूर्जिता	ISS SSS III IIS SIS SIS S	७५,७१४
२१६.	छाया	ISS SSS III IIS SSI SSI S	१.४९,४४२
२१७.	सुरसा	SSS SIS SII III ISS III S	२,३७,४५७
२१८.	फुल्लदाम	SSS SSI III IIS SIS SIS S	८५,७४५
२१९.	मृदुलकुसुमम्	III III III III III III I	५,२४,२८८

विंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद १०,४८,५७६

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
२२०.	योगानन्दः	SSS SSS SSS SSS SSS SSS SS	१
२२१.	गीतिका	IIS ISI ISI SII SIS IIS IS	३,७२,०७६
२२२.	गण्डका	SIS ISI SIS ISI SIS ISI SI	६,९९,०५१
२२३.	शोभा	ISS SSS III III SSI SSI SS	१,५१,४९०
२२४.	सुवदना	SSS SIS SII III ISS SII IS	४,६६,८३३
२२५.	प्लवङ्गभङ्गमङ्गलम्	ISI SIS ISI SIS ISI SIS IS	
२२६.	शशाङ्कचलितम्	SSI SII ISI SII ISI SII IS	
२२७.	भद्रकम्	SII SII SII SII SIS IIS IS	
२२८.	अनवधिगुणगणम्	III III III III III III II	१०,४८,५७६

एकविंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद २०,९७,१५२

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
२२९.	ब्रह्मानन्दः	SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS	१
२३०.	स्रग्धरा	SSS SIS SII III ISS ISS ISS	३,०२,९९३
२३१.	मञ्जरी	SIS III SIS III SIS III SIS	७,६५,६२७
२३२.	नरेन्द्रः	SII SIS III III ISI ISI ISI	४,५०,५१९
२३३.	सरसी	III ISI SII ISI ISI ISI SIS	७,११,६००
२३४.	रुचिरा	III ISI SII ISI ISI ISI SIS	७;११,६००
२३५.	निरुपमतिलकम्	III III III III III III III	२०,९७,१५२

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या

द्वाविंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ४१,९४,३०४

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
२३६.	विद्यानन्दः	SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS S	१
२३७.	हंसी	SSS SSS SSI III III III IIS S	१०,४८,३२१
२३८.	मदिरा	SII SII SII SII SII SII SII S	१७,९७,५५९
२३९.	मन्द्रकम्	SII SIS III SIS III SIS III S	१९,३१,२२३
२४०.	शिखरम्	SII SIS III SIS III SIS III S	१९,३१,२२३
२४१.	अच्युतम्	III III III III IIS ISI ISI S	
२४२.	मदालसम्	SSI SII ISS ISI IIS SIS III S	१९,१५,५०९
२४३.	तरुवरवृत्तम्	III III III III III III III I	४१,९४,३०४

त्रयोविंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ८३,८८,६०८

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
२४४.	दिव्यानन्दः	SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS SS	१
२४५.	सुन्दरिका	IIS IIS SII IIS SSI ISI ISI IS	३५,९०,०४४
	पद्मावतिका	IIS IIS SII IIS SSI ISI ISI IS	३५,९०,०४४
२४६.	अद्रितनया	III ISI SII ISI SII ISI SII IS	३८,६१,४२४
२४७.	मालती	SII SII SII SII SII SII SII SS	१७,९७,५५९
२४८.	मल्लिका	ISI ISI ISI ISI ISI ISI ISI IS	३५,९५,११८
२४९.	मत्ताक्रीडम्	SSS SSS SSI III III III III IS	४१,९४,०४९
२५०.	कनकवलयम्	III III III III III III III II	८३,८८,६०८

चतुर्विशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद १,६७,७७,२१६

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
२५१.	रामानन्दः	SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS	१
२५२.	दुर्मिलका	IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS	७१,९०,२३६
२५३.	किरीटम्	SII SII SII SII SII SII SII SII	१,४३,८०,४७१
२५४.	तन्वी	SII SSI III IIS SII SII III ISS	३६,५५,३६७
२५५.	माधवी	ISI ISI ISI ISI ISI ISI ISI ISI	१,१९,८३,७२६
२५६.	तरलनयनम्	III III III III III III III III	१,६७,७७,२१६

पञ्चविंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ३,३५,५४,४३२

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
२५७.	कामानन्दः	SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS S	१
२५८.	क्रौञ्चपदा	SII SSS IIS SII III III III III	S१,६७,७६.३८१
२५९.	मल्ली	IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS S	७१,९०,२३६
२६०.	मणिगुणम्	III III III III III III III III	I३,३५,५४,४३२

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या

षड्विंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ६,७१,०८,८६४

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
२६१.	गोविन्दानन्दः	SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS SS	१
२६२.	भुजङ्गविजृम्भितम्	SSS SSS SSI III III III SIS IIS IS	२,३८,५४,८४६
२६३.	अपवाहः	SSS III III III III III III IIS SS	८३,८८,६०१
२६४.	मागधी	SII SII SII SII SII SII SII SII SS	१,४३,८०,४७१
२६५.	कमलदलम्	III III III III III III III III II	६,७१,०८,८६४

प्रकीर्णक–छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण
१.	पिपीडिका	SSS SSS SSI III III III III ISI SII SIS
२.	पिपीडिकाकरभः	SSS SSS SSI III III III III III III SIS IIS IS
३.	पिपीडिकापणवः	SSS SSS SSI III III III III III III III IIS ISI ISI S
४.	पिपीडिकामाला	SSS SSS SSI III III III III III III III III III ISI SII SIS
५.	द्वितीयत्रिभंगी	III III III III III III IIS IIS SII SSS IIS S
६.	शालूरः	SSI III III III III III III III III IS

दण्डक–छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण
१.	चण्डवृष्टिप्रपातः	III III SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS
२.	प्रचितकः	III III SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS
३.	अर्णः	III III SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS
४.	सर्वतोभद्रः	III III ISS ISS ISS ISS ISS ISS ISS
५	अशोककुसुममञ्जरी	SIS ISI SIS ISI SIS ISI SIS ISI SIS I
६.	कुसुमस्तबकः	IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS
७.	मत्तमातङ्गः	SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS
८.	अनङ्गशेखरः	ISI SIS ISI SIS ISI SIS ISI SIS ISIS

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अर्धसम-वृत्त

क्रमांक छन्द-नाम	प्रथम और तृतीय चरण का लक्षण	द्वितीय और चतुर्थ चरण का लक्षण
१. पुष्पिताग्रा	।।। ।।। ऽ।ऽ ।ऽऽ	।।। ।ऽ। ।ऽ। ऽ।ऽ ऽ
२. उपचित्रम्	।।ऽ ।।ऽ ।।ऽ ।ऽ	ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽऽ
३. वेगवती	।।ऽ ।।ऽ ।।ऽ ऽ	ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽऽ
४. हरिणप्लुता	।।ऽ ।।ऽ ।।ऽ ।ऽ	।।। ऽ।। ऽ।। ऽ।ऽ
५. अपरवक्त्रम्	।।। ।।। ऽ।ऽ ऽऽ	।।। ।ऽ। ।ऽ। ऽ।ऽ
६. सुन्दरी	।।ऽ ।।ऽ ।ऽ। ऽ	।।ऽ ऽ।। ऽ।ऽ ।ऽ
७. भद्रविराट्	ऽऽ। ।ऽ। ऽ।ऽ ऽ	ऽऽऽ ।।ऽ ।ऽ। ऽऽ
८. केतुमती	।।ऽ ।ऽ। ।।ऽ ऽ	ऽ।। ऽ।ऽ ।।। ऽऽ
९. वाङ्मती	ऽ।ऽ ।ऽ। ऽ।ऽ ।ऽ।	।ऽ। ऽ।ऽ ।ऽ। ऽ।ऽ ऽ
१०. षट्पदावली	।ऽ। ऽ।ऽ ।ऽ। ऽ।ऽ	ऽ।ऽ ।ऽ। ऽ।ऽ ।ऽ। ऽ

विषमवृत्त

छन्द-नाम	प्रथम / तृतीय चरण	द्वितीय / चतुर्थ चरण
१. उद्गता	[प्र.च.]* ।।ऽ ।ऽ। ।।ऽ ।	[द्वि.च.]* ।।। ।।ऽ ।ऽ। ऽ
	[तृ.च.]* ऽ।। ।।। ऽ।। ऽ	[च.च.]* ।।ऽ ।ऽ। ।।ऽ ऽ
२. उद्गताभेदः	[प्र.च.] ।।ऽ ।ऽ। ।।ऽ ।	[द्वि.च.] ।।। ।।ऽ ।ऽ। ऽ
	[तृ.च.] ऽ।। ।।। ।ऽ। ।ऽ	[च.च.] ।।ऽ ।ऽ। ।।ऽ ऽ
३. सौरभम्	[प्र.च.] ।।ऽ ।ऽ। ।।ऽ ।	[द्वि.च.] ।।। ।।ऽ ।ऽ। ऽ
	[तृ.च.] ऽ।ऽ ।।। ऽ।। ऽ	[च.च.] ।।ऽ ।ऽ। ।।ऽ ।ऽ। ऽ
४. ललितम्	[प्र.च.] ।।ऽ ।ऽ। ।।ऽ ।	[द्वि.च.] ।।। ।।ऽ ।ऽ। ऽ
	[तृ.च.] ।।। ।।। ।।ऽ ।।ऽ	[च.च.] ।।ऽ ।ऽ। ।।ऽ ।ऽ। ऽ
५. भावः	[प्र.च.] ऽऽऽ ऽऽऽ	[द्वि.च.] ऽऽऽ ऽऽऽ
	[तृ.च.] ऽऽऽ ऽऽऽ	[च.च.] ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽ
६. वक्त्रम्	[समचरणे] ऽऽऽ, ऽ. ।ऽऽ. ऽ	
७. पथ्यावक्त्रम्	[समचरणे] ।ऽ। (५.६.७ वां वर्ण)	

---

*[प्र.च.] प्रथम चरण का लक्षण। [द्वि.च.] द्वितीय चरण का लक्षण
[तृ.च.] तृतीय चरण का लक्षण। [च.च.] चतुर्थ चरण का लक्षण

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

(घ.) विरुदावली छन्दों के लक्षण[*]

छन्द-नाम	वर्णसंख्या या मात्रासंख्या	लक्षण	विशेष
द्विगा कलिका	१६ मा०च०	४–चतुष्कल	चतुष्कुल की मैत्री
रादिकलिका	२० मा०च०	४–पञ्चकल	१–२ और ३–४ पंचकलों की मैत्री
मादिकलिका	४८ मा०च०	मगण, षट्कल–७.	
नादिकलिका	२४ मा०च०	त्रिकल–८, अर्थात् नगण ८,	अनुप्रासयुक्त
गलादिकलिका	२० मा०च०	४–पंचकल, प्रत्येक पंचकल के आदि में गुरु	
मिश्रा कलिका	२७ व०च०	गुरु-लघु-मिश्र	तिल-तंदुल के समान गुरु और लघु मिश्रित हों।
(१) मध्या कलिका		आदि और अन्त में कलिका और मध्य में गद्य	
(२) मध्या कलिका		आदि और अन्त में मैत्री-रहित गद्य और मध्य में कलिका।	
द्विभङ्गी कलिका	२८ व०च०	गुरु-लघु-क्रम से २४ वर्ण, अन्त में ४ गुरु	६ भंग होते हैं इनमें भंग होने पर भी मैत्री होती है। द्वितीय और चतुर्थ मधुर एवं श्लिष्ट होते हैं।
विदग्धत्रिभङ्गी कलिका	२४ व०च०	त.न,त.न,त.न,भ.भ.	युग्मार्ण-भंग और दोनों भगणों की मैत्री

---

[*]कलिका में प्रत्येक के चार चरण होते हैं। चण्डवृत्तों में प्रत्येक में ६, ८, १०, १२, १४ तक कलिका विरुद होते हैं। विरुद तीन होते हैं। धीर, वीर, देव आदि सम्बोधन होते हैं। यहाँ केवल चण्डवृत्त छन्दों के लक्षण मात्र दिये गये हैं, कलिका विरुदादि के नहीं दिये गये हैं क्योंकि ये ऐच्छिक होते हैं।

संकेत—म = मगण, य=यगण, र=रगण, स=सगण, त=तगण, ज=जगण, भ=भगण, न=नगण, ग=गुरु, ल=लघु, षट्कल=६ मात्रा, पञ्चकल=५ मात्रा, चतुष्कल=४ मात्रा, त्रिकल=३ मात्रा, च=चतुष्पदी, व=वर्ण, मा=मात्रा

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

छन्द-नाम	वर्णसंख्या या मात्रासंख्या	लक्षण	विशेष
तुरगत्रिभंगी कलिका	२२ व०च०	त.भ.ल,त भ.ल,त.भ.ल.ग.	
पद्य ,, ,,	३२ मा०च०		देखें, प्रथम खंड के चतुर्थ प्रकरण में पद्मावती, त्रिभङ्गी, दण्डकलादिछन्द
हरिणप्लुत ,,	३३व०च०	न.य.भ,न.य.भ,न.य.भ,भ.भ.	६ भंग हों और दोनों भगणों की मैत्री हो।
नर्त्तक ,, ,,	३४व०च०	न.य.भ,न य.भ,न.य.भ,न.ज.ल.	
भुजङ्ग ,, ,,	३०व०च०	म.भ.ल.ल,म.भ.ल.ल,म.भ. ल.ल,भ.भ.	दूसरे और चौथे में भंग, क्वचित् चौथे में भंग न भी हो, दोनों भगणों की मैत्री हो।
चलिगतात्रिगता ,, ,,	३३व०च०	म.न.न,म.न.न,म.न.न,भ.भ.	तृतीय वर्ण में भंग हो।
ललिता ,, ,, ,,	३०व०च०	त.न.भ,त.न.भ त.न.भ,भ.	द्वितीय वर्ण में भंग हो।
वरतनु ,, ,, ,,	३६व०च०	न.य.न.ल,न.य.न.ल,न य.न.ल, भ.भ.	६ भंग होते हैं।
मुग्धा द्विपादिका युग्म-भंगा कलिका	२०व०च०	म.त.ल,म.त.ल,भ.भ.	युग्मभंग
प्रगल्भा ,, ,, ,,	१८व०च०	म.त.ल,म.त.ल,ग.ग.ग.ग.	
मध्या(१),, ,, ,,	१८व०च०	म.भ.स.म.भ.भ.	
,, (२) ,, ,, ,,	१४व०च०	न ल.भ.न.ज ल.	
,, (३) ,, ,, ,,	११व०च०	न.न.स.ल.ल.	
,, (४) ,, ,, ,,	११व०च०	न.ज.न.ल.ल.	
शिथिला,, ,, ,,	१८व०च०	म.त.ल,म.त.ल,ल.ल.ल.ल.	
मधुरा ,, ,, ,,	२२व०च०	म.भ.ल.ल,म.भ.ल.ल.भ,भ.	
तरुणी ,, ,, ,,	२०व०च०	म.भ.ल.ल,म.भ.ल.ल,ग.ग.ग.ग.	
	प्रति चरण-वर्ण		
पुरुषोत्तम चण्डवृत्त	६	स.स.भ.	४, ८ वर्ण श्लिष्ट; ३, ६ वर्ण दीर्घ;
तिलक ,,	१५	न.न.स.न.न.	१०वां वर्ण मधुर;
अच्युत ,,	२४	न.य.न.य.न.य.न.य. शेष चरण में—न.य.न.य.न.य.न.ज.	छठा वर्ण श्लिष्टपर; ४ या ८ पद होते हैं।
वर्द्धित ,,	१३	भ.न.ज.ज.ल.	२, ६, १२वां वर्ण श्लिष्ट

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

छन्द-नाम		प्रति चरण-वर्ण	लक्षण	विशेष
रण	,,	१२(१४)	ज.र.ज र. अन्तिम चरण में–ज.भ ल.ज भ.ल.	१, ३, ५, ७, ६, ११वां वर्ण श्लिष्ट; पद - संख्या ऐच्छिक होती है।
वीर	,,	१२	म.भ न.न.	१, २, ३, ४, वर्ण श्लिष्ट; पद-संख्या १२
शाक	,,	१०	भ भ.र.ल.	५वां वर्ण श्लिष्ट; ७, ६वां वर्ण दीर्घ; दूसरा वर्ण मधुर;
मातङ्गखेलित	,,	१०	र.र.य.ल.	५, १०वां वर्ण श्लिष्ट या मधुर; ५वें वर्ण पर भंग और मैत्री; १, ३, ६, ८वां वर्ण दीर्घ; पद - संख्या ऐच्छिक;
उत्पल	,,	६(१२)	भ.भ. मतान्तरे–भ.भ.भ.भ.	२, ५वां वर्ण श्लिष्ट; पद-संख्या ऐच्छिक;
गुणरतिः	,,	७(१४)	स.न.ल. मतान्तरे–स.न.ल.स न.ल.	३ रा वर्ण दीर्घ; पद-संख्या ऐच्छिक;
कल्पद्रुम	,,	६	त.ज.ग.	२, ३, ६, ६वां वर्ण श्लिष्ट; ६वां वर्ण श्लिष्टपर; पद-संख्या ऐच्छिक;
कन्दल	,,	६	भ.भ.	२ रा वर्ण मधुर; ५वां वर्ण श्लिष्ट;
अपराजित	,	११	भ.स.ज.ग ल.	२ रा वर्ण मधुर; ६, ८, १०वां वर्ण दीर्घ;
नर्त्तन	,,	११	स.स.र.ल.ल.	४, ७वां वर्ण श्लिष्ट; ८वां वर्ण मधुर;
तरत्समस्त	,,	११	ज.म.स.ल.ल.	३, ५. ६ वर्ण श्लिष्ट, संश्लिष्ट एवं मधुर;
वेष्टन	,,	१०	न.य.ल ल.ल.ल.	७वां वर्ण श्लिष्ट; ५, ६, वर्ण दीर्घ.
अस्खलित	,,	१०	त.र.भ ल.	३, ५, ७, ८वां वर्ण संश्लिष्ट; प्रथम वर्ण दीर्घ;
पल्लवित	,,	१३	भ त.न.ल.ल.ल.ल.	२ रा वर्ण शिथिल या मधुर, ४, ५वां वर्ण दीर्घ;

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

छन्द-नाम	प्रति चरणवर्ण	लक्षण	विशेष
समग्रम् ,,	१२(१३)	ज र.ज.र. अन्तिम चरण में–ज.र.ज.र ल.	३ रा वर्ण मधुर; ५वां वर्ण श्लिष्ट; पद-संख्या ऐच्छिक.
तुरग ,,	१०	भ.न.ज.ल.	२, ६वां वर्ण मधुर; पद-संख्या ऐच्छिक;
पङ्केरुह ,,	६	न.य.	छठा वर्ण कवर्ग-रचित. छठा वर्ण मधुर और इसी वर्ण पर भंग और मैत्री भी। इकारादि स्वरभेद होने पर इसी छन्द के भेद बनते हैं। पद-संख्या ऐच्छिक ।
सितकञ्ज ,,	६	न.य.	छठा वर्ण चवर्गीय; शेष पंकेरुह के अनुसार ।
पाण्डूत्पल ,,	६	न य.	छठा वर्ण टवर्गीय; शेष पंकेरुह के समान ।
इन्दीवर ,,	६	न.य.	छठा वर्ण तवर्गीय; शेष पंकेरुहवत् ।
अरुणाम्भोरुह ,,	६	न.य.	छठा वर्ण पवर्गीय; शेष पंकेरुहवत् ।
फुल्लाम्बुज ,,	६	न.य.	छठे वर्ण का भंग और मैत्री यवर्गीय लकार से होती है ।
चम्पक ,,	६	भ.न.	२ रा वर्ण मधुर एवं क्वचित् श्लिष्ट; पद-संख्या ऐच्छिक ।
वञ्जुल ,,	७	न.ज.ल.	५वां वर्ण मधुर; पद-संख्या ऐच्छिक ।
कुन्द ,,	६	भ.ज.	२, ६ वर्ण मधुर एवं क्वचित् श्लिष्ट; पद-संख्या ऐच्छिक.
बकुलभासुर ,,	१६मा०	४ चतुष्कल, जगण रहित	शृङ्खलाबद्ध;
बकुलमङ्गल ,,	१२व०	भ.भ.भ.भ.	तृतीय भगण शृङ्खलाबद्ध; पद-संख्या ऐच्छिक;
मञ्जरी कोरक	१२व०	भ.भ.भ.भ.	प्रथम मञ्जरी पश्चात् कोरक; मञ्जरी का लक्षण नहीं; आद्यन्त यमकांकित शृङ्खला रहित; २० पद;

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

छन्द-नाम	प्रतिचरण वर्ण	लक्षण	विशेष
गुच्छक ,,	१६	न.स.ज.न.ज.ल.	सानुप्रास एवं यमकांकित; १६ पद;
कुसुम ,,	१२	न.न.न.न.	२० पद; पादान्तयमक;
दण्डकत्रिभङ्गी-कलिका	३३	न.न. र-६.	पद-संख्या ऐच्छिक.
सम्पूर्णविदग्ध-त्रिभंगी कलिका	२४	त.न.त.न.त.न. भ.भ.	८ पद; आशीःपद्ययुक्त; द्वितीयाक्षर में भंग;
मिश्रकलिका		कलिका-लक्षण–भ.न.ज.ल.	६ कलिका; आद्यन्त में आशीःपद्य; मध्य में कलिका विरुदसहित.

साधारण चण्डवृत्त — सामान्यलक्षण––कलान्यास ऐच्छिक; वर्ण संख्या ३ से कम नहीं और १७ वर्ण से अधिक नहीं। जिस गण से प्रारम्भ हो वही गण अन्त तक रहना चाहिये। प्र, ङ्ग, ग्र. स्फु, स्मि, स्म, क्व इत्यादि संयुक्त वर्णों के संयोग होने पर भी इस प्रकरण में पूर्व-पूर्व वर्ण का लघुत्व होता है। मात्रिक में चतुष्कलद्वय होने पर जगण का प्रयोग निषिद्ध है। इसके अनेक भेद होते हैं।

साप्तविभक्तिकीकलिका — (प्रथमा विभक्ति) भ. स; (द्वितीया०) न. य; (तृतीया०) न.न.स ल.; (चतुर्थी०) त. त. त.; (पंचमी०) य. य; (षष्ठी०) त. त; (सप्तमी०) स. स; (सम्बोधन) त. न; सब विभक्तियों के चार-चार चरण होते हैं।

अक्षमयी कलिका — अ से क्ष पर्यन्त प्रत्येक अक्षर के दो चतुष्कल होते हैं। चतुष्कल में ऽऽ, । । । ।, ऽ । ।, । । ऽ का यथेच्छ प्रयोग; जगण का प्रयोग निषिद्ध है।

सर्वलघुकलिका	१५, १६ या १७	सर्व लघु	कलिका सहित

खण्डावली

तामरस खण्डावली	११	र.स.स.ल.ल.	कलिका के आद्यन्त में विरुद-रहित आशीःपद्य
मञ्जरी खण्डावली	१६मा०	चार चतुष्कल जगण रहित	आद्यन्त में आशीःपद्य.

T　　CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पञ्चम परिशिष्ट

सन्दर्भ-गन्थों में प्राप्त वर्णिक-वृत्त*

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
		चतुरक्षर-छन्द	
२.	व्रीडा	य ग	१०, ६; क्रीडा–१७; वृद्धिः–१६
३.	समृद्धिः	र ग	१०; पुण्य–११; नन्दः–१७; चर्द्धिः १६
४.	सुमतिः	स ग	१०, १६; भ्रमरी–११; दोला–१७; रामा–१७,
५.	सोमप्रिया	त ग	१०; धरा–१७; तारा–१६.
७.	सुमुखी	भ ग	१०, १६; ललिता–११; बला–१७.
८.	मृगवधूः	न ग	७, १०, १५; सती–१७; मधु–१६; कुसुमिता– २२; तरणिजा–१७.
९.	मुग्धम्	म ल	१७; गोपाल–१७; वल्ली–१६.
१०.	वारि	य ल	१७; कर्तृ–१७; सद्म–१६.
१२.	कारु	स ल	१७; वीरु–१७; कदली–१६
१३.	तावुरि	त ल	१७; कृष्ण–१७; त्रपु–१६.
१४.	ऋजु	ज ल	१७; जपा–१६.
१५.	अनृजु	भ ल	१७; निशि–१७; जतु–१६.
		पञ्चाक्षर-छन्द	
२.	नाली	य म ग	१७;
३.	प्रीतिः	र ग ग	१०, १६; सूरिणी–१७.
४.	घनपंक्तिः	स ग ग	१०; प्रगुणं–१७; चतुर्वंशा–१७; सुवती–१६.
६.	सती	ज ग ग	१०, १६; शिखा–११; कण्ठी–१७.
८.	कलत्ति	न ग ग	१७;

---

*जिन छन्दों का वृत्तमौक्तिक में समावेश नहीं हुआ है और जो अन्य सन्दर्भ-ग्रन्थों में प्राप्त होते हैं वे अवशिष्ट छन्द प्रस्तार-क्रम से इस परिशिष्ट में दिए गए हैं। प्रारम्भ में प्रस्तारानुक्रम से उस छन्द की प्रस्तार-संख्या दी है, तत्पश्चात् छन्द का नाम और उसके लक्षण दिए हैं। तदनन्तर सन्दर्भ-ग्रन्थ का संकेत और छन्द का नाम-भेद एवं सन्दर्भ-ग्रन्थ का संकेतांक दिया है। सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची और संकेतांक पृष्ठ ४१४ के अनुसार है।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
९.	सावित्री	म ल ग	१०; हासिका–१७.
१०.	जया	य ल ग	६, १०; नरी–१७.
११.	विदग्धकः	र ल ग	१०; वागुरा–११; वैनस–१७; शामिनी–२२; धृति–१९.
१३.	नन्दा	त ल ग	६, १०, १९; कणिका–१७.
१४.	शिला	ज ल ग	१७.
१५.	रतिः	भ ल ग	१०; मण्डलम्–१७; शर्म–१९.
१६.	अभिमुखी	न ल ग	१०; मृगचपला–११; कनकमुखी–११; धृतिः–१९; सुलू–१७.
१७.	कुम्भारि	म ग ल	१७.
१८.	भ्रूः	य ग ल	१७.
१९.	ह्रीः	र ग ल	१७.
२०.	पालि	स ग ल	१७.
२१.	किञ्जल्कि	त ग ल	१७.
२२.	वार्द्धि	ज ग ल	१७.
२३.	विट्	भ ग ल	१७.
२४.	पांशु	न ग ल	१७.
२५.	मालीनम्	म ल ल	१७.
२६.	वरीयः	य ल ल	१७.
२७.	कल्किः	र ल ल	१७.
२८	जतु	स ल ल	१७.
२९.	छिद्रम्	त ल ल	१७.
३०.	क्षुपम्	ज ल ल	१७; हरम्–१७.
३१.	क्षुत्	भ ल ल	१७; विष्णुः–१७.

षडक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
	शिखण्डिनी	य म	१०, २०; पन्था–१७.
३.	मालिनी	र म	३, १०; करेणु–१७.
४.	सूचीमुखी	स म	१०, २०; अभिख्या–१७.
५.	वभ्रूः	त म	१७.
६.	कञ्जा	ज म	१७.
७.	विक्रान्ता	भ म	१०; सिन्धुरया–१७.
८.	गुणवती	न म	१७.
९.	सुनन्दा	म य	१०; तन्त्री–१७; तटी–१९.
११.	पिकाली	र य	१७.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१२.	विमला	स य	१०; कमनी–१७.
१४.	अरजस्का	ज य	१७.
१५.	कामलतिका	भ य	१०; ईति–१७; कामललिता–१९.
१७.	तटी	म र	१०; अवोढा–१७.
१८.	कच्छपी	य र	१७.
२०.	मृदुकीला	स र	१७.
२१.	जला	त र	१०; स्थाली–१७.
२२.	वलीमुखी	ज र	१७.
२३.	लघुमालिनी	भ र	१०; शुनकम्–१७.
२४.	निरसिका	न र	१७; मणिरुचिः–१९.
२५.	मुकुलम्	म स	१०, १९; वीथी–११; निस्का–१७.
२६.	मशगा	य स	१७.
२७.	कमंदा	र स	१७.
२९.	वसुमती	त स	१०, १७.
३०.	कुही	ज स	१७.
३१.	सौरभि	भ स	१७.
३२.	सरि	न स	१७.
३३.	साहूति	म त	१७.
३४.	विन्दू	य त	१७.
३५.	मन्त्रिका	र त	१७.
३६.	ढुण्ढि	स त	१७.
३८.	क्षमापालि	ज त	१७.
३९.	राढि	भ त	१७.
४०.	अनिभृतम्	न त	१७.
४१.	मङ्कुरम्	म ज	१७.
४२.	वृत्तहारि	य ज	१७.
४३.	आर्भवम्	र ज	१७.
४४.	मधुमारकम्	स ज	१७.
४५.	हाटकशालि	त ज	१७.
४७.	पाकलि	भ ज	१७.
४८.	पुटमर्द	न ज	१७.
४९.	कंसरि	म भ	१७.
५०.	सोमश्रुति	य भ	१७.
५१.	सोपधि	र भ	१७.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्दनाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
५२.	गुरुमध्या	स भ	१०; शंखद्युतिः–१७.
५३.	इन्धा	त भ	१७.
५४.	सावद्रु	ज भ	१७.
५५.	नन्दि	भ भ	१७.
५६.	अयमितम्	न भ	१७.
५७.	प्रोथा	म न	१७.
५८.	अत्तिः	य न	१७.
५९.	कच्छपी	र न	१०; प्रतरि–१७.
६०.	विससि	स न	१७.
६१.	अतिकलि	त न	१७.
६२.	सुवाथि	ज न	१७.
६३.	अनति	भ न	१७.

सप्ताक्षर-छन्द

२.	प्रहाण	य म ग	१७.
३.	सैरवी	र म ग	१७.
४.	शम्बूकः	स म ग	१७.
५.	निम्नाशया	त म ग	१७.
६.	सुमोहिता	ज म ग	१७.
७.	अधीरा	भ म ग	१७
८.	होला	न म ग	१७.
९	इभभ्रान्ता	म य ग	१७.
१०.	अभीकं	य य ग	१७.
११.	अहिंसा	र य ग	१७.
१२.	रसधारि	स य ग	१७.
१३.	वेधा	त य ग	१७.
१४.	पद्या	ज य ग	१७.
१५.	किणपा	भ य ग	१७.
१६.	कुमुद्वती	न य ग	१०; सुरि–१७.
१७.	किर्मीरम्	म र ग	१७.
१८.	वयस्यः	य र ग	१७.
१९.	हंसमाला	र र ग	६, १०; भूरिधाम–१७.
२०.	दीप्ता	स र ग	१०; हंसमाला–१७, १४.
२१.	भीमार्जुनम्	त र ग	१७.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२२.	सुभद्रा	ज र ग	१०; पुरोहिता–१७.
२३.	होडपदा	भ र ग	१७.
२४.	मनोज्ञा	न र ग	१०; खरकरा–१७.
२६.	मुदिता	य स ग	१०; महनीया–१७.
२७.	उद्धता	र स ग	१०, ३; शरगीति–१७; उद्यता–२२.
२८.	करभित्	स स ग	१७.
२९.	भ्रमरमाला	त स ग	१०, ३, १९; स्थूला–१७; वज्रक–२०.
३१.	विधुवक्त्रा	भ स ग	१०; रुचिरं–१७; मदलेखा–१९.
३२.	वृतिः	न स ग	१७.
३३.	हिन्दीरं	म त ग	१७.
३४.	ऊपिकम्	य त ग	१७.
३५.	मृष्टपादा	र त ग	१७.
३६.	मायाविनी	स त ग	१७.
३७.	राजराजी	त त ग	१७.
३८.	कुठारिका	ज त ग	१७.
३९.	कल्पमुखी	भ त ग	१७.
४०.	परभृतम्	न त ग	१७.
४१.	महोन्मुखी	म ज ग	१७.
४२.	महोद्धता	य ज ग	१७.
४४.	विमला	स ज ग	१०; कठोद्गता–१७.
४५.	पूर्णा	त ज ग	१७.
४६.	वह्निर्वलि	ज ज ग	१७.
४७.	शारदी	भ ज ग	१०; उन्दरि–१७; धुनी–१९
४८.	पुरटि	न ज ग	१७.
४९.	सरलम्	म भ ग	१०, १९; वर्करिता–१७.
५०.	केशवती	य भ ग	१७.
५१.	सौरकान्ता	र भ ग	१७.
५२.	अधिकारी	स भ ग	१७.
५३.	चूडामणि	त भ ग	१४; निर्वाधिका–१७.
५४.	महोधिका	ज भ ग	१७.
५५.	मौरलिकम्	भ भ ग	१७; कलिका–१०. १९; सोपानं–११ २२; भोगवती–११.
५६.	स्वनकरी	न भ ग	१७.
५७.	नवसरा	म न ग	१७.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
५८.	चिररुचिः	य न ग	१७.
५९.	बहुलया	र न ग	१७.
६०.	यमनकम्	स न ग	१७.
६१.	हीरम्	त न ग	१७; मधुकरिका–१०; वज्रम्–११.
६२.	स्विदा	ज न ग	१७;
६३.	चित्रम्	भ न ग	१०, १९; उलपा–१७.
६५.	नीहारी	म म ल	१७.
६६.	कंसासारि	य म ल	१७.
६७.	र्खावणी	र म ल	१७.
६८.	गृहिणी	स म ल	१७.
६९.	र्वाधष्णु	त म ल	१७; शूर–१७.
७०.	श्रोणी	ज म ल	१७;
७१.	व्याहारी	भ म ल	१७.
७२.	किशलयं	न म ल	१७
७३.	देवलम्	म य ल	१७.
७४.	नर्द्धि	य य ल	१७.
७५.	अनासादि	र य ल	१७.
७६.	अलालापि	स य ल	१७.
७७.	गुञ्जा	त य ल	१७.
७८.	ऋचा	ज य ल	१७.
७९.	नन्दथु	भ य ल	१७.
८०.	अनु	न य ल	१७.
८१.	अम्मेथी	म र ल	१७.
८२.	मयूरी	य र ल	१७.
८३.	सामिका	र र ल	१७.
८४.	प्रोञ्छिता	स र ल	१७.
८५.	वृन्दा	त र ल	१७.
८६.	प्रर्तादि	ज र ल	१७.
८७.	मीनपदी	भ र ल	१७.
८८.	मणिमुखी	न र ल	१७.
८९.	मौलिस्रक्	म स ल	१७.
९०.	परभानु	य स ल	१७.
९१.	मेथिका	र स ल	१७.
९२.	गोधि	स स ल	१७.

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
९३.	सरलांघ्रि	त स ल	१७.
९४.	विरोही	ज स ल	१७.
९५.	वरजापि	भ स ल	१७.
९७.	सम्पाकः	म त ल	१७.
९८.	पद्धरि	य त ल	१७.
९९.	गूर्णिका	र त ल	१७.
१००.	काह्नी	स त ल	१७.
१०१.	कामोद्धता	त त ल	१७.
१०२.	खर्परि	ज त ल	१७.
१०३.	शन्तनु	भ त ल	१७; लीला–१७.
१०४.	मुरजिका	न त ल	१७.
१०५.	कालम्बी	म ज ल	१७.
१०६.	उपोहा	य ज ल	१७.
१०७.	कार्पिका	र ज ल	१७.
१०८.	मुहुरा	स ज ल	१७.
१०९.	दोषा	त ज ल	१७.
११०.	उपोदरि	ज ज ल	१७.
१११.	जासरि	भ ज ल	१७.
११३.	भूरिमधु	म भ ल	१७.
११४.	भूरिवसु	य भ ल	१७.
११५.	हर्षिणी	र भ ल	१७,
११६.	लोलतनु	स भ ल	१७.
११७.	क्रोडान्तिकम्	त भ ल	१७.
११८.	स्तरधि	ज भ ल	१७.
११९.	पौरसरि	भ भ ल	१७.
१२०.	वीरवटु	न भ ल	१७.
१२१.	अमतिः	म न ल	१७.
१२२.	अहृतिः	य न ल	१७.
१२३.	वरशशि	र न ल	१७.
१२४.	धनधरि	स न ल	१७.
१२५.	मुशकि	त न ल	१७.
१२६.	कुरदि	ज न ल	१७.
१२७.	कोशि	भ न ल	१७.

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
	अष्टाक्षर-छन्द		
२.	अनिर्भरः	य म ग ग	१७.
७.	इन्द्रफला	भ म ग ग	१७; इन्द्रबला–१७.
८.	गोपावेदी	न म ग ग	१७.
१०.	भूमधारी	य य ग ग	१७.
११.	मौलिमालिका	र य ग ग	१७.
१२.	युगधारि	स य ग ग	१७.
१४.	विराजिकरा	ज य ग ग	१७.
१५.	वात्या	भ य ग ग	१७.
१६.	पाञ्चालांघ्रि	न य ग ग	१७.
१८.	कुलाधारी	य र ग ग	१७; शुद्धगा–१७.
१९.	पद्मिनी	र र ग ग	२२.
२०.	परिधारा	स र ग ग	१७.
२१.	विभा	त र ग ग	१०.
२२.	यशस्करी	ज र ग ग	१७.
२४.	कुररिका	न र ग ग	१७.
२६.	मनोला	य स ग ग	१७.
२८.	पञ्चशिखा	स स ग ग	१७; रमणीयशिखा–१७.
३०.	भार्ङ्गी	ज स ग ग	१७.
३२.	गुणलयनी	न स ग ग	१०; रुद्राली–१७.
३४.	पारान्तचारी	य त ग ग	१७.
३६.	कौचमारः	स त ग ग	१७.
३७.	कराली	त त ग ग	१७; केतुमाला–१९.
३८.	वारिशाला	ज त ग ग	१७; वितानं–१७.
४०.	वृत्तभारः	न त ग ग	१७.
४३.	सिंहलेखा	र ज ग ग	३, १०, १७; मालिनी–७.
४४.	दिग्गीशः	स ज ग ग	१७.
४५.	सारावनदा	त ज ग ग	१७.
४७	कृष्णगतिका	भ ज ग ग	१७.
४८.	चित्रविलसितम्	न ज ग ग	३.
४९.	प्रतिसीरा	म भ ग ग	१७.
५२.	अतिमोहा	स भ ग ग	१७; वितानम्–१०, १३; वितानं के १३ और ११ के अनुसार 'त. र. ल. ग.' एवं 'त. य. ल. ल' लक्षण भी है।

T　CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
५४.	चतुरीहा	ज भ ग ग	१७.
५६	वृतमुखी	न भ ग ग	१७.
५७	हंसरुतम्	म न ग ग	२, १०, १४, १७.
६१.	सन्ध्या	त न ग ग	१७.
७४.	विहावा	य य ल ग	१७.
७५.	अनुष्टुप्	र य ल ग	१०.
८१.	क्षमा	म र ल ग	१६.
८३.	हेमरूपम्	र र ल ग	१७.
८४.	शल्लकप्लुतम्	स र ल ग	१७.
८५.	नाराचिका	त र ल ग	१४, १७; नाराचम्–५, १०; नाराचक–६, १६.
८८.	सुमालती	न र ल ग	१०, १६; उपलिनी–१७; कृतवती–१७
९२.	मही	स स ल ग	१०; कलिला–१७; करिला–१७.
९३.	श्यामा	त स ल ग	७.
१००.	सरघा	स त ल ग	१७.
१०४.	माण्डवकम्	न त ल ग	१७.
१०५.	हाठनी	म ज ल ग	१७
१०७.	अद्धरा	र ज ल ग	१७; उद्धरा–१७.
१०९.	विद्या	त ज ल ग	१७; उदया–१७; आनुष्टुब्–१६.
११०.	अरालि	ज ज ल ग	१७.
११२.	ललितगतिः	न ज ल ग	१०; अखनिः–१७.
११५.	कुरुचरी	र भ ल ग	१७.
१२०.	गजगतिः	न भ ल ग	१५, १७.
१२१.	शिखिलिखिता	म न ल ग	१७.
१२५.	ईडा	त न ल ग	१७; ईला–१७.
१२७.	अरि	भ न ल ग	१७.
१२८.	कुसुमम्	न न ल ग	७; हरिपदं–१७; हृतपदं–१७.
१४०.	नागारि	स य ग ल	१७.
१४७.	लक्ष्मीः	र र ग ल	१७.
१४८.	वलीकेन्दुः	स र ग ल	१७.
१५०.	अमानिका	ज र ग ल	१७.
१५२.	नखपदा	न र ग ल	१७.
१६०.	हरित्	न स ग ल	१७.
१६५.	किष्कु	त त ग ल	१७.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१८०.	अनृतनर्मं	स भ ग ल	१७; नृतनर्म–१७.
१८१.	अमरन्दि	त भ ग ल	१७
१८२.	कुलचारि	ज भ ग ल	१७.
१९०.	करञ्जि	ज न ग ल	१७.
१९६.	वृन्तम्	स म ल ल	१७.
१९८.	शाखोटकि	ज म ल ल	१७.
१९९.	पञ्जरि	भ म ल ल	१७.
२००.	अप्रीता	न म ल ल	१७; प्रीता–१७; अतिप्रीता–१७; अलिप्रीता–१७.
२०१.	मन्थरि	म य ल ल	१७.
२०२.	वातुलि	य य ल ल	१७.
२०४.	संफुल्लकम्	त य ल ल	रूपगोस्वामिकृत नन्दाहरणस्तोत्र
२१०.	भाषा	य र ल ल	१७; संभाषा–१७; संभासा–१७.
२१६.	पाकलि	न र ल ल	१७.
२२०.	अमना	स स ल ल	१७.
२३०.	आकतनु	ज त ल ल	१७.
२३५.	आखेटम्	र ज ल ल	१७.
२४१.	अतिजनि	म भ ल ल	१७.
२४४.	सृतमधु	स भ ल ल	१७.
२४६.	मरु	ज भ ल ल	१७.
२५०.	चयनम्	य न ल ल	१७
२५१.	कुशकम्	र न ल ल	१७
२५२.	निरुदम्	स न ल ल	१७.
२५३.	सिन्धुक्	त न ल ल	१७.
२५४.	क्षरम्	ज न ल ल	१७; क्षुरं–१७.
२५५.	वेशि	भ न ल ल	१७; वेषि–१७.

नवाक्षर-छन्द

२.	मेघालोकः	य म म	१७.
७.	वक्त्रम्	भ म म	१०.
१६.	मायासारी	न य म	१७.
२५.	खेलाढचम्	म स म	१७.
२८.	तारम्	स स म	१०; उदरश्रि–१७; उदरस्रक्–१७; उदरास्रक–'७.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२९.	वंसारुः	त स म	१७; वंसारम्–१७.
३०.	निर्विन्ध्या	ज स म	१७; निर्वंन्ध्या–१७.
३१.	कर्मिष्ठा	भ स म	१७, किर्मिष्ठा–१७.
४९.	धृतहाला	म भ म	१७.
५२.	कलहम्	स भ म	१७.
५७.	अयनपताका	म न म	१७.
६१.	मकरलता	त न म	१०; रम्भा–१७; ६ के अनुसार–'म.न.य' लक्षण है
७४.	विशल्यम्	य य य	१७; बृहत्यं–१९.
९७.	अर्धक्षामा	म त य	१७; सुन्दरलेखा–१९.
१००.	सम्बुद्धिः	स त य	१७.
१०३.	शम्बरधारी	भ त य	१७.
११२.	शशिलेखा	न ज य	१०; शरलीढा–१७.
११७.	रुचिरा	त भ य	१०.
१२१.	कांसीकम्	म न य	१७.
१२४.	सुगन्धिः	स न य	१७.
१२५.	कामा	त न य	१७.
१५२.	बृहतिका	न र र	५, १०.
१६४.	निभालिता	स त र	१७.
१६६.	चारुहासिनी	ज त र	१९.
१७१.	कामिनी	र ज र	१०; तरंगवती–११, २०.
१७३.	रवोन्मुखी	त ज र	१७.
१७४.	अवनिजा	ज ज र	१७.
१७५.	प्रवह्लिका	भ ज र	१७.
१७६.	हलोद्गता	न ज र	१७.
१८०.	मधुमल्ली	म भ र	१७.
१८२.	सहेलिका	ज भ र	१७.
१८३.	मदनोद्धुरा	भ भ र	१७; उत्सुकम्–१०, १९.
१८४.	करशया	न भ र	१७.
१८७.	भद्रिका	र न र	१०, १४, १७, १९.
१९२.	उपच्युतम्	न न र	१०, १९.
२१५.	निषधम्	भ र स	१७.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२१७.	कनकम्	म स स	१०; गाथा–१६.
२२०.	सौम्या	स स स	१०; अर्धकला–१७.
२२३.	रञ्जकम्	भ स स	१७.
२३६.	अक्षि	स ज स	१०, १६.
२३६,	उदयम्	भ ज स	१०; विद्युत्–१६.
२४४.	अनवीरा	स भ स	१७.
२४७.	प्रियतिलका	भ भ स	१७.
२५१.	हलमुखी	र न स	२, ५, ६, १०, १३, १७, १८, १६,
२५३.	आकेकरम्	त न स	१७.
२५५.	धौनिकम्	भ न स	१७.
२६३.	वल्गा	त त त	१७.
३००.	कीटमाला	स ज त	१७.
३२०.	मसृणकम्	न न त	१७.
३३६.	लीला	न य ज	१७.
३५६.	वारिधियानम्	भ त ज	१७.
३६६.	कुहू	ज ज ज	१७.
३८३.	कठिनास्थि	भ न ज	१७; अहीरी–१७.
४००.	विकचवती	न य भ	१७.
४०६.	वन्दारुः	म स भ	१७.
४३६.	दधि	भ भ भ	१७; उदधि–१७.
४६४.	स्फुटघटिता	न य न	१७.

दशाक्षर-छन्द

२.	शेफाली	य म म ग	१७.
१०.	धूम्राली	य य म ग	१७.
२०.	नीरोहा	स र म ग	१७.
३०.	वीरान्ता	ज स म ग	१७.
४०.	निर्मेधा	न त म ग	१७.
४६.	मध्याधारः	म भ म ग	१७.
५०.	वंशारोपी	य भ म ग	१७.
५५.	बन्धूकः	भ भ म ग	१६.
६१.	कूलम्	त न म ग	१७.
६३.	बन्धूकम्	भ न म ग	१०.
६६.	बोधातुरा	य म य ग	१७; सकृद्बोधा–१७.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
८०.	सुराक्षी	न य य ग	१७.
८९.	कुवलयमाला	म स य ग	३.
९०.	कलापान्तरिता	य स य ग	१७.
९९.	द्वारवहा	र त य ग	१७; भारवहा–१७.
१००.	विशदच्छायः	स त य ग	१७.
११०.	इन्द्रः	ज ज य ग	१७; ऐन्द्री–१७.
११२.	विपुलभुजा	न ज य ग	१०.
१२१.	हीराङ्गी	म न य ग	१७; पणवः–२, १०, १८, २०; पणवक–१९; पणला–२२. कुवलयमाला–११;
१४७.	हेमहासः	र र र ग	१७; बाला–१७.
१७१.	मयूरसारिणी	र ज र ग	२, ३, ५, ६, १०, १३, १७, १८, १९, २२.
१७२.	सुखला	स ज र ग	१७.
१७३.	नमेरुः	त ज र ग	१७; लाजवती–१७.
१९५.	कलिका	र म स ग	१०.
१९६.	गणदेहा	स म स ग	१७.
२०५.	मदिराक्षी	त य स ग	१९.
२०८.	नरगा	न य स ग	१७.
२१७.	उद्धतम्	म स स ग	१०; प्रसरा–१७.
२१९.	मणिरंगः	र स स ग	१०, १९; केरम्–१७.
२२०.	उदितम्.	स स स ग	१७; वितानम्–४.
२३६.	माला	स ज स ग	१०; प्रमिता–११.
२४४.	बलधारी	स भ स ग	१७.
२५१.	अचलपंक्तिः	र न स ग	१७.
२५२.	असितधारा	स न स ग	१७.
२५३.	उन्नालम्	त न स ग	१७.
२५४.	निरन्तिकम्	ज न स ग	१७.
२५५.	उपधाय्या	भ न स ग	१७.
२५६.	तनिमा	न न स ग	१७.
२९३.	विशालान्तिकम्	त त त ग	१७.
२९४.	विशालप्रभम्	ज त त ग	१७.
२९६	चरपदम्	न त त ग	१७.
३००.	उपसंकुला	स ज त ग	१७.

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३०३.	खेटकम्	भ ज त ग	१७,
३०६.	बर्हातुरा	त भ त ग	१७.
३१७.	नीराञ्जलिः	त न त ग	१७.
३२७.	दीपकमाला	भ म ज ग	१५.
३३१.	पंक्तिका	र य ज ग	५, १०; कर्णपालिका–१७; मौक्तिकम्–१९.
३४२.	सराविका	ज र ज ग	१७.
३४५.	शुद्धविराट्	म स ज ग	२, ५, ६, १०, १७, १८, १९, २०, २२; विराट्–१७.
३४७.	अक्षरावली	र स ज ग	१७.
३४८.	सहजा	स स ज ग	१७.
३४९.	अहिला	त स ज ग	१७.
३५१.	कुप्यम्	भ स ज ग	१७.
३५२.	अनुचयिता	न स ज ग	१७.
३६३.	वर्मिता	र ज ज ग	१७.
३६५.	उपस्थिता	त ज ज ग	२, ५, १०, १३, १७, १८, २०, २२.
३६६.	उषिता	ज ज ज ग	१०; जरा–१७.
३७५.	भिन्नपदम्	भ भ ज ग	१७.
३७६.	वडिशभेदिनी	न भ ज ग	१७.
३७७.	पणवः	म न ज ग	१३, १७.
३८४.	चितिभृतम्	न न ज ग	१७.
४००.	फलिनी	न य भ ग	१७.
४१२.	सुरयानवती	स स भ ग	१७.
४१५.	विरलम्	भ स भ ग	१७; कटिका–१७.
४२४.	छलितकम्	न त भ ग	१७.
४२८.	प्रवादपदा	स ज भ ग	१७.
४३३.	हंसक्रीडा	म भ भ ग	१९.
४३६.	वारवती	स भ भ ग	१७.
४३७.	परिचारवती	त भ भ ग	१७.
४३८.	काण्डमुखी	ज भ भ ग	१७.
४४०.	शरत्	न भ भ ग	१७.
४४७.	गहना	भ न भ ग	१७.
४४८.	फलधरम्	न न भ ग	१७.

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
४८७.	मृगचपला	भ त न ग	१०; मौक्तिकमाला-१३.
४९२.	धमनिका	स ज न ग	१७.
४९७.	हंसी	म भ न ग	१४, १७.
५०५.	कुमुदिनी	म न न ग	१०; कुसुमसमुदिता-११.
५११.	कृतमणिता	भ न न ग	१७; मणिता-१७.
५१२.	निलया	न न न ग	१०; मकरमुखी-१७.
६९२.	महिमावसायि	स भ र ल	१७.
६९३.	कामचारि	त भ र ल	१७.
६९४.	नेमधारि	ज भ र ल	१७.
६९५	हीरलम्बि	भ भ र ल	१७.
६९६.	वनिताविनोदि	न भ र ल	१७.
६९९.	विरेकि	र न र ल	१७.
७२८.	क्रकपादि	न र स ल	१७.
७३२.	लुलितम्	स स स ल	१७.
७४८.	रसभ्रूम	स ज स ल	१७.
७६३.	चारुचारणम्	र न स ल	१७.
७६५.	सरसमुखी	त न स ल	१७.
७६८.	ऋतम्	न न स ल	१७.
७७५.	कीलालम्	भ म त ल	१७,
७८४.	खौरलि	न य त ल	१७.
७९३.	कामनिभा	म स त ल	१७.
८००.	विस्रंसि	न स त ल	१७.
	कान्तिडम्बरम्	र स ज ल	रूपगोस्वामिकृत सुदर्शनादिमोचन स्तोत्र
१०००.	वीरनिधिः	न त न ल	१७.
	हारिहरिणम्	भ स न ल	रूपगोस्वामिकृत वर्षाशरद्विहारचरितम्

एकादशाक्षर-छन्द

५.	आराधिनी	त म म ग ग	१७.
१०.	अमालीनम्	य य म ग ग	१७.
१३.	मेघध्वनिपूरः	त य म ग ग	१७.
१५.	उद्धतिकरी	भ य म ग ग	१७.
२०.	अपयोधा	स र म ग ग	१७.
२५.	अन्तर्वनिता	म स म ग ग	१७.
३०.	प्रफुल्लकदली	ज स म ग ग	१७.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३६.	लक्षणलीला	भ त म ग ग	१७.
४३.	कूलचारिणी	र ज म ग ग	१७; कूलिका–१७.
४८.	विलुलितमञ्जरी	न ज म ग ग	१७.
५७.	भूरिघटकम्	म न म ग ग	१७.
६४.	कलितकमलमाला	न न म ग ग	१७.
७५.	वल्लवीविलासः	र य य ग ग	१७.
८०.	विकसितपद्मावली	न य य ग ग	१७.
८६.	अमोघमालिका	ज र य ग ग	१७.
६२.	ललितागमनम्	स स य ग ग	१७.
१००.	संसृतशोभासारः	स त य ग ग	१७.
१०८.	ललितालवलम्	स ज य ग ग	१७.
११२.	वार्ताहारी	न ज य ग ग	१७.
१२२.	कडारम्	य न य ग ग	१७.
१२४.	उदितदिनेशः	स न य ग ग	१७.
१३२.	जालपादः	स म र ग ग	१७.
१४७.	दारदेहा	र र र ग ग	१७; दारुदेहा–१७.
१८४.	रोचकम्	भ भ र ग ग	१०.
१८७.	सुधाधारा	र न र ग ग	१७.
१६२.	कुपुरुषजनिता	न न र ग ग	१४.
१६६.	कन्दविनोदः	भ म स ग ग	१७.
२१७.	विलम्बितमध्या	म स स ग ग	१७.
२२०.	विष्टम्भः	स स स ग ग	१७.
२२३.	क्रोशितकुशला	भ स स ग ग	१७.
२४४.	उपहितचण्डी	स भ स ग ग	१७.
२४७.	श्रितकमला	भ भ स ग ग	१७.
२५६.	वृत्ता	न न स ग ग	२, १०, १३, १८, १६, २०; रथपदं–१७; वृत्ता–१७; सुकृतिः–१७.
२८६.	उपस्थितम्	ज स त ग ग	६, १०, १३, १७, १८; शिखण्डितं–१५ टी०*
२६३.	प्राकारबन्धः	त त त ग ग	१७; लयग्राहि–१०, १६; विध्वंकमाला–१५ टी०
३००.	विहारिणी	स ज त ग ग	१७; भासिनी–१७.

*१५ टी० = छन्दोमञ्जरी 'प्रभा' टीका, हरिदास कृत ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३०९.	ईहामृगी	त भ त ग ग	१७.
३२०.	परिमलललितम्	न न त ग ग	१७.
	विलासिनी	ज र ज ग ग	२.
३४८.	विमला	स स ज ग ग	१७.
३५०.	सरोजवनिका	ज स ज ग ग	१७.
३५१.	अमन्दपादः	भ स ज ग ग	१७.
३५२.	पञ्चशाखी	न स ज ग ग	१७.
३६४.	पटुपट्टिका	स ज ज ग ग	१७.
३६५.	उपस्थिता	त ज ज ग ग	१७, १९.
४००.	श्रुतकीर्तिः	न य भ ग ग	१७; पतिता–१०, ४, १४, १९; श्रीः–१९.
४१२	वर्णवलाका	स स भ ग ग	१७.
४१५.	अमितशिखण्डी	भ स भ ग ग	१७.
४४०.	रोधकम्	न भ भ ग ग	१७.
४७२.	मदनमाला	न र न ग ग	१७.
४८०.	अशोका	न स न ग ग	१०.
५०५.	मात्रा	म न न ग ग	१७.
५०८.	सुवृत्तिः	स न न ग ग	१७.
५१२.	वृत्ताङ्गी	न न न ग ग	२२.
५८६.	भुजङ्गी	य य य ल ग	१७.
६००.	जवनशालिनी	न र य ल ग	१७.
६०६.	सारिणी	ज स य ल ग	२०; सङ्गता–२२.
६०८.	प्रसृमरकरा	न स य ल ग	१७.
६२०.	सारणी	स ज य ल ग	१०.
६४०.	गल्लकम्	न न य ल ग	१७
६५०.	प्रपातावतारम्	य य र ल ग	१७.
६५९.	गह्वरम्	र र र ल ग	१७.
६६३.	वारयात्रिकम्	भ र र ल ग	१७.
६६४.	इन्दिरा	न र र ल ग	१७, १५ टी०; कनकमञ्जरी–रूपगोस्वामिकृत वस्त्रहरण स्तोत्र; भाविनी–१७; भामिनी–१७;
६९२.	सीधुः	स भ र ल ग	१७; अपरान्तिका–१९.
७००.	प्रतारिता	स न र ल ग	१७.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
७०१.	नीला	त न र ल ग	१७.
७२०.	सौरभवर्द्धिनी	न य स ल ग	१७.
७२८.	भुजगहारिणी	न र स ल ग	१७.
७३१.	अच्युतम्	र स स ल ग	१७, १६.
७३२.	विदुषी	स स स ल ग	१०; उपचित्रम्–१७, १४; सुचित्रं–१७; नरेशः–१७.
७३६.	सम्मदमालिका	न स स ल ग	१७.
७४२.	कनककामिनी	ज त स ल ग	१७.
७४७.	द्रुता	र ज स ल ग	१५ टी०; उपदारिका–१७.
७४८.	दारिका	स ज स ल ग	१७.
७४९.	मालविका	त ज स ल ग	१७.
७५०.	नाभसम्	ज ज स ल ग	१७.
७५१.	सौभगकला	भ ज स ल ग	१७.
७५२.	वीवधः	न ज स ल ग	१७.
७५३.	आशापादः	म भ स ल ग	१७.
८००.	भुजलता	न स त ल ग	१७.
८२०.	हरिकान्ता	स भ त ल ग	१७.
८२३.	कलस्वनवंशः	भ भ त ल ग	१७.
८३२.	मदनया	न न त ल ग	१७.
८७८.	खटका	ज ज ज ल ग	१७.
८७९.	शल्कशकलम्	भ ज ज ल ग	१७.
८८५.	उत्थापनी	त भ ज ल ग	१०; जिह्माशया–१७.
८८९.	कुशलकलावतिका	म न ज ल ग	१७.
८९५.	अर्थशिखा	भ न ज ल ग	१७.
९२८.	निरवधिगतिः	न स भ ल ग	१७.
९६०.	वामघटिता	न न भ ल ग	१७.
९६४.	विमला	स म न ल ग	१०.
९७६.	कमलदलाक्षरी	न य न ल ग	१०; रुचिरमुखी–११; समित्–१७.
९८५.	सामपदा	म स न ल ग	१७.
१०२१.	मुखचपला	त न न ल ग	१०.
११७१.	गम्भारि	र र र ग ल	१७.
१२१३.	कामुकलेखा	भ म स ग ल	१७.
१३१७.	संश्रयश्रीः	त त त ग ल	१७.

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छंद-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१३७२.	पिचुलम्	स स ज ग ल	१७.
१४००.	कालवर्म	न भ ज ग ल	१७.
१५११.	सान्द्रपदम्	भ त न ग ल	१७; १५ टी०
१७७७.	शेषापीडम्	म भ स ल ल	१७.
२०००.	केलिचरम्	न य न ल ल	१७.

द्वादशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छंद-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३१.	भाषितभरणम्	भ स म म	१७.
३२.	विषमव्याली	न स म म	१७.
६१.	शम्पा	त न म म	१७.
६४.	मिथुनमाली	न न म म	१७.
९१.	किंशुकास्तरणम्	र स य म	१७.
९२	रसलीला	स स य म	१७.
९३.	विशालाम्भोजाली	त स य म	१७; अम्भाजाली-१७.
९४.	वीणादण्डम्	ज स य म	१७.
९७.	मत्तालो	म त य म	१७.
१२८.	वसनविशाला	न न य म	१७.
१९३.	लीलारत्नम्	म म स म	१७.
२५३.	विवरविलसितम्	त न स म	१७.
२५६.	शुद्धान्तम्	न न स म	१७.
३४८.	साक्षी	स स ज म	१७.
३६४.	स्वरवर्षिणी	स ज ज म	१७.
४४८.	धवलकरी	न न भ म	१७.
४७६.	लुम्बाक्षी	स स न म	१७; लुब्धाक्षी-१७.
५०५.	मलयसुरभिः	म न न म	१७.
५२५.	वाहिनी	त य म य	२०.
५७६.	पुटः	न न म य	२, ३, ४, ६, १०, १३, १७, १८, १९, २२; पुटा:-२०
५७८.	आधिदैवी	य म य य	१७.
६०४.	समयप्रहिता	स स य य	१७.
६०८.	मिहिरा	न स य य	१७.
६१४.	कलवल्लीविहङ्गः	ज त य य	१७.
६६२.	असुधारा	ज र र य	१७; अस्रधारा-१७.
६८८.	बलोर्जिता	न ज र य	१७, १९; अचलमर्चिका-१७.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ- सङ्केताङ्क
६८९.	पुण्डरीकम्	म भ र य	१७.
६९२.	बधिरा	स भ र य	१७.
६९५.	वलभी	भ भ र य	१७.
७१६.	केकीरवम्	स य स य	१०; महेन्द्रवज्रा–१९; शिविका–१९.
७३३.	कोल:	ज्ञ स स य	१०.
७३७.	लीढालर्क:	म त स य	१७.
७४१.	वनिताविलोक:	त त स य	१७.
७४२.	कुमुदिनीविकाश:	ज त स य	१७.
७५३.	वसन्तहास:	म भ स य	१७.
७५७.	श्रुति:	त भ स य	१९.
७५८.	स्मृति:	ज भ स य	१९.
७८३.	सिक्तमणिमाला	भ य त य	१७; श्वेतमणिमाला–१७.
७८४.	विद्रुमदोला	न य त य	१७.
८१७.	सुखशैलम्	म भ त य	१७.
८२०.	करमाला	स भ त य	१७.
८३२.	विजयपरिचया	न न त य	१७.
८६५.	कासारक्रान्ता	म त ज य	१७.
८७७.	माया	त ज ज य	१७.
८७८.	परिलेख:	ज ज ज य	१७; धारी–१७.
८७९.	वरत्रा	भ ज ज य	१७.
८८१.	कुम्भोघ्नी	म भ ज य	१७.
८८४.	शरमेया	स भ ज य	१७.
८८५.	नीरान्तिकम्	त भ ज य	१७.
८८८.	कलहंसा	न भ ज य	१०, १९; द्रुतपदम्–१७; द्रुतपदा–४, ११, १९; मुखरम्–११.
८९१.	अर्दितपादम्	र न ज य	१७.
८९२.	परितोषा	स न ज य	१७.
८९३.	छलितकपदम्	त न ज य	१७.
८९४.	उपधानम्	ज न ज य	१७.
८९५.	पथिकान्ता	भ न ज य	१७.
९७१.	कुमुदिनी	र य न य	१०; कुमुदविभा–३; तथा ३ के अनुसार 'न य.र.य.' लक्षण भी हैं।
९९१.	अर्पितमदना	भ स न य	१७.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१०१६.	द्रुतपदम्	न भ न य	१४.
१०२१.	विरतिमहती	त न न य	१७.
१०८०.	ततम्	न न म र	२, १०, १८; ललितम्–१७, १४; गौरी–१७.
११४२.	गलितनाला	ज भ य र	१७.
११६२.	सरोजावली	य य र र	१७.
११७६.	मेधावली	न र र र	१०; वसन्तः–११.
११९९.	विप्लुतशिखा	भ ज र र	१७.
१२००.	विशिखलता	न ज र र	१७.
१२३६.	सुतलम्	स र स र	१७.
१३६५.	अन्तर्विकासवासकः	त र ज र	१७.
१३७१.	परिपुङ्खिता	र स ज र	१७.
१३७६.	प्रसृमरमरालिका	न स ज र	१७.
१३९०.	विधारिता	ज ज ज र	१७.
१३९१.	पिकालिका	भ ज ज र	१७; पिधायिनी–१७.
१४०४.	विरला	स न ज र	१७; वीरला–१७.
१४०७.	अविरलरतिका	भ न ज र	१७.
१४६०.	राधिका	स भ भ र	१७.
१४७२.	उज्ज्वला	न न भ र	१०, १३, १७; चपलनेत्रा–११; चलनेत्रिका १८.
१५१५.	विपुलपालिका	र ज न र	१७.
१५२४.	उपलेखा	स भ न र	१७.
१५२६.	भसलविनोदिता	ज भ न र	१७.
१५२७.	विरतप्रभा	भ भ न र	१७.
१५३१.	मुकुलितकलिकावलि	र न न र	१७.
१६७६.	अतिवासिता	स य र स	१७.
१६९१.	भुजङ्गजुषी	र स र स	१७.
१६९५.	अर्जितफलिका	भ स र स	१७.
१७०३.	ललना	भ त न स	१४.
१७२८.	ह्रीः	न न न स	१०.
१७३५.	ललना	भ म स स	१७; १५ टी०
१७३८.	कुरङ्गावतारः	य य स स	१७.
१७७४.	विकत्थनम्	ज ज स स	१७.
१७७५.	नीलगिरिका	भ ज स स	१७.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१७८३.	वनिताभरणम्	भ भ स स	१७.
१८२५.	सुभद्रावतरणिः	म त त स	१७.
१८८१.	विरलोद्धता	म स ज स	१७.
१८८२.	सुविहिता	य स ज स	१७.
१८८४.	उदर्करचिता	स स ज स	१७.
१८८५,	सुवनमालिका	त स ज स	१७; उपवनमालिका–१७.
१९७२.	नगमहिता	स भ भ स	१७; ऋमुकवती–१७.
१९७५.	सम्मदवदना	भ भ भ स	१७.
१९८२.	कुमारगतिः	ज न भ स	१७.
२०१६.	उदयनमुखी	न स न स	१७.
२०२०.	रसिकपरिचिता	स त न स	१७.
२०२९.	व्यायोगवती	त ज न स	१७.
२०३०.	वियोगवती	ज ज न स	१७.
२०३१.	संगमवती	भ ज न स	१७.
२०४४.	ज्वलिता	स न न स	१७.
२०४५.	रूपावलिः	त न न स	१७.
२०४६.	अनीचकम्	ज न न स	१७.
२०४७.	भासितसरणिः	भ न न स	१७.
२०४८.	कृतकृतिका	न न न स	१७; कतिका–१७.
२३६८.	विकलबकुलवल्ली	न न त त	१७.
२४०६.	निमग्नकीला	ज त ज त	१७.
३२६५.	वासरमणिका	भ स स भ	१७.
३५०८.	अरिला	स भ भ भ	१७.

त्रयोदशाक्षर–छंद

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२२५.	उल्काभासः	म त स म ग	१७.
२४१.	लीलालोलः	म भ स म ग	१७.
३७५.	कलाधाम	भ भ ज म ग	१७.
४३९.	वासविलासवती	भ भ भ म ग	१७.
४७२.	विपन्नकदनम्	न र न म ग	१७; विपन्नकलनं–१७; विपन्नकवलम्–१७.
७८४.	विभा	न य त य ग	१७.
९७५.	रसधारा	न य न य ग	१७.
१००९.	प्रज्ञामूलम्	म भ न य ग	१७; भद्रा–२२.

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
	क्ष्मा	न न म र ग	१०.
१,१५४.	चञ्चरीकावल	य म र र ग	१७, १४; चन्द्रणी-१०; चन्द्रिका-१६.
१,१६२.	दर्पमाला	य य र र ग	१७; दर्भमाला-१७.
१,१६५.	भाजनशीला	त य र र ग	१७.
१,१७१.	श्रद्धरान्ता	र र र र ग	१७.
१,२०६.	ग्रानता	म न र र ग	१७.
१,२१६.	प्रमोदः	न न र र ग	१७; चन्द्रिका-१०.
	कोडुम्भः	म त स र ग	१०.
१,३६८	सुकर्णपूरम्	न र ज र ग	१७.
१,३७२.	जगत्समानिका	स स ज र ग	१७.
१,३६०.	ग्रतिरंहः	ज ज ज र ग	१७.
१,४६१.	माणविकाविकाशः	त भ भ र ग	१७.
१,४६६.	कीरलेखा	न र न र ग	१७.
१,६३६.	ग्राननमूलम्	भ त य स ग	१७.
१,७५३.	लोध्रशिखा	म स स स ग	१७.
	उपस्थितम्	ज स त स ग	१३.
	गौरी	न न त स ग	१०; २ के अनुसार 'न न न स ग' लक्षण है।
१,८६६.	शलभलोला	य य ज स ग	१७.
१,८८१.	पंकजधारिणी	म स ज स ग	१७.
१,८८४.	कुबेरकटिका	स स ज स ग	१७.
१,८८६.	रुचिवर्णा	ज स ज स ग	१७; साला-१७.
१,८८७.	मयूखसरणिः	भ स ज स ग	१७.
१,६८४.	विधुरवितानम्	न न भ स ग	१७.
	मदललिता	न ज न स ग	१०, १६.
२,३४१.	पारावतः	त त त त ग	१७.
२,३४२.	प्रवाहिका	ज त त त ग	१७.
२,३४३.	स्विन्नशरीरम्	भ त त त ग	१७.
२,३४४.	उर्वशी	न त त त ग	१०; परिवृढम्-१७; कौमुदी-१६.
२,३५१.	वामवदना	भ ज त त ग	१७.
२,३५२.	किरातः	न ज त त ग	१७.
	विद्युत्	न न त त ग	१४; कुटिलगतिः-१४.
२,३६६.	भसलमदम्	भ स ज त ग	१७; भसलपदम्-१७.
२,४००.	कठिनी	न स ज त ग	१७.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छंद-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२,४०५.	वृद्धवामा	त त ज त ग	१७.
२,४२१.	मर्मस्फुरम्	त भ ज त ग	१७.
२,७०६.	पृषद्वती	त र र ज ग	१७; निस्तुषा–१७;
२,७१०.	अखण्डमण्डनम्	ज र र ज ग	१७.
२,७३१.	कलापतिप्रभा	र ज र ज ग	१७.
२,७५२.	अशोकपुष्पकम्	न न र ज ग	१७; अशोकम्–१७.
२,७६२.	करपल्लवोद्गता	य य स ज ग	१७.
२,७६३.	सार्द्धपदा	र य स ज ग	१७.
२,७६४.	सुदन्तम्	स य स ज ग	१०; अम्बुदावली–१७; मणिकुण्डलम्–१६.
२,७६०.	मञ्जुभाषिणी	ज त स ज ग	१०: मंजुहासिनी–१४.
२,७६५.	मञ्जुमालती	र ज स ज ग	१७; मंजुभाषिणी–१६.
२,८०८.	विरोधिनी	न भ स ज ग	१७.
२,८१६.	नलिनम्	न न स ज ग	१६.
२,६०७.	चन्द्रहासकरा	र स ज ज ग	१७.
२,६०८.	द्रुतलम्बिनी	स स ज ज ग	१७.
२,६०६.	कनककेतकी	त स ज ज ग	१७.
२,६१०.	गरुदवारिता	ज स ज ज ग	१७.
२,६११.	अमितनगानिका	भ स ज ज ग	१७.
२,६१८.	आपणिका	ज त ज ज ग	१७.
२,६२६.	गुणसारिका	ज ज ज ज ग	१७; गणसारिका–१७.
२,६३३.	प्रमोदतिलका	त भ ज ज ग	१७; अभ्रकम्–१०.
२,६३६.	सारसनावलिः	न भ ज ज ग	१७.
२,६४३.	उपचितरतिका	भ न ज ज ग	१७
२,६८२.	उदात्तहासः	ज त भ ज ग	१७.
३,०४६.	कलनायिका	ज त न ज ग	१७.
३;२७७.	अभ्रभ्रमशीला	त य स भ ग	१७.
३,३६०.	विदला	न स त भ ग	१७.
३,४२३.	प्रपातलिका	भ स ज भ ग	१७.
३,५११.	कर्मठः	भ भ भ भ ग	१७; अङ्गरुचिः–१६.
३,५४३.	लवलीलता	भ र न भ ग	१७.
३,७३६.	अनिलोद्धतमुखी	न र र न ग	१७.
३,७७१.	प्रबोधफलिता	र न र न ग	१७.
३,७८८	कोमलकल्पकलिका	स य स न ग	१७.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३,८३५.	परगतिः	र न स न ग	१७.
३,८६२.	अभिरामा	स भ त न ग	१७.
३,९६४.	उपसरसी	स न ज न ग	१७.
४,०४८.	मदनजवनिका	न य न न ग	१७.
४,०६०	वरिवशिता	स स न न ग	१७; परिवशिता–१७.
४,०६३.	अर्धकुसुमिता	भ स न न ग	१७.
४,०८४.	विनताक्षी	स भ न न ग	१७; वनिताक्षी–१७.
४,०८५.	नरावलिः.	त भ न न ग	१७; निरावलिः–१७.
४,०८६.	अभीरुका	ज भ न न ग	१७.
४,०८७.	कनकिता	भ भ न न ग	१७.
४,०९६.	त्वरितपतिः	न न न न ग	१०; हरवनिता–१७; उपनमिता–१७.
४,४६०.	सुखकारिका	स ज ज म ल	१७.
५,८१३.	अट्टहासिनी	त भ र स ल	१७.
	अङ्गरुचिः	भ भ भ भ ल	१०.
७,८०७.	पङ्क्तावलिः	भ न य न ल	१७.
८,०००.	अशनिः	न न त न ल	१७.

चतुर्दशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२०५.	वंशोत्तंसा	त य स म ग ग	१७.
९६१.	कालध्वानम्	म म न य ग ग	१७; कालध्वान्तम्–१७.
१,०२१.	पारावारः	त न न य ग ग	१७.
१,२९३.	प्रपन्नपानीयम्	त य त र ग ग	१७.
१,२९६.	अनिन्दगुर्विन्दुः	न य त र ग ग	१७; गुर्विन्दुः–१७; पूर्वेन्दुः–१७.
१,५३७.	धीरध्वानम्	म म म स ग ग	१७.
१,७४४.	ललितपताका	न य स स ग ग	१७.
२,०२२.	सम्बोधा	ज त न स ग ग	१७.
२,०६५.	विन्ध्यारूढम्	म र म त ग ग	१७; वन्ध्यारूढम्–१७.
२,३२१.	लक्ष्मीः	म र त त ग ग	५, १०; चन्द्रशाला–१९; बिम्बालक्ष्यम्–१७.
२,३२२.	दृप्तदेहा	य र त त ग ग	१७.
२,३२३.	बभ्रुलक्ष्मी	र र त त ग ग	१७.
२,३३२.	सरमासरणिः	स स त त ग ग	१७.
२,३३५.	पुष्पशकटिका	भ स त त ग ग	१९; लक्ष्मी–१९.
२३३७.	निर्यत्पारावारः	म त त त ग ग	१७.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२,३३६.	कल्पकान्ता	र त त त ग ग	१७.
२,३४४.	परीवाहः	न त त त ग ग	१७.
	शरभललितम्	न भ न त ग ग	१०; शरभा–११.
२,६८७.	वाटिकाविकाशः	भ न य ज ग ग	१७; वाटिकाविलासः–१७; वाटिका–
२,७३१.	अर्कशेषा	र ज र ज ग ग	१७.
२,७४०.	मदावदाता	स भ र ज ग ग	१७.
२,८०४.	वंशमूलम्	स भ स ज ग ग	१७; सुनन्दा–१६.
२,८०५.	चेलाञ्चलम्	त भ स ज ग ग	१७; वेलाञ्चलम्–१७; वेलान्तरम्-१७.
२,८०६.	कुसुम्भिनी	ज भ स ज ग ग	१७.
२,८०८.	विलम्बनीया	न भ स ज ग ग	१७.
२,८१६.	अनन्तदामा	न न स ज ग ग	१७.
	नदी	न न त ज ग ग	१४.
	कुमारी	न ज भ ज ग ग	१४.
	कृतमालम्	त ज य भ ग ग	१७.
३,२८७.	शारदचन्द्रः	त य स भ ग ग	१७.
३,३१३.	परिणाही	म भ स भ ग ग	१७.
३,४६६.	रतिरेखा	त य भ भ ग ग	१७.
३,४८४.	मन्मथः	स स भ भ ग ग	१७.
३,५११.	जाह्मुखी	भ भ भ भ ग ग	१७.
३,५१५.	वलना	र न भ भ ग ग	१०; लता–११; वनलता–१६.
३,८६२.	प्रतिभादर्शनम्	स भ त न ग ग	१७.
	राजरमणीयः	ज स र न ग ग	१०, २०; रूपगोस्वामिकृत-वत्सचारणादिस्तोत्र में 'प्रफुल्ल कुसुमाली' है।
	वरसुन्दरी	भ ज स न ग ग	१४.
	सुपवित्रम्	त र न न ग ग	१४.
४,००६.	उपचित्रम्	न न न न न ग	१०, १६; अलिपदम्–१७.
	ज्योत्स्ना	म र म य ल ग	५, १०; ज्योत्स्निका–५.
४,६७२.	करिमकरभुजा	न न म य ल ग	१०; कामला–१९.
४,६८२.	प्रपातः	य य य य ल ग	१७.
४,७०४.	जलदरसिता	न स य य ल ग	१७.
४,८४४.	पथ्या	स ज स य ल ग	१७; प्रथिता–१६.
५,२६७.	कल्पमीलिता	र र र र ल ग	१७.
५,४१६.	सुधाधरा	र ज त र ल ग	१७.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
५,४५६.	कलाधरः	र र ज र ल ग	१७.
५,४६२.	कुडङ्गिका	ज र ज र ल ग	१७.
	सुकेसरम्	न र न र ल ग	१०, १४.
	सुदर्शना	स ज न र ल ग	१६.
५,६६२.	वितानिता	न न न र ल ग	१७.
	सिंहः	न म र स ल ग	१०.
	जया	म र र स ल ग	५, १०.
५,८१३.	अलकालिका	त भ र स ल ग	१७; अलिकालका–१७.
५,८१५.	दर्दुरकः	भ भ र स ल ग	१०, १६.
५,८१६.	गगनोद्गता	र न र स ल ग	१७.
५,८५२.	विनन्दिनी	स स स स ल ग	१७.
६,१७२.	भूरिशिखा	स स म त ल ग	१७.
६,३६४.	क्रीडायतनम्	स स स त ल ग	१७; क्रीडावसथम्–१७.
६,५४१.	नासाभरणम्	त य भ त ल ग	१७.
६,५८३.	कर्णिशरः	भ भ भ त ल ग	१७.
७,०३२.	विपाकवती	न भ ज ज ल ग	१७.
७,०८६.	काकिणिका	ज ज भ ज ल ग	१७.
७,०८७.	कारविणी	भ ज भ ज ल ग	१७.
७,३१५.	कूर्चललितम्	र र र भ ल ग	१७.
७,५३२.	कलहेतिका	स ज ज भ ल ग	१७.
७,५३५.	अञ्चलवती	भ ज ज भ ल ग	१७.
८,०२७.	गगनगतिका	र स ज न ल ग	१७.
,०८१.	निर्मुक्तमाला	म र भ न ल ग	१७.
६,३६३.	कामशाला	र र र र ग ल	१७.
६,६७५.	उन्नर्म	भ भ स स ग ल	१७.
११,६२८.	उपकारिका	स ज ज भ ग ल	१७.
११,६३१.	हेममिहिका	भ ज ज भ ग ल	१७.
११,६३२.	हेतिः	न ज ज भ ग ल	१७.
१४,०४४.	मधुपालि	स स स स ल ल	१७.
१६,०००.	वेशम्भरि	न न य न ल ल	१७.

पञ्चदशाक्षर-छन्द

१३.	वज्राली	त य म म म	१७.
१६.	स्फोटक्रीडम्	न य म म म	१७.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ- सङ्केताङ्क
२२३.	क्रीडितकटका	भ स स म म	१७.
४३३.	चार्वटकम्	म भ भ म म	१७.
२,२९९.	आनद्धम्	र न स त म	१७.
	चन्द्रलेखा	र र त त म	१९.
३,३१६.	बहुलाभ्रम्	स भ स भ म	१७.
३,८८१.	वाणीभूषा	म म त न म	१७.
४,६८२.	सिंहपुच्छम्	य य य य य	१७.
५,५२५.	कुमारलीला	म न र य य	१७.
५,५३२.	भोगिनी	न न र य य	१०.
	केतनम्	भ य स स य	१०.
	शिशुः	त ज स स य	१०.
	ऋषभः	स ज स स य	१०, १९.
६,६३१.	दीपकम्	भ त न त य	१७.
७ १२०.	परिमलम्	न य न ज य	१७.
	मयूरललितम्	ज स न भ य	१९.
७,९३६.	शरकल्पा	न न स न य	१७.
	चन्द्रोद्योतः	न न म र र	१०.
९,३६३.	लास्यकारी	र र र र र	१७.
९,६९८.	मदनमालिका	न र न र र	१७.
	मृदङ्गः	त भ ज ज र	१०.
११,५७५.	प्लवंगमः	भ भ त भ र	१७.
११,६३१.	मयूवदना	भ ज ज भ र	१७.
११,६३२.	कलभाषिणी	न ज ज भ र	१०, १९; अरविन्दः–११, १९
११,७१२.	गौः	न न भ भ र	१०.
११,९६३.	सारिणी	र न र न र	१७.
११,९६८.	चमरीचरम्	न न र न र	१७.
१२,४९६.	जननिधिवेला	न य स म स	१७.
१३,०५७.	लीलाचन्द्रम्	म म त य स	१७.
१३,५०२.	घोरितम्	भ न र र स	१७.
१४,०१५.	शान्तसुरभिः	भ न र स स	१७.
१४,२६०.	कर्णलता	स भ भ स स	१७.
१५,६०१.	विशकलिता	म भ स भ स	१७.
१५,७५७.	शीर्षविरहिता	त य भ भ स	१७.
१६,०५३.	शङ्खावली	त भ र न स	१७.

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
२३,१३१	ऊहिनी	र स य ज ज	१७.
२३,२६४.	मितसक्थि	न स स ज ज	१७.

षोडशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
१,०२४.	माल्योपस्थम्	न न न य म ग	१७.
४,०९६.	कल्पाहारी	न न न न म ग	१७.
	वेल्लिता	स स स न म ग	१०, २०.
५,५३६.	प्रतीपवल्ली	स स भ र य ग	१७.
७,१५९.	आरभटी	भ भ न ज य ग	१७.
६,२८०.	वक्रावलोकः	न न म र र ग	१७.
	सुरतललिता	म न स त र ग	१०.
	चित्रम्	र ज र ज र ग	१०.
१०,१९२.	अभिधात्री	स स स ज र ग	१७.
१३,१०८.	अनिलोहा	स भ त य स ग	१७.
	कान्तम्	न य न य स ग	१९.
१३,३०९.	भोगावलिः	त न न य स ग	१७.
१४,०४४.	कामुकी	स स स स स ग	१०; सोमडकम्–११; कलधौत-पदम्–१७.
	ललितपदम्	न न न ज स ग	१०; कमलदलम्–१९.
१५,३७६.	वलिवदनम्	न य म भ स ग	१७.
१५,५६५.	सुतशिखा	त य स भ स ग	१७.
१५,५८०.	परिखायतनम्	स स स भ स ग	१७; परिखापतनं–१७.
१५,६०१.	मालावलयम्	म भ स भ स ग	१७.
	शरमाला	भ भ भ भ स ग	१०; स्मरशरमाला–१९.
१६,३९९.	भीमावर्त्तः	म भ न न स ग	१७.
१६,३८४.	शिशुभरणम्	न न न न स ग	१७.
	कोमललता	म त स त त ग	१०, २०.
२३,२६४.	तरवारिका	न स स ज ज ग	१७.
	मञ्जलमञ्जना	न भ ज ज ज ग	१०, १९.
२५,५५२.	कमलपरम्	न य न य भ ग	१७.
२७,८२४.	मणिकल्पलता	न ज र भ भ ग	६, १०, १४; त्रोटकम्–१७; चिन्तामणि–१९; इन्दुमुखी–१९.
२८,६७२.	कलहकरम्	न न न न भ ग	१७.
	प्रमुदिता	भ र न र न ग	१०.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३०,५८४.	नरशिखी	न भ ज स न ग	१७.
३१,२०७.	सारवरोहा	भ त न त न ग	१७.
	वरयुवतिः	भ र य न न ग	२, १०, १४.
	ललना	र न न न न ग	१०, २०, २२.
३२,७६८.	चलधृतिः	न न न न न ग	१०.
३६,९९७.	दन्तालिका	त म र म य ल	१७.
४३,६६७.	कल्पधारि	र र र ज र ल	१७; चारि–१७.
५२,४१७.	कुल्यावर्त्तम्	म म स भ त ल	१७; कुल्यावृत्तं–१७.

सप्तदशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
११,९६८.	वीरविश्रामः	न न र न र ग ग	१७.
१६,१८३.	वल्वजम्	भ भ त न स ग ग	१७; वल्गुजम्–१७.
१६,१८९.	क्रूराशनम्	त न त न स ग ग	१७; कूराशनम्–१७; क्रूरासनं–१७; कूरासनं १७;
२०,३६८.	कामरूपम्	म र भ न त ग ग	१७.
२३,९००.	अतिशायिनी	स स ज भ ज ग ग	२, १०, १४, १७, १९; यादवी–११; चित्रलेखा–१४.
२३,९०४.	शायिनी	न स ज भ ज ग ग	१७.
	वाणिनी	न ज भ ज ज ग ग	१०, १८.
३२,३२०.	सलेखा	न न म न न ग ग	१७.
३२,३८३.	तितिक्षा	भ न य न न ग ग	१७.
३२,७६८.	वसुधारा	न न न न न ग ग	१०, १९.
	रोहिणी	न स म म य ल ग	१०.
३८,७५१.	बालविक्रीडितम्	भ स ज स य ल ग	१७.
३८,७५८.	कालसारोद्धतः	ज त ज स य ल ग	१७.
	कान्ता	य भ न र स ल ग	१४.
	हरिः	न न म र स ल ग	१४.
५२,४६५.	विरुदरुतम्	म भ स भ त ल ग	१७.
५२,९९३.	कासारम्	म म त न त ल ग	१७.
५६,१६७.	वंशलः	भ त ज ज ज ल ग	१७.
	विलासिनी	न ज भ ज भ ल ग	४.
६४,६१२.	विधुरविरहिता	स त य भ न ल ग	१७
६४,९२४.	शुकवनिता	स स भ भ न ल ग	१७; शिशुकवनिता–१७.
६४,९४७.	वाहान्तरितम्	त न भ भ न ल ग	१७.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
६६,३६२.	कर्णस्फोटम्	न य त न म ग ल	१७.
७४,८९६.	प्रतीहारः	र र र र र ग ल	१७.
७५,७१४.	कान्तारम्	य म न स र ग ल	१७.
८१,१४०.	फल्गुः	स भ स भ स ग ल	१७.
	ललितभृङ्गः	भ स न ज न ग ल	रूपगोस्वामिकृत रासक्रीडास्तोत्र

अष्टादशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३१,४५०.	परामोदः	य स स ज न म	१७.
३२,२३०.	विलुलितवनमाला	न न म न न म	१७.
	अनङ्गलेखा	न स म म य य	५, १०.
	चन्द्रमाला	न न म म य य	५, १०.
३७,४४०.	नीलशार्दूलम्	न न म य य य	१७; नीलशालूरं–१७; नील-मालूरम्–१७.
	मन्दारमाला	स त न य य य	१६.
४४,०२५.	सत्केतुः	म न न ज र य	१७.
	पङ्कजवक्त्रा	न न स स त य	१०; पङ्कजमुक्ता–१६.
	भङ्गिः	भ भ भ भ न य	१०; विच्छित्तिः–११.
	काञ्ची	म र भ य र र	१०; वाचालकाञ्ची–११, २०.
	केसरम्	म भ न य र र	५, १०, १४.
७४,८९९.	सिन्धुसौवीरम्	र र र र र र	१७.
	निशा	न न र र र र	१०; तारका–११; मञ्जा-मालिका–१४.
७७,५०४.	पर्विणी	न न र न न र	१७.
७७,८०९.	क्रौडक्रीडम्	म भ न न र र	१७.
	बुद्बुदम्	स ज स ज त र	१०.
८९,००८.	वसुपदमञ्जरी	न ज भ ज ज र	१७.
	हरिणीपदम्	न स म त भ र	५, १०.
९३,०१७.	हरिणप्लुतम्	म स ज ज भ र	१४, १७.
	कुरङ्गिका	म त न ज भ र	५, १०.
	चलम्	म भ न ज भ र	१०, १४; अचलम्–५.
९५,७०४.	षट्पदेरितम्	न र न र न र	१७.
९६,०९४.	पार्थिवम्	ज स ज स न र	१७.
	गुच्छकभेदः	न न न न न र	रूपगोस्वामिकृत-अरिष्टवधस्तोत्र

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१,१२,३४८.	परिपोषकम्	स स स स स स	१७.
·	क्रीडा	य म न स त स	१०; सुधा–१४; मुक्तामाला-१४, १७.
	सुरभिः	स न ज न भ स	१०, १६.
	मणिमाला	भ भ भ म भ स	१०, १६
१,२६,३६१.	अश्वगतिः	भ भ भ भ भ स	१६.
१,४६,७६७.	अर्धान्तरालापि	त त त त त त	१७; अद्धान्तरालापि–१७.
१,४६,७६८.	पतङ्गपादः	ज त त त त त	१७.
२,२४,६६५.	हीरकहारधरम्	भ भ भ भ भ भ	१७.
२,४६,६६१.	दण्डी	त न त न त न	१७.

एकोनविंशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२०,४६६.	झिल्लीलीला	न य म म ज म ग	१७.
३१,२२५.	विधुनिधुवनम्	म न न त न म ग	१७.
४८,१८६.	माराभिसरणम्	त न म भ स य ग	१७.
७४,८६६.	लोललोलम्बलीलम्	र र र र र र ग	१७.
	विस्मिता	य म न स र र ग	१४.
	मुग्धकम्	य म न न र र ग	१०.
	माधवीलता	म र भ स स ज ग	१०, २०.
	रतिलीला	ज स ज स ज स ग	१०, १६.
	तरुणीवदनेन्दुः	स स स स स स ग	६, १०.
१,३०,३४६.	किरणकीर्त्तिः	त ज त भ न स ग	१७.
	वञ्चितम्	म त न स त त ग	१०; चन्द्रबिम्बम्–५; बिम्बं-१४; विचितम्–१४.
१,५५,४८१.	शिलीमुखोज्जृम्भितं	म स ज न ज त ग	१७.
१,७४,७६३.	कलापदीपकम्	र ज र ज र ज ग	१७.
१,७४,७८४.	प्रपञ्चचामरम्	न न र ज र ज ग	१७; प्रपञ्चम्–१७.
	पञ्चचामरः	न न स ज र ज ग	१४.
१,७८,१३६.	कल्पलतापताकिनी	म न न स स ज ग	१७.
	मकरन्दिका	य म न स ज ज ग	५, १०, १४.
	मणिमञ्जरी	य भ न य ज ज ग	१४.
	तरलम्	न भ र स ज ज ग	१०, १६.
	ऊर्जितम्	र स स त ज ज ग	१०; शार्ङ्ग–१६.
१,६२,१६२.	निर्गलितमेखला	न न र न भ ज ग	१७.
	वायुवेगा	म स ज स न ज ग	१०, २२.

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१,६६ ६२१.	ग्रावास्तरणम्	म भ स भ म भ ग	१७.
	समुद्रलता	ज स ज स त भ ग	१४.
२,४१,३३६.	टङ्कणम्	र न र न र न ग	१७.

विंशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
५२,४६५.	वाणीवाण:	म भ स भ त य ग ग	१७.
१,२६,०३१.	भेकालोक:	भ म म त न स ग ग	१७.
	चित्रमाला	म र भ न त त ग ग	५, १०; सुप्रभा–७, ११.
१,५१,४१३.	विष्वग्वितानम्	त भ ज न त त ग ग	१७.
१,५१,४८६.	भूरिशोभा	म म न न त त ग ग	१७.
१,६१,२४०.	संलक्ष्यलीला	न र न र न त ग ग	१७.
१,६३,६८८.	भारावतार:	न त ज न न त ग ग	१७; हारावतार:–१७.
२,२४,६६५.	वीरविमानम्	भ भ भ भ भ भ ग ग	१७.
२,६८,६७६.	मत्तेभविक्रीडितम्	स भ र न म य ल ग	१०, १७, १६.
	रत्नमाला	म न स न म य ल ग	१०.
२,६६,५६४.	अवन्ध्योपचार:	य य य य य य ल ग	१७.
३,५५,७६६.	कामलता	भ र न भ भ र ल ग	१०; उत्पलमालिका–११, १७, १६.
	दीपिकाशिखा	भ न य न न र ल ग	१०, २०.
	मुद्रा	न भ भ म स स ल ग	१०; १६; उज्ज्वलम्–११, १६,
	पुटभेदकम्	र स स स स स ल ग	१६.
५,०७,६५५.	सौरभशोभासार:	भ म त न स न ल ग	१७.

एकविंशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
८१,६२१.	अशोकलोक:	म म म म त र म	१७; अशोकलोकालोक:–१७.
	ललितगति:	न न न य य र म	१६.
८६,०८०.	मन्दाक्षमन्दरम्	न न म म ज र म	१७.
१,६१,८२७.	तल्पकतल्लजम्	भ भ भ भ भ ज म	१७.
२,६६,५६४.	विद्युद्दाली	य य य य य य य	१७.
५,६७,६०५.	दूरावलोक:	म र भ न य र र	१७.
५,६६,५०८.	शरकाण्डप्रकाण्डम्	स र न र र र र	१७.
६,१६,६६२.	कलमतल्लिका	न र न र न र र	१७.
	ललितविक्रम:	भ र न र न र र	१०, २०.
	वनमञ्जरी	न ज ज ज ज भ र	१०, १६.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
	कथागतिः	त र भ न ज भ र	१०, २०.
	पद्मसद्म	र स न ज न भ र	१६.
८,९८,७८०.	प्रतिमा	स स स स स स स	१७; सवैया–१७.
६,००,११२.	कमलशिखा	न य म भ स स स	१७.
६,३६,२४०.	ललितललाम	न ज त त त त स	१७.
	मत्तक्रीडा	म म त न न न स	१०.
	चन्दनप्रकृतिः	र ज त न न न स	१०.
१७,९७,५५९.	तडिदम्बरम्	भ भ भ भ भ भ भ	१७; सवैया–१७.

द्वाविंशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२,०२,९५१.	वासकलीला	भ म स त य भ म ग	१७.
३,३१,७७६.	द्रुतमुखम्	न न न न म र य ग	१७.
५,९०,११३.	भीमाभोगः	म त त म म र र ग	१७.
५,९८,६०२.	वीरनीराजना	य य य य र र र ग	१७.
५,९९,१८५.	कङ्कणक्वाणवाणी	म र र र र र र ग	१७.
५,९९,१८७.	कङ्कणक्वाणः	र र र र र र र ग	१७.
	महास्रग्धरा	स त त न स र र ग	१०, १६.
८,१७,६३८.	अर्शकमाला	भ त न त न म स ग	१७.
८,७६,४४१.	भस्त्रानिस्तरणम्	म स भ न ज र स ग	१७.
८,९८,७८०.	अयमानम्	स स स स स स स ग	१७.
	दीपार्चिः	म स ज स ज स ज ग	१०, २०.
	मदनसायकः	न भ ज भ ज भ ज ग	१६.
१५.७०,४८५.	भोगावली	त भ र स न न ज ग	१७.
१६,३६,०६०.	स्वर्णाभरणम्	स स स स न य भ ग	१७.
१६,७७,५११.	निष्कलकण्ठी	भ म स त य स भ ग	१७.
१६,१४,०३७.	भुजङ्गोद्धतम्	त भ र र स र न ग	१७.
	लालित्यम्	म स र स त ज न ग	१४.
	वरतनुः	म त य न न न न ग	१०.
२०,९७,१५२.	अचलविरतिः	न न न न न न न ग	१७.
३१,२४,५८८.	वनवासिनी	स ज ज भ र न स ल	१७.

त्रयोविंशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
८,४२,१७६.	परिधानीयम्	न न भ त ज य स ग ग	१७.
१७,५२,४७९.	विलासवासः	भ स भ भ स ज भ ग ग	१७; सुभागः–१७; विलासः १७.

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्दनाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१७,६८,१०४.	मन्थरायनम्	न र न न भ भ भ ग ग	१७; मन्थरं–१७.
१८.३१.६०३.	पुलकाञ्चितम्	भ स न य न न भ ग ज	१७.
२०,८६,४४७.	इन्द्रविमानम्	भ त न म भ न न ग ग	१७.
	वृन्दारकम्	ज स ज स य य य ल ग	१०, २०.
२८,१७,४०१.	विपुलायितम्	म न ज भ न ज र ल ग	१७.
	चित्रकम्	र न र न र न र ल ग	६, १०, १६.
३२,७०,१४५.	पारावारान्तस्थम्	म म म स भ स त ल ग	१७; पारावारान्तः–१७.
३३,६४,८०१.	रामावद्धन्	म भ स भ त न त ल ग	१७.
३५,२८,५४२.	विलम्बललितम्	ज स ज स ज स ज ल ग	१७; विलम्–१७.
३५,६५,११७.	शङ्खः	त ज ज ज ज ज ज ल ग	१०, १६.
३५,६५,१२०.	हंसगतिः	न ज ज ज ज ज ज ल ग	१०; १६; महातरुणीदयितम्-११, १६; श्रवणाभरणं–१७; विराजितम्–१७.
३६,४३,८७६.	गोत्रगरीयः	भ त न त य न ज ल ग	१७.
	चपलगतिः	भ म स भ न न न ल ग	१०.
४१,६४,३०४.	भ्रमरचमरी	न न न न न न न ल ग	१७.
५०,४५,३७५.	संभृतशरधिः	भ न य भ न य स ग ल	१७.
५६,६१,८६३.	चकोरः	भ भ भ भ भ भ भ ग ल	१७.

चतुर्विंशाक्षर छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्दनाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
६,८८,२६६.	वंशलोन्नता	र ज र म म ज र म	१७.
१०.४६,२६३.	धौरेयम्	भ भ स स न न स म	१७.
२३,६६,७४६.	भुजङ्गः	य य य य य य य य	१७; महाभुजङ्गः–१७; सुधायः १७.
३१,०२,६३५.	भासमानबिम्बम्	र ज भ स ज भ स य	१७; मानबिम्बं–१७; भासमानं–१७.
३५,६५,१२०.	समाहितम्	न ज ज ज ज ज ज य	१७.
३६,३८,२७२.	विगाहितगेहम्	न न न य म न ज य	१७; गाहितगेहं–१७; गाहितदेहम्–१७.
३६,५३,११३.	अधीरकरीरम्	म न न भ स न ज य	१७.
४१,५६,८५५.	अर्दितम्	भ भ भ भ भ भ न य	१७; नर्दितम्–१७.
४१,६०,३३५.	पार्षतसरणम्	भ न य म न न न य	१७.
	ललितलता	न न भ न ज न न य	१०, १६.
४१,६३,४७६.	कोकपदम्	भ म स भ न न न य	१७; हंसपवम्–१६.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-संङ्केताङ्क
४७,९३,४९१.	गङ्गोदकम्	र र र र र र र र	१७
	मेघमाला	न न र र र र र र	३, १०, २२.
४८,४८,३०१.	उत्कटपट्टिका	त ज र ज न स र र	१७.
	महामदनसायकः	न भ ज भ ज भ ज र	१९.
	विभ्रमगतिः	म स ज स त त भ र	१०, २०.
५९,९३,९१२.	शम्बरम्	न भ भ र न भ भ र	१७.
८३,६८,५६७.	वेल्लितवेलम्	भ भ भ म स न न स	१७.
	द्रुतलघुपदगतिः	भ भ भ त न न न स	१०.
	सम्भ्रान्ता	न य भ त न न न स	१०.
८३,८८,६०८.	अतुलपुलकम्	न न न न न न न स	१७.

पञ्चविंशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-संङ्केताङ्क
	मत्तेभः	म म म म म त य म ग	१९.
२९,७६,६०३.	शरभूरिणी	र स ज ज भ र स य ग	१७.
४७,९३,४९१.	ह्रीणहैयङ्गवीनम्	र र र र र र र र ग	१७.
७२,०२,८१५.	नीपवनीयकम्	भ न न स भ स स स ग	१७.
७५,७६,८०८.	कुमुदमाला	न त स भ य न त स ग	१७.
८२,८३,९०४.	रसिकरसाला	न न स स भ त न स ग	१७.
८३,९२,४८९.	विरहविरहस्यम्	म न न त य न न स ग	१७.
८३,८१,३११.	भास्करम्	भ न ज य भ न न स ग	१७.
९५,९२,४६७.	चित्तचिन्तामणिः	र र र न ज त त त ग	१७.
१,१३,८५,९७३.	व्याकोशकोशलम्	त य भ भ स स स ज ग	१७.
	हंसलयः	न न न न स भ भ भ ग	१०, १९.
१,४३,८०,४७१.	शिविका	भ भ भ भ भ भ भ भ ग	१७.
१,५४,४५,६९१.	भाविनीविलसितम्	र न र न र न र न ग	१७.
१,६१,७५,१६८.	विशेषकवलितम्	न न म म ज ज ज न ग	१७; विशेषितं—१७.
	चपलम्	न ज ज य न न न न ग	१०.
१,६७,७४,७१७.	अभ्रभ्रमणम्	त न म स न न न न ग	१७.
	हंसपदा	त य भ भ न न न न ग	६, १०, २०.
१,६७,७७,२१६.	अलका	न न न न न न न न ग	१७; अलिका—१७.
१,९१,७३,९६२.	मल्लपल्लीप्रकाशम्	य य य य य य य य ल	१७.
२,३५,२५,०८४.	सौदामनदाम	स स स स न ज य स ल	१७.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
		षड्विंशाक्षर-छन्द	
३३,९९,१६९.	तनुकिलकिञ्चितम्	म म म न ज न त य ग ग	१७.
३९,९४,५७६.	विनयविलासः	न य न य न य न य ग ग	१७.
६५,११,४६७.	विश्वविश्वासः	म य य य र र त त ग ग	१७.
६५,३४,६६१.	अशोकानोकहम्	म भ न भ न र त त ग ग	१७.
६५,८७,०६१.	आभासमानम्	य य य य त त त त ग ग	१७.
६५,८७,०६५.	वीरविक्रान्तः	म न ज त त त त त ग ग	१७.
१,११,८४,८११.	विकुण्ठकण्ठः	र ज र ज र ज र ज ग ग	१७.
१,१२,०२,८१६.	चारुगतिः	न न स म न ज र ज ग ग	१७.
१,५७,९०,३२१.	भसनशलाका	म भ स म न य त न ग ग	१७.
१,६७,६७,८७१.	उज्झितकदनम्	भ न ज ज ज न न न ग ग	१७.
	मकरन्दः	न य न य न न न न ग ग	१७.
	वनलतिका	न न न न न न न न ग ग	१९.
१,९१,३२,९९२.	कुहककुहरम्	न न म य न न म य ल ग	१७.
१,९२,४८,२८५.	सूरसूचकः	म स ज स स स य य ल ग	१७.
१,९८,१५,६१०.	विषाणाश्रितम्	य न र भ ज त स य ल ग	१७.
२,२३,६९,४२७.	विनिद्रसिन्धुरः	र र र र ज र ज र ल ग	१७.
२,२३,८०,१७७.	शकुन्तकुन्तलः	म र र न न र ज र ल ग	१७.
२,८१,४२,४२७.	काकलीकलकोकिलः	र स ज ज भ र स ज ल ग	१७.
	सुधाकलशः	न ज भ ज ज ज भ ज ल ग	१०, १९.
२,९३,३०,९४३.	भृङ्गलवलयितं	भ न न भ म न न ज ल ग	१७.
३,२१,७५.७९२.	विरामवाटिका	न ज र स न ज र न ल ग	१७.
३,३५,९२,८२१.	कर्णाटकम्	त भ ज भ ज भ न न ल ग	१७.
	आपीडः	भ न न स म न न न ल ग	१०;
	वेगवती	न ज न स भ न न न ल ग	१०.
३,८३,४७,९६८.	कुम्भकम्	न न र र र र र र ग ल	१७.
५,७५,२१,८८४.	वशंवदः	स स स स स स स स ल ल	१७.

प्रकीर्णक-छन्द

२७.	मालावृत्त	म त त त न न य य य	५, ६, मालाचित्र–१०.
२७.	विकसितकुसुमम्	म भ न न न न न न स	१९; मालावृत्तम्–१९.
२७.	मालावृत्तम्	म म त न भ म म भ म	१९.

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

वर्णसंख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२७.	त्रिपदललितम्	न न न न भ न भ न स	१९.
२८.	त्रिभङ्गी	न स भ न त ज त स य	१९.
२९.	प्रमोदमहोदयः	म त य त न न न र स ल ग	१०.
२९.	कला	न न न न न न न न न ल ग	१९.
२९.	मणिकिरण	न न भ न ज न न न न ल ग	१९;
३०.	नृत्तललितम्	भ ज स न भ ज स न भ य	१०; वृत्तललितम्-१९.
३१.	लहरिका	न न न न न न न न न न ग	१९.
३१.	विशालं	३१ वर्ण	१६.
३१.	खञ्जविशालं	३१ वर्ण	१६.
३२.	उपविशालं	३२ वर्ण	१६.
३२.	खञ्जोपविशालं	३२ वर्ण	१६.
३३.	चक्र	भ न न भ न न भ न न भ य	१९.
३४.	चित्रलय	भ न न भ न न भ न न भ न ग	१९.
३४.	अतिच्छन्दः	म म त न न न न न स ज ज ग	२०; मेघदण्डक–२२
३८.	ललितलता	न-१२, ल ग	१०, १९.
३८.	पिपीलिकादण्डकः	म म त न न न न न न न र स ल ग	२२.
४२.	पणवदण्डकः	म म त न न न न न न न न ज भ र	२२.
४६.	करभदण्डकः	म म त न न न न न न न न न स ज ज ग	२२.
५०.	ललितदण्डकः	म म त न न न न न न न न न न न र स ल ग	२२.
	वारी	४६ मात्रा	१६.
	उपवारी	४२ मात्रा	१६.

दण्डक-छन्दः

३३.	अर्णवः	[न न र–९]	५, ६, १०, १३. १५, १६, १७, १८, १९; अर्ण–२२.
३६.	व्यालः	[न न र–१०]	५, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १९; प्लवः–२२.
३९.	जीमूतः	[न न र–११]	५, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १९; व्यालः–२२.
४२.	लीलाकरः	[न न र–१२]	५, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १९; जीमूत–२२.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

वर्ण-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
४५.	उद्दामः	[न. न. र–१३]	५. ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १६; लीलाकरः–२२
४८.	शङ्खः	[न.न. र–१४]	५, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १६; उद्दामः–२२.
५१.	विश्ववाट्	[न.न. र.–१५]	१७; समुद्रः–६, १०; अर्कः– १६; आरामः–१४; माला–५; सिंहः–२२.
५४.	कालदण्डः	[न.न. र.–१६]	१७; संग्रामः–१४, १७; भुजंगः–६, १०; चन्द्रेशः–१६; मालाः–५; समुद्रः–२२.
५७.	पौण्ड्रकः	[न.न. र- १७]	१७; सुरामः–१४; भोगीन्द्रः–१६; मालाः–५; भुजङ्गः–२२.
६०.	उदारपादः	[न.न. र–१८]	१७; वैकुण्ठः–१४; पीयूष.–१६; मालाः–५; प्रचितकः–२२.
६३.	सोत्कण्ठः	[न.न. र–१६]	१४, १७; वाराहः–१६; मालाः–५. प्रचितकः–२२.
६६.	सारः	[न.न. र.–२०]	१४, १७; वातः–१६; माला–५. ,,
६६.	कासारः	[न.न. र–२१]	१४, १७; माला–५; महाचण्डवृष्टिः–१६; ,,
७२.	विस्तारः	[न.न. र–२२]	१४,१७;माला–५;महाचण्डवृष्टिः–१६; ,,
७५.	संहारः	[न.न. र–२३]	१४, १७; ,, ,, ,,
७८.	नीहारः	[न.न. र–२४]	१४, १७; ,, ,, ,,
८१.	मन्दारः	[न.न. र–२५]	१४, १७; ,, ,, ,,
८४.	केदारः	[न.न. र–२६]	१४, १७; ,, ,, ,,
८७.	साधारः	[न.न. र–२७]	१४ १७; ,, ,, ,,
६०.	सत्कारः	[न.न. र–२८]	१४, १७; ,, ,, ,,
६३.	संस्कारः	[न.न. र–२६]	१४, १७; ,, ,, ,,
६६.	विमर्षः	[न न. र–३०]	१७; माकन्दः–१४;माला–५ ,, ,,
६६.	शेषशाली	[न.न. र–३१]	१७; गोविन्द–१४; ,, ,, ,,
१०२.	सानन्दः	[न.न. र–३२]	४, १४; ,, ,, ,,
१०५.	सन्दोहः	[न.न. र–३३]	१४; ,, ,, ,,
१०८.	नन्दः	[न.न. र–३४]	१४; ,, ,, ,,
२८.	पन्नगः	[न.ग. र–८]	१०, ६;
३१.	दम्भोलिः	[न.ग. र–६]	१०, १६;
३४.	हेलावली	[न.ग. र–१०]	१०, १६;
३७.	मालती	[न.ग. र–११]	१०, १६;

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

वर्ण-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
४०.	केलिः	[न,ग. र–१२]	१०, १६;
४३.	कंकेल्लिः	[न.ग. र–१३]	१०, १६;
४६.	लीलाविलासः	[न.ग. र.–१४]	१०, १६;
२८.	शकायतनम्	[भ–९, ग.]	१७.
२९.	भुजगविलासः	[भ–९, ग. ग.]	५, १०, १६.
२८.	लावण्यलीला-प्लुतम्	[न. य–८, ल]	१७.
२८.	आलानिकम्	[न. न. र. य–६, ल]	१७.
२९.	स्मारमाला-कुलः	[स, य–८, ल. ग]	१७.
३१.	आर्द्रस्तबकः	[न य न य न य न य न य ल]	१७.
४८.	विदग्धसुभंगी	[त न त न त न भ भ त न त न त न भ भ]	१७.
५७.	विशेषस्तबकम्	[न य न य न य न य भ स भ स भ स म भ स भ स]	१७.
२९.	चण्डपालः	[ल ५, र–८]	५; चण्डकीलः–१६; चण्डकालः–१०.
३५.	,,	[ल ५, र–१०]	५.
३२.	सिंहविक्रान्तः	[ल ५, य–९]	५, १०, १४, १७.
३०.	मेघमाला	[न न म म, य–६]	५, १६ [न न यथेष्ट मगण] १६; [न. म यथेच्छ यगण १०]
३६.	चण्डवेगः	[न.न. य–१०]	५, १०, १६.
३२.	सिंहक्रीडः	[य–१०, ग ग]	५, १७.
३०.	कामबाणः	[त–१०]	५, १०; दाम–१६; [यथेच्छ त, ग २; स, ग २; ज, ग २; य, ग २।] १६.
२९.	सिंहविक्रान्तः	[ल–५, य–८]	१६.
३६.	उद्दालकः	[म–१२]	१६.
४८.	सिंहविक्रीडः	[य–१६]	१०, १६; सिंहविक्रान्तः–१४.
३६.	वितानम्	[ज–१२]	१६.
३६.	वर्तुलः	[भ–१२]	१६.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

वर्ण-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३६.	अचलः	[न-१२]	१६.
२८.	वर्णकः	[न न. भ-७, ग.]	४.
३५.	समुद्रः	[न न. र ज र ज र ज र ज र ल.ग]	४.
	उत्कलिका	[न न, पंचमात्रिकगण यथेष्ट]	१०.
३०.	बाललीलातुरः	[१० गण ऐच्छिक]	१७.
३२.	मनोहरणकवित्त	[१० गण ऐच्छिक, ल-२]	१७.
८६.	कुसुमितकायः	[म म त न त य ज त र भ स स भ स भ स भ स भ त य स भ त य स भ न न र ग ग]	१७.
	मकरालयः	[न ग र., सप्ताक्षरगण यथेच्छ	१६.
	सिंहः	[ल. ३, यथेच्छ गण]	१६.
	अब्दः	[ल. ४, यथेच्छ गण]	१६.
	चण्डः	[ल. ५, यथेच्छ गण]	१६.
	वातः	[ल. ७, यथेच्छ गण]	१६.
९९९.	महादण्डकः	[न न, र-३३३]	समयसुन्दरकृत विज्ञप्तिपत्री

अर्द्धसमवृत्त

वर्ण-संख्या✪	वृत्तनाम	विषमचरणों का लक्षण●	समचरणों का लक्षण*	सन्दर्भ-ग्रन्थ-संकेतांक
(३, ८)	कामिनी	[र]	[ज र ल ग]	१०.
(३, १२)	शिखी	[र]	[ज र ज र]	१०.
(३, १६)	नितम्बिनी	[र]	[ज र ज र ज ग]	१०.
(३, २०)	वारुणी	[र]	[ज र ज र ज र ल ग]	१०.
(३, २४)	वतंसिनी	[र]	[ज र ज र ज र ज र]	१०.

टि– ✪ वर्णसंख्या के कोष्ठक में प्रयुक्त पहला अंक प्रथम और तृतीय चरणों का और दूसरा अंक द्वितीय और चतुर्थ चरण के वर्णों का द्योतक है।

● विषम चरण अर्थात् प्रथम और तृतीय चरण का लक्षण।

* सम चरण अर्थात् द्वितीय और चतुर्थ चरण का लक्षण।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

वर्ण-संख्या	वृत्तनाम	विषमचरणों का लक्षण	समचरणों का लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-संकेतांक
(५, ११)	इला	[स ल ग]	[स स स ल ग]	१०.
(५, २४)	मृगाङ्कमुखी	[स ल ग]	[स स स स स स स स]	१०.
(८, ३)	वानरी	[ज र ल ग]	[र]	१०.
(८, ८)	प्रवर्तकम्	[र ज ग ग]	[ज र ल ग]	१६.
(६, १०)	वैसारी	[त ज र]	[म स ज ग]	१७.
(१०, १०)	अतैलम्	[ज त त ग]	[त त त ग]	१७. अत्तिलम्–१७.
(१०, १३)	शुकावली	[त ज र ग]	[म न ज र ग]	१७.
(१०, १२)	समुद्रकान्ता	[त ज र ग]	[म स स य]	१७.
(१०, १४)	विलासवापी	[त ज र ग]	[स भ र ज ग ग]	१७.
(१०, १०)	विश्वप्रमा	[त त त ग]	[ज त त ग]	१७.
(१०, १२)	सम्पातशीला	[त म र ग]	[स न म य]	१७.
(१०, १०)	घटिका	[त स ज ग]	[स स ज ग]	१७.
(१०, १३)	जारिणी	[न त त ग]	[र र न त ग]	१७.
(१०, ६)	वासववन्दिता	[म स ज ग]	[त ज र]	१७,
(१०, ११)	करधा	[म स ज ग]	[न न र ल ग]	१७.
(१०, ११)	सुधा	[म स ज ग]	[स भ र ल ग]	१७.
(१०, १०)	प्रभासिता	[म स ज ग]	[स स ज ग]	१७.
(१०, १२)	मकरावली	[म स स ग]	[स भ भ स]	१०.
(१०, १०)	आलोलघटिका	[स स ज ग]	[त स ज ग]	१७.
(१०, १२)	अरुन्तुदः	[स स ज ग]	[न ज ज र]	१७.
(१०, १०)	प्रभासिता	[स स ज ग]	[म स ज ग]	१७.
(१०, १२)	नवनीलता	[स स ज ग]	[स भ ज र]	१७; अवनीलता–१७. अवलीलता–१७.
(११, ११)	विपरीताख्यानिकी	[ज त ज ग ग]	[त त ज ग ग]	२, ५, १०, १३, १७, १८, १६, २२.
(११, ११)	आख्यानिकी	[त त ज ग ग]	[ज त ज ग ग]	२, ५, १०, १३, १७ १६; आख्यानिका–१८ २०, २२.
(११, १२)	किम्भद्रकः	[त ज ज ल ग]	[स स स स]	१७.
(११, ११)	समयवती	[त न त ल ग]	[स म न ल ग]	१७.
(११, १२)	शिशिराशिखा	[न न र ल ग]	[न ज ज र]	१७.
(११, १०)	वैयाली	[न न र ल ग]	[म स ज ग]	१७.
(११, ११)	पाटलिका	[न य न ग ग]	[भ भ भ ग ग]	१७.
(११, १२)	साचीकृतवदना	[न य भ ग ग]	[त न भ स]	१७.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

वर्ण-संख्या	वृत्तनाम	विषमचरणों का लक्षण	समचरणों का लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ संकेतांक
(११, ११)	औपगवम्	[न र र ग ग]	[भ र र ल ग]	१७.
(११, १२)	उपाढचम्	[न स ज ग ग]	[भ भ र य]	१७.
(११, ११)	करभोद्धता	[भ त र ल ग]	[स न र ल ग]	१७.
(११, १३)	विलसितलीला	[भ भ त ल ग]	[न ज न स ग]	१०, १६.
(११, १२)	द्रुतमध्या	[भ भ भ ग ग्र]	[न ज ज य]	२, ६, १०, १३, १७ १८, १६, २०, २२; चलमध्या–५.
(११, ११)	कोरकिता	[भ भ भ ग ग]	[न य न ग ग]	१७.
(११, १२)	कमलाकरा	[भ भ भ ग ग]	[भ न ज य]	१७.
(११, १०)	वर्गवती	[भ भ भ ग ग]	[स स स ग]	१७.
(११, ११)	अवहित्रा	[भ भ भ ग ग]	[स स स ल ग]	१७.
(११, १०)	केतुः	[भ र न ग ग]	[स ज स ग]	१७.
(११, ११)	औपगवीतम्	[भ र र ल ग]	[न र र ग ग]	१७.
(११, १३)	बद्धास्यम्	[म भ न ल ग]	[स स न न ग]	१७.
(११, १०)	युद्धविराट्	[म स ज ग ग]	[त ज र ग]	१७.
(११, १२)	असुराढचा	[म स ज ग ग]	[न न र य]	१७.
(११, ११)	वर्णिनी	[र न भ ग ग]	[र न र ल ग]	१७.
(११. १२)	किलकिता	[र न र ल ग]	[न भ ज र]	१७.
(११, ११)	सारिका	[र न र ल ग]	[र न भ ग ग]	१७.
(११, १०)	ललिता	[र स स ल ग]	[स ज ज ग]	१४.
(११, ११)	शालभञ्जिका	[स न र ल ग]	[भ त र ल ग]	१७.
(११, १२)	विमानिनि	[स भ र ल ग]	[म न ज र]	१७.
(११, १०)	असुधा	[स भ र ल ग]	[म स ज ग]	१७.
(११, १०)	सुन्दरी	[स भ र ल ग]	[स स ज ग]	१७; सुरमालिका–१७; वियोगिनी–१७.
(११, ११)	अयवती	[स म न ल ग]	[त न त ल ग]	१७;
(११, १२)	मालभारिणी	[स स ज ग ग]	[स भ र य]	१०, २०; नितम्बिनी-११; उपोद्गता–१७. वसन्तमालिका–१७. परिश्रुता–१७, सुबोधिता–१६, प्रिया–१६
(११, १२)	हरिलुप्ता	[स स स ल ग]	[स भ भ र]	१७.
(१२, १२)	शंखनिधिः	[ज त ज र]	[त त ज र]	१६; सुनन्दिनी–१६.
(१२, १२)	विपरीतभामा	[ज भ स य]	[त भ स य]	१६.
(१२, ३)	शिखण्डि	[ज र ज र]	[र.]	१०.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

वर्ण-संख्या	वृत्तनाम	विषमचरणों का लक्षण	समचरणों का लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-संकेतांक
(१२, १३)	पद्मावती	[त भ ज य]	[स ज स स ग]	१७.
(१२, १२)	सरसीकम्	[त भ ज य]	[स भ ज य]	१७
(१२, १२)	पद्मनिधिः	[त त ज र]	[ज त ज र]	१९; नन्दिनी–१९
(१२, ११)	अवाचीकृतवदना	[त न भ स]	[न य भ ग ग]	१७.
(१२, १२)	भामा	[त भ स य]	[ज भ स य]	१९
(१२, १२)	सिंहप्लुतम्	[त भ स य]	[ज भ स य]	१९; (श्रुति-स्मृति-उपजाति)
(१२, ११)	ईहा	[न ज ज य]	[भ भ भ ग ग]	१७.
(१२, ११)	अपरवक्त्रम्	[न ज ज र]	[न न र ल ग]	१७; मृदुमालती–१७.
(१२, १०)	अनूपकम्	[न ज ज र]	[स स ज ग]	१७.
(१२, १३)	मञ्जुसौरभम्	[न ज ज र]	[स ज य ज ग]	१४.
(१२, ७)	क्षान्तिः	[न न न य]	[म म ग]	१९; चूडा–१९.
(१२, १२)	कौमुदी	[न न भ भ]	[न न र र]	१४.
(१२, ११)	सुराढ्या	[न न र य]	[म स ज ग ग]	१७.
(१२, १५)	शरावती	[न न र य]	[स भ न ज र]	१७.
(१२, ११)	किलकिती	[न भ ज र]	[र न र ल ग]	१७.
(१२, ११)	अकुसुमचरम्	[भ न ज य]	[भ भ भ ग ग]	१७.
(१२, ११)	आमलकी	[भ भ भ भ]	[भ भ भ ग ग]	१९; चुक्षा–१९.
(१२, ११)	उपाढ्यम्	[भ भ र य]	[न स ज ग ग]	१७.
(१२, १२)	उलपोहा	[भ भ र य]	[स भ र ज]	१७.
(१२, ११)	विमानिनी	[भ न ज र]	[स भ र ल ग]	१७
(१२, १६)	अहीनताली	[म न ज र]	[स भ स ज र ग]	१७.
(१२, १३)	वियद्वाणी	[म स ज म]	[स भ र य ग]	१७.
(१२, १०)	कान्ता	[म स स य]	[त ज र ग]	१७.
(१२, १३)	मृगीयवानी	[र ज र ज]	[ज र ज र ग]	१४, १८.
(१२, १३)	चमूरुभीरुः	[र न ज र]	[स न ज र ग]	१७.
(१२, १०)	पातशीला	[स न म य]	[त म र ग]	१७.
(१२, १२)	उपसरसीकम्	[स भ ज य]	[त भ ज य]	१७.
(१२, १०)	करीरीता	[स भ ज र]	[स स ज ग]	१७.
(१२, ११)	लुप्ता	[स भ भ र]	[स स स ल ग]	१७.
(१२, १२)	अर्भकपंक्तिः	[स भ र ज]	[भ भ र य]	१७.
(१२, १३)	अप्रमाथिनी	[स भ र य]	[न ज ज र ग]	१७.
(१२, ११)	प्रमालिका	[स भ र य]	[स स ज ग ग]	१७; उपोद्गता–१७ सौरभसंचितम्–१७.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

वर्ण-संख्या	वृत्तनाम	विषमचरणों ण	समचरणों का लक्षण	सन्दर्भ ग्रंथ-संकेतांक
(१२, ११)	नटक:	[.. सस]	[त ज ज ल ग]	१७.
(१३, १३)	प्रकीर्णकम्	[ज भ स ज ग]	[त भ स ज ग]	१६; (रुचि-रुचिर-उपजाति)
(१३, १३)	निर्मधुवारि	[त भ र स ल]	[स ज स ज ग]	१७.
(१३, १४)	लास्यलीलालय:	[त य र र ग]	[भ स त त ग ग]	१७.
(१३, १२)	अञ्चिताग्रा	[न ज ज र ग]	[न न र य]	१७.
(१३, १२)	प्रमाथिनी	[न ज ज र ग]	[स भ र य]	१७.
(१३, १४)	आलेपनम्	[न त त त ग]	[न भ य य ल ग]	१७.
(१३, १६)	परप्रीणिता	[न न त त ग]	[न न स त त ग]	१७.
(१३, १३)	विमुखी	[न न भ स ल]	[न न स स ग]	१७.
(१३, १५)	प्रमोदपरिणीता	[न न र ज ग]	[न ज ज भ य]	१७.
(१३, १३)	सुरहिता	[न न स स ग]	[त न न न ग]	१७.
(१३, १३)	रुचिमुखी	[न न स स ग]	[न न भ स ल]	१७.
(१३, १३)	शिशुमुखी	[न भ ज ज ग]	[न भ स ज ग]	१७.
(१३, १३)	अनिरया	[न भ स ज ग]	[न भ ज ज ग]	१७.
(१३, १४)	प्रतिविनीता	[न य ज र ग]	[स भ र न ग ग]	१७.
(१३, १३)	अल्परुतम्	[भ न ज ज ग]	[भ न य न ल]	१७.
(१३, १३)	अर्धरुतम्	[भ न य न ल]	[भ न ज ज ग]	१७.
(१३, १३)	अनङ्गपदम्	[भ भ भ भ ग]	[स स स स ग]	१७.
(१३, १३)	धीरावर्त्त:	[म त य स ग]	[म भ स म ग]	१७.
(१३, १३)	धीरावर्त्त:	[म भ स म ग]	[म त य स ग]	१७.
(१३, १०)	किंशुकावली	[म न ज र ग]	[त ज र ग]	१७.
(१३, १३)	अलिपदम्	[र र न त ग]	[न त त त ग]	१७.
(१३, १३)	मधुवारि	[स ज स ज ग]	[त भ र स ल]	१७.
(१३, १३)	कलनावती	[स ज स ज ग]	[स ज स स ग]	१७.
(१३, १२)	पद्मावती	[स ज स स ग]	[त भ ज य]	१७.
(१३, १३)	कलना	[स ज स स ग]	[स ज स ज ग]	१७.
(१३, १२)	चमूरु:	[स न ज र ग]	[र न ज र]	१७.
(१३, १२)	वियद्वाणी	[स भ र य ग]	[म स ज म]	१७.
(१३, १४)	मन्दाक्रान्ता	[स स ज र ग]	[म स ज र ग ग]	१७.
(१३, ११)	कामाक्षी	[स स न न ग]	[म भ न ल ग]	१७.
(१३, १३)	भुजङ्गभृता	[स स स स ग]	[भ भ भ भ ग]	१७.
(१४, १५)	अवरोधवनिता	[न भ भ र ल ग]	[स स ज भ य]	१७.
(१४, १३)	अनालेपनम्	[न भ य य ल ग]	[न त त त ग]	१७.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

वर्ण-संख्या	वृत्तनाम	विषमचरणों का लक्षण	समचरणों का लक्षण	संदर्भ-ग्रंथ-संकेतांक
(१४, १३)	लास्यलीला	[भ स त त ग ग]	[त य र र ग]	१७.
(१४, १३)	सम्मदाक्रान्ता	[म स ज र ग ग]	[स स ज र ग]	१७.
(१४, १८)	मार्दङ्गी	[स न स न ग ग]	[म न ज न ज य]	१७; मातङ्गी–१७.
(१४, १०)	अक्रोशक्रुष्टा	[स भ र ज ग ग]	[त ज र ग]	१७.
(१४, १३)	अतिप्रतिविनीता	[स भ र न ग ग]	[न य ज र ग]	१७.
(१५, १४)	उरुगी	[न न न न स]	[न न भ न ल ग]	१६.
(१५, १५)	देवगीति	[र ज र ज र]	[ज र ज र य]	२२.
(१५, १३)	प्रमोदपदम्	[न ज ज भ य]	[न न र ज ग]	१७.
(१५, १६)	आसववासिता	[न भ ज र य]	[स भ र ज स ग]	१७.
(१५, १२)	बृहच्छरावती	[स भ न ज र]	[न न र य]	१७.
(१५, १४)	अवरोधवनिता	[स स ज भ य]	[न भ भ र ल ग]	१७.
(१६, ३)	सारसी	[ज र ज र ज ग]	[र]	१०.
(१६, १६)	वासिनी	[त ज भ ज ज ग]	न ज भ ज ज ग]	१७.
(१६, १६)	वासववासिनी	[न ज भ ज ज ग]	[त ज भ ज ज ग]	१७.
(१६, १३)	अपरप्रीणिता	[न न स त त ग]	[न न त त ग]	१७.
(१६, १५)	अनासववासिता	[स भ र ज स ग]	[न भ ज र य]	१७.
(१६, १२)	हीनताली	[स भ स ज र ग]	[म न ज र]	१७.
(१७, १८)	मानिनी	[भ र न ज न ल ग]	[न ज भ स न स]	१०.
(१७, १८)	मानिनी	[भ र न भ र ल ग]	[न ज भ स न स]	१६.
(१८, १४)	मार्दंगी	[म न ज न न य]	[स न स न ग ग]	१६.
(२०, ३)	अपरा	[ज र ज र ज र ल ग]	[र]	१०.
(२४, ३)	हंसी	[ज र ज र ज र ज र]	[र]	१०.
(२६, ३१)	शिखा	[न न न न न न न न न ल ग]	[न न न न न न न न न न ग]	२, ५, १०, १३, १८, १६, २०, २२.
(३१, २६)	खञ्जा	[न न न न न न न न न न ग]	[न न न न न न न न न ल ग]	२, ५, १०, १३, १८, १६, २२.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

षष्ठ परिशिष्ट

गाथा एवं दोहा भेदों के उदाहरण[1]

गाथा-भेदों के उदाहरण

१. लक्ष्मीः

यत्रार्यायां वर्णास्त्रिशत्संख्या लघुत्रयं तत्र ।
दीर्घास्तारातुल्याश्चेत्स्युः प्रोक्ता तदा लक्ष्मीः ॥१॥

२. ऋद्धिः

यत्रार्यायां वर्णा एकत्रिंशन्मिता यदा पञ्च ।
लघवः षड्विंशत्या दीर्घा ऋद्धिः समा नाम्ना ॥२॥

३. बुद्धिः

यत्रार्यायां वर्णा दन्तैस्तुल्या भवन्ति चेद् दीर्घाः ।
तत्त्वैस्सप्तलघूनां नाम्ना बुद्धिस्तदा भवति ॥३॥

४. लज्जा

यत्रार्यायां वर्णा देवैस्तुल्या जिनोन्मिता गुरवः ।
नवलघवश्चेत्तत्र प्रोक्ता नाम्ना तदा लज्जा ॥४॥

५. विद्या

वर्णा वेदाग्निमिता गुरवो रामाश्विभिर्मिता यत्र ।
रुद्रमिता लघवश्चेन्नाम्ना विद्या तदा आर्या ॥५॥

६. क्षमा

बाणाग्निमिता वर्णा आकृतितुल्यास्तु यत्र गुरवस्स्युः ।
ह्रस्वा विश्वनियमिता प्रोक्ता नाम्ना क्षमा सार्या ॥६॥

७: देही

षट्त्रिंशन्मितवर्णाः प्रकृतिमिताः सम्भवन्ति चेद् दीर्घाः ।
बाणेन्दुमिता लघवः कथिता सार्या तदा देही ॥७॥

---

[1] वृत्तमौक्तिक में गाथा और दोहा छन्द के प्रस्तार-भेद से नाम एवं संक्षेप में लक्षण प्राप्त हैं किन्तु इन भेदों के उदाहरण प्राप्त नहीं हैं अतः वाग्वल्लभ-ग्रन्थ से इनके लक्षणयुक्त उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

८. गौरी

सप्ताग्निमिता वर्णा नखमितगुरवो घनोन्मिता लघवः ।
यत्र स्युः किल सार्या तर्हि भवेन्नामतो गौरी ॥८॥

९. धात्री, रात्री च

वसुगुणतुल्या वर्णा गुरवो लघवो यदातिधृतितुल्याः ।
फणिपप्रोक्ता सार्या भवति तदा नामतो धात्री ॥९॥

१०. चूर्णा

नवगुणपरिमितवर्णा धृतिमितदीर्घा भवन्ति चेद्ध्रस्वाः ।
प्रकृतिमिता यदि सार्या प्रोक्ता नाम्ना तदा चूर्णा ॥१०॥

११. छाया

द्विगुणितनखमितवर्णा घनमितदीर्घा भवन्ति चेद्ध्रस्वाः ।
विकृतिमिता यदि सार्या कथिता नाम्ना तदा छाया ॥११॥

१२. कान्तिः

शशियुगपरिमितवर्णा अष्टिप्रमिता भवन्ति चेद्गुरवः ।
शरकृतिपरिमितलघवो नाम्ना सार्या भवेत् कान्तिः ॥१२॥

१३. महामाया

यमयुगपरिमितवर्णास्तिथिमितगुरवश्च भोन्मिता लघवः ।
सार्या भवति तदानीं फणिना कथिता महामाया ॥१३॥

१४. कीर्त्तिः

गुणयुगपरिमितवर्णा मनुमितगुरवो नवाश्विमितलघवः ।
स्युर्यदि यत्र च सार्या फणिना कथिता तदा कीर्त्तिः ॥१४॥

१५. सिद्धा

श्रुतियुगपरिमितवर्णा अतिरवितुल्या भवन्ति चेद्गुरवः ।
शशधरगुणमितलघवः प्रभवति सा नामतस्सिद्धा ॥१५॥

१६. मानिनी, मनोरमा च

शरयुगपरिमितवर्णा रविमितगुरवश्च देवमितलघवः ।
यदि फणिगणपतिभणिता सार्या खलु मानिनी ज्ञेया ॥१६॥

१७. रामा

रसयुगपरिमितवर्णाः शिवमितगुरवो भवन्ति यदि नियतम् ।
शरगुणपरिमितलघवो यत्र भवति सोदिता रामा ॥१७॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१८. गाहिनी

नवयुगपरिमितवर्णा यदि दश गुरवो भवन्ति नियतं चेत् ।
नगगुणपरिमितलघवस्तदनु भवति गाहिनी किल सा ॥१८॥

१९. विश्वा

वसुयुगपरिमितवर्णा यदि नव गुरवो भवन्ति लघवश्चेत् ।
इह नवहुतभुगभिमिताः प्रभवति फणिपतिभणितविश्वा ॥१९॥

२०. वासिता

नवयुगपरिमितवर्णा यदि वसुगुरवः शशियुगमितलघवः ।
फणिगणपतिपरिभणिता भवति तदनु वासिता किल सा ॥२०॥

२१. शोभा

इह यदि मुनिमितगुरवो हुतभुग्जलनिधिमितास्तथा लघवः ।
फणिगणपतिरिति निगदति भवति सनियममियमिति शोभा ॥२१॥

२२. हरिणी

यदि रसपरिमितगुरवः शरयुगपरिमितलघव इह तदनु चेत् ।
फणिपतिपरिभणिततनुः प्रभवति नियतं तदा हरिणी ॥२२॥

२३. चक्री

नगयुगमितलघुगण इह शरमितगुरवो भवन्ति यदि नियतम् ।
फणिगणपतिरिति निगदति भवति ननु सनियममिह चक्री ॥२३॥

२४. सरसी

जलनिधिपरिमितगुरवो यदि नवजलधिपरिमितलघव इह चेत् ।
भुजगाधिप इति कथयति भवति नियतविहिततनु सरसी ॥२४॥

२५. कुररी

स्युरथ गुणमितगुरव इह यदि शशधरशरपरिमितलघव इति च ।
फणिगणपतिरिति निगदति भवति लसद्यतिरियं कुररी ॥२५॥

२६. सिंही

द्विकगुरुगुणशरपरिमितलघुविरचिततनुरिह यदि च भवति किल ।
अहिगणपतिरिति कथयति नियतजनितविरतिरथ सिंही ॥२६॥

२७. हंसी, हंसपदवी च

शशिमितगुरुशरशरमितलघुविरचिततनुरियमिह यदि विलसति ।
फणिगणपतिभणितविरतिहंसपदविरथ नियतकृतयति ॥२७॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

दोहा-भेदों के उदाहरण

१. भ्रमरः

यत्र स्युर्दीर्घास्त्रयोविंशत्या तुल्याश्च ।
द्वौ ह्रस्वौ स्यातां यदा पूर्वःस्यान्नाम्ना च ॥१॥

२. भ्रामरः

द्वाविंशत्या सम्मिता दीर्घा ह्रस्वा यत्र ।
चत्वारः स्युर्भ्रामरो नाम्नाऽसौ स्यादत्र ॥२॥

३. सरभः

चेत्स्युर्भूदस्त्रोन्मिता दीर्घा ह्रस्वा यर्हि ।
षण्णागेशेनोदितो नाम्ना सरभस्तर्हि ॥३॥

४. श्येनः

दीर्घा विंशत्या मिता अष्टौ लघवो यत्र ।
पिङ्गलनागप्रोदितः श्येनः स्यादित्यत्र ॥४॥

५. मण्डूकः

दीर्घा अतिधृत्युन्मिता ह्रस्वाः स्युर्दश यर्हि ।
ब्रूतेऽनन्तो नामतो मण्डूकं किल तर्हि ॥५॥

६. मर्कटः

दीर्घाः स्युर्धृतिसम्मिता ह्रस्वा द्वादश यत्र ।
पिङ्गलनागेनोदितो मर्कटनामा तत्र ॥६॥

७. करभः

दीर्घाः स्युर्घनसम्मिता इन्द्रमिता लघवश्च ।
ब्रूते शेषो यदि तदा नाम्नाऽसौ करभश्च ॥७॥

८. नरः

षोडश गुरवः सन्ति चेल्लघवो यत्र किलापि ।
पिङ्गलनागेनाऽसकौ नाम्ना नर आलापि ॥८॥

९. मरालः

अष्टादश लघवो यदा गुरवः पञ्चदशैव ।
मरालनामेत्यहिपतिः शेषो वक्ति तदैव ॥९॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१०. मदकलः

मनुमितगुरवो विंशतिर्लघवः सन्ति यदा च।
मदकलनामाऽसौ भवेदित्थं शेष उवाच ॥१०॥

११. पयोधरः

नाम पयोधर इति भवेदतिरविगुरवस्सन्ति।
न्यस्ता आकृतिसम्मिता लघवो यत्र भवन्ति ॥११॥

१२. चलः

लघवश्च चतुर्विंशतिर्गुरवो द्वादश यत्र।
स्युः फणिगणपतिरिति वदति चलनामाऽसावत्र ॥१२॥

१३. वानरः

एकादश गुरवो यदा रसयममितलघवश्च।
नाम्ना वानर इह तदा फणिनायकभणितश्च ॥१३॥

१४. त्रिकलः

वसुयममितलघवो यदा दश गुरवश्च भवन्ति।
तदा विशिष्य त्रिकल इति नाम बुधा निगदन्ति ॥१४॥

१५. कच्छपः

लघवो द्विगुणिततिथिमिता गुरवो नव यदि सन्ति।
नाम्ना कच्छप इति भवति सुधियो नियतमुशन्ति ॥१५॥

१६. मत्स्यः

रदपरिमितलघवो यदा वसुमितगुरवस्सन्ति।
भवति मत्स्य इह खलु तदा विबुधा इति कथयन्ति ॥१६॥

१७. शार्दूलः

श्रुतिगणपरिमितलघव इह नगमितगुरवो यत्र।
फणिगणपतिपरिभणित इति शार्दूलः स्यात्तत्र ॥१७॥

१८. अहिवरः

रसगुणपरिमितलघव इह रसमितगुरवो यर्हि।
अहिवर इति खलु नामतः फणिपतिभणितस्तर्हि ॥१८॥

१९. व्याघ्रः

वसुगुणपरिमितलघव इह शरमितगुरवश्चापि।
व्याघ्रक इति भवति सनियममहिगणपतिनाऽलापि ॥१९॥

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

२०. विडालः

गगनजलधिमितलघव इह जलनिधिमितगुरवश्च ।
प्रभवति यदि फणिपतिभणित इति नाम विडालश्च ॥२०॥

२१. श्वा

यदि यमयुगमितलघव इह गुणपरिमितगुरुकाणि ।
श्वा फणिपतिगुरुमतिभिरिति भवति सनियममभाणि ॥२१॥

२२. उदुम्बरः, उन्दुरुश्च

द्विगुरुजलधियुगलघुभिरिह नियमिततनुरनुभवति ।
फणिपतिरिति तत उन्दुरुः सुनियतकृतयति भवति ॥२२॥

२३. सर्पः

शशिगुरुरसयुगमितलघुभिरथ कृततनुरिह लसति ।
फणिगणपतिरधिकृतविरति सर्प इति समभिलषति ॥२३॥

२४. शशधरम्

वसुजलनिधिपरिमितलघुभिरभिनियमिततनु भवति ।
शशधरमिदमिति नियतयति फणिगणपतिरनुभवति ॥२४॥



CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

सप्तम परिशिष्ट

ग्रन्थोद्धृत ग्रन्थ-तालिका

नाम	ग्रन्थकार	पृष्ठांक
अथ च		१८६.
अथवा		३८.
अनर्घराघवम्	मुरारिः	२०५.
अन्येऽपि		२०५.
अष्टाध्यायी	पाणिनिः	२०३.
इति वा		१८८.
उदाहरणमञ्जरी	लक्ष्मीनाथभट्टः	१०, १३, १६, १७, २१, २४, ८१.
कविकल्पलता	देवेश्वरः	२०५.
कादम्बरी	बाणः	२०६.
काव्यादर्शः	दण्डी	७५.
किरातार्जुनीयम्	भारविः	९८, १००, १०६, १३६, १९२.
कृष्णकुतूहलमहाकाव्यम्	रामचन्द्रभट्टः	१०५, १०७, ११४, ११६, १२१, १३५, १३७, १३८, १३९, १५१, १६१.
कण्ठाभरणम्		१२०.
खड्गवर्णने	लक्ष्मीनाथभट्टः	१६०.
गौरीदशकस्तोत्रम्	शङ्कराचार्यः	१०५.
गोविन्दविरुदावली	श्रीरूपगोस्वामी	२२२, २२४, २२८.
गीतगोविन्दम्	जयदेवः	२०५.
चन्द्रशेखराष्टकम्	मार्कण्डेयः	१४५.
छन्दःसूत्रम्	पिङ्गलः	१८४, २०४.
छन्दःसूत्रवृत्तिः	हलायुधः	१५८, १७३, १७५, १७७, १७८, १९४, १९८, १९९, २००.
छन्दोरत्नावली	अमरचन्द्रः (?)	३३०, ३३१.
छन्दश्चूडामणिः ?	शम्भुः	१०६, १३६, १९७, २७२, २८०, २८२, २८३.
छन्दोमञ्जरी	गङ्गादासः	९२, ९३, १०५, १२४, १४०, १४७, २०६.

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

नाम	ग्रन्थकार	पृष्ठांक
शृङ्गारकल्लोलम् (खण्डकाव्यम्)	रायभट्टः	१२१.
शिको-काव्यम् (?)		१५६.
शिवस्तुतिः	लक्ष्मीनाथभट्टः	४५.
शिशुपालवधम्	माघः	९८, १६२, १९२.
सुन्दरीध्यानाष्टकम्	लक्ष्मीनाथभट्टः	१४४.
सौन्दर्यलहरीस्तोत्रम्	शंकराचार्यः	१३७.
हर्षचरितम्	बाणः	१९०.
हरिमहमीडे स्तोत्रम्	शङ्कराचार्यः	१०५.
हंसदूतम्	श्रीरूपगोस्वामी	१३७.



T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अष्टम परिशिष्ट

छन्दःशास्त्र के ग्रन्थ और उनकी टीकायें

	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख*
१	अभिनववृत्तरत्नाकर	भास्कर	सी. सी,
२	,, टिप्पण	,, श्रीनिवास	,,
३	एकावली	फतेहशाह वर्मन् ?	मिथिला केटलॉग
४	कर्णतोष	मुद्गल	अनूप; सी सी. में इसका नाम 'कर्णसन्तोष' है।
५	कर्णानन्द	कृष्णदास	हि. एस,
६	कविदर्पण		प्रकाशित
७	कविशिक्षा	जयमंगलाचार्य	हि. एस,
८	काव्यजीवन	प्रीतिकर अवस्थी	हि. एस, सी. सी,
९	काव्यलक्ष्मीप्रकाश	शिवराम S/o कृष्णराम	सी. सी.
१०	काव्यावलोकन [कन्नडभाषीय]	नागवर्म	कन्नडप्रान्तीय ताडपत्रीय ग्रन्थसूची
११	कीर्त्तिच्छन्दोमाला	रामानारायण S/o विष्णुदास	युनिवर्सीटी लायब्रेरी बम्बई केटलॉग
१२	,, टीका	,, ,,	,,
१३	क्षेपक विज्जाहला		जैन-ग्रन्थावली

* संकेत—सी.सी. = केटलॉगस केटलॉगरम्; मिथिला केटलॉग = ए डिस्क्रिप्टिव केटलॉग ऑफ मेन्युस्क्रिप्ट्स् इन मिथिला; अनूप = केटलॉग ऑफ दी अनूप संस्कृत लायब्रेरी बीकानेर; हि.एस. = ए हिस्ट्री ऑफ क्लासिकल संस्कृत लिटरेचर, एम. कृष्णमाचारी; युनिवर्सीटी लायब्रेरी बम्बई केटलॉग = ए डिस्क्रिप्टिव केटलॉग ऑफ दी संस्कृत एण्ड प्राकृत मेन्युस्क्रिप्ट्स् इन दी लायब्रेरी ऑफ दी युनिवर्सीटी ऑफ बॉम्बे; रायल एशियाटिक सोसायटी बम्बई केटलॉग = एन डिस्क्रिप्टिव केटलॉग ऑफ संस्कृत एण्ड प्राकृत मेन्युस्क्रिप्ट्स् इन दी लायब्रेरी ऑफ दी बॉम्बे ब्रांच ऑफ दी रायल एशियाटिक सोसायटी; बड़ोदा केटलॉग = एन अल्फाबेटिकल लिस्ट ऑफ मेन्युस्क्रिप्ट्स् इन दी ओरियन्टल इन्स्टीट्यूट, बरोडा; रा.प्रा.प्र. जोधपुर = राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर; रा.प्रा.प्र. चित्तौड़ = राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, शाखा कार्यालय चित्तौड़; रा.प्रा.प्र. बीकानेर = राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, शाखा कार्यालय बीकानेर; रा.प्रा.प्र. जयपुर = राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, शाखा कार्यालय जयपुर।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
१४	गाथारत्नकोष		जैन-ग्रन्थावली
१५	गाथारत्नाकर		,,
१६	गाथालक्षण	नन्दिताढ्य	प्रकाशित
१७	,,	रत्नचन्द्र ?	रॉयल एशियाटिक सोसायटी बम्बई केटलॉग
१८	छन्दःकन्दली		उल्लेख: कविदर्पण
१९	छन्दःकल्पतरु	राघव झा	मिथिला केटलॉग, हि. एस
२०	छन्दःकल्पलता	मथुरानाथ	हि. एस.
२१	छन्दःकोष	रत्नशेखरसूरि	प्रकाशित
२२	,, टीका	,, चन्द्रकीर्त्ति	सी. सी.
२३	छन्दःकौमुदी	नारायणशास्त्री खिस्ते	प्रकाशित
२४	छन्दःकौस्तुभ	दामोदर	बड़ोदा केटलॉग
२५	,,	राधादामोदर	सी. सी, हि. एस.
२६	,, टीका	,, विद्याभूषण	सी. सी.
२७	,, ,,	,, कृष्णराम	,,
२८	छन्दस्तत्त्वसूत्रम्	धर्मनन्दन वाचक	रा.प्रा.प्र. जोधपुर
२९	छन्दःपयोनिधि		प्रकाशित
३०	छन्दःपीयूष	जगन्नाथS/oराम	रा.प्रा.प्र. जोधपुर; सी.सी,
३१	छन्दःप्रकाश	शेषचिन्तामणि	बड़ोदा केटलॉग, हि एस,
३२	,, टीका	,, सोमनाथ	सी सी.
३३	छन्दःप्रशस्तिः	श्रीहर्ष	सी सी. [उल्लेख–नैषध १७/२१९]
३४	छन्दःप्रस्तारसरणिः	कृष्णदेव	बड़ोदा केटलॉग
३५	छन्दःशास्त्र	जयदेव	प्रकाशित
३६	,,	,, हर्षट	सी. सी.
३७	छन्दःशिक्षा	परमेश्वरानन्द शास्त्री	प्रकाशित
३८	छन्दःशेखर	जयशेखर	जैन-ग्रन्थावली
३९	,,	राजशेखर	प्रकाशित
४०	छन्दश्चन्द्रिका		प्रकाशित
४१	छन्दश्चिह्नम्		,,
४२	छन्दश्चिह्नप्रकाशनम्	आत्मस्वरूप उदासीनP/o गंगाराम उदासीन	,,
४३	छन्दश्चूडामणि	शम्भु	उल्लेख: वृत्तरत्नाकर-नारायणभट्टी टीका
४४	छन्दश्छटामण्डन	कृष्णराम [जयपुर]	हि. एस,

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
४५	छन्दःश्लोक		सी. सी,
४६	छन्दःसार	चिन्तामणि	युनिवर्सीटी लायब्रेरी बम्बई केटलॉग
४७	,,	जगन्नाथ पाण्डेय	प्रकाशित
४८	छन्दःसारसंग्रह	चन्द्रमोहन घोष	,,
४९	छन्दःसारावली		,,
५०	छन्दःसिद्धान्तभास्कर	केशवजीनन्दS/oसूरजी	मिथिला केटलॉग
५१	छन्दःसुधाकर	कृष्णराम	हि. एस.
५२	छन्दःसुधाचिल्लहरी	जानीमहापात्रS/oजयदेव याज्ञिक	अनूप, हि.एस.
५३	छन्दःसुन्दर	नरहरि	सी.सी.
५४	छन्दःसंख्या	?	,,
५५	छन्दःसंग्रह		,, [उल्लेख-तन्त्रसार]
५६	,, [वृत्तबोधः]		प्रकाशित
५७	छन्दोरूपक		जैनग्रंथावली
५८	छन्दोऽङ्कुर	गंगासहाय	प्रकाशित
५९	छन्दोऽवतंस	लालचन्द्रोपाध्याय	रा.प्रा.प्र. चित्तौड़
६०	छन्दोग्रन्थ		सी.सी.
६१	छन्दोगोविन्द*	गंगादास	सी.सी., [उल्लेख-वृत्तरत्नाकरादर्श और वृत्तमौक्तिक]
६२	छन्दोदर्पण	गोविन्द	सी.सी.
६३	छन्दोदीपिका	कुमारमणि s/o हरिवल्लभ	,,
६४	,, टीका	,, कृष्णराम	,,
६५	छन्दोनिघण्टु		अनूप,
६६	,, (पिंगलसारिनष्टोद्दिष्टलक्षणम्)	हरिद्विज	रा.प्रा.प्र. बीकानेर
६७	छन्दोऽनुशासन	जयकीर्त्ति	प्रकाशित
६८	,,	जिनेश्वर	हि.एस.
६९	,,	वाग्भट	सी.सी. [उल्लेख-अलङ्कारतिलक]
७०	,,	हेमचन्द्र	प्रकाशित
७१	,, टीका	,,	,,

* वस्तुतः छन्दोगोविन्द और छन्दोमञ्जरी दोनों एक ही ग्रन्थ हैं ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
७२	छन्दोऽम्बुधि		सी.सी.
७३	छन्दोमञ्जरी	गंगादास s/o गोपालदास वैद्य	प्रकाशित
७४	,, टीका	,, कृष्णराम	सी सी.
७५	,, ,,	,, कृष्णवल्लभ	हि.एस.
७६	,, ,,	,, गोवर्धनदास	हि.एस.,सी सी
७७	,, ,, [छन्दोमञ्जरीजीवन]	,, चन्द्रशेखर भारती	,, ,,
७८	छन्दोमञ्जरी टीका	,, जगन्नाथ सेन s/o जटाधर कविराज	हि.एस., सी.सी.
७९	,, ,,	,, जीवानन्द	प्रकाशित
८०	,, ,,	,, दाताराम	हि.एस, सी.सी.
८१	,, ,,	,, रामधन	प्रकाशित
८२	,, ,,	,, वंशीधर	हि एस, सी.सी.
८३	,, ,,	,, हरिदत्तशास्त्री शंकरदत्तपाठकश्च	प्रकाशित
८४	छन्दोमञ्जरी	गोपाल*	संस्कृत कॉलेज बनारस रिपोर्ट सन् १९०९-१७
८५	,,	गोपालदास*	हि.एस.
८६	,,	गोपालचन्द्र*	सी.सी.
८७	छन्दोमन्दाकिनी	गुरुप्रसाद शास्त्री	प्रकाशित
८८	छन्दोमहाभाष्य	दामोदरभट्ट s/o रघुनाथ	बड़ोदा केटलॉग
८९	छन्दोमातङ्ग		सी.सी. [उल्लेख-वृत्तरत्नाकरादर्श]
९०	छन्दोमार्तण्ड	मणिलाल	बड़ोदा केटलॉग
९१	छंदोमाला	शार्ङ्गधर	हि एस.
९२	छंदोमुक्तावली	प्यारेलाल	सी.सी.
९३	,,	शम्भुराम s/o सीताराम	हि.एस., सी.सी.
९४	छंदोरत्न	पद्मनाभभट्ट	सी.सी.
९५	छंदोरत्नहलायुध	?	सी.सी.

* छन्दोमञ्जरी के कर्त्ता गोपालदास वैद्य के पुत्र गंगादास हैं। अतः संभव है प्रतिलिपिकारों के भ्रम से गोपाल, गोपालदास, गोपालचंद्र नाम से भिन्न २ प्रणेता का भ्रम हो गया हो।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
९६	छंदोरत्नाकर		सी सी.,हि.एस. [उल्लेख-संगीतनारायण और लक्ष्मीनाथभट्टकृत-पिंगलप्रदीप]
९७	छंदोरत्नावली	अमरचन्द्र कवि	जैन - ग्रंथावली [उल्लेख-मेघविजयकृत-वृत्तमौक्तिक दुर्गमबोध]
९८	छंदोरहस्य	धनसागर p/o गुणवल्लभ उपाध्याय	रा.प्रा.प्र. जोधपुर
९९	छंदोलक्षण		सी.सी.
१००	छंदोलघुविवेक		,,
१०१	छंदोऽलङ्करण	जगद्धर	सी.सी.
१०२	छंदोविचय		बड़ोदा केटलॉग, सी.सी.
१०३	छंदोविचार	सुखदेव	,,
१०४	छंदोविचिति	पतञ्जलि	सी.सी.
१०५	,,	दण्डी	,, [उल्लेख-काव्यादर्श १।१२]
१०६	,, भाष्य	? यादवप्रकाश	,,
१०७	,, टीका	? शंकरभट्ट	हि.एस.
१०८	छंदोविन्मण्डन	स्वामी चन्दनदास	प्रकाशित
१०९	छंदोविलास	श्रीकण्ठ	सी.सी.
११०	छंदोविवेक		,,
१११	छंदोवृत्तरत्न		,,
११२	छन्दोवृत्ति	श्रीनिवास	,,
११३	छन्दोव्याख्या		अनूप
११४	छन्दश्शतक	हर्षकीर्त्ति	राजस्थान के जैन शास्त्र-भण्डार, जयपुर भा. ४
११५	छन्दोऽष्टादशक	रूपगोस्वामी	सी. सी. [उल्लेख–वैष्णव-तोषिणी]
११६	छन्दोहृदयप्रकाश		सी. सी.
११७	जगद्विजयछन्दः		प्रकाशित
११८	जगन्मोहनवृत्तशतक	वासुदेवब्रह्मपण्डित	हि. एस.
११९	जनाश्रयी	जनाश्रयः	,,
१२०	पिङ्गलछन्दःशास्त्रसंग्रह		मधुसूदन पुस्तकालय, लाहोर सूचीपत्र
१२१	पिङ्गलछन्दःसूत्र	पिङ्गल	प्रकाशित

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकर	उल्लेख
१२२	,, टीका [मिताक्षरा]	,, जगन्नाथमिश्र	रा.प्रा.प्र., जोधपुर
१२३	,, टीका	,, दामोदर	हि.एस.
१२४	,, टीका	,, पद्मप्रभसूरि	सी. सी.
१२५	,, ,,	पिंगल, पशु कवि ?	सी. सी.
१२६	,, ,,	,, भास्कराचार्य	,,
१२७	,, ,,	,, मथुरानाथ शुक्ल	,,
१२८	,, ,,	,, मनोहरकृष्ण	,,
१२९	,, ,, [भाष्यराज]	,, यादवप्रकाश	हि. एस.
१३०	,, ,,	,, वामनाचार्य	सी. सी.
१३१	,, ,,	,, वेदांगराज	,,
१३२	,, ,,	,, श्रीहर्ष शर्मा S/o मकरध्वज	हि. एस.
१३३	,, ,, [मृतसञ्जीवनी]	,, हलायुध	प्रकाशित
१३४	पिंगलसारोद्धार		जैन-ग्रंथावली
१३५	प्रस्तारचिंतामणि:	चिंतामणि दैवज्ञ	मधुसूदन पुस्तकालय, लाहोर सूत्रीपत्र, हि एस.
१३६	,, टीका	,, ,,	हि. एस, सी. सी.
१३७	प्रस्तारपत्तन	कृष्णदेव	,, ,,
१३८	प्रस्तारविचार		हि. एस.
१३९	प्रस्तारशेखर	श्रीनिवास	,,
१४०	प्राकृत-छंद-कोष	अल्हू	राजस्थान के जैन शास्त्र भंडार, जयपुर भा. ४
१४१	प्राकृतपिंगल	पिंगल	प्रकाशित
१४२	,, टीका [कृष्णीय विवरण]	,, कृष्ण	प्राकृतपैंगलम्
१४३	,, टीका [पिंगलभावोद्योत]	,, चंद्रशेखर भट्ट	अनूप
१४४	,, ,,	,, चित्रसेन	सी. सी.
१४५	,, ,,	,, दुर्गेश्वर	उल्लेख–रूपगोस्वामिकृत नन्दोत्सवादिचरितटीकायाम्
१४६	,, ,,	,, नारायणदीक्षित	अनूप

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
१४७	,, ,,	,, पशुपति	सी. सी.
१४८	,, ,, [पिंगलछंदोविवृति]	,, यादवेन्द्र [दशावधान भट्टाचार्य उपनाम]	बड़ोदा केटलॉग
१४९	,, ,, [पिंगलसारविकाशिनी]	,, रविकर S/o [श्रीपति, हरिहर उप नाम]	प्रकाशित
१५०	,, ,, [पिंगलतत्त्वप्रकाशिका]	,, राजेन्द्रदशावधान	सी. सी.
१५१	,, ,,	,, लक्ष्मीनाथ भट्ट	प्रकाशित
१५२	[पिंगलप्रदीप]		
	,, ,, [विद्वन्मनोरमा]	,, विद्यानन्दमिश्र	मिथिला केटलॉग
१५३	,, ,, [पिंगल प्रकाश]	,, विश्वनाथ S/o विद्यानिवास	ह्रि. एस. सी. सी. मिथिला केटलॉग.
१५४	,, ,, [पिंगलप्रकाश]	,, बंशीधरSo/कृष्ण	सी. सी.
१५५	,, ,,	,, श्रीपति	मिथिला कंटलॉग
१५६	,, ,,	,, वाणीनाथ	हि. एस. सी. सी.
१५७	प्राकृत पिंगलसार	हरिप्रसाद	अनूप, सी. सी.
१५८	,, टीका	,,	,, ,,
१५९	बन्धकौमुदी	गोपीनाथ	अनूप,
१६०	रत्नमञ्जूषा		प्रकाशित
१६१	,, भाष्य		,,
१६२	वाग्वल्लभ	दुःखभञ्जन	,,
१६३	,, टीका [वरवर्णिनी]	,, देवीप्रसाद	,,
१६४	वाणीभूषण	दामोदर	,,
१६५	वृत्ताकल्पद्रुम	जयगोविन्द	हि. एस.
१६६	वृत्ताकारिका	नारायण पुरोहित	,,
१६७	वृत्ताकौतुक	विश्वनाथ	,, सी. सी.
१६८	वृत्तकौमुदी	जगद्गुरु	,, ,,
१६९	,,	रामचरण	,, ,,
१७०	वृत्ताकौस्तुभ-टीका	शिवरामS/oकृष्णराम	सी. सी.

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
१७१	वृत्ताचन्द्रोदय	भास्कराध्वरिन्	हि. एस, सी, सी,
१७२	वृत्तचन्द्रिका	रामदयालु	,, ,, मधुसूदन०
१७३	वृत्ताचिन्तामणि	गोपीनाथ दाधीच	रा. प्रा. प्र. लक्ष्मीनाथ-संग्रह जयपुर
१७४	वृत्तचिन्तारत्न	शान्तराज पण्डित	हि. एस,
१७५	वृत्ताजातिसमुच्चय	विरहांक	प्रकाशित
१७६	,, टीका	,, गोपाल	,,
१७७	वृत्ततरङ्गिणी	कृष्ण	हि. एस,
१७८	वृत्तदर्पण	गंगाधर	सी. सी.
१७९	,,	जानकीनन्द कवीन्द्र S/o रामानन्द	मिथिला केटलॉग
१८०	,,	भीष्ममिश्र	,, हि. एस, सी. सी,
१८१	,,	मणिमिश्र	सी. सी,
१८२	,,	मथुरानाथ	सी. सी.
१८३	,,	वेंकटाचार्य	सी. सी,
१८४	,,	सीताराम	हि. एस,
१८५	वृत्तदीपिका	कृष्ण	,, सी. सी,
१८६	,,	वेंकटेश	,,
१८७	वृत्तद्युमणि	यशवंत S/o गंगाधर	बड़ोदा के. हि. एस, सी सी
१८८	,,	गंगाधर	हि. एस,
१८९	वृत्तप्रत्यय	शंकरदयालु	,, सी. सी,
१९०	वृत्तप्रत्ययकौमुदी		सी. सी,
१९१	वृत्तप्रदीप	जनार्दन	,, हि. एस,
१९२	,,	बद्रीनाथ	हि. एस,
१९३	वृत्तामणिकोष	श्रीनिवास	प्रकाशित
१९४	वृत्तामणिमाला	गणपतिशास्त्री	हि. एस.
१९५	वृत्तामणिमालिका	श्रीनिवास	हि. एस,
१९६	वृत्तामहोदधि		बड़ोदा केटलॉग
१९७	वृत्तमाणिक्यमाला	सुषेण	सी. सी.
१९८	वृत्तामाला	वल्लभाजि	,, हि. एस,
१९९	,,	विरुपाक्षयज्वन्	हि. एस,
२००	वृत्तामुक्तावली	कृष्ण भट्ट	प्रकाशित
२०१	,,	कृष्णराम	हि एस, सी सी.
२०२	,,	गंगादास	,, ,,

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
२०३	वृत्तमुक्तावली	दुर्गादत्त	मिथिला केटलॉग
२०४	,,	मल्लारि	अनूप, रा.प्रा.प्र. जोधपुर
२०५	,, टीका [तरल]	,,	,, बड़ोदा केटलॉग
२०६	,,	शंकर शर्मा	सी. सी, केटलॉग ऑफ संस्कृत मेन्युस्क्रिप्टस् इन अवध भा० २१, सन् १८९०
२०७	,,	हरिव्यास मिश्र	हि. एस, सी. सी,
२०८	वृत्तमुक्तसारावली	श्रृंगराचार्य	हि. एस.
२०९	वृत्तमौक्तिक	चन्द्रशेखर भट्ट	अनूप. सी. सी. हि. एस.
२१०	,, टीका [दुष्करोद्धार]	,, लक्ष्मीनाथ भट्ट	अनूप
२११	,, टीका [दुर्गमबोध]	,, मेघविजय	विनयसागर संग्रह, कोटा
२१२	वृत्तरत्नाकर	केदार भट्ट	प्रकाशित
२१३	,, टीका 'नौका'	अयोध्याप्रसाद	हि. एस, सी. सी,
२१४	,, ,,	,, आत्माराम	हि एस, सी. सी,
	,,	,, ठा. आसल	रा. प्रा. प्र., जोधपुर
२१६	,, ,, [कविचिन्तामणि]	,, करुणाकरदास S/o कुलपालिका	बड़ोदा केटलॉग
२१७	,, ,,	,, कृष्णराम	सी. सी,
२१८	,, ,,	,, कृष्णवर्मन्	हि. एस,
२१९	,, ,,	,, कृष्णसार	हि. एस,
२२०	,, ,,	,, क्षेमहंस	रा. प्रा. प्र. जोधपुर, सी. सी,
२२१	,, ,,	,, गोविन्द भट्ट	हि. एस, सी. सी.
२२२	,, ,, [वृत्तपुष्पप्रकाशन	,, चिन्तामणि	सी. सी.
२२३	,, ,, [सुधा]	,, चिन्तामणि पण्डित	हि. एस, सी. सी.
२२४	,, ,,	,, चूडामणि दीक्षित	,, ,,
२२५	,, ,, [वृत्तरत्नाकरवार्तिक]	,, जगन्नाथ S/o राम	सी. सी.
२२६	,, ,, [भावार्थदीपिका]	,, जनार्दन विबुध	हि. एस, सी. सी, बड़ोदा केटलॉग

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकर	उल्लेख
२२७	वृत्तरत्नाकर–टीका	केदरिभट्ट, जीवानन्द	प्रकाशित
२२८	,, ,,	,, ज्ञारसराम शास्त्री	,,
२२९	,, ,,	,, तारानाथ	हि. एस,
२३०	,, ,,	,, त्रिविक्रम S/o रघुसूरि	,, सी. सी.,
२३१	,, ,, [वृत्तरत्नाकरादर्श]	,, दिवाकरS/oमहादेव	अनूप, हि. एस, सीसी,
२३२	,, ,,	,, देवराज	हि. एस,
२३३	,, ,,	,, नरसिंहसूरि	,,
२३४	,, ,, [मणिमञ्जरी]	,, नारायण पंडित S/o नृसिंहयज्वन्	सी. सी.
२३५	,, ,,	,, नारायणभट्ट S/o रामेश्वर	प्रकाशित
२३६	,,	,, नृसिंह	प्रकाशित
२३७	,,	,, पूर्णानन्द कवि	बड़ोदा केटलॉग
२३८	,, ,,	,, प्रभावल्लभ	हि. एस,
२३९	,, ,,	,, भास्करार्य S/o दायाजिभट्ट	,, रा.प्रा.प्र. जोधपुर
२४०	,, ,, [बालबोधिनी]	,, यशः कीर्ति P/o अमरकीर्ति	अनूप, रा. प्रा. प्र. जोधपुर
२४१	,, ,.	,, रघुनाथ	हि. एस, सी. सी.
२४२	,, ,,	,, रामचन्द्र कवि-भारती	प्रकाशित
२४३	,, ,, [प्रभा]	,, विश्वनाथ कवि S/o श्रीनाथ	हि. एस, सी.सी, बड़ोदा केटलॉग
२४४	,, ,,	,, शार्दूल कवि	,, ,,
२४५	,, ,,	,, शुभविजय	रा. प्रा. प्र. जोधपुर
२४६	,, ,,	,, श्रीकण्ठ	सी. सी,
२४७	,, ,, [धीशोधिनी]	,, श्रीनाथ कवि	सी. सी, बड़ोदा केटलॉग,
२४८	,, ,, [छन्दोलक्ष्यलक्षण]	,; श्रीनाथ S/o गोविन्द भट्ट	,, हि. एस,
२४९	,, ,, [सुगमवृत्ति]	,, समयसुन्दर	अनूप, रा.प्रा.प्र. जोधपुर

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
२५०	वृत्तरत्नाकर टीका [अर्थदीपिका]	केदारभट्ट, सदाशिव S/o विश्वनाथ	अनूप
२५१	,, ,, [वृत्तरत्नावली]	,, सारस्वत सदाशिव मुनि	हि. एस, सी. सी,
२५२	,, ,, [सुकविहृदयानन्दिनी]	,, सुल्हण S/o भास्कर	,, ,, , अनूप
२५३	,, ,,	,, सोमपण्डित	,, ,,
२५४	,, ,, [मुग्धबोधकरी]	,, सोमचन्द्रगणि	,, ,, , अनूप रा. प्रा. प्र. जोधपुर
२५५	,, ,, [वृत्तरत्नाकरसेतु]	,, हरिभास्कर S/o आपाजी भट्ट	,, , अनूप
२५६	वृत्तरत्नाकर, अवचूरि	,, ?	अनूप,
२५७	,, बालावबोध	,, मेरुसुन्दर	रा. प्रा. प्र. जोधपुर
२५८	वृत्तरत्नार्णव	नरसिंह भागवत P/o रामचन्द्र योगीन्द्र	हि. एस,
२५९	वृत्तरत्नावली	कालिदास	,,
२६०	,,	कृष्णराम	,,
२६१	,,	चिरंजीव भट्टाचार्य	अनूप, मिथिला और बड़ोदा केटलॉग
२६२	,,	यशवंतसिंह	हि. एस, सी. सी, रा. प्रा. प्र. जोधपुर
२६३	,,	दुर्गादत्त	,, ,,
२६४	,,	नारायण	,, ,,
२६५	,,	मणिराम S/o वसंत	सी. सी,
२६६	,, टीका [चंद्रिका]	,, कालिकाप्रसाद	,,
२६७	,, ,,	मिश्र सानन्द	हि. एस, सी. सी.
२६८	,, ,,	रविकर	,, ,,
२६९	,,	राजचूडामणि	,, ,, [उल्लेख-काव्यदर्पण]
२७०	,,	रामदेव चिरंजीव	,, ,,
२७१	,,	रामास्वामी शास्त्री	,,
२७२	,,	वेंकटेश S/o सरस्वती	प्रकाशित
२७३	वृत्तरामायण	कवि P/o रामानुजाचार्य	सी. सी,

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
२७४	वृत्तरामायण	रामस्वामी शास्त्री	हि. एस,
२७५	वृत्तरामास्पद	क्षेमकरणमिश्र	हि. एस, सी. सी.
२७६	वृत्तलक्षण	उमापति	हि.एस.,सी.सी. वृत्तवार्तिक
२७७	वृत्तवार्तिकम्	रामपाणिवाद	प्रकाशित
२७८	,,	वैद्यनाथ	हि एस, सी. सी,
२७९	वृत्तविनोद	फतेहगिरि	,, ,,
२८०	वृत्तविवेचन	दुर्गासहाय	,, ,,
२८१	वृत्तसार	पुष्करमिश्र	अनूप.
२८२	,,	भारद्वाज	हि. एस, सी. सी, बड़ोदा केटलॉग
२८३	,,	रमापति उपाध्याय	मिथिला केटलॉग, सी. सी,
२८४	,, टीका [वृत्तसारालोक]	,, ,,	,,
२८५	वृत्तसारावली	यशोधर	अनूप,
२८६	वृत्तसिद्धान्तमञ्जरी	रघुनाथ	हि. एस, सी. सी,
२८७	वृत्तसुधोदय	मथुरानाथ शुक्ल	,, ,,
२८८	वृत्तसुधोदय	वेणीविलास	हि. एस,
२८९	वृत्ताभिराम	रामचन्द्र	,, , सी सी, बड़ोदा केटलॉग
२९०	वृत्तालङ्कार	छबिलालसूरि	हि. एस,
२९१	वृत्तिबोध	बलभद्र	अनूप.
२९२	वृत्तिवार्तिक	विद्यानाथ	केटलॉग ऑफ संस्कृत मेन्युस्क्रिप्ट्स इन अवध भाग १५, सन् १८८२
२९३	वृत्तोक्तिरत्न	नारायण	हि.एस,
२९४	शृङ्गारमञ्जरी		कन्नडप्रान्तीय ताडपीय ग्रंथ सूची
२९५	श्रुतबोध	कालिदास	प्रकाशित
२९६	,, टीका	,, कनकलाल शर्मा	,,
२९७	,, ,, [पदद्योतनिका]	,, चतुर्भुज	सी सी
२९८	,, ,, [बालविवेकिनी]	,, ताराचन्द्र	हि. एस, सी.सी, मिथिला केटलॉग

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्रमांक	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
२९९	श्रुतबोध-टीका	कालिदास, नयविमल	हिमांशुविजयजी ना लेखो
३००	,, ,,	नागजी S/o हरजी	सी सी,
३०१	,, ,,	,, नेतृसिंह	रा. प्रा. प्र. जोधपुर
३०२	,, ,, [सुबोधिनी]	,, मनोहर शर्मा	हि. एस, सी. सी. रा. प्रा. प्र. जोधपुर
३०३	,, ,, [ज्योत्स्ना]	,, माधव S/o गोविंद	,,
३०४	,, ,,	,, मेघचन्द्र	हि. एस. [सी. सी. में कर्ता का नाम नहीं है और P10 के स्थान पर मेघचन्द्र का नाम है]
३०५	,,	,, लक्ष्मीनारायण	हि. एस, सी. सी.
३०६	,, ,,	,, व्रजरत्न भट्टाचार्य	प्रकाशित
३०७	,, ,,	,, वररुचि: ?	सी. सी.
३०८	,, ,, [श्रुतबोधप्रबोधिनी]	,, वासुदेव	हि. एस, सी. सी.
३०९	,, ,,	,, शुकदेव	,, ,,
३१०	,, ,, [बालबोधिनी]	,, हंसराज	,,
३११	,, ,,	,, हर्षकीर्त्ति	,, ,,
३१२	, [आनंदवर्धिनी]	,,	प्रकाशित
३१३	समवृत्तसारः	नीलकण्ठाचार्य	हि. एस, सी. सी.
३१४	सुवृत्ततिलकम्	क्षेमेन्द्र	प्रकाशित
३१५	संगीतराज-पाठ्यरत्नकोष	महाराणा कुंभा	तृतीय उल्लास
३१६	संगीत सह पिंगल		जैन ग्रन्थावली
३१७	स्वयम्भू छन्द	स्वयंभू	प्रकाशित

पुराणादि ग्रंथ

क्रमांक	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
३१८	अग्निपुराण		अध्याय ३२८–३३५
३१९	गरुडपुराण पूर्वखण्ड		,, २०७–२१२
३२०	नारदपुराण पूर्वखण्ड		,, ५७ वां
३२१	विष्णुधर्मोत्तर तृतीयखण्ड		,, ३ रा
३२२	बृहत्संहिता	वराहमिहिर	,, १४वां
३२३	नाट्यशास्त्र	भरताचार्य	अध्याय १४–१५

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

सहायक-ग्रन्थ

१.	अग्निपुराण	
२.	अथर्ववेदीय वृहृत्सर्वानुक्रमणी	
३.	अनर्घराघवननाटक	मुरारि
४.	अरिष्टवधस्तोत्र	रूपगोस्वामी
५.	[illegible] हृदय	वाग्भट
६.	[illegible]पनिदान सूत्र	गार्ग्य
७.	ऋग्यजुष् परिशिष्ट	
८.	ऋग्वेद के मंत्रद्रष्टा कवि	बद्रीप्र स । पंचोली
९.	ऋग्वेद में गोतत्त्व	,,
१०.	ए हिस्ट्री ऑफ क्लासिकल संस्कृत लिटरेचर	एम. कृष्णमाचारी
११.	ए हिस्ट्री ऑफ संस्कृत लिटरेचर	आर्थर ए. मेकडॉनल
१२.	ए हिस्ट्री ऑफ संस्कृत लिटरेचर	कीथ
१३.	ऐतरेय आरण्यक	
१४.	कविकल्पलता	देवेश्वर
१५	कविदर्पण	सं० एच. डी. वेल्हणकर
१६.	कांकरोली का इतिहास	पो० कण्ठमणि शास्त्री
१७.	काठक संहिता	
१८.	कामसूत्रम्	वात्स्यायन
१९.	काव्यादर्श	दण्डी
२०.	किरातार्जुनीय काव्य	भारवि
२१.	कुमारसम्भव काव्य	कालिदास
२२.	कौषीतकि महाब्राह्मण	
२३.	गाथालक्षण	सं० एच. डी. वेल्हणकर
२४.	गीतगोविन्द	जयदेव
२५	गोपाललीलामहाकाव्य	सं० बेचनराम शर्मा
२६.	गोवर्धनोद्धरण स्तोत्र	रूपगोस्वामी
२७.	गोविन्दविरुदावली	,,
२८.	गौरीदशकस्तोत्र	शंकराचार्य
२९.	छन्दःकोश	सं० एच. डी. वेल्हणकर
३०.	छन्दःसूत्र-हलायुध टीका सहित	पिंगल, हलायुध
३१.	छन्दःसूत्र-टिप्पणी	अनन्तराम शर्मा
३२.	छन्दःसूत्रभाष्य	यादवप्रकाश

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

३३.	छन्दोनुशासन	जयकीर्त्ति, सं० एच. डी. वेल्हणकर
३४.	छन्दोनुशासन स्वोपज्ञटीकोपेत	हेमचन्द्राचार्य
३५.	छन्दोमञ्जरी टीकासहित	गंगादास
३६.	छन्दोमञ्जरी जीवन	चन्द्रशेखर भारती
३७.	छान्दोग्योपनिषद्	
३८.	जयदामन्	एच. डी. वेल्हणकर
३९.	जयदेवच्छन्द	सं० ,,
४०.	जनाश्रयीछन्दोविचिति	जनाश्रय
४१.	जैन ग्रन्थवावली	
४२.	जैमिनीय ब्राह्मण	
४३.	तांड्यमहाब्राह्मण	
४४.	तैत्तिरीय ब्राह्मण	
४५.	दिग्विजय महाकाव्य	महो० मेघविजय
४६.	देवानन्द-महाकाव्य	,,
४७.	नन्दाहरणस्तोत्र	रूपगोस्वामी
४८.	नन्दोत्सवादिचरितस्तोत्र टीका	,,
४९.	नाट्यशास्त्र	भरताचार्य
५०.	नारदपुराण	
५१.	निरुक्त-दुर्गवृत्तिसहित	यास्क, दुर्गसिंह
५२.	पाठ्यरत्नकोष	महाराणा कुम्भा
५३.	पाणिनीयशिक्षा	पाणिनि
५४.	पिंगलप्रदीप	लक्ष्मीनाथ भट्ट
५५.	प्राकृतपिंगलोद्योत	चन्द्रशेखरभट्ट
५६.	प्राकृतपैंगलम्	डा० भोलाशंकर व्यास
५७.	प्राचीन भारत में गणतांत्रिक व्यवस्था	बद्रीप्रसाद पंचोली
५८.	बृहत्संहिता	वराहमिहिर
५९.	भट्टिकाव्य	भट्टि
६०.	भागवतपुराण १० मस्कन्ध	
६१.	भारतेन्दु ग्रन्थावली भा० ३	सं० व्रजरत्नदास
६२.	महाभारत शान्तिपर्व	
६३.	मात्रिक-छन्दों का विकास	डा. शिवनन्दनप्रसाद
६४.	मालतीमाधव	भवभूति
६५.	मुकुन्दमुक्तावलीस्तोत्र	रूपगोस्वामी
६६.	मैत्रायणीसंहिता	
६७.	युक्तिप्रबोध	महो० मेघविजय
६८.	रघुवंश	कालिदास

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

६९.	रंगक्रीडास्तोत्र	रूपगोस्वामी
७०.	रसिकरञ्जनम्	रामचन्द्र भट्ट
७१.	रासक्रीडास्तोत्र	रूपगोस्वामी
७२.	रोमावलीशतक	रामचन्द्र भट्ट
७३.	वत्सचारणादिस्तोत्र	रूपगोस्वामी
७४.	वर्षाशरद्विहारचरितस्तोत्र	,,
७५.	वल्लभवंशवृक्ष	सं० पो० कण्ठमणि शास्त्री
७६.	वस्त्रहरणस्तोत्र	रूपगोस्वामी
७७.	वाग्वल्लभ	दु:खभञ्जन कवि
७८.	वाजसनेयी संहिता	
७९.	वाणीभूषण	दामोदर
८०.	वार्त्ता साहित्य एक बृहत् अध्ययन	डॉ० हरिहरनाथ टंडन
८१.	विजयदेवमाहात्म्य	श्रीवल्लभोपाध्याय
८२.	विज्ञप्तिपत्री	समयसुन्दरोपाध्याय
८३.	विज्ञप्तिलेख-संग्रह प्रथम भाग	सं० मुनि जिनविजय
८४.	वृत्तजातिसमुच्चय	सं० हरिदामोदर वेल्हणकर
८५.	वृत्तमुक्तावली	देवर्षि कृष्णभट्ट
८६.	वृत्तरत्नाकर नारायणीटीकायुत	केदारभट्ट, नारायणभट्ट
८७.	वेदविद्या	डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल
८८.	वैदिक छन्दोमीमांसा	युधिष्ठिर मीमांसक
८९.	वैदिक-दर्शन	डॉ० फतहसिंह
९०.	वैदिक-साहित्य	रामगोविन्द त्रिवेदी
९१.	शतपथ ब्राह्मण	
९२.	शिशुपालवध	माघकवि
९३.	श्रुतबोध	कालिदास
९४.	शृङ्गारकल्लोलं	रायभट्ट
९५.	सुदर्शनादिमोचनस्तोत्र	रूपगोस्वामी
९६.	सुवृत्ततिलक	क्षेमेन्द्र
९७.	सौन्दर्यलहरी	शंकराचार्य
९८.	स्वयंभूछन्द	सं० हरि दामोदर वेल्हणकर
९९.	सप्तसन्धानमहाकाव्य	महो० मेघविजय
१००.	सभाष्या रत्नमञ्जूषा	सं० हरि दामोदर वेल्हणकर
१०१.	संस्कृत साहित्य का इतिहास	कीथ
१०२.	,,	वाचस्पति गैरोला
१०३.	सरस्वतीकण्ठाभरण-टीका	लक्ष्मीनाथ भट्ट
१०४.	हंसदूतम्	रूपगोस्वामी
१०५.	हरिमीडे-स्तोत्र	शंकराचार्य
१०६.	हिमांशुविजयजी नां लेखो	

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

सूची-पत्र

1. A descriptive Catalogue of Sanskrit and Prakrita Manuscripts in the Library of the Bombay Branch of the Royal Asiatic Society. — H.D. Velankar
2. An alphabetical list of manuscripts in the Oriental Institute, Baroda. — Raghavan Nambiyar Shiromani
3. A descriptive catalogue of manuscripts in Mithila — Kashi Prasad Jayaswal
4. A descriptive Catalogue of the Sanskrit and Prakrit Manuscripts the Library of the University of Bombay. — H. D. Velankar
5. कन्नड-प्रान्तीय ताडपत्रीय ग्रन्थ-सूची — के. भुजबली शास्त्री
6. Catalogue of Anupa Samskrita Library, Bikaner — Dr. C. Kunhan Raja
7. Catalogue of Samskrita manuscripts in Avadha — ... ...
   Part–15; 1882
   Part–21; 1890
8. Catalogus Catalogum — T. Aufrecht
9. मधुसूदन पुस्तकालय, लाहौर, का सूचीपत्र
10. राजस्थान के जैन शास्त्रभंडार — डॉ. कस्तूरचंद कासलीवाल
11. राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर का सूचीपत्र
12. राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान शाखा-कार्यालय, चित्तौड़, यति बालचन्द्रजी संग्रह का सूचीपत्र
13. राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान शाखा-कार्यालय, जयपुर, लक्ष्मीनाथ दाधीच संग्रह का सूचीपत्र
14. राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान शाखा-कार्यालय, बीकानेर का सूचीपत्र
15. संस्कृत कॉलेज बनारस, रिपोर्ट सन् १६०६–१६१७

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला में प्रकाशित

(क) संस्कृत-प्राकृत-ग्रन्थ

१. प्रमाणमञ्जरी, (ग्रन्थाङ्क ४), तार्किक चूडामणि सर्वदेवाचार्य कृत; अद्वयारण्य, बलभद्र, वामनभट्ट कृत टीकात्रयोपेत; सम्पादक – मीमांसान्यायकेसरी पं० पट्टाभिराम शास्त्री, विद्यासागर (७+१०६), १९५३ ई०। मू. ६.००

२. यन्त्रराज-रचना, (ग्रन्थाङ्क ५); महाराजा सवाई जयसिंह कारित; संपादक – स्व० पं० केदारनाथ ज्योतिर्विद् (८+२८), १९५३ ई०। मू. १.७५

३. महर्षिकुलवैभवम् भाग १, (ग्रन्थाङ्क ६), स्व० पं० मधुसूदन ओझा प्रणीत, म.म. पं० गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी द्वारा सम्पादित एवं हिन्दी व्याख्या सहित (५६+२६१), १९५६ ई०। मू. १०.७५

४. महर्षिकुलवैभवम् (मूलमात्र), (ग्रन्थाङ्क ५९), स्व० पं० मधुसूदन ओझा प्रणीत, संपादक – पं० प्रद्युम्न ओझा (१६+१३३+१०), १९६१ ई०। मू. ४.००

५. तर्कसंग्रह, (ग्र० ९), अन्नंभट्ट कृत टीकाकार – क्षमाकल्याण गणि; संपादक – डा० जितेंद्र जेटली, (१७+७४), १९५६ ई०। मू. ३.००

६. कारकसंबंधोद्योत, (ग्र० १८), पं० रभसनन्दी कृत; कातन्त्रव्याकरणपरक रचना; संपादक - डा० हरिप्रसाद शास्त्री (२२+३४), १९५६ ई०। मू. १.७५

७. वृत्तिदीपिका, (ग्र० ७), मौनिकृष्णभट्ट कृत; संपादक – स्व० पं० पुरुषोत्तम शर्मा चतुर्वेदी, साहित्याचार्य (६+४४+१२), १९५६ ई०। मू. २.००

८. कृष्णगीति, (ग्र० १६), कवि सोमनाथ विरचित, राधाकृष्ण सम्बन्धी प्रेमकाव्य; संपादिका – डॉ० कु० प्रियबाला शाह (२७+३२), १९५६ ई०। मू. १.७५

९. शब्दरत्नप्रदीप, (ग्र० १९), अज्ञातकर्तृक, बह्वर्थक-शब्दकोश; संपादक डॉ० हरिप्रसाद शास्त्री (१२+४४), १९५६ ई०। मू. २.००

१०. नृत्तसंग्रह, (ग्र० १७), अज्ञातकर्तृक; संपादिका – डॉ० कु० प्रियबाला शाह (६+४५), १९५६ ई०। मू. १.७५

११. शृङ्गारहारावली, (ग्र० १५), श्री हर्षकवि विरचित संस्कृत-गीतकाव्य; संपादिका – डॉ० कु० प्रियबाला शाह (१०+८२) १९५६ ई०। मू. २.७५

१२. राजविनोद महाकाव्य, (ग्र० ८), महाकवि उदयराज प्रणीत, अहमदाबाद के सुलतान महमूद बेगड़ा का चरित्र-वर्णन; संपादक – श्री गोपालनारायण बहुरा (२८+४४) १९५६ ई०। मू. २.२५

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१३. **चक्रपाणिविजय महाकाव्य,** (ग्र० २०), भट्ट लक्ष्मीधर विरचित; उषा-परिणय संबंधी अद्यावधि अज्ञात काव्य; संपादक – के. का. शास्त्री (७+११२), १९५६ ई० । मू. ३.५०

१४. **नृत्यरत्नकोश** (प्रथम भाग), (ग्र० २५); महाराणा कुम्भकर्ण कृत, संगीतराजरत्न-कोषान्तर्गत; संपादक – प्रो० रसिकलाल छो० परीख एवं डॉ० कु० प्रियबाला शाह (७+१४४), १९५७ ई० । मू. ३.७५

१५. **उक्तिरत्नाकर,** (ग्र० १२), साधुसुन्दर गणि विरचित, संस्कृत एवं देशी शब्दकोष; संपादक – मुनि जिनविजय पुरातत्त्वाचार्य (१०+११८), १९५७ । मू. ४.७५

१६. **दुर्गापुष्पाञ्जलि,** (ग्र० २२), म. म. पं० दुर्गाप्रसाद द्विवेदी प्रणीत; संपादक पं० श्री गङ्गाधर द्विवेदी (३९+१४७), १९५६ ई० । मू. ४.२५

१७. **कर्णकुतूहल एवं कृष्णलीलामृत,** (ग्र० २६), महाकवि भोलानाथ, जयपुर नरेश सवाई प्रतापसिंह समाश्रित विरचित; संपादक – श्री गोपालनारायण बहुरा (२५+३०), १९५७ ई० । मू. १.५०

१८. **ईश्वरविलास-महाकाव्यम्,** (ग्र० २९), कविकलानिधि श्रीकृष्णभट्ट विरचित, जयपुर निर्माता सवाई जयसिंह द्वारा अनुष्ठित अश्वमेध यज्ञ का प्रत्यक्ष वर्णन एवं जयपुर राज्येतिहास सम्बन्धी अनेक संस्मरण संवलित महाकाव्य; संपादक – कविशिरोमणि भट्ट श्री मथुरानाथ शास्त्री (७६+२९३), १९५८ ई० । मू. ११.५०

१९. **रसदीर्घिका,** (ग्र० ४१), कवि विद्याराम प्रणीत, संस्कृत रसालङ्कारपरक सरल एवं लघु कृति; संपादक – श्री गोपालनारायण बहुरा (१२+८०) १९५९ ई० । मू. २.००

२०. **पद्यमुक्तावली,** (ग्र० ३०), कविकलानिधि श्रीकृष्णभट्ट विरचित, अनेक साहित्यिक एवं ऐतिहासिक पद्य संग्रह; संपादक – कविशिरोमणि भट्ट श्री मथुरानाथ शास्त्री (२०+१४६), १९५९ ई० । मू. ४.००

२१. **काव्यप्रकाश भाग १,** (ग्र० ४६), मूल ग्रन्थकार मम्मटाचार्य के समकालीन भट्ट सोमेश्वर कृत 'काव्यादर्श संकेत' सहित, जैसलमेर के जैन ग्रन्थ-भंडारों से प्राप्त प्राचीन प्रति के आधार पर संपादित; संपादक – श्री रसिकलाल छो० परीख (४+३५२), १९५९ ई० । मू. १२.००

२२. **काव्यप्रकाश भाग २,** (ग्र० ४७), संपादक – श्री रसिकलाल छो० परीख (२२+११०+९४), १९५९ ई० । मू. ८.२५

२३. **वस्तुरत्नकोश,** (ग्र० ४५), अज्ञातकर्तृक, संस्कृत का सामान्यज्ञान-कोश; संपादक – डॉ० कु० प्रियबाला शाह (९+६४); १९५९ ई०। मू. ४.००

२४. **दशकण्ठवधम्,** (ग्र० २३), म. म. पं० दुर्गाप्रसाद द्विवेदी कृत, रामचरित्रात्मक संस्कृत-चम्पू; संपादक – श्री गङ्गाधर द्विवेदी (४+१५६), १९६० ई० । मू. ४.००

२५. **श्री भुवनेश्वरीमहास्तोत्रम्,** (ग्र० ५४), पृथ्वीधराचार्य विरचित, कवि पद्मनाभ प्रणीत भाष्यान्वित, पूजा-पञ्चाङ्गादि संवलित; संपादक – श्री गोपालनारायण बहुरा (१+१६९), १९६० ई० । मू. ३.७५

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

२६. रत्नपरीक्षादि सप्तग्रन्थ संग्रह, (ग्र० ६०), दिल्ली-सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी के मुद्राधीक्षक ठक्कुर फेरू विरचित, मध्यकालीन भारत की आर्थिक दशा एवं रत्नपरीक्षादि वस्तुजात-संग्रहादिक विषयों पर विस्तृत विवेचनात्मक ग्रन्थ; संपादक – पद्मश्री मुनि जिनविजय पुरातत्त्वाचार्य । १९६१ ई० । मू. ८.२५

२७. स्वयम्भूछन्द, (ग्र० ३७) कवि स्वयम्भू कृत, दसवीं शताब्दी में रचित प्राकृत एवं अपभ्रंश छन्दःशास्त्र पर अलभ्य कृति; संम्पा० प्रो. एच०डी० वेलणकर (२५+२४४) १९६२ ई० । मू. ७.७५

२८. वृत्तजातिसमुच्चय, (ग्र० ६१), कवि विरहाङ्क कृत, ६वीं शताब्दी में प्रणीत संस्कृत एवं प्राकृत छन्दःशास्त्र पर अलभ्य कृति; संपादक प्रो० एच. डी. वेलणकर (३२+१४४); १९६२ ई० । मू. ५.२५

२९. कविदर्पण, (ग्र० ६२), अज्ञातकर्तृक, १३वीं शताब्दी में रचित प्राकृत-संस्कृत छन्दः-शास्त्र पर अनुपम कृति; संपादक – प्रो० एच. डी. वेलणकर (५२+१५६), १९६२ ई० । मू. ६.००

३०. वृत्तमुक्तावली, (ग्र० ६९), कविकलानिधि श्रीकृष्णभट्ट प्रणीत, वैदिक एवं संस्कृत छन्दःशास्त्र पर दुर्लभ कृति; संपादक – पं० श्री मथुरानाथ भट्ट (१७+७६) १९६३ ई० । मू. ३.७५

३१. कर्णामृतप्रपा, (ग्र०२) सोमेश्वर भट्ट कृत (१३वीं शताब्दी) मध्यकालीन संस्कृत-काव्य-संग्रह, जैसलमेर के जैन-भंडारों से प्राप्त अलभ्य प्रति के आधार पर; संपादक – पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य; (१०+५६),१९६३ ई० । मू. २.२५

३२. पदार्थरत्नमञ्जूषा, (ग्र. ३८), श्रीकृष्णमिश्र प्रणीत दर्शनशास्त्र की वैशेषिक शाखा पर आधारित, जैसलमेर के जैन-भंडारों से प्राप्त प्राचीन प्रति के आधार पर संपादित; संपादक – पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य; प्रस्तावना – श्री दलसुख मालवणिया । (७+४५) १९६३, ई० । मू. ३.७५

३३. त्रिपुराभारती-लघु-स्तव, (ग्र० १), लघ्वाचार्य प्रणीत वागीश्वरी स्तोत्र, सोमतिलक सूरि (१३४० ई०) कृत टीका सहित; संपादक–पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य (१०+५६) १९५२ ई० । मू. ३.२५

३४. प्राकृतानन्द, (ग्र० १०), रघुनाथ कवि कृत प्राकृत भाषा व्याकरण संबंधी महत्त्वपूर्ण रचना; संपादक – पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य (१७+५२+५३+७६) १९६२ ई० । मू. ४.२५

३५. इन्द्रप्रस्थ-प्रबन्ध, (ग्र. ७०), अज्ञात कर्तृक, दिल्ली के प्रारम्भिक शासकों के विषय में ऐतिहासिक काव्य; संपादक – डा० दशरथ शर्मा (८+४६) १९६३ ई० । मू. २.२५

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

(ख) राजस्थानी हिन्दी ग्रन्थ

१. कान्हड़दे प्रबन्ध, (ग्र. ११) : महाकवि पद्मनाभ विरचित, सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी के द्वारा जालोर दुर्ग के प्रसिद्ध घेरे आदि का वर्णन; सम्पादक - प्रो. के. बी. व्यास (३३+२७५) १९५३ ई.। मू. १२.२५

२. क्यामखां रासा, (ग्र. १३) : कवि जान कृत, फतेहपुर के नवाब अलफ़खांन तथा राजपूताने के क्यामखानी मुस्लिम राजपूतों के उद्गम और इतिहास का रोचक वर्णन; सम्पादक - डॉ. दशरथ शर्मा और अगरचन्द भंवरलाल नाहटा (५०+१२८) १९५३ई. मू. ४.७५

३. लावा रासा, (ग्र. १४) अपर नाम कूर्मवंशयशप्रकाश, गोपालदान कविया कृत, नरूका (कछवाहा) राजपूतों और पिंडारी पठानों के बीच हुए पाँच युद्धों का समकालीन ओजस्वी वर्णन, सम्पादक - श्री महताबचन्द खारेड़, (१९+८६) १९५३ ई.। मू. ३.७५

४. बाँकीदास री ख्यात, (ग्र.२१) बाँकीदास कृत, राजस्थान के प्राचीन ऐतिहासिक विवरणों का प्रमुख ग्रन्थ; सम्पादक - श्री नरोत्तमदास स्वामी (९+२१८) १९५६ ई.। मू. ५.५०

५. राजस्थानी साहित्य संग्रह भाग १, (ग्र. २७) राजस्थानी भाषा में रचित प्रतिनिधि गद्य कथा संग्रह; सम्पादक - श्री नरोत्तमदास स्वामी (१४+५२) १९५७ ई.। मू. २.२५

६. राजस्थानी साहित्य संग्रह भाग २, (ग्र. ५२) तीन ऐतिहासिक वार्ताएं; बगड़ावत, प्रतापसिंह महोकमसिंह और वीरमदे सोनगिरा; सम्पादक - पुरुषोत्तमलाल मेनारिया; (२४+१०८) १९६० ई.। मू. २.७५

७. कवीन्द्र कल्पलता, (ग्र. ३४) : मुगल बादशाह शाहजहाँ के समकालीन कवीन्द्राचार्य सरस्वती कृत ; सम्पादिका - रानी लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत्त (७+५५+५) १९५८ ई. मू. २.००

८. जुगलविलास, (ग्र. ३२) कुशलगढ़ के महाराजा पृथ्वीसिंहजी अपरनाम कवि पीथल कृत ; सम्पादिका - रानी लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत, (५+५०) १९२० ई.। मू. १.७५

९. भगतमाळ, (४३) चारण ब्रह्मदास दादूपंथी कृत; सम्पादक - श्री उदयराज उज्ज्वल (८+६४) १९५९ ई.। मू. १.७५

१०. राजस्थान पुरातत्व मन्दिर के हस्तलिखित ग्रन्थों की सूची भाग १, (ग्र. ४२) ई. स. १९५६ तक संगृहीत ४००० ग्रंथों का वर्गीकृत सूचीपत्र ; सम्पादक - मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य, (२+३०२+२०) १९५९ ई.। मू. ७.५०

११. राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान के हस्तलिखित ग्रन्थों की सूची, भाग २, (ग्र. ५१), ७८५५ तक के ग्रन्थों का सूची-पत्र ; सम्पादक - श्री गोपालनारायण बहुरा, एम.ए., (२+३९१) १९६० ई.। मू. १२.००

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१२. राजस्थानी हस्तलिखित-ग्रन्थ-सूची भाग १, (ग्र. ४४) मार्च १९५८ तक के ग्रंथों का विवरण ; सम्पादक - मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य, (३०२+१९), १९६० ई., मू. ४.५०

१३. राजस्थान हस्तलिखित ग्रन्थ सूची भाग २, (ग्र. ५८) १९५८-५९ के संगृहीत ग्रंथों का विवरण ; सम्पादक - पुरुषोत्तमलाल मेनारिया, (२+६१) १९६१ ई.। मू. २.७५

१४. स्व. पुरोहित हरिनारायणजी विद्याभूषण ग्रंथ संग्रह, (ग्र. ५५), सम्पादक - श्री गोपालनारायण बहुरा और श्री लक्ष्मीनारायण गोस्वामी (८+१६३+३८) १९६१ ई.। मू. ६.२५

१५. मुंहता नैणसी री ख्यात भाग १, (ग्र.४८), मुंहता नैणसी कृत साधारणतः राजस्थान-देशीय एवं मुख्यतः (मारवाड़) राज्य का प्रथम प्रामाणिक व ऐतिहासिक ग्रंथ; सम्पादक आ. श्री बदरीप्रसाद साकरिया (११+३६५), १९६० ई.। मू. ८.५०

१६. मुं० नै० री ख्यात भाग २, (ग्र. ४९); आ. श्री बदरीप्रसाद साकरिया (११+३४३) १९६२ ई.। मू. ९.५०

१७. मु० नै० री ख्यात भाग ३, (२+२६४) १९६४ ई.। ,, ,, मू. ८.००

१८. सूरजप्रकास भाग १, (ग्र. ५६) : चारण करणीदान कविया कृत, सामान्य रूप से मारवाड़ का ऐतिहासिक विवरण और विशेषतः जोधपुर के महाराजा अभयसिंहजी व सरबुलन्दखान के बीच हुए अहमदाबाद के युद्ध का समकालीन वर्णन ; सम्पादक - श्री सीताराम लाळस (२०+३१०+३७), १९६१ ई.। मू. ८.००

१९. सूरजप्रकास भाग २, (ग्र. ५७); सम्पादक - श्री सीताराम लाळस (९+३६३+६१) १९६२ ई.। मू. ९.५०

२०. ,, भाग ३, (ग्र. ५८); ,, ,, ,, (९७+२७५+८४), १९६३ ई.। मू. ९.७५

२१. नेहतरंग, (ग्र. ६३) : बूंदी नरेश राव बुधसिंह हाड़ा कृत, काव्य-शास्त्रीय-ग्रंथ; सम्पादक - श्री रामप्रसाद दाधीच; (३२+१२०), १९६१ ई.। मू. ४.००

२२. मत्स्य-प्रदेश की हिन्दी-साहित्य को देन, (ग्र. ६६) : लेखक डॉ. मोतीलाल गुप्त, पूर्वी राजस्थान में हस्तलिखित ग्रंथों की खोज विषयक शोध-प्रबन्ध; (९+२९६), १९६० ई.। मू. ७.००

२३. राजस्थान में संस्कृत साहित्य की खोज, (ग्र.३१) : अनु० श्री ब्रह्मदत्त त्रिवेदी, प्रोफ़ेसर एस.आर. भाण्डारकर द्वारा हस्तलिखित संस्कृत ग्रंथों की खोज में मध्यप्रदेश व राजस्थान में (१९०५-६) में की गई खोज की रिपोर्ट का हिन्दी अनुवाद (२+७७+१९), १९६३ ई.। मू. ३.००

२४. समदर्शी आचार्य हरिभद्र, (ग्र. ६८) : लेखक-पं० सुखलालजी, हिन्दी अनुवादक-शान्तिलाल म. जैन, राजस्थान के गणमान्य साहित्यकार एवं विचारक आचार्य हरिभद्र का जीवन-चरित्र और दर्शन; (८+१२२), १९६३ ई०। मू. ३.००

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

२५. **वीरवांण,** (ग्र. ३३) : ढाढी बादर कृत, जोधपुर के वीर शिरोमणि वीरमजी राठौड़ संबंधी रचना; सम्पादिका–रानी लक्ष्मीकुमारी चूंडावत
(१६+६२+११२), १९६० ई० । मू. ४.५०

२६. **वसन्त-विलास फागु,** (ग्र. ३६) : अज्ञातकर्तृक, १३वीं शताब्दी का एक प्रचीन राजस्थानी भाषा निबद्ध शृंगारिक काव्य; सम्पादक एम. सी. मोदी,
(१४+११६), १९६० ई० । मू. ५.५०

२७. **रुषमणीहरण,** (ग्र. ७४) : महाकवि सांयाजी झूला कृत, राजस्थानी भक्तिकाव्य; सम्पादक–पुरुषोत्तमलाल मेनारिया (५२+११३) १९६४ ई० । मू. ३.५०

२८. **बुद्धि-विलास,** (ग्र. ७३) : बखतराम साह कृत, जयपुर के संस्थापक सवाई जयसिंहजी का समकालीन ऐतिहासिक वर्णन; सम्पादक–श्री पद्मधर पाठक;
(२४+१७९), १९६४ ई० । मू. ३.७५

२९. **रघुवरजसप्रकास,** (ग्र. ५०) : चारण कवि किसनाजी आढ़ा कृत, राजस्थानी भाषा का काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ; सम्पादक–श्री सीताराम लाळस;
(२०+३७६), १९६० ई० । मू. ८.२५

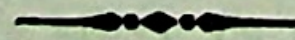
३०. **संस्कृत व प्राकृत ग्रन्थों का सूचीपत्र भाग १** (ग्र. ७१) : राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर संग्रह का स्वरित रोमन-लिपि में ४००० का सूचीपत्र, अंत में विशिष्ट ग्रन्थों के उद्धरण; सम्पादक–पद्मश्री मुनि जिनविजय पुरातत्त्वाचार्य;
(१६+८६+३७३+१५९), १९६३ ई० । मू. ३७.५०

३१. **संस्कृत व प्राकृत ग्रन्थों का सूचीपत्र भाग २ अ** (ग्र. ७७) : सम्पादक–पद्मश्री मुनि जिनविजय पुरातत्त्वाचार्य, (१६+७१+३२९+९९), १९६४ ई० । मू. ३४.५०

३२. **सन्त कवि रज्जब–सम्प्रदाय और साहित्य** (ग्र. ७६) : लेखक–डॉ. व्रजलाल वर्मा, (८+३१४), १९६५ ई० । मू. ७.२५

३३. **प्रतापरासो,** जाचिक जीवण कृत, (ग्र. ७५) : अलवर राज्य के संस्थापक रावराजा प्रतापसिंहजी के शौर्य का ऐतिहासिक वर्णन, भाषा-शास्त्रीय विशिष्ट अध्ययन सहित, सम्पादक–डॉ. मोतीलाल गुप्त (१६६+११८), १९६५ । मू. ६.७५

३४. **भक्तमाल,** राघोदास कृत, चतुरदास कृत टीका; सम्पादक–श्री अगरचन्द नाहटा ।
(४२+२७+२८६), १९६५ ई० । मू. ६.७५



CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy